Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

0
5.4

वायुपुराण

(हिन्दी अनुवाद सहित)

अनुवादक
आचार्य तारिणीश झा
सहअनुवादक
डॉ० तमिस्रा चटर्जी

शक - १९१५ : सन् १९९३

साहित्य सम्मेलन प्रयाग
सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूर्मपुराणम्

(हिन्दी अनुवाद सहित)

अनुवादक

आचार्य तारिणीश झा

व्याकरणवेदान्ताचार्य

सह अनुवादक

डॉ० तमिस्रा चटर्जी

एम० ए०, डी० फिल०

शक १९१५ : सन् १९९३

हिन्दी साहित्य सम्मेलन • प्रयाग

१२, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

© प्रकाशक

डॉ० प्रभात शास्त्री

प्रधानमंत्री : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

१२, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद

©

प्रकाशन वर्ष : शक १९१५ : सन् १९९३

प्रथम संस्करण २२०० प्रतियाँ

मूल्य : २५० रुपये

©

मुद्रक : सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशकीय

पुराण-संस्कृति, हमारी पुरातनता, सनातन-सत्य का बोध कराती है। सनातन सत्य है, ऋषि-मनीषा की वह सोच, जो उसने हजारों वर्ष पूर्व आकाश-तले हरित-भरित पावन-आश्रम-भूमिरूप अक्षय-क्रोड में आसनस्थ हो, वेद-वाणी-'सर्वेसन्तु निरामयाः' 'वसुधैव कुटुम्बकम्' एवं 'समानीप्रपा' आदि को उद्घाटित किया था। यही हैं हमारी जीवन्तता के उत्स, जिसकी धार भारतीय संस्कृति का अजस्र प्रवाह बना। उसी प्रवाह के विश्राम-स्थल पुराण, हमारी जीवन-यात्रा के शाश्वत पाथेय हैं। पुराण रूप अनमोल धरोहर का संरक्षण हमारी सांस्कृतिक-चेतना को प्रतिभासित करता है।

ऐसे ही सांस्कृतिक-चेतना के प्रतिभास-आभास को ग्रहण कर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने, धर्म, संस्कृति, और समाज के सनातन-तथ्य को उजागर करने के लिए शिव सत्य की प्रति-स्थापना का संकल्प लिया---पुराणों की सानुवाद प्रकाशन--योजना क्रियान्वित की। योजना के अन्तर्गत अब तक ब्रह्मवैवर्त, ब्रह्म, बृहन्नारदीय, अग्नि, वायु तथा मत्स्य पुराण प्रकाशित हो चुके हैं। इस प्रकाशन-योजना का स्वागत न केवल धर्म-संस्कृति चेता, साहित्य-अध्येता अपितु सामान्य जनों द्वारा भी अप्रत्याशित रूप से हो रहा है।

पुराण प्रकाशन-योजना-वनी का यह सप्तम पादप है---कूर्मपुराण। यह शिव-भक्ति विश्लेषक पुराण है। परिभाषित पुराण-लक्षण समन्वित इस पुराण का अनुवाद श्री तारिणीश झा एवं डॉ० तमिस्रा चटर्जी ने किया है।

पुराण विभागीय हमारे साहित्य सहायकों ने जिस तत्परता से इसके प्रूफ आदि को संशोधित करने का धर्म निर्वाहा, वह उनका कर्तव्य है, तथापि धन्यवाद के पात्र हैं।

गुरुपूर्णिमा
शक १९१५,

प्रभात शास्त्री

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयानुक्रमणिका

अध्याय	विषय	पृष्ठ संख्या
१	इन्द्रद्युम्न का मोक्ष वर्णन	१—२१
२	वर्णाश्रम का वर्णन	२२—३७
३	चारों आश्रमों का वर्णन	३८—४२
४	प्राकृत सृष्टि का वर्णन	४३—५२
५	काल संख्या का विवरण	५३—५६
६	पृथिवी का उद्धार	५७—६१
७	सृष्टि का वर्णन	६१—७१
८	मुख्यादि सृष्टि का वर्णन	७१—७६
९	ब्रह्माप्रादुर्भाव का वर्णन	७६—८९
१०	रुद्र सृष्टि	९०—१०३
११	पार्वतीदेवी के अवतार का वर्णन	१०३—१०५
१२	देवी का माहात्म्य	१०६—१५४
१३	दक्ष कन्यायों के वंश का वर्णन	१५५—१५८
१४	स्वायंभुवमनु का वंश वर्णन	१५९—१६८
१५	दक्षयज्ञ विध्वंस-वर्णन	१६८—१८३
१६	दक्षकन्या वंश-कथन	१८४—२२०
१७	त्रिविक्रम का चरित्र वर्णन	२२०—२३१
१८	वंशानुकीर्तन	२३१—२३४
१९	ऋषिवंश-कथन	२३५—२३९
२०	राजवंश-कीर्तन	२३९—२५१
२१	इक्ष्वाकुवंशवर्णन	२५२—२६०
२२	चन्द्रवंशानुकीर्तन	२६१—२७३
२३	राजवंशानुकीर्तन	२७४—२८१
२४	वंशकीर्ति वर्णन	२८१—२९४
२५	यदुवंश और कृष्ण कीर्ति का वर्णन	२९५—३०९
२६	शंकर कीर्ति-वर्णन	३१०—३२७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्याय	विषय	पृष्ठ संख्या
२७	राजवंश वर्णन	३२७–३३०
२८	पार्थ को व्यास दर्शन	३३०–३३२
२९	युगवंशानुकीर्तन	३३२–३३९
३०	व्यास और अर्जुन संवाद में युग धर्म का निरूपण	३४०–३५०
३१	वाराणसी माहात्म्य	३५०–३६२
३२	वाराणसी माहात्म्य	३६२–३६७
३३	वाराणसी माहात्म्य	३६७–३७६
३४	४वाराणसी माहात्म्य	३७६–३८१
३५	वाराणसी माहात्म्य	३८१–३८७
३६	प्रयाग माहात्म्य	३८७–३९४
३७	प्रयाग माहात्म्य	३९४–४००
३८	प्रयाग माहात्म्य	४००–४०२
३९	प्रयाग माहात्म्य	४०३–४०५
४०	भुवन विन्यास प्रकरण	४०६–४१३
४१	ज्योतिर्गणों का वर्णन	४१३–४२०
४२	सूर्य की महिमा का वर्णन	४२०–४२४
४३	भुवन कोश का वर्णन	४२४–४३१
४४	भुवन विन्यास प्रकरण	४३१–४३५
४५	भुवनकोश में पर्वतादि संख्या का वर्णन	४३६–४४१
४६	भुवनन्यास वर्णन	४४२–४४८
४७	भुवन कोश वर्णन	४४८–४५५
४८	जम्बूद्वीप का वर्णन	४५५–४६४
४९	भुवन विन्यास प्रकरण	४६४–४७४
५०	भुवन कोश वर्णन	४७५–४७९
५१	मन्वन्तर कीर्तन तथा विष्णु माहात्म्य	४७९–४८६
५२	वेदशाखा प्रणयन	४८६–४९०
५३	महादेव के अवतारों का वर्णन	४९०–४९५

पूर्वार्द्ध समाप्त

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरार्द्ध प्रारम्भ

अध्याय	विषय	पृष्ठ संख्या
१	ईश्वरगीता	४९६—५०३
२	ईश्वरगीता	५०४—५१२
३	ईश्वरगीता	५१२—५१६
४	ईश्वरगीता	५१६—५२१
५	ईश्वरगीता	५२२—५२९
६	ईश्वरगीता	५२९—५३७
७	ईश्वरगीता	५३७—५४२
८	ईश्वरगीता	५४२—५४५
९	ईश्वरगीता	५४६—५४९
१०	ईश्वरगीता	५५०—५५३
११	ईश्वरगीता	५५३—५७३
१२	व्यास गीता	५७४—५८४
१३	व्यासगीता	५८५—५९२
१४	ब्रह्मचारियों का धर्म निरूपण	५९२—६०७
१५	ब्रह्मचारियों का गार्हस्थ्यधर्म	६०७—६१४
१६	गार्हस्थ्यधर्म निरूपण	६१४—६२९
१७	भक्ष्य अभक्ष्य का निर्णय	६३०—६३७
१८	ब्राह्मणों के नित्यकर्तव्य का निरूपण	६३७—६५६
१९	ब्राह्मणों के नित्यकर्तव्य के प्रसंग में भोजनादि का वर्णन	६५६—६६२
२०	श्राद्धकल्प	६६२—६६९
२१	व्यासगीता का वर्णन	६७०—६७७
२२	व्यासगीता का वर्णन	६७८—६९५
२३	श्राद्धकल्प	६९५—७०९
२४	द्विजातियों के अग्निहोत्रादि कर्म	७१०—७१३
२५	द्विजातियों की जीविका का वर्णन	७१४—७१७
२६	व्यासगीता का वर्णन	७१८—७३०
२७	व्यासगीता का वर्णन	७३०—७३६
२८	व्यासगीता का वर्णन	७३७—७४१
२९	संन्यासियों का धर्म	७४२—७४९
३०	प्रायश्चित्त का विधान	७५०—७५४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्याय	विषय	पृष्ठ संख्या
३१	कपालमोचन माहात्म्य	७५४—७७०
३२	प्रायश्चित्त प्रकरण	७७०—७७४
३३	प्रायश्चित्त कथन	७७४—७८०
३४	प्रायश्चित्त का विधान	७८०—८०३
३५	तीर्थों का प्रकरण	८०३—८१५
३६	काल का वध	८१५—८२१
३७	तीर्थों का वर्णन	८२१—८३०
३८	देवदारु वन में प्रवेश	८३०—८४३
३९	देवदारुवन-प्रवेश वर्णन	८४४—८५६
४०	नर्मदा माहात्म्य-वर्णन	८५६—८६२
४१	नर्मदा माहात्म्य-वर्णन	८६२—८७८
४२	नर्मदा माहात्म्य वर्णन	८७८—८८४
४३	नैमिष एवं जप्येश्वर तीर्थ का वर्णन	८८५—८९१
४४	विविध तीर्थ माहात्म्य वर्णन	८९१—८९५
४५	कूर्मरूप धारण वर्णन तथा व्यास गीता का प्रसंग वर्णन	८९५—९०५
४६	सृष्टि के उद्भव एवं प्राकृत प्रलयरूपी वर्णन के साथ कूर्म पुराण का माहात्म्य वर्णन	९०५—९२६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya*Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

भारतीय संस्कृति, सभ्यता, धर्म और दर्शन के स्रोत वेदों में निहित हैं। वह वेद अपौरुषेय है। उनमें निहित गूढ़ अर्थों को जानने की इच्छा से शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दशास्त्र और ज्योतिष रूप छह अंगों को विद्वानों ने विकसित किया। ये अंग वेदार्थ ज्ञान के लिए आधार-भूमि बन गये। शास्त्रीय प्रतिभा से सम्पन्न पण्डित ही उन वेदांगों को भलीभाँति समझने में समर्थ हैं। इसी क्रम में वेदार्थ का अनुगमन करने वाली अनेक स्मृतियों तथा स्मृति संहिताओं का निर्माण हुआ, परन्तु वे भी जन सामान्य की समझ की परिधि के बाहर है—यह जानकर भारतीय संस्कृति के आधारभूत वेदार्थ का उपबृंहण और प्रचार करने के लिए परम कारुणिक व्यास रूपधारी विष्णु ने पुराणों का निर्माण किया। छान्दोग्योपनिषद् में पुराणों की परिगणना पंचम वेद के रूप में की गयी है—

'स होवाच भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमथर्वाणं चतुर्थमितिहासं पुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम्' (६।३-४।१।२)।

यहाँ विचारणीय बात है कि इस उपनिषद् में पुराणों को मात्र पंचम वेद नहीं कहा गया अपितु वेदों का वेद घोषित किया गया है। इसीलिए पुराणों में एक का मत है कि वेद से पहले पुराणों की सृष्टि हो गयी थी—

पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम्।
अनन्तरं च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गताः॥
(पद्मपुराण, सृष्टि खण्ड अ० १०४)

इस सम्बंध में १९ वीं शती के अद्वितीय विद्वान् विद्यावाचस्पति मधुसूदन ओझा का अभिमत है कि मंत्र-ब्राह्मणात्मक वेद-ग्रंथों के आविर्भाव से पहले या उसके समकाल ही ब्रह्माण्ड पुराण नामक वेद विशेष था, जिसमें सृष्टि और प्रलय का निरूपण था। इसलिए शतपथ ब्राह्मण का 'ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि व्याख्यानानीति' वाक्य में 'पुराण' शब्द का उल्लेख मिलता है। मत्स्यपुराण के निम्नलिखित श्लोक भी इस बात को पुष्ट करते हैं—

पुराणमेकमेवासीत्तदा कल्पान्तरेऽनघ।
त्रिवर्गसाधनं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम्॥१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालेनाग्रहणं दृष्ट्वा पुराणस्य ततो नृप ।
तदष्टादशधा कृत्वा भूर्लोकेऽस्मिन् प्रकाश्यते ।।२

पद्मपुराण एवं बृहन्नारदीय पुराण में भी इस तरह के श्लोक पाये जाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि पहले के प्रसिद्ध पुराण ग्रन्थ के आधार पर ही अठारह पुराणों की उत्पत्ति हुई है। उसी आदिम ब्रह्माण्डपुराण से मन्त्रार्थोपयोगी आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक उपाख्यानों को लेकर महर्षियों ने ब्राह्मण-ग्रन्थों में सन्निविष्ट कर दिया। इसीलिए ऐतरेय ब्राह्मण के निम्नलिखित मन्त्र में वक्ताओं के सिद्ध आख्याओं का ही प्रतिपादन किया गया है—

सोमो वै राजाऽमुष्मिन् लोके आसीदत देवाश्च ऋषयश्चाभ्यध्यायन्—कथमयमस्मान् सोमो राजा गच्छेदिति, तेऽब्रुवन् छन्दांसि श्रूयां न इमं सोमं राजानमाहरतेति तथेति ते सुपर्णा भूत्वोदपतन् ते यत् सुपर्णा भूत्वोदपतन् तदेतत् सौपर्णमिति आख्यानविद आचक्षते ।

यद्यपि ब्राह्मण ग्रन्थों में महर्षियों ने ही आख्यानों को कहा है, किन्तु वे आख्यान ब्राह्मणग्रन्थकर्ता महर्षियों द्वारा प्रणीत नहीं हैं, क्योंकि मन्त्रार्थ के उपपादन में उन आख्यानों का उपादान होने से उन्हें मन्त्र-रचना के बाद की कल्पना का विषय नहीं माना जा सकता। इसलिए ब्रह्मा द्वारा प्रस्तुत चिरन्तन ब्रह्माण्ड पुराण से ही ये आख्यान संकलित किये गये है, ऐसा मानना चाहिए। ब्राह्मण ग्रन्थों में उल्लिखित पुराणार्थ—आख्यानों को ब्रह्मकृत मानकर ही पद्मपुराण के सृष्टि खण्ड में कहा गया है—

सूतेनानुक्रमेणेदं पुराणं सम्प्रकाशितम् ।
ब्राह्मणेषु पुरा यच्च ब्रह्मणोक्तं सविस्तरम् ।।

इन ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रायः सभी विद्याओं का उल्लेख है, किन्तु वे क्रमबद्धता से रहित सूत्ररूप में अस्पष्ट हैं। अतएव उन्हें बुद्धि ग्राह्य बनाने के लिए विशिष्ट बुद्धिशाली महर्षियों ने अपनी प्रतिभा के बल पर उन ब्राह्मण ग्रन्थों से उन विद्याओं को अलग करके युक्ति-प्रयुक्ति और सिद्धि के द्वारा विशद करके लोक-कल्याणार्थ प्रसारित किया। जैसे कपिल और पतञ्जलि आदि ने सांख्य और योग को, वात्स्यायन आदि ने कामसूत्र को, मनु आदि ने धर्मसूत्र को, धन्वन्तरि आदि ने आयुर्वेद को, यास्क आदि ने निरुक्त को और इन्द्र, पाणिनि आदि ने व्याकरण को प्रवर्तित किया। इसी प्रकार वसिष्ठ के प्रपौत्र शक्ति के पौत्र और पराशर के पुत्र सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न भगवान् कृष्णद्वैपायन ने लोकोपकार के लिए समस्त ब्राह्मण ग्रन्थों से सभी उपाख्यानों एवं गाथाओं का संकलन करके कथा-प्रसंग में आयी हुई कल्प शुद्धियों को भी ठीक-ठीक जोड़कर लौकिक आख्यानों से संगतिबद्ध करके पूर्वोक्त वेदरूप ब्रह्माण्ड पुराण में कहे जगत्सृष्टि प्रलयरूप

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदार्थों को आख्यान,[१] उपाख्यान,[२] गाथा,[३] और कल्पबुद्धि से गुम्फित करके १८ खण्डों में विभक्त एक पुराण संहिता का निर्माण किया। उसे पुराण संहिता इसलिए कहते हैं कि उसमें पुराण पद से अभिहित तथा ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में उल्लिखित विश्व-सृष्टि विद्याओं का एक जगह संग्रह करके समाहार किया गया है। फिर कृष्णद्वैपायन ने अपने शिष्य सूतोत्पन्न लोमहर्षण को वह संहिता पढ़ायी। लोमहर्षण ने भी सम्पूर्ण संहिता को पढ़कर १. सर्ग (सृष्टि) २. प्रतिसर्ग (प्रलय) ३. वंश (देवताओं एवं पितरों की वंशावली) ४. मन्वन्तर (किस मनु का कब तक अधिकार रहता है) तथा ५. वंशानुचरित (सूर्य चन्द्र प्रभृति राजवंशों में उत्पन्न होने वाले राजाओं के संक्षिप्त वर्णन)—इन पाँच विषयों में विभक्त करके एक लौमहर्षणी नाम की संहिता बनायी। उन्हें अपने छह शिष्यों—१. सुमति २. अग्निवर्चस् ३. मित्रायु, ४. सुशर्मा, ५. अकृतव्रण और ६. सोमदत्ति को पढ़ा दिया। ये ही छह व्यक्ति गोत्र नाम के क्रम से १. आत्रेय २. भारद्वाज ३. वासिष्ठ, ४. शांशपायन, ५. काश्यप और ६. सावर्णि कहे जाते हैं। इन छहों ने भी पूर्वोक्त संहिताद्वय के आधार पर स्वेच्छानुसार क्रम रखकर छह संहिताओं का निर्माण किया। इन छहों संहिताओं में जिज्ञासा आख्यान, संवाद एवं प्रवृत्ति के अनुरोध से प्रसंगतः संक्षिप्त और विस्तृत अनेक कथानक जोड़ दिये गये। जिससे उनके आकारों में भिन्नता आ गयी पर सर्ग, प्रति-सर्ग आदि सामान्य धर्म उनमें बराबर ही बने रहे। इस प्रकार पुराणों की आठ संहिताएँ बन गयी यह किन्हीं आचार्यों का मत है। वैसे वायुपुराण और विष्णुपुराण के मत से चार ही संहिताएँ है—लोमहर्षणिका, काश्यपिका, सावर्णिका और शांशपायनिका। इन चार संहिताओं के आधार पर ही वेदव्यास ने ब्रह्मपुराण आदि प्रसिद्ध अठारह पुराणों की रचना की और उग्रश्रवा प्रभृति सूतों ने समृद्धि की।

इन पुराणों का प्रमुख उद्देश्य वेद के तत्त्वों को जनसाधारण तक पहुँचाना है। वेद में सूत्ररूप से जो बातें कही गई हैं, उन्हीं की व्याख्या पुराणों में भाष्य रूप में की गई है। यह बात पुराणरचयिता व्यास जी ने स्वयं कही है—**इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्** अर्थात् इतिहास (रामायण-महाभारत) और पुराणों की सहायता से वेदों का अर्थ समझना चाहिए। यही कारण है कि वेदों में जिन बातों की सूचना मात्र है पुराणों में आख्यानों के द्वारा उन्हीं का विस्तार है। जैसे ऋग्वेद के 'इदं विष्णुर्विचक्रमे

---

१. स्वयं देखे गये विषयों का वर्णन।

२. कर्ण-परम्परा द्वारा सुने गये विषयों का वर्णन।

३. पितरगण, परलोक अथवा अन्यान्य विभिन्न विषयों के गीत वा अनुश्रुतियाँ, श्राद्धकल्प आदि के निर्णय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रेधा निदधे पदम्' विष्णु के अवतार की सूचनामात्र है, पर वामनपुराण में त्रिविक्रम नामक वामनावतार के प्रसंग में तथा अन्य पुराणों में भी विष्णु-वामनावतार का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसी तरह अथर्ववेद (क० ८-सू० प्र० ३।४।५) में राजा पृथु का पृथ्वीदोहन संक्षेप में वर्णित है, पर श्रीमद्भागवत में उसी का विस्तृत रूप से वर्णन है।

पुराणों में जितनी सरलता से धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप चतुर्वर्ग' की सिद्धि का साधन मिलेगा, उतना अन्यत्र नहीं है। अठारह पुराणों में परोपकार को सब धर्मों का सारभूत पुण्य बताया गया है और परपीडा को पाप। यह पाप-पुण्य की परिभाषा मानवता को कितना सुन्दर और मौलिक आचरण बता रही है। इस प्रकार महापुराणों से मानव मात्र का कल्याण सम्भव है।

महापुराणों की संख्या १८ है। स्कन्दपुराण के केदार खण्ड में यह चर्चा आयी है कि अठारहों महापुराणों में दश शैव, चार ब्राह्म, दो शाक्त और दो वैष्णव हैं। फिर उसी पुराण के शिवरहस्यखण्डान्तर्गत सम्भवकाण्ड में लिखा है कि शिव, भविष्य, मार्कण्डेय, लिंग, वाराह, स्कन्द, मत्स्य, कूर्म, वामन और ब्रह्माण्ड ये दश पुराण शैव है। विष्णु, भागवत, नारदीय और गरुड़-ये चार वैष्णव हैं। ब्रह्म और पद्म ये दो पुराण ब्रह्मा से सम्बन्धित हैं। अग्निपुराण अग्नि की और ब्रह्मवैवर्त पुराण सूर्य की महिमा से पूर्ण है। उक्त शैव पुराणों में कूर्मपुराण हमारा प्रतिपाद्य ग्रन्थ है। अतः नीचे उसी का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है—

इस पुराण के उपक्रम से पता चलता है कि इसमें चार संहिताएँ थीं—१. ब्राह्म, २. भागवती, ३. सौरी, ४. वैष्णवी। किन्तु आजकल केवल ब्राह्मी संहिता ही उपलब्ध होती है और इसी का नाम कूर्मपुराण है। भागवत तथा मत्स्य पुराणों के अनुसार इसमें १८,००० श्लोक होने चाहिए, परन्तु उपलब्ध पुराण में केवल ६००० ही श्लोक मिलते हैं अर्थात् मूल ग्रन्थ का केवल तृतीयांश भाग ही उपलब्ध हैं। तद्यथा—

ब्राह्मी भागवती सौरी वैष्णवी च प्रकीर्तिताः।
चतस्रः संहिताः पुण्या धर्मकामार्थमोक्षदाः॥
इयं तु संहिता ब्राह्मी चतुर्वेदैश्च सम्मता।
भवन्ति षट्सहस्राणि श्लोकानामत्र संख्यया॥ (१।३५)

कूर्मपुराण का सार

मेरे गुरु महामहोपाध्याय स्वर्गीय गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी जी के शब्दों में कूर्मपुराण के वक्ता कूर्म हैं, जो विष्णु के अवतार हैं। इस कूर्मरूप विष्णु ने अपने मुख से शिव को ही मुख्य देव कहा है। फिर विष्णु और शिव का अमरत्व प्रतिपादित किया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए यह पुराण शैव पुराणों की ही गणना में आता है। सभी पुराणों की तरह इस पुराण का भी आरम्भ सूत-शौनक-संवाद से ही होता है। इसका भी वाचन नैमिषारण्य में ही हुआ था, जहाँ शौनक आदि ऋषियों ने एकत्र होकर एक दीर्घ–सत्र (महायज्ञ) किया था।

ऋषियों के प्रश्न पर लोमहर्षण ने इस पुराण के आविष्कर्ता कूर्म के सम्बन्ध में कहा कि देवों और असुरों ने मिलकर अमृत-प्राप्ति के लिए समुद्र का मन्थन आरम्भ किया। उन्होंने विचारा कि जैसे दही की एक एक बूंद में मक्खन व्याप्त रहता है, वैसे हिमालय आदि पर्वतों की दिव्य ओषधियों में अमृत के कण व्याप्त हैं। उन औषधियों के मंथन करने पर अमृत भी घन रूप में प्राप्त हो सकता है, किन्तु इतनी ओषधियों के मंथन के लिए उतने ही बड़े पात्र की भी आवश्यकता थी। अतः उन्होंने पात्र के रूप में विशाल समुद्र को चुना। उन्होंने इस क्रिया में मन्दर पर्वत को मथानी बनाया और नागराज बासुकि को रस्सी के रूप में रखा। समुद्र-मन्थन के लिए इतना विशाल आयोजन तो किया पर मन्दर-पर्वत रूपी मथानी के ठहरने के लिए आधार के बारे में कुछ नहीं सोचा। अतः देवासुरों के इतने बड़े आयोजन की विफलता निश्चित जानकर भगवान् स्वयं कूर्म (कच्छप) का रूप धारण करके उस मन्दराचल के तल प्रदेश में पहुँचकर आधार बन गये। ऐसे कूर्म के रूप में प्रादुर्भूत भगवान् विष्णु का दर्शन कर ऋषि स्तुति करने लगे और उन्हें प्रसन्न देखकर कुछ उपदेश देने की प्रार्थना की। कूर्म भगवान् का वही उपदेश 'कूर्मपुराण' के रूप में विख्यात हुआ। उसी नैमिषारण्य के यज्ञसत्र में ऋषियों के समक्ष इसी कूर्मपुराण को सुनाने की प्रतिज्ञा सूत जी करते हैं।

'कूर्म भगवान्' जिस समय मुनियों को उपदेश देने लगे, उसी समय समुद्र से भगवती लक्ष्मी का प्रादुर्भाव हुआ। नारायण रूप कूर्म ने जब लक्ष्मी को सादर अपने पास बैठाया तब मुनियों ने प्रश्न किया कि भगवन्! यह देवी कौन है।? कूर्म भगवान् ने उत्तर दिया कि यह मेरी परमा शक्ति है। इसे मुझसे अभिन्न समझो! इसी के द्वारा मैं सम्पूर्ण जगत् की रचना, पालन और संहार करता हूँ। इससे विरहित मैं कभी नहीं होता। यह सुनकर ऋषियों ने फिर पूछा कि इसका तत्त्व पहले भी क्या आपने बतलाया है? इस पर कूर्म भगवान् ने इन्द्रद्युम्न की कथा आरम्भ की। वे कहने लगे––इन्द्रद्युम्न पहले बहुत बड़ा राजा था। वह किसी के द्वारा पराजित नहीं होता था। उसकी बुद्धि विशेष रूप से धर्म में लगी हुई थी और सब देवों का पूजन करता हुआ वह अंत में मेरी शरण में आया। मैंने उसे वरदान दिया कि तू आगे ब्राह्मण-वंश में जन्म लेगा और परम योगी होगा। अभी तू काल की प्रतीक्षा कर। वैवस्वत मन्वन्तर के आने पर तू बहुत बड़ा प्रभावशाली होगा। अभी तू काल की प्रतीक्षा कर। इस प्रकार मुझसे अनेक वरदान प्राप्त कर वह निरन्तर ईश्वर की आराधना में लग गया। मुझे और महेश्वर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को एक ही रूप मानकर वह निरन्तर उपासना करता रहा। अन्त में तप और उपासना करते-करते उसे मेरी महाशक्ति ने दर्शन दिया। उसके दर्शन से आह्लादित होकर 'इन्द्रद्युम्न' उसके चरणों में गिर पड़ा और पूछने लगा कि 'भगवती ! आप कौन हैं ? कृपाकर अपना पूर्ण परिचय दीजिए।' इन्द्रद्युम्न ने पुनः प्रश्न किया कि देवि ! आप नारायण का ही तत्त्व मुझे समझा दीजिए। इस पर महाशक्ति ने उसे आश्वासन दिया कि स्वयं नारायण ही तुझे अपना तत्त्व समझायेंगे। तत्पश्चात् महाशक्ति अन्तर्हित हो गई और वह पुनः उपासना में लगा रहा। फिर, समय पर मैंने भी उसे दर्शन दिया और अपने दोनों हाथों से जब उसका स्पर्श किया, तब उसे स्वतः पूर्ण ज्ञान हो गया। उस समय वह मेरी स्तुति करने लगा और पूछने लगा—भगवन् ! अब आगे मैं कौन-सा कर्म करूँ ?' मैंने कहा—'वर्णाश्रमधर्मों का पालन करते रहो और तीन प्रकार की भावनाओं में सदा अपना चित्त लगाये रखो। वे तीनों भावनायें हैं—१ मेरे साकार रूप की भावना, २. अव्यक्त रूप की भावना एवं ३. अव्यक्त से भी परे अन्तर्यामी रूप की भावना। इनमें अन्तिम भावना ब्राह्मी भावना है और ये उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है।'

नारायण के उपदेशानुसार आचरण करते हुए एक बार इन्द्रद्युम्न के अंतःकरण में भगवान् ब्रह्मा के दर्शन की इच्छा हुई और उसकी इच्छामात्र से तत्काल उसके समीप एक दिव्य विमान उपस्थित हुआ। उसमें बैठकर इन्द्रद्युम्न जब ब्रह्मलोक में पहुँचा, तो वहाँ उसे प्रथम एक तेजोमय मंडल का दर्शन हुआ। उसके परम ध्यान के पश्चात् उसी तेजोमण्डल में चतुर्मुख ब्रह्मा का दर्शन उसने किया। ब्रह्मा ने तुरन्त इन्द्रद्युम्न का आलिंगन किया, जिससे उसके शरीर से भी एक तेज का पुंज निकला और वह आदित्यमंडल में प्रविष्ट हो गया। वहाँ इन्द्रद्युम्न ने भगवान् हिरण्यगर्भ का दिव्य तेज देखा और अपने आपको भी अक्षरस्वरूप देखा। इस प्रकार मोक्ष प्राप्त करता हुआ इन्द्रद्युम्न हिरण्यगर्भ में ही सम्पन्न हो गया।

इन्द्रद्युम्न का उपाख्यान सुनकर मुनियों ने फिर प्रार्थना की कि भगवन् ! इन्द्रद्युम्न वाला ही उपदेश हमें भी सुनाइए। इसी प्रश्न के उत्तर में कूर्म ने ऋषियों को कूर्मपुराण सुनाया। इसमें कहा गया है कि सबसे पूर्व नारायण रूप मैं ही था। जब सृष्टि का समय आया, तब मेरे चित्त में पहले प्रसाद का उदय हुआ। इसका स्पष्ट आशय है कि पहले सत्त्वगुण का प्रादुर्भाव हुआ, सत्त्वगुण का ही रूप प्रसन्नता है। उस प्रसाद से ब्रह्मा प्रादुर्भूत हुए। तत्पश्चात् किसी कारण से नारायण के चित्त में क्रोध का उदय हुआ। इसका तात्पर्य है कि प्रकृति के तीसरे गुण 'तम' का प्रादुर्भाव हुआ। उससे शूलपाणि तीन नेत्र वाले 'रुद्र' प्रादुर्भूत हुए। उनका रूप भयंकर तेजोदीप्त सूर्य के समान था। मानों त्रिलोकी का दाह करने के लिए वे उद्यत थे। उसी समय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूलप्रकृति महामाया उस नारायण के वाम पार्श्व में उपस्थित हुई। इसका आशय है कि भगवान् ने सृष्टि करने के लिए रजोगुण प्रधान प्रकृति को अपनाया। इस पर ब्रह्मा ने प्रार्थना की कि इस देवी के द्वारा मोह को प्रसादपूर्ण कीजिये तभी मैं सृष्टि की रचना कर सकूंगा। केवल शुद्ध ज्ञान के रहते सृष्टि नहीं रची जा सकती। ब्रह्मा की प्रार्थना सुनकर नारायण ने उस देवी से कहा 'अब तू मोह का विस्तार कर।' महामाया ने मोह का विस्तार किया और तब ब्रह्मा ने सृष्टि की।

सर्वप्रथम ब्रह्मा ने मरीचि आदि ऋषियों को उत्पन्न किया। किन्तु अन्यान्य पुराणों में कहा गया है कि ब्रह्मा ने पहले सनत्कुमारों को उत्पन्न किया। सनत्कुमारों को सृष्टि बढ़ाने की आज्ञा जब ब्रह्मा ने दी तब उन्होंने स्पष्ट कहा कि हम इस प्रपंच में नहीं पड़ेंगे और वे तपस्या करने चले गये। अब सृष्टि की प्रक्रिया रुकती देखकर ब्रह्मा की प्रार्थना पर नारायण ने मोह को उत्पन्न किया। उसी मोह से आवृत मरीचि आदि ऋषियों ने सृष्टि आरम्भ की। इन सारे विवरणों का तात्पर्य यही है कि विशुद्ध ज्ञान रूप निर्विकार ब्रह्मा से सृष्टि नहीं हो सकती थी। उसके साथ मोहक मायाशक्ति का सम्बन्ध आवश्यक था, इसलिए सृष्टि में मायाशक्ति की प्रधानता मानी जाती है।

कूर्मपुराण में इसके अनन्तर पहले सृष्टि का संक्षिप्त वर्णन किया गया है, जिसमें कहा गया है कि पहले ब्रह्मा ने अपने मुखादि अंगों से ब्रह्माण्ड आदि चारों वर्गों की सृष्टि की। आदि सत्ययुग में उत्पन्न मनुष्यों को मानसी सिद्धि प्राप्त थी। वृक्षादि के द्वारा उन्हें अपने उपयोग के लिए यथेच्छ अन्नवस्त्रादि प्राप्त हो जाते थे। इसका अभिप्राय तो यही हो सकता है कि जब तक मनुष्यों की संख्या अल्प थी और वे गृहशिल्पों से अनभिज्ञ थे, तब तक वे मूल, फल, वल्कल आदि से ही अन्न तथा वस्त्र की समस्या हल कर लेते थे। आवास की समस्या भी प्रकृति से ही लेते थे। हमने पहले बतलाया है कि सिद्धियों के नष्ट हो जाने पर मकान बनाने और कृषि आदि करने की प्रवृत्ति मनुष्यों में हुई। इस प्रकार आधुनिक विकासवाद का सिद्धान्त पुराणों में भी प्राप्त होता है। केवल भेद इतना ही है कि विकासवाद वाले इस स्थिति का उत्तरोत्तर उन्नत रूप का वर्णन करते हैं और पुराण आदि सभ्यता के अनुसार इसको ह्रास कहते हैं। केवल दोनों में दृष्टिकोण का भेद है। आधिभौतिक दृष्टि में अधिकाधिक कलाओं का प्रसार उन्नति की ओर अग्रसर हो रहा है और आध्यात्मिक दृष्टि में वह क्रमिक अवनति की ओर है। क्योंकि जितना परिग्रह बढ़ता है, उतने ही राग-द्वेष, छल-प्रपंच आदि बढ़ते जाते है और शुद्ध आत्मा पर अधिकाधिक आवरण चढ़ता जाता है। इसलिए, पाश्चात्यों का विकासवाद और भारतीयों का ह्रासवाद एक ही है। निरूपण में दृष्टिकोण के भेद से ये दोनों वाद अत्यन्त विरुद्ध दिखाई देते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके अनन्तर 'कूर्मपुराण' में भाल-तिलक का निरूपण है। शिवभक्त को ललाट पर भस्म का त्रिपुण्ड धारण करना चाहिए। विष्णुभक्त को गन्ध और जल से त्रिशूल की आकृति का ऊर्ध्वपुण्ड और ब्रह्मा के भक्त को सूर्यमण्डल के समान ब्रह्मतेज-युक्त शुक्लविन्दु धारण करना चाहिए। इसका तात्पर्य है कि जिस देवता का भक्त हो, उसी का चिन्ह उसे अपने ललाट पर धारण करना चाहिए, जिससे अन्य लोग उसके साथ उसके इष्टदेव की ही चर्चा किया करें। इसके अतिरिक्त, इस तिलक का यह भी फल है कि ललाट की शिराओं में यदि कोई दोष संक्रान्त हुआ हो, तो तिलक के द्रव्य अपने गुणों से उन दोषों को दूर कर दें।

इसके आगे भगवान् महेश्वर के चार कूटों का वर्णन मिलता है। अव्यक्त से भी परे उनका एक अन्तर्यामी स्वरूप है, वही सर्वोत्कृष्ट प्रथम व्यूह है। महेश्वर ही प्रकृति और पुरुष में प्रविष्ट होकर दोनों को क्षुब्ध करते हैं। यह क्षोभ भी उसी प्रकार का है, जिस प्रकार मद से स्त्रियों में एक प्रकार का क्षोभ होता है। ऐसा क्षोभ पैदा कर देने की शक्ति वसन्त ऋतु की वायु में भी है, जो प्राणियों में उन्माद भर देती है। इसी प्रकार महेश्वर अपने योग-रूप से पुरुष और प्रकृति में प्रविष्ट होकर उन्हें क्षुब्ध करते हैं। प्रकृति और पुरुष भी महेश्वर के ही रूप है, अतः क्षोभक और क्षोभ्य महेश्वर ही हैं। क्षुब्ध प्रधान और पुरुष सम्मिलित रूप से महान् के रूप में प्रकट होते है। यहीं 'महान्' सम्पूर्ण जगत् का बीज है। इसलिए, १. महान् २. आत्मा ३. मति ४. ब्रह्मा ५. प्रबुद्धि ६. ख्याति ७. ईश्वर ८. प्रज्ञा ९. वृत्ति १०. स्मृति आदि एक ही तत्त्व के नाम हैं। इसके बाद उसी से अहंकार प्रादुर्भूत होता है, जो जीव कहलाता है। अव्यक्त से उत्पन्न होने वाला मन इस अहंकार का प्रथम विकार है। इसी के कारण जीव कर्त्ता बनता है और संसार को देखता है। यह 'मन' दो प्रकार का है। प्रथम 'मन' सर्वेन्द्रिय-नियामक है जिसके बिना कोई इन्द्रिय कुछ नहीं काम कर सकती। दूसरा 'मन' स्वयं इन्द्रिय-रूप है। यही 'मन' सुख-दुःख आदि का ज्ञान कराता है। अहंकार से ही तन्मात्रा और भूतों का प्रादुर्भाव है। ये सभी तत्त्व मिलकर एक अण्ड बनाते हैं। यह अण्ड जब प्रबुद्ध होता है, तब इसमें ब्रह्मा नाम से क्षेत्रज्ञ पुरुष प्रादुर्भूत होता है। यही प्रथम शरीरधारी है और इसे ही पुरुष कहते हैं। श्रुति और पुराणों में इसे ही हिरण्यगर्भ कहा गया है। यह अण्ड अप् तेज, वायु, आकाश अहंकार, महान् और अव्यक्त से आवृत है। आवृत करने वाले ये सभी लोक कहे जाते हैं और इन लोकों के अभियानी योगधर्मा ईश्वर कहे जाते हैं। ये सर्वज्ञ, रजोगुण-रहित और नित्य आनन्दमय हैं। इन सारे विवरणों का तात्पर्य है कि महेश्वर की प्रथम मूर्ति बीज-रूप है और सप्तलोकात्मक ब्रह्माण्ड में प्रादुर्भूत हिरण्यगर्भ उनकी द्वितीय मूर्ति है। फिर रजोगुण-रूप ब्रह्मा तीसरी मूर्ति हैं। वही मूर्ति सृष्टि के समय चतुर्मुख ब्रह्मा के रूप में व्यक्त होती है, जो पालन के समय सत्त्वगुण-विशिष्ट विष्णु का रूप और संहार के समय

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुद्र का रूप हो जाती है। पूर्वोक्त प्रकृति से परे अंतर्यामी रूप को सम्मिलित कर लेने पर ये ही महेश्वर के चार व्यूह हो जाते हैं।

'कूर्मपुराण' की कथा जब आगे बढ़ती है, तब ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनों देवताओं के नामों का एक ही अर्थ मिलता है। फिर सृष्टि का आरम्भ करते हुए अन्य पुराणों के समान ही इसमें भी विष्णु के नाभि-कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति, कर्णमल से उत्पन्न मधु-कैटभ का ब्रह्मा को त्रास देना, योगनिद्रा की प्रेरणा से विष्णु का जागकर उसको मारना आदि वर्णित है। फिर सृष्टि-विस्तार में महेश्वर की अष्टमूर्तियों के योगदान का भी विस्तार से वर्णन मिलता है।

मैथुनी सृष्टि-प्रक्रिया को आरम्भ करते हुए 'कूर्मपुराण' का कहना है कि जब ब्रह्मा ने सृष्टि के लिए तप किया, तब अर्द्धनारीश्वर-रूप में शंकर ने उन्हें दर्शन दिया। इसी अर्द्धनारीश्वर-रूप से मैथुनी सृष्टि का आरम्भ हुआ। पुरुष-रूप से रुद्र आविर्भूत हुए और स्त्री-रूप से लक्ष्मी का प्रादुर्भाव हुआ। यहाँ पिता-पुत्र के रूप में वर्णित त्रिदेवों का पूर्ण विस्तार के साथ कथा के आधार पर एकत्व दिखलाया गया है।

फिर, मैथुनी सृष्टि में दक्ष की कन्याओं का वर्णन है। उनकी सन्तानों में दिति' के पुत्र दैत्यों का विशेष विवरण दिया गया है। दैत्य-पुत्र प्रह्लाद के चरित्र में अन्य पुराणों की अपेक्षा 'कूर्मपुराण' में कुछ विलक्षणता है। 'दिति' के पुत्र हिरण्यकशिपु ने जब ब्रह्मा से वरदान प्राप्त कर देवताओं को विशेष पीड़ित किया और देवता जब क्षीरशायी विष्णु की शरण में गये, तब विष्णु ने सुमेरु के सदृश विशालकाय और अपने समान ही शंख-चक्रधारी एक पुरुष को उत्पन्न किया और उसे हिरण्यकशिपु का वध करने की आज्ञा दी। वह गरुड पर चढ़कर हिरण्यकशिपु के पुर में गया। वहाँ उसने हिरण्यकशिपु के चार पुत्रों प्रह्लाद, अनुह्लाद संह्राद और ह्राद को युद्ध के लिए आहूत किया। उन चारों से जब युद्ध आरम्भ हुआ तब इस महान् पुरुष ने अपने हाथों से उठा-उठाकर उन चारों को दूर फेक दिया। तत्पश्चात् हिरण्यकशिपु स्वयं उपस्थित हुआ और उस पुरुष पर उसने अपने वज्र-सदृश चरण का प्रहार किया। उसके चरण प्रहार से विह्वल हो वह पुरुष गरुड़ पर आरूढ़ हो विष्णु के पास भाग गया और निवेदन किया कि हिरण्यकशिपु मुझसे नहीं मारा जायेगा। अब विष्णु ने स्वयं आग्नेय सिंह का रूप धारण किया और संहारणी नामक शक्ति पर आरुढ़ हो वे हिरण्यकशिपु के नगर में आये। इस अद्भुत रूप नृसिंह को मारने के लिए पहले हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद आदि अपने पुत्रों और भाई को भेजा। हिरण्यकशिपु के भ्राता हिरण्याक्ष इस नृसिंह-रूप पर पाशुपत अस्त्र का प्रहार किया। किन्तु उससे नृसिंह को कोई हानि नहीं हुई। युद्ध के क्रम में प्रह्लाद को जब नृसिंह परास्त किया तब उनके स्पर्श से प्रह्लाद में सत्त्वगुण जाग उठा और उसने नृसिंह को परमेश्वर मानकर प्रणाम किया। उसने अपने पिता को भी समझाया, कि ये सब

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगत् के उत्पादक पर पुरुष हैं। यही विष्णु है यही महादेव हैं, इनके साथ युद्ध मत करो। किन्तु हिरण्यकशिपु ने नहीं माना और युद्ध करने लगा। इस पर नरसिंह ने अपने तीक्ष्ण नखों से हिरण्यकशिपु का हृदय विदीर्ण कर उसका वध कर दिया। अपने भाई को मरा देखकर हिरण्याक्ष भाग गया पर अनुह्लाद आदि तीनों पुत्र नरसिंह भगवान् द्वारा मारे गये। अब दैत्यों का राजा प्रह्लाद बना। उधर हिरण्याक्ष भागकर रसातल में छिप गया। इसके लिए विष्णु को वराह रूप धारण करना पड़ा और उन्होंने इसी हिरण्याक्ष को मारा तथा पृथ्वी का उद्धार किया। अब प्रह्लाद पूर्ण रूप से वेदानुयायी होकर विष्णु का भक्त बन गया। किन्तु एक दिन एक ब्राह्मण ने प्रह्लाद द्वारा यथोचित सत्कार नहीं प्राप्त करने के कारण उसे शाप दे दिया। तुम्हारा सत्त्वगुण नष्ट हो जायेगा। सत्त्व से विच्युत प्रह्लाद पिता का प्रतिशोध लेने के लिए विष्णु के साथ ही युद्ध में प्रवृत्त हो गया। किन्तु विष्णु ने मारा नहीं, केवल पराजित ही किया। इससे उसमें पुनः ज्ञान का प्रादुर्भाव हुआ और उसने विरक्त होकर राज्य का परित्याग कर दिया।

प्रह्लाद के पश्चात् हिरण्याक्ष का पुत्र अन्धक दैत्यों का राजा बना। यह दुष्ट भगवान् महेश्वर की परमा शक्ति भगवती पार्वती के रूप पर ही आसक्त हो गया और इस फिराक में लगा कि कब पार्वती का अपहरण करूँ! एक दिन अवसर पाकर भगवती पार्वती को प्राप्त करने के लिए अन्धकासुर कैलास पर्वत पर चढ़ गया। उस समय भगवान् शंकर ब्राह्मणों के हित के लिए भूमण्डल में भ्रमण करने चले गये थे, जिसका पता अन्धक को था। उधर शंकर जी के बाहर चले जाने के कारण विष्णु स्त्री-रूप धारण करके पार्वती की सखी के रूप में उनके साथ रहने लगे थे और नन्दीश्वर तथा गणपति द्वारपाल होकर कैलास में पार्वती की रक्षा कर रहे थे। इन लोगों ने सम्मिलित रूप से अन्धक के साथ युद्ध किया और उसे अन्त में परास्त करके भगा दिया। उसी समय भगवान् शंकर भी भूमण्डल का भ्रमण करके कैलास पर आ गये। सारावृत्तान्त सुनकर उन्होंने विष्णु, गणपति, नन्दीश्वर आदि का अभिनन्दन किया। भगवान् शंकर के पुनः अपने स्थान पर आगमन की बात सुनकर सारे देवगण उनके दर्शनार्थ आये। वे देवता वहाँ स्त्री रूपधारी विष्णु को देखकर शंकर से पूछ बैठे कि ये देवी कौन है? शंकर ने मन्दहासपूर्वक परिचय दिया कि ये संपूर्ण जगत् के कर्ता, हर्ता और मेरे ही रूप विष्णु हैं। पार्वती और ये दोनों ही मेरी परमा शक्ति हैं। इन्हीं की सहायता से मैं जगत् की उत्पत्ति, संहार आदि करता हूँ। इसी अवसर पर अन्धकासुर ने भारी तैयारी करके पार्वती के धर्षणार्थ कैलास पर पुनः आक्रमण किया। अन्धक की असह्य दुष्टता को देखकर विष्णु भगवान् ने शंकर से कहा कि इस दुष्ट का अवश्य संहार कीजिये। आपके अतिरिक्त और किसी से नहीं मारा जायेगा। भगवान् शंकर ने तुरन्त अपना भैरव रूप धारण किया और अति भयंकर युद्ध के पश्चात् अन्धकासुर का वध

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर दिया। तभी से शंकर 'अन्धकारि', 'अन्धकान्तक', 'अन्धकरिपु' आदि नामों से विख्यात हुए।

अन्धक की विस्तृत कथा के पश्चात् इस पुराण में सूर्यवंश के राजाओं का संक्षिप्त वर्णन है। इसके बाद चन्द्रवंश का कुछ विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है। इसी चन्द्रवंश के यादव-वंश में भगवान् कृष्ण का अवतार है। कृष्ण के अन्य चरित्रों का वर्णन यहाँ नहीं प्राप्त है। कूर्मपुराण में कृष्ण के केवल उसी चरित्र का वर्णन है, जिसमें कहा गया है कि जाम्बवती के गर्भ से अत्युत्कृष्ट पुत्र की प्राप्ति के लिए कृष्ण ने शंकर की अत्युग्र आराधना की थी। यह कथा महाभारत के अनुशासन पर्व में स्वयं कृष्ण के द्वारा वर्णित है, जिसका विवरण यहाँ भी मिलता है।

जाम्बवान् की पुत्री जाम्बवती से कृष्ण ने स्यमन्तकमणि के प्रसंग में विवाह किया। इस विवाह के पश्चात् श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी के गर्भ से प्रद्युम्न आदि अनेक प्रभावशाली पुत्रों की उत्पत्ति की। जाम्बवती ने कृष्ण से विशेष रूप से प्रार्थना की कि मेरे गर्भ से एक प्रभावशाली पुत्र को उत्पन्न कीजिये, जो आपके सभी पुत्रों से उत्कृष्ट हो। इस पर भगवान् कृष्ण ने कहा कि ऐसे उत्कृष्ट पुत्र की प्राप्ति तो शंकर के प्रसाद के बिना नहीं हो सकती। अतः मैं शंकर की तपस्या करने जाता हूँ। गरुड़ को द्वारका की रक्षा में नियुक्त करके श्रीकृष्ण हिमालय में भगवान् शंकर की आराधना करने चले गये। वहाँ बहुत से शिवभक्तों के आश्रमों में ये आतिथ्य और स्तुति ग्रहण करते हुए परम शिवभक्त उपमन्यु के आश्रम में पहुँचे। इन उपमन्यु की कथा महाभारत में विस्तार से है। शिव की कृपा से उपमन्यु ने महोच्च पद प्राप्त किया था। अपने आश्रम में आये हुए भगवान् कृष्ण का पूर्ण सत्कार उपमन्यु ने किया। फिर, भगवान् कृष्ण को शिव-मन्त्र की दीक्षा देकर आराधना का सब प्रकार बता दिया। दीक्षित होकर श्रीकृष्ण तप करने लगे। कठिन तपस्या के पश्चात् पार्वती सहित शंकर ने इन्हें दर्शन दिया और मन्दहासपूर्वक कहा कि आप क्यों तप कर रहे हैं? आप और मैं तो एक ही हूँ। आपकी जो इच्छा है, पार्वती से प्राप्त कर लीजिये। कृष्ण के प्रणाम और स्तुति करने पर पार्वती ने उन्हें पुत्र का वरदान दिया, और आठ वर दिये। तदनन्तर भगवान् शंकर अपने सखा कृष्ण को अपने निवास में ले गये। वहाँ कैलास पर वास करने वाली शक्तियाँ और अप्सरायें भगवान् कृष्ण के रूप-सौन्दर्य पर मुग्ध हो उठीं। उनकी मनः कामना पूर्ण करने के लिए भगवान् कृष्ण उनके साथ बहुत काल तक विहार करते रहे। इधर द्वारका को कृष्ण-रहित जानकर कई दैत्यावतार राजाओं ने उस पर आक्रमण कर दिया। गरुड यथाशक्ति द्वारका की रक्षा करते रहे। किन्तु अनेक राजाओं के भारी आक्रमणों को रोकने में अपने को असमर्थ समझकर वे कृष्ण को लिवा लाने उपमन्यु के आश्रम में गये। गरुड़ को वहाँ पता लगा कि वे शंकर के साथ उनके पुर में चले

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गये हैं। अन्त में, गरुड पुनः द्वारका वापस आ गये और शत्रुओं के आक्रमणों से द्वारका की रक्षा करते रहें। एक दिन नारद कृष्ण से मिलने द्वारका पहुँचे। वहाँ सब लोगों ने नारद से प्रार्थना की कि आप तो सर्वत्र विचरते हैं, बतलाइये, इस समय भगवान् कृष्ण कहाँ है? नारद ने कृष्ण का सारा विवरण सुना दिया। गरुड तुरन्त शंकर के धाम में पहुँचे, और द्वारका पर घिरी विपत्ति का वर्णन उन्होंने कृष्ण को सुनाया। भगवान् कृष्ण ने एक झटके में ही अपनी विहार-लीलाओं को छोड़ शंकर से विदा ली, और तुरंत गरुड पर सवार होकर द्वारका आ धमके। कृष्ण का आगमन जानकर सारे शत्रु अपने-आप भाग खड़े हुए और कृष्ण बहुत काल तक पूर्ववत् द्वारका का शासन करते रहे।

कृष्ण की उस तपस्या के प्रभाव से जाम्बवती के गर्भ से बड़ा प्रभावशाली पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम 'साम्ब' रखा गया। इसके अनन्तर श्रीकृष्ण परम धाम पधार गये। अपने उद्धारकर्ता के परम धाम-गमन के पश्चात् युधिष्ठिर विक्षिप्त—जैसे हो गये और इधर-उधर भ्रमण कर दिन व्यतीत करने लगे। एक दिन उन्हें मार्ग में जाते हुए व्यास भगवान् का दर्शन हुआ। युधिष्ठिर ने पूछा कि आप कहाँ पधार रहे हैं? व्यास ने उत्तर दिया कि 'अब कलियुग आ गया है। जनता में अनाचार फैलेगा। मैं अब श्रीविश्वनाथ की पुरी काशी जा रहा हूँ। वहीं निवास करूँगा।' इसी प्रसंग में व्यास ने युगों का वर्णन और कलियुग का आख्यान विस्तार से युधिष्ठिर को सुनाया है। आगे व्यास जब काशी पहुँचे, तब वहाँ सब ऋषि-मुनि इनकी सेवा करने लगे। एक बार जैमिनि ने व्यास से प्रश्न किया कि भगवन्! शास्त्रों में बहुत-से जप, तप, कर्म, ज्ञान, उपासना, व्रत, तीर्थ, आदि वर्णित हैं, उनमें आपकी सम्मति में सबसे उत्कृष्ट धर्म कौन-सा है? व्यास भगवान् ने कहा—हे ऋषि! ऐसा ही प्रश्न एक बार भगवती पार्वती ने शंकर के समक्ष उपस्थित किया था। उस समय शंकर ने जो उत्तर दिया था, वही मैं आप लोगों को सुनाता हूँ और उन्होंने उमा-महेश्वर-संवाद सुनाया, जिसमें कहा गया है कि काशीपुरी का निवास तप, व्रत, नियम आदि सभी से उत्कृष्ट धर्म है। यहीं विस्तार से काशी में निवास का माहात्म्य और काशी-निवास के नियम आदि वर्णित हुए हैं। फिर, आगे भुवन-विन्यास के वर्णन में स्वायम्भुव मनु के वंश का वर्णन, ज्योतिः संनिवेश में भूः तथा भुवः लोक का वर्णन, सप्तद्वीपों आदि का वर्णन है। इसके बाद विष्णु-वंश का वर्णन करते हुए 'कूर्मपुराण' का पूर्वार्ध समाप्त किया गया है।

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में पहले सांख्य-योग के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है और तब मनुष्यों का आचार-शास्त्र वर्णित है। फिर तीर्थों के प्रसंग में प्रयाग, रुद्रकोटि तीर्थ, केदारतीर्थ, नर्मदातीर्थ, भृगुतीर्थ, पंचनदतीर्थ आदि का वर्णन आता है और अन्त में प्राकृत प्रतिसर्ग का वर्णन किया गया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूर्मपुराण के प्रतिपाद्य-विषय बृहन्नारदीयपुराण में इस प्रकार वर्णित हैं।

ब्रह्मोवाच—

शृणु वत्स ! मरीचेऽद्य पुराणं कूर्म्मसंज्ञितम् ।
लक्ष्मीकल्पानुचरितं यत्र कूर्म्मवपुर्हरिः ।।

धर्मार्थकाममोक्षाणां माहात्म्यञ्च पृथक् पृथक् ।
इन्द्रद्युम्नप्रसंगेन प्राहर्षिभ्यो दयाधिकम् ।।

तत्सप्तदशसाहस्रं सचतुःसंहितं शुभम् ।
यत्र ब्राह्मया (संहितया) पुरा प्रोक्ता धर्म्मा नानाविधे मुने ।।

नानाकथाप्रसङ्गेन नृणां सद्गतिदायकाः" ।

तत्पूर्वभागे—

"तत्रपूर्वविभागे तु पुराणोपक्रमः पुरा ।
लक्ष्मीप्रद्युम्नसंवादः कूर्मर्षिगणसङ्कथा ।।

वर्णाश्रमाचारकथा जगदुत्पत्तिकीर्तनम् ।
कालसंख्यासमासेन लयान्ते स्तवनं विभोः ।।

ततः संक्षेपतः सर्गः शाङ्करं चरितं तथा ।
सहस्रनाम पार्वत्या योगस्य च निरूपणम् ।।

भृगुवंशसमाख्यानं ततः स्वायंभुवस्य च ।
देवादीनां समुत्पत्तिर्दक्षयज्ञाहतिस्ततः ।।

दक्षसृष्टिकथापश्चात् कश्यपान्वयकीर्त्तनम् ।
आत्रेयवंशकथनं कृष्णाय चरितं शुभम् ।।

मार्कण्डकृष्णसंवादो व्यासपाण्डवसंकथा ।
युगधर्म्मानुकथनं व्यासजैमिनिकीकथा ।।

वाराणस्याश्च माहात्म्यं प्रयागस्य ततः परम् ।
त्रैलोक्यवर्णनञ्चैव वेदशाखानिरूपणम् ।।"

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदुत्तरभागे—

उत्तरेऽस्य विभागे तु पुरा गीतेश्वरी ततः ।
व्यासगीता ततः प्रोक्ता नानाधर्मप्रबोधिनी ।।

नानाविधानां तीर्थानां माहात्म्यञ्च पृथक् ततः ।
नानाधर्मप्रकथनं ब्राह्मीयं संहिता स्मृता ।।

अतः परं भगवती संहितार्थनिरूपणे ।
कथिता यत्र वर्णानां पृथग्वृत्तिरुदाहृता ।।

तदुत्तरभागे भागवत्याख्यद्वितीयसंहितायाः पञ्चसु पादेषु—

"पादेऽस्याः प्रथमे प्रोक्ता ब्राह्मणानां व्यवस्थितिः ।
सदाचारात्मिका वत्स ! भोगसौख्यविवर्द्धिनी ।।

द्वितीये क्षत्रियाणान्तु वृत्तिः सम्यक् प्रकीर्तिता ।
यया त्वाश्रितया पापं विधूयेह व्रजेद्दिवम् ।।

तृतीये वैश्यजातीनां वृत्तिरुक्ता चतुर्विधा ।
यया चरितया सम्यग् लभते गतिमुत्तमाम् ।।

चतुर्थेऽस्यास्तथा पादे शूद्रवृत्तिरुदाहृता ।
यया सन्तुष्यति श्रीशो नृणां श्रेयोविवर्द्धनः ।।

पञ्चमेऽस्यास्ततः पादे वृत्तिः शङ्करजन्मनाम् ।
यया चरितयाऽऽप्नोति भाविनीमुत्तमां जनिम् ।।

इत्येषा पञ्चपाद्युक्ता द्वितीया संहिता मुने ।
तृतीयात्रोदिता सौरी नृणां कामविधायिनी ।।

षोढा षट्कर्मसिद्धिं सा बोधयन्ती च कामिनाम् ।
चतुर्थी वैष्णवी नाम मोक्षदा परिकीर्तिता ।।

चतुष्पदी द्विजादीनां साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी ।
ताः क्रमात् षट्चतुर्द्वीषु सहस्राः परिकीर्तिताः ।।

तत्फलश्रुतिः—

"एतत्कूर्मपुराणन्तु चतुर्वर्गफलप्रदम् ।
पठतां शृण्वतां नृणां सर्वोत्कृष्टगतिप्रदम् ।।

लिखित्वैतत्तु यो भक्त्या हेमकूर्मसमन्वितम् ।
ब्राह्मणायायने दद्यात् स याति परमां गतिम् ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराणों के रचयिता और काल

'अष्टादशपुराणानां कर्ता सत्यंवतीसुतः' इस प्रसिद्ध सूक्ति के अनुसार पौराणिकों के मत में अठारहो पुराणों के निर्माता भगवान् कृष्णद्वैपायन वेदव्यास हैं। उन्होंने श्री मद्भागवतपुराण के अनुसार द्वापर और कलियुग के सन्धिकाल में १८ पुराणों की रचना की है। अतः पुराणों का रचनाकाल आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व मानना उचित है। अन्तःसाक्ष्य अथवा अहेतुक तर्क के आधार पर भिन्न-भिन्न पुराणों का भिन्न-भिन्न समय कल्पित करना अप्रामाणिक है।

महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास का चरित्र लोकविश्रुत है। वे उपरिचरवसु की औरसपुत्री तथा निषादराज की पालिता पुत्री सत्यवती के गर्भ से और पराशर मुनि के वीर्य से उत्पन्न हुए थे। उनका जन्म यमुना के एक द्वीप में हुआ था इसीलिए वे 'द्वैपायन' के नाम से प्रख्यात थे। उनका शरीर कृष्ण वर्ण का था और इसी से वे कृष्ण या कृष्णमुनि के नाम से प्रसिद्ध हुए। दोनों को मिलाने से उनका नाम कृष्ण-द्वैपायन पड़ा। वेदों के उपबृंहण करने के कारण वे 'वेदव्यास' पूरे नाम से और अधिक-तर 'व्यास' जैसे छोटे नाम से पुकारे जाते थे।

व्यासजी ब्रह्मा के मानस पुत्र वसिष्ठ के प्रपौत्र, शक्ति के पौत्र, पराशर के पुत्र तथा शुकाचार्य के पिता थे—

व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम्।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम्॥

●

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतज्ञता–ज्ञापन

सर्वप्रथम इस पुस्तक के शीघ्र एवं सुचारु प्रकाशन का श्रेय तो सम्मेलन के वर्तमान प्रधान मन्त्री डॉ० प्रभात शास्त्री को ही है, जो राजर्षि टण्डन के समय से ही पुराण-प्रकाशन योजना के पक्षधर रहे हैं। अतः उन्हें इसके लिए जितना धन्यवाद एवं साधुवाद दिया जाय वह थोड़ा ही है। इसके बाद हम इस कार्य में जिनकी कृति से सहायता प्राप्त की है उनके प्रति शिरसा अभिवादन पूर्वक अपना आभार प्रकट करते हैं। वे हैं प्रातः स्मरणीय पण्डितवर श्रीयुतपञ्चाननतर्करत्न। फिर जिन लोगों ने मुझे इस कार्य में सहकार किया है, उनको मैं नहीं भूल सकता। उनके प्रति मेरी हार्दिक शुभाशंसा है। उनके नाम हैं––आचार्य श्री रुद्रप्रसाद मिश्र, श्री हरिमोहन पाण्डेय, श्री शेषमणि पाण्डेय, और श्री विजयनारायण मालवीय। साथ ही कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में १२ वें अध्याय से अध्याय ४६ तक डॉ० तमिस्रा वनर्जी द्वारा किये गये अनुवाद से ग्रन्थ के शीघ्र प्रकाशन में जो सहयोग प्राप्त हुआ है, तदर्थ हम आभारी हैं।

अन्त में 'करकृतमपराधं क्षन्तुमर्हन्ति सन्तः'––इस अभ्यर्थना के साथ मैं अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ।

संवत्
२०५०
गंगा-दशहरा

तारिणीश झा
हिन्दी साहित्य सम्मेलन
इलाहाबाद

●

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

कूर्मपुराणम्

॥ अथ इन्द्रद्युम्नस्य मोक्षप्राप्तिवर्णनम् ॥

ओं नमस्कृत्याप्रमेयाय विष्णवे कूर्मरूपिणे ।
पुराणं संप्रवक्ष्यामि यदुक्तं विश्वयोनिना ॥१

मैं अप्रमेय, कूर्मरूपी विष्णु को प्रणाम करके ब्रह्मा द्वारा कथित पुराण (कूर्म-पुराण) का वर्णन करूँगा ।१

'सत्रान्ते सूतमनघं[२] नैमिषेया महर्षयः ।
पुराणसंहितां पुण्यां पप्रच्छू रोमहर्षणम् ॥२

यज्ञ के अन्त में नैमिषारण्य के महर्षियों ने निष्पाप रोमहर्षण नामक सूत से पवित्र पुराण संहिता के विषय में प्रश्न किया ।२

त्वया सूत महाबुद्धे भगवान् ब्रह्मवित्तमः[३] ।
इतिहासपुराणार्थं व्यासः सम्यगुपासितः ॥३

हे महाबुद्धिमान् सूत ! आपने इतिहास और पुराणों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् व्यास की अच्छी तरह उपासना की है ।३

तस्य ते सर्वरोमाणि वचसा हर्षितानि यत् ।
द्वैपायनस्य तु भवांस्ततो वै रोमहर्षणः ॥४

उन भगवान् व्यास के वचन से आपके सभी रोम खिल (हर्षित हो) गये थे, इस लिए आप रोमहर्षण कहलाये ।४

भवन्तमेव भगवान् व्याजहार स्वयं प्रभुः ।
मुनीनां संहितां[४] वक्तुं व्यासः पौराणिकीं पुरा ॥५

---

१. सवान्ते इति पा० । २. सूतमनघा इति पा० । ३. ब्रह्मसंयुतः इति पा० । ४. संहिता वक्तुं व्यासः पौराणिकीः पुरा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वकाल में स्वयं प्रभु भगवान् व्यास ने आपको ही मुनियों के समीप पौराणिक संहिता को बतलाया था ।५

त्वं हि स्वायम्भुवे यज्ञे सुत्याहे[1] विततते सति[2] ।
संभूतः संहितां वक्तुं स्वांशेन पुरुषोत्तमः ॥६

ब्रह्मा के यज्ञ में यज्ञान्तस्नान हो जाने पर आप पुराणसंहिता कहने के लिए पुरुषोत्तम भगवान् के अंश से उत्पन्न हुए हैं ।६

तस्माद्भवन्तं पृच्छामः पुराणं कौर्ममुत्तमम् ।
वक्तुमर्हसि चास्माकं पुराणार्थविशारद ॥७

इसलिए हम आपसे कूर्मपुराण के बारे में पूछते हैं । हे पुराणों के अर्थ करने में दक्ष ! हमें आप वह बतायें ।७

मुनीनां वचनं श्रुत्वा सूतः पौराणिकोत्तमः ।
प्रणम्य मनसा प्राह गुरुं सत्यवतीसुतम् ॥८

पुराण-वेत्ताओं में श्रेष्ठ सूत ने मुनियों का वचन सुनकर सत्यवती पुत्र व्यास जी को मन ही मन प्रणाम करके कहा ।८

रोमहर्षण उवाच

नमस्कृत्य जगद्योनिं कूर्मरूपधरं हरिम् ।
वक्ष्ये पौराणिकीं दिव्यां कथां पापप्रणाशिनीम् ॥९

रोमहर्षण बोले—संसार के आदिकारण कूर्मरूपधारी विष्णु को प्रणाम करके मैं पापनाशिनी पौराणिक दिव्य-कथा कहूँगा ।९

यां श्रुत्वा पापकर्मापि [3]गच्छेत परमां गतिम् ।
न नास्तिके कथां पुण्यामिमां ब्रूयात्कदाचन ॥१०

जिसे सुनकर, पापकर्म करने वाला भी परमगति को प्राप्त करेगा । यह पवित्र कथा नास्तिकों को कभी भी नहीं बताना चाहिए ।१०

श्रद्दधानाय शान्ताय धार्मिकाय द्विजातये ।
इमां कथामनुब्रूयात्साक्षान्नारायणेरिताम् ॥११

श्रद्धालु, शान्त, धार्मिक, द्विजाति को यह साक्षात् नारायण के द्वारा कही गयी कथा सुनानी चाहिए ।११

---

१. सत्यादौ इति पा०—सप्ताहे इति पा० । सुत्याहे सुत्या यज्ञार्थं स्नानं तस्याः अहः तस्मिन् इत्यर्थः । २. हरिः इति पा० । ३. गच्छेत इति आर्षमात्मनेपदम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितञ्चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥१२

सृष्टि, प्रतिसर्ग (मरीचि प्रभृति ब्रह्मा के मानस पुत्रों द्वारा की गई सृष्टि) राजवंश, मन्वन्तर तथा राजवंश का चरित्र-वर्णन—यह पुराणों का पाँच लक्षण हैं।१२

ब्राह्मं पुराणं प्रथमं पाद्मं [1]वैष्णवमेव च ।
शैवं भागवतञ्चैव भविष्यं नारदीयकम् ॥१३

पहला ब्रह्मपुराण, दूसरा पद्मपुराण, तीसरा विष्णु पुराण, चौथा शिवपुराण, पाँचवाँ भागवत पुराण, छठा भविष्य पुराण, सातवाँ नारदीय पुराण।१३

मार्कण्डेयमथाग्नेयं ब्रह्मवैवर्त्तमेव च ।
लैङ्गं तथा च वाराहं[2] स्कान्दं वामनमेव च ॥१४

आठवाँ मार्कण्डेय पुराण, नवाँ अग्निपुराण, दशवाँ ब्रह्मवैवर्त पुराण, ग्यारहवाँ लिङ्ग पुराण, बारहवाँ वाराह पुराण, तेरहवाँ स्कन्द पुराण, चौदहवाँ वामन पुराण ।१४

कौर्म्मं मात्स्यं[3] गारुडञ्च वायवीयमनन्तरम्[4] ।
अष्टादशं समुद्दिष्टं ब्रह्माण्डमिति संज्ञितम् ॥१५

पन्द्रहवाँ कूर्मपुराण, सोलहवाँ मत्स्य पुराण, सत्रहवाँ गरुड़ पुराण, अठारहवाँ (वायु पुराण[1]) ब्रह्माण्ड पुराण कहा गया है।१५

अन्यान्युपपुराणानि मुनिभिः कथितानि तु ।
अष्टादश पुराणानि श्रुत्वा संक्षेपतो द्विजाः ॥१६

द्विजगण! मुनियों ने इन्हीं अठारह पुराणों को संक्षेप से सुनकर दूसरे उपपुराण कहे हैं।१६

आद्यं सनत्कुमारोक्तंनारसिंहमतः परम् ।
तृतीयं स्कान्दमुद्दिष्टं कुमारेण तु भाषितम् ॥१७

---

१. वैष्णवमुच्यते इति पा० । २. वराहञ्च इति पा० ३. मात्स्यं च गरुडम् इति पा० । ४. मनुत्तमम् इति पा० ।

१—यहाँ गणना के अनुसार १९ पुराण हो जाते हैं जो कि असंगत हैं। अतएव शिवपुराण और वायु पुराण को एक ही मानकर १८ की गणना पूरी करनी चाहिए।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले उपपुराण को सनत्कुमार ने कहा। उसके बाद नरसिंह उपपुराण है। स्कन्द उपपुराण को कुमार ने कहा था।१७

चतुर्थं शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम्।
दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं नारदीयमतः परम् ॥१८

चौथा शिवधर्म उपपुराण है, जिसे साक्षात् नन्दीश्वर ने कहा था। पाचवाँ दुर्वासा का कहा हुआ आश्चर्य उपपुराण है। इसके बाद छठा नारदीय उपपुराण है।१८

कापिलं वामनञ्चैव तथैवोशनसेरितम्।
ब्रह्माण्डं वारुणञ्चैव कालिकाह्वयमेव च ॥१९

सातवाँ कापिल उपपुराण और आठवाँ वामन उपपुराण है। उसी प्रकार उशना का कहा हुआ नवम उपपुराण है, दशवाँ ब्रह्माण्ड उपपुराण है, ग्यारहवाँ वारुण उपपुराण, और बारहवाँ कालिका उपपुराण है।१९

माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम्।
पराशरोक्त[1] मारीचं तथैव भार्गवाह्वयम् ॥२०

तेरहवाँ माहेश्वर उपपुराण, चौदहवाँ साम्ब उपपुराण, पन्द्रहवाँ सर्वार्थ प्रकाशक सौर उपपुराण, सोलहवाँ पराशर उपपुराण, सत्रहवाँ मारीच उपपुराण एवं अठारहवाँ भार्गव उपपुराण है।२०

इदन्तु पञ्चदशकं पुराणं कौर्ममुत्तमम्।
चतुर्द्धा संस्थितं पुण्यं संहितानां प्रभेदतः ॥२१

यह पन्द्रहवाँ कूर्म पुराण उत्तम है। संहिताओं के भेद से पवित्र यह पुराण चार प्रकार से कहा गया है।२१

ब्राह्मी भागवती सौरी वैष्णवी च प्रकीर्त्तिताः।
चतस्रः संहिताः पुण्या धर्मकामार्थमोक्षदाः[2] ॥२२

धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष देने वाली पवित्र चारों संहितायें ये हैं—ब्राह्मी, भागवती, सौरी और वैष्णवी।२२

इयन्तु संहिता ब्राह्मी चतुर्वेदैस्तु सम्मिता।
भवन्ति षट् सहस्राणि श्लोकानामत्र संख्यया ॥२३

यह ब्राह्मी संहिता चारों वेदों से सम्मत है। इसमें छः हजार श्लोक हैं।२३

---

१. पराशरोक्तमपरं० मारीचम् इति पा०। २. सर्वपापप्रणाशनाः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्र धर्म्मार्थकामानां मोक्षस्य च मुनीश्वराः ।
माहात्म्यमखिलं ब्रह्म ज्ञायते परमेश्वरः[1] ॥२४

मुनिश्रेष्ठो ! इसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का सम्पूर्ण माहात्म्य है। इसमें परमेश्वर ब्रह्म माने गये हैं ।२४

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं पुण्या दिव्या प्रासङ्गिकी कथा ॥२५

सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, वंशचरित्र तथा दिव्य पुण्य कथा इसमें वर्णित हैं ।२५

ब्राह्मणाद्यैरियं धार्या धार्मिकैर्वेदपारगैः[2] ।
तामहं वर्णयिष्यामि व्यासेन कथितां पुरा ॥२६

धार्मिक और वेद पारंगत ब्राह्मण आदि को यह कथा धारण करनी चाहिए। इस कथा का वर्णन करूँगा जिसे पहले व्यास जी ने कहा था ।२६

पुरामृतार्थं दैतेयदानवैः सह देवताः ।
मन्थानं मन्दरं कृत्वा ममन्थुः क्षीरसागरम् ॥२७

पूर्वकाल में अमृत के लिए देवता और दानव एक साथ मिलकर मन्दराचल को मथानी बनाकर क्षीरसागर का मंथन करने लगे ।२७

मथ्यमाने तदा तस्मिन्कूर्मरूपी जनार्दनः ।
बभार[3] मन्दरं देवो देवानां हितकाम्यया ॥२८

मंथनकाल में कूर्मरूपधारी विष्णु ने देवताओं की हित कामना से मन्दराचल को धारण किया ।२८

देवाश्च तुष्टुवुर्देवं नारदाद्या महर्षयः ।
कूर्मरूपधरं दृष्ट्वा साक्षिणं विष्णुमव्ययम् ॥२९

नारद आदि महर्षि और देवगण कूर्म रूपधारी, साक्षात् अविनाशी विष्णु को देख कर उनकी स्तुति करने लगे ।२९

[4]तदन्तरेऽभवद्देवी श्रीर्नारायणवल्लभा ।
जग्राह भगवान् विष्णुस्तामेव पुरुषोत्तमः ॥३०

---

१. ब्रह्मन् ज्ञायते पारमेश्वरम् इति पा० । २. शान्तमानसैरिति पा० । ३. दधार मन्दरं देवो लोकानाम् इति पा० । ४. तदन्तरे-तत्र अवकाशे तदा इत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय लक्ष्मी देवी नारायण की पत्नी हुईं। पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु ने उन्हीं को ग्रहण किया।३०

तेजसा[1] विष्णुमव्यक्तं नारदाद्या महर्षयः।
मोहिताः सह शक्रेण [2]श्रेयोवचनमब्रुवन् ॥३१

इन्द्र समेत नारद आदि महर्षिगण उनकी कान्ति से मोहित होकर उन्हीं अव्यक्त विष्णु से यह कल्याणकारी वचन कहने लगे।३१

भगवन् देवदेवेश नारायण जगन्मय।
कैषा देवी विशालाक्षी यथावद्ब्रूहि[3] पृच्छताम्[4] ॥३२

देव! देवेश! जगन्मय! भगवन्! नारायण! ये विशाल नेत्रों वाली देवी कौन हैं—हम लोगों को यथार्थतः बतला दें।३२

श्रुत्वा तेषां तदा वाक्यं विष्णुर्दानवमर्दनः।
प्रोवाच देवीं संप्रेक्ष्य नारदादीनकल्मषान् ॥३३

उनका वचन सुनकर दैत्यों का मर्दन करने वाले विष्णु ने देवी की ओर देखकर निष्पाप नारद आदि से कहा।३३

इयं सा परमा शक्तिर्मन्मयी ब्रह्मरूपिणी।
माया मम प्रियानन्ता ययेदं [5]धार्यते जगत् ॥३४

ये ब्रह्मरूपी परमा शक्ति और मत्स्यरूपा माया मेरी प्रिया और अनन्त है। इन्होंने जगत् का धारण किया है।३४

अनयैव जगत्सर्वं सदेवासुरमानुषम्।
मोहयामि द्विजश्रेष्ठा ग्रसामि विसृजामि च ॥३५

यही देवता असुर और मनुष्य सहित सम्पूर्ण जगत् को धारण कर रही है। हे द्विजश्रेष्ठगण! इन्हीं के द्वारा मैं संसार को मोहित, संहार एवं सृष्टि करता हूँ।३५

उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानामागतिं गतिम्।
विद्यया[6] वीक्ष्य चात्मानं तरन्ति विपुलामिमाम् ॥३६

उत्पत्ति, प्रलय, प्राणियों के जन्म, मरण, विद्या द्वारा आत्मा का ज्ञान करके जीव इस विपुल माया को पार करते हैं।३६

---

१. तेजसा अव्यक्तं दुर्दर्शेन ज्योतिषा अस्पष्टदृष्टमित्यर्थः। २. श्रेयोवचनं श्रेयःप्रधानं वचनं प्रशस्यतमं वचनमित्यर्थः। ३. यथावद्वक्तुमर्हसि इति पा०। ४. पृच्छतां नः, सम्बन्धविवक्षायां षष्ठी। ५. मोहितमिति पा०। ६. विज्ञायान्वीक्ष्य चात्मानं भवन्ति इति पा०। विज्ञायोद्वीक्ष्य इति पा०। विज्ञाय वीक्ष्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्यास्त्वंशानधिष्ठाय शक्तिमन्तोऽभवन् सुराः[1] ।
ब्रह्मेशानादयः सर्वे सर्वशक्तिरियं मम ॥३७

ब्रह्मा, शंकर आदि सभी देवगण इसके अंशों को अधिष्ठित करके शक्तिमान् हुए हैं । यह मेरी शक्ति है ।३७

सैषा सर्वजगत्सूतिः प्रकृतिस्त्रिगुणात्मिका ।
प्रागेव मत्तः संजाता श्रीः कल्पे[2] पद्मवासिनी ॥३८

सो यह सम्पूर्ण जगत् को उत्पन्न करने वाली त्रिगुणात्मिका प्रकृति है । पूर्व कल्प में यह मुझसे पहले ही उत्पन्न हुई लक्ष्मी है । यह कमलों पर निवास करती है ।३८

चतुर्भुजा शङ्खचक्रपद्महस्ता स्रगन्विता[3] ।
कोटिसूर्यप्रतीकाशा मोहिनी सर्वदेहिनाम् ॥३९

इनकी चार भुजायें हैं, जिनमें शंख, चक्र, कमल और माला सुशोभित हैं । करोड़ों सूर्य के समान इनकी कान्ति है । ये सभी प्राणियों को मोहित करने वाली है ।३९

नालं देवा न पितरो मानवा वासवोऽपि च ।
मायामेतां समुत्तर्तुं ये चान्ये भुवि देहिनः ॥४०

इस माया को उल्लंघन करने में देवता, पितर, मनुष्य, इन्द्र और पृथ्वी पर के दूसरे शरीरधारी कोई भी समर्थ नहीं है ।४०

इत्युक्ता वासुदेवेन मुनयो विष्णुमब्रुवन् ।
ब्रूहि त्वं पुण्डरीकाक्ष यद्धि कालक्षयेऽपि[4] च ॥४१

विष्णु के ऐसा कहने पर मुनियों ने उनसे कहा 'हे पुण्डरीकाक्ष ! कालक्षय होने पर जो होगा वह हमें बतायें' ।४१

अथोवाच हृषीकेशो मुनीन्मुनिगणार्चितः[5] ।
अस्ति द्विजातिप्रवर इन्द्रद्युम्न इति श्रुतः ॥४२

इसके उपरान्त मुनिगणों से पूजित विष्णु ने कहा—इन्द्रद्युम्न नाम से प्रसिद्ध एक द्विजवर था ।४२

---

१. द्विजाः इति पा० । २. पद्मे कल्पवासिनी इति पा० । ३. शुभान्विता इति पा० । सुकान्तिका इति पा० । ४. यदि कालत्रयेऽपि सः इति, येन सा तारिता पुरा इति, यथा कालत्रयेऽपि च इति च पा० । ५. मुनीनां पुरतः प्रभुः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वजन्मनि राजासावधृष्यः शङ्करादिभिः ।
दृष्ट्वा मां कूर्मसंस्थानं श्रुत्वा पौराणिकीं[1] स्वयम् ॥४३

पूर्व जन्म में वह राजा था, जिसे शंकर आदि भी नहीं दबा सकते थे। मुझे कूर्मरूप में देखकर स्वयं मेरे मुख से उसने पौराणिकी संहिता सुनी।४३

संहितां मन्मुखाद्दिव्यां पुरस्कृत्य मुनीश्वरान् ।
ब्रह्माणञ्च महादेवं देवांश्चान्यान् स्वशक्तिभिः ॥४४

फिर मुनीश्वरों, ब्रह्मा, महादेव और अन्य देवों को अपनी शक्तियों से आगे करके मेरे मुख से दिव्य संहिता सुनी।४४

मच्छक्तौ संस्थितान् बुद्ध्वा मामेव शरणं गतः ।
सम्भाषितो मया चाथ[2] विप्रयोनिं गमिष्यसि ॥४५

वह उन्हें अपनी शक्तियों से मेरी शक्ति में अवस्थित जानकर मेरी ही शरण में प्राप्त हुआ। तब मैंने उससे कहा—तुम ब्राह्मणयोनि को प्राप्त करोगे।४५

इन्द्रद्युम्न इति ख्यातो जातिं स्मरसि पौर्विकीम् ।
सर्वेषामेव भूतानां देवानामप्यगोचरम् ॥४६

तुम इन्द्रद्युम्न नाम से विख्यात तथा जातिस्मर (पूर्व जन्म की बातों का स्मरण करने वाले) होगे। सभी प्राणियों और देवताओं के लिए भी अगम्य (ज्ञान तुम्हें बतलाऊँगा) ।४६

वक्तव्यं यद्गुह्यतमं दास्ये ज्ञानं तवानघ ।
लब्ध्वा तन्मामकं ज्ञानं मामेवान्ते प्रवेक्ष्यसि ॥४७

निष्पाप ! जो अत्यन्त गुह्य ज्ञान है, उसे मैं तुम्हें दूंगा। मेरा वह ज्ञान प्राप्त करके अन्त में तुम मुझमें ही प्रवेश करोगे।४७

अंशान्तरेण[3] भूम्यां त्वं तत्र तिष्ठ सुनिर्वृतः ।
वैवस्वतेऽन्तरेऽतीते कार्यार्थं मां प्रवेक्ष्यसि ॥४८

दूसरे अंश से तुम पृथ्वी पर निश्चिन्त होकर रहो और वैवस्वत मन्वन्तर के बीत जाने पर तुम मुझमें प्रवेश करोगे।४८

मां प्रणम्य पुरीं गत्वा पालयामास मेदिनीम् ।
कालधर्मं गतः कालाच्छ्वेतद्वीपे मया सह ॥४९

---

१. पौराणिकान्वयमिति पा०। २. स चोदितो मया चैव इति पा०। ३. अंशावतारे इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे प्रणाम करके राजधानी में जाकर इन्द्रद्युम्न पृथ्वी का पालन करने लगा। समय से निधन हो जाने पर वह श्वेतद्वीप में मेरे साथ (रहा) ।४९

भुक्त्वा तान्वैष्णवान्[1] भोगान्योगिनामप्यगोचरान् ।
मदाज्ञया मुनिश्रेष्ठा जज्ञे विप्रकुले पुनः ॥५०

मुनिश्रेष्ठो ! वहाँ उसने उन वैष्णव भोगों को भोगा, जो योगियों के लिए भी दुर्लभ हैं। फिर मेरी आज्ञा से वह ब्राह्मण-वंश में उत्पन्न हुआ ।५०

ज्ञात्वा मां वासुदेवाख्यं यत्र द्वे निहितेऽक्षरे ।
विद्याविद्ये गूढरूपं[2] यद्ब्रह्म परमं विदुः ॥५१

मुझ वासुदेव को जिसमें दो अक्षर निहित हैं, जिसके विद्या और अविद्या—ये दो रूप हैं और जिसे परम ब्रह्म कहा गया है, इन्द्रद्युम्न ने जान लिया ॥५१

सोऽर्च्चयामास भूतानामाश्रयं परमेश्वरम् ।
व्रतोपवासनियमैर्होमैर्ब्राह्मणतर्पणैः ॥५२

वह व्रत, उपवास, नियम, होम तथा ब्राह्मण-परितोषण द्वारा सभी प्राणियों के आश्रय परमेश्वर की अर्चना करने लगा ।५२।

तदाशीस्तन्नमस्कारस्तन्निष्ठस्तत्परायणः ।
आराधयन् महादेवं योगिनां हृदि संस्थितम् ॥५३॥

उन्हीं के जप, उन्हीं के नमस्कार, उन्हीं के प्रति निष्ठा एवं तत्परायणता रखकर योगियों के हृदय में अवस्थित महादेव की अराधना करने लगा ।५३

तस्यैवं वर्त्तमानस्य कदाचित्परमा कला ।
स्वरूपं दर्शयामास दिव्यं विष्णुसमुद्भवम् ॥५४

उस राजा के इस प्रकार रहने पर कभी परमा कला ने विष्णु से उत्पन्न अपना दिव्य स्वरूप दिखलाया ।५४।

दृष्ट्वा प्रणम्य सिरसा विष्णोर्भगवतः प्रियाम्[3] ।
संस्तूय विविधैः स्तोत्रैः कृताञ्जलिरभाषत ॥५५॥

उसने भगवान् विष्णु की प्रिया को देखकर सिर से प्रणाम किया और अनेक प्रकार के स्तोत्रों से स्तुति करके हाथ जोड़कर कहा ।५५

---

१. विपुलान् इति पा० । २. गूढरूपे इति पा० । ३. प्रभामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्द्रद्युम्न उवाच

का त्वं देवि विशालाक्षि विष्णुचिह्नाङ्किते शुभे ।
याथातथ्येन वै भावं तवेदानीं ब्रवीहि[1] मे ॥५६

इन्द्रद्युम्न बोले—देवि ! विशालनेत्रे ! शुभे ! विष्णु के चिह्न से अंकित आप कौन हैं ? अपना यथार्थ स्वरूप इस समय मुझसे बता दें ।५६

तस्य तद्वाक्यमाकर्ण्य सुप्रसन्ना सुमङ्गला ।
हसन्ती संस्मरन्विष्णुं[2] प्रियं ब्राह्मणमब्रवीत् ॥५७

उसकी यह बात सुनकर सुप्रसन्ना सुमंगला देवी ने मुसकराकर प्रियतम विष्णु का स्मरण करके ब्राह्मण से कहा ।५७

श्रीरुवाच

न मां पश्यन्ति मुनयो देवाः शक्रपुरोगमाः ।
नारायणात्मिकामेकां मायाहं तन्मयी परा ॥५८

लक्ष्मी बोली—मुझे मुनि तथा इन्द्र आदि देवतागण नहीं देख पाते हैं । मैं नारायणस्वरूप, अकेली, विष्णुमयी, परमा माया हूँ ।५८

न मे नारायणाद्भेदो विद्यते हि विचारतः ।
तन्मय्यहं परं ब्रह्म स विष्णुः परमेश्वरः ॥५९

विचार करके देखो तो मुझमें नारायण से कोइ भेद नहीं है। मैं नारायणमयी, परब्रह्म हूँ और वे विष्णु परमेश्वर हैं ।५९

येऽर्च्चयन्तीह भूतानामाश्रयं[3] पुरुषोत्तमम् ।
ज्ञानेन कर्मयोगेन न तेषां प्रभवाम्यहम् ॥६०

जो यहाँ प्राणियों के आश्रय पुरुषोत्तम की अर्चना ज्ञानयोग या कर्मयोग के द्वारा करते हैं, उन पर मेरा कोई प्रभाव नहीं पड़ता है ।६०

तस्मादनादिनिधनं कर्मयोगपरायणः ।
ज्ञानेनाराधयानन्तं[4] ततो मोक्षमवाप्स्यसि ॥६१

इसलिए कर्मयोगपरायण होकर ज्ञान के द्वारा आदि-अन्त से रहित विष्णु की आराधना करो ! उससे मोक्ष प्राप्त करोगे ।६१

---

१. आर्षःप्रयोगः ब्रूहि । २. आर्षः प्रयोगः संस्मरन्ती । ३. भूतानामालयम् इति पा० । ४. ज्ञानेनाराधयेशानम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्युक्तः स मुनिश्रेष्ठ इन्द्रद्युम्नो महामतिः ।
प्रणम्य शिरसा देवीं प्राञ्जलिः पुनरब्रवीत् ॥६२

मुनिवर ! ऐसा कहे जाने पर महाबुद्धिमान् इन्द्रद्युम्न ने देवी को सिर से प्रणाम करके हाथ जोड़कर पुनः कहा ।६२

कथं स भगवानीशः शाश्वतो निष्कलोऽच्युतः ।
ज्ञातुं हि शक्यते देवि ब्रूहि मे परमेश्वरि ॥६३

देवी परमेश्वरी ! नित्य, निष्कल, अच्युत भगवान् विष्णु को किस प्रकार जाना जा सकता है, वह बतायें ।६३

एवमुक्ताथ[1] विप्रेण देवी कमलवासिनी ।
सक्षान्नारायणो ज्ञानं दास्यतीत्याह तं मुनिम् ॥६४

विप्र के ऐसा पूछने पर कमलवासिनी देवी ने उस मुनि से कहा कि साक्षात् नारायण ज्ञान देंगे ।६४

उभाभ्यामथ हस्ताभ्यां संस्पृश्य प्रणतं मुनिम् ।
स्मृत्वा परात्परं विष्णुं तत्रैवान्तरधीयत ॥६५

प्रणाम करते हुए मुनि को दोनो हाथों से छूकर परात्पर विष्णु का स्मरण करके वहीं अन्तर्धान हो गई ।६५

सोऽपि नारायणं द्रष्टुं परमेण समाधिना ।
आराधयद्धृषीकेशं[2] प्रणतार्त्तिप्रभञ्जनम् ॥६६

ब्राह्मण भी नारायण का दर्शन करने के लिए परम समाधि लगाकर प्रणाम करने वाले की पीड़ा हरने वाले हृषीकेश भगवान् की आराधना करने लगा ।६६

ततो बहुतिथे काले गते नारायणः स्वयम् ।
प्रादुरासीन्महायोगी[3] पीतवासा जगन्मयः ॥६७

तब बहुत समय बीत जाने पर महायोगी, पीताम्बर तथा जगन्मय स्वयं नारायण प्रकट हुए ।६७

दृष्ट्वा देवं समायान्तं विष्णुमात्मानमव्ययम् ।
जानुभ्यामवनिं गत्वा तुष्टाव गरुडध्वजम् ॥६८

---

१. एवमुक्ता तु देवेन इति पा० । २. आद्यं परं हृषीकेशं प्रणतार्त्तिप्रणाशनम् इति पा० । ३. आविरासीत् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मस्वरूप एवं अविनाशी विष्णु को आते हुए देखकर घुटने टेककर गरुड़वाहन की स्तुति करने लगे ।६८

इन्द्रद्युम्न उवाच

यज्ञेशाच्युत गोविन्द माधवानन्त केशव ।
कृष्ण विष्णो हृषीकेश तुभ्यं विश्वात्मने नमः ॥६९

इन्द्रद्युम्न ने कहा—यज्ञेश, अच्युत, गोविन्द, माधव, अनन्त, केशव, कृष्ण, विष्णु, हृषीकेश, विश्वात्मा, आपको नमस्कार है ।६९

नमोऽस्तु ते पुराणाय हरये[1] विश्वमूर्त्तये ।
सर्गस्थितिविनाशानां हेतवेऽनन्तशक्तये ॥७०

पुराणपुरुष, हरि, विश्वमूर्ति, सृष्टि, स्थिति और प्रलय के हेतु भूत तथा अनन्त शक्ति सम्पन्न को नमस्कार है ।७०

निर्गुणाय नमस्तुभ्यं निष्कलाय[2] नमोनमः ।
पुरुषाय नमस्तेऽस्तु विश्वरूपाय ते नमः ॥७१

निर्गुण आपको नमस्कार है । निष्कल को बार-बार नमस्कार है । पुरुष को नमस्कार है । विश्वरूप ! आपको नमस्कार है ।७१

नमस्ते वासुदेवाय विष्णवे विश्वयोनये ।
आदिमध्यान्तहीनाय ज्ञानगम्याय ते नमः ॥७२

वासुदेव, विष्णु, विश्वयोनि, आदि मध्य और अन्त से हीन तथा ज्ञानगम्य ! आपको नमस्कार है ।७२

नमस्ते निर्विकाराय निष्प्रपञ्चाय ते नमः ।
भेदाभेदविहीनाय नमोऽस्त्वानन्दरूपिणे[3] ॥७३

हे निर्विकार, निष्प्रपञ्च ! आपको नमस्कार है । भेद और अभेद से विहीन तथा आनन्दरूपी को नमस्कार है ।७३।

नमस्ताराय शान्ताय नमोऽप्रतिहतात्मने ।
अनन्तमूर्त्तये तुभ्यममूर्त्ताय नमो नमः ॥७४

तारक तथा शान्त को नमस्कार है । अप्रतिहतात्मा को नमस्कार है । हे अनन्तमूर्ति ! आपको नमस्कार है । मूर्तिहीन को बार-बार नमस्कार है ।७४

---

१. विष्णवे विश्वयोनये इति पा० । २. निष्कलायामलात्मने इति पा० । ३. नमस्त्वानन्दमूर्त्तये इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमस्ते परमार्थाय मायातीताय ते नमः ।
नमस्ते परमेशाय ब्रह्मणे परमात्मने ॥७५

परमार्थ ! आपको नमस्कार है। मायातीत ! आपको नमस्कार है। परमेश ! आपको नमस्कार है। ब्रह्म तथा परमात्मा को नमस्कार है।७५

नमोऽस्तुते सुसूक्ष्माय महादेवाय[1] ते नमः ।
नमः शिवाय[2] शुद्धाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥७६

हे सुसूक्ष्म ! आपको नमस्कार है। महादेव ! आपको नमस्कार है। शिव को नमस्कार है। शुद्ध और परमेष्ठी को नमस्कार है।७६।

त्वयैतत्सृष्टमखिलं[3] त्वमेव परमा गतिः ।
त्वं पिता सर्वभूतानां त्वं माता पुरुषोत्तम ॥७७

आपने ही इस सम्पूर्ण संसार की सृष्टि की है। आप ही परमगति हैं। हे पुरुषोत्तम ! सभी प्राणियों के आप ही पिता हैं और माता हैं।७७

त्वमक्षरं परं धाम चिन्मात्रं व्योम[4] निष्कलम् ।
सर्वस्याधारमव्यक्तमनन्तं तमसः परम् ॥७८

आप अक्षर, अविनाशी परम धाम हैं। चिन्मात्र, व्योम और निष्कल हैं। सबके आधार, अव्यक्त, अनन्त और तम से परे हैं।७८

प्रपश्यन्ति[5] परात्मानं ज्ञानदीपेन केवलम् ।
प्रपद्ये[6] भवतो रूपं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥७९

योगी लोग केवल ज्ञान-रूपी दीपक से परमात्मा को देखते हैं। मैं आपके रूप को प्राप्त करूँ वही विष्णु का परम पद है।७९

एवं स्तुवन्तं भगवान् भूतात्मा भूतभावनः ।
उभाभ्यामथ हस्ताभ्यां पस्पर्श प्रहसन्निव ॥८०

इस प्रकार स्तुति करते हुए इन्द्रद्युम्न का प्राणियों की आत्मा और प्राणियों को उत्पन्न करने वाले भगवान् ने अपने दोनों हाथों से, मानो हँसते हुए स्पर्श किया।८०

स्पृष्टमात्रो भगवता विष्णुना मुनिपुङ्गवः ।
यथावत्परमं तत्त्वं ज्ञातवांस्तत्प्रसादतः ॥८१

---

१. मायातीताय ते नमः इति पा०। २. नमस्ते शिवरूपाय इति पा०। ३. त्वयैव सृष्टमखिलम् इति पा०। ४. व्योमसंस्थितम् इति पा०। ५. प्रविशन्ति महात्मान इति, प्रपश्यंति महात्मान इति पा०। ६. प्रपद्यन्ते ततो रूपम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् विष्णु के स्पर्श मात्र से मुनिश्रेष्ठ इन्द्रद्युम्न ने उनकी कृपा से अविकल रूप में परम तत्त्व को जान लिया ।८१

ततः प्रहृष्टमनसा प्रणिपत्य जनार्दनम् ।
[1]प्रोवाचोन्निद्रपद्माक्षं पीतवाससमच्युतम् ॥८२

तदनन्तर अत्यन्त हर्षित चित्त से जनार्दन को प्रणाम करके विकसित कमल के समान नेत्र वाले पीताम्बर अच्युत से कहा ।८२

त्वत्प्रसादादसन्दिग्धमुत्पन्नं पुरुषोत्तम ।
ज्ञानं ब्रह्मैकविषयं परमानन्दसिद्धिदम् ॥८३

हे पुरुषोत्तम ! आपकी कृपा से असंदिग्ध तथा परमानन्द सिद्धिदायक एक मात्र ब्रह्मविषयक ज्ञान मुझे उत्पन्न हो गया ।८३

नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय वेधसे[2] ।
किं करिष्यामि योगेश[3] तन्मे वद जगन्मय ॥८४

भगवन् ! आपको नमस्कार है । वासुदेव और वेधा को नमस्कार है । हे योगेश्वर, तथा जगन्मय ! मुझे बतायें कि मैं क्या करूँ ?।८४

श्रुत्वा नारायणो वाक्यमिन्द्रद्युम्नस्य माधवः[4] ।
उवाच सस्मितं वाक्यमशेषं जगतो हितम्[5] ॥८५

नारायण माधव ने इन्द्रद्युम्न की बात सुनकर सम्पूर्ण जगत् का हित करने वाला वचन मुस्कराकर कहा—।८५

श्रीभगवानुवाच

वर्णाश्रमाचारवतां पुंसां देवो महेश्वरः ।
ज्ञानेन भक्तियोगेन पूजनीयो न चान्यथा ॥८६

श्री भगवान् बोले—वर्णाश्रम के आचार से युक्त मनुष्यों को ज्ञान एवं भक्ति योग से महेश्वर देव का पूजन करना चाहिए दूसरा कोई उपाय नहीं ।८६

विज्ञाय तत्परं तत्त्वं विभूतिं कार्यकारणम् ।
प्रवृत्तिञ्चापि मे ज्ञात्वा मोक्षार्थी श्वरमर्च्चयेत् ॥८७

परमतत्त्व, विभूति, कार्यकारण तथा प्रवृत्ति को भी जानकर मोक्षार्थी पुरुष ईश्वर की अर्चना करे ।८७

---

१. प्रोवाच तं स.पद्माक्षम् इति षा० । २. हेतवे इति पा० । ३. योगेन इति पा० । ४. धीमतः इति, धीमते इति पा० । ५. मशेषजगतो हितमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वसंगान्परित्यज्य ज्ञात्वा मायामयं जगत् ।
अद्वैतं भावयात्मानं द्रक्ष्यसे परमेश्वरम् ॥८८

सब प्रकार के संगों को त्याग कर संसार को मायामय जानकर आत्मा में अद्वैत की भावना करे। ऐसा करने से तुम परमेश्वर को देखोगे।८८

त्रिविधां भावनां ब्रह्मन्प्रोच्यमानां विबोध[1] मे ।
एका मद्विषया तत्र द्वितीया व्यक्तसंश्रया[2] ॥८९

ब्रह्मन् ! कही जाने वाली तीन प्रकार की भावनायें मुझसे समझ लो। उनमें एक मेरे विषय की है और दूसरी संसार से सम्बन्धित है।८९

अन्या च भावना ब्राह्मी विज्ञेया सा गुणातिगा ।
आसामान्यतमाञ्चाथ भावनां भावयेद्बुधः ॥९०

तीसरी भावना ब्रह्म से सम्बन्धित है। इसे गुणों से परे समझनी चाहिए। विद्वान् व्यक्ति इनमें से किसी एक का आश्रय लेकर ध्यान करे।९०

अशक्तः संश्रयेदाद्यामित्येषा वैदिकी श्रुतिः ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन तन्निष्ठस्तत्परायणः ॥९१

वैदिकश्रुति का कहना है कि यदि सामर्थ्य न हो तो इसमें से पहली भावना का आश्रय ले। इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से निष्ठा और परायणता के साथ (भगवान् की आराधना) करे।९१

समाराधय विश्वेशं ततो मोक्षमवाप्स्यसि ।

इन्द्रद्युम्नउवाच

किन्तत्परतरं तत्त्वं का विभूतिर्जनार्दन ॥९२

विश्वेश्वर की आराधना करने से मोक्ष की प्राप्ति होगी।

इन्द्रद्युम्न बोले—हे जनार्दन ! वह परमतत्त्व क्या है और विभूति क्या है ?।९२

किङ्कार्यं कारणं कस्त्वं प्रवृत्तिश्चापि का तव ।

श्रीभगवानुवाच

परात्परतरं तत्त्वं परं ब्रह्मैकमव्ययम् ॥९३

कार्य क्या है ? कारण क्या है ? आप कौन हैं ? आपकी प्रवृत्ति क्या है ?

श्री भगवान् बोले—परमतत्त्व एक अविनाशी ब्रह्म है।९३

---

१. निशामय इति, मया श्रुणु इति च पा०। २. व्यक्षसंश्रया इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्यानन्दमयं[1] ज्योतिरक्षरं तमसः परम् ।
ऐश्वर्यं तस्य यन्नित्यं विभूतिरिति गीयते ॥९४

वह नित्य आनन्दमय तम से परे और परमज्योति स्वरूप है। इसका जो नित्य ऐश्वर्य है उसे विभूति कहा जाता है।९४

कार्यं जगदथाव्यक्तं कारणं शुद्धमक्षरम् ।
अहं[2] हि सर्वभूतानामन्तर्यामीश्वरः पुरः ॥९५

जगत् इसका कार्य है एवं शुद्ध अक्षर, अव्यक्त इसका कारण है। मैं सभी प्राणियों का अन्तर्यामी, ईश्वर हूँ।९५

सर्गस्थित्यन्तकर्तृत्वं प्रवृत्तिर्मम गीयते ।
एतद्विज्ञाय भावेन यथावदखिलं द्विज ॥९६

सृष्टि, पालन एवं संहार करना मेरी प्रवृत्ति कही गयी है। द्विज ! यह जानकर चिन्तन द्वारा इस सबका यथावत् ज्ञान करो।९६

ततस्त्वं कर्मयोगेन शाश्वतं सम्यगर्च्चय ।

इन्द्रद्युम्न उवाच

के ते वर्णाश्रमाचारा यैः समाराध्यते परः ॥९७

तब तुम कर्मयोग के द्वारा शाश्वत ब्रह्म की सम्यग् अर्चना करो।

इन्द्रद्युम्न बोले—वर्णाश्रम के आचार क्या हैं जिनसे परमात्मा की आराधना की जाय ?।१७

ज्ञानञ्च कीदृशं दिव्यं[3] भावनात्रयसंस्थितम्[4] ।
कथं सृष्टमिदं पूर्वं कथं संह्रियते पुनः ॥९८

तीनों भावनाओं से सम्बद्ध दिव्य ज्ञान क्या है ? पहले यह सृष्टि कैसे की गयी और फिर इसका संहार कैसे किया गया ?।९८

कियत्यः सृष्टयो लोके वंशा मन्वन्तराणि च ।
कानि तेषां प्रमाणानि पावनानि व्रतानि च ॥९९

लोक में सृष्टि कितनी हैं ? वंश और मन्वन्तर कितने हैं ? इसके प्रमाण (परिमाण) क्या हैं ? और पवित्र व्रत कौन हैं।९९

तीर्थान्यर्कादिसंस्थानं पृथिव्यायामविस्तरम्[5] ।
कति द्वीपाः समुद्राश्च पर्वताश्च नदीनदाः ॥१००॥

---

१. नित्यानन्दपरम् इति पा०। २. अहं हि सर्वभावानामीश्वरः प्रभुरव्ययः इति, अन्तर्योगीति पा०। ३. पुण्यम् इति पा०। ४. मिश्रितम् इति पा०। ५. पृथिव्या आयामो दैर्घ्यं विस्तरो विस्तारश्च तयोः समाहारः 'तत विस्तरे' इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीर्थ, सूर्यादिग्रहों के संस्थान एवं पृथ्वी की लम्बाई-चौड़ाई क्या है ? द्वीप, समुद्र, पर्वत, नदी, और नद कितने हैं ?१००

ब्रूहि मे पुण्डरीकाक्ष यथावदधुना[1] पुनः ।
श्रीकूर्म उवाच
एवमुक्तोऽथ तेनाहं भक्तानुग्रहकाम्यया ॥१०१॥

हे पुण्डरीकाक्ष ! सम्प्रति पुनः मुझे ठीक-ठीक बता दें ।

श्रीकूर्म बोले—उसके द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर मैंने भक्त पर अनुग्रह करने की इच्छा से बता दिया ।१०१

यथावदखिलं सम्यगवोचं[2] मुनिपुंगवाः ।
व्याख्यायाशेषमेवेदं यत्पृष्टोऽहं द्विजेन तु ॥१०२॥

मुनिश्रेष्ठो ! मैंने सब बातें यथार्थ रीति से कह डालीं । द्विज ने मुझसे जो पूछा था, उसकी भली-भाँति व्याख्या की ।१०२

अनुगृह्य च तं विप्रं तत्रैवान्तर्हितोऽभवम् ।
सोऽपि तेन विधानेन मदुक्तेन द्विजोत्तमाः ॥१०३॥

उस विप्र पर अनुग्रह करके मैं वहीं अन्तर्धान हो गया । द्विजश्रेष्ठगण ! वह भी मेरे बताये हुए उस विधान से (आराधना करने लगा) ।१०३

आराधयामास परं भावपूतः[3] समाहितः ।
त्यक्त्वा पुत्रादिषु स्नेहं निर्द्वन्द्वो निष्परिग्रहः ॥१०४॥

उसने भक्ति-भाव से पवित्र एवं समाहितचित्त होकर आराधना की । वह पुत्र आदि के प्रति स्नेह-परित्यागपूर्वक निर्द्वन्द्व एवं परिग्रहशून्य हो गया ।१०४

स न्यस्य[4] सर्वकर्माणि परं वैराग्यमाश्रितः ।
आत्मन्यात्मानमन्वीक्ष्य स्वात्मन्येवाखिलं जगत् ॥१०५॥

उसने सर्वकर्मसंन्यास द्वारा परम वैराग्य का आश्रय ले लिया । वह अपने में आत्मदृष्टि तथा अपने आत्मा में सम्पूर्ण जगत् का दर्शन करने लगा ।१०५

संप्राप्य भावनामन्त्यां ब्राह्मीमक्षरपूर्विकाम् ।
अवाप परमं योगं येनैकं[5] परिपश्यति ॥१०६

अक्षरपूर्विका ब्रह्मसम्बन्धिनी भावना प्राप्त करके उसने परम योग प्राप्त किया, जिससे एक अद्वितीय ब्रह्म का अवलोकन होता है ।१०६

---

१. यथावदखिलं मम इति पा० २. सर्वमवोचम् इति पा० । ३. भावैः सदभिप्रायैः पूत इत्यर्थः, भावयुक्तः इति पा० ।४. संन्यस्य इति पा० । ५. येनैव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यं विनिद्राजितश्वासाः[1] कांक्षन्ते मोक्षकांक्षिणः ।
ततः कदाचिद्योगीन्द्रो ब्रह्माणं द्रष्टुमव्ययम्[2] ॥१०७

आलस्यशून्य एवं (प्राणायाम द्वारा) श्वासजयी होकर मोक्ष चाहने वाले व्यक्ति उस ब्रह्म को पाने की इच्छा करते हैं। तदनन्तर वह योगिराज कभी अविनाशी ब्रह्मा को देखने के लिए (गये) ।१०७

जगामादित्यनिर्देशान्मानसोत्तरपर्वतम्[3] ।
आकाशेनैव विप्रेन्द्रो योगैश्वर्यप्रभावतः ॥१०८

वह विप्रेन्द्र सूर्य के निर्देश से मानसरोवर के उत्तर में स्थित पर्वत (मेरुपर्वत) पर अपने योगैश्वर्य के प्रभाव से आकाशमार्ग से ही गया ।१०८

विमानं सूर्यसङ्काशं प्रादुर्भूतमनुत्तमम् ।
अन्वगच्छन्देवगणा गन्धर्वाप्सरसां गणाः ॥१०९

उसके लिए सूर्य के समान तेजस्वी एक अत्युत्कृष्ट विमान प्रकट हुआ। योगीन्द्र के पीछे देवगण, गन्धर्व और अप्सरागण जाने लगे ।१०९

दृष्ट्वान्ये[4] पथि योगीन्द्रं सिद्धा ब्रह्मर्षयो ययुः ।
ततः स गत्वानुगिरिं विवेश सुरवन्दितम् ॥११०

मार्ग में योगेन्द्र को देखकर सिद्ध और ब्रह्मर्षिगण भी साथ हो लिये। पश्चात् योगीन्द्र पर्वत के बीच गमन करते हुए देववन्दित स्थान में पहुँचे ।११०

स्थानं तद्योगिभिर्जुष्टं यत्रास्ते परमः पुमान् ।
संप्राप्य परमं स्थानं सूर्यायुतसमप्रभम् ॥१११

वह स्थान योगियों से सेवित था। जहाँ परमपुरुष विराजमान थे। दस हजार सूर्य के समान वह स्थान भास्वर था ।१११

विवेश चान्तर्भवनं देवानाञ्च दुरासदम् ।
विचिन्तयामास परं शरण्यं सर्वदेहिनाम् ॥११२

वे देवदुर्लभ भवन के भीतर प्रवेश करके एवं समस्त प्राणियों के परम आश्रय भगवान् का चिन्तन करने लगे ।११२

---

१. विनिद्रया अनालस्येन जितो वशीकृतः श्वासो यैस्तथोक्ताः। २. द्रष्टुमुद्यतः इति पा०। ३. मानसोत्तरपर्वतम्। मानससरसः उत्तरस्यां दिशि स्थितं पर्वतं मेरुमित्यर्थः। ४. दृष्टीयैः पथि योगीन्द्र इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनादिनिधनं चैव[1] देवदेवं पितामहम् ।
ततः प्रादुरभूत्तस्मिन् प्रकाशः[2] परमाद्भुतः[3] ॥११३

वे भगवान् जन्म-मृत्यु से रहित, देवों के देव तथा पितामह हैं। तत्पश्चात् वहाँ परम अद्भुत ज्योति प्रादुर्भूत हुई।११३

तन्मध्ये पुरुषं पूर्वमपश्यत्[4] परमं पदम् ।
महान्तं तेजसो राशिमगम्यं ब्रह्मविद्विषाम् ॥११४

उनके बीच पुरातन पुरुष को देखा, जो परम पद, महातेजोराशिस्वरूप तथा ब्रह्मविद्वेषियों के लिए अप्राप्य है।११४

चतुर्मुखमुदाराङ्गमर्चिर्भिरुपशोभितम्[5] ।
सोऽपि योगिनमन्वीक्ष्य प्रणमन्तमुपस्थितम् ॥११५

उनके चार मुख थे और सुन्दर शरीर था। चारों ओर वे ज्वालाओं से सुशोभित थे। उन्होंने प्रणाम करते हुए योगी को उपस्थित देखा।११५

प्रत्युद्गम्य स्वयं देवो विश्वात्मा परिषस्वजे ।
परिष्वक्तस्य देवेन द्विजेन्द्रस्याथ देहतः ॥११६

वे विश्वात्मा देव स्वयं आगे जाकर योगी का आलिंगन करने लगे। देव के द्वारा आलिंगन किये गये द्विजेन्द्र के शरीर से ज्योति निकली।११६

निर्गत्य महती ज्योत्स्ना विवेशादित्यमण्डलम् ।
ऋग्यजुःसामसंज्ञं तत्पवित्रममलं पदम् ॥११७

वह महान् ज्योति निकल कर सूर्य मण्डल में प्रविष्ट हो गयी। उसका नाम ऋक्, यजु और साम पड़ा। वह पवित्र एवं निर्मल पदस्वरूप थी।११७

हिरण्यगर्भो भगवान् यत्रास्ते हव्यकव्यभुक् ।
द्वारं तद्योगिनामाद्यं वेदान्तेषु प्रतिष्ठितम् ॥११८

जहाँ हव्य-कव्य भोजी भगवान् हिरण्यगर्भ विद्यमान थे वही योगियों के आदि द्वार के रूप में वेदान्तों में प्रतिष्ठित हुआ।११८

ब्रह्मतेजोमयं श्रीमद्द्रष्टा[6] चैव मनीषिणाम् ।
दृष्टमात्रो भगवता ब्रह्मणार्चिर्मयो मुनिः ॥११९

---

१. देवमिति पा०। २. प्रकाशः ज्योतिरित्यर्थः। ३. परमात्मनः इति पा०। ४. सर्वं इति पा०। ५. चतुर्भुज इति पा०। ६. श्रीमन्निष्ठा इति, यन्ता देवमनीषिणामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपश्यदैश्वरं तेजः शान्तं सर्वत्रगं शिवम् ।
स्वात्मानमक्षरं व्योम यत्र विष्णोः परं पदम् ॥१२०
आनन्दमचलं[1] ब्रह्म स्थानं तत्परमेश्वरम् ।
सर्वभूतात्मभूतस्थः[2] परमैश्वर्यमास्थितः ॥१२१

वह ब्रह्म तेजोमय, शोभा विशिष्ट एवं मनीषियों का द्रष्टा था। भगवान् ब्रह्मा के देखते ही ज्योतिर्मय मुनि ने शान्त, सर्वत्रगामी, मंगलमय, आत्मस्वरूप, अक्षय, शून्यमय, विष्णु के परमपद, आनन्दमय, अचल तथा परमेश्वर ब्रह्मस्थान, (ईश्वरीय स्थान) को देखा। वह मुनि सभी प्राणियों के आत्मभूत तथा परमैश्वर्य युक्त थे।११९-१२१।

प्राप्तवानात्मनो धाम यत्तन्मोक्षाख्यमव्ययम् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वर्णाश्रमविधौ स्थितः ॥१२२
समाश्रित्यान्तिमं भावं मायां लक्ष्मीं तरेद्बुधः ।

उन्होंने आत्मा के मोक्षरूप अव्ययधाम को प्राप्त किया। इसलिए विद्वान् व्यक्ति सब प्रकार के प्रयत्न से वर्णाश्रम के विधान में अवस्थित होकर अन्तिम भाव का आश्रय लेकर माया-लक्ष्मी का अतिक्रमण करें।१२२½

सूत उवाच

व्याहृता हरिणा त्वेवं नारदाद्या महर्षयः ॥१२३॥
शक्रेण सहिताः सर्वे पप्रच्छुर्गरुडध्वजम् ।

ऋषय ऊचुः

देवदेव हृषीकेश नाथ नारायणाव्यय[3] ॥१२४
तद्वदाशेषमस्माकं यदुक्तं भवता पुरा ।
इन्द्रद्युम्नाय विप्राय ज्ञानं धर्मादिगोचरम्[4] ॥१२५

सूत बोले—भगवान् के ऐसा कहने पर इन्द्रसहित नारद आदि सभी महर्षियों ने भगवान् से पूछा।

ऋषिगण बोले—हे देव-देव, इन्द्रियों के स्वामी नारायण, अव्यय! आपने पूर्वकाल में ब्राह्मण इन्द्रद्युम्न को जिस धर्मादि विषय का ज्ञान दिया था, वह पूर्णरूप से हमें बतायें।१२३-१२५।

---

१. आनन्दनपरमिति पा०। २. भूतः सः इति पा०। ३. नारायणामल इति पा०। ४. धर्मार्थगोचरम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुश्रूषुश्चाप्ययं शक्रः सखा तव जगन्मय ।
ततः स भगवान् विष्णुः कूर्मरूपी जनार्दनः ॥१२६
रसातलगतो देवो नारदाद्यैर्महर्षिभिः ।
पृष्टः प्रोवाच सकलं[1] पुराणं कौर्ममुत्तमम् ॥१२७

हे जगन्मय ! ये इन्द्र आपके मित्र और श्रवण करने के अभिलाषी हैं। तदनन्तर रसातल में जाकर नारद आदि महर्षियों के पूछने पर कूर्मरूपी भगवान् जनार्दन विष्णु ने सम्पूर्ण उत्तम कूर्मपुराण का वर्णन कर दिया।१२६-१२७।

सन्निधौ देवराजस्य तद्वक्ष्ये भवतामहम् ।
धन्यं यशस्यमायुष्यं पुण्यं मोक्षप्रदं नृणाम् ॥१२८

देवराज के समीप मैं आप लोगों से, मनुष्यों के धन, यश, आयु, पुण्य और मोक्ष देने वाले पुराण का वर्णन करूँगा।१२८

पुराणश्रवणं विप्राः कथनञ्च विशेषतः ।
श्रुत्वा चाध्यायमेवैकं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१२९

हे विप्रगण ! पुराण श्रवण तथा विशेषतः पुराण पाठ का एक अध्याय सुनकर मनुष्य सभी पापों से छुटकारा पा जाता है ।१२९

उपाख्यानमथैकं[2] वा ब्रह्मलोके महीयते ।
इदं पुराणं परमं कौर्मं कूर्मस्वरूपिणा ॥१३०
उक्तं वै देवदेवेन[3] श्रद्धातव्यं द्विजातिभिः ॥१३१

पुराण का एक अध्याय अथवा एक उपाख्यान श्रवण करने से ब्रह्मलोक में पूजित होता है कूर्मरूपी देवाधिदेव ने इस श्रेष्ठ कूर्म पुराण को कहा था। इस पर द्विजातियों को श्रद्धा करनी चाहिए ।१३०-१३१।

इति श्रीकूर्मपुराणे इन्द्रद्युम्नमोक्षवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

श्री कूर्मपुराण में इन्द्रद्युम्न-मोक्ष वर्णन नामक पहला अध्याय समाप्त ।१

●

१. भगवान् इति पा० । २. मथांशम् इति पा० । ३. देवाधिदेवेन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीयोऽध्यायः

कूर्म उवाच

श्रृणुध्वमृषयः[1] सर्वे यत्पृष्टोऽहं जगद्धितम् ।
वक्ष्यमाणं मया सर्वमिन्द्रद्युम्नाय भाषितम् ॥१

वर्णाश्रम का वर्णन

कूर्म बोले—ऋषिगण, आप लोग सुनें आपने जो मुझसे पूछा है वह सब मैंने इन्द्र-द्युम्न को बताया था। वह जगत् का कल्याण करने वाला है उसे मैं कह रहा हूँ।१

भूतैर्भव्यैर्भवद्भिश्च[2] चरितैरुपबृंहितम् ।
पुराणं पुण्यदं नृणां मोक्षधर्मानुकीर्त्तनम्[3] ॥२

भूत, भविष्य और वर्तमान चरित्रों से परिवर्धित कूर्मपुराण मनुष्यों को पुण्य देने वाला तथा मोक्ष धर्म से युक्त है।२

अहं नारायणो देवः पूर्वमासीन्न[4] मे परम् ।
उपास्य विपुलां निद्रां भोगिशय्यां समाश्रितः ॥३

मैं पूर्वकाल में नारायण देव था। मुझसे बढ़कर कोई नहीं था। विपुल निद्रा के अवलम्बनपूर्वक शेष शय्या पर आश्रित था।३

चिन्तयामि पुनः सृष्टिं निशान्ते प्रतिबुध्य तु ।
ततो मे सहसोत्पन्नः प्रसादो मुनिपुंगवाः ॥४

पुनः रात्रि के अन्त में जागकर सृष्टि के बारे में सोचने लगा। मुनिश्रेष्ठो, उस समय मुझे एकाएक आनन्द उत्पन्न हुआ।४

चतुर्मुखस्ततो जातो ब्रह्मा लोकपितामहः ।
तदन्तरेऽभवत्क्रोधः कस्माच्चित्कारणात्तदा ॥५

तदन्तर लोक-पितामह चतुर्भुज ब्रह्मा उत्पन्न हुए। उसके बाद किसी कारणवश मुझे क्रोध हो गया।५

आत्मनो[5] मुनिशार्दूलास्तत्र देवो महेश्वरः ।
रुद्रः क्रोधात्मको जज्ञे शूलपाणिस्त्रिलोचनः ॥६

---

१. श्रृणुध्वं मुनयः इति पा०। २. भूतैर्भव्यैर्भविष्यद्भिः इति-भवन्ति इति भवा एव भव्याः वर्त्तमानाः। यद्यपि भव्यशब्दः भविष्यदर्थे रूढस्तथाप्यत्र तद्धित-यप्रत्ययसिद्धतया न तदर्थबोधकः। ३. मोक्षधर्मानुवर्त्तिनाम् इति। ४. अहं पूर्वमासं मे परं मत्तः अन्यत् किञ्चित् न आसीदिति शेषः। ५. आत्मना इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे मुनिश्रेष्ठो ! वहाँ महेश्वर देव मुझसे उत्पन्न हुए । क्रोधमय रुद्र के हाथ में त्रिशूल था और नेत्र तीन थे ।६

तेजसा सूर्यसङ्काशस्त्रैलोक्यं संदहन्निव[1] ।
तदा श्रीरभवद्देवी कमलायतलोचना ॥७

वे सूर्य के समान तेज से मानो तीनों लोक को जला रहे थे । तब कमल के समान विशाल नेत्रों वाली लक्ष्मी उत्पन्न हुई ।७

सुरूपा सौम्यवदना मोहिनी सर्वदेहिनाम् ।
शुचिस्मिता सुप्रसन्ना[2] मङ्गला महिमास्पदा ॥८

वह सुन्दर रूप वाली, सौम्य मुखवाली, सभी देहधारियों को मोहित करने वाली, पवित्र हास्य वाली, सुप्रसन्न, मंगलमयी और महिमायुक्त थी ।८

दिव्यकान्तिसमायुक्ता दिव्यमाल्योपशोभिता ।
नारायणी महामाया मूलप्रकृतिरव्यया ॥९

वह दिव्य कान्ति से सम्पन्न, दिव्य माला से सुशोभित, नारायणी, महामाया तथा अविनाशिनी मूल प्रकृति थी ।९

स्वधाम्ना पूरयन्तोदं मत्पार्श्वं समुपाविशत् ।
तां दृष्ट्वा भगवान् ब्रह्मा मामुवाच जगत्पतिम् ॥१०

अपने तेज से जगत् को पूर्ण करती हुई मेरे बगल में बैठ गयी । उसे देखकर भगवान् ब्रह्मा ने जगत्पति मुझसे कहा ।१०

मोहायाशेषभूतानां नियोजय[3] सुरूपिणीम् ।
येनेयं विपुला सृष्टिर्वर्द्धते[4] मम माधव ॥११

समस्त प्राणियों को मोह में डालने के लिए इस सुन्दरी को नियुक्त कीजिये । माधव ! जिससे यह मेरी सृष्टि विपुल रूप से बढ़े ।११

तथोक्तोऽहं श्रियं देवीमब्रवं[5] प्रहसन्निव ।
देवीदमखिलं विश्वं सदेवासुरमानुषम् ॥१२
मोहयित्वा ममादेशात्संसारे विनिपातय ।

ऐसा कहने पर मैंने लक्ष्मी देवी से हँसते हुए कहा —हे देवि, देवता, असुर और मनुष्य समेत इस सम्पूर्ण जगत् को मोह में डालकर मेरे आदेश से संसार में गिरा दो ।१२½

---

१. निर्दहन्निव इति पा० । २. सुसंपन्ना इति पा० । ३. मन्नियोगान्नियोजय इति पा० । ४. वर्त्तते इति पा० । ५. तथोक्तः स श्रियं देवीमब्रवीत् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानयोगरतान्दान्तान् ब्रह्मिष्ठान् ब्रह्मवादिनः[1] ॥१३
अक्रोधनान् सत्यपरान्दूरतः परिवर्ज्जय ।

किन्तु ज्ञानयोग में निरत, दान्त (इन्द्रियों को दमन करने वाला), ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मवादी, क्रोधशून्य एवं सत्यपरायण व्यक्तियों को दूर से ही त्याग दो ।१३½।

ध्यायिनो निर्ममान् शान्तान्धार्मिकान्वेदपारगान् ॥१४
याजिनस्तापसान्विप्रान्दूरतः परिवर्ज्जय ।

ध्यान करने वाले, ममतारहित, शान्त, धार्मिक, वेदपारंगत, यज्ञकारी, तपस्वी ब्राह्मणों को दूर से ही छोड़ दो ।१४½

वेदवेदान्तविज्ञानसंछिन्नाशेषसंशयान् ॥१५
महायज्ञपरान्विप्रान्दूरतः परिवर्ज्जय ।

वेद, वेदान्त और विज्ञान के अनुशीलन से जिनके समस्त संशय तिरोहित हो गये हैं ऐसे, तथा महायज्ञपरायण विप्रों को दूर से त्याग दो ।१५½

ये यजन्ति जपैर्होमैर्देवदेवं महेश्वरम् ॥१६
स्वाध्यायेनेज्यया दूरात्तान् प्रयत्नेन वर्ज्जय[2] ।

जो व्यक्ति जप, होम, स्वाध्याय तथा यज्ञ के द्वारा देवों के देव महेश्वर की अर्चना करते हैं उन्हें प्रयत्न करके दूर से ही त्याग दो ।१६½।

भक्तियोगसमायुक्तानीश्वरार्पितमानसान् ॥१७
प्राणायामादिषु रतान्दूरात्परिहरामलान् ।

भक्ति योग से युक्त ईश्वर में मन को लगाने वाले, प्राणायाम में निरत रहने वाले तथा निर्मल चित्त वाले को दूर से ही त्याग दो ।१७½।

प्रणवासक्तमनसो रुद्रजप्यपरायणान् ॥१८
अथर्वशिरसो वेत्तॄन्[3] धर्मज्ञान्परिवर्ज्जय ।

प्रणव (ओंकार) के जप में आसक्त, रुद्रजपपरायण, अथर्व शाखा के विद्वानों तथा धर्मज्ञाताओं को त्याग दो ।१८½।

बहुनात्र किमुक्तेन स्वधर्मपरिपालकान् ॥१९
ईश्वराराधनरतान्मन्नियोगान्न मोहय ।

यहाँ बहुत कहने से क्या लाभ[1] ? अपने धर्म को परिपालन करने वाले तथा ईश्वर की आराधना में तत्पर लोगों को मोहित न करो; यह मेरी आज्ञा है ।१९½

---

१. शान्तान्धार्म्मिकान् वेदपारगान् इति पा० । २. दूरात्प्रयत्नेन विवर्जय इति पा० । ३. अथर्वशिरसोऽध्येतॄन् इति, शास्त्रेष्वभिरतान्धीरान् इति शास्त्रवृत्तिरतान्धीरान् इति च पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं मया महामाया प्रेरिता हरिवल्लभा ॥२०
यथादेशं चकारासौ तस्माल्लक्ष्मीं समर्च्चयेत् ।
श्रियं ददाति विपुलां पुष्टिं मेधां यशो बलम् ॥२१
अर्चिता भगवत्पत्नी तस्माल्लक्ष्मीं समर्चयेत् ।
ततोऽसृजत्स भगवान् ब्रह्मा लोकपितामहः ॥२२

इस प्रकार मेरी प्रेरणा से हरिप्रिया महामाया (लक्ष्मी) आदेशानुसार कार्य करने लगी। इसलिए लक्ष्मी की अर्चना करनी चाहिए। पूजित होने पर लक्ष्मी प्रचुर धन, पुष्टि, मेधा, यश तथा बल प्रदान करती है। इसलिए लक्ष्मी की अर्चना करनी चाहिए। तदनन्तर लोक पितामह भगवान् ब्रह्मा सृष्टि करने लगे।२०-२२।

चराचराणि भूतानि यथापूर्वं ममाज्ञया ।
मरीचिभृग्वङ्गिरसं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥२३

मेरी आज्ञा से ब्रह्मा पूर्ववत् स्थावर, जंगम प्राणियों की तथा मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह तथा क्रतु की सृष्टि की।२३

दक्षमत्रिं वसिष्ठञ्च सोऽसृजद्योगविद्यया ।
नवैते ब्रह्मणः पुत्रा ब्राह्मणा[1] ब्राह्मणोत्तमाः ॥२४

उन्होंने योगविद्या से दक्ष, अत्रि और वशिष्ठ की भी सृष्टि की। ये नौ ब्रह्मा के पुत्र ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं।२४

ब्रह्मवादिन एवैते मरीच्याद्यास्तु साधकाः ।
ससर्ज्ज ब्राह्मणान्वक्त्रात् क्षत्रियांश्च भुजाद्विभुः ॥२५

ये मरीचि आदि साधक ब्रह्मवादी ही हैं। प्रभु ब्रह्मा ने ब्राह्मणों को मुख से और क्षत्रियों को भुजा से उत्पन्न किया।२५

वैश्यानूरुद्वयाद्देवः पद्भ्यां शूद्रान् पितामहः ।
यज्ञनिष्पत्तये ब्रह्मा शूद्रवर्जं ससर्ज्ज ह ॥२६

ब्रह्मदेव ने वैश्यों को दोनों ऊरुओं से तथा शूद्रों को पैरों से उत्पन्न किया। यज्ञ-सम्पादन के लिए ब्रह्मा ने शूद्रवर्जित सृष्टि की।२६

---

१. ब्रह्मणा इति, ब्रह्मणा तपसा ब्राह्मणोत्तमा इत्यर्थः। "वेदस्तत्त्वं तपो ब्रह्म" इत्यमरः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुप्तये सर्वदेवानां तेभ्यो यज्ञो हि निर्बभौ ।
ऋचो यजूंषि सामानि तथैवाथर्वणानि च ॥२७

सभी देवों की रक्षा के लिए उन्होंने यज्ञ की रचना की। उसके बाद ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद की रचना की।२७

ब्रह्मणः सहजं रूपं नित्यैषा शक्तिरव्यया ।
अनादिनिधना दिव्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा ॥२८

ये सब ब्रह्मा के सहज रूप हैं। यह नित्य एवं अविनाशिनी शक्ति है। ब्रह्मा ने अनादि तथा नाशरहित वेदमयी दिव्यवाणी की सृष्टि की।२८

आदौ वेदमयी भूता[1] यतः सर्वाः प्रवृत्तयः ।
अतोऽन्यानि[2] हि शास्त्राणि पृथिव्यां यानि कानिचित् ॥२९
न तेषु रमते धीरः पाषण्डी[3] रमते बुधः ।
वेदार्थवित्तमैः कार्यं यत्स्मृतं मुनिभिः पुरा ॥३०
स ज्ञेयः परमो धर्मो नान्यशास्त्रेषु संस्थितः ।
या वेदबाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः ॥३१
सर्वास्ता निष्फलाः प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ताः स्मृताः ।
पूर्वकल्पे प्रजा जाताः सर्वबाधाविवर्जिताः ॥३२

पहले वेदमयी वाणी उत्पन्न हुई जिससे सभी प्रवृत्तियों की उत्पत्ति हुई। इससे भिन्न पृथ्वी पर जो कोई शास्त्र है उनमें विद्वान् लोग रमण नहीं करते, पाषण्डी (नास्तिक) रमण करते हैं। पूर्वकाल में वेदार्थदर्शी मुनियों ने जिसका स्मरण किया था उसे परम धर्म समझना चाहिए। वह अन्य शास्त्रों में अवस्थित नहीं है। जो वेद-विरुद्ध स्मृतियाँ हैं और जो कोई कुदृष्टियाँ हैं वे सब परकाल में निष्फल हैं। वे सब तमःपूर्ण कही गयी हैं। पूर्वकल्प में सभी प्रकार की बाधाओं से रहित प्रजायें उत्पन्न हुईं।२९-३२।

शुद्धान्तःकरणाः सर्वाः स्वधर्मपरिपालकाः[4] ।
ततः कालवशात्तासां रागद्वेषादिकोऽभवत् ॥३३

वे सब धर्म का पालन करने वाली तथा पवित्र अन्तःकरण वाली थीं। तदनन्तर समय पाकर उनमें राग-द्वेष आदि उत्पन्न हुए।३३

---

१. माला एताः पूर्वाः प्रवृत्तयः इति पा०। २. अथान्यानि तु शास्त्राणि इति; अन्थान्यानि हि शास्त्राणि इति, अन्यान्यपि हि शास्त्राणि इति पा० ३. पाषण्डी तेन जायते इति, पाषण्डो जायते पुनः इति, पाषण्डो रमते पुनः इति पा० ४. स्वधर्मनिरताः सदा इति च पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधर्मो मुनिशार्दूलाः स्वधर्मप्रतिबन्धकः ।
ततः सा सहजा सिद्धिस्तासां नातीव जायते ॥३४

हे मुनिश्रेष्ठो ! अधर्म अपने धर्म का प्रतिबन्धक होता है इसलिए उनमें सहज सिद्धियाँ नहीं मिलती हैं ।३४

रजोमात्रात्मिकास्तासां सिद्धयोऽन्यास्तदाभवन् ।
तासु क्षीणास्वशेषासु कालयोगेन ताः पुनः ॥३५

तब उनकी सिद्धियाँ रजोगुणी हुईं । फिर काल योग से वे सब क्षीण होने लगीं ।३५

वार्त्तोपायं पुनश्चक्रुर्हस्तसिद्धिञ्च कर्मजाम् ।
ततस्तासां विभुर्ब्रह्मा[1] कर्माजीवमकल्पयत् ॥३६

पुनः कालक्रम से वार्तोपाय (जीविकासाधन) तथा कर्मजनित हस्त-सिद्धि की सृष्टि करने लगे । तदनन्तर प्रभु ब्रह्मा ने उनके लिए कर्म जीविका की रचना की ।३६

स्वायम्भुवो मनुः पूर्वं धर्मान्प्रोवाच सर्वदृक् ।
साक्षात्प्रजापतेर्मूर्त्तिर्निसृष्टा ब्रह्मणो द्विजाः[2] ॥३७

पूर्वकाल में सर्व द्रष्टा स्वायम्भुव मनु ने धर्म वर्णन किया था । वे ब्रह्मा प्रजापति की साक्षात् मूर्ति के स्वरूप हैं उन्होंने ब्राह्मण आदि की सृष्टि की ।३७

भृग्वादयस्तद्वदनाच्छ्रुत्वा धर्मानथोचिरे ।
यजनं याजनं दानं ब्राह्मणस्य प्रतिग्रहः ॥३८
अध्यापनं चाध्ययनं षट्कर्माणि द्विजोत्तमाः ।
दानमध्ययनं यज्ञो धर्मः क्षत्त्रियवैश्ययोः ॥३९

द्विजश्रेष्ठो ! भृगु आदि ने उनके मुख से सुनकर धर्मों का वर्णन किया—यज्ञ करना-यज्ञ कराना, और दान देना-दान लेना, पढ़ना-पढ़ाना ये छः कर्म ब्राह्मणों के कहे गये हैं । दान, अध्ययन और यज्ञ, क्षत्रिय और वैश्यों के लिए धर्मस्वरूप हैं ।३८-३९।

दण्डो युद्धं क्षत्त्रियस्य कृषिर्वैश्यस्य शस्यते ।
शुश्रूषैव[3] द्विजातीनां शूद्राणां धर्मसाधनम् ॥४०

क्षत्रिय का युद्ध करना और दण्ड देना तथा वैश्य का कृषि करना प्रशस्त है और द्विजातियों की सेवा करना शूद्रों का धर्म-साधन है ।४०

---

१. पिता इति पा० । २. ब्रह्मणा द्विजाः इति, ब्रह्मणः पुरा इति पा० । ३. शुश्रूषा वै इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारुकर्म तथाजीवः पाकयज्ञादिधर्मतः[1] ।
ततः स्थितेषु वर्णेषु स्थापयामास चाश्रमान् ॥४१

इससे भिन्न शिल्प कर्म तथा पाक यज्ञादि धर्म उनके लिए प्रशस्त है। इस प्रकार वर्णों के प्रतिष्ठित होने पर आश्रमों की स्थापना हुई।४१।

गृहस्थञ्च वनस्थं च भिक्षुकं ब्रह्मचारिणम् ।
अग्नयोऽतिथिशुश्रूषा यज्ञो दानं सुराचर्चनम् ॥४२

गृहस्थस्य समासेन धर्मोऽयं मुनिपुंगवाः ।
होमो मूलफलाशित्वं स्वाध्यायस्तप एव च ॥४३

संविभागो यथान्यायं धर्मोऽयं वनवासिनाम् ।
भैक्षाशनञ्च मौनित्वं तपो ध्यानं विशेषतः ॥४४

गृहस्थ, वानप्रस्थ, भिक्षुक और ब्रह्मचारी के लिए आश्रम स्थापन किया गया है। मुनिश्रेष्ठो ! अग्निरक्षा, अतिथि-सेवा, यज्ञ, दान और देवपूजन यह गृहस्थ का संक्षिप्त धर्म कहा गया है। हवन, मूल-फल भोजन करना, स्वाध्याय, तपस्या तथा न्यायपूर्वक संविभाग यह वानप्रस्थ का धर्म है। भिक्षाटन करना, मौन रहना, तप और विशेषतः ध्यान करना संन्यासी का धर्म है।४२-४४।

सम्यग्ज्ञानञ्च वैराग्यं धर्मोऽयं भिक्षुके मतः ।
भिक्षाचर्या[2] च शुश्रूषा गुरोः स्वाध्याय एव च ॥४५

सन्ध्या कर्म्माग्निकार्यञ्च धर्मोऽयं ब्रह्मचारिणाम् ।
ब्रह्मचारिवनस्थानां भिक्षुकाणां द्विजोत्तमाः ॥४६

साधारणं ब्रह्मचर्यं प्रोवाच कमलोद्भवः ।
ऋतुकालाभिगामित्वं स्वदारेषु न चान्यतः ॥४७

सम्यग् ज्ञान और वैराग्य यह भिक्षुक (संन्यासी) का धर्म कहा गया है। भिक्षा चरण, गुरुसेवा, वेदपाठ, सन्ध्याकर्म तथा अग्निकार्य (हवन) ब्रह्मचारियों का धर्म है। हे द्विजश्रेष्ठो ! ब्रह्मा ने कहा है कि ब्रह्मचर्य रखना सबका साधारण धर्म है। केवल ऋतुकाल में अपनी स्त्री से प्रसंग करना चाहिए, दूसरी से नहीं।४५-४७।

पर्ववर्ज्जं गृहस्थस्य ब्रह्मचर्यमुदाहृतम् ।
आगर्भधारणादाज्ञा कार्या तेनाप्रमादतः ॥४८

पर्व दिन को छोड़कर स्त्री-सहवास करना ब्रह्मचर्य कहा गया है। गर्भ-धारण पर्यन्त ऐसा करना विहित है, अतएव सावधानी बर्तनी चाहिए।४८

---

१. वाणिज्यादि क्रयविक्रयणं तथा इति पा०। २. भिक्षाशनम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकुर्वाणस्तु विप्रेन्द्रा भ्रूणहा[1] तूपजायते ।
वेदाभ्यासोऽन्वहं शक्त्या श्राद्धञ्चातिथिपूजनम् ॥४९
गृहस्थस्य परो धर्म्मो देवताभ्यर्चनं तथा ।
वैवाह्यमग्निमिन्धीत[2] सायं प्रातर्यथाविधि ॥५०

हे द्विजेन्द्रो ! ऐसा न करने पर भ्रूण हत्या लगती है । प्रतिदिन वेदाभ्यास करना, शक्ति-अनुसार श्राद्ध करना, अतिथिपूजा एवं देवार्चन करना गृहस्थ का परम धर्म है । सायं काल और प्रातःकाल विधिपूर्वक वैवाहिक अग्नि को (अग्निहोत्र) प्रज्वलित करते रहना चाहिए ।४९-५०।

देशान्तरगतो वाथ मृतपत्नीक एव च ।
त्रयाणामाश्रमाणान्तु गृहस्थो योनिरुच्यते ॥५१

परदेश जाने पर (उसकी पत्नी अग्निहोत्र करे) तथा पत्नी के मर जाने पर पुत्र अग्निहोत्र करे । तीनों आश्रमों का मूल गृहस्थाश्रम है ।५१

अन्ये तमुपजीवन्ति तस्माच्छ्रेयान् गृहाश्रमी ।
ऐकाश्रम्यं गृहस्थस्य चतुर्णां श्रुतिदर्शनात् ॥५२

दूसरे आश्रम इसी गृहस्थाश्रम पर जीवित हैं । इसलिए यह आश्रम सबसे श्रेष्ठ है । श्रुति के अनुसार चारों आश्रमों का एकआश्रम गृहस्थाश्रम ही है ।५२

तस्माद्गार्हस्थ्यमेवैकं विज्ञेयं धर्मसाधनम् ।
परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ ॥५३

अतएव एक गृहस्थाश्रम को ही धर्म का साधन समझना चाहिए । धर्म से रहित जो अर्थ और काम हों उन्हें त्याग देना चाहिए ।५३

सर्वलोकविरुद्धञ्च धर्ममप्याचरेन्न तु ।
धर्मात्संजायते ह्यर्थो धर्मात्कामोऽभिजायते ॥५४

धर्माचरण भी लोगों के विरुद्ध हो तो उन्हें त्याग देना चाहिए । धर्म से अर्थ की प्राप्ति होती है और धर्म से काम की प्राप्ति होती है ।५४

धर्म्म एवापवर्गाय तस्माद्धर्मं समाश्रयेत् ।
धर्मश्चार्थश्च कामश्च त्रिवर्गस्त्रिगुणो मतः ॥५५

---

१. भ्रूणहा तु प्रजायते इति पा० । भ्रूणहा चोपजायते इति पा० । २. मन्वीत इति पा०, मासीत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म से ही मोक्ष मिलता है। इसलिए धर्म का आश्रय लेना चाहिए। धर्म, अर्थ, काम, यह त्रिवर्ग, त्रिगुण कहा गया है।५५

सत्त्वं रजस्तमश्चेति तस्माद्धर्मं समाश्रयेत्।
ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ॥५६

जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः।
यस्मिन्धर्मसमायुक्तौ ह्यर्थकामौ व्यवस्थितौ ॥५७

इह लोके सुखी भूत्वा प्रेत्यानन्त्याय कल्पते।
धर्मात्संजायते मोक्षो ह्यर्थात्कामोऽभिजायते ॥५८

सत्त्व, रज और तम यह तीनों गुण हैं। इसलिए धर्म का आश्रय लेना चाहिए सत्त्व गुण वाले ऊपर लोक को जाते हैं, रजो गुण वाले मध्य लोक में रहते हैं,तमो गुण वाले जघन्य (निम्न) वृति में अवस्थित होते हैं तथा नीचे लोक को जाते हैं। जिस व्यक्ति में अर्थ और काम धर्म से युक्त होकर व्यवस्थित है वह इस लोक में सुखी होकर मृत्यु के बाद अनन्त सुख प्राप्त करता है। धर्म से मोक्ष की प्राप्ति होती है और अर्थ से काम की प्राप्ति होती है।५६-५८।

एवं साधनसाध्यत्वं चातुर्विद्ये[1] प्रदर्शितम्।
य एवं वेद धर्मार्थकाममोक्षस्य मानवः ॥५९

माहात्म्यं चानुतिष्ठेत स चानन्त्याय कल्पते।
तस्मादर्थञ्च कामञ्च त्यक्त्वा धर्मं समाश्रयेत् ॥६०

चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) के विषय में इस प्रकार साधन सार्थक प्रदर्शित होता है। जो मनुष्य इस प्रकार धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष का माहात्म्य जानता है तथा अनुष्ठान करता है उसे अनन्त सुख की प्राप्ति होती है। इसलिए अर्थ और काम को त्याग कर धर्म का आश्रय लेना चाहिए।५९-६०।

धर्म्मात्संजायते सर्वमित्याहुर्ब्रह्मवादिनः।
धर्मेण धार्यते सर्वं जगत्स्थावरजंगमम् ॥६१

धर्म से सब मिलता है यह ब्रह्मवादियों का कहना है। धर्म से स्थावर और जगम रूप जगत् का धारण किया जाता है।६१

अनादिनिधना शक्तिः सैषा ब्राह्मी द्विजोत्तमाः।
कर्मणा प्राप्यते धर्मो ज्ञानेन च न संशयः ॥६२

---

१. चातुर्विद्ये इति पा०—चतस्रः विद्याः—आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता, दण्डनीत्यः एव चातुर्विद्यं तस्मिन् इत्यर्थः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे द्विजश्रेष्ठो ! यही अनादिनिधना (आदि-अन्तरहित) ब्राह्मी शक्ति है, कर्म और ज्ञान से धर्म की प्राप्ति होती है, इसमें संशय नहीं ।६२

तस्माज्ज्ञानेन सहितं कर्मयोगं समाश्रयेत्[1] ।
प्रवृत्तञ्च निवृत्तञ्च द्विविधं कर्म वैदिकम् ॥६३

अतएव ज्ञान सहित कर्म का आश्रय लेना चाहिए । वैदिक कर्म दो प्रकार का होता है—एक प्रवृत्ति-मूलक दूसरा निवृत्तिमूलक ।६३

ज्ञानपूर्वं निवृत्तं स्यात्प्रवृत्तं यदतोऽन्यथा ।
निवृत्तं सेवमानस्तु याति तत्परमं पदम् ॥६४

ज्ञानपूर्वक जो कर्म है उसे निवृत्ति कहते हैं । उसके विपरीत अज्ञानपूर्वक जो कर्म होता है उसे प्रवृत्ति कहते हैं । निवृत्ति कर्म का सेवन करने वाला मनुष्य परम पद को प्राप्त होता है ।६४

तस्मान्निवृत्तं संसेव्यमन्यथा संसरेत्पुनः[2] ।
क्षमा दमो दया दानमलोभस्त्याग एव च ॥६५
आर्जवं चानसूया च तीर्थानुसरणं तथा ।
सत्यं सन्तोषमास्तिक्यं[3] श्रद्धा चेन्द्रियनिग्रहः ॥६६
देवताभ्यर्चनं पूजा ब्राह्मणानां विशेषतः ।
अहिंसा प्रियवादित्वमपैशुन्यमकल्कता[4] ॥६७
सामासिकमिमं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः ।
प्राजापत्यं ब्राह्मणानां स्मृतं स्थानं क्रियावताम् ॥६८

इसलिए निवृत्ति कर्म का सेवन करना चाहिए अन्यथा पुनः संसार में आना पड़ेगा । क्षमा, दम, दया, दान, अलोभ, त्याग, आर्जव (सिधाई), अनसूया, तीर्थगमन, सत्य, सन्तोष, आस्तिकता, श्रद्धा, इन्द्रियनिग्रह, देवार्चन विशेषतः ब्राह्मण-पूजन, अहिंसा, प्रिय-वादिता, पिशुनता (चुगुलखोरी) न करना, निष्पापता यह चारों वर्णों के लिए साधारण धर्म हैं, ऐसा मनु ने कहा है । क्रियावान् ब्राह्मण के लिए प्राजापत्य स्थान कहा गया है ।६५-६८

स्थानमैन्द्रं क्षत्रियाणां संग्रामेष्वपलायिनाम् ।
वैश्यानां मारुतं स्थानं स्वधर्ममनुवर्त्तताम् ॥६९

---

१. समाचरेत् इति पा० । २. सञ्चरेत्पुनः इतिपा० । ३. सन्तोषमिति क्लीवत्व-मार्षम् । ३. मकल्पता इति, मवक्रता इति, मजल्पना इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध में न भागने वाले क्षत्रियों के लिए ऐन्द्र स्थान निर्दिष्ट किया गया है। अपने धर्म का अनुसरण करने वाले वैश्यों के लिए मारुत स्थान निर्दिष्ट है।६९

गान्धर्वं शूद्रजातीनां परिचारेण वर्त्तताम् ।
अष्टाशीतिसहस्राणामृषीणामूर्द्ध्वरेतसाम् ॥७०
स्मृतं तेषान्तु यत्स्थानं तदेव गुरुवासिनाम् ।
सप्तर्षीणान्तु यत्स्थानं स्मृतं तद्वै वनौकसाम् ॥७१

द्विजातियों की सेवा करने वाले शूद्रों का गन्धर्व स्थान कहा गया है। अट्ठासी हजार ऊर्ध्वरेता ऋषियों के लिए जो स्थान कहा गया है वही स्थान गुरुकुलवासी छात्रों के लिए विहित है। सप्तर्षियों का जो स्थान निर्दिष्ट है, वही वानप्रस्थों को मिलता है।७०-७१।

प्राजापत्यं गृहस्थानां स्थानमुक्तं स्वयंभुवा ।
यतीनां जितचित्तानां न्यासिनामूर्द्ध्वरेतसाम्[1] ॥७२
हैरण्यगर्भं तत्स्थानं यस्मान्नावर्त्तते पुनः ।
योगिनाममृतं स्थानं व्योमाख्यं परमक्षरम्[2] ॥७३
आनन्दमैश्वरं धाम सा काष्ठा सा परा गतिः ।

ऋषय ऊचुः

भगवन्देवतारिघ्न हिरण्याक्षनिषूदन ॥७४
चत्वारो ह्याश्रमाः प्रोक्ता योगिनामेक उच्यते ।

कूर्म उवाच

सर्वकर्माणि संन्यस्य समाधिमचलं श्रितः ॥७५
य आस्ते निश्चलो योगी स संन्यासी च[3] पञ्चमः ।
सर्वेषामाश्रमाणान्तु द्वैविध्यं[4] श्रुतिदर्शितम् ॥७६

ब्रह्मा ने गृहस्थों का स्थान प्राजापत्य स्थान बताया है। जितेन्द्रिय यतियों तथा ऊर्ध्वरेता संन्यासियों का स्थान हैरण्यगर्भ है जहाँ से लौटना नहीं पड़ता है। योगियों को अमृत व्योम नामक परम-अविनाशी ऐश्वर्यादिक आनन्दमय धाम प्राप्त होता है। वही पराकाष्ठा और वही परमगति है।

ऋषियों ने कहा—भगवन्! देव शत्रुओं को मारने वाले! हिरण्याक्ष का वध करने वाले! आश्रम चार कहे गये हैं। किन्तु योगियों के लिए केवल एक आश्रम है।

---

४. न्यासिनां संन्यासवतामित्यर्थः। ५. परमाक्षरमिति, यत् स्थानं परमक्षरमिति। यत् स्थानं पारमैश्वरमिति पा०। ६. न इति पा०। ७. द्वैविध्यं श्रुतिदर्शनमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूर्म बोले—जो सभी कर्मों का त्याग करके अचल समाधि में स्थित होता है वह निश्चल योगी संन्यासी है और पञ्चमाश्रमी संन्यासी भी वही है। वेद में सभी आश्रम दो प्रकार के दिखाये गये हैं।७२-७६।

ब्रह्मचार्युपकुर्वाणो नैष्ठिको ब्रह्मतत्परः।
योऽधीत्य विधिवद्वेदान् गृहस्थाश्रममाव्रजेत् ॥७७
उपकुर्वाणको ज्ञेयो नैष्ठिको मरणान्तिकः।
उदासीनः साधकश्च गृहस्थो द्विविधो भवेत् ॥७८

ब्रह्मचारी के दो भेद बताये गये हैं—एक उपकुर्वाण और दूसरा ब्रह्मपरायण नैष्ठिक। जो व्यक्ति विधिवत् वेदों का अध्ययन करके गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है उसे उपकुर्वाण समझना चाहिए। जो मरणपर्यन्त ब्रह्मचर्य धारण करता है उसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहा गया है। गृहस्थ दो प्रकार का होता है—एक उदासीन, दूसरा साधक।७७-७८।

कुटुम्बभरणायत्तः साधकोऽसौ गृही भवेत्।
ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य[1] त्यक्त्वा भार्याधनादिकम् ॥७९
एकाकी यस्तु विचरेदुदासीनः स मौक्षिकः।
तपस्तप्यति योऽरण्ये यजेद्देवान् जुहोति च ॥८०
स्वाध्याये चैव निरतो वनस्थस्तापसो मतः।
तपसा कर्षितोऽत्यर्थं यस्तु ध्यानपरो भवेत् ॥८१
सांन्यासिकः स विज्ञेयो वानप्रस्थाश्रमे स्थितः।
योगाभ्यासरतो[2] नित्यमारुरुक्षुर्जितेन्द्रियः ॥८२
ज्ञानाय वर्त्तते भिक्षुः प्रोच्यते पारमेष्ठिकः।
यस्त्वात्मरतिरेव स्यान्नित्यतृप्तो महामुनिः ॥८३
सम्यग्दर्शनसम्पन्नः स योगी भिक्षुरुच्यते।
ज्ञानसंन्यासिनः केचिद्वेदसंन्यासिनोऽपरे ॥८४

कुटुम्ब के भरण-पोषण में जो नियुक्त रहता है, उसे साधक गृहस्थ कहा जाता है। और जो तीन प्रकार के ऋणों को हटाकर पत्नी और धन आदि को त्याग कर मोक्ष के निमित्त एकाकी विचरण करता है उसे उदासीन गृहस्थ कहा जाता है। जो वन में तपस्या करता है, देवों की अर्चना तथा होम करता है और स्वाध्यायनिरत रहता है, उसे वानप्रस्थ तपस्वी कहते हैं। जो तपस्या से क्षीणकाय होकर ध्यानपरायण रहता है उसे

---

१. त्रीण्युपाहृत्य इति, त्रीण्युपाकृत्य इति च पा०। २. योगमभ्यसते इति पा०।
३—कूर्म पु०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वानप्रस्थ आश्रम में रहने वाला संन्यासी समझना चाहिए। जो योगाभ्यास में निरत, नितध्यानयोग में आरोहण के इच्छुक, जितेन्द्रिय और ज्ञान-मार्ग में विद्यमान वह पारमेष्ठिक भिक्षुक कहलाता है। जो आत्मा में ही रमण करने वाला, नित्य तृप्त रहने वाला, अत्यन्त मनन करने वाला और सम्यग् दर्शन-सम्पन्न है वह योगी भिक्षु कहलाता है। कोई ज्ञानसंन्यासी होते हैं और कोई वेदसंन्यासी ।७९-८४

कर्म्मसंन्यासिनः केचित्त्रिविधाः पारमेष्ठिकाः ।
योगी च त्रिविधो ज्ञेयो भौतिकः[1] सांख्य एव च ॥८५
तृतीयो ह्याश्रमी प्रोक्तो योगमुत्तममाश्रितः ।
प्रथमा भावना पूर्वे सांख्ये त्वक्षरभावना ॥८६
तृतीये चान्तिमा प्रोक्ता भावना पारमेश्वरी ।
तस्मादेतद्विजानीध्वमाश्रमाणां[2] चतुष्टयम् ॥८७

कोई कर्म संन्यासी होते हैं। इस प्रकार पारमेष्ठिक संन्यासी तीन प्रकार के होते हैं। योगी भी तीन प्रकार का होता है—भौतिक, सांख्य (उत्तम योगनिष्ठ) और तृतीय आश्रमी जो उत्तम योग का आश्रय लिये रहता है। प्रथम योगी भावनाशून्य होता है। सांख्य योगी अक्षर-भावना में निरत रहता है। तीसरे प्रकार का योगी परमेश्वर की भावना करते हैं। अतएव इसे चार प्रकार का आश्रम समझना चाहिए ।८५-८७।

सर्वेषु वेदशास्त्रेषु पञ्चमो नोपपद्यते ।
एवं वर्णाश्रमान् सृष्ट्वा देवदेवो निरञ्जनः ॥८८
दक्षादीन्प्राह विश्वात्मा सृजध्वं[3] विविधाः प्रजाः ।
ब्रह्मणो वचनात्पुत्रा दक्षाद्या मुनिसत्तमाः ॥८९
असृजन्त प्रजाः सर्वे देवमानुषपूर्वकाः ।
इत्येवं भगवान् ब्रह्मा स्रष्टृत्वे[4] संव्यवस्थितः ॥९०
अहं वै पालयामीदं संहरिष्यति शूलभृत् ।
तिस्रस्तु मूर्त्तयः प्रोक्ता ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥९१
रजःसत्त्वतमोयोगात्परस्य परमात्मनः ।
अन्योन्यमनुरक्तास्ते ह्यन्योन्यमुपजीविनः ॥९२
अन्योन्यप्रणताश्चैव लीलया परमेश्वराः ।
ब्राह्मी माहेश्वरी चैव तथैवाक्षरभावना ॥९३

---

१. वैदिक इति पा० । २. विजयानीयादिति पा० । ३. आत्मनेपदमार्षम् । ४. सृष्ट्वेदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिस्रस्तु भावना रुद्रे वर्त्तन्ते सततं द्विजाः ।
प्रवर्तते मय्यजस्रमाद्या त्वक्षरभावना[1] ॥९४

सभी वेद-शास्त्रों में पंचम आश्रम नहीं है। देवों के देव निरंजन विश्वात्मा ने वर्णाश्रमों की सृष्टि करके दक्ष आदि ऋषियों से कहा—अनेक प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि करो। ब्रह्मा के वचन से उनके पुत्र दक्ष आदि मुनिवरों ने देवता, मनुष्य आदि प्रजाओं की सृष्टि की। इस प्रकार भगवान् ब्रह्मा ने सृष्टि के कार्य में उन्हें नियुक्त करके कहा—मैं सृष्टि का पालन करूँगा और शंकर संहार करेंगे। परमात्मा की तीन मूर्तियाँ हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश। तीनों क्रमशः परमात्मा की सत्त्वगुणी, रजोगुणी तथा तमोगुणी हैं। ये तीनों परमेश्वर की लीला हेतु परस्पर अनुरक्त, परस्पर आश्रित और परस्पर प्रणत रहते हैं। मुनिगण! ब्राह्मी माहेश्वरी तथा अक्षरभावना, ये तीन प्रकार की भावनायें सतत रुद्र में विद्यमान रहती हैं मुझमें निरन्तर अक्षर भावना वर्तमान रहती है।८८-९४।

द्वितीया ब्रह्मणः प्रोक्ताः देवस्याक्षरभावना ।
अहं चैव महादेवो न भिन्नः परमार्थतः ॥९५

इस प्रकार देव ब्रह्मा में द्वितीय अक्षर भावना विद्यमान है। मैं और महादेव परमार्थतः एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं।९५

विभज्य स्वेच्छयात्मानं सोऽन्तर्यामीश्वरः स्थितः ।
त्रैलोक्यमखिलं स्रष्टुं सदेवासुरमानुषम् ॥९६
पुरुषः परतोऽव्यक्ता ब्रह्मत्वं समुपागमत् ।
तस्माद्ब्रह्मा महादेवो विष्णुर्विश्वेश्वरः परः ॥९७
एकस्यैव स्मृतास्तिस्रस्तद्वत्कार्यवशात्प्रभोः ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वन्द्याः पूज्या विशेषतः ॥९८

वह अन्तर्यामी ईश्वर स्वेच्छा से आत्मा को विभक्त करके अवस्थित है। देव, असुर तथा मनुष्य सहित इस सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करने के लिए परमपुरुष ब्रह्मत्व को प्राप्त हुए। इसलिए ब्रह्मा, महादेव एवं विश्वेश्वर विष्णु कार्यवशात् एक प्रभु त्रिमूर्ति रूप में कहे गये हैं। इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से वे वन्दनीय एवं विशेषतः पूजनीय हैं।९६-९८।

यदीच्छेदचिरात्स्थानं यत्तन्मोक्षाख्यमव्ययम् ।
वर्णाश्रमप्रयुक्तेन धर्मेण प्रीतिसंयुतः ॥९९
पूजयेद्भावयुक्तेन यावज्जीवं प्रतिज्ञया ।
चतुर्णामाश्रमाणान्तु प्रोक्तोऽयं विधिवद्द्विजाः ॥१००

---

१ प्रवर्त्तन्ते मय्यजस्रमन्याश्चाक्षरभावनाः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि मोक्षरूप अविनाशी स्थान प्राप्त करने की इच्छा हो तो वर्णाश्रमोचित धर्म में प्रीतियुक्त होकर भक्ति-भाव से यावज्जीवन प्रतिज्ञापूर्वक इनका पूजन करें। हे द्विजगण ! चारों आश्रमों का वर्णन विधिवत् कर दिया ।९९-१००।

आश्रमो वैष्णवो ब्राह्मो हराश्रम इति त्रयः ।
तल्लिंगधारी नियतं[1] तद्भक्तजनवत्सलः ॥१०१
ध्यायेदथार्चयेदेतान् ब्रह्मविद्यापरायणः ।
सर्वेषामेव भक्तानां शम्भोर्लिंगमनुत्तमम् ॥१०२

चारों आश्रमों के वैष्णव, ब्राह्म और हराश्रम ये तीन भेद कहे गये हैं। ब्रह्म-विद्यापरायण तथा देवभक्त के प्रति अनुरागी जन तत्-तत् देवता के चिह्न धारणपूर्वक उनका ध्यान और अर्चना करें। सभी भक्तों को शंकर का परमोत्तम चिह्न धारण करना चाहिए ।१०१-१०२

सितेन भस्मना कार्यं ललाटे तु त्रिपुंड्रकम् ।
यस्तु नारायणं देवं प्रपन्नः परमं पदम् ॥१०३
धारयेत्सर्वदा शूलं ललाटे गन्धवारिभिः ।
प्रपन्ना ये जगद्बीजं ब्रह्माणं परमेष्ठिनम् ॥१०४
तेषां ललाटे तिलकं धारणीयन्तु सर्वदा ।
योऽसावनादिर्भूतादिः[2] कालात्मासौ धृतो भवेत् ॥१०५

श्वेत भस्म से ललाट में त्रिपुण्ड्र लगावें। जो नारायण देव के परम पद का शरणागत हैं वह ललाट में गन्ध वारि द्वारा सर्वदा शूल चिह्न धारण करे। जो संसार के बीज परमेष्ठी ब्रह्मा के शरणागत हैं उन्हें ललाट में सर्वदा तिलक धारण करना चाहिए। ऐसा करने से जो यह अनादि और भूतों का आदि कालात्मा हैं वह धृत हो जाता है ।१०३-१०५।

उपर्यधोभागयोगात्त्रिपुंड्रस्य तु धारणात् ।
यत्तत्प्रधानं त्रिगुणं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ॥१०६
धृतन्तु शूलधरणाद्भवत्येव[3] न संशयः ।
ब्रह्मतेजोमयं शुक्लं यदेतन्मण्डलं रवेः ॥१०७
भवत्येव धृतं स्थानमैश्वरं तिलके कृते ।
तस्मात्कार्यं त्रिशूलांकं तथा च तिलकं शुभम् ॥१०८

ऊपर और अधोभाग के योग से त्रिपुण्ड्र धारण करने से जो प्रधान (त्रिगुणात्मक प्रकृति) है, वह धृत हो जाता है तथा त्रिशूल धारण करने से ब्रह्मा, विष्णु, शिवात्मक

---

१. सततमिति पा०। २. भगवान् इति पा०। ३. धृतं त्रिशूल इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिमूर्ति धृत हो जाती है, इसमें सन्देह नहीं। ब्रह्म-तेजोमय जो सूर्य का शुभ्र मण्डल है वह शंकर के तिलक धारण करने पर निश्चित ही धृत हो जाता है। अतएव त्रिशूल से चिह्नित शुभ तिलक धारण करना चाहिए ।१०६-१०८।

आयुष्यञ्चापि भक्तानां त्रयाणां विधिपूर्वकम् ।
यजेत जुहुयादग्नौ जपेद्वाज्जितेन्द्रियः ॥१०९
शान्तो दान्तो जितक्रोधो वर्णाश्रमविधानवित् ।
एवं परिचरेद्देवान् यावज्जीवं समाहितः ॥११०
तेषां[1] स्वस्थानमचलं सोऽचिरादधिगच्छति ॥१११

इति श्रीकूर्मपुराणे वर्णाश्रमवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२

विधिपूर्वक तिलक धारण करने से तीनों देवों के भक्तों की आयु बढ़ती है। वर्णाश्रम विधान के जानने वाला व्यक्ति जितेन्द्रिय, शान्त, दान्त एवं क्रोधजयी होकर पूजा, होम तथा जप करे जीवन भर समाहित चित्त से देवताओं की जो अर्चना करता है वह शीघ्र ही देवताओं का अचल स्थान लाभ करता है ।१०९-१११।

श्री कूर्मपुराण में वर्णाश्रम वर्णन नामक दूसरा अध्याय समाप्त ॥२

---

१. ततस्तत्स्थानमचलमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीयोऽध्यायः

अथ वर्णाश्रमक्रमवर्णनम्

ऋषय ऊचुः

वर्णा भगवतोद्दिष्टाश्चत्वारोऽप्याश्रमास्तथा ।
इदानीं क्रममस्माकमाश्रमाणां वद प्रभो ॥१

ऋषिगण बोले—भगवान् ने चार वर्ण और चार आश्रम के सम्बन्ध में कहा है। प्रभो! अब आश्रमों का क्रम हमें बतायें ।१

कूर्म उवाच

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा ।
क्रमेणैवाश्रमाः प्रोक्ताः कारणादन्यथा[1] भवेत् ॥२

कूर्म बोले—ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और यति तथा इनके आश्रम क्रम से ही कहे गये हैं; कारणवश दूसरे प्रकार से भी होते हैं ।२

उत्पन्नज्ञानविज्ञानो वैराग्यं परमं गतः ।
प्रव्रजेद्ब्रह्मचर्यात्तु[2] यदीच्छेत्परमां गतिम् ॥३

जो ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न तथा परम वैराग्य को प्राप्त हो गया है, वह यदि परम गति चाहे तो ब्रह्मचर्य से ही प्रव्रज्या (संन्यास) ले ले ।३

दारानाहृत्य विधिवदन्यथा विविधैर्मखैः ।
यजेदुत्पादयेत्पुत्रान् विरक्तो यदि संन्यसेत् ॥४

अन्यथा विधिवत् पत्नी प्राप्त करके अनेक प्रकार के यज्ञ करे तथा पुत्रों को उत्पन्न करे। यदि वैराग्य हो जाय तो संन्यास ले ले ।४

अनिष्ट्वा विधिवद्यज्ञैरनुत्पाद्य तथात्मजान् ।
न गार्हस्थं गृही[3] त्यक्त्वा संन्यसेद्बुद्धिमान् द्विजः ॥५

विधिपूर्वक यज्ञों को बिना सम्पन्न किये तथा पुत्रों को बिना उत्पन्न किये बुद्धिमान् गृहस्थ घर को त्यागकर संन्यास न ले ।५

---

१. कारणादन्यथाभवन् इति पा० । २. ब्रह्मचर्याद्वा इति पा० । ३. गृहीत्वा तु इति, गृहीत्वैव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ वैराग्यवेगेन स्थातुं नोत्सहते गृहे ।
तत्रैव संन्यसेद्विद्वाननिष्ट्वापि द्विजोत्तमः ॥६

अनन्तर वैराग्य के वेग से यदि घर में रहने का उत्साह न हो तो वहीं द्विजोत्तम विद्वान् यज्ञ करके संन्यास ग्रहण करें ।६

तथापि[1] विविधैर्यज्ञैरिष्ट्वा वनमथाश्रयन् [2]।
तपस्तप्त्वा तपोयोगाद्विरक्तः संन्यसेद्बहिः[3] ॥७

तो भी विविध यज्ञों का सम्पादन करके, वन में जाकर तपस्या करके, तप के योग से विरक्त होकर संन्यास ले ले ।७

वानप्रस्थाश्रमं गत्वा न गृहं प्रविशेत्पुनः ।
न संन्यासी वनञ्चाथ ब्रह्मचर्यञ्च साधकः[4] ॥८

साधक वाप्रस्थाश्रम में जाकर पुनः गृह में प्रवेश न करे । संन्यासी भी वानप्रस्थाश्रम तथा ब्रह्मचर्याश्रम में न लौटे ।८

प्राजापत्यान्निरूप्येष्टिमाग्नेयीमथवा द्विजः ।
प्रव्रजेत्तु[5] गृही विद्वान् वनाद्वा श्रुतिचोदनात् ॥९
प्रकर्त्तुमसमर्थोऽपि जुहोति यजति[6] क्रियाः ।
अन्धः पङ्गुर्दरिद्रो वा विरक्तः संन्यसेद्द्विजः ॥१०

वेद के कथनानुसार विद्वान् ब्राह्मण प्राजापत्य अथवा आग्नेय यज्ञ सम्पादन करके वन में चला जाय । जो ऐसा करने में असमर्थ हो वह घर में ही अग्निहोत्र करता रहे । यदि द्विज अंधा, लँगड़ा अथवा दरिद्र होने पर भी विरक्त हो तो भी संन्यास ले ले ।९-१०।

सर्वेषामेव वैराग्यं संन्यासे[7] तु विधीयते ।
पतत्येवाविरक्तो[8] यः संन्यासं कर्तुमिच्छति ॥११

संन्यास लेने के पूर्व सभी को वैराग्य लेना आवश्यक है । विना वैराग्य के संन्यास लेने से पतन हो जाता है ।११

एकस्मिन्नथवा सम्यग्वर्तेतामरणान्तिकम्[9] ।
श्रद्धावानाश्रमे युक्तः सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥१२

---

१. अन्यथा इति, अथापि इति पा० । २. वनमथाश्रयेत् इति, वनमथाव्रजेत् इति पा० । ३. संन्यसेद्यदि इति, संन्यसेद्यतिः इति पा० । ४. असंन्यासो वनञ्चाथ ब्रह्मचर्यानुसाधकः इति, न संन्यासी वनं चाथ ब्रह्मचर्यं न साधकः इति, न संन्यासी वने वासं ब्रह्मचर्यं न साधकः इति, ब्रह्मचर्यं न साधकमिति पा० । ५. प्रव्रजेत् इति पा० । ६. जपति इति पा० । ७. संन्यासाय इति, संन्यासे तु विभाव्यते इति पा० । ८एतत्सेवी विरक्तो वा इति पा० । ९. मरणाद्द्विजाः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संन्यास लेने के बाद मरण-पर्यन्त उसी आश्रम में रहे। श्रद्धावान् होकर जो आश्रमनिष्ठ रहता है उसी को मोक्ष की प्राप्ति होती है ॥१२

न्यायागतधनः[1] शान्तो ब्रह्मविद्यापरायणः।
स्वधर्मपालको नित्यं ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥१३

न्यायपूर्वक धनोपार्जन करने वाला, शान्त, ब्रह्मविद्यापरायण तथा स्वधर्म का पालन करने वाला मोक्ष को प्राप्त करता है ॥१३

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि निःसङ्गः कामवर्जितः।
प्रसन्नेनैव मनसा कुर्वाणो याति तत्पदम् ॥१४

ब्रह्म में कर्म को समर्पित करके सङ्ग रहित तथा कामवर्जित होकर प्रसन्न मन से कर्म करता हुआ मनुष्य ब्रह्म को प्राप्त करता है ॥१४

ब्रह्मणा दीयते देयं ब्रह्मणे संप्रदीयते।
ब्रह्मैव दीयते चेति ब्रह्मार्पणमिदं परम् ॥१५

ब्रह्म ही सब देय वस्तु देते हैं और वह देय वस्तु ब्रह्म को समर्पित कर दी जाती है। वस्तु के रूप में ब्रह्म ही दिये जाते हैं। इसी को ब्रह्मार्पण कहते हैं ॥१५

नाहं कर्त्ता सर्वमेतद्ब्रह्मैव कुरुते तथा।
एतद्ब्रह्मार्पणं प्रोक्तमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥१६

मैं यह सब कुछ नहीं करता, ब्रह्म ही सब कुछ करते हैं। तत्त्वदर्शी ऋषियों ने इसी को ब्रह्मार्पण कहा है ॥१६

प्रीणातु भगवानीशः कर्मणानेन शाश्वतः।
करोति सततं बुद्धया ब्रह्मार्पणमिदं परम् ॥१७

इस कर्म से शाश्वत परमात्मा प्रसन्न हों। बुद्धिपूर्वक निरंतर ऐसा करना परम ब्रह्मार्पण है ॥१७

यद्वा फलानां[2] संन्यासं प्रकुर्यात्परमेश्वरे।
कर्मणामेतदप्याहुर्ब्रह्मार्पणमनुत्तमम् ॥१८

अथवा कर्मों का फल परमेश्वर को समर्पित कर देना श्रेष्ठ ब्रह्मार्पण है।१८।

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं सङ्गवर्ज्जितम्।
क्रियते विदुषा कर्म तद्भवेदपि मोक्षदम् ॥१९

---

१. न्यायाधनगतः इति पा०। न्यायेन अधनं धनाभावं गतः प्राप्तः, न्यायेन दत्तसर्वस्व इत्यर्थः। २. फलार्थं इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्तव्य कर्म को आसक्तिरहित तथा निश्चित रूप से जो विद्वान् करता है उसका वह कर्म भी मोक्ष देने वाला होता है ।१९

अथवा[1] यदि कर्माणि कुर्यान्नित्यान्यपि द्विजः ।
अकृत्वा फलसंन्यासं बध्यते तत्फलेन तु ॥२०

अथवा द्विज नित्य कर्मों को करते हुए फलासक्ति का त्याग न करे तो उस फल से उसका बन्धन हो जाता है ।२०

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन त्यक्त्वा कर्माश्रितं फलम् ।
अविद्वानपि कुर्वीत कर्माप्नोति चिरात्पदम् ॥२१

इसलिये सभी प्रकार के प्रयत्नों से कर्माश्रित फल को त्याग कर मूर्ख व्यक्ति भी यदि कर्म करता है तो वह भी विलम्ब से परमपद को प्राप्त करता है ।२१

कर्मणा क्षीयते पापमैहिकं पौर्विकं तथा ।
मनःप्रसादमन्वेति[2] ब्रह्मविज्जायते नरः ॥२२

कर्म के द्वारा वर्तमान एवं पूर्वजन्म का पाप नष्ट हो जाता है, तब मन में प्रसन्नता आती है जिससे मनुष्य ब्रह्मवेत्ता हो जाता है ।२२

कर्मणा सहिताज्ज्ञानात् सम्यग्योगोऽभिजायते ।
ज्ञानं च कर्मसहितं जायते दोषवर्जितम् ॥२३

कर्म सहित ज्ञान से सम्यग् योग उत्पन्न होता है । कर्म सहित ज्ञान दोष-रहित होता है ।२३

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन यत्र तत्राश्रमे रतः ।
कर्माणीश्वरतुष्टयर्थं कुर्यान्नैष्कर्म्यमाप्नुयात् ॥२४

इसलिये सब प्रकार के प्रयत्नों से जिस किसी आश्रम में रहकर ईश्वर-सन्तुष्टि के लिए कर्मों को करे । इससे निष्काम भाव की प्राप्ति होती है ।२४

संप्राप्य परमं ज्ञानं नैष्कर्म्यं तत्प्रसादतः ।
एकाकी निर्ममः शान्तो जीवन्नेव[3] विमुच्यते ॥२५

परम ज्ञान तथा उसकी कृपा से निष्काम भाव को प्राप्त कर एकाकी, निर्मम तथा शान्त होकर जीवन धारण करने वाला व्यक्ति मुक्त ही है ।२५

वीक्षते परमात्मानं परं ब्रह्म महेश्वरम् ।
नित्यानन्दो निराभासस्तस्मिन्नेव[4] लयं व्रजेत् ॥२६

---

१. अन्यथा इति पा० । २. मनः प्रसादमन्वेति ब्रह्म विज्ञायते ततः इति पा० । ३. जीवन्नपि इति पा० । ४. नित्यानन्दं निराभासं इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानी व्यक्ति महेश्वर परब्रह्म परमात्मा का दर्शन करता है। नित्य आनन्दमय तथा निराभास रहकर उसी ब्रह्म में लीन हो जाता है।२६

तस्मात्सेवेत सततं कर्म्मयोगं प्रसन्नधीः[1]।
तृप्तये परमेशस्य तत्पदं याति शाश्वतम् ॥२७

इसलिये मनुष्य प्रसन्नचित्त होकर परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए कर्मयोग का सेवन करे। ऐसा करने से शाश्वत पद की प्राप्ति होती है।२७

एतद्वः कथितं सर्वं चातुराश्रम्यमुत्तमम्[2]।
न ह्येतत्समतिक्रम्य सिद्धिं विन्दति मानवः[3] ॥२८

इति श्रीकूर्मपुराणे चातुराश्रम्यकथनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

आप लोगों से यह सब चारों आश्रमों का उत्तम वर्णन मैंने कर दिया। इन चारों आश्रमों का अतिक्रमण करके कोई भी मनुष्य सिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकता।२८

श्री कूर्मपुराण में चारों आश्रमों का वर्णन नामक तीसरा अध्याय समाप्त।३

•

चतुर्थोऽध्यायः

अथ प्राकृतसर्गः

सूत उवाच

श्रुत्वाश्रमविधिं कृत्स्नमृषयो हृष्टचेतसः[4]।
नमस्कृत्य हृषीकेशं पुनर्वचनमब्रुवन् ॥१

सूत बोले—सम्पूर्ण रूप से आश्रमों का विधान सुनकर ऋषिगण प्रसन्नचित्त हो भगवान् को प्रणाम कर पुनः बोले।१

---

१. प्रशस्तधीः इति पा०। २. सम्यग्वर्णाश्रममनुत्तमम् इति पा०। ३. विन्दन्ति मानवाः इति पा०। ४. हृष्टमानसाः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनय ऊचुः

भाषितं भवता सर्वं चातुराश्रम्यमुत्तमम् ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामो यथा सम्भवते[1] जगत् ॥२

मुनियों ने कहा—आपने चारों आश्रमों का उत्तम वर्णन सुना दिया । अब हम जगत् की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सुनना चाहते हैं ।२

कुतः सर्वमिदं जातं कस्मिंश्च लयमेष्यति ।
नियन्ता कश्च सर्वेषां वदस्व[2] पुरुषोत्तम ॥३

यह जगत् किससे उत्पन्न हुआ और किसमें जाकर विलीन होगा ? इस संसार का नियंता कौन है ? हे पुरुषोत्तम ! यह बताने की कृपा करें ।३

श्रुत्वा नारायणो वाक्यमृषीणां कूर्मरूपधृक् ।
प्राह गम्भीरया वाचा भूतानां प्रभवोऽव्ययः ॥४

प्राणियों के उत्पादक, अविनाशी, कूर्मरूपधारी नारायण ने ऋषियों का वचन सुनकर गम्भीर वाणी में कहा ।४

कूर्म उवाच

महेश्वरः परोऽव्यक्तः[3] चतुर्व्यूहः[4] सनातनः ।
अनन्तश्चाप्रमेयश्च नियन्ता सर्वतोमुखः ॥५

कूर्म बोले—परम अव्यक्त, चतुर्व्यूह (सर्वावस्थामय) सनातन, अनन्त, अप्रमेय सर्वशक्तिमान् महेश्वर सबके नियन्ता हैं ।५

अव्यक्तं कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम् ।
प्रधानं प्रकृतिश्चेति यमाहुस्तत्त्वचिन्तकाः ॥६

तत्त्वचिन्तकों ने उन्हीं को अव्यक्त, कारण, नित्य, सत्, असत्रूप, प्रधान तथा प्रकृति कहा है ।६

गन्धवर्णरसैर्हीनं[5] शब्दस्पर्शविवर्जितम् ।
अजरं[6] ध्रुवमक्षय्यं नित्यं स्वात्मन्यवस्थितम् ॥७

---

१. आर्षमात्मनेपदम् । प्राप्त्यर्थकत्वे तु वैकल्पिकमात्मनेपदं भवति । २. वदस्व इति आत्मनेपदमार्षम् । ३. परोऽव्यक्तात् इति पा० । ४. चत्वारः व्यूहा अधस्थानभेदा यस्य तथोक्तः । चातुर्विध्यञ्च दण्डभोगमण्डलासंहतभेदात् । तथाच "तिर्यग्वृत्तिश्च दण्डः स्याद् भोगोऽन्वावृत्तिरेव च । मण्डलं सर्वतोवृत्तिःपृथग्वृत्तिरसंहतः:" । यद्यपि व्यूहपदं सैन्यरचनायां रूढं तथाप्यत्र महेश्वरस्य सर्वव्यापित्वात् सर्वावस्थामयत्वेन स चतुर्व्यूह इत्युच्यते । ५. बर्णः रूपमित्यर्थः । ६. अन्नवम् इति, अक्षरम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह (परमात्मा) गन्ध, वर्ण, तथा रस से हीन शब्द और स्पर्श से वर्जित, अजर, ध्रुव, अविनाशी, नित्य और अपनी आत्मा में अवस्थित रहते हैं।७

जगद्योनिर्महाभूतं परब्रह्म[1] सनातनम्।
विग्रहः सर्वभूतानामात्मनाधिष्ठितं महत् ॥८
अनाद्यन्तमजं सूक्ष्मं त्रिगुणं प्रभवाव्ययम्।
असाम्प्रतमविज्ञेयं[2] ब्रह्माग्रे समवर्त्तत ॥९

वही संसार के कारण, महाभूत, परब्रह्म, सनातन, सभी भूतों के शरीर, आत्मा से अधिष्ठित, महत्, अनादि, अनन्त, अजन्मा, सूक्ष्म, त्रिगुण, प्रभव, अव्यय, असाम्प्रत और अविज्ञेय ब्रह्म सर्वप्रथम थे।८-९।

गुणसाम्ये तदा तस्मिन् पुरुषे वात्मनि[3] स्थिते।
प्राकृतः प्रलयो ज्ञेयो यावद्विश्वसमुद्भवः ॥१०

आत्मपुरुष के गुण साम्य की अवस्था में रहने पर जब तक विश्व की रचना नहीं होती है तब तक प्राकृत-प्रलय होता है।१०

ब्राह्मी रात्रिरियं प्रोक्ता ह्यहः[4] सृष्टिरुदाहृता।
अहर्न विद्यते तस्य न रात्रिर्ह्युपचारतः[5] ॥११

यह (प्राकृत प्रलय) ब्रह्मा की रात्रि कही गई है और सृष्टि करना उनका दिन कहा गया है। वस्तुतः ब्रह्मा का न दिन होता है न रात होती है।११

निशान्ते प्रतिबुद्धोऽसौ जगदादिरनादिमान्[6]।
सर्वभूतमयोऽव्यक्तादन्तर्यामीश्वरः परः ॥१२
प्रकृतिं पुरुषं चैव प्रविश्याशु महेश्वरः।
क्षोभयामास योगेन परेण परमेश्वरः ॥१३

रात्रि के अन्त में जागने पर जगत् के आदि, अनादि, सर्वभूतमय, अव्यक्त, अन्तर्यामी, ईश्वर और परमेश्वर, प्रकृति और पुरुष में शीघ्र प्रवेश करके परमयोग से हलचल उत्पन्न करता है।१ -१३।

यथा मदो नरस्त्रीणां यथा वा माधवोऽनिलः।
अनुप्रविष्टः क्षोभाय तथासौ योगमूर्तिमान्[7] ॥१४

---

१. परमिति पा०। २. असाम्प्रतं सम्प्रति न भवम् त्रिकालव्यापि शाश्वतमित्यर्थः। ३. चात्मनि इति पा०। ४. अहः सृष्टिरिति पा०। ५. रात्रिरुपचारतः इति पा०। ६. जगदादिरनामयः इति पा०। ७. पुरुषोत्तमः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे कामदेव अथवा वासन्ती वायु पुरुष और स्त्री में प्रविष्ट होकर विचलित कर देता है उसी तरह योगमूर्ति ब्रह्म क्षोभ उत्पन्न कर देता है ।१४

स एव क्षोभको विप्राः क्षोभ्यश्च परमेश्वरः ।
स संकोचविकासाभ्यां प्रधानत्वे व्यवस्थितः ॥१५

हे विप्रगण ! वही परमेश्वर क्षोभ उत्पन्न करने वाला तथा क्षुब्ध होने वाला भी है। वह संकोच और विकास (लय और सृष्टि) द्वारा प्रधानत्व (प्रकृति) में अवस्थित होता है ।१५

प्रधानात्क्षोभ्यमाणाच्च तथा पुंसः पुरातनात् ।
प्रादुरासीन्महद्बीजं प्रधानपुरुषात्मकम् ॥१६

क्षुब्ध की जाती हुई प्रकृति से और पुरातन पुरुष से प्रधान पुरुषात्मक महान् बीज प्रादुर्भूत हुआ ।१६

महानात्मा मतिर्ब्रह्मा[1] प्रबुद्धिः ख्यातिरीश्वरः ।
प्रज्ञा धृतिः स्मृतिः संविदेतस्मादिति[2] तत्स्मृतम् ॥१७

उसी से महान्आत्मा, मति, ब्रह्मा, प्रबुद्धि, ख्याति, ईश्वर, प्रज्ञा, धृति, स्मृति और संवित् की उत्पत्ति हुई ।१७

वैकारिकस्तैजसश्च भूतादिश्चैव तामसः ।
त्रिविधोऽयमहंकारो महतः संबभूव ह ॥१८

वैकारिक, तैजस और भूतादि तामस यह तीन प्रकार का अहंकार महत् से उत्पन्न हुआ ।१८

अहंकारोऽभिमानश्च कर्ता मन्ता[3] च स स्मृतः[4] ।
आत्मा च मत्परो[5] जीवो गतः सर्वाः प्रवृत्तयः ॥१९

अहंकार, अभिमान, कर्ता, मननकर्ता, परमात्मा तथा जीवात्मा सब उन्हीं से उत्पन्न हुए। उन्हीं से सभी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हुईं ।१९

पञ्चभूतान्यहंकारात्तन्मात्राणि च जज्ञिरे ।
इन्द्रियाणि[6] च सर्वाणि सर्वं तस्यात्मजं[7] जगत् ॥२०

अहंकार से पंचभूत, पंचतन्मात्रा, समस्त इंद्रियाँ उत्पन्न हुईं और उसी से जगत् की सृष्टि हुयी ।२०

---

१. गतिर्ब्रह्मा इति पा० । २. संविदेश्वरञ्चेति पा० । ३. हर्त्ता इति पा० । ४. संस्कृत इति, संस्मृत इति पा० । ५. पुष्कल इति, प्रबल इति, पुद्गल इति, (पुद्गलः परमाणुरूपः)। पुरुष इति पा० । ६. इन्द्रियाणि तथा देवाः इति पा० । ७ तस्यात्मकम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनस्त्वव्यक्तजं प्रोक्तं विकारः प्रथमः स्मृतः ।
येनासौ[1] जायते कर्ता भूतादींश्चानुपश्यति ॥२१

मन अव्यक्त से उत्पन्न कहा गया है। वही प्रथम विकार है। वही सब का कर्त्ता है और वही सभी भूतों का पर्यवेक्षण करता है।२१

वैकारिकादहंकारात्सर्गो वैकारिकोऽभवत् ।
तैजसानीन्द्रियाणिस्युर्देवा वैकारिका दश ॥२२
एकादशं मनस्तत्र स्वगुणेनोभयात्मकम् ।
भूततन्मात्रसर्गोऽयं भूतादेरभवद्द्विजाः ॥२३

वैकारिक अहंकार से वैकारिक सृष्टि हुई। इन्द्रियाँ तेज का विकार हैं। इनके वैकारिक दस देवता हैं। ग्यारहवाँ मन उत्पन्न हुआ जो अपने गुण से उभयात्मक है। द्विजगण! भूतादि से भूततन्मात्र की सृष्टि हुयी।२२-२३।

भूतादिस्तु विकुर्वाणः शब्दमात्रं ससर्ज्ज ह ।
आकाशो[2] जायते तस्मात्तस्य शब्दो गुणो मतः ॥२४

भूतादि (तामस अहंकार) ने विकार को प्राप्त होकर शब्दतन्मात्रा को उत्पन्न किया। उससे आकाश उत्पन्न हुआ जिसका गुण शब्द माना गया।२४

आकाशस्तु विकुर्वाणः स्पर्शमात्रं ससर्ज्ज ह ।
वायुरुत्पद्यते तस्मात्तस्य स्पर्शं गुणं विदुः ॥२५

आकाश ने भी विकार को प्राप्त करके स्पर्श तन्मात्रा की सृष्टि की। उससे वायु उत्पन्न हुआ जिसका गुण स्पर्श कहा गया है। २५

वायुश्चापि विकुर्वाणो रूपमात्रं ससर्ज्ज ह ।
ज्योतिरुत्पद्यते वायोस्तद्रूपगुणमुच्यते ॥२६

वायु ने भी विकार को प्राप्त करके रूपतन्मात्रा की सृष्टि की। वायु से अग्नि की उत्पत्ति हुयी जिसका गुण रूप है।२६

ज्योतिश्चापि विकुर्वाणं रसमात्रं ससर्ज्ज ह ।
सम्भवन्ति ततोऽम्भांसि रसाधाराणि तानि च ॥२७

अग्नि ने विकार को प्राप्त करके रसतन्मात्रा की सृष्टि की। उससे जल उत्पन्न हुआ जो रस का आधार है।२७

---

१. एतस्मादिति पा०। २. आकाशं सुषिरं तस्मादुत्पन्नं शब्दलक्षणम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपश्चापि विकुर्वाणा[1] गन्धमात्रं ससर्जिरे[2] ।
सङ्घातो जायते तस्मात्तस्य गन्धो गुणो मतः ॥२८

जल ने भी विकार को प्राप्त करके गन्धतन्मात्रा की सृष्टि की। उससे गुणसंघातमयी पृथ्वी उत्पन्न हुई। उसका गुण गन्ध है। २८

आकाशं शब्दमात्रं तु स्पर्शमात्रं समावृणोत् ।
द्विगुणस्तु ततो वायुः शब्दस्पर्शात्मकोऽभवत् ॥२९

शब्दमात्र आकाश ने स्पर्शमात्र को आवृत किया। उससे द्विगुण शब्दस्पर्शात्मक वायु की सृष्टि हुई।२९

रूपं तथैवाविशतः शब्दस्पर्शौ गुणावुभौ ।
त्रिगुणः स्यात्ततो वह्निः स शब्दस्पर्शरूपवान् ॥३०

शब्द और स्पर्श दोनों गुण रूप में प्रविष्ट हुये। उससे अग्नि त्रिगुणात्मक शब्दस्पर्श रूप युक्त हुआ।३०

शब्दः स्पर्शश्च रूपञ्च रसमात्रं समाविशत् ।
तस्माच्चतुर्गुणा आपो विज्ञेयास्तु रसात्मिकाः ॥३१

शब्द, स्पर्श और रूप ने रसमात्र में प्रवेश किया। इसलिए रसात्मक जल चार गुणों से युक्त हुआ।३१

शब्दः स्पर्शश्च रूपञ्च रसो गन्धं समाविशत् ।
तस्मात्पञ्चगुणा भूमिः स्थूला भूतेषु शब्द्यते[3] ॥३२

शब्द, स्पर्श, रूप तथा रस ने गन्ध में प्रवेश किया। इसलिए पृथिवी पाँच गुणों से युक्त हुई। अतएव वह पञ्चमहाभूतों में स्थूल कही जाती है।३२

शान्ता घोराश्च मूढाश्च विशेषास्तेन ते स्मृताः ।
परस्परानुप्रवेशाद्धारयन्ति परस्परम् ॥३३

सभी भूत शान्त, घोर, मूढ तथा विशेष-विशेष नाम से कहे गये हैं। ये परस्पर अनुप्रवेश करके परस्पर धारण करते हैं। ३३

एते सप्त महात्मानो ह्यन्योन्यस्य समाश्रयात् ।
नाशक्नुवन् प्रजाः स्रष्टुमसमागम्य कृत्स्नशः ॥३४

ये सातों महात्मा पूर्णरूप से परस्पर मिले बिना परस्पर के आश्रय से प्रजाधारण करने में समर्थ नहीं है।३४

---

१. विकुर्वत्य इति पा०। २. आत्मनेपदमार्षम्। ३. शस्यते इति, पठ्यते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुषाधिष्ठितत्वाच्च अव्यक्तानुग्रहेण च ।
महदादयो विशेषान्ता ह्यण्डमुत्पादयन्ति ते ॥३५

पुरुष के अधिष्ठान प्रयुक्त अव्यक्त के अनुग्रह से वही महदादि से लेकर विशेष तक सभी अंड को उत्पन्न करते हैं ।३५

एककालसमुत्पन्नं जलबुद्बुदवच्च तत् ।
विशेषेभ्योऽण्डमभवद्बृहत्तदुदकेशयम् ॥३६

विशेषों से उत्पन्न, जल के बुलबुले के समान एक काल में जल में प्रतीत होने वाला वह बृहत् अण्ड सृष्ट होकर जलशायी हुआ ।३६

तस्मिन् कार्यस्य[1] करणं संसिद्धं परमेष्ठिनः ।
प्रकृतेऽण्डे विवृद्धे तु क्षेत्रज्ञो ब्रह्मसंज्ञितः ॥३७

प्राकृत अण्ड वृद्धि को प्राप्त करके श्रेष्ठ कार्य को सिद्ध करने के फलस्वरूप क्षेत्रज्ञ 'ब्रह्म' नाम की संज्ञा को प्राप्त हो गया । ३७

स वै शरीरी प्रथमः स वै पुरुष उच्यते ।
आदिकर्त्ता स भूतानां ब्रह्माग्रे समवर्त्तत ।३८

वह पहला शरीरी तथा पहला पुरुष कहा जाने लगा । वह भूतों का आदिकर्ता ब्रह्मा के आगे आविर्भूत हुआ । ३८

यमाहुः पुरुषं हंसं प्रधानात्परतः स्थितम् ।
हिरण्यगर्भं कपिलं छन्दोमूर्तिं सनातनम् ॥३९

जिसे पुरुष, हंस,प्रधान से परे अवस्थित, हिरण्यगर्भ, कपिल, छन्दोमूर्ति तथा सनातन कहा गया है। ३९

मेरुरुल्बमभूत्तस्य[2] जरायुश्चापि[3] पर्वताः ।
गर्भोदकं समुद्राश्च तस्यासन्परमात्मनः ॥४०

उस परमात्मा का सुमेरु पर्वत उल्ब (गर्भवेष्टन-चर्म, झिल्ली), सभी पर्वत जरायु (खेड़ी) तथा समुद्र गर्भोदक बने ।४०

तस्मिन्नण्डेऽभवद्विश्वं सदेवासुरमानुषम् ।
चन्द्रादित्यौ सनक्षत्रौ सग्रहौ सह वायुना ॥४१

उस अण्ड से देवता, असुर, मनुष्य, चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह और वायु सहित विश्व की सृष्टि हुई ।४१

---

१. कार्यस्य कारणं तस्मिन् इति पा० । २. उल्बं गर्भवेष्टनचर्म । ३. जरायुश्च महीधराः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अद्भिर्दशगुणादिभश्च बाह्यतोऽण्डं समावृतम् ।
आपो दशगुणेनैव तेजसा बाह्यतो वृताः ॥४२

तेजोदशगुणेनैव बाह्यतो वायुना वृतम् ।
आकाशेनावृतो वायुः खं तु भूतादिनावृतम् ॥४३

भूतादिर्महता तद्वदव्यक्तेनावृतो महान् ।
एते लोका महात्मानः सर्वे[1] तत्त्वाभिमानिनः ॥४४

वसन्ति तत्र पुरुषास्तदात्मनो व्यवस्थिताः[2] ।
ईश्वरा योगधर्माणो ये चान्ये तत्त्वचिन्तकाः[3] ॥४५

सर्वज्ञाः शान्तरजसो नित्यं मुदितमानसाः ।
एतैरावरणैरण्डं प्राकृतैः सप्तभिर्वृतम् ॥४६

दस गुने जल से उस अण्ड का बाहरी भाग आवृत हुआ, दस गुने तेज द्वारा जल का बाहरी भाग आवृत हुआ, दस गुने वायु द्वारा तेज आवृत हुआ। इसी प्रकार आकाश द्वारा वायु आवृत हुआ, आकाश भूतादि द्वारा आवृत हुआ, भूतादि महत् द्वारा आवृत हुआ एवं महत् अव्यक्त द्वारा आवृत हुआ। ये सभी लोक उस स्थान में तदात्मवान् होकर महात्मा तथा तत्त्वाभिमानी पुरुष रूप में वास करने लगे। प्रभुत्वशाली योगपरायण, तत्त्वचिन्तक, सर्वज्ञ, रजोगुणविहीन एवं नित्य प्रमुदितचित्त—इन सात प्राकृत आवरणों से अण्ड आवृत हुआ ।४२-४६।

एतावच्छक्यते वक्तुं मायैषा गहना द्विजाः ।
एतत्प्राधानिकं कार्यं यन्मया बीजमीरितम्[4] ॥४७

हे द्विजगण ! इतना ही कहा जा सकता है कि यह माया अत्यन्त दुर्जय है। यह प्रधान का कार्य है, जिसे मैंने बीज कहा है ।४७

प्रजापतेः परा[5] मूर्त्तिरितीयं वैदिकी श्रुतिः ।
ब्रह्माण्डमेतत्सकलं सप्तलोकबलान्वितम्[6] ॥४८
द्वितीयं तस्य देवस्य शरीरं परमेष्ठिनः ।

यह प्रजापति की परममूर्ति है, ऐसा वैदिकश्रुति का कहना है यह सप्तलोकबलयुक्त सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड सृष्टिकर्ता का द्वितीय शरीर है ।४८½

हिरण्यगर्भो भगवान् ब्रह्मा वै कनकाण्डजः ॥४९

---

१. सर्वंतत्त्वाभिमानिनः इति पा०। २. नभः स्थिताः इति पा०। ३. योगचिन्तका इति पा०। ४. पूर्वमीरितम् इति पा०। ५. पुरा इति पा। ६. सप्तलोकतलान्वितम् इति, सप्तलोककुलान्वितम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीयं भगवद्रूपं प्राहुर्वेदार्थवेदिनः ।
रजोगुणमयं चान्यद्रूपं तस्यैव धीमतः ॥५०

सुवर्ण के अंड से उत्पन्न हिरण्यगर्भ, भगवान् ब्रह्मा भगवान् का तृतीय रूप है, ऐसा वेदार्थज्ञाताओं ने कहा है। उसी धीमान् का दूसरा रजोगुणमय रूप है।४९-५०।

चतुर्मुखस्तु[1] भगवान् जगत्सृष्टौ प्रवर्त्तते ।
सृष्टं[2] च पाति सकलं विश्वात्मा विश्वतोमुखः ॥५१
सत्त्वं गुणमुपाश्रित्य विष्णुर्विश्वेश्वरः स्वयम् ।

चतुर्मुख भगवान् ब्रह्मा जगत् की सृष्टि करते हैं। सृष्ट जगत् का पालन विश्वात्मा, विश्वमुख, विश्वेश्वर, स्वयं विष्णु सत्त्वगुण का आश्रय लेकर करते हैं । ५१½

अन्तकाले स्वयं देवः सर्वात्मा परमेश्वरः ॥५२
तमोगुणं समाश्रित्य रुद्रः संहरते जगत् ।
एकोऽपि सन्महादेवस्त्रिधासौ समवस्थितः ॥५३
सर्गरक्षालयगुणैर्निर्गुणोऽपि निरञ्जनः ।
एकधा स द्विधा चैव त्रिधा च बहुधा गुणैः[3] ॥५४

अन्तकाल में सर्वात्मा परमेश्वर रुद्रदेव स्वयं तमोगुण का अवलम्बन करके जगत् का संहार करते हैं। निर्गुण एवं निरञ्जन महादेव एक होते हुए भी सृष्टि, पालन और संहार गुण द्वारा त्रिमूर्ति रूप में अवस्थित हैं। वे गुणभेद से एकमूर्ति, द्विमूर्ति तथा त्रिमूर्ति हो जाते हैं। ५२-५४।

योगेश्वरः शरीराणि करोति विकरोति च ।
नानाकृतिक्रियारूपनामवन्ति स्वलीलया ॥५५

वे योगेश्वर भगवान् अपनी लीलाप्रयुक्त अनेक आकृति, रूप तथा नामविशिष्ट शरीर कभी धारण करते हैं, कभी विकृत कर लेते हैं। ५५

हिताय चैव भक्तानां स एव ग्रसते पुनः ।
त्रिधा विभज्य चात्मानं त्रैलोक्ये संप्रवर्तते ॥५६

भक्तों के कल्याण के लिए वही पुनः ग्रास कर लेते हैं, अपने को तीन भागों में विभक्त करके तीनों लोक में विचरण करते हैं। ५६

सृजते ग्रसते चैव वीक्षते च विशेषतः ।
यस्मात्सृष्ट्वानुगृह्णाति ग्रसते च पुनः प्रजाः ॥५७

---

१. चतुर्मुखश्च, स, इति च पा०। २. संसृज्य इति पा०। ३. गुण इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुणात्मकत्वात्त्रैकाल्ये[1] तस्मादेकः स उच्यते ।
अग्रे हिरण्यगर्भः स प्रादुर्भूतः सनातनः ॥५८

सृष्टि करते हैं, संहार करते हैं और विशेषतः रक्षा करते हैं। जिसलिए सृष्टि करके पालन करते हैं और पुनः प्रजाओं का संहार कर डालते हैं इसलिए गुणगरिमा के कारण तीनों काल में वे अद्वितीय कहलाते हैं। पहले वे सनातन हिरण्गर्भ ब्रह्मा प्रादुर्भूत हुए। ५७-५८।

आदित्वादादिदेवोऽसावजातत्वादजः[2] स्मृतः ।
पाति यस्मात्प्रजाः सर्वाः प्रजापतिरिति स्मृतः ॥५९

आदि होने के कारण वे आदिदेव तथा उनका जन्म न होने के कारण वे 'अज' कहे गये हैं। सभी प्रजाओं की रक्षा करने के कारण उनका नाम प्रजापति पड़ा। ५९

देवेषु च महादेवो महादेव इति स्मृतः ।
बृहत्त्वाच्च स्मृतो ब्रह्मा परत्वात्परमेश्वरः ॥६०

वे देवों में महान् देव हैं, इसलिए महादेव कहलाये। बृंहण (वर्धन) के कारण उन्हें ब्रह्मा और सबसे पर (श्रेष्ठ) होने के कारण परमेश्वर कहा गया है। ६०

वशित्वादप्यवश्यत्वादीश्वरः परिभाषितः ।
ऋषिः सर्वत्रगत्वेन हरिः सर्वहरो[3] यतः ॥६१

वशित्व (वश में करना) और अवश्यत्व (वश में न होना) के कारण उन्हें ईश्वर नाम से अभिहित किया गया है। सर्वत्र गमन करने के कारण उन्हें ऋषि और सबका संहार करने के कारण हरि कहा जाता है ।६१

अनुत्पादाच्च पूर्वत्वात्स्वयंभूरिति स स्मृतः ।
नराणामयनं यस्मात्तेन नारायणः स्मृतः ॥६२

उत्पन्न न होने एवं सबसे पूर्ववर्ती होने के कारण वे स्वयंभू कहे गये हैं। नर-समूह के आश्रय होने से वे नारायण कहलाये। ६२

हरः संसारहरणाद्विभुत्वाद्विष्णुरुच्यते ।
भगवान्सर्वविज्ञानादवनादोमिति[4] स्मृतः ॥६३

संसार का संहार करने के कारण हर तथा विभु (सर्वव्यापक) होने के कारण वे विष्णु कहे जाते हैं। सब प्रकार के ज्ञान के कारण उन्हें भगवान् और रक्षा करने के कारण 'ओ' कहा जाता है। ६३

---

१. गुणात्मकत्वात्त्रैलोक्ये इति पा०। २. ज्ञातत्वादज इति पा०। ३. सर्वगुरुरिति पा०। ४. देवनाद्देवता स्मृत इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वज्ञः सर्वविज्ञानात्सर्वः सर्वमयो यतः ।
शिवः स्यान्निर्मलो यस्माद्विभुः सर्वगतो यतः ॥६४

सबको जानने के कारण उन्हें सर्वज्ञ और सर्वमय होने से सर्व भी कहते हैं । निर्मल होने से शिव और सर्वत्र व्याप्त होने से विभु वे कहलाते हैं । ६४

तारणात्सर्वदुःखानां तारकः परिगीयते ।
बहुनाऽत्र किमुक्तेन सर्वं ब्रह्ममयं[1] जगत् ॥६५

सभी दुःखों से परित्राण करने के कारण वे 'तारक' गाये जाते हैं । यहाँ बहुत कहने से क्या प्रयोजन ? सम्पूर्ण जगत् ब्रह्ममय है । ६५

अनेकभेदभिन्नस्तु क्रीडते[2] परमेश्वरः ।
इत्येष प्राकृतः सर्गः संक्षेपात्कथितो मया ।
अबुद्धिपूर्विकां[3] विप्रा ब्राह्मीं सृष्टिं निबोधत ॥६६

इति श्रीकूर्मपुराणे प्राकृतसर्गवर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४

परमेश्वर अनेक रूप धारण करके क्रीड़ा करते हैं । यह प्राकृत (प्रकृतिजन्य) सृष्टि मैंने संक्षेप में बता दी । विप्रगण ! अब अबुद्धिपूर्विका ब्राह्मी सृष्टि के बारे में सुनो । ६६

श्री कूर्मपुराण में प्राकृत सृष्टि वर्णन नामक चतुर्थ अध्याय समाप्त । ४

---

१. विष्णुमयमिति पा० । २. आत्मनेपदमार्षम् । ३. अबुद्धिपूर्विकां–नास्ति बुद्धिः महत्तत्त्वं पूर्व्वा प्रथमा यत्र तथोक्ताम् । प्राकृतसर्गे तु प्रथमं प्रकृतेर्महान्, ततो महतोऽहंकारः इत्येवम्प्रकारेण क्रमेण सर्गो भवति । ब्राह्मे तु सर्गे न तथा इति विशेषः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चमोऽध्यायः

अथ कालसंख्याविवरणम्

कूर्म उवाच

(अनुत्पादाच्च पूर्वस्मात् स्वयंभूरिति स स्मृतः । १
नराणामयनं यस्मात्तेन नारायणः स्मृतः ॥
हरः संसारहरणाद्विभुत्वाद्विष्णुरुच्यते ।
भगवान् सर्वविज्ञानादवनादोमिति स्मृतः ॥२
सर्वज्ञः सर्वविज्ञानात्सर्वः सर्वमयो यतः ।)
स्वयम्भुवो निवृत्तस्य[1] कालसंख्या द्विजोत्तमाः[2] ॥३
न शक्यते समाख्यातु[3] बहुवर्षैरपि स्वयम् ।
कालसंख्या समासेन परार्द्धद्वयकल्पिता ॥४

कूर्म बोले :—[श्लोक १ और २½ का अर्थ अध्याय ४ के श्लोक ६२ और ६३ के नीचे देखें] हे द्विजोत्तमगण ! बहुत वर्षों में भी स्वयं स्वायंभुव मनु का काल वर्णन नहीं किया जा सकता। सम्पूर्ण कालसंख्या दो परार्ध (अन्तिम संख्या) मानी जाती है। ३-४।

स एव स्यात्परः कालस्तदन्ते[4] सृज्यते पुनः ।
निजेन तस्य मानेन चातुवर्षशतं स्मृतम् ॥५

वही पर काल है। उसके अन्त में पुनः सृष्टि की जाती है। उन स्वायंभुव मनु के अपने परिमाण में आयु सौ वर्ष है। ५

तत्परार्द्ध[5] तदर्द्ध वा परार्द्धमभिधीयते ।
काष्ठा पञ्चदश[6] ख्याता निमेषा द्विजसत्तमाः ॥६

उसका आद्य अर्ध या पर-अर्ध परार्ध नाम से अभिहित किया जाता है। हे द्विज-श्रेष्ठों ! पन्द्रह निमेष (पलक मारना) की एक काष्ठा होती है। ६

---

१. स्वयम्भुवोऽपि वृत्तस्य इति पा०। २. इतः परम् इति पा०। ३. मयाख्यातुं इति पा०। ४. तदन्ते प्रतिगृह्यते इति, तदन्ते परिगृह्यते इति, तदन्ते प्रतिसृज्यते इति च पा०। ५. तत्पराख्यं तदूर्द्धञ्च इति, तत्पराख्यं तदर्द्धञ्च इति, तदर्द्धञ्चा इति पा०; ६. पञ्चदशाख्यास्तु इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काष्ठा त्रिंशत्कला त्रिंशत्कला मौहूर्त्तिकी गतिः ।
तावत्संख्यैरहोरात्रं मुहूर्त्तैर्मानुषं स्मृतम् ॥७

तीस काष्ठाओं की एक कला और तीस कलाओं का एक मुहूर्त होता है। तीस मुहूर्तों का मनुष्यों का एक अहोरात्र होता है। ७

अहोरात्राणि तावंति मासः पक्षद्वयात्मकः ।
तैः षड्भिरयनं वर्षं द्वेऽयने दक्षिणोत्तरे ॥८

तीस अहोरात्र का दो पक्ष वाला एक मास होता है एवं दो मासों का एक अयन होता है। अयन दो हैं—एक दक्षिणायन और दूसरा उत्तरायण। ८

अयनं दक्षिणं रात्रिर्देवानामुत्तरं दिनम् ।
दिव्यैर्वर्षसहस्रैस्तु कृतत्रेतादिसंज्ञितम् ॥९
चतुर्युगं द्वादशभिस्तद्विभागं निबोधत ।
चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणांतत्कृतं युगम् ॥१०

दक्षिणायन देवाताओं की रात्रि है और उत्तरायण उनका दिन है। दिव्य परिमाण के बारह हजार वर्षों का सत्य, त्रेता आदि चार युग होते हैं। उनका विभाग सुनो। चार हजार वर्षों का सत्ययुग होता हैं। ९-१०।

तस्य तावच्छतीसन्ध्या सन्ध्यांशश्च कृतस्य तु ।
त्रिशती द्विशती सन्ध्या तथा चैकशती क्रमात् ॥११

चार सौ वर्ष सत्ययुग का सन्ध्याकाल है और चार सौ वर्ष सन्ध्यांश। क्रमशः त्रेतादि का सन्ध्याकाल तीन सौ, दो सौ और एक सौ वर्ष है। ११

अंशकं षट्शतं तस्मात्कृतसन्ध्यांशकैर्विना ।
त्रिद्व्येकधा[1] च साहस्रं विना सन्ध्यांशकेन तु ॥१२
त्रेताद्वापरतिष्याणां[2] कालज्ञाने[3] प्रकीर्त्तितम् ।
एतद्द्वादशसाहस्रं साधिकं परिकल्पितम्[4] ॥१३

सत्ययुग का सन्ध्यांश तथा व्यतीत सन्ध्यांशकाल दो सौ कुल छह सौ हुए। सन्ध्यांश के बिना दो एवं एक सहस्र, वर्ष त्रेता, द्वापर तथा कलि के कालज्ञान में परिकीर्तित हुआ है। यही बारह हजार वर्ष अधिक परिकल्पित है। १२-१३।

---

१. चिद्व्येकसाहस्रमितो इति, त्रिभिद्वर्येकसहस्राणामिति पा०। २. निष्पाद्यामिति पा०। ३. लोकज्ञाने इति पा०। ४. परिकीर्तितमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदेकसप्तिगुणं[1] मनोरन्तरमुच्यते ।
ब्रह्मणो दिवसे विप्रा मनवश्च[2] चतुर्दश ॥१४

उसका एकहत्तर गुण (अर्थात् एकहत्तर दिव्य युगों का एक) मन्वन्तर होता है। विप्रगण ! ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मन्वन्तर बीत जाते हैं। १४

स्वायम्भुवादयः सर्वे ततः सार्वणिकादयः ।
तैरियं पृथिवी सर्वा सप्तद्वीपा सपर्वता ॥१५
पूर्णं युगसहस्रं वै परिपाल्या नरेश्वरैः ।
मन्वन्तरेण चैकेन सर्वाण्येवान्तराणि वै ॥१६
व्याख्यातानि न सन्देहः कल्पे कल्पे न चैव हि ।
ब्राह्ममेकमहः कल्पस्तावती रात्रिरिष्यते ॥१७

स्वायंभुव आदि सभी मनु, तदनन्तर सार्वणिक आदि नरेश्वरों द्वारा पर्वत सहित सप्तद्वीप पृथिवी पूर्ण सहस्र युग पर्यंत परिपालित होती है। एक मन्वन्तर द्वारा कल्प कल्प में सभी मन्वन्तर व्याख्यात होते हैं, इसमें सन्देह नहीं। एक कल्प ब्रह्मा का एक दिन होता है और उतनी बड़ी (एक कल्प की) रात्रि होती है। १५–१७।

चतुर्युगसहस्रं तु कल्पमाहुर्मनीषिणः ।
त्रीणि कल्पशतानि स्युस्तथा षष्टिर्द्विजोत्तमाः ॥१८
ब्रह्मणो वत्सरस्तज्ज्ञैः कथितो वै द्विजोत्तमाः ।
स च कालः शतगुणः परार्द्धं चैव तद्विदुः[3] ॥१९

मनीषियों ने एक हजार चतुर्युग का एक कल्प माना है। द्विजगण ! उसी प्रकार काल विशेषज्ञों ने तीन सौ साठ कल्पों का ब्रह्मा का एक वर्ष कहा है। वही परिमाण-काल शतगुण होने पर परार्ध कहा जाता है। १८-१९।

तस्यांते सर्वसत्त्वानां सहेतौ प्रकृतौ लयः ।
तेनायं प्रोच्यते सद्भिः प्राकृतः प्रतिसंचरः ॥२०

उसके अन्त में सभी प्राणियों की उत्पत्ति के कारण प्रकृति में लय हो जाता है। इसलिए सज्जन लोग इसे प्राकृत प्रतिसंचर कहते हैं। २०

ब्रह्मनारायणेशानां त्रयाणां प्रकृतौ लयः ।
प्रोच्यते कालयोगेन पुनरेव च सम्भवः ॥२१

---

१. तदेकसप्ततियुगमिति पा०। २. मनवः स्युरिति, मनवस्तु इति पा०। ३. ब्रह्मणः कथितं वर्षं परार्ध्यं तच्च तत्परम् इति, ब्रह्मणः कथितं सर्वं परार्द्धं तच्छतं विदुः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन तीनों का प्रकृति में लय होता है और पुनः समय आने पर उनकी उत्पत्ति हो जाती है। २१

एवं ब्रह्मा च भूतानि वासुदेवोऽपि शङ्करः।
कालेनैव तु सृज्यन्ते स एव ग्रसते पुनः ॥२२

इस प्रकार ब्रह्मा, समस्त भूत, विष्णु और शंकर—ये सभी कालक्रम से सृष्टि और संहार को प्राप्त करते हैं। २२

अनादिरेष भगवान् कालोऽनन्तोऽजरोऽमरः।
सर्वगत्वात्स्वतन्त्रत्वात्सर्वात्मत्वान्महेश्वरः ॥२३

ये भगवान् अनादि, अनन्त, अजर, अमर, काल, सर्वगामी होने, स्वतन्त्र होने और सर्वात्मा होने के कारण महेश्वर हैं। २३

ब्रह्माणो बहवो रुद्रा ह्यन्ये[1] नारायणादयः।
एको हि भगवानीशः कालः कविरिति श्रुतिः ॥२४

एक ही भगवान् ईश, काल, कवि, ब्रह्मा, बहुसंख्यक रुद्र, नारायण आदि है, ऐसा श्रुति ने कहा है। २४

एकमत्र[2] व्यतीतं तु परार्द्धं[3] ब्रह्मणो द्विजाः।
साम्प्रतं वर्त्तते त्वद्धं तस्य कल्पोऽयमग्रजः[4] ॥२५

द्विजगण! यहाँ ब्रह्मा का एक परार्ध बीत गया है। इस समय दूसरा परार्ध चल रहा है। उसका यह अग्रिम कल्प है।२५

योऽतीतः सोऽन्तिमः कल्पः पाद्मं[5] इत्युच्यते बुधैः।
वाराहो वर्त्तते कल्पस्तस्य वक्ष्यामि विस्तरम् ॥२६

इति श्रीकूर्मपुराणे कालसंख्याकथनं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५

जो बीत गया, उसे विद्वानों ने अन्तिम पाद्म कल्प कहा है। सम्प्रति वाराह कल्प चल रहा है, उसे विस्तार से बताऊँगा।२६

श्रीकूर्म पुराण में कालसंख्या कथन नामक पाँचवाँ अध्याय समाप्त। ५

---

१. तत, इति, येन्ये इति पा०। २. एवमत्र व्यतीतं तत् इति, पा०। ३. कल्पोऽयमग्रतः इति पा०। ४. पद्म इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षष्ठोऽध्यायः

अथ पृथिव्युद्धारः

कूर्म उवाच

आसीदेकार्णवं घोरमविभागं तमोमयम् ।
शान्तवातादिकं सर्वं न प्राज्ञायत किञ्चन ॥१

कूर्म बोले—सम्पूर्ण संसार एकार्णव (एक समुद्र में परिणत), घोर, विभागशून्य तमोमय और वायुरहित था, कुछ भी मालूम नहीं पड़ता था। १

एकार्णवे तदा तस्मिन्नष्टे स्थावरजङ्गमे ।
तदा समभवद्ब्रह्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥२

एकार्णव में स्थावर-जंगम के नष्ट हो जाने के उपरान्त सहस्र नेत्रों और पैरों वाले ब्रह्मा प्रादुर्भूत हुए। २

सहस्रशीर्षा पुरुषो रुक्मवर्णो ह्यतीन्द्रियः ।
ब्रह्मा नारायणाख्यस्तु सुष्वाप सलिले तदा ॥३

सुवर्णवर्ण, अतीन्द्रिय, सहस्र शिर वाले, पुरुष, नारायण नामक ब्रह्मा उस समय जल में शयन करने लगे। ३

इमं चोदाहरन्त्यत्र श्लोकं नारायणं प्रति ।
ब्रह्मस्वरूपिणं देवं जगतः प्रभवाव्ययम् ॥४

संसार की सृष्टि तथा विलयकारी ब्रह्मस्वरूपी नारायण के सम्बन्ध में यह श्लोक कहा जाता है। ४

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः[1] ।
अयनं तस्य ता यस्मात्तेन नारायणः स्मृतः ॥५

अप् (जल) नारा नाम से ख्यात है, अप् नरसूनु है। वही अप् उनका अयन (आश्रय) है। इसलिए उन्हें नारायण कहा गया। ५

---

५. नाम्ना पूर्व इति श्रुतः इति, नाम्ना पूर्वमिति श्रुतिः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुल्यं युगसहस्रस्य नैशं कालमुपास्य[1] सः ।
शर्वयंन्ते[2] प्रकुरुते ब्रह्मत्वं सर्गकारणात् ॥६

उन्होंने एक हजार युग पर्यन्त रात्रिकाल का भोग करके रात्रि के अन्त में सृष्टि के निमित्त ब्रह्मत्व प्राप्त किया । ६

ततस्तु सलिले तस्मिन्विज्ञायांतर्गतां महीम् ।
अनुमानात्तदुद्धारं कर्तुकामः प्रजापतिः ॥७

तदनन्तर उस जल के भीतर स्थित पृथ्वी को अनुमान से जानकर प्रजापति ने उसका उद्धार करना चाहा । ७

जलक्रीडासु रुचिरं वाराहं रूपमास्थितः ।
अधृष्यं मनसाप्यन्यैर्वाङ्मयं[3] ब्रह्मसंज्ञितम् ॥८

जल क्रीडाओं में सुन्दर वाराहरूप धारण किया । वह रूप दूसरों द्वारा मन से भी आक्रमण करने योग्य नहीं था । वह वाङ्मय एवं ब्रह्मसंज्ञक था । ८

पृथिव्युद्धरणार्थाय प्रविश्य च रसातलम् ।
दंष्ट्रयाभ्युज्जहारैनामात्माधारो धराधरः ॥९

पृथिवी का उद्धार करने के लिए उन्होंने रसातल में प्रवेश करके अपने बड़े दाँत पर पृथ्वी को उठा लिया । इससे उनका नाम आत्माधार तथा धराधर पड़ गया । ९

दृष्ट्वा दंष्ट्राग्रविन्यस्तां पृथ्वीं प्रथितपौरुषम् ।
अस्तुवञ्जनलोकस्था[4] सिद्धा ब्रह्मर्षयो हरिम् ॥१०

वाराह की दंष्ट्रा पर अवस्थित पृथ्वी को देखकर प्रथित यश वाले हरि की जन-लोक निवासी सिद्ध एवं ब्रह्मर्षिगण स्तुति करने लगे । १०

ऋषय ऊचुः

नमस्ते देवदेवाय ब्रह्मणे परमेष्ठिने ।
पुरुषाय पुराणाय शाश्वताय जयाय च ॥११

ऋषियों ने कहा—देवदेव ! ब्रह्मन् ! परमेष्ठिन् ! पुरुष ! पुराण ! शाश्वत ! और जय ! आपको नमस्कार है । ११

नमः स्वयम्भुवे तुभ्यं स्रष्ट्रे सर्वार्थवेदिने ।
नमो हिरण्यगर्भाय वेधसे परमात्मने ॥१२

---

१. अपास्य इति पा० । २. सर्वयत्नेन कुरुते इति पा० । ३. ब्रह्माद्यैः इति पा० । ४. जनलोकस्थाः जननामकभुवनवर्त्तिनः इत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयंभू, सृष्टि रचयिता और सर्वार्थवेत्ता को नमस्कार है। हिरण्यगर्भ, वेधा और परमात्मा को नमस्कार है। १२

नमस्ते वासुदेवाय विष्णवे विश्वयोनये।
नारायणाय देवाय देवानां हितकारिणे ॥१३

वासुदेव, विष्णु, विश्वयोनि, नारायण, देवों के देव और हितकारी को नमस्कार है। १३

नमोऽस्तु ते चतुर्वक्त्र शार्ङ्गचक्रासिधारिणे।
सर्वभूतात्मभूताय कूटस्थाय[1] नमोनमः ॥१४

चतुर्मुख, शार्ङ्ग, चक्र तथा असि धारण करने वाले को नमस्कार है। सभी प्राणियों के आत्मस्वरूप तथा कूटस्थ को नमस्कार है। १४

नमो वेदरहस्याय नमस्ते वेदयोनये।
नमो बुद्धाय शुद्धाय नमस्ते ज्ञानरूपिणे ॥१५

वेदों के रहस्य को नमस्कार है। वेदयोनि को नमस्कार है। बुद्ध और शुद्ध को नमस्कार है। ज्ञानरूपी को नमस्कार है। १५

नमोऽस्त्वानन्दरूपाय[2] साक्षिणे जगतां नमः।
अनन्तायाप्रमेयाय कार्याय कारणाय च ॥१६

आनन्दरूप और जगत् के साक्षी को नमस्कार है। अनन्त, अप्रमेय, कार्य तथा कारण को नकस्कार है। १६

नमस्ते पञ्चभूताय पञ्चभूतात्मने नमः।
नमो मूलप्रकृतये मायारूपाय ते नमः ॥१७

हे पञ्चभूत! आपको नमस्कार है। पञ्चभूतात्मा को नमस्कार है। मूलप्रकृते! मायारूप! आपको नमस्कार है। १७

नमोऽस्तु ते वराहाय नमस्ते मत्स्यरूपिणे।
नमो योगाधिगम्याय नमः संकर्षणाय ते ॥१८

वराह! आपको नमस्कार है। मत्स्यरूपी को नमस्कार है। योग द्वारा प्राप्त होने योग्य को नमस्कार है। संकर्षण! आपको नमस्कार है। १८

---

१. कूटस्थाय–"एकरूपतया तु यः कालव्यापी स कूटस्थः" तस्मै इत्यर्थः।
२. नमोऽस्त्वनन्तरूपाय साक्षिणे जगतो नमः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमस्त्रिमूर्त्तये तुभ्यं त्रिधाम्ने दिव्यतेजसे ।
नमः सिद्धाय पूज्याय गुणत्रयविभागिने ॥१९

त्रिमूर्ति ! आपको नमस्कार है। त्रिधामन् ! दिव्यतेजः ! सिद्ध ! पूज्य ! तीनों गुण का विभाग करने वाले ! आपको नमस्कार है ।१९

नमोस्त्वादित्यरूपाय[1] नमस्ते पद्मयोनये[2] ।
नमोऽमूर्त्ताय मूर्त्ताय[3] माधवाय नमोनमः ॥२०

आदित्यरूप को नमस्कार है । पद्मयोनि को नमस्कार है । अमूर्त, मूर्त तथा माधव को नमस्कार है । २०

त्वयैव सृष्टमखिलं त्वय्येव सकलं[4] स्थितम् ।
पालयैतज्जगत्सर्वं त्राता त्वं शरणं गतिः[5] ॥२१

आपने ही निखिल जगत् की सृष्टि की है । आप में ही सबकुछ स्थित है । इस सम्पूर्ण जगत् का आप पालन कीजिए । आप ही शरण है, और गति हैं । २१

इत्थं स भगवान् विष्णुः सनकाद्यैरभिष्टुतः ।
प्रसादमकरोत्तेषां वराहवपुरीश्वरः ॥२२

इस प्रकार सनकादि के स्तुति करने पर वराहशरीरधारी उन भगवान् विष्णु ने उनके प्रति अनुग्रह दिखलाया । २२

ततः स्वस्थानमानीय[6] पृथिवीं पृथिवीधरः ।
मुमोच रूपं मनसा धारयित्वा धराधरः[7] ॥२३

तदनन्तर पृथिवीधर भगवान् पृथिवी को अपने स्थान पर ले आये और धराधर ने मन से वराहरूप को त्याग दिया । २३

तस्योपरि जलौघस्य महतो नौरिव स्थिता ।
विततत्वाच्च[8] देहस्य न मही याति संप्लवम् ॥२४

उस महान् जल-समूह के ऊपर नौका के समान पृथ्वी अवस्थित हुई । शरीर के बहुत विस्तृत होने के कारण पृथ्वी जलराशि में डूबी नहीं । २४

पृथिवीं स[9] समीकृत्य पृथिव्यां सोऽचिनोद्गिरीन् ।
प्राक् सर्गदग्धानखिलान् ततः सर्गेऽदधन्मनः ॥२५
इति श्रीकूर्मपुराणे पृथिव्युद्धारे षष्ठोऽध्यायः ॥६

---

१. आदित्यवर्णाय इति पा० । २. विश्वयोनये इति पा० । ३. शान्ताय इति पा० । ४. लयमेष्यति इति पा० । ५. शरणं गतः इति, शरणङ्गतान् इति पा० । ६. संस्थानमिति पा० । ७. प्रजापतिः इति पा० । ८. पीनत्वाच्चैव इति पा० । ९. तुं इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् ने पृथ्वी को समतल बनाकर पूर्व सृष्टि में जलाये गये पर्वतों को उस पर निवेशित कर दिया। तत्पश्चात् पुनः सृष्टि करने में मन लगाया। २५

श्रीकूर्मपुराण में पृथिवी-उद्धार के प्रसंग में छठा अध्याय समाप्त। ६

●

सप्तमोऽध्यायः

अथ सृष्टिवर्णनम्

कूर्म उवाच

सृष्टिं चिन्तयतस्तस्य कल्पादिषु यथा पुरा।
अबुद्धिपूर्वकः सर्गः प्रादुर्भूतस्तमोमयः ॥१

कूर्म बोले– जब प्रजापति पूर्व कल्प के समान सृष्टिचिन्ता करने लगे तब ज्ञानातीत एक तमोमय सृष्टि प्रादुर्भूत हुई। १

तमोमोहो महामोहस्तामिस्रश्चान्धसंज्ञितः[1]।
अविद्या पञ्चमी[2] तेषां प्रादुर्भूता महात्मनः ॥२

महात्मा प्रजापति के रहते तम, मोह, मायामोह, तामिस्र, अन्धतामिस्र तथा पाँचवीं अविद्या प्रादुर्भूत हुई। २

पञ्चधावस्थितः सर्गो ध्यायतः सोऽभिमानिनः।
संवृतस्तमसा चैव बीजकुम्भवदावृतः ॥३

उस अभिमानी के ध्यान करते तमोवृत बीजकुम्भ के समान आच्छादित सृष्टि पाँच भागों में विभक्त हो गई। ३

बहिरन्तश्चाप्रकाशस्तब्धो निःसंग एव च।
मुख्या नगा इति प्रोक्ता मुख्यसर्गस्तु स स्मृतः ॥४

वह बाहर और भीतर प्रकाशशून्य, स्तब्ध और निःसंग थी। उसके जो मुख्य नग (पर्वत, वृक्ष) थे, वही मुख्य सृष्टि थी। ४

तं दृष्ट्वाऽसाधकं[3] सर्गममन्यदपरं[4] प्रभुः।
तस्याभिध्यायतः सर्गं तिर्यक् स्रोतोऽभ्यवर्तत ॥५

---

१. तामिस्रो ह्यन्धसंज्ञितः इति पा०। २. पञ्चपर्वेषा इति, पंच सर्वेषां इति पा०। ३. असाधकं न सर्वार्थप्रतिपादकम् असम्पूर्णमित्यर्थः। ४. अमन्यदित्यार्षम् ममन्यत परं इति, पा०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभु उस सृष्टि को असाधक देखकर दूसरी सृष्टि की चिन्ता करने लगे। उससे तिर्यक् स्रोत प्रवाहित हुआ। ५

यस्मात्तिर्यक् प्रवृत्तः स तिर्यक्स्रोतः ततः स्मृतः।
पश्वादयस्ते विख्याता उत्पथग्राहिणो[1] द्विजाः ॥६

जिसलिए वहाँ तिरछा प्रवाहित हुआ, इसलिए उसे 'तिर्यक् स्रोतः' नाम से अभिहित किया गया। द्विजगण! यह सृष्टि उत्पथग्राही तथा पशु आदि नामों से विख्यात हुई। ६

तमप्यसाधकं ज्ञात्वा सर्गमन्यं ससर्ज्ज ह।
ऊर्ध्वस्रोत इति प्रोक्तो देवसर्गस्तु सात्त्विकः ॥७

उसको भी असाधक समझकर उन्होंने अन्य सृष्टि का सम्पादन किया। उसे ऊर्ध्वस्रोतः एवं सात्त्विक देवसर्ग नाम से कहा गया। ७

ते सुखप्रीतिबहुला बहिरन्तस्त्वनावृताः।
प्रकाशा बहिरन्तश्च स्वभावाद्देवसंज्ञिताः ॥८

सुखमय एवं प्रीतिबहुल, बाहर-भीतर अनावृत एवं स्वभावतः बाहर और भीतर अप्रकाशित वह सृष्टि देवसंज्ञा को प्राप्त हुई। ८

ततोऽभिध्यायतस्तस्य सत्याभिध्यायिनस्तदा[2]।
प्रादुरासीत्तदा व्यक्तादर्वाक्स्रोतस्तु साधकः[3] ॥९

तदनन्तर सत्यचिन्तक उस समय ध्यान करने लगे। अर्वाक् स्रोतः साधक सृष्टि व्यक्त से प्रादुर्भूत हुई। ९

तत्र प्रकाशबहुलास्तमोद्रिक्ता[4] रजोऽधिकाः।
दुःखोत्कटाः[5] सत्त्वयुता मनुष्याः परिकीर्त्तिताः ॥१०

वहाँ प्रकाशबहुल, तम-उद्रिक्त, रजोऽधिक, दुःखोत्कट, सत्त्वगुणयुक्त मनुष्य कहे गये। १०

तं दृष्ट्वा चापरं सर्गममन्यद्भगवानजः।
तस्याभिध्यायतः सर्गं सर्गो भूतादिकोऽभवत् ॥११

भगवान् प्रजापति उसे देखकर दूसरी सृष्टि का ध्यान करने लगे। तब भूतादि की सृष्टि हुई। ११

---

१. तत्पथग्राहिणः इति पा० २. सर्वाभिध्यायिनस्तथा इति पा०। ३. स्रोतः स साधक इति, स सर्गः साधकः सर्वार्थप्रतिपादक इत्यर्थः। ४. तमःपृक्ता इति पा०। ५. दुःखोक्तयः सत्ययुता इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ते परिग्रहिणः सर्वे संविभागरताः पुनः ।
खादिनश्चाप्यशीलाश्च[1] भूताद्याः परिकीर्त्तिताः ॥१२

वे सब परिग्राही, संविभाग में निरत, खादक तथा शील-रहित भूतादि नाम से प्रसिद्ध हुए । १२

इत्येते पञ्च कथिताः सर्गा वै द्विजपुंगवाः ।
प्रथमो महतः सर्गो विज्ञेयो ब्रह्मणस्तु सः ॥१३

द्विजश्रेष्ठों ! ये पाँच प्रकार की सृष्टियाँ कही गई हैं । उनमें प्रथम सृष्टि (सर्ग) महत् की है, उसी को ब्रह्म की समझना चाहिए । १३

तन्मात्राणां द्वितीयस्तु भूतसर्गो हि संस्मृतः[2] ।
वैकारिकस्तृतीयस्तु सर्ग ऐन्द्रियकः स्मृतः ॥१४

तन्मात्र की द्वितीय सृष्टि भूतसर्ग नाम से ख्यात है । वैकारिक तीसरी सृष्टि ऐन्द्रियक नाम से अभिहित की गई है । १४

इत्येष प्राकृतः सर्गः संभूतो बुद्धिपूर्वकः ।
मुख्यसर्गश्चतुर्थस्तु मुख्या वै स्थावराः स्मृताः ॥१५

यह प्राकृत सृष्टि बुद्धिपूर्वक संभूत है । चौथी मुख्य सृष्टि है ।वही मुख्य स्थावर कहे गये हैं । १५

तिर्यक्स्रोतस्तु यः प्रोक्तस्तिर्यग्योन्यः स पञ्चमः ।
तथोर्ध्वस्रोतसां षष्ठो देवसर्गस्तु स स्मृतः ॥१६

जो तिर्यक्स्रोत कहा गया है, वह तिर्यग्योनि वाली पाँचवीं सृष्टि है । उसी प्रकार उर्ध्वस्रोत वालों की छठी देवसृष्टि नाम से अभिहित है । १६

ततोऽर्वाक्स्रोतसां सर्गः सप्तमः स तु मानुषु ।
अष्टमो भौतिकः सर्गो भूतादीनां प्रकीर्तितः ॥१७

उसके बाद अर्वाक्स्रोत वालों की सातवीं सृष्टि मनुष्यसृष्टि है । आठवीं भौतिक-सृष्टि भूत आदिकों के लिए है । १७

नवमश्चैव कौमारः प्राकृता वैकृतास्त्वमे ।
प्राकृतास्तु त्रयः पूर्वे सर्गास्ते बुद्धिपूर्वकाः ॥१८

नवीं कौमार सृष्टि है जो प्राकृत और वैकृत दोनों है । प्रथम तीन प्राकृत सृष्टि अबुद्धिपूर्वक अनुष्ठित हुई है । १८

---

१. शीलाश्च इति पा० । २. स स्मृतः इति । तथा स्मृतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धिपूर्वं प्रवर्त्तन्ते मुख्याद्या मुनिपुंगवाः ।
अग्रे ससर्ज्ज वै ब्रह्मा मानसानात्मनः समान् ॥१९

मुनिश्रेष्ठो ! मुख्य आदि सृष्टियाँ बुद्धिपूर्वक की गई हैं । पश्चात् ब्रह्मा ने अपने समान मानस पुत्रों की सृष्टि की । १९

सनकं सनातनं चैव तथैव च सनन्दनम् ।
क्रतुं[1] सनत्कुमारं च पूर्वमेव प्रजापतिः ॥२०

(वे ये हैं—) सनक, सनातन, सनन्दन, क्रतु और सनत्कुमार को प्रजापति ने पहले ही सृष्ट किया । २०

पञ्चैते योगिनो विप्राः परं वैराग्यमाश्रिताः[2] ।
ईश्वरासक्तभ नसो न सृष्टौ दधिरे मतिम् ॥२१

विप्रगण ! ये पाँचो योगी परम वैराग्य को प्राप्त करके ईश्वर में आसक्त मन वाले हो गये । अतः इन्होंने सृष्टि करने में मन को नहीं लगाया । २१

तेष्वेवं निरपेक्षेषु लोकसृष्टौ प्रजापतिः ।
मुमोह मायया सद्यो मायिनः परमेष्ठिनः ॥२२

उन योगियों के इस प्रकार निरपेक्ष हो जाने पर लोक-सृष्टि में प्रजापति मायी परमेष्ठी की माया से तत्क्षण मोहित हो गये ।२२ ,

संबोधयामास[3] च तं जगन्मायो महामुनिः ।
नारायणो महायोगी योगिचित्तानुरञ्जनः ॥२३

संसार को माया समझने वाले, योगियों के चित्त का अनुरंजन करने वाले, महा-योगी, महामुनि नारायण ने उन्हें संबोधित किया ।२३

बोधितस्तेन विश्वात्मा तताप परमं तपः ।
स तप्यमानो[4] भगवान्न किञ्चित्प्रत्यपद्यत ॥२४

उनसे उद्‌बोधित होकर विश्वात्मा ने परम तप किया । किन्तु तप करते हुए भगवान् को कोई लाभ नहीं हुआ ।२४

ततो दीर्घेण कालेन दुःखात्क्रोधोऽभ्यजायत ।
क्रोधाविष्टस्य नेत्राभ्यां प्रापतन्नश्रुबिन्दवः ॥२५

दीर्घकाल के उपरान्त उन्हें दुःख से क्रोध उत्पन्न हो गया । क्रोध से तमतमाये हुए उनके नेत्रों से आँसू की बूंदें गिरने लगीं ।२५

---

१. विभुं इति, ऋभुं इति पा० । २. आस्थिता इति पा० । ३. तं बोधयामास सुतं इति पा० । ४. संतप्यमान इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रुकुटीकुटिलात्तस्य ललाटात्परमेष्ठिनः ।
समुत्पन्नो महादेवः शरण्यो नीललोहितः ॥२६

भौंहें तन गईं । तब परमेष्ठी के ललाट से शरण्य, नीललोहित महादेव उद्भूत हुए ।२६

स एव भगवानीशस्तेजोराशिः सनातनः ।
यं प्रपश्यन्ति विद्वांसः स्वात्मस्थं परमेश्वरम्[1] ॥२७

वही भगवान् तेजोराशिस्वरूप सनातन ईश हैं, जिन्हें विद्वान् लोग अपने आत्मा के बीच अवस्थित परमेश्वर रूप में देखते हैं। २७

ओंकारं समनुस्मृत्य प्रणम्य च कृताञ्जलिः ।
तमाह भगवान् ब्रह्मा सृजेमा विविधाः प्रजाः ॥२८

ओंकार का स्मरण करके हाथ जोड़कर प्रणाम करके ब्रह्मा ने उनसे कहा—'विविध प्रजाओं की सृष्टि कीजिए' ।२८

निशम्य भगवद्वाक्यं[2] शंकरो धर्मवाहनः ।
आत्मना[3] सदृशान् रुद्रान्[4] ससर्ज मनसा शिवः ।
कपर्दिनो निरातङ्कांस्त्रिनेत्रान्नीललोहितान् ॥२९

ब्रह्मा की बात सुनकर धर्म (स्वरूप नन्दी) की सवारी करने वाले शंकर शिव ने अपने समान रुद्रों की मन से सृष्टि की। वे कपर्दी (जटाजूट-धारी), आतंकरहित, त्रिनेत्र एवं नीललोहित (जिसका कण्ठ नीला और शिर का बाल लाल हो) थे । २९

तं प्राह भगवान् ब्रह्मा जन्ममृत्युयुताः प्रजाः ।
सृजेति सोऽब्रवीदीशो नाहं मृत्युजरान्विताः ॥३०
प्रजाः स्रक्ष्ये जगन्नाथ सृजत्वमशुभाः प्रजाः ।
निवार्य स तदा रुद्रं ससर्ज कमलोद्भवः ॥३१

उनसे भगवान् ब्रह्मा ने कहा—जन्म-मरण से युक्त प्रजाओं की सृष्टि कीजिए। शंकर ने कहा— मैं जरा-मरण से युक्त प्रजाओं की सृष्टि नहीं करूंगा। जगन्नाथ ! अशुभ प्रजाओं की सृष्टि आप ही करें। तब कमलोद्भव ब्रह्मा रुद्र को रोककर स्वयं सृष्टि करने लगे ।३०-३१।

स्थानाभिमानिनः[5] सर्वान्[6] गदतस्तान्निबोधत[7] ।
आपोऽग्निरन्तरिक्षं च द्यौर्वायुः पृथिवी तथा ॥३२

---

१. परमेष्ठिनम् इति पा० । २. भगवान् वाक्यम् इति पा० । ३. स्वात्मना इति पा० । ४. पुत्रान् इति पा० । ५. ज्ञानाभिमानिनः इति पा० । ६. तेषामिति पा० । ७. निबोध मे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नद्यः समुद्राः शैलाश्च वृक्षा वीरुध एव च ।
लवाः काष्ठाः कलाश्चैव मुहूर्ता दिवसाः क्षपाः ॥३३
अर्द्धमासाश्च मासाश्च अयनाब्दयुगादयः[1] ।
स्थानाभिमानिनः सृष्ट्वा साधकानसृजत्पुनः[2] ॥३४

फिर ब्रह्मा ने स्थानाभिमानी वाक्यकथनशील जिन सबकी सृष्टि की, उन्हें सुनिए—जल, अग्नि, अन्तरिक्ष, द्यौः, वायु, पृथिवी, नदी, समुद्र, पर्वत, वृक्ष, लता, लव, काष्ठा, कला, मुहूर्त, दिन, रात्रि, पक्ष, मास, अयन, वर्ष और युग आदि स्थानाभिमानी पदार्थों की सृष्टि करके पुनः साधकों की सृष्टि की ।३२-३४।

मरीचिभृग्वङ्गिरसः पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ।
दक्षमत्रिं वसिष्ठं च धर्मं संकल्पमेव च ॥३५

मरीचि, भृगु, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, अत्रि, वसिष्ठ, धर्म और संकल्प की सृष्टि की ।३५

प्राणाद्ब्रह्मासृजद्दक्षं चक्षुभ्यां च मरीचिनम् ।
शिरसोऽङ्गिरसं देवो[3] हृदयाद्भृगुमेव च ॥३६

ब्रह्मा ने प्राण से दक्ष को उत्पन्न किया । नेत्रों से मरीचि को, सिर से अंगिरा को और हृदय से भृगु को सृष्ट किया ।३६

नेत्राभ्यामत्रिनामानं धर्मं च व्यवसायतः ।
संकल्पं चैव संकल्पात्सर्वलोकपितामहः ॥३७

सर्वलोकपितामह ने नेत्रों से अत्रि को, व्यवसाय से धर्म को और संकल्प से संकल्प की सृष्टि की ।३७

पुलस्त्यं च तथोदानाद्व्यानाच्च[4] पुलहं मुनिम्[5] ।
अपानात्[6] क्रतुमव्यग्रं समानाच्च वसिष्ठकम् ॥३८

उदान वायु से पुलस्त्य की, व्यान वायु से पुलह मुनि की, अपान वायु से व्यग्रता-रहित क्रतु की और समानवायु से वशिष्ठ की सृष्टि की ।३८

इत्येते ब्रह्मणा सृष्टाः साधका गृहमेधिनः ।
आस्थाय मानवं रूपं धर्मस्तैः संप्रवर्त्तितः ॥३९

ब्रह्मा द्वारा सृष्ट ये मुनि गृहस्थ और साधक हैं । इन्होंने मानव-रूप धारण करके धर्म को प्रवर्तित किया ।३९

---

१. अयनञ्च युगादयः इति पा० । २. प्रभुः इति पा० । ३. चैव इति पा० । ४. तथापानाद्व्यानाच्च इति पा० । ५. प्रभुः इति पा० । ६. उदानात् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो[1] देवासुरपितॄन् मनुष्यांश्च चतुष्टयम् ।
सिसृक्षुर्भगवानीशः[2] स्वमात्मानमयोजयत् ॥४०

तदनन्तर देव, असुर, पितर और मनुष्य—इन चारों की सृष्टि करने के इच्छुक भगवान् ईश ने अपने आपको नियुक्त किया ।४०

युक्तात्मनस्तमोमात्रा ह्यरिक्तीभूत्प्रजापतेः ।
ततोऽस्य जघनात्पूर्वमसुरा जज्ञिरे सुताः ॥४१

तब युक्तात्मा प्रजापति की तमोमात्रा अत्यन्त बढ़ गई । तब पहले उनकी जंघा से असुर पुत्र उत्पन्न हुए ।४१

उत्ससर्जासुरान् सृष्ट्वा तां तनुं पुरुषोत्तमः ।
सा चोत्सृष्ट्रा तनुस्तेन सद्यो रात्रिरजायत ॥४२

असुरों की सृष्टि करके पुरुषोत्तम ने उस शरीर को त्याग दिया । उनसे त्यागा गया वह शरीर रात्रि बन गया ।४२

सा तमोबहुला यस्मात्प्रजास्तस्यां स्वपन्त्यतः ।
सत्त्वमात्रात्मिकां देवस्तनुमन्यां गृहीतवान्[3] ॥४३

जिसलिए वह शरीर तमो बहुल था, अतः प्रजा उसमें (रात्रि में) सो जाती है । अनन्तर प्रजापति ने सत्त्वमात्रात्मक अन्य शरीर को ग्रहण कर लिया ।४३

ततोऽस्य मुखतो देवा दीव्यतः[4] संप्रजज्ञिरे ।
त्यक्ता सापि तनुस्तेन सत्त्वप्रायमभूद्दिनम् ॥४४

तत्पश्चात् उनके दीप्तिशील मुख से देवगण उत्पन्न हुए । उस शरीर को भी उन्होंने त्याग दिया । वह सत्त्वबहुल शरीर दिन बन गया ।४४

तस्मादहो धर्मयुक्ता[5] देवताः समुपासते ।
सत्त्वमात्रात्मिकामेव ततोऽन्यां जगृहे तनुम् ॥४५

इसलिए धर्मयुक्त देवता दिन की उपासना करते हैं । अनन्तर सत्त्वमात्रात्मक दूसरे शरीर को ग्रहण किया ।४५

पितृवन्मन्यमानस्य पितरः[6] संप्रजज्ञिरे ।
उत्ससर्ज पितॄन् सृष्ट्वा ततस्तामपि विश्वदृक्[7] ॥४६

---

१. देवान् ततोऽसुरपितॄन् इति पा० । २. सिसृक्षुर्भगवानेतान् स्वमात्मानमयूयुजत् इति पा० । ३. अगृह्णत इति पा० । ४. दीप्तिमन्तः प्रजज्ञिरे इति पा० । ५. धर्मयुक्ता धार्मिका देवताः सूर्यादीन् समुपासते इत्यर्थः । ६. पितरस्तस्य जज्ञिरे इति पा० । ७. विश्वधृक् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे पिता की तरह माननीय पितर उत्पन्न हुए। विश्वदर्शी ब्रह्मा ने पितरों की सृष्टि करके उस शरीर को भी त्याग दिया।४६

सापविद्धा तनुस्तेन सद्यः सन्ध्याः व्यजायत[1]।
तस्माद्दहदैवतानां रात्रिः स्याद्देवविद्विषाम् ॥४७

वह त्यक्त शरीर तत्क्षण संध्यारूप में परिणत हो गया। इसलिए वह संध्या देवताओं के लिए दिन और देवशत्रुओं के लिए रात्रि हो गई।४७

तयोर्मध्ये पितॄणां तु मूर्त्तिः सन्ध्या गरीयसी[2]।
तस्माद्देवासुराः सर्वे मुनयो मानवास्तदा[3] ॥४८
उपासते सदा[4] युक्ता[5] राव्यह्नोर्मध्यमां तनुम्।
रजोमात्रात्मिकां ब्रह्मा तनुमन्यां[6] ततोऽसृजत् ॥४९

उन दोनों के बीच संध्या पितरों की महीमसी मूर्ति है। इसलिए देवता, असुर, मुनि और सभी मनुष्य योगयुक्त होकर रात और दिन के मध्य शरीर-संध्या की सदा उपासना करते हैं। तदनन्तर ब्रह्मा ने रजोमात्रात्मक अन्य शरीर की सृष्टि की।४८-४९।

ततोऽस्य जज्ञिरे पुत्रा मनुष्या रजसावृताः।
तामथाशु[7] स तत्याज तनुं सद्यः प्रजापतिः ॥५०

उससे रजोगुणविशिष्ट मानव रूपी पुत्र उत्पन्न हुए। अनन्तर उस प्रजापति में तुरन्त उस शरीर को भी त्याग दिया।५०

ज्योत्स्ना सा चाभवद्विप्राः प्राक्सन्ध्या याभिधीयते।
ततः स भगवान्ब्रह्मा संप्राप्य द्विजपुंगवाः ॥५१

तत्पश्चात् वह शरीर ज्योत्स्नारूप में परिणत हो गया। हे विप्रगण! उसी को प्रातः सन्ध्या कहते हैं।५१

मूर्तिं तमोरजःप्राया पुनरेवाभ्यपूजयत्[8]।
अन्धकारे क्षुधाविष्टा राक्षसास्तस्य जज्ञिरे ॥५२

हे द्विजश्रेष्ठगण! अनन्तर भगवान् ब्रह्मा ने तमो रजः प्राय मूर्ति को प्राप्त करके पुनः पूजन किया। तब अन्धकार में क्षुधा से आविष्ट राक्षस उससे उत्पन्न हुए।५२

---

१. सन्ध्याप्जायत इति पा०। २. महीयसी इति पा०। ३. मनवो मानवास्तथा इति, मनवो मानवाः सदा इति पा०। ४. तदा इति पा०। ५. युक्ता अवहिता इत्यर्थः। ६. तनुमन्यामगृह्णत इति, रजोमात्रात्मिकामन्यां ब्रह्मा तनुमगृह्णत इति पा०। ७. तामप्याशु इति पा०। ८. न्यपूजयत् इति, पुनरेव ह्ययूयुजत् इति, पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्रास्तमोरजःप्राया बलिनस्ते निशाचराः ।
सर्पा यथास्तथा[1] भूता[2] गन्धर्वाः संप्रजज्ञिरे ॥५३

तमस् और रजोगुण प्रधान एवं बलवान् निशाचर रूप पुत्र उत्पन्न हुए । फिर रजोगुण और तमोगुण से आवृत सर्प, यक्ष, भूत तथा गन्धर्व सब ने जन्म ग्रहण किया ।५३

रजस्तमोभ्यामाविष्टांस्ततोऽन्यानसृजत्प्रभुः[3] ।
वयांसि वयसः सृष्ट्वा अवीन्वै वक्षसोऽसृजत् ॥५४

अनन्तर प्रभु ने रजोगुण तथा तमोगुण से आविष्ट अन्यों की सृष्टि की । वयस् (अवस्था) से पक्षियों तथा वक्षःस्थल से भेड़ों की सृष्टि की ।५४

मुखतोऽजान् ससर्जान्यान्[4] उदराद्गाश्च निर्ममे ।
पद्भ्यां चाश्वान्समातंगान्रासभान्[5] गवयान्मृगान् ॥५५

मुख से बकरों और अन्यों की सृष्टि की तथा पेट से गौओं का निर्माण किया । पैरों से घोड़ों, हाथियों, गधों, गवयों (नीलगायों) तथा मृगों की सृष्टि की ।५५

उष्ट्रानश्वतरांश्चैव अरत्नेश्च प्रजापतिः[6] ।
ओषध्यः फलमूलानि[7] रोमभ्यस्तस्य जज्ञिरे ॥५६

प्रजापति ने कुहनी से ऊँटों तथा खच्चरों को बनाया । ब्रह्मा के रोमों से औषधियों तथा फल-मूलों की सृष्टि हुई ।५६

गायत्रं च ऋचश्चैव[8] त्रिवृत्स्तोमं रथन्तरम्[9] ।
अग्निष्टोमं च यज्ञानां निर्ममे प्रथमान्मुखात् ॥५७

उनके प्रथम मुख से गायत्री, ऋचायें, त्रिवृत्स्तोम, रथन्तर और यज्ञों में अग्निष्टोमकी रचना प्रथम मुख से की ।५७

यजूंषि त्रैष्टुभं छन्दस्तोमं पञ्चदशं तथा ।
बृहत्साम तथोक्थञ्च दक्षिणादसृजन्मुखात् ॥५८

यजुस्, त्रिष्टुभ् आदि पन्द्रह छन्दस्तोम, बृहत्साम तथा उक्थ ये सब ब्रह्मा के दक्षिण मुख से उत्पन्न हुए ।५८

सामानि जागतं[10] छन्दस्तोमं सप्तदशं तथा ।
वैरूपमतिरात्रं च पश्चिमादसृजन्मुखात् ॥५९

---

१. तत इति पा० । २. सर्पा भूतास्तथा यक्षाः इति पा० । ३. पुनः इति पा० । ४. ससर्जाथ इति पा० । ५. रक्षसः इति, पद्भ्याञ्चैवाश्वमातङ्गान् रक्षस इति पा० । ६. न्यकृनन्यांश्च जातय इति पा० । ७. मूलिन्य इति पा० । ८. ऋतञ्चैव इति पा० । ९. औद्गात्रञ्च ऋतञ्चैव त्रिष्टुप्साम रथन्तरम् इति पा० । १०. जगतीच्छन्दस्तोमम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम, जगती नामक सत्रह, छन्दस्तोम, वैरूप, अतिरात्र प्रभृति की सृष्टि पश्चिम मुख से हुई ।५९

एकविंशमथर्वाणमाप्तोर्यामाणमेव[1] च ।
अनुष्टुभं सवैराजमुत्तरादसृजन्मुखात् ॥६०

इक्कीस अथर्वन्, आप्तोर्यामन, अनुष्टुभ् छन्द तथा विराट् उत्तर मुख से सृष्ट हुए ।६०

उच्चावचानि भूतानि गात्रेभ्यस्तस्य जज्ञिरे ।
ब्रह्मणो हि प्रजासर्गं सृजतस्तु प्रजापतेः ॥६१
यक्षान् पिशाचान् गन्धर्वांस्तथैवाप्सरसः शुभाः ।
सृष्ट्वा चतुष्टयं सर्गं देवर्षिपितृमानुषम्[2] ॥६२
ततोऽसृजच्च[3] भूतानि स्थावराणि चराणि च ।
नरकिन्नरराक्षांसि वयः पशुमृगोरगान् ॥६३

उनके अंगों से ऊँचे-नीचे सब पदार्थ उत्पन्न हुए । प्रजा की सृष्टि करते हुए प्रजापति ब्रह्मा ने यक्षों, पिशाचों, गन्धर्वों तथा कल्याणी अप्सराओं की सृष्टि की । देवता, ऋषि, पितर और मनुष्य—इन चारों की सृष्टि करके पश्चात् स्थावर, जंगम रूप भूतों की सृष्टि की । नर, किन्नर, राक्षस, पक्षी, पशु, मृग और साँप की सृष्टि की ।६१-६३।

अव्ययं च व्ययं चैव द्वयं स्थावरजङ्गमम् ।
तेषां ये यानि कर्माणि प्राक् सृष्टेः प्रतिपेदिरे ॥६४
तान्येव ते प्रपद्यन्ते सृज्यमानाः पुनः पुनः ।
हिंस्राहिंस्रे मृदुक्रूरे धर्माधर्मावृतानृते ॥६५
तद्भाविताः[4] प्रपद्यन्ते तस्मात्तत्तस्य रोचते ।
महाभूतेषु नानात्वमिन्द्रियार्थेषु मूर्तिषु ॥६६
विनियोगं च भूतानां धातैव[5] व्यदधात्स्वयम् ।
नामरूपं च भूतानां प्राकृतानां[6] प्रपञ्चनम् ॥६७

अविनाशी और विनाशीरूप स्थावर-जंगम की सृष्टि की । सृष्टि के पूर्व उनके जो कर्म थे, वे ही कर्म बार-बार सृष्टि के समय उन्हें प्राप्त हो जाते थे । हिंसा, अहिंसा, मृदुता

१- माप्तोर्यामानमेव च इति पा० । २. देवर्षिपितृमानवम् इति, सदेवासुरमानवम् इति, देवर्षिपितृमानवान् इति पा० । ३. ततोऽसृजत इति० ततोऽसृजत्स इति पा० । ४. उद्भाविता इति पा० । ५. तथैव इति पा० ६- हृष्टानाञ्च प्रपञ्चनम् इति, कृतानाञ्च प्रपञ्चनम् इति, नृणां ये पञ्चभूतानां प्राकृतानां प्रपञ्चनम् इति च पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोमलता, धर्म, अधर्म, सत्य और असत्य प्राप्त हो जाते थे। उन्हीं के किये हुए उन्हें प्राप्त होते थे। इसलिए उन्हें वे रुचिकर प्रतीत होते थे। इन्द्रियों के विषय महाभूतरूप विविध मूर्तियों में भूतों का विनियोग, भूतों का नाम-रूप और प्राकृतों पदार्थों का प्रकाश स्वयं विधाता ने किया।६४-६७।

वेदशब्देभ्य[1] एवादौ निर्ममे स महेश्वरः।
आर्षाणि चैव नामानि याश्च वेदेषु सृष्टयः[2] ॥६८

महेश्वर ने आदि में वेदों से ही ऋषियों के नाम तथा वेदोक्त सृष्टियों का निर्माण किया।६८

शर्वर्यन्ते[3] प्रसूतानां तान्येवैभ्यो ददात्यजः।
यावन्ति[4] प्रतिलिङ्गानि नानारूपाणि पर्यये ॥६९
दृश्यन्ते तानि तान्येव तथा भावायुगादिषु ॥७०

इति श्रीकूर्मपुराणे सप्तमोऽध्यायः ॥७

अज प्रजापति ने रात्रि के अन्त में उत्पन्न भूतों को भी वे ही नाम दिये। जितने चिह्न, पर्यायक्रम से नाना रूप, युग-युग में जो भाव थे वे सब दे दिये।६९-७०।

श्रीकूर्मपुराण में सातवाँ अध्याय समाप्त।७

●

अष्टमोऽध्यायः

अथ मुखादिसर्गकथनम्

कूर्म उवाच

एवं भूतानि सृष्टानि स्थावराणि चराणि च।
यदास्य[5] ताः प्रजाः सृष्टा न व्यवर्द्धन्त धीमतः ॥१

कूर्म बोले—इस प्रकार स्थावर और जंगम रूप प्रजाओं की सृष्टि हो गई। जब धीमान् ब्रह्मा द्वारा सृष्टि की गई तो प्रजाओं की वृद्धि नहीं हुई।१

---

१. वेदशब्दापशब्दौ च इति पा०। २. दृष्टय इति पा०। ३. शर्वर्यन्ते च भूतानाम् इति पा०। ४. यथर्त्तावृतुलिङ्गानि इति। यथा ऋतौ नानारूपाणि ऋतुलिङ्गानि सन्ति तानि तानि पर्यये पुनर्वत्सरान्तरे दृश्यन्ते च इत्यर्थः। ५. यदा तस्य इति। यदा चास्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमोमात्रावृतो[1] ब्रह्मा तदाशोचत दुःखितः ।
ततः स[2] विदधे बुद्धिमर्थनिश्चयगामिनीम् ॥२

तब तमोगुण से आवृत ब्रह्मा दुःखी होकर शोक करने लगे । तदनन्तर अर्थ का निश्चय करने वाली बुद्धि का अवलम्बन किया ।२

अथात्मनि[3] समद्राक्षीत्तमोमात्रां नियामिकाम् ।
रजः सत्त्वं च संवृत्तं वर्त्तमानं स्वधर्मतः ॥३

अनन्तर अपने धर्मयुक्त रजोगुण और सत्त्वगुण को आवृत करके आत्मा में नियामिका तमोमात्रा को देखा ।३

तमस्तु व्यनुदत्पश्चाद्रजः सत्त्वेन संयुतः[4] ।
तत्तमः प्रतिनुन्नं[5] वै मिथुनं समजायत ॥४

पश्चात् रजोगुण और सत्त्वगुण से युक्त होकर तम का परित्याग कर दिया । वह तम क्षय को प्राप्त करके मिथुन रूप में उत्पन्न हुआ ।४

अधर्माचरणो[6] विप्रा हिंसा चाशुभलक्षणा ।
स्वां तनुं स ततो[7] ब्रह्मा तामपोहत भास्वराम्[8] ॥५

हे द्विजगण ! वह जोड़ी अधर्माचरण और अशुभलक्षणा हिंसा की थी । तत्पश्चात् ब्रह्मा ने अपनी उस कान्तिमयी देह को ढक दिया ।५

द्विधाकरोत्पुनर्द्देहमर्द्धेन पुरुषोऽभवत् ।
अर्द्धेन नारी पुरुषो[9] विराजमसृजत् प्रभुः ॥६

पुनः उन्होंने अपनी देह के दो भाग कर दिये । आधे भाग से पुरुष हुआ और आधे भाग से नारी । प्रभु ने पुरुष से विराट् की सृष्टि की ।६

नारीं[10] च शतरूपाख्यां योगिनीं ससृजे शुभाम् ।
सा दिवं पृथिवीं चैव महिम्ना व्याप्य संस्थिता[11] ॥७

शतरूपा नाम की योगिनी, शुभ नारी की सृष्टि की । वह योगिनी अपनी महिमा से आकाश एवं पृथ्वी को व्याप्त करके अवस्थित हुई ।७

योगैश्वर्यबलोपेता ज्ञानविज्ञानसंयुता ।
योऽभवत्पुरुषात्पुत्रो विराडव्यक्तजन्मनः ॥८

---

१. तमोमयोवृतः इति पा० । २- संविदधे इति पा० । ३. तथात्मनि इति पा० । ४. संवृतः इति पा० । ५. प्रतिलभं इति प्रतिभानुश्वमिति पा० । ६. अधर्माचरणमेव इति अधर्माचरकः । स्वार्थे कन् । "क्वचित् स्वार्थिकाः प्रकृतितो लिङ्गवचनान्यतिवर्त्तन्ते" राक्षसवत् इति मृग्यम् । ७. सततं इति पा० ८. भासुरामिति पा० । ९. पुरुषात् इति पा० । १०. तां नारीमिति पा० । ११. तिष्ठति इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वायंभुवो मनुर्ह्यवः सोऽभवत्पुरुषो मुनिः ।
सा देवी शतरूपाख्या तपः कृत्वा सुदुश्चरम्[1] ॥९

वह नारी योगैश्वर्य के बल से युक्त तथा ज्ञान विज्ञान से संवलित थी अव्यक्तजन्मा पुरुष से जिस विराट् पुत्र का प्रादुर्भाव हुआ, वही स्वायंभुव मनु हुआ। उस देवी शतरूपा ने घोर तप किया ।८-९।

भर्त्तारं दीप्तयशसं[2] मनुमेवान्वपद्यत ।
तस्माच्च शतरूपा सा पुत्रद्वयमसूयत ॥१०

उन्होंने प्रदीप्त यश वाले मनु को पति के रूप में प्राप्त किया। उस मनु से शतरूपा ने दो पुत्र प्राप्त किये ।१०

प्रियव्रतोत्तानपादौ कन्याद्वयमनुत्तमम् ।
तयोः प्रसूतिं दक्षाय मनुः कन्यां ददे[3] पुनः ॥११

प्रियव्रत और उत्तानपाद—ये दो पुत्र हुए और दो श्रेष्ठ कन्यायें हुईं। उनमें से प्रसूति नामक कन्या मनु ने दक्ष प्रजापति को दी ।११

प्रजापतिरथाकूतिं मानसो[4] जगृहे रुचिः ।
आकूत्या मिथुनं जज्ञे मानसस्य रुचे शुभम्[5] ॥१२

ब्रह्मा के मानसपुत्र प्रजापति रुचि ने आकूति नामक दूसरी कन्या को ग्रहण किया। मानस रुचि को आकूति से मिथुन (स्त्री और पुरुष) उत्पन्न हुआ ।१२

यज्ञस्य दक्षिणां चैव याभ्यां संवर्द्धितं जगत् ।
यज्ञस्य दक्षिणायां च पुत्रा द्वादश जज्ञिरे ॥१३

उनमें पुरुष का नाम यज्ञ और स्त्री का नाम दक्षिणा था। उन दोनों ने संसार को बढ़ाया। यज्ञ को दक्षिणा में बारह पुत्र उत्पन्न हुए ।१३

यामा इति समाख्याता देवाः स्वायंभुवेऽन्तरे ।
प्रसूत्यां च तथा दक्षश्चतस्रो विंशतिं तथा ॥१४

स्वायंभुव मन्वन्तर में वे लोग याम नाम से विख्यात देव हुए। उधर दक्ष ने प्रसूती से चौबीस कन्यायें उत्पन्न कीं ।१४

ससर्ज कन्या नामानि तासां सम्यक् निबोधत ।
श्रद्धा लक्ष्मीर्धृतिस्तुष्टिः पुष्टिर्मेधा क्रिया तथा[6] ॥१५

---

१. सुदुस्तरम् इति पा०। २. ब्रह्मणः पुत्रम् इति पा०। ३. ददौ इति पा० ।४. मनसा इति पा० ।५. सुतः इति पा०। ६. तथा क्रिया इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धिर्ल्लज्जा वपुः शान्तिः[1] सिद्धिः कीर्तिस्त्रयोदशी ।
पत्न्यर्थं प्रतिजग्राह धर्मो दाक्षायणीः शुभाः[2] ॥१६

उनके नामों को अच्छी तरह सुनो—श्रद्धा, लक्ष्मी, धृति, तुष्टि, पुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु, शान्ति, सिद्धि और कीर्ति—इन तेरह कल्याणमयी दक्ष-पुत्रियों को धर्म ने पत्नी के रूप में ग्रहण किया ।१५-१६।

ताभ्यः शिष्टा यवीयस्य एकादश सुलोचनाः ।
ख्यातिः सत्यथ संभूतिः स्मृतिः प्रीतिः क्षमा तथा ॥१७
सन्ततिश्चानसूया[3] च ऊर्ज्जा स्वाहा स्वधा तथा ।

इनसे छोटी जो ग्यारह सुन्दरी कन्यायें बच गईं, उनके नाम ये हैं—ख्याति, सती, संभूति, स्मृति, प्रीति, क्षमा, सन्तति, अनसूया, ऊर्जा, स्वाहा तथा स्वधा ।१७½

भृगुर्भवो[4] मरीचिश्च तथा चैवाङ्गिरा मुनिः ॥१८
पुलस्त्यः पुलहश्चैव क्रतुः परमधर्मवित् ।
अत्रिर्वसिष्ठो वह्निश्च पितरश्च[5] यथाक्रमम् ॥१९
ख्यात्याद्या जगृहुः कन्या मुनयो ज्ञानसत्तमाः ।
श्रद्धाया आत्मजः कामो दर्पो लक्ष्मीसुतः स्मृतः ॥२०

भृगु, भव, मरीचि, अंगिरा मुनि, पुलस्त्य, पुलह, परमधर्मवेत्ता, क्रतु, अत्रि, वसिष्ठ, वह्नि तथा पितरगण —इन ग्यारह ज्ञानश्रेष्ठ मुनियों ने क्रमानुसार ख्याति आदि कन्याओं को ग्रहण किया । श्रद्धा का पुत्र काम हुआ और लक्ष्मी का पुत्र दर्प कहा गया है ।१८-२०।

धृत्यास्तु नियमः पुत्रस्तुष्टयाः सन्तोष उच्यते ।
पुष्टया लाभः[6] सुतश्चापि मेधापुत्रः शमस्तथा ॥२१

धृति का पुत्र नियम और तुष्टि का पुत्र सन्तोष कहा जाता । पुष्टि का पुत्र लाभ और मेधा का पुत्र शम हुआ ।२१

क्रियायाश्चाभवत्पुत्रो दण्डश्च नय एव च[7] ।
बुद्ध्या बोधः सुतस्तद्वत्प्रमादोऽप्यजायत[8] ॥२२

क्रिया के पुत्र दण्ड और नय, बुद्धि के पुत्र बोध और प्रमाद उत्पन्न हुए ।२२

---

१. कान्तिः इति पा० । २. प्रभुरिति पा० । ३. सन्नातिश्चानसूया इति पा० । ४. भग इति पा० । ५. पतयश्च इति पा० । ६. लोभ इति पा० । ७. क्रियायामभवत् पुत्रो दण्डःसमय उच्यते इति पा० । ८. व्यजायते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लज्जाया विनयः पुत्रो वपुषो व्यवसायकः ।
क्षेमः शान्तिसुतश्चापि सिद्धिः[1] सिद्धेरजायत ॥२३

लज्जा का पुत्र विनय, वपु का पुत्र व्यवसायक, शान्ति का पुत्र क्षेम और सिद्धि का पुत्र सिद्ध हुआ ।२३

यशः कीर्त्तिसुतस्तद्वदित्येते धर्मसूनवः ।
कामस्य हर्षः पुत्रोऽभूद्देवानन्दोऽप्यजायत[2] ॥२४

कीर्ति का पुत्र यश हुआ । ये सब धर्म के पुत्र कहे गये हैं । हर्ष और देवानन्द काम के पुत्र हुए ।२४

इत्येष वै सुखोदर्कः सर्गो धर्मस्य कीर्त्तितः ।
जज्ञे हिंसा त्वधर्माद्वै निर्कृतिं चानृतं सुतम् ॥२५

धर्म की यह सुख परिणाम वाली सृष्टि कही गई है । हिंसा ने अधर्म से निर्वृति और अनृत नामक सन्तति प्राप्त की ।२५

[3]निकृतेस्तनयो[4] जज्ञे भयं नरकमेव च ।
माया च वेदना चैव मिथुनं त्विदमेतयोः ॥२६

निकृति और अनृत के संयोग से भय और नरक नामक दो पुत्रों तथा माया और वेदना नामक दो पुत्रियों ने जन्म लिया ।२६

भयाज्जज्ञेऽथ[5] वै माया मृत्युं भूतापहारिणम् ।
वेदना च सुतं चापि दुःखं जज्ञेऽथ रौरवात् ॥२७

भय से माया ने प्राणियों के विनाशक मृत्यु को उत्पन्न किया । रौरव से वेदना ने दुःख नामक पुत्र को उत्पन्न किया ।२७

मृत्योर्व्याधिर्जराशोकौ तृष्णा क्रोधश्च[6] जज्ञिरे ।
दुःखोत्तराः स्मृता ह्येते सर्वे चाधर्मलक्षणाः ॥२८

मृत्यु से व्याधि, जरा, शोक, तृष्णा और क्रोध उत्पन्न हुए । इनका परिणाम दुःख है और ये सब अधर्म के लक्षण से आक्रान्त हैं ।२८

नैषां भार्यास्ति पुत्रो वा सर्वे ते ह्यूर्ध्वरेतसः ।
इत्येष तामसः सर्गो जज्ञे धर्मनियामकः ॥२९

---

१. सुखमिति पा० । २. पुत्रौ वै वेदानन्दौ व्यजायत इति पा० । ३. निकृत्यास्तु सुत इति पा० । ४. निकृत्यनृतयोः इति । ५. जज्ञे जनयामास इत्यर्थः । अत्रान्तर्भूतः प्रेरणार्थः यथा कुमारसम्भवे "अनुग्रहं संस्मरणप्रवृत्तमिच्छामि संबद्धितुमाज्ञया ते" इति । ६. व्याधिजराशोकतृष्णाः क्रोधश्च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके पुत्र या पत्नी नहीं हैं। ये सब ऊर्ध्वरेता हैं। यह धर्म-नियामक तामस सृष्टि का वर्णन किया।२९

संक्षेपेण मया प्रोक्ता विसृष्टिर्मुनिपुङ्गवाः ॥३०
इति श्रीकूर्मपुराणे मुख्यादिसर्गकथनेऽष्टमोऽध्यायः ॥८

हे मुनिश्रेष्ठ! मैंने संक्षेप में इस सृष्टि का विषय बता दिया।३०

श्रीकूर्मपुराण में मुख्यादि सृष्टि कथन-प्रसंग में आठवाँ अध्याय समाप्त।८

नवमोऽध्यायः

अथ पद्मोद्भवप्रादुर्भावः

सूत उवाच

एतच्छ्रुत्वा तु वचनं नारदाद्या महर्षयः।
प्रणम्य वरदं विष्णुं पप्रच्छुः संशयान्विताः ॥१

सूत बोले—यह वचन सुनकर नारद आदि महर्षिगण सन्देहयुक्त होकर वरदायक विष्णु को प्रणाम करके पूछने लगे।१

मुनय ऊचुः

कथितो भवता सर्गो मुख्यादीनां जनार्दन।
इदानीं संशयं चेममस्माकं छेत्तुमर्हसि ॥२

मुनिगण बोले—हे जनार्दन! आपने मुख्य आदि सृष्टियों को तो बता दिया। अब हमारे इस सन्देह का उन्मूलन कीजिए।२

कथं स भगवानीशः पूर्वजोऽपि पिनाकधृक्।
पुत्रत्वमगमच्छंभुर्ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ॥३

वे भगवान् ईश्वर शंकर पूर्वज होने पर भी अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा के पुत्र कैसे बने?।३

कथं च भगवाञ्जज्ञे ब्रह्मा लोकपितामहः[1]।
अण्डतो[2] जगतामीशस्तन्नो वक्तुमिहार्हसि ॥४

---

१. कमलसम्भवः इति पा०। २. अण्डजः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जगत् के प्रभु लोक-पितामह ब्रह्मा अण्ड से कैसे उत्पन्न हुए ? यह आप हमें बताने के योग्य हैं ।४

कूर्म उवाच

शृणुध्वमृषयः सर्वे शंकरस्यामितौजसः ।
पुत्रत्वं ब्रह्मणस्तस्य पद्मयोनित्वमेव च ॥५

कूर्म बोले--ऋषिगण ! अमित तेजस्वी शंकर का ब्रह्मा का पुत्र बनना और ब्रह्मा का कमल से उत्पन्न होना आप लोग सुनें ।५

अतीतकल्पावसाने[1] तमोभूतं जगत्त्रयम् ।
आसीदेकार्णवं घोरं[2] न देवाद्या न चर्षयः[3] ॥६

बीते हुए कल्प के अन्त में तीनों लोक अन्धकार के समान तथा भयंकर रूप से एकार्णव हो गये थे । उस समय न देवता आदि और न ऋषि आदि ही थे ।६

तत्र नारायणो देवो निर्जने निरुपप्लवे[4] ।
आश्रित्य शेषशयनं सुष्वाप पुरुषोत्तमः ॥७

वहाँ केवल पुरुषोत्तम नारायणदेव निर्जन एवं उपद्रवशून्य अर्णव में शेषशय्या का आश्रय लेकर सो रहे थे ! ।७

सहस्रशीर्षा भूत्वा स सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
सहस्रबाहुः सर्वज्ञश्चिन्त्यमानो मनीषिभिः ॥८

उनके सहस्र शिर, सहस्र नेत्र, सहस्र चरण और सहस्र भुजायें हैं । वे सर्वज्ञ हैं तथा मनीषियों द्वारा चिन्तन किये जाते हैं ।८

पीतवासा विशालाक्षो नीलजीमूतसन्निभः ।
ततो[5] विभूतियोगात्मा योगिनां तु दयापरः[6] ॥९

वे पीताम्बर, विशाल नेत्र वाले, नीले बादल के समान कान्ति वाले, महाविभूति, योगात्मा और योगियों के संबंध में दयाशील हैं ।९

कदाचित्तस्य सुप्तस्य लीलार्थं दिव्यमद्भुतम्[7] ।
त्रैलोक्यसारं विमलं नाभ्यां पंकजमुद्बभौ ॥१०

किसी समय लीला के लिए सोये हुए नारायणदेव की नाभि में दिव्य, अद्भुत, तीनों लोक का सारभूत एवं निर्मल कमल उद्भूत हुआ ।१०

---

१. कल्पापसरे इति पा० । २. सर्वं इति पा० । ३. नारदाद्या महर्षयः इति पा० । ४. निर्जनो निरुपप्लवः इति पा० । ५. महा इति पा० । ६. योगिनां हृदयालयः इति पा० । ७. दिव्यमुत्तमम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शतयोजनविस्तीर्णं तरुणादित्यसन्निभम् ।
दिव्यगन्धमयं पुण्यं कर्णिका केसरान्वितम् ॥११

वह कमल सौ योजनों में फैला हुआ, मध्याह्न कालिक सूर्य के समान प्रकाशमान, अतिमनोहर सुगन्ध से युक्त, पवित्र और कर्णिका (कमल का छत्ता) एवं केसर (फूल के बीच का सींका) से संवलित था ।११

तस्यैवं सुचिरं कालं वर्त्तमानस्य शार्ङ्गिणः ।
हिरण्यगर्भो भगवांस्तं देशमुपचक्रमे ॥१२

इस प्रकार चिरकाल तक रहते हुए शार्ङ्गधनुष धारी विष्णु के पास भगवान् हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) उपस्थित हुए ।१२

स तं करेण विश्वात्मा समुत्थाप्य सनातनम् ।
प्रोवाच मधुरं वाक्यं मायया तस्य मोहितः ॥१३

विश्वात्मा हिरण्यगर्भ सनातन विष्णु को हाथ से उठाकर उनकी माया से मोहित हो मधुर वचन बोले ।१३

अस्मिन्नेकार्णवे घोरे निर्जने तमसावृते ।
एकाकी को भवांश्चेति ब्रूहि मे पुरुषर्षभ ॥१४

अंधकार से आवृत इस निर्जन एवं भयंकर एकार्णव में आप कौन हैं । पुरुषश्रेष्ठ ! मुझे बता दें ।१४

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा विहस्य गरुडध्वजः ।
उवाच देवं ब्रह्माणं मेघगम्भीरनिःस्वनः ॥१५

उनका वह वचन सुनकर गरुडवाहन विष्णु ने हँसकर मेघ (ध्वनि) के समान गंभीर वाणी में कहा ।१५

भो भो नारायणं देवलोकानां[1] प्रभवाव्ययम् ।
महायोगीश्वरं मां[2] वै जानीहि पुरुषोत्तमम् ॥१६

हे (ब्रह्मा) तुम मुझे पुरुषोत्तम, महायोगीश्वर और लोगों की उत्पत्ति और विनाश का कारण नारायणदेव समझो ।१६

मयि पश्य जगत्कृत्स्नं त्वं च लोकपितामह[3] ।
सपर्वतमहाद्वीपं समुद्रैः सप्तभिर्वृतम् ॥१७

---

१. देवं लोकानां इति पा० । २. त्वं इति पा० । ३. त्वां च लोकपितामहम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकपितामह तुम मुझमें सात समुद्रों से युक्त और पर्वत एवं महाद्वीपों के सहित सम्पूर्ण जगत् को देखो ।१७

एवमाभाष्य विश्वात्मा प्रोवाच पुरुषं हरिः ।
जानन्नपि महायोगी को भवानिति वेधसम् ॥१८

विश्वात्मा हरि इस प्रकार कहकर ब्रह्मा को जानते हुए भी 'महायोगी आप कौन हैं ?' यह पूछ बैठे ।१८

ततः प्रहस्य भगवान् ब्रह्मा वेदनिधिः प्रभुः ।
प्रत्युवाचाम्बुजाभाक्षं सस्मितं श्लक्ष्णया गिरा ॥१९

तदनन्तर वेदनिधि, प्रभु, भगवान् ब्रह्मा ने मुसकराकर मधुर स्वर में कमलनयन नारायणदेव से कहा ।१९

अहं धाता विधाता च स्वयम्भूः प्रपितामहः ।
मय्येव संस्थितं विश्वं ब्रह्माहं विश्वतोमुखः ॥२०

मैं धाता, विधाता, स्वयंभू तथा प्रपितामह हूँ । मैं ही चतुर्मुख ब्रह्मा हूँ। मुझमें ही विश्व अवस्थित है ।२०

श्रुत्वा[1] वाचं च भगवान्विष्णुः सत्यपराक्रमः ।
अनुज्ञाप्याथ[2] योगेन प्रविष्टो ब्रह्मणस्तनुम् ॥२१

यह बात सुनकर वे सत्यपराक्रम भगवान् विष्णु आज्ञा लेकर योग द्वारा ब्रह्मा के शरीर में प्रविष्ट हो गये ।२१

त्रैलोक्यमेतत्सकलं सदेवासुरमानुषम् ।
उदरे तस्य देवस्य दृष्ट्वा विस्मयमागतः[3] ॥२२

देवता, असुर और मनुष्य सहित इस सम्पूर्ण त्रैलोक्य को ब्रह्मदेव के उदर में देख कर विष्णु आश्चर्यान्वित हो गये ।२२

तदास्य वक्त्रान्निष्क्रम्य पन्नगेन्द्रनिकेतनः ।
अथापि[4] भगवान्विष्णुः पितामहमथाब्रवीत् ॥२३

अनन्तर उनके मुख से निकलकर गरुड़वाहन भगवान् विष्णु ब्रह्मा से बोले ।२३

भवानप्येवमेवाद्य शाश्वतं हि ममोदरम् ।
प्रविश्य लोकान्पश्यैतान्विचित्रान्पुरुषर्षभ ॥२४

---

१. श्रुत्वेत्थं भगवान् विष्णुः सत्यः सत्यपराक्रमः इति पा० । २. अनुज्ञयाथ इति पा० । ३. विस्मयमागमत् इति पा० । ४. अजातश्मश्रुर्भगवान् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे पुरुषश्रेष्ठ ! [आप भी इसी प्रकार अब मेरे नित्य उदर में प्रवेश करके इन विभिन्न लोकों को देखिए ।२४

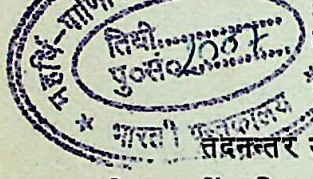

ततः प्रह्लादिनीं वाणीं श्रुत्वा तस्याभिनन्द्य च ।
श्रीपतेरुदरं भूयः प्रविवेश कुशध्वजः ॥२५

तदनन्तर उनकी आनन्दजनक वाणी सुनकर और अभिनन्दन करके ब्रह्मा श्रीपति के उदर में प्रविष्ट हो गये ।२५

तानेव लोकान्गर्भस्थानपश्यत्सत्यविक्रमः ।
पर्यटित्वाथ[1] देवस्य ददृशेऽन्तं न वै हरेः[2] ॥२६

सत्यपराक्रम ब्रह्मा ने उनके भीतर उन्हीं लोकों को देखा । फिर वहाँ पर्यटन करने लगे, पर अन्त नहीं पाया ।२६

ततो द्वाराणि सर्वाणि पिहितानि महात्मना ।
जनार्दनेन ब्रह्मासौ नाभ्यां द्वारमविन्दत ।२७

तत्पश्चात् महात्मा जनार्दन ने अपने सभी द्वारों को बन्द कर लिया । ब्रह्मा के नाभि में द्वार मिल गया ।२७

तत्र योगबलेनासौ प्रविश्य कनकाण्डजः ।
उज्जहारात्मनो रूपं पुष्कराच्चतुराननः ॥२८

हिरण्यगर्भ ने उसमें योगबल से प्रवेश किया । फिर चतुर्मुख ने कमल से अपने रूप का उद्धार किया ।२८

विरराजारविन्दस्थः[3] पद्मगर्भससद्युतिः ।
ब्रह्मा स्वयंभूर्भगवान्जगद्योनिः पितामहः ॥२९

तब कमल के भीतरी भाग के समान कान्ति वाले, स्वयंभू, पितामह, भगवान् ब्रह्मा कमल पर स्थित होकर विराजमान हुए ।२९

समन्यमानो विश्वेशमात्मानं परमं पदम् ।
प्रोवाच विष्णुं पुरुषं मेघगम्भीरया गिरा ॥३०

अपने को परम पद विश्वेश मानते हुए उन्होंने मेघ के समान गंभीर वाणी में विष्णु से कहा ।३०

---

१. पर्यटित्वा पर्यट्य इति साधु । आर्षः ल्यप्प्रत्ययाभावः । २. ददृशे तत्र वै हरे इति पा० । ३. विरराजारविन्देऽस्मिन् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतं किं [1]भवतेदानीमात्मनो जयकांक्षया ।
एकोऽहं प्रबलो नान्यो मा[2] वै कोभिभविष्यति ॥३१

अपनी विजय की आकांक्षा से आपने इस समय क्या किया ? एकमात्र मैं प्रबल हूँ, दूसरा नहीं । मुझे कौन दबायेगा ? ।३१]

श्रुत्वा नारायणो वाक्यं ब्रह्मणोक्तमतन्द्रितः[3] ।
सान्त्वपूर्वमिदं वाक्यं बभाषे मधुरं हरिः ॥३२

आलस्यरहित नारायण हरि ब्रह्मा का वाक्य सुनकर सान्त्वनापूर्वक यह मधुर वचन बोले ।३२

भवान्धाता विधाता च स्वयंभूः प्रपितामहः ।
न[4] मात्सर्याभियोगेन द्वाराणि पिहितानि मे ॥३३

आप धाता, विधाता, स्वयंभू और प्रपितामह हैं । मैंने मात्सर्य (डाह) के कारण द्वार नहीं बन्द किये ३३

किन्तु लीलार्थमेवैतन्न त्वां बाधितुमिच्छया ।
को हि बाधितुमन्विच्छेद्देवदेवं पितामहम् ॥३४

केवल लीला करने के लिए ही ऐसा किया, आपको अवरुद्ध करने की इच्छा से नहीं किया । देवों के देव पितामह को अवरुद्ध करने की इच्छा किसे हो सकती है ? ।३४

न[5] हि त्वं बाध्यसे ब्रह्मन् मान्यो हि सर्वथा भवान् ।
मम[6] क्षमस्व कल्याणं यन्मयापकृतं तव ॥३५

ब्रह्मन् ! आपको बाधित नहीं कर सकते । आप सर्वथा माननीय हैं । हे कल्याणमय ! मुझे क्षमा कीजिए जो मैंने आपका अपराध किया है ।३५

अस्माच्च कारणाद्ब्रह्मन्पुत्रो भवतु मे भवान् ।
पद्मयोनिरिति ख्यातो मत्प्रियार्थं जगन्मय ॥३६

ब्रह्मन् ! जगन्मय ! इस कारण मेरी प्रसन्नता के लिए आप पद्मयोनि नाम से विख्यात हो मेरे पुत्र हो जायें ।३६

---

१. भवतैवाद्य मन्मनोजयकांक्षया इति पा० । २. मां हि कोऽभिभविष्यति इति, समानोऽपि च विद्यते इति पा० । ३. ब्रह्मणो लोकमंत्रिणः इति । ब्रह्मणः परमेष्ठिन इति, । मंत्रिणः परमेष्ठिनः इति पा० । ४. त्वन्मात्सर्य्याभियोगेन इति पा० । ५. न तेऽन्यथावमन्तव्यमिति पा० । ६. मम मर्षय कल्याणं यन्मयापहृतं तव इति, सर्वमन्वयकल्याणमिति, सर्वधर्म्मैककल्याण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः स भगवान्देवो वरं दत्त्वा किरीटिने ।
प्रहर्षमतुलं गत्वा पुनर्विष्णुमभाषत ॥३७

इसके बाद वे भगवान् ब्रह्मदेव विष्णु को वर देकर असीम हर्ष को प्राप्त कर पुनः विष्णु से बोले ।३७

भवान्सर्वात्मकोऽनन्तः सर्वेषां परमेश्वरः ।
सर्वभूतान्तरात्मा वै परं ब्रह्म सनातनम् ॥३८

आप सर्वरूप, अनन्त, सबके परमेश्वर, समस्त प्राणियों के अन्तरात्मा और पर-ब्रह्मस्वरूप सनातन हैं ।३८

अहं वै सर्वलोकानामात्मालोको[1] महेश्वरः ।
मन्मयं सर्वमेवेदं ब्रह्मणः[2] पुरुषः परः ॥३९

और मैं सभी लोकों का आत्मा, आलोक, महेश्वर, तथा परम परम् पुरुष हूँ । ब्रह्मा की यह सम्पूर्ण सृष्टि मेरा स्वरूप है ।३९

नावाभ्यां विद्यते ह्यन्यो लोकानां परमेश्वरः ।
एका मूर्तिर्द्विधा भिन्ना नारायणपितामहौ[3] ॥४०

हम दोनों को छोड़कर दूसरा कोई नहीं लोकों का महेश्वर है । हमारी एक मूर्ति है, नारायण और पितामह—ये दोनों प्रकार में भिन्न मात्र हैं ।४०

तेनैवमुक्तो ब्रह्माणं वासुदेवोऽब्रवीदिदम् ।
इयं प्रतिज्ञा भवतो विनाशाय भविष्यति ॥४१

इस प्रकार कहे जाने पर वासुदेव (विष्णु) ने ब्रह्मा से यह कहा—यह प्रतिज्ञा विनाश के लिए होगी ।४१

किं न पश्यसि योगेन[4] ब्रह्माधिपतिमव्ययम् ।
प्रधानपुरुषेशानं वेदाहं परमेश्वरम् ॥४२

क्या आप योग के द्वारा प्रकृति-पुरुष के ईश्वर अविनाशी ब्रह्माधिपति को नहीं देखते ? मैं परमेश्वर को जानता हूँ ।४२

यं न पश्यन्ति योगीन्द्राः सांख्या अपि महेश्वरम् ।
अनादिनिधनं ब्रह्म तमेव शरणं व्रज ॥४३

सांख्यशास्त्रज्ञ और योगिराजगण भी जिन महेश्वर के दर्शन नहीं कर पाते, आप उन्हीं आदि-अन्त से रहित ब्रह्म (स्वरूप महादेव) के शरणापन्न होइए ।४३

---

१. मात्मालोकपितामहः इति पा० । २. ब्रह्माहं पुरुषः परः इति, ब्रह्माण्डं पुरुषर्षभ इति पा० । ३. एकोऽस्तीति द्विधा भिन्नौ इति पा० । ४. योगेशमिति, देवेशमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः क्रुद्धोऽम्बुजाभाक्षं ब्रह्मा प्रोवाच केशवम् ।
भगवन्नूनमात्मानं[1] वेद्मि तत्परमाक्षरम् ॥४४

ब्रह्माणं जगतामेकमात्मानं परमं पदम् ।
आवाभ्यां विद्यते त्वन्यो लोकानां परमेश्वरः ॥४५

इस पर क्रुद्ध होकर ब्रह्मा ने कमलनेत्र केशव से कहा—भगवन् ! निश्चय ही उस परमाक्षर आत्मा को जानता हूँ, जो तीनों लोक का एकमात्र आत्मा, परमपद एवं ब्रह्मा है। हम दोनों को छोड़कर दूसरा कोई परमेश्वर नहीं है।४४-४५।

संत्यज्य निद्रां विपुलां स्वमात्मानं विलोकय ।
तस्य तत्क्रोधजं वाक्यं श्रुत्वापि[2] स तदा प्रभुः ॥४६

तुम विपुल निद्रा को त्यागकर अपने आत्मा को देखो। उनके कोध से उत्पन्न उस वाक्य को सुन कर भी उस समय प्रभु ने कहा।४६

मामैवं वद कल्याण परिवादं महात्मनः ।
न मे ह्यविदितं ब्रह्मन् नान्यथाहं वदामि ते ॥४७

हे मंगलमय ! महात्मा की निन्दा इस प्रकार मत करो। ब्रह्मन् ! मुझे कुछ अज्ञात नहीं है। आपसे मैं अन्यथा नहीं कह रहा हूँ।४७

किन्तु मोहयति ब्रह्मन्ननन्ता[3] पारमेश्वरी ।
मायाशेषविशेषाणां हेतुरात्मसमुद्भवा ॥४८

किन्तु हे ब्रह्मन् ! आपको परमेश्वर की अनन्तमाया मोहित कर रही है। आत्म-समुद्भव माया अशेष विशेषों का कारण है।४८

एतावदुक्त्वा भगवान्विष्णुस्तूष्णीं बभूव ह ।
ज्ञात्वा तत्परमं तत्त्वं स्वमात्मानं सुरेश्वरः[4] ॥४९

इतना कहकर सुरेश्वर भगवान् विष्णु आत्मा को वह परम जानकर चुप हो गये।४९

कुतो ह्यपरिमेयात्मा भूतानां परमेश्वरः ।
प्रसादं ब्रह्मणे कर्तुं प्रादुरासीत्ततो हरः ॥५०

तदनन्तर अपरिमेयात्मा, प्राणियों के परमेश्वर शंकर ब्रह्मा पर अनुग्रह करने के लिए प्रादुर्भूत हुए।५०

---

१. भवान्न नूनमात्मानं विन्देत परमेश्वर इति पा० । २. श्रुत्वा विष्णुरभाषत इति पा० । ३. भवन्तमिति पा० । ४. महेश्वरमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ललाटनयनो देवो[1] जटामण्डलमण्डितः ।
त्रिशूलपाणिर्भगवांस्तेजसां परमो निधिः ॥५१

महादेव के ललाट में नेत्र था, शिर जटा-समूह से मण्डित था, हाथ में त्रिशूल था और वे तेजोराशि की निधि थे ।५१

विद्याविलासग्रथिता[2] ग्रहैः सार्केन्दुतारकैः ।
मालामत्यद्भुताकारां धारयन्पादलम्बिनीम् ॥५२

वे विद्याविलास से गूँथी हुई, सूर्य, चन्द्रमा और तारों से समन्वित, अत्यन्त अद्भुत आकार वाली और पैरों तक लटकने वाली माला को धारण किये हुए थे ।५२

तं दृष्ट्वा देवमीशानं ब्रह्मा लोकपितामहः ।
मोहितो माययात्यर्थं पीतवाससमब्रवीत् ॥५३

उन शंकर देव को देखकर लोकपितामह ब्रह्मा ने माया से अत्यन्त मोहित होकर पीताम्बर विष्णु से कहा ।५३

क एष पुरुषो नीलः[3] शूलपाणिस्त्रिलोचनः ।
तेजोराशिरमेयात्मा समायाति[4] जनार्दन ॥५४

हे जनार्दन ! शूलपाणि, त्रिलोचन, तेजोराशि, अमेयात्मा और नीलवर्ण यह पुरुष कौन आ रहा है ? ।५४

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा विष्णुर्दानवमर्दनः ।
अपश्यदीश्वरं देवं ज्वलन्तं[5] विमलेऽम्भसि ॥५५

उनका वह वचन सुनकर दानवों का मर्दन करने वाले विष्णु ने विमलाकाश में दीप्यमान देव ईश्वर को देखा ।५५

ज्ञात्वा तं परमं भावमैश्वरं ब्रह्मभावनः[6] ।
प्रोवाचोत्थाय भगवान्देवदेवं पितामहम् ॥५६

ब्रह्मा का कल्याण करने वाले भगवान् विष्णु ने ईश्वर सम्बन्धी परम भाव जान कर उठकर देवदेव पितामह से कहा ।५६

अयं देवो महादेवः स्वयंज्योतिः सनातनः ।
अनादिनिधनोऽचिन्त्यो लोकानमीश्वरो महान् ॥५७

---

१. ऽनन्त इति पा० । २. दिव्यां विशालां ग्रथितामिति पा० । ३. पुरुषोऽनन्त इति पा० । ४. समायातः इति पा० । ५. जटिलं तमथाम्भसि इति पा० । ६. ब्रह्मभावितः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये देव महादेव, स्वयंज्योति, सनातन, आदि-अन्त से रहित, अचिन्त्य और लोकों के महान् ईश्वर हैं ।५७

शंकरः शम्भुरीशानः सर्वात्मा परमेश्वरः ।
भूतानामधिपो योगी महेशो विमलः शिवः ॥५८

ये शंकर, शंभु, ईशान, सर्वात्मा, परमेश्वर, भूतगणों के स्वामी, योगी, महेश, विमल और शिव हैं ।५८

एष धाता विधाता च प्रधानः प्रभुरव्ययः[1] ।
यं प्रपश्यन्ति यतयो ब्रह्मभावेन भाविताः[2] ॥५९

ये धाता, विधाता, प्रधान, प्रभु और अविनाशी हैं । जिन्हें ब्रह्मभाव से भावित संन्यासी लोग देखते हैं ।५९

सृजत्येष जगत्कृत्स्नं पाति संहरते तथा ।
कालो भूत्वा महादेवः केवलो निष्कलः शिवः ॥६०

ये महादेव सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करते हैं, पालन करते हैं और काल होकर संहार भी करते हैं । ये अद्वितीय और निष्कल (अंशशून्य) हैं ।६०

ब्रह्माणं विदधे पूर्वं भवन्तं यः सनातनः ।
वेदांश्च प्रददौ तुभ्यं सोऽयमायाति शंकरः ॥६१

जिन सनातन शिव ने पहले आप ब्रह्मा की रचना की और आपको वेद प्रदान किये, वे शंकर आ रहे हैं ।६१

अस्यैव चापरां मूर्तिं विश्वयोनिं सनातनीम् ।
वासुदेवाभिधानां मामवेहि प्रपितामह ॥६२

प्रपितामह ! इन्हीं की दूसरी मूर्ति जो विश्व की मूलकारण, सनातनी और वासुदेव नाम की है, उसे मुझे ही समझिये ।६२

किं न पश्यसि योगेशं ब्रह्माधिपतिमव्ययम् ।
दिव्यं भवतु ते चक्षुर्येन द्रक्ष्यसि तत्परम्[3] ॥ ६३

ब्रह्मा के अधिपति, अविनाशी और योगेश्वर को क्या आप नहीं देख रहे हैं ? आपको दिव्य चक्षु प्राप्त हो जिससे उन परमेश्वर को आप देख सकेंगे ।६३

लब्ध्वा चैवं तदा चक्षुर्विष्णोर्लोकपितामहः ।
बुबुधे परमं[4] ज्ञानं पुरतः समवस्थितम् ॥६४

---

१. पुरुषेश्वरः इति पा० । २. भावितुमिति पा० । ३. तत्पदम् इति पा० । ४. परमीशानमिति, परमेशानमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब लोकपितामह ब्रह्मा विष्णु से दिव्य चक्षु पाकर सम्मुखावस्थित परमेश्वर को जान गये ।६४

स लब्ध्वा परमं ज्ञानमैश्वरं प्रपितामहः ।
प्रपेदे शरणं देवं तमेव पितरं शिवम् ॥६५

ब्रह्मा ईश्वर विषयक परम ज्ञान प्राप्त करके उन्हीं पितृदेव शिव के शरणापन्न हुए ।६५

ओंकारं समनुस्मृत्य संस्तभ्यात्मानमात्मना ।
अथर्वशिरसा देवं तुष्टाव च कृताञ्जलिः ॥६६

अनन्तर ओंकार का स्मरण कर आत्मा द्वारा आत्मा को संरुद्ध करके अंजलि बाँधकर अथर्वशिर (एक उपनिषद्) मंत्र से महादेव की स्तुति करने लगे ।६६

संस्तुतस्तेन भगवान्[1] ब्रह्मणा परमेश्वरः
अवाप परमां प्रीतिं व्याजहार स्मयन्निव[2] ॥६७

ब्रह्मा के द्वारा स्तुति किये जाने पर भगवान् परमेश्वर (शिव)परम प्रसन्न हुए और मुसकराते हुए बोले ।६७

मत्समस्त्वं न सन्देहो वत्स[3] भक्तश्च मे भवान् ।
मयैवोत्पादितः पूर्वं लोकसृष्ट्यर्थमव्ययः ॥६८

तुम मेरे समान हो, इसमें सन्देह नहीं । वत्स ! आप मेरे भक्त हैं । लोक-सृष्टि के लिए पहले मैंने ही अविनाशी रूप में तुम्हें उत्पन्न किया था ।६८

त्वमात्मा ह्यादिपुरुषो मम देहसमुद्भवः ।
निरीक्ष्य विष्णुं पुरुषं [4]प्रणम्योवाच शंकरम् ॥६९

तुम आत्मा, आदिपुरुष और मेरे शरीर से उत्पन्न हो । विश्वात्मन् ! माँगो । निष्पाप ! मैं तुम्हें वर देने वाला हूँ ।६९

स देवदेववचनं निशम्य कमलोद्भवः ।
निरीक्ष्य विष्णुं पुरुषं प्रणम्योवाच[4] शंकरम् ॥७०

वे ब्रह्मा महादेव का वचन सुनकर विष्णु की ओर देखकर शंकर को प्रणाम करके बोले ।७०

भगवन्भूतभव्येश महादेवाम्बिकापते ।
त्वामेव पुत्रमिच्छामि त्वया वा सदृशं सुतम् ॥७१

---

१. देवेन इति पा० । २. स्मयन्निव स्मितं कुर्वन्निव इत्यर्थः । स्मयन्नित्यार्षं स्मयमानः । ३. मद्भक्तश्च यतो भवान् इति पा० । ४. प्रणम्याह वृषध्वजमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवन् ! भूत और भविष्य के स्वामी ! महादेव ! दुर्गापते ! मैं आप ही को या आपके समान पुत्र को चाहता हूँ ।७१

मोहितोऽस्मि महादेव मायया सूक्ष्मया त्वया ।
न जाने परमं भावं याथातथ्येन ते[1] शिव ॥७२

महादेव ! मैं आपकी सूक्ष्म माया से मोहित हूँ । शिव ! मैं आपके परम भाव की यथार्थरूप में नहीं जानता हूँ ।७२

त्वमेव देव भक्तानां माता भ्राता पिता सुहृत् ।
प्रसीद तव पादाब्जं नमामि शरणागतः ॥७३

देव ! आप ही भक्तों के माता, पिता, भ्राता, पिता और सुहृद् हैं । प्रसन्न होइए ! आपके चरणकमल को नमस्कार है ।७३

स तस्य वचनं श्रुत्वा जगन्नाथो वृषध्वजः ।
व्याजहार तदा पुत्रं समालोक्य जनार्दनम् ॥७४

वे जगन्नाथ महादेव ब्रह्मा की बात सुनकर उस समय पुत्र विष्णु को देखकर बोले ।७४

यदर्थितं भगवता तत्करिष्यामि पुत्रक ।
विज्ञानमैश्वरं दिव्यमुत्पत्स्यति तवानघम्[2] ॥७५

हे अनुकम्पित पुत्र ! आपने जो प्रार्थना की है, उसे मैं करूँगा । मेरा पवित्र एवं दिव्य ऐश्वर ज्ञान तुम्हें उत्पन्न होगा ।७५

त्वमेव सर्वभूतानामादिकर्ता नियोजितः ।
कुरुष्व[3] तेषु देवेश मायां लोकपितामह ॥७६

तुम्हीं समस्त भूतों के आदिकर्ता के रूप में नियुक्त हुए हो । हे देवेश ! लोकपितामह ! सभी प्राणियों में माया का विस्तार करो ।७६

एष नारायणो[4] मत्तो ममैव परमा तनुः ।
भविष्यति तवेशान योगक्षेमवहो[5] हरिः ॥७७

ये नारायण मुझसे उत्पन्न हुए हैं और मेरा परम शरीर हैं । ईशान ! ये हरि तुम्हारा योगक्षेम वहन करेंगे ।७७

---

१. तेऽनघ इति पा० । २. उत्पत्स्यतीत्यत्र परस्मैपदमार्षम् । तवानघ इति पा० । ३. तथा कुरुष्व देवेश इति पा० । ४. नारायणोऽनन्त इति पा० । ५. योगक्षेमवहः-अलब्धस्य लाभो योगः । लब्धस्य परिरक्षणं क्षेमं तयोर्निर्वाहक इत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं व्याहृत्य हस्ताभ्यां प्रीतः[1] स परमेश्वरः ।
संस्पृश्य देवं ब्रह्माणं हरिं वचनमब्रवीत् ॥७८

इस प्रकार कहकर वे परमेश्वर दोनों हाथों से प्रेमपूर्वक ब्रह्मदेव का स्मरण करके विष्णु से वचन बोले ।७८

तुष्टोऽस्मि सर्वथाहं ते भक्तस्त्वं[2] च जगन्मय ।
वरं वृणीष्व नावाभ्यामन्योऽस्ति[3] परमार्थतः ॥७९

मैं सर्वथा तुम से सन्तुष्ट हूँ । हे जगन्मय ! तुम भक्त हो । वर माँगो । हम दोनों से भिन्न परमार्थ रूप में कोई नहीं है ।७९

श्रुत्वाथ देववचनं विष्णुर्विश्वजगन्मयः[4] ।
प्राह प्रसन्नया वाचा समालोक्य[5] च तन्मुखम् ॥८०

अनन्तर महादेव का वचन सुनकर विश्वजगन्मय विष्णु ने उनका मुख देखकर प्रसन्नवाणी द्वारा कहा ।८०

एष एव वरः श्लाघ्यो यदहं परमेश्वरम् ।
पश्यामि परमात्मानं भक्तिर्भवतु मे त्वयि ॥८१

मेरे लिए यही वर श्लाघनीय है कि मैं परमात्मा को देखूँ आप में मेरी भक्ति हो ।८१

तथेत्युक्त्वा महादेवः पुनर्विष्णुमभाषत ।
भवान् सर्वस्य कार्यस्य कर्त्ताहमधिदैवतम्[6] ॥८२

'ऐसा ही हो' यह कहकर महादेव ने पुनः विष्णु से कहा—'आप सभी कार्य के कर्ता हैं और मैं अधिदेवता हूँ' ।८२

त्वन्मयं मन्मयं चैव सर्वमेतन्न संशयः ।
भवान् सोमस्त्वहं सूर्यो भवान्रात्रिरहं दिनम् ॥८३

यह समस्त पदार्थ आपमें और मुझमें ओतप्रोत है, इसमें सन्देह है । आप चन्द्रमा हैं तो मैं सूर्य हूँ, आप रात्रि हैं तो मैं दिन हूँ ।८३

भवान् प्रकृतिरव्यक्तमहं पुरुष एव च ।
भवान् ज्ञानमहं ज्ञाता भवान्मायाहमीश्वरः ॥८४

---

१. प्रीतात्मा इति पा० । २. भक्त्या तव इति पा० । ३. न ह्यावां विभिन्नौ परमार्थतः इति पा० । ४. विश्वमयं जगत् इति पा० । ५. समालोक्य चतुर्मुखमिति पा० । ६. कर्त्ता हर्त्ताधिदैवतमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप अव्यक्त प्रकृति हैं तो मैं पुरुष ही हूँ। आप ज्ञान हैं तो मैं ज्ञाता हूँ। आप माया हैं तो मैं ईश्वर हूँ।८४

भवान्विद्यात्मिका[1] शक्तिः शक्तिमानहमीश्वरः।
योऽहं स निष्कलो देवः सोऽसि नारायणः प्रभुः ॥८५

आप विद्यात्मिका शक्ति हैं तो मैं शक्तिमान् ईश्वर हूँ। जो मैं निष्कल महादेव हूँ सो आप प्रभु नारायण हैं।८५

एकीभावेन पश्यन्ति योगिनो ब्रह्मवादिनः।
त्वामनाश्रित्य[2] विश्वात्मन्न योगी मामुपैष्यति ॥
पालयैतज्जगत्कृत्स्नं सदेवासुरमानुषम् ॥८६

ब्रह्मवादी योगी एक भाव से आपको देखते हैं। हे विश्वात्मन् ! आपका आश्रय लिये विना योगी मुझे नहीं पा सकते हैं। आप देवता, असुर और मनुष्य समेत इस सम्पूर्ण जगत् का पालन कीजिये।८६

इतीदमुक्त्वा भगवाननादिः स्वमायया मोहितभूतभेदः।
जगाम जन्मर्द्धिविनाशहीनं[3] धामैकमव्यक्तमनन्तशक्तिः ॥८७

इति श्रीकूर्मपुराणे पद्मोद्भवप्रादुर्भाववर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥९

अपनी माया से प्राणियों को मोहित करने वाले, अनन्तशक्तिसम्पन्न, अनादि भगवान् इस प्रकार यह कह कर जन्म, वृद्धि और विनाशरहित अव्यक्त धाम में चले गये।८७

श्रीकूर्मपुराण में ब्रह्मप्रादुर्भाव वर्णन नामक नवाँ अध्याय समाप्त ॥९॥

---

१. चिदात्मिका इति पा०। २. त्वामनादृत्य इति पा०। ३. जन्मस्थितिनाश-हीनमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दशमोऽध्यायः

अथ रुद्रसृष्टिः

कूर्म उवाच

गते महेश्वरे देवे भूय एव[1] पितामहः ।
तदेव सुमहत्पद्मं भेजे नाभिसमुत्थितम् ॥१

कूर्म बोले—भगवान् शंकर के चले जाने पर ब्रह्मा पुनः नाभि से उत्पन्न उसी महान् कमल पर अवस्थित हुए ।१

अथ दीर्घेण कालेन तत्राप्रतिमपौरुषौ ।
महासुरौ समायातौ भ्रातरौ मधुकैटभौ ॥२

अनन्तर बहुत समय बीत जाने पर अतुल्य पराक्रमी दो भाई मधु और कैटभ नामक महान् असुर वहाँ आये ।२

क्रोधेन महताविष्टौ महापर्वतविग्रहौ ।
कर्णान्तरसमुद्भूतौ देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ॥३

वे दोनों महान् क्रोध से आविष्ट थे । महान् पर्वत के समान उनका शरीर था । देवों के देव श्री विष्णु के कानों के छेद से वे निकले थे ।३

तावागतौ समीक्ष्याह नारायणमजो[2] विभुः ।
त्रैलोक्यकण्टकावेतावसुरौ हन्तुमर्हसि ॥४

उन दोनों को आये देखकर प्रभु ब्रह्मा ने नारायण से कहा—ये दोनों असुर तीनों लोक के कण्टक हैं । इन्हें मारना आपका कर्तव्य है ।४

तदस्य वचनं श्रुत्वा हरिर्नारायणः प्रभुः ।
आज्ञापयामास तयोर्वधार्थं पुरुषावुभौ ॥५

उनका यह वचन सुनकर प्रभु नारायण विष्णु ने उनका वध करने के लिए दो पुरुषों को आदेश दिया ।५

---

१. सोऽधिवासमिति, स विशालमिति पा० । २. नारायणमयो विभुः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदाज्ञया महद्युद्धं तयोस्ताभ्यामभूद्द्विजाः[1] ।
व्यजयत्कैटभं जिष्णुः विष्णुश्च व्यजयन्मधुम् ॥६

द्विजगण ! उनकी आज्ञा से उन दोनों पुरुषों का उन दोनों असुरों से महान् युद्ध प्रारंभ हो गया । उनमें जिष्णु नामक पुरुष ने कैटभ को जीत लिया और विष्णु नामक पुरुष ने मधु को जीत लिया ।६

ततःपद्मासनासीनं जगन्नाथः पितामहम् ।
बभाषे मधुरं वाक्यं स्नेहाविष्टमना हरिः ॥७

तदनन्तर कमलासन पर बैठे हुए ब्रह्मा से जगन्नाथ श्री हरि ने स्नेह से आविष्ट चित्त हो कर मधुर वचन कहा ।७

अस्मान्मयोह्यमानस्त्वं पद्मादवतर प्रभो ।
नाहं भवन्तं शक्नोमि वोढुं[2] तेजोमयं गुरुम् ॥८

प्रभो ! मेरे द्वारा वहन किये जाते हुए इस कमल पर से आप उतर जाइए । तेजोमय और भारी आपको मैं नहीं ढो सकता हूँ ।८

ततोऽवतीर्य विश्वात्मा देहमाविश्य चक्रिणः ।
अवाप वैष्णवीं निद्रामेकीभूतोऽथ[3] विष्णुना ॥९

विश्वात्मा ब्रह्मा ने उस कमल से उतर कर विष्णु के शरीर में प्रवेश करके विष्णु के साथ एक होकर निद्रा को प्राप्त किया ।९

सह[4] तेन तथाविश्य शङ्खचक्रगदाधरः ।
ब्रह्मा नारायणाख्योऽसौ सुष्वाप सलिले तदा ॥१०

उनके साथ उस प्रकार निद्रा से आविष्ट शंख, चक्र, गदा-धारी नारायण नामक ब्रह्मा जल में सो गये ।१०

सोऽनुभूय चिरं कालमानन्दं परमात्मनः ।
अनाद्यनन्तमद्वैतं स्वात्मानं ब्रह्मसंज्ञितम् ॥११

ततः प्रभाते योगात्मा भूत्वा देवश्चतुर्मुखः ।
ससर्ज सृष्टिं तद्रूपां वैष्णवं भावमाश्रितः ॥१२

ब्रह्मा चिरकाल तक अनादि, अनन्त, अद्वैत, अपने आत्मा और ब्रह्मनामधारी परमात्मा के आनन्द का अनुभव करके प्रातः काल योगात्मा होकर चतुर्मुख ब्रह्मा वैष्णव भाव का आश्रय लेकर तद्रूप सृष्टि करने लगे ।११-१२।

---

१. तयोरासीत् समाः शतम् इति पा० । २. सोढुमिति पा० । ३. मेकीभूयाय इति पा० । ४. सहस्रशीर्षनयन इति, सहस्रशीर्षस्तनय इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरस्तादसृजद्देवः सनन्दं सनकं तथा ।
ऋभुं सनत्कुमारं च पूर्वजं तं[1] सनातनम् ॥१३

पहले उन्होंने पूर्वज (अर्थात् प्रवाहरूप में पूर्वोत्पन्न) सनन्द, सनक, ऋभु, सनत्कुमार और सनातन की सृष्टि की ।१३

ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः परं वैराग्यमास्थिताः ।
विदित्वा परमं भावं ज्ञाने[2] विदधिरे मतिम् ॥१४

शीत, उष्ण आदि द्वन्द्वों तथा मोह से निर्मुक्त तथा परम वैराग्य भान में अवस्थित सनकादि ऋषियों ने परम भाव को जानकर ज्ञान विषय में बुद्धि को लगाया ।१४

तेष्वेवं निरपेक्षेषु लोकसृष्टौ पितामहः ।
बभूव नष्टचेता वै मायया परमेष्ठिनः[3] ॥१५

लोकसृष्टि करने में उन्हें इस प्रकार निरपेक्ष देखकर पितामह ब्रह्मा परमेश्वर की माया से नष्टचित्त (भग्नमनोरथ) हो गये ।१५

ततः पुराणपुरुषो जगन्मूर्त्तिः सनातनः ।
व्याजहारात्मनः पुत्रं मोहनाशाय पद्मजम् ॥१६

तदुपरान्त पुराणपुरुष, सनातन तथा जगन्मूर्ति विष्णु अपने पुत्र ब्रह्मा का मोह नाश करने के लिए बोले ।१६

विष्णुरुवाच

कच्चिन्नु[4] विस्मृतो देवः शूलपाणिः सनातनः ।
यदुक्तो[5] वै पुरा शम्भुः पुत्रत्वे भव शङ्कर ॥१७

विष्णु ने कहा—क्या तुम सनातन शूलपाणि महादेव को भूल गये, जो पूर्वकाल में तुमने शिव से कहा था कि हे शंकर ! तुम मेरा पुत्र बनो ।१७

प्रयुक्तवान् मनो योऽसौ पुत्रत्वेन तु शङ्करः ।
अवाप[6] संज्ञां गोविन्दात्पद्मयोनिः पितामहः ॥१८

तब शंकर ने पुत्र होने की इच्छा से मन को प्रयुक्त किया । पद्मयोनि ब्रह्मा को विष्णु से बोध मिल गया ।१८

प्रजाः[7] स्रष्टुं मनश्चक्रे तपः परमदुस्तरम् ।
तस्यैवं तप्यमानस्य न किञ्चित्समवर्त्तत ॥१९

---

१. तु इति पा० । २. न सृष्टौ दधिरे मतिमिति पा० । ३. परिवेष्टित इति पा० । ४. कच्चिन्न इति पा० । ५. यदुक्तवानात्मोऽसौ पुत्रत्वे तव शङ्करः इति पा० । ६. अवाप्तसंज्ञः इति, पा० । ७. प्रजाः स्रष्टुमनास्तेपे तपः परमदुश्चरम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने प्रजाओं की सृष्टि के लिए परम कठिन तप में मन को लगाया। इस प्रकार तप करते हुए उन्हें कुछ समय बीत गया।१९

ततो दीर्घेण कालेन दुःखात्क्रोधोऽभ्यजायत।
क्रोधाविष्टस्य नेत्राभ्यां प्रापतन्नश्रुविन्दवः ॥२०

तत्पश्चात् दीर्घकाल तक तप का कोई फल नहीं मिला। दुःख से उन्हें क्रोध उत्पन्न हो गया। क्रोधाविष्ट ब्रह्मा के नेत्रों से आँसू की बूँदें गिरने लगीं।२०

ततस्तेभ्यः[1] समुद्भूताः भूताः प्रेतास्तदाभवन्।
सर्वांस्तानग्रतो दृष्ट्वा ब्रह्मात्मानमविन्दत[2] ॥२१

तब उन अश्रुबिन्दुओं से भूत-प्रेतगण उत्पन्न हो गये। उन सब (भूत-प्रेतों) को सामने देखकर ब्रह्मा अपनी निन्दा करने लगे।२१

जहौ प्राणांश्च भगवान् क्रोधाविष्टः प्रजापतिः।
तदा प्राणमयो रुद्रः प्रादुरासीत्प्रभोर्मुखात् ॥२२

फिर क्रोधाविष्ट भगवान् ब्रह्मा ने प्राणों को त्याग दिया। उस समय ब्रह्मा के मुख से रुद्र प्रादुर्भूत हुए।२२

सहस्रादित्यसङ्काशो युगान्तदहनोपमः।
रुरोद सुस्वरं घोरं देवदेवः स्वयं शिवः ॥२३

सहस्र सूर्यों के समान तथा प्रलयकालिक अग्नि तुल्य स्वयं देवाधीश्वर शिव उच्च स्वर से रोदन करने लगे।२३

[1]रोदमानं ततो ब्रह्मा मारोदीरित्यभाषत।
रोदनाद्रुद्र इत्येवं लोके ख्यातिं गमिष्यसि ॥२४

रोते हुए शिव से ब्रह्मा ने कहा—मत रोओ। रोदन करने के कारण तुम 'रुद्र' इस नाम से ख्याति प्राप्त करोगे।२४

अन्यानि सप्त नामानि पत्नीः पुत्रांश्च शाश्वतान्।
स्थानानि तेषामष्टानां ददौ लोकपितामहः ॥२५

लोकपितामह (ब्रह्मा) ने रुद्र को दूसरे सात नाम, पत्नियाँ, अविनाशी पुत्र और उन्हें आठ स्थान दिये।२५

भवः शर्वस्तथेशानः पशूनां पतिरेव च।
भीमश्चोग्रो महादेवस्तानि नामानि सप्त वै ॥२६

---

१. ततस्तेभ्योऽश्रुबिन्दुभ्य इति पा०। २. मनिन्दत इति पा०। ३. आर्षमात्मनेपदित्वं भौवादिकत्वञ्च।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे सात नाम ये हैं—भव, शर्व, ईशान, पशुपति, भीम, उग्र और महादेव ।२६

सूर्यो जलं मही वह्निर्वायुराकाशमेव च ।
दीक्षितो ब्राह्मणश्चन्द्र इत्येता अष्टमूर्त्तयः ॥२७

सूर्य, जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश, दीक्षित ब्राह्मण और चन्द्रमा—ये आठ मूर्तियाँ हैं ।२७

स्थानेष्वेतेषु ये रुद्रान्ध्यायन्ति प्रणमन्ति च ।
[1]तेषामष्टतनुर्देवो ददाति परमं पदम् ॥२८

इन स्थानों में जो रुद्रों का ध्यान और प्रणाम करते हैं, उन्हें आठ शरीर वाले महादेव परम पद प्रदान करते हैं ।२८

सुवर्च्चला तथैवोमा[2] विकेशी च शिवा तथा ।
स्वाहा दिशश्च दीक्षा च रोहिणी चेति पत्नयः[3] ॥२९

सुवर्चला, उमा, विकेशी, शिवा, स्वाहा, दिशा, दीक्षा और रोहिणी—ये आठ पत्नियाँ हैं ।२९

शनैश्चरस्तथा शुक्रो लोहिताङ्गो मनोजवः ।
स्कन्दः सर्गोऽथ सन्तानो बुधश्चैषां सुताः स्मृताः ॥३०

शनैश्चर, शुक्र, मंगल, मनोजव, स्कन्द, सर्ग, सन्तान तथा बुध—ये आठ पुत्र हैं ।३०

एवम्प्रकारो भगवान्देवदेवो महेश्वरः ।
प्रजा धर्मञ्च कामं च त्यक्त्वा वैराग्यमाश्रितः ॥३१

इस प्रकार भगवान् देवाधिपति महेश्वर ने प्रजा, धर्म, काम—इन सबका परित्याग करके वैराग्य ले लिया ।३१

आत्मन्याधाय चात्मानमैश्वरं भावमास्थितः ।
पीत्वा तदक्षरं ब्रह्म शाश्वतं परमामृतम् ॥३२

आत्मा में आत्मा को मिलाकर अक्षर ब्रह्म रूप वह शाश्वत परमामृत पान करके ऐश्वर भाव का अवलम्बन किया ।३२

---

१. माद्या सनुरिति पा० । २. वोषा इति पा० । ३. पत्नय: इत्यार्षम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजाः सृजति चादिष्टो ब्रह्मणा नीललोहितः ।
स्वात्मना सदृशान्रुद्रान्[1] ससर्ज्ज मनसा शिवः ॥३३

ब्रह्मा के आदेश देने पर शिव प्रजा की मानसी सृष्टि करने लगे। उन्होंने अपने समान रुद्रों की मानसी सृष्टि की ।३३

कपर्द्दिनो निरातङ्कान्नीलकण्ठान् पिनाकिनः ।
त्रिशूलहस्तानुद्रिक्तान् सदानन्दांस्त्रिलोचनान् ॥३४

जरामरणनिर्मुक्तान् महावृषभवाहनान् ।
वीतरागांश्च सर्वज्ञान् कोटिकोटिशतान्प्रभुः ॥३५

प्रभु ने जटाजूट विशिष्ट, भयरहित, नीलकण्ठ, पिनाकधारी, हाथ में त्रिशूल लिए उद्यमशील, सदानन्द, त्रिलोचन, जरा-मृत्यु से रहित, महावृषभरूप वाहन वाले, वीतराग तथा सर्वज्ञ रुद्रों की करोड़ों की संख्या में सृष्टि की ।३४-३५।

तान्दृष्ट्वा विविधान्रुद्रान्निर्मलान्नीललोहितान् ।
जरामरणनिर्मुक्तान् व्याजहार हरं गुरुः ॥३६

ब्रह्मा ने निर्मल, नीलकण्ठ एवं जरामरणरहित विविध रुद्रों को देखकर शंकर से कहा ।३६

मात्राक्षीरीदृशीर्द्देवप्रजा मृत्युविवर्जिताः ।
अन्याः सृजस्व[2] भूतेश जन्ममृत्युसमन्विताः ॥३७

देव ! ऐसी मृत्युरहित प्रजाओं की सृष्टि मत करें। भूतेश ! जन्म-मृत्यु से युक्त प्रजाओं की सृष्टि करें ।३७

ततस्तमाह भगवान् कपर्दी कामशासनः ।
नास्ति मे तादृशः[3] सर्गः सृज[4] त्वं विविधाः प्रजाः ॥३८

तदनन्तर कामजयी भगवान् शिव ने कहा—मैं वैसी सृष्टि नहीं कर सकता, तुम विविध प्रकार की प्रजाओं का सृजन करो ।३८

ततःप्रभृति देवोऽसौ न प्रसूते शुभाः प्रजाः ।
स्वात्मजैरेव[5] ते रुद्रैर्निवृत्तात्मा ह्यतिष्ठत[6] ॥३९

तब से लेकर महादेव मंगलमयी प्रजाओं की सृष्टि नहीं करते। अपने उन रुद्र पुत्रों से ही निवृत्तात्मा होकर अवस्थित हो गये ।३९

---

१. सदृशान् पुत्रानिति पा० । २. आत्मनेवदमार्षम् सृजस्व देवेश इति पा० । ३. तादृशी शक्तिरिति पा० । ४. सृज त्वमशुभा इति पा० । ५. आत्मजैरपि इति पा० । ६. व्यतिष्ठत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थाणुत्वं तेन तस्यासीद्देवदेवस्य शूलिनः ।
ज्ञानं वैराग्यमैश्वर्यं तपः सत्यं क्षमा धृतिः ॥४०

द्रष्टृत्वमात्मसंबोधो ह्यधिष्ठातृत्वमेव च ।
अव्ययानि दशैतानि नित्यं तिष्ठन्ति शंकरे ॥४१

इस कारण त्रिशूलधारी महादेव का एक नाम स्थाणु पड़ गया। ज्ञान, वैराग्य ऐश्वर्य, तपस्या, सत्य, क्षमा, धृति, द्रष्टृत्व, आत्मबोध और अधिष्टातृत्व—ये दशो अक्षय रूप से शंकर में विद्यमान रहते हैं ।४०-४१।

एवं स शंकरः साक्षात्पिनाकी परमेश्वरः ।
ततः स भगवान् ब्रह्मा वीक्ष्य देवं त्रिलोचनम् ॥४२

सहैव मानसैः रुद्रैः प्रीतिविस्फारलोचनः ।
ज्ञात्वा परतरं भावमैश्वरं ज्ञानचक्षुषा ॥४३

तुष्टाव जगतामीशं कृत्वा शिरसि चाञ्जलिम् ।

इस प्रकार वे पिनाकधारी शिव साक्षात् शंकर हैं। तदनन्तर वे भगवान् ब्रह्मा मानस पुत्रों—रुद्रों समेत त्रिलोचन शिव को प्रेमपूर्वक विस्फारित नेत्रों से देखकर ज्ञानचक्षु ले अत्यंत श्रेष्ठ ऐश्वर भाव जानकर शिरोदेश में अंजलि बाँधकर जगदीश की स्तुति करने लगे ।४२-४३।

ब्रह्मोवाच

नमस्तेऽस्तु महादेव नमस्ते परमेश्वर ॥४४

ब्रह्मा बोले—महादेव आपको नमस्कार है। परमेश्वर! आपको नमस्कार है ।४४

नमः शिवाय देवाय नमस्ते ब्रह्मरूपिणे ।
नमोऽस्तु ते महेशाय नमः शान्ताय हेतवे ॥४५

शिव को नमस्कार है। ब्रह्मरूपी देव को नमस्कार है। महेश को नमस्कार है। शान्त हेतु को नमस्कार है ।४५

प्रधानपुरुषेशाय योगाधिपतये[1] नमः ।
नमः कालाय रुद्राय महाग्रासाय शूलिने ॥४६

प्रकृति-पुरुष से श्रेष्ठ को नमस्कार है। योगाधिपति को नमस्कार है। काल, रुद्र, महाग्रास और शूलधारी को नमस्कार है ।४६

---

१. यज्ञाधिपतये इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमः पिनाकहस्ताय त्रिनेत्राय नमोनमः ।
नमस्त्रिमूर्त्तये तुभ्यं ब्रह्मणे[1] जनकाय ते ॥४७

हाथ में पिनाक धारण करने वाले को नमस्कार है। त्रिलोचन को बार-बार नमस्कार है। त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश रूप) को नमस्कार है। ब्रह्मस्वरूप को नमस्कार है। उत्पादक आपको नमस्कार है ।४७

ब्रह्मविद्याधिपतये ब्रह्मविद्याप्रदायिने ॥
नमो वेदरहस्याय कालकालाय ते नमः ॥४८

ब्रह्मविद्या के स्वामी को नमस्कार है। ब्रह्मविद्या प्रदान करने वाले को नमस्कार है। वेद के रहस्य (अर्थात् वेद में गुप्त भाव से अवस्थित) आपको नमस्कार है। काल के भी कालस्वरूप आपको नमस्कार है ।४८

वेदान्तसारसाराय नमोवेदात्ममूर्त्तये[2] ।
नमो बुद्धाय रुद्राय[3] योगिनां गुरवे नमः ॥४९

वेदान्त के सार (तत्त्व) के भी सार भूत आपको नमस्कार है। वेदमूर्ति आपको नमस्कार है। बुद्ध, रुद्र तथा योगियों के गुरु आपको नमस्कार है ।४९

प्रहीणशोकैर्विविधैर्भूतैः परिवृताय ते ।
नमो ब्रह्मण्यदेवाय ब्रह्माधिपतये नमः ॥५०

शोकरहित, विविध भूतों से घिरे हुए आपको नमस्कार है। नारायणदेव तथा ब्रह्माधिपति आपको नमस्कार है ।५०

त्र्यम्बकायादिदेवाय नमस्ते परमेष्ठिने ।
नमो दिग्वाससे तुभ्यं नमो मुण्डाय दण्डिने ॥५१

त्रिलोचन, आदिदेव तथा परमेष्ठी आपको नमस्कार है। दिगम्बर, मुण्ड और दण्डधारी को नमस्कार है ।५१

अनादिमलहीनाय ज्ञानगम्याय ते नमः ।
नमस्ताराय तीर्थाय नमो योगर्द्धिहेतवे ॥५२

अनादि, निर्मल तथा ज्ञान द्वारा प्राप्य आपको नमस्कार है। ओंकार स्वरूप, तीर्थस्वरूप तथा योगसिद्धि के हेतुरूप आपको नमस्कार है ।५२

नमो धर्मादिगम्याय योगगम्याय ते नमः ।
नमस्ते निष्प्रपञ्चाय निराभासाय ते नमः ॥५३

---

१. ब्रह्मणो जनकाय इति पा० । २. वेदान्तमूर्तये इति पा० । ३. शुद्धाय इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म आदि के द्वारा गम्य और योग के द्वारा गम्य आपको नमस्कार है। जगत् से भिन्न तथा दीप्तिशून्य आपको नमस्कार है ।५३

ब्रह्मणे विश्वरूपाय नमस्ते परमात्मने ।
त्वयैव सृष्टमखिलं त्वय्येव सकलं स्थितम् ॥५४

विश्वरूप आपको नमस्कार है। परमात्मस्वरूप आपको नमस्कार है। आपने ही सबकी सृष्टि की है और सब आप में ही स्थित है ।५४

त्वया संह्रियते विश्वं प्रधानाद्यं जगन्मय ।
त्वमीश्वरो महादेवः परं ब्रह्म महेश्वरः ॥५५

हे जगन्मय ! प्रकृति प्रभृति सम्पूर्ण विश्व का आप ही संहार करते हैं। आप ईश्वर, महादेव, परब्रह्म और महेश्वर हैं ।५५

परमेष्ठी शिवः शान्तः पुरुषो निष्कलो हरः ।
त्वमक्षरं परं ज्योतिस्त्वं कालः परमेश्वरः ॥५६

आप परमेष्ठी, शिव, शान्त, पुरुष, निष्कल (अविनाशी), हर, अक्षर, परम ज्योतिःस्वरूप, कालस्वरूप और महेश्वर हैं ।५६

त्वमेव पुरुषोऽनन्तः प्रधानं प्रकृतिस्तथा ।
भूमिरापोऽनलो वायुर्व्योमाहङ्कार एव च ॥५७

आप ही पुरुष, अनन्त, प्रकृति और प्रकृति के परिणाम, भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश और अहंकार हैं ।५७

यस्य रूपं नमस्यामि भवन्तं ब्रह्मसंज्ञितम् ।
यस्य द्यौरभवन्मूर्द्धा पादौ पृथ्वी दिशो भुजाः ॥५८

अतएव ब्रह्मनामधारी आपको नमस्कार है, जिनका स्वर्ग मस्तक है, पृथ्वी दोनों पैर हैं और दिशायें भुजा हैं ।५८

आकाशमुदरं तस्मै विराजे प्रणमाम्यहम् ।
सन्तापयति यो नित्यं स्वभाभिर्भासयन् दिशः ॥५९

ब्रह्मतेजोमयं विश्वं तस्मै सूर्यात्मने नमः ।
हव्यं वहति यो नित्यं रौद्री तेजोमयी तनुः ॥६०

कव्यं पितृगणानां च तस्मै वह्न्यात्मने नमः ।
आप्याययति यो नित्यं स्वधाम्ना सकलं जगत् ॥६१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीयते देवतासंघैस्तस्मै चन्द्रात्मने[1] नमः ।
बिभर्त्यशेषभूतानि यान्तश्चरति सर्वदा ॥६२

शक्तिर्महेश्वरी तुभ्यं तस्मै वाय्वात्मने नमः ।
सृजत्यशेषमेवेदं यः स्वकर्मानुरूपतः ॥६३

आत्मन्यवस्थितस्तस्मै चतुर्वक्त्रात्मने[2] नमः ।
यः शेते शेषशयने विश्वमावृत्य मायया ॥६४

स्वात्मानुभूतियोगेन तस्मै विष्ण्वात्मने[3] नमः ।
बिर्भात्ति शिरसा नित्यं द्विसप्तभुवनात्मकम् ॥६५

ब्रह्माण्डं योऽखिलाधारस्तस्मै शेषात्मने नमः ।
यः परान्ते[4] परानन्दं पीत्वा देव्यैकसाक्षिकम्[5] ॥६६

नृत्यत्यनन्तमहिमा तस्मै रुद्रात्मने नमः ।
योऽन्तरा सर्वभूतानां नियन्ता तिष्ठतीश्वरः ॥६७

यस्य केशेषु जीमूता नद्यः सर्वांगसन्धिषु ।
कुक्षौ समुद्राश्चत्वारस्तस्मै तोयात्मने नमः ॥६८

आकाश पेट है, उस विराट् को मैं प्रणाम करता हूँ। जो नित्य अपनी कान्तियों से दिशाओं को उद्भासित करते हुए सन्तप्त करते हैं तथा जो तेजोमय ब्रह्म विश्व को सन्तप्त करते हैं, उन सूर्यात्मा को नमस्कार है। जो तेजोमय रौद्र शरीर नित्य हव्य (देवान्न) का तथा पितृगणों के लिए कव्य (पितृ-अन्न) का वहन करता है, उस वह्निरूपी पुरुष को नमस्कार है। जो अपनी रश्मि द्वारा सम्पूर्ण जगत् को नित्य आलोकित करता है तथा देवसमूह द्वारा जिसकी रश्मि का पान (उपभोग) किया जाता है, उस चन्द्र रूपी पुरुष को नमस्कार है। जो माहेश्वरी शक्ति सदा अन्दर विचरण करके अशेष भूत समूह को धारण करती है, उस वायुरूपी पुरुष को नमस्कार है। जो अपने कर्मानुरूप इस सम्पूर्ण जगत् का सृजन करता है, आत्मा में अवस्थित उस चतुर्मुखरूपी पुरुष को नमस्कार है। जो आत्मानुभूति के योग से माया द्वारा विश्व को आवृत करके शेषशय्या पर शयन करते हैं उन विष्णु मूर्ति पुरुष को नमस्कार है। जो चतुर्दश भुवनात्मक ब्रह्माण्ड को सर्वदा अपने मस्तक पर धारण किये रहते हैं और जो सबके आधार हैं उन शेष स्वरूप पुरुष को नमस्कार है। जो महाप्रलय के अन्त में परमानन्द पीकर दिव्य एक मात्र साक्षी तथा अनन्त महिमान्वित होकर नृत्य करते हैं, उन रुद्ररूपी पुरुष को नमस्कार है। जो नियन्ता ईश्वर रूप में सभी प्राणियों के मध्य अवस्थान करते हैं, जिनके केशों में मेघगण,

---

१. सोमात्मन इति पा०। २. चतुर्वक्त्राय ते नम इति पा०। ३. विश्वात्मने नम इतिपा०। ४. मरान्ते जगतां चरमे प्रलये इत्यर्थः। ५. देहैकसाक्षिक इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वांगसन्धियों में नदियाँ तथा कुक्षि में चारों समुद्र रहते हैं उन जलरूप पुरुष को नमस्कार है ।५९-६८।

तं सर्वसाक्षिणं देवं नमस्ये[1] विश्वतस्तनुम्[2] ।
यं विनिद्रा जितश्वासाः सन्तुष्टाः समदर्शिनः[3] ॥६९

ज्योतिः पश्यन्ति युञ्जानास्तस्मै[4] योगात्मने नमः ।
यया सन्तरते मायां योगी संक्षीणकल्मषः ॥७०

अपारतरपर्यन्तां[5] तस्मै विद्यात्मने नमः ।
यस्य भासा विभात्यों[6] महो यत्तमसः परम् ॥७१

प्रपद्ये तत्परं तत्त्वं तद्रूपं पारमेश्वरम् ।
नित्यानन्दं निराधारं निष्कलं परमं शिवम् ॥७२

प्रपद्ये परमात्मानं भवन्तं परमेश्वरम् ।
एवं स्तुत्वा महादेवं ब्रह्मा तद्भावभावितः ॥७३

प्राञ्जलिः प्रणतस्तस्थौ गृणन् ब्रह्म सनातनम् ।
ततस्तस्य महादेवो दिव्यं योगमनुत्तमम् ॥७४

ऐश्वरं ब्रह्म सद्भावं वैराग्यं[7] च ददौ हरः ।
कराभ्यां कीमलाभ्यां च संस्पृश्य प्रणतार्त्तिहा ॥७५

व्याजहार स्मयन्नेव[8] सोऽनुगृह्य पितामहम् ।
यत्त्वयाभ्यर्थितं ब्रह्मन् पुत्रत्वे भवता मम ॥७६

कृतं मया तत्सकलं सृजस्व विविधं जगत् ।
त्रिधा भिन्नोऽस्म्यहं ब्रह्मन् ब्रह्मविष्णुहराख्यया ॥७७

उन सर्वसाक्षी और विश्वशरीर देव को नमस्कार करता हूँ । जिन्हें निद्रारहित, श्वासजयी, सन्तुष्ट और समदर्शी योगी ज्योति रूप में देखते हैं, उन योग-स्वरूप पुरुष को नमस्कार है । पापरहित योगी जिस विद्या[1] (विशुद्ध सत्त्वप्रधाना प्रकृति) द्वारा अत्यन्त अपार पर्यन्त माया (मलिन सत्त्वप्रधाना प्रकृति) रूप सागर को पार कर जाते हैं, उन विद्यारूप को नमस्कार है, जिनकी आभा से सूर्य चमकता है और तमसे परे अद्वितीय श्रेष्ठतम तत्त्व प्रकाशित होता है, उस परम तत्त्व स्वरूप परमेश्वर के शरणापन्न हम

---

१. नमस्ये नमः करोमि । आर्षमात्मनेपदम् । २. विश्वतस्तनवो यस्य अष्टमूर्त्तिमित्यर्थः । ३. समवर्त्तिन इति पा० । ४. युञ्जाना योगं कुर्वाणा इत्यर्थः । ५. अतिशयेन अपारः अपारतरः पर्यन्तः यस्यास्ताम् । ६. विभातीदमद्वयं तमसः परमिति पा० । ७. वैराग्यं प्रददौ इति पा० । ८. स्वयं देव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं। नित्यानन्द स्वरूप, आधारशून्य, निष्कल, अंशरहित, परमात्मस्वरूप परमेश्वर के शरणापन्न हम होते हैं। इस प्रकार महादेव की स्तुति करके महादेवगतचित्त होकर ब्रह्मा सनातन ब्रह्म की स्तुति करते हुए हाथ जोड़कर प्रणाम करके अवस्थित हुए। तदुपरान्त महादेव ने ब्रह्मा को दिव्य, परमोत्तम, ऐश्वर योग, ब्रह्मसद्भाव तथा वैराग्य दिया। प्रणतजनों की पीड़ा दूर करनेवाले शिव ने अपने कोमल करों से ब्रह्मा का स्पर्श करके मुसकराते हुए कहा—ब्रह्मन्! तुमने मुझे अपने पुत्र बनने के लिए जो प्रार्थना की थी, उसे मैंने पूर्ण कर दिया। अब तुम विविध प्रकार के जगत् का सृजन करो। ब्रह्मन्! मैं ब्रह्मा, विष्णु और महादेव नामों से तीन प्रकार से विभक्त हूँ।६९-७७।

सर्गरक्षालयगुणैर्निष्कलः परमेश्वरः।
स त्वं ममाग्रजः पुत्रः सृष्टिहेतोर्विनिर्मितः ॥७८

सृष्टि, रचना और संहार रूपी गुणों से मैं निष्कल (अंशरहित) परमेश्वर हूँ। सो तुम मेरा ज्येष्ठ पुत्र हो, सृष्टि के लिए निर्मित हुए हो। ७८

ममैव दक्षिणादंगाद्वामाङ्गात्पुरुषोत्तमः।
तस्य देवाधिदेवस्य शम्भोर्हृदयदेशतः ॥७९

सम्बभूवाथ रुद्रो वा सोऽहं तस्य परा तनुः।
ब्रह्मविष्णुशिवा ब्रह्मन्[1] सर्गस्थित्यन्तहेतवः ॥८०

तुम मेरे दक्षिणांग से और विष्णु वामांग से उत्पन्न हुए हैं। उन्हीं देवाधिदेव शंभु के हृदयदेश से रुद्र उत्पन्न हुए। अथवा उनका श्रेष्ठ शरीर मैं हूँ। ब्रह्मन्! ब्रह्मा, विष्णु और शिव सृष्टि, स्थिति और संहार के कारण हैं।७९-८०।

विभज्यात्मानमेकोऽपि स्वेच्छया शंकरः स्थितः।
तथान्यानि च रूपाणि मम मायाकृतानि च ॥८१

शंकर एक होने पर भी स्वेच्छा से अपने को विभक्त करके अवस्थित हैं। उनके अन्यान्य रूप मेरी माया द्वारा निर्मित हैं।८१

अरूपः[2] केवलः स्वस्थो महादेवः स्वभावतः।
य एभ्यः[3] परतो देवस्त्रिमूर्त्तिः परमा[4] तनुः ॥८२

माहेश्वरी त्रिनयना योगिनां शान्तिदा सदा।
तस्या एव[5] परां मूर्तिं मामवेहि पितामह ॥८३

---

१. ह्यंते इति, ब्रह्मविष्णुशिवास्तस्मिन् इति पा०। २. नीरूप इति पा०। ३. एभ्यः परतरः इति पा। ४. परमात्मनः इति पा०। ५. एवापरा मूर्त्तिर्ममैव हि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जो महादेव को इन सकल मूर्तियों से परे नियन्ता रूप है, वह स्वभावतः अरूप, अद्वितीय और आत्मस्थ हैं। महादेव की परमा तनु (शरीर) त्रिमूर्ति, त्रिनयना तथा योगियों के लिए सदा शान्तिदायिनी हैं। पितामह! मुझे उसी माहेश्वरी तनु की श्रेष्ठ मूर्ति समझो।८२-८३।

शाश्वतैश्वर्यविज्ञानं तेजो योगसमन्वितम्[1]।
सोऽहं ग्रसामि सकलमधिष्ठाय तमोगुणम् ॥८४

मैं नित्य ऐश्वर्य-विज्ञान तथा तेजोयोग से समन्वित रहता हूँ। मैं तमोगुण का आश्रय लेकर कालरूप से इस सम्पूर्ण जगत् का संहार करता हूँ।८४।

कालो भूत्वा[2] न मनसा मामन्योऽभिभविष्यति।
यदा यदा हि मां नित्यं विचिन्तयसि पद्मज ॥८५
तदा तदा मे सान्निध्यं भविष्यति तवानघ।
एतावदुक्त्वा ब्रह्माणं सोऽभिवन्द्य गुरुं हरः ॥८६
सहैव मानसैः पुत्रैः[3] क्षणादन्तरधीयत।
सोऽपि योगं समास्थाय ससर्ज विविधं जगत् ॥८७
नारायणाख्यो भगवान्यथापूर्वं प्रजापतिः।
मरीचिभृग्वङ्गिरसः पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥८८
दक्षमत्रिं वसिष्ठञ्च सोऽसृजद्योगविद्यया[4]।
नव ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयो[5] मतः।
सर्वे ते ब्रह्मणा तुल्याः साधका ब्रह्मवादिनः ॥८९
सङ्कल्पञ्चैव धर्मञ्च युगधर्मांश्च शाश्वतान्।
स्थानाभिमानिनः सर्वान्यथा ते कथितं पुरा ॥९०

इति श्रीकूर्मपुराणे रुद्रसृष्टिर्नाम दशमोऽध्यायः ॥१०

मुझे कोई मन से भी पराभूत नहीं कर सकता। हे कमलोद्भव। तुम जब-जब मेरा नित्य चिन्तन करोगे तब-तब हे निष्पाप! तुम्हें मेरा सान्निध्य प्राप्त होगा। इतना कहकर शिव गुरु ब्रह्मा का अभिवादन करके अपने मानस पुत्रों के साथ ही क्षण भर में अन्तर्हित हो गये। तदन्तर नारायण नामक भगवान् प्रजापति भी योग का आश्रय लेकर पूर्वानुरूप विविध जगत् की सृष्टि करने लगे। योगविद्या के द्वारा उन्होंने मरीचि, भृगु,

---

१. तपोयोगेति पा०। २. भूत्वा न तमसा सामान्यो हि भविष्यतीति पा०। ३. रुद्रैरिति पा०। ४. मायया इति पा०। ५. निश्चयज्ञताः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, अत्रि और वसिष्ठ का सृजन किया। पुराण में ये नवो ब्रह्मा निश्चित किये गये हैं। ये सभी ब्रह्मा के समान साधक और ब्रह्मवादी है।८५-८६।

संकल्प, धर्म, युगधर्म तथा सकल स्थानाभिमानियों को यथापूर्व बता दिया।९०।

श्री कूर्मपुराण में रुद्रसृष्टि नामक दसवाँ अध्याय समाप्त।१०।

●

एकादशोऽध्यायः

अथ देव्यवतारः

कूर्म उवाच

एवं सृष्ट्वा मरीच्यादीन्देवदेवः पितामहः।
सहैव मानसैः पुत्रैस्तताप परमं तपः ॥१

कूर्म बोले—देवदेव पितामह ब्रह्मा इस प्रकार मरीचि आदि की सृष्टि करके उन मानस पुत्रों के साथ ही परम तपस्या करने लगे।१

तस्यैव तपतो वक्त्राद्रुद्रः कालाग्निसम्भवः[1]।
त्रिशूलपाणिरीशानः प्रादुरासीत्त्रिलोचनः ॥२

इस प्रकार तप करते हुए ब्रह्मा के मुख से कालाग्निसंभव, त्रिशूलधारी, त्रिनेत्र रुद्र प्रादुर्भूत हुए।२

अर्द्धनारीनरवपुः[2] दुष्प्रेक्ष्योऽतिभयंकरः।
विभजात्मानमित्युक्त्वा ब्रह्मा चान्तर्दधे भयात् ॥३

रुद्र अर्धनारीश्वर, अतिभयंकर और दुर्दर्शनीय थे। भय के कारण ब्रह्मा 'अपने को विभक्त कीजिए' यह कहकर अन्तर्हित हो गये।३

तथोक्तोऽसौ द्विधा स्त्रीत्वं पुरुषत्वं तथाकरोत्।
बिभेद पुरुषत्वञ्च दशधा चैकधा पुनः ॥४

---

१. कालाग्निसन्निभ इति पा०। १. अर्द्धनारीश्वरवपुरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार कहे जाने पर रुद्र ने स्त्री और पुरुष रूप में अपने को द्विधा विभक्त कर लिया। उस पुरुष भाग को पुनः ग्यारह भागों में विभक्त किया।४

एकादशैते कथिता रुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः।
कपालीशादयो[5] विप्रा देवकार्ये नियोजिताः ॥५

विप्रगण! ये ग्यारह रुद्र त्रिभुवनेश्वर, कपालीश आदि नामों से अभिहित होकर देवताओं के कार्य में नियुक्त हुए।५

सौम्यासौम्यैस्तथा शान्ताशान्तैः स्त्रीत्वञ्च स प्रभुः।
बिभेद बहुधा देवः स्वरूपैरसितैः सितैः ॥६

उन प्रभु देव ने अपने सौम्य, असौम्य, शान्त, अशान्त एवं शुक्ल, अशुक्ल अंश को भी अनेक प्रकार से विभक्त कर दिया।६

ता[6] वै विभूतयो विप्रा विश्रुताः शक्तयो भुवि।
लक्ष्म्यादयो यद्वपुषा[7] विश्वं व्याप्नोति शांकरी ॥७

विप्रवृन्द! वे विभूतियाँ लक्ष्मी आदि पृथ्वी पर शक्ति नाम से प्रसिद्ध हुईं। इन सभी शक्तियों द्वारा शांकरी ने विश्व को व्याप्त कर लिया है।७

विभज्य पुनरीशानी स्वात्मांशमकरोद्द्विजाः[8]।
महादेवनियोगेन पितामहमुपस्थिता ॥८

ईशानी ने पूर्वोक्त प्रकार से विभाग करके अपना अंश पृथक् कर लिया एवं महादेव के आदेशानुसार वे ब्रह्मा के निकट उपस्थित हुईं।८

तामाह भगवान् ब्रह्मा दक्षस्य दुहिता भव।
सापि तस्य नियोगेन प्रादुरासीत्प्रजापतेः ॥९

भगवान् ब्रह्मा ने उनसे कहा—तुम दक्ष की पुत्री बनो। वे भी उनकी आज्ञा से प्रजापति दक्ष से प्रादुर्भूत हुईं।९

नियोगाद्ब्रह्मणो देवीं ददौ रुद्राय तां सतीम्।
दाक्षीं[9] रुद्रोऽपि जग्राह स्वकीयामेव शूलभृत् ॥१०

ब्रह्मा की आज्ञा से दक्ष ने अपनी पुत्री सती देवी रुद्र को दे दी। त्रिशूलधारी रुद्र ने भी अपनी ही शक्ति दक्ष-पुत्री को ग्रहण कर लिया।१०

---

५. कापालिकादय इति पा०। ६. ते वै चिन्तयतः इति पा०। ७. याभिरीशा इति पा०। ८. आत्मानं शङ्कराद्भिभोः इति, स्वात्मांशमकरोद्भिभोः इति पा०। ९. दक्षाद् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजापतिविनिर्देशात्कालेन[1] परमेश्वरी ।
विभज्य पुनरीशानी आत्मानं शंकराद्विभोः ॥११

प्रजापति के निर्देश से कालक्रम से परमेश्वरी ईशानी ने अपने को प्रभु शंकर से पृथक् कर लिया ।११

मेनायामभवत्पुत्री तदा हिमवतः सती ।
स चापि पर्वतवरो ददौ रुद्राय[2] पार्वतीम् ॥१२

तब सती हिमालय से मैना में पुत्रीरूप में उत्पन्न हुई । पर्वतराज हिमालय ने भी अपनी पुत्री पार्वती रुद्र को दे दी ।१२

हिताय सर्वदेवानां[3] त्रैलोक्यस्यात्मनो[4] द्विजाः ।
सैषा माहेश्वरी देवी शंकरार्द्धशरीरिणी ॥१३

द्विजगण ! सभी देवताओं, तीनों लोकों तथा अपने हित के लिए पिता द्वारा दी गई पार्वती शंकर की अर्धशरीरिणी तथा माहेश्वरी देवी बन गईं ।१३

शिवा सती हैमवती सुरासुरनमस्कृता ।
तस्याः प्रभावमतुलं सर्वे देवाः सवासवाः ॥१४
वदन्ति[5] मुनयो वेत्ति शंकरो वा स्वयं हरिः[6] ।
एतद्वः कथितं विप्राः पुत्रत्वं परमेष्ठिनः ॥१५
ब्रह्मणः पद्मयोनित्वं शङ्करस्यामितौजसः ॥१६

इति श्रीकूर्मपुराणे देव्यवतारे एकादशोऽध्यायः ॥११

हिमालयपुत्री सती शिवा देवों तथा असुरों से नमस्कृत हैं । इन्द्र समेत समस्त देववृन्द और मुनि-गण उनके प्रभाव को अतुलनीय कहते हैं । शंकर या साक्षात्-हरि ही उनके प्रभाव को जानते हैं । विप्रगण ! जिस प्रकार अमित तेजस्वी शंकर, ब्रह्मा के पुत्र तथा ब्रह्मा पद्मयोनि बने, वह तुम लोगों को बता दिया ।१४-१६

श्रीकूर्मपुराण में पार्वती देवी के अवतार-प्रसंग में ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त ॥११॥

●

---

१. कोपेन इति पा० । २. शर्वाय इति पा० । ३. सर्वलोकानामिति पा० । ४. त्रैलोक्यस्यात्मनोऽपि च इति पा० । ५. मुदन्ति मुनयोवेतीति, विन्दन्ति मुनयोवेतीति पा० । ६. हरिः स्वयमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वादशोऽध्यायः

अथ देवीमाहात्म्यम्

सूत उवाच

इत्याकर्ण्याथ मुनयः कूर्मरूपेण भाषितम् ।
विष्णुना पुनरेवेमं[1] पप्रच्छुः प्रणता हरिम् ॥१

सूत बोले—कूर्मरूपधारी विष्णु का कथन सुनकर मुनियों ने हरि को प्रणाम करके पुनः उनसे प्रश्न किया ।१

ऋषय ऊचुः

कैषा भगवती देवी शङ्करार्द्धशरीरिणी ।
शिवा सती हैमवती यथावद्ब्रूहि पृच्छताम् ॥२

ऋषिगण बोले—जो शिव-शक्ति पहले दाक्षायणी सती होकर हिमालय की पुत्री के रूप में उत्पन्न हुईं, वे भगवती शंकरार्धशरीरिणी देवी कौन हैं ? आप हम लोगों को यथावृत्तान्त बता दें ।२

तेषां तद्वचनं श्रुत्वा मुनीनां पुरुषोत्तमः ।
प्रत्युवाच महायोगी ध्यात्वा[2] स्वं[3] परमं पदम् ॥३

उन मुनियों का वह वचन सुनकर महायोगी पुरुषोत्तम ने अपने परम पद का ध्यान करके कहा—।३

कूर्म उवाच

पुरा पितामहेनोक्तं मेरुपृष्ठे सुशोभने ।
रहस्यमेतद्विज्ञानं गोपनीयं विशेषतः ॥४

कूर्म बोले—पूर्वकाल में पितामह ने अति सुन्दर सुमेरु-पर्वत के पृष्ठ पर अतीव गोपनीय यह रहस्यविज्ञान कहा था ।४

साङ्ख्यानां परमं साङ्ख्यं ब्रह्मविज्ञानमुत्तमम् ।
संसारार्णवमग्नानां जन्तूनामेकमोचनम् ॥५

---

१. पुनरेवैनं इति पुनरेवेत्थमिति पा० । २. ध्यात्वेदमिति पा० । ३. स परमास्पदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सांख्य-शास्त्रियों का परम सांख्य-ज्ञान, उत्तम ब्रह्म-विज्ञान तथा संसार-सागर में निमग्न प्राणियों के लिए एकमात्र मोचकस्वरूप है।५

या सा माहेश्वरी शक्तिर्ज्ञानरूपातिलालसा ।
व्योमसंज्ञा[1] परा काष्ठा सेयं हैमवती मता ॥६

जो वह ज्ञानस्वरूपा, अतिलालसा, व्योम-संज्ञा, पराकाष्ठा, माहेश्वरी शक्ति है, उसी को हैमवती कहते हैं।६

शिवा सर्वगतानन्ता गुणातीतातिनिष्कला[2] ।
एकानेकविभागस्था[3] ज्ञानरूपातिलालसा ॥७

वही शिवा, सभी पदार्थों में रहने वाली, अन्तरहिता, गुणातीता, निरवयवा, एक और अनेक विभागरूप में संस्थिता, ज्ञानरूपा, अतिलालसा है।७

अनन्या निष्कले तत्त्वे संस्थिता तस्य तेजसा ।
स्वाभाविकी च तन्मूला प्रभा भानोरिवामला ॥८

वह अद्वितीया, ब्रह्मतेजोरूप से परब्रह्म में संस्थिता, सूर्य की निर्मल प्रभा के समान तन्मूला और स्वाभाविकी (नित्या) है।८

एका माहेश्वरी शक्तिरनेकोपाधियोगतः ।
परावरेण[4] रूपेण क्रीडते तस्य सन्निधौ ॥९

वही माहेश्वरी शक्ति एक होने पर भी उपाधियोग से अनेक होकर परावररूप से महादेव के समीप क्रीड़ा करती हैं।९

सेयं करोति सकलं[5] तस्याः कार्यमिदं जगत् ।
न कार्यं नापि करणमीश्वरस्येति सूरयः ॥१०

वही देवी सब कुछ करती हैं। उन्हीं का कार्य यह जगत् है। विद्वानों का कहना है कि ईश्वर का कार्य या करण नहीं है।१०

चतस्रः शक्तयो देव्याः स्वरूपत्वेन संस्थिताः ।
अधिष्ठानवशात्तस्याः शृणुध्वं मुनिपुङ्गवाः ॥११

मुनिश्रेष्ठो! आप लोग सुनिए—उस देवी के अधिष्ठानवश स्वरूपत्वरूप से संस्थित चार शक्तियाँ हैं।११

शान्तिर्विद्या प्रतिष्ठा च निवृत्तिश्चेति[6] ताः स्मृताः ।
चतुर्व्यूहस्ततो[7] देवः प्रोच्यते परमेश्वरः ॥१२

---

१. व्योमरूपा इति पा०। २. गुणातीता तु निष्कला इति पा०। ३. एवं नाना-विभागगस्था इति पा०। ४. परापरेण इति पा०। ५. सङ्कल्पं इति पा०। ६. निवृत्ति-रितीति पा०। ७. चतुर्व्यूहः शुभो देवः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे शान्ति, विद्या, प्रतिष्ठा और निवृत्तिनाम से स्मरण की जाती हैं। इस कारण परमेश्वर (शिव) चतुर्व्यूह कहे जाते हैं।१२

अनया परया देवः स्वात्मानन्दं समश्नुते।
चतुर्ष्वपि च वेदेषु[1] चतुर्मूर्तिर्महेश्वरः ॥१३

परमेश्वर इस प्रधान देवी सहित अपने आत्मानन्द का अनुभव करते हैं। महादेव चारों वेदों में चार मूर्तियों के रूप से अवस्थित हैं।१३

अस्यास्त्वनादिसंसिद्धमैश्वर्यमतुलं[2] महत्।
तत्सम्बन्धादनन्तैषा[3] रुद्रेण परमात्मना ॥१४

इस देवी का जो अतुलनीय महान् ऐश्वर्य है, वह अनादिसंसिद्ध है। इसलिए परमात्मा रुद्र के सम्बन्ध से वह अनन्ता नाम से अभिहित की जाती है।१४

सैषा सर्वेश्वरी देवी सर्वभूतप्रवर्तिका।
प्रोच्यते भगवान् कालो हरिः[4] प्राणो महेश्वरः ॥१५

सो वह देवी सब की ईश्वरी तथा सभी प्राणियों की प्रवर्तिका कही जाती है और भगवान् महेश्वर काल एवं हरि प्राण कहे जाते हैं।१५

तत्र सर्वमिदं प्रोतमोतञ्चैवाखिलं जगत्।
स कालाग्निर्हरो देवो[5] गीयते वेदवादिभिः ॥१६

उन महेश्वर में यह सम्पूर्ण जगत् ओत-प्रोत है। वे देव वेदवादियों द्वारा कालाग्नि हर नाम से गाये जाते हैं।१६

कालः सृजति भूतानि कालः संहरति प्रजाः[6]।
सर्वे कालस्य वशगा कालः कस्यचिद्वशः[7] ॥१७

काल ही प्राणियों का सृजन करता है, काल ही प्रजाओं का संहार करता है। अतएव सभी काल के वशीभूत हैं। किन्तु काल किसी के वश में नहीं है।१७

प्रधानं पुरुषस्तत्त्वं[8] महानात्मा त्वहंकृतिः।
कालेनान्यानि तत्त्वानि[9] समाविष्टानि[10] योगिना ॥१८

प्रधान, पुरुष, तत्त्व, महान आत्मा, अहंकार तथा अन्यान्य तत्त्व योगी द्वारा काल में ही समाविष्ट हैं।१८

---

१. देवेषु इति भेदेषु इति पा०। २. ममलमिति पा०। ३. तत्सम्बन्धादनन्ता या इति पा०। ४. हरः इति पा०। ५. रुद्रो इति पा०। ६. संहरते इति पा०। ७. वशे इति पा०। ८. प्रधानपुरुषत्वञ्च इति पा०। ९. भूतानि इति पा०। १०. समाधिस्थानि इति, समावेश्यानि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्य सर्वजगन्मूर्तिः[1] शक्तिर्मायेति विश्रुता ।
तदेयं भ्रामयेद्देवो मायावी पुरुषोत्तमः ॥१९

उनकी मूर्ति ही सम्पूर्ण जगत् है। उनकी शक्ति ही माया नाम से प्रसिद्ध है। इस कारण पुरुषोत्तम मायावी महादेव जगत् का भ्रम उत्पादन करते हैं।१९

सैषा मायात्मिका शक्तिः सर्वाकारा सनातनी ।
विश्वरूपं महेशस्य सर्वदा सम्प्रकाशयेत् ॥२०

सो यह सब प्रकार की आकृतियों वाली सनातनी मायात्मिका का शक्ति शंकर के विश्वरूप को सर्वदा प्रकाशित करती है।२०

अन्याश्च शक्तयो मुख्यास्तस्य देवस्य निर्मिताः ।
ज्ञानशक्तिः क्रियाशक्तिः प्राणशक्तिरिति त्रयम् ॥२१

उस देव की अन्य मुख्य शक्तियाँ भी बनाई गई हैं। ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति और प्राणशक्ति—ये तीन शक्तियाँ हैं।२१

सर्वासामेव शक्तीनां शक्तिमन्तो[2] विनिर्मिताः ।
मायया[3] वैवाथ विप्रेन्द्राः सा चानादिरनश्वराः ॥२२

माया ने ही सभी शक्तियों का एक-एक शक्तिमान् निर्मित किया। किन्तु हे विप्रेन्द्र-गण! स्वयं माया अनादि और अनश्वर है।२२

सर्वशक्त्यात्मिका माया दुर्निवारा दुरत्यया ।
मायावी सर्वशक्तीशः कालः कालकरः प्रभुः ॥२३

सर्वशक्तिस्वरूपा माया दुर्निवारा और अविनाशिनी है। प्रभु काल, मायावी, सभी शक्तियों के स्वामी और काल-कारक हैं।२३

करोति कालः सकलं संहरेत्काल एव हि ।
कालः स्थापतये विश्वं कालाधीनमिदं जगत् ॥२४

काल समस्त सृष्टियाँ करते हैं, काल ही सबका संहार करते हैं। काल ही विश्व की रक्षा करते हैं। यह जगत् काल के अधीन है।२४

लब्ध्वा देवाधिदेवस्य सन्निधिं परमेष्ठिनः ।
अनन्तस्याखिलेशस्य शम्भोः कालात्मनः प्रभोः ॥२५

---

१. जगत्सक्तिरिति पा०। २. शक्तीनामीश्वरो मत्त इति पा०। ३. मायया वात्र विप्रेन्द्राः स्थानादिकमनन्तया इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधानं पुरुषो माया मायी[1] सैव प्रपद्यते ।
एका सर्वगतानन्ता केवला निष्कला शिवा ॥२६

माया ही अनन्त, अखिलेश्वर, कालस्वरूप, देवाधिदेव, परमेष्ठी, प्रभु शंभु का सामीप्य प्राप्त करके प्रकृति और पुरुष अथवा माया और मायावी नाम से प्रभेद को प्राप्त हुई है। किन्तु वह निष्कला, शिवा, अद्वितीया, सर्वगता तथा अनन्ता है।२५-२६।

एका शक्तिः शिवैकोऽपि शक्तिमानुच्यते शिवः ।
शक्तयः शक्तिमन्तोऽन्ये सर्वशक्तिसमुद्भवाः[2] ॥२७

शिवा ही शक्ति और शिव ही शक्तिमान् कहे जाते हैं। अन्यान्य शक्तियाँ और शक्तिमान् सब शिवशक्ति से समुद्भूत हैं।२७

शक्तिशक्तिमतोर्भेदं वदन्ति परमार्थतः ।
अभेदञ्चानुपश्यन्ति योगिनस्तत्त्वचिन्तकाः ॥२८

पण्डितगण शक्ति और शक्तिमान् में परमार्थतः भेद मानते हैं, किन्तु तत्त्वचिन्तक योगी लोग उनमें अभेद-दर्शन करते हैं।२८

शक्तयो गिरिजा देवी शक्तिमानथ शङ्करः ।
विशेषः कथ्यते चायं पुराणे ब्रह्मवादिभिः ॥२९

पार्वती देवी शक्तिस्वरूपा हैं और शंकर शक्तिमान् है। इनकी यही विशेषता ब्रह्मवादियों ने पुराण में कही है।२९

भोग्या विश्वेश्वरी देवी महेश्वरपतिव्रता ।
प्रोच्यते भगवान्भोक्ता कपर्दी नीललोहितः ॥३०

महेश्वरपतिव्रता विश्वेश्वरी देवी भोग्या हैं और भगवान् नीललोहित कपर्दी (शिव) भोक्ता कहे जाते हैं।३०

मन्ता विश्वेश्वरो देवः शङ्करो मन्मथान्तकः ।
प्रोच्यते मतिरीशानी मन्तव्या च विचारतः ॥३१

कन्दर्पनाशक विश्वेश्वर भगवान् शंकर मन्ता (मननशील) हैं और ईशानी (गिरिजा) मन्तव्या (मनन करने योग्य) हैं—ऐसा विद्वानों का विचार है।३१

इत्येतदखिलं विप्राः शक्तिशक्तिमदुद्भवम्[3] ।
प्रोच्यते सर्ववेदेषु मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥३२

---

१. माययैवं प्रभिद्यते इति, माया चैवं इति पा० । २. सर्वे इति पा० । ३. शक्तिसमुद्भवमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विप्रवृन्द ! शक्ति और शक्तिमान् के उद्भव सम्बन्धी सम्पूर्ण विषय सभी वेदों में तत्त्वदर्शी मुनियों ने कहा है ।३२

एतत्प्रदर्शितं दिव्यं देव्या माहात्म्यमुत्तमम् ।
सर्ववेदान्तवादेषु निश्चितं ब्रह्मवादिभिः ॥३३

वेदान्तादि समस्त दर्शनशास्त्रों में ब्रह्मवादी मुनियों ने देवी का यही दिव्योत्तम माहात्म्य निश्चित रूप से दिखाया है ।३३

एकं सर्वगतं सूक्ष्मं कूटस्थमचलं ध्रुवम् ।
योगिनस्तत्प्रपश्यन्ति महादेव्याः परं पदम् ॥३४

योगी लोग महादेवी के उसी अद्वितीय, सर्वव्यापी, अतिसूक्ष्म, कूटस्थ, अचल और नित्य परम पद का दर्शन करते हैं ।३४

आनन्दमक्षरं ब्रह्म केवलं निष्कलं परम् ।
योगिनस्तत्प्रपश्यन्ति महादेव्याः परं पदम् ॥३५

योगिवृन्द महादेवी के उसी परम पद को आनन्दस्वरूप, अक्षर (अर्थात् पतन-संभावनारहित), ब्रह्मस्वरूप, अद्वितीय और निष्कल (अंशरहित) देखते हैं ।३५

परात्परतरं तत्त्वं शाश्वतं शिवमच्युतम् ।
अनन्तप्रकृतौ[1] लीनं देव्यस्तत्परमं पदम् ॥३६

शुभं निरञ्जनं शुद्धं निर्गुणं द्वैतवर्ज्जितम् ।
आत्मोपलब्धिविषयं देव्यास्तत्परमं पदम् ॥३७

देवी का वह परम पद परात्परतर, तत्त्व, नित्य, मंगलमय, अच्युत तथा अनन्त प्रकृति में लीन, शुभ, निरञ्जन, शुद्ध, निर्गुण, द्वैतरहित और आत्मज्ञान का विषय है ।३६-३७।

सैषा धात्री विधात्री च परमानन्दमिच्छताम् ।
संसारतापानखिलान्निहन्तीश्वरसंश्रयात् ॥३८

परमानन्द चाहने वाले व्यक्तियों के लिए वह देवी धात्री और विधात्री हैं तथा ईश्वर के आश्रय के कारण वह संसार के समस्त तापों को नष्ट कर देती हैं ।३८

तस्माद्विमुक्तिमन्विच्छन् पार्वती परमेश्वरीम् ।
आश्रयेत्सर्वभूतानामात्मभूतां शिवात्मिकाम् ॥३९

इसलिए मोक्ष चाहने वाला व्यक्ति सकल प्राणियों की आत्मस्वरूपा तथा शिवात्मिका परमेश्वरी पार्वती का आश्रय ग्रहण करे ।३९।

---

१. अनन्तं प्रकृतौ इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लब्ध्वा च पुत्रीं शर्वाणीं तपस्तप्त्वा सुदुश्चरम् ।
सभार्यः शरणं यातः पार्वतीं परमेश्वरीम् ॥४०

अत्यन्त दुश्चर तपस्या द्वारा शर्वाणी को पुत्रीरूप में प्राप्त करके पत्नी मेना सहित हिमवान् परमेश्वरी पार्वती के शरणापन्न हुए ।४०

तां दृष्ट्वा जायमानाञ्च स्वेच्छयैव वराननाम् ।
मेना हिमवतः पत्नी प्राहेदं पर्वतेश्वरम्[1] ॥४१

स्वेच्छा से उत्पन्न होती हुई उस सुमुखी पार्वती को देखकर हिमवान् की पत्नी मेना ने पर्वतराज (हिमालय) से यह कहा ।४१

मेनोवाच

पश्य बालामिमां राजन्राजीव सदृशाननाम् ।
हिताय सर्वभूतानां जाता च तपसावयोः ॥४२

मेना बोली—राजन् ! कमल के समान मुख वाली इस बालिका को देखिए, जो हम दोनों की तपस्या से उत्पन्न हुई हैं ।४२

सोऽपि दृष्ट्वा ततो देवीं तरुणादित्यसन्निभाम् ।
कपर्दिनीं चतुर्वक्त्रां त्रिनेत्रामतिलालसाम् ॥४३

अष्टहस्तां विशालाक्षीं चन्द्रावयवभूषणाम् ।
निर्गुणां सगुणां साक्षात्सदसद्व्यक्तिवर्जिताम् ॥४४

हिमालय ने भी देवी को देखा, जो मध्याह्नकालीन सूर्य के समान चमक रही थीं, उनके सिर पर जटाजूट था, उनके चार मुख थे, तीन नेत्र थे, शोभा महान् थी, आठ हाथ थे, आँखें बड़ी-बड़ी थीं, चन्द्रमा का आभूषण था; वे निर्गुणा, सगुणा, प्रत्यक्षीभूता तथा सत् और असत् व्यक्ति से रहित थीं ।४३-४४।

प्रणम्य शिरसा भूमौ तेजसा चातिविह्वलः ।
भीतः कृताञ्जलिस्तस्याः प्रोवाच परमेश्वरीम् । ४५

उनको भूमि पर माथा टेक कर प्रणाम किया और तेज से अत्यन्त विह्वल हो गये । भयभीत हो हाथ जोड़कर परमेश्वरी से उन्होंने कहा ।४५

हिमवानुवाच

का त्वं देवि विशालाक्षि शशाङ्कावयवाङ्किते[2] ।
न जाने त्वामहं वत्से यथावद्ब्रूहि पृच्छते ॥४६

---

१. परमेश्वरमिति पा० परमेश्वरं पतिमित्यर्थः । २. शशाङ्कावयवान्विता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिमवान् बोले—हे विशाल नेत्रे ! चन्द्रमा से अंकित अवयव वाली ! देवि ! तुम कौन हो ? वत्से ! मैं तुमको नहीं जानता हूँ। तुम ठीक-ठीक अपना परिचय दो ।४६

गिरीन्द्रवचनं श्रुत्वा ततः सा परमेश्वरी ।
व्याजहार महाशैलं योगिनामभयप्रदा ॥४७

गिरिराज की बात सुनकर योगियों को अभय देनेवाली उस परमेश्वरी ने पर्वतराज से कहा ।४७

श्रीदेव्युवाच

मां विद्धि परमां शक्तिं महेश्वरसमाश्रयाम् ॥४८

श्री देवी बोली—मुझे आप महेश्वर के आश्रित परमा शक्ति समझिए ।४८

अनन्यामव्ययामेकां यां पश्यन्ति मुमुक्षवः ।
अहं हि सर्वभावानामात्मा सर्वात्मना[1] शिवा ॥४९

मैं अनन्या, अविनाशिनी एवं अद्वितीया हूँ, जिसे मुमुक्षु लोग देखते हैं। मैं सभी भावों की आत्मा तथा सब प्रकार से मंगलमयी हूँ ।४९

शाश्वतैश्वर्यविज्ञानमूर्तिः[2] सर्वप्रवर्त्तिका ।
अनन्तानन्तमहिमा संसारार्णवतारिणी ॥५०

मैं नित्य ईश्वर सम्बन्धीय विज्ञान मूर्ति और सबको प्रवृत्त करने वाली हूँ। मैं अन्तरहित हूँ। मेरी महिमा की सीमा नहीं है। मैं संसार सागर से तारने वाली हूँ ।५०

दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे रूपमैश्वरम् ।
एतावदुक्त्वा विज्ञानं दत्त्वा हिमवते स्वयम् ॥५१

मैं तुम्हें दिव्य चक्षु देता हूँ, मेरा ईश्वरीय रूप देखो। इतना कहकर स्वयं उन्होंने हिमालय को विशिष्ट ज्ञान दिया ।५१

स्वं रूपं दर्शयामास दिव्यं तत्परमेश्वरम् ।
कोटिसूर्यप्रतीकाशं तेजोबिम्बं निराकुलम् ॥५२
ज्वालामालासहस्राढ्यं कालानलशतोपमम् ।
दंष्ट्राकरालं दुर्द्धर्षं जटामण्डलमण्डितम् ॥५३
किरीटिनं गदाहस्तं शङ्खचक्रधरं तथा ।
त्रिशूलवरहस्तञ्च घोररूपं भयानकम् ॥५४

१. सर्वान्तरा इति पा० । २. शाश्वती सर्वविज्ञानमूर्त्तिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशान्तं सौम्यवदनमनन्ताश्चर्यसंयुतम्[1] ।
चन्द्रावयवलक्ष्माणं चन्द्रकोटिसमप्रभम् ॥५५

किरीटिनं गदाहस्तं नूपुरैरुपशोभितम् ।
दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥५६

शङ्खचक्रधरं काम्यं[2] त्रिनेत्रं कृत्तिवाससम् ।
अण्डस्थं चाण्डबाह्यस्थं बाह्यमाभ्यन्तरं परम्[3] ॥५७

सर्वशक्तिमयं शुभ्रं सर्वाकारं[4] सनातनम् ।
ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रयोगीन्द्रैर्वन्द्यमानपदाम्बुजम् ॥५८

सर्वतः पाणिपादान्तं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वमावृत्य तिष्ठन्तीं[5] ददर्श परमेश्वरीम् ॥५९

फिर देवी ने हिमवान् को परमेश्वर-सम्बन्धी अपना दिव्य रूप दिखलाया। वह रूप करोड़ों सूर्य के समान भास्वर, तेजो विम्बस्वरूप, निराकुल, सहस्रों ज्वालावलियों से युक्त, सहस्रों कालाग्नितुल्य, दंष्ट्राओं से भयंकर, दुर्धर्ष, जटामंडल से मण्डित, मुकुट-युक्त, गदाहस्त, शंख-चक्रधारी, त्रिशूलवरहस्त, घोररूप, भयानक, अत्यन्त शान्त, सौम्य-मुख, अनन्त-आश्चर्य संयुक्त, चन्द्रशेखर, कोटिचन्द्रसदृश प्रभाशाली किरीटधारी, गदाहस्त, नूपुर द्वारा उपशोभित, दिव्य माला तथा वस्त्रधारी, दिव्य गन्ध से अनुलिप्त, शंखचक्र-धारी, कमनीय, त्रिनेत्र, व्याघ्रचर्मपरिधायी, ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत तथा ब्रह्माण्ड के बहिर्भूत, सबके बहिःस्थ एवं आभ्यन्तरस्थ, सर्वशक्तिमय, शुभ्रवर्ण, सर्वाकार एवं सनातन, ब्रह्मा, इन्द्र, उपेन्द्र और योगिन्द्रों द्वारा वन्दनीय चरणकमलवाला, सब ओर हाथ-पैर वाला और सब ओर नेत्र, शिर एवं मुख वाला था। ऐसा रूप धारण किये हुई परमेश्वरी को सबको आवृत करके खड़ी हुई देखा।५२-५९।

दृष्ट्वा तदीदृशं रूपं देव्या माहेश्वरं परम् ।
भयेन च समाविष्टः स राजा हृष्टमानसः ॥६०

देवी का वैसा श्रेष्ठ माहेश्वर रूप देखकर राजा हिमालय भययुक्त तथा प्रसन्नचित्त हो गये।६०

आत्मन्याधाय चात्मानमोङ्कारं समनुस्मरन् ।
नाम्नामष्टसहस्रेण तुष्टाव परमेश्वरीम् ॥६१

---

१. अनन्तैश्वर्यसंयुतम् इति पा०। २. सौम्यामिति पा०। ३. पुरमिति, पुरं शरीरमित्यर्थः। ४. सर्वाधारमनामयमिति पा०। ५ तिष्ठन्तं सर्वतः श्रुतिमत्परमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे परमात्मा से आत्मा का संयोग करके ओंकार उच्चारण पूर्वक आठ हजार नामों से परमेश्वरी की स्तुति करने लगे ।६१

हिमवानुवाच

शिवोमा परमा शक्तिरनन्ता निष्कलामला ।
शान्ता माहेश्वरी नित्या शाश्वती परमाक्षरा ॥६२

हिमवान् बोले--शिवा, उमा, परमा, शक्ति, अनन्ता, निष्कला, अमला, शान्ता, माहेश्वरी, नित्या, शाश्वती, परमाक्षरा ।६२

अचिन्त्या केवलानन्त्या शिवात्मा परमात्मिका ।
अनादिरव्यया शुद्धा देवात्मा सर्वगाचला ॥६३

अचिन्त्या, केवला, अनन्त्या, शिवात्मा, परमात्मिका, अनादि, अव्यया, शुद्धा, देवात्मा, सर्वगा, अचला ।६३

एकानेकविभागस्था मायातीता सुनिर्मला ।
महामाहेश्वरी सत्या महादेवी निरञ्जना ॥६४

एक और अनेक विभाग में स्थित, माया से अतीत, अत्यन्त निर्मल, महामाहेश्वरी, सत्या, महादेवी, निरञ्जना ।६४

काष्ठा सर्वान्तरस्था च चिच्छक्तिरतिलालसा ।
नन्दा[1] सर्वात्मिका विद्या ज्योतीरूपामृताक्षरा ॥६५

काष्ठा, सबके अन्तर में रहने वाली, चित् शक्ति, अतिलालसा, नन्दा, सर्वात्मिका, विद्या, ज्योतीरूपा, अमृता, अक्षरा ।६५

शान्तिः प्रतिष्ठा सर्वेषां निवृत्तिरमृतप्रदा ।
व्योममूर्त्तिर्व्योमलया व्योमाधाराच्युतामरा ॥६६

शान्ति, प्रतिष्ठा, निवृत्ति, अमृतप्रदा, व्योममूर्ति, व्योमलया, व्योमाधारा, अच्युता, अमरा ।६६

अनादिनिधनामोघा कारणात्माकलाकुला ।
स्वतः[2] प्रथमजा नाभिरमृतस्यात्मसंश्रया ॥६७

अनादिनिधना, अमोघा, कारणात्मा, कलाकुला, स्वतः, प्रथमजा, अमृतनाभि, आत्मसंश्रया ।६७

---

१. तारा इति पा० । २. ऋतुरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणेश्वरप्रिया माता महामहिषवासिनी[1] ।
प्राणेश्वरी प्राणरूपा प्रधानपुरुषेश्वरी ॥६८

प्राणेश्वरप्रिया, माता, महामहिषवासिनी प्राणेश्वरी, प्राणरूपा, प्रधान पुरुषेश्वरी ।६८।

महामाया सुदुष्पूरा मूलप्रकृतिरीश्वरी ।
सर्वशक्तिकलाकारा ज्योत्स्ना द्यौर्महिमास्पदा ॥६९

महामाया, सुदुष्कूला, मूलप्रकृति, ईश्वरी, सर्वशक्तिकलाकारा, ज्योत्स्ना, द्यौः, महिमास्पदा ।६९

सर्वकार्यनियंत्री च सर्वभूतेश्वरेश्वरी ।
संसारयोनिः सकला सर्वशक्तिसमुद्भवा ॥७०

सर्वकामनियन्त्री, सर्वभूतेश्वरेश्वरी, संसारयोनि, सकला, सर्वशक्तिसमुद्भवा ।७०

संसारपोता[2] दुर्वारा दुर्निरीक्ष्या दुरासदा ।
प्राणशक्तिः प्राणविद्या योगिनी परमा कला ॥७१

संसारपोता, दुर्वारा, दुर्निरीक्ष्या, दुरासदा, प्राणशक्ति, प्राणविद्या, योगिनी, परमा, कला ।७१

महाविभूतिर्दुर्द्धर्षा मूलप्रकृतिसम्भवा ।
अनाद्यनन्तविभवा परमाद्यापकर्षिणी ॥७२

महाविभूति, दुर्धर्षा, मूलप्रकृतिसम्भवा, अनाद्यनन्तविभवा, परमाद्यापकर्षिणी ।७२

सर्गस्थित्यन्तकरिणी सुदुर्वाच्या दुरत्यया[3] ।
शब्दयोनिः शब्दमयी नादाख्या नादविग्रहा ॥७३

सर्गस्थित्यन्तकरणी, सुदुर्वाच्या, दुरत्यया, शब्द-योनि, शब्दमयी, नादाख्या, नादविग्रहा ।७३

अनादिरव्यक्तगुणा महानन्दा सनातनी ।
आकाशयोनिर्योगस्था महायोगेश्वरेश्वरी ॥७४

अनादि, अव्यक्तगुणा, महानन्दा, सनातनी, आकाशयोनि, योगस्था, महायोगेश्वरेश्वरी ।७४

---

१. महामहिषघातिनी इति, वाहिनीति पा० । २. संसारपारा इति पा० । ३. दुराराध्या इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महामाया सुदुष्पारा मूलप्रकृतिरीश्वरी ।
प्रधानपुरुषातीता प्रधानपुरुषात्मिका ॥७५

महामाया, सुदुष्पारा, मूलप्रकृति, ईश्वरी, प्रधानपुरुषातीता, प्रधानपुरुषात्मिका ।७५

पुराणा[1] चिन्मयी पुंसामादिपुरुषरूपिणी ।
भूतान्तरस्था[2] कूटस्था महापुरुषसंज्ञिता ॥७६

पुराणा, चिन्मयी, पुरुषों की आदिपुरुषरूपिणी, भूतान्तरस्था, कूटस्था, महापुरुषसंज्ञिता ।७६

जन्ममृत्युजरातीता सर्वशक्तिसमन्विता[3] ।
व्यापिनी चानवच्छिन्ना प्रधानानुप्रवेशिनी ॥७७

जन्म, मृत्यु और जरावस्था से परे, सर्वशक्ति-समन्विता, व्यापिनी, अनवच्छिना, प्रधानानुप्रवेशिनी ।७७

क्षेत्रज्ञशक्तिरव्यक्तलक्षणा मलवर्जिता[4] ।
अनादिमायासम्भिन्ना त्रितत्त्वा प्रकृतिग्रहा ॥७८

क्षेत्रज्ञशक्ति, अव्यक्तलक्षणा, मलवर्जिता, अनादिमायासम्भिन्ना, त्रितत्त्वा, प्रकृतिग्रहा ।७८

महामायासमुत्पन्ना तामसी पौरुषी ध्रुवा ।
व्यक्ताव्यक्तात्मिका कृष्णा रक्ता शुक्ला प्रसूतिका ॥७९

महामायासमुत्पन्ना, तामसी, पौरुषी, ध्रुवा, व्यक्ता, व्यक्तात्मिका, कृष्णा, रक्ता, शुक्ला, प्रसूतिका ।७९

अकार्या कार्यजननी नित्यं प्रसवधर्मिणी ।
सर्गप्रलयनिर्मुक्ता सृष्टिस्थित्यन्तधर्मिणी ॥८०

अकार्या, कार्यजननी, नित्यप्रसवधर्मिणी, सर्गप्रलयनिर्मुक्ता, सृष्टिस्थित्यन्तधर्मिणी ।८०

ब्रह्मगर्भा चतुर्विंशा[5] पद्मनाभाच्युतात्मिका ।
वैद्युती शाश्वती[6] योनिर्जगन्मातेश्वरप्रिया ॥८१

ब्रह्मगर्भा, चतुर्विंशा, पद्मनाभा, अच्युतात्मिका, वैद्युती, शाश्वती, योनि, जगन्माता, ईश्वरप्रिया ।८१

---

१. पुराणी इति पा० । २. भूतान्तरात्मा इति पा० । ३. समुद्भवा इति पा० । ४. सत्त्ववर्जिता इति पा० । ५. चतुर्विंशा चतुर्विंशतितत्त्वरूपा इति भावः । चतुर्भेदा इति, चतुर्वेदा इति पा० । ६. भास्वती इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वाधारा महारूपा सर्वैश्वर्यसमन्विता ।
विश्वरूपा महागर्भा विश्वेशेच्छानुवर्तिनी ॥८२

सर्वाधारा, महारूपा, सर्वैश्वर्यसमन्विता, विश्वरूपा, महागर्भा, विश्वेशेच्छानुवर्तिनी ।८२

महीयसी[1] ब्रह्मयोनिः महालक्ष्मीसमुद्भवा ।
महाविमानमध्यस्था महानिद्रात्महेतुका[2] ॥८३

महीयसी, ब्रह्मयोनि, महालक्ष्मीसमुद्भवा, महाविमान के मध्य में स्थित, महानिद्रा, आत्महेतुका ।८३

सर्वसाधारणी सूक्ष्मा ह्यविद्या पारमार्थिका ।
अनन्तरूपानन्तस्था देवी पुरुषमोहिनी ॥८४

सर्वसाधारणी, सूक्ष्मा, अविद्या, पारमार्थिका, अनन्तरूपा, अनन्तस्था, पुरुषमोहिनी ।८४

अनेकाकारसंस्थाना कालत्रयविवर्जिता ।
ब्रह्मजन्मा हरेर्मूर्तिर्ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका ॥८५

अनेक आकारों में अवस्थिता, कालत्रयविवर्जिता, ब्रह्मजन्मा हरि की मूर्ति, ब्रह्म-विष्णुशिवात्मिका ।८५

ब्रह्मेशविष्णुजननी ब्रह्माख्या ब्रह्मसंश्रया ।
व्यक्ता प्रथमजा ब्राह्मी महती ब्रह्मरूपिणी[3] ॥८६

ब्रह्मेश-विष्णु-जननी, ब्रह्माख्या, ब्रह्मसंश्रया, व्यक्ता, प्रथमजा, ब्राह्मी, महती ब्रह्मरूपिणी ।८६

वैराग्यैश्वर्यधर्मात्मा ब्रह्ममूर्तिर्हृदि स्थिता ।
अपां योनिः स्वयम्भूतिर्मानसी तत्त्वसम्भवा[4] ॥८७

वैराग्यैश्वर्यधर्मात्मा, ब्रह्ममूर्ति, हृदिस्थिता, अपांयोनि, स्वयम्भूति, मानसी, तत्त्वसंभवा ।८७

ईश्वराणी च शर्वाणी शंकरार्द्धशरीरिणी ।
भवानी चैव रुद्राणी महालक्ष्मीरथाम्बिका ॥८८

ईश्वराणी, शर्वाणी, शंकरार्धशरीरिणी, भवानी, रुद्राणी, महालक्ष्मी, अम्बिका ।८८

---

१. महामाया महायोनिः इति पा० । २. महानिद्रार्थहेतुका इति पा० । ३. ज्ञानरूपिणीति पा० । ४. तत्त्वसंश्रया इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेश्वरसमुत्पन्ना भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।
सर्वेश्वरी सर्ववन्द्या नित्यं मुदितमानसा ॥८९

महेश्वरसमुत्पन्ना, भुक्तिमुक्तिफलप्रदा, सर्वेश्वरी, सर्ववन्द्या, नित्यमुदितमानसा ।८९

ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रनमिता शंकरेच्छानुवर्तिनी ।
ईश्वरार्द्धासनगता महेश्वरपतिव्रता ॥९०

ब्रह्मेन्द्रोपेन्द्रनमिता, शंकरेच्छानुवर्तिनी, ईश्वरार्धासनगता, महेश्वरपतिव्रता ।९०

सकृद्विभाता[1] सर्वार्त्तिसमुद्रपरिशोषिणी ।
पार्वती हिमवत्पुत्री परमानन्ददायिनी ॥९१

सकृद्विभाता, सर्वार्तिसमुद्रपरिशोषिणी, पार्वती, हिमवत्पुत्री, परमानन्ददायिनी ।९१

गुणाढ्या योगजा[2] योग्या ज्ञानमूर्तिर्विकासिनी।
सावित्री कमला लक्ष्मीः श्रीरनन्तोरसि स्थिता ॥९२

गुणाढ्या, योगजा, योग्या, ज्ञानमूर्ति, विकासिनी, सावित्री, कमला, लक्ष्मी, श्री, अनन्ता, उरसिस्थिता ।९२

सरोजनिलया गंगा[3] योगनिद्रा सुरार्दिनी[4] ।
सरस्वती सर्वविद्या जगज्ज्येष्ठा सुमंगला ॥९३

सरोजनिलया, गंगा, योगनिद्रा, सुरार्दिनी, सरस्वती, सर्वविद्या, जगज्ज्येष्ठा, सुमंगला ।९३

वाग्देवी वरदा[5] वाच्या कीर्त्तिः सर्वार्थसाधिका[6] ।
योगीश्वरी[7] ब्रह्मविद्या महाविद्या सुशोभना ॥९४

वाग्देवी, वरदा, वाच्या, कीर्ति, सर्वार्थसाधिका, योगीश्वरी, ब्रह्मविद्या, महाविद्या, सुशोभना ।९४

गुह्यविद्यात्मविद्या च धर्मविद्यात्मभाविता ।
स्वाहा विश्वम्भरा सिद्धिः स्वधा मेधा धृतिःश्रुतिः ॥९५

गुह्यविद्या, आत्मविद्या, धर्मविद्या, आत्मभाविता, स्वाहा, विश्वम्भरा, सिद्धि, स्वधा, मेधा, धृति, श्रुति ।९५

---

१. अजा दुस्तरसंसारसमुद्रपरिशोषिणी इति पा० । २. योगदा इति पा० । ३. मुद्रा इति पा० । ४. सुगन्धिनी इति, शुचिव्रता इति पा० । ५. वरदा अवाच्या अनवद्या इत्यर्थः । वरदा वाणी इति पा० । ६. सर्वातिशायिका इति पा० । ७. वागीश्वरीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीतिः सुनीतिः सुकृतिर्माधवी नरवाहिनी ।
पूज्या विभावती[1] सौम्या भोगिनी भोगशायिनी ॥९६

नीति, सुनीति, सुकृति, माधवी, नरवाहिनी, पूज्या, विभावती, सौम्या, भोगिनी, भोगशायिनी ।९६

शोभा च शंकरी[2] लोला मालिनी परमेष्ठिनी ।
त्रैलोक्यसुन्दरी नम्या[3] सुन्दरी कामचारिणी ॥९७

शोभा, शंकरी, लोला, मालिनी, परमेष्ठिनी, त्रैलोक्यसुन्दरी, नम्या, सुन्दरी, कामचारिणी ।९७

महानुभावा सत्त्वस्था[4] महामहिषमर्द्दिनी ।
पद्मनाभा[5] पापहरा विचित्रमुकुटांगदा[6] ॥९८

महानुभावा, सत्त्वस्था, महामहिषमर्दिनी, पद्मनाभा, पापहरा, विचित्रमुकुटांगदा ।९८

कान्ता चित्राम्बरधरा दिव्याभरणभूषिता ।
हंसाख्या व्योमनिलया जगत्सृष्टिविवर्द्धिनी ॥९९

कान्ता, चित्राम्बरधरा, दिव्याभरणभूषिता, हंसाख्या, व्योमनिलया, जगत्सृष्टि-विवर्धिनी ।९९

नियन्त्री यन्त्रमध्यस्था[7] नंदिनी भद्रकालिका ।
आदित्यवर्णा कौबेरी[8] मयूरवरवाहना ॥१००

नियन्त्री, यन्त्रमध्यस्था, नन्दिनी, भद्रकालिका, आदित्यवर्णा, कौबेरी, मयूर-वरवाहना ।१००

वृषासनगता गौरी महाकाली सुरार्चिता[9] ।
अदितिर्नियता रौद्रा पद्मगर्भा विवाहना ॥१०१

वृषासनगता, गौरी, महाकाली, सुरार्चिता, अदिति, नियता, रौद्रा, पद्मगर्भा, विवाहना ।१०१

विरूपाक्षी लेलिहाना महासुरविनाशिनी[10] ।
महाफलानवद्यांगी कामरूपा विभावरी ॥१०२

---

१. विभावरीति, विभाविनीति पा० । २. वंशकरीति पा० । ३. रम्या इति पा० । ४. मध्यस्था इति पा० । ५. पद्ममाला इति पा० । ६. विचित्रमुकुटानना इति पा० । ७. यन्त्रबाह्यस्था इति पा० । ८. कौमारीति पा० । ९. सुगर्विता इति पा० । १०. महापुरनिवासिनीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरूपाक्षी, लेलिहाना, महासुरविनाशिनी, महाफला, अनवद्यांगी, कामरूपा, विभावरी ।१०२

विचित्ररत्नमुकुटा प्रणतार्त्तिप्रभञ्जनी ।
कौशिकी कर्षणी रात्रिस्त्रिदशार्त्तिविनाशिनी ॥१०३

विचित्ररत्नमुकुटा, प्रणतार्तिप्रभञ्जनी, कौशिकी, कर्षणी, रात्रि, त्रिदशार्ति विनाशिनी ।१०३

बहुरूपा[1] स्वरूपा च विरूपा रूपवर्जिता ।
भक्तार्त्तिशमनी भव्या भवतापविनाशिनी[2] ॥१०४

बहुरूपा, स्वरूपा, विरूपा, रूपवर्जिता, भक्तार्तिशमनी । भव्या, भवतापविनाशिनी ।१०४

निर्गुणा नित्यविभवा निःसारा निरपत्रपा ।
तपस्विनी[3] सामगीतिर्भवांकनिलयालया ॥१०५

निर्गुणा, नित्यविभवा, निःसारा, निरपत्रपा, तपस्विनी, सामगीति, भवांकनिलयालया ।१०५

दीक्षा विद्याधरी दीप्ता महेन्द्रविनिपातिनी ।
सर्वातिशायिनी[4] विश्वा सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥१०६

दीक्षा, विद्याधरी, दीप्ता, महेन्द्रविनिपातिनी, सर्वातिशायिनी, विश्वा, सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।१०६

सर्वेश्वरप्रियाभार्या समुद्रान्तरवासिनी ।
अकलंका निराधारा नित्यसिद्धा निरामया ॥१०७

सर्वेश्वरप्रियाभार्या, समुद्रान्तरवासिनी, अकलंका, निराधारा, नित्यसिद्धा, निरामया ।१०७

कामधेनुर्बृहद्गर्भा धीमती मोहनाशिनी ।
निःसंकल्पा निरातङ्का विनया विनयप्रिया ॥१०८

कामधेनु, बृहद्गर्भा, श्रीमती, मोहनाशिनी, निःसंकल्पा, निरातङ्का, विनया, विनयप्रिया ।१०८

---

१. ब्रह्मरूपा सुरूपा चेति, बहुरूपा सुरूपा च इति पा० । २. भवभारविनाशिनीति, भवभावविनाशिनीति पा० । ३. यशस्विनी सामगीतिर्भवाङ्गनिलयालया इति पा० । ४. तरङ्गिणी समाधिस्था इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्वालामालासहस्राढ्या देवदेवी मनोमयी[1] ।
महाभगवती भर्गा वासुदेवसमुद्भवा ॥१०९

ज्वालामालासहस्राढ्या, देवदेवी, मनोमयी, महाभगवती, भर्गा, वासुदेवसमुद्भवा ।१०९।

महेन्द्रोपेन्द्रभगिनी[2] भक्तिगम्या परावरा[3] ।
ज्ञानज्ञेया जरातीता[4] वेदान्तविषया गतिः ॥११०

महेन्द्रोपेन्द्रभगिनी, भक्तिगम्या, परावरा, ज्ञान-ज्ञेया, जरातीता, वेदान्तविषया, गति ।११०

दक्षिणा दहती[5] दीर्घा सर्वभूतनमस्कृता ।
योगमाया विभागज्ञा महामोहा गरीयसी[6] ॥१११

दक्षिणा, दहती, दीर्घा, सर्वभूतनमस्कृता, योगमाया, विभागज्ञा, महामोहा, गरीयसी ।१११

सन्ध्या सर्वसमुद्भूतिर्ब्रह्मविद्याश्रयादिभिः[7] ।
बीजांकुरसमुद्भूतिर्महाशक्तिर्महामतिः ॥११२

सन्ध्या, ब्रह्मविद्याश्रयादि द्वारा सबकी उत्पत्ति-कारण, बीजाङ्कुरसमुद्भूति, महा-शक्ति, महामति ।११२

क्षान्तिः[8] प्रज्ञा चितिः सच्चिन्महाभोगीन्द्रशायिनी ।
विकृतिः शाङ्करी शास्तिर्गणगन्धर्वसेविता[9] ॥११३

क्षान्ति, प्रज्ञा, चिति, सत्चित्, महाभोगीन्द्र-शायिनी, विकृति, शाङ्करी, शास्ति, गणगन्धर्वसेविता ।११३

वैश्वानरी महाशाला महासेना[10] गुहप्रिया ।
महारात्रिः शिवानान्दा[11] शची दुःस्वप्ननाशिनी ॥११४

वैश्वानरी, महाशाला, महासेना, गुहप्रिया, महारात्रि, शिवानन्दा, शची, दुःस्वप्न-नाशिनी ।११४

---

१. मनोन्मनी इति, मनसामुन्मादनीत्यर्थः । प्रयोगोऽयमार्षः । २. महेन्द्रभगिनी भव्या इति पा० । ३. परायणा इति पा० । ४. जनातीता इति पा० ५. दहना दक्षा इति, दहना दाढ्या इति, दहना माया इति, दहनारूढा इति पा० । ६. महीयसी इति, पा० । ७. ब्रह्मवृक्षाश्रया नतिरिति, ब्रह्मवृक्षाश्रया नतिरिति, ब्रह्मवृक्षाश्रयादिरिति पा० । ८. ख्यातिरिति, ज्योतिः प्रज्ञा धृतिः सर्पी इति पा० । ९. शान्तिर्गन्धर्वगणसेविता इति पा० । १०. देवसेना इति पा० । ११. शिवामन्दा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इज्या पूज्या जगद्धात्री दुर्विनेया[1] सुरूपिणी ।
तपस्विनी समाधिस्था त्रिनेत्रा दिवि संस्थिता ॥११५

इज्या, पूज्या, जगद्धात्री, दुर्विनेया, सुरूपिणी, तपस्विनी, समाधिस्था, त्रिनेत्रा, दिवि, संस्थिता ।११५

गुहाम्बिका[2] गुणोत्पत्तिर्महापीठा[3] मरुत्सुता ।
हव्यवाहान्तरागादिः[4] हव्यवाहसमुद्भवा ॥११६

गुहाम्बिका, गुणोत्पत्ति, महापीठा, मरुत्सुता, हव्यवाहान्तरागादि, हव्यवाह-समुद्भवा ।११६

जगद्योनिर्जगन्माता जन्ममृत्युजरातिगा ।
बुद्धिर्महाबुद्धिमती[5] पुरुषान्तरवासिनी ॥११७

जगद्योनि, जगन्माता, जन्ममृत्युजरातिगा, बुद्धि, महाबुद्धिमती, पुरुषान्तर-वासिनी ।११७

तरस्विनी समाधिस्था त्रिनेत्रा दिवि संस्थिता ।
सर्वेन्द्रियमनोमाता[6] सर्वभूतहृदि स्थिता ॥११८

तरस्विनी, समाधिस्था, त्रिनेत्रा, दिविसंस्थिता, सर्वेन्द्रियमनोमाता, सर्वभूत-हृदिस्थिता ।११८

संसारतारिणी विद्या[7] ब्रह्मवादिमनोलया ।
ब्रह्माणी बृहती ब्राह्मी ब्रह्मभूता भवारिणी ॥११९

संसारतारिणी, विद्या, ब्रह्मवादिमनोलया, ब्रह्माणी, बृहती, ब्राह्मी, ब्रह्मभूता, भवारिणी ।११९

हिरण्मयी महारात्रिः संसारपरिवर्त्तिका ।
सुमालिनी सुरूपा च भाविनी हारिणी[8] प्रभा ॥१२०

हिरण्मयी, महारात्रि, संसारपरिवर्तिका, सुमालिनी, सुरूपा, भाविनी, हारिणी, प्रभा ।१२०

उन्मीलनी सर्वसहा सर्वप्रत्ययसाक्षिणी ।
सुसौम्या चन्द्रवदना ताण्डवासक्तमानसा ॥१२१

---

१. दुर्विज्ञेया इति, दुर्विज्ञेयस्वरूपिणी इति पा० । २. गुणात्मिका इति पा० । ३. महाप्रौढा निरुत्सुका इति पा० । ४. हव्यवाहातुरा गाङ्गीति पा० । ५. बुद्धिमतो बुद्धिमतीति बुद्धिमाता, बुद्धिमतीति पा० । ६. भावा । इति पा० । ७. नित्या इति पा० । ८. तारिणीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्मीलनी, सर्वसहा, सर्वप्रत्ययसाक्षिणी, सुसौम्या, चन्द्रवदना, ताण्डवासक्त-मानसा ।१२१

सत्त्वशुद्धिकरी[1] शुद्धिर्मलत्रयविनाशिनी ।
जगत्प्रिया जगन्मूर्स्त्रिमूर्त्तिरमृताश्रया ॥१२२

सत्त्वशुद्धिकरी, शुद्धि, मलत्रयविनाशिनी, जगत्प्रिया, जगन्मूर्ति, त्रिमूर्ति, अमृताश्रया ।१२२

निराश्रया निराहारा निरंकुशपदोद्भवा[2] ।
चन्द्रहस्ता[3] विचित्राङ्गी स्रग्विणी पद्मधारिणी ॥१२३

निराश्रया, निराहारा, निरंकुशपदोद्भवा, चन्द्रहस्ता, विचित्राङ्गी, स्रग्विणी, पद्मधारिणी ।१२३

परावरविधानज्ञा महापुरुषपूर्वजा ।
विश्वेश्वरप्रिया विद्युद्विद्यज्जिह्वा[4] जितश्रमा ॥१२४

परावरविधानज्ञा, महापुरुषपूर्वजा, विश्वेश्वरप्रिया, विद्युत्, विद्युज्जिह्वा, जितश्रमा ।१२४

विद्यामयी सहस्राक्षी सहस्रवदनात्मजा ।
सहस्ररश्मिः सत्त्वस्था[5] महेश्वरपदाश्रया ॥१२५

विद्यामयी, सहस्राक्षी, सहस्रवदनात्मजा, सहस्ररश्मि, सत्त्वस्था, महेश्वर-पदाश्रया ।१२५

क्षालिनि[6] मृण्मयी व्याप्ता तैजसी पद्मबोधिका ।
महामायाश्रया मान्या महादेवमनोरमा ॥१२६

क्षालिनी, मृण्मयी, व्याप्ता, तैजसी, पद्मबोधिका, महामायाश्रया, मान्या, महादेवमनोरमा ।१२६

व्योमलक्ष्मीः सिंहरथा[7] चेकितानामितप्रभा ।
वीरेश्वरी[8] विमानस्था विशोका शोकनाशिनी ॥१२७

व्योमलक्ष्मी, सिंहरथा, चेकितानां, अमितप्रभा, वीरेश्वरी, विमानस्था, विशोका, शोकनाशिनी ।१२७

---

१. तत्त्वशुद्धिकरीति पा० । २. निरंकुशवनोद्भवा इति, निःशङ्का पद्म-जोद्भवा इति पा० । ३. चक्रहस्ता इति पा० । ४. विद्या विद्युज्जिह्वा इति पा० । ५. तत्त्वस्था इति पा० । ६. ज्वालिनी सन्मना इति, सन्मयी इति पा० । ७ सिंहवाहा इति पा० । ८. विश्वेश्वरीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनाहता कुण्डलिनी नलिनी पद्मभासिनी[1] ।
सदानन्दा[2] सदाकीर्तिः सर्वभूताश्रयस्थिता ॥१२८

अनाहता, कुण्डलिनी, नलिनी, पद्मभासिनी, सदानन्दा, सदाकीर्ति, सर्वभूताश्रयस्थिता ।१२८

वाग्देवता ब्रह्मकला कलातीता कलारणी ।
ब्रह्मश्रीर्ब्रह्महृदया ब्रह्मविष्णुशिवप्रिया ॥१२९

वाग्देवता, ब्रह्मकला, कलातीता, कलारणी, ब्रह्मश्री, ब्रह्महृदया, ब्रह्मविष्णुशिवप्रिया ।१२९

व्योमशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिः परा गतिः ।
क्षोभिका बन्धिका भेद्या भेदाभेदविवर्जिता ॥१३०[3]

व्योमशक्ति, क्रियाशक्ति, ज्ञानशक्ति, परागति, क्षोभिका, बन्धिका, भेद्या, भेदाभेदविवर्जिता ।१३०

अभिन्ना भिन्नसंस्थाना वशिनी[4] वंशहारिणी ।
गुह्यशक्तिर्गुणातीता सर्वदा सर्वतोमुखी ॥१३१

अभिन्ना, भिन्नसंस्थाना, वशिनी, वंशहारिणी, गुह्यशक्ति, गुणातीता, सर्वदा, सर्वतोमुखी ।१३१

भगिनी भगवत्पत्नी सकला कालहारिणी[5] ।
सर्ववित् सर्वतोभद्रा गुह्यातीता गुहावलिः ॥१३२

भगिनी, भगवत्पत्नी, सकला, कालहारिणी, सर्ववित्, सर्वतोभद्रा, गुह्यातीता, गुहावलि ।१३२

प्रक्रिया योगमाता च गङ्गा विश्वेश्वरेश्वरी ।
कलिला[6] कपिला कान्ता कमलाभा[7] कलान्तरा ॥१३३

प्रक्रिया, योगमाता, गंगा, विश्वेश्वरेश्वरी, कलिला, कपिला, कान्ता, कमलाभा, कलान्तरा ।१३३

पुण्या पुष्करिणी भोक्त्री पुरन्दरपुरस्सरा ।
पोषिणी परमैश्वर्यभूतिदा भूतिभूषणा ॥१३४

---

१. पद्मजा पद्मवासिनी इति पा० । २. शतानन्दा सतां कीर्तिः सर्वभूताशयस्थिता इति पा० । ३. कामशक्तिरिति पा० । ४. वंशिनीति पा० । ५. कालवारिणीति पा० । ६. कपिला कापिला इति पा० । ७. कनकाभा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुण्या, पुष्करिणी, भोक्त्री, पुरन्दरपुरःसरा, पोषिणी, परमैश्वर्यभूतिदा, भूतिभूषणा ।१३४

पञ्चब्रह्मसमुत्पत्तिः[1] परमार्थार्थविग्रहा[2] ।
धर्मोदया भानुमती[3] योगिज्ञेया मनोजवा ॥१३५

पञ्चब्रह्मसमुत्पत्ति, परमार्थार्थविग्रहा, धर्मोदया, भानुमती, योगिज्ञेया, मनोजवा ।१३५

मनोरमा[4] मनोरस्का[5] तापसी वेदरूपिणी ।
वेदशक्तिर्वेदमाता वेदविद्याप्रकाशिनी ॥१३६

मनोरमा, मनोरस्का, तापसी, वेदरूपिणी, वेदशक्ति, वेदमाता, वेदविद्याप्रकाशिनी ।१३६

योगेश्वरेश्वरी[6] माता महाशक्तिर्मनोमयी ।
विश्वावस्था वियन्मूर्त्तिर्विद्युन्माला विहायसी ॥१३७

योगेश्वरेश्वरी, माता, महाशक्ति, मनोमयी, विश्वावस्था, वियन्मूर्ति, विद्युन्माला, विहायसी ।१३७

किन्नरी सुरभी[7] विद्या नन्दिनी नन्दिवल्लभा[8] ।
भारती परमानन्दा परापरविभेदिका ॥१३८

किन्नरी, सुरभी, विद्या, नन्दिनी, नन्दिवल्लभा, भारती, परमानन्दा, परापरविभेदिका ।१३८

सर्वप्रहरणोपेता काम्या[9] कामेश्वरेश्वरी ।
अचिन्त्यानन्तविभवा[10] भूलेखा कनकप्रभा ॥१३९

सर्वप्रहरणोपेता, काम्या, कामेश्वरेश्वरी, अचिन्त्या, अनन्तविभवा, भूलेखा, कनकप्रभा ।१३९

---

१. गणेशभास्करशिव विष्णुशक्तय इति पञ्चविधं ब्रह्म । २. परमात्मार्थविग्रहा इति पा० । ३. धर्ममुखी इति पा० । ४. मनोहरीति पा० । ५. महोरःस्था इति पा० । ६. वागीश्वरेश्वरीति पा० । ७. सुरभिर्वन्द्या इति पा० । ८. नन्दवल्लभा इति पा० । ९. काम्या कामेश्वरेश्वरी इति पा० । १०. अचिन्त्याचिन्त्यविभवा इति, अचिन्त्यानन्दविभवा हृल्लेखा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूष्माण्डी धनरत्नाढ्या सुगन्धा गन्धदायिनी[1] ।
त्रिविक्रमपदोद्भूता धनुष्पाणिः शिवोदया ॥१४०

कूष्माण्डी, धनरत्नाढ्या, सुगन्धा, गन्धदायिनी, त्रिविक्रमपदोद्भूता, धनुष्पाणि, शिवोदया ।१४०

सुदुर्लभा धनाध्यक्षा धन्या पिंगललोचना ।
शान्तिः[2] प्रभावती दीप्तिः पङ्कजायतलोचना ॥१४१

सुदुर्लभा, धनाध्यक्षा, धन्या, पिंगललोचना, शान्ति, प्रभावती, दीप्ति, पंकजायतलोचना ।१४१

आद्या भूः[3] कमलोद्भूता गवां माता रणप्रिया ।
सत्क्रिया गिरिशा[4] शुद्धिर्नित्यपुष्टा निरन्तरा ॥१४२

आद्या, भू, कमलोद्भूता, गवां माता, रणप्रिया, सत्क्रिया, गिरिशा, शुद्धि, नित्यपुष्टा, निरन्तरा ।१४२

दुर्गा कात्यायनी चंडी चर्चितांगा[5] सुविग्रहा ।
हिरण्यवर्णा जगती[6] जगद्यंत्रप्रवर्तिका ॥१४३

दुर्गा, कात्यायनी, चंडी, चर्चितांगा, सुविग्रहा, हिरण्यवर्णा, जगती, जगद्यंत्रप्रवर्तिका ।१४३

मन्दराद्रिनिवासा[7] च गरहा[8] स्वर्णमालिनी ।
रत्नमाला रत्नगर्भा पुष्टिर्विश्वप्रमाथिनी[9] ॥१४४

मन्दराद्रिनिवासा, गरहा, स्वर्णमालिनी, रत्नमाला, रत्नगर्भा, पुष्टिविश्वप्रमाथिनी ।१४४

पद्मनाभा[10] पद्मनिभा नित्यरुष्टामृतोद्भवा[11] ।
धुन्वती दुष्प्रकम्पा च सूर्यमाता दृषद्वती ॥१४५

पद्मनाभा, पद्मनिभा, नित्यरुष्टा, अमृतोद्भवा, धुन्वती, दुष्प्रकम्पा, सूर्यमाता, दृषद्वती ।१४५

---

१. वाहिनी पा० । २. भ्रान्तिरिति पा० । ३. हृत्कमलोद्भूता इति; हृल्लेखा इति पा० । ४. शुक्ला नित्यशुद्धा इति पा० गिरिजा शद्धा नित्यतुष्टा निरञ्जना इति पा० । ५. चर्चिता शान्तविग्रहा इति पा० । ६. रजनीति पा० । ७. महारातीति पा० । ८. शारदा इति पा० । ९. पृथ्वीविश्वप्रमाथिनीति, प्रसाधनीति पा० । १०. पद्माननेति पा० । ११. नित्यतुष्टा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेन्द्रभगिनी सौम्या[1] वरेण्या वरदायिका ।
कल्याणी कमलावासा पञ्चचूडा वरप्रदा ॥१४६

महेन्द्रभगिनी, सौम्या, वरेण्या, वरदायिका, कल्याणी, कमलावासा, पञ्चचूडा, वरप्रदा ।१४६

वाच्यामरेश्वरी[2] विद्या दुर्ज्जया दुरतिक्रमा ।
कालरात्रिर्महावेगा वीरभद्रप्रिया हिता ॥१४७

वाच्या, अमरेश्वरी, विद्या, दुर्जया, दुरतिक्रमा, कालरात्रि, महावेगा, वीरभद्रप्रिया, हिता ।१४७

भद्रकाली जगन्माता भक्तानां भद्रदायिनी[3] ।
करालाः पिंगलाकारा कामभेदा महास्वना[4] ॥१४८

भद्रकाली, जगन्माता, भक्तमंगलदायिनी, करालाः, पिंगलाकारा, कामभेदा, महास्वना ।१४८

यशस्विनी[5] यशोदा च षडध्वपरिवर्त्तिका[6] ।
शङ्खिनी पद्मिनी सांख्या[7] सांख्ययोगप्रवर्त्तिका ॥१४९

यशस्विनी, यशोदा, षडध्वपरिवर्तिका, ध्वजा, शंखिनी, पद्मिनी, सांख्या, सांख्ययोगप्रवर्तिका ।१४९

चैत्रा[8] संवत्सरारूढा जगत्सम्पूरणी ध्वजा ।
शुंभारिःखेचरी[9] स्वस्था कंबुग्रीवाकलिप्रिया ॥१५०

चैत्रा, संवत्सरारूढा, जगत्सम्पूरणी, ध्वजा, शुभारि, खेचरी, स्वस्था, कंबुग्रीवा, कलिप्रिया ।१५०

खगध्वजा खगारूढा वाराही[10] पूगमालिनी ।
ऐश्वर्यपद्मनिलया विरक्ता गरुडासना ॥१५१

खगध्वजा; खगारूढा, वाराही, पूगमालिनी, ऐश्वर्य-पद्मनिलया, विरक्ता, गरुडासना ।१५१

जयन्ती हृद्गुहागम्या गह्वरेष्ठा गणाग्रणीः ।
सङ्कल्पसिद्धा साम्यस्था सर्वविज्ञानदायिनी[11] ॥१५२

---

१. मान्या इति पा० । २. वाच्या वरेश्वरी वन्द्या इति, वाच्या वरेश्वरीति पा० । ३. भक्तिदायिनीति पा० । ४. महामदा इति पा० । ५. तपस्विन्नीति पा० । ६. षडत्त्व परिवर्त्तिनीति, पद्मस्थपरिवर्त्तिनीति पा० । ७. संख्यासांख्ययोगप्रवर्त्तिका-इति पा० । ८. चैत्रा संवत्सरी रुद्रा जगत्संपूरणीन्द्रजा इति पा० । ९. शुभा विश्वचरीति पा० । १०. परार्गा परमालिनीति, वरार्हा भगमालिनीति पा० । ११. दायिका इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयन्ती, हृद्गुहागम्या, गह्वरेष्ठा, गणाग्रणी, संकल्पसिद्धा, साम्यस्था, सर्वविज्ञानदायिनी ।१५२

कलिः[1] कल्कविहन्त्री च गुह्योपनिषदुत्तमा ।
निष्ठा[2] दृष्टिः स्मृतिर्व्याप्तिः पुष्टिस्तुष्टिः[3] क्रियावती ॥१५३

कलि, कल्कविहन्त्री, गुह्योपनिषदुत्तमा[4] निष्ठा, दृष्टि, स्मृति, व्याप्ति, पुष्टि, तुष्टि, क्रियावती ।१५३

विश्वामरेश्वरेशाना भुक्तिर्मुक्तिः शिवामृता ।
लोहिता सर्पमाला[5] च भीषणी वनमालिनी ॥१५४

विश्वामरेश्वरेशाना, भुक्ति, मुक्ति, शिवा, अमृता, लोहिता, सर्पमाला, भीषणी, वनमालिनी ।१५४

अनन्तशयनानन्ता[6] नरनारायणोद्भवा ।
नृसिंही दैत्यमथनी शङ्खचक्रगदाधरा ॥१५५

अनन्तशयना, अनन्ता, नरनारायणोद्भवा, नृसिंही, दैत्यमथनी, शंखचक्रगदाधरा ।१५५

सङ्कर्षणी[7] समुत्पत्तिरम्बिका पादसंश्रया ।
महाज्वाला महाभूतिः[8] सुमूर्त्तिः सर्वकामधुक् ॥१५६

संकर्षणी, समुत्पत्ति, अम्बिका, पादसंश्रया, महाज्वाला, महाभूति, सुमूर्ति, सर्वकामधुक् ।१५६

सुभ्रा[9] च सुस्तना सौरी धर्मकामार्थमोक्षदा ।
भ्रूमध्यनिलया पूर्वा पुराणपुरुषारणिः[9] ॥१५७

शुभ्रा, सुस्तना, सौरी, धर्मकामार्थमोक्षदा, भ्रूमध्यनिलया, पूर्वा, पुराणपुरुषारणि ।१५७

महाविभूतिदा मध्या सरोजनयना समा ।
अष्टादशभुजानाद्या नीलोत्पलदलप्रभा ॥१५८

महाविभूतिदा, मध्या, सरोजनयना, समा, अष्टादशभुजा, अनाद्या, नीलोत्पलदलप्रभा ।१५८

---

१. कलिकल्मषहन्त्री चेति पा० । २. नित्या इति पा० । ३. सृष्टिरिति पा० । ४. सर्वमाता इति, पा० । ५. शयनानन्या इति पा० । ६. सङ्कर्षण इति पा० । ७. महामूर्त्तिरिति, महासूतिरि इति पा० । ८. सुप्रभा इति, सुश्रोणिरिति पा० । ९. रतिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वशक्त्यासनारूढा[1] धर्माधर्मविवर्ज्जिता[2] ।
वैराग्यज्ञाननिरता निरालोका निरिन्द्रिया ॥१५९

सर्वशक्त्यासनारूढा, धर्माधर्मविवर्जिता, वैराग्यज्ञाननिरता, निरालोका, निरिन्द्रिया ।१५९

विचित्रगहनाधारा[3] शाश्वतस्थानवासिनी ।
स्थानेश्वरी निरानन्दा त्रिशूलवरधारिणी ॥१६०

विचित्रगहनाधारा, शाश्वतस्थानवासिनी, स्थानेश्वरी, निरानन्दा, त्रिशूलवरधारिणी ।१६०

अशेषदेवतामूर्त्तिर्देवता वरदेवता ।
गणाम्बिका गिरेः पुत्री निशुम्भविनिपातिनी ॥१६१

अशेषदेवतामूर्ति, देवता, वरदेवता, गणाम्बिका, गिरेःपुत्री, निशुम्भविनिपातिनी ।१६१

अवर्णा[4] वर्णरहिता त्रिवर्णा जीवसम्भवा ।
अनन्तवर्णानन्यस्था शङ्करी शान्तमानसा ॥१६२

अवर्णा, वर्णरहिता, त्रिवर्णा, जीवसंभवा, अनन्तवर्णा, अनन्यस्था, शंकरी, शान्तमानसा ।१६२

अगोत्रा[5] गोमती गोप्त्री[6] गुह्यरूपा गुणोत्तरा ।
गौर्गीर्गव्यप्रिया[7] गौणी गणेश्वरनमस्कृता ॥१६३

अगोत्रा, गोमती, गोप्त्री, गुह्यरूपा, गुणोत्तरा, गो, गीः, गव्यप्रिया, गौणी, गणेश्वरनमस्कृता ।१६३

सत्यभामा[8] सत्यसन्धा त्रिसन्ध्या सन्धिवर्ज्जिता ।
सर्ववादाश्रया[9] सांख्या सांख्ययोगसमुद्भवा ॥१६४

सत्यभामा, सत्यसन्धा, त्रिसन्ध्या, सन्धिवर्जिता, सर्ववादाश्रया, सांख्या, सांख्ययोगसमुद्भवा ।१६४

असंख्येयाप्रमेयाख्या शून्या शुद्धकुलोद्भवा ।
बिन्दुनादसमुत्पत्तिःशम्भुवामा शशिप्रभा ॥१६५

---

१. सर्वशक्त्या समारूढा इति पा० । २. सर्वधर्मार्थवर्जिता इति पा० । ३. धीरा इति पा० । ४. स्ववर्णा इति पा० । ५. अगाधा इति पा० । ६. योक्त्रीति पा० । ७. दुर्गा शिवप्रिया गौरीति पा० । ८. सत्यमाता इति पा० । ९. अर्थवाचाश्रया इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असंख्येया, अप्रमेयाख्या, शून्या, शुद्धकुलोद्भवा, बिन्दुनादसमुत्पत्ति, शम्भुवामा, शशिप्रभा ।१६५

पिशङ्गा[1] भेदरहिता मनोज्ञा मधुसूदनी ।
महाश्रीः श्रीसमुत्पत्तिस्तमःपारे प्रतिष्ठिता ॥१६६

पिशङ्गा, भेदरहिता, मनोज्ञा, मधुसूदनी, महाश्रीः, श्रीसमुत्पत्ति, तमः पारे प्रतिष्ठिता ।१६६

त्रितत्त्वमाता[2] त्रिविधा सुसूक्ष्मपदसंश्रया ।
शन्ता भीता मलातीता[3] निर्विकारा शिवाश्रया[4] ॥१६७

त्रितत्त्वमाता, त्रिविधा, सुसूक्ष्मपदसंश्रया, शान्ता, भीता, मलातीता, निर्विकारा, शिवाश्रया ।१६७

शिवाख्या चित्तनिलया शिवज्ञानस्वरूपिणी ।
दैत्यदानवनिर्माथी[5] काश्यपी कालकर्णिका ॥१६८

शिवाख्या, चित्तनिलया, शिवज्ञानस्वरूपिणी, दैत्यदानवनिर्माथी, काश्यपी, कालकर्णिका ।१६८

शास्त्रयोनिः क्रियामूर्त्तिश्चतुर्वर्गप्रदर्शिका ।
नारायणी नरोत्पत्तिः[6] कौमुदी लिङ्गधारिणी ॥१६९

शास्त्रयोनि, क्रियामूर्ति, चतुर्वर्गप्रदर्शिका, नारायणी, नरोत्पत्ति, कौमुदी, लिंगधारिणी ।१६९

कामुकी कलिताभावा[7] परावरविभूतिदा[8] ।
पराङ्गजातमहिमा[9] बडवा वामलोचना ॥१७०

कामुकी, कलिताभावा, परावरविभूतिदा, पराङ्गजातमहिमा, बडवा, वामलोचना ।१७०

सुभद्रा देवकी सीता वेदवेदाङ्गपारगा ।
मनस्विनी मन्युमाता महामन्युसमुद्भवा ॥१७१

सुभद्रा, देवकी, सीता, वेदवेदांगपारगा, मनस्विनी, मन्युमाता, महामन्युसमुद्भवा ।१७१

---

१. विसर्गा इति पा० । २. धामा इति पा० । ३. शान्त्यतीता मनोऽतीता इति पा० । ४. नराश्रया इति पा० । ५. निर्मात्रीति पा० । ६. नरोद्भूतिरिति पा० । ७. ललिताभावा इति पा० । ८. परापरेति पा० । ९. परात्मज्ञानमहिमा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमन्युरमृतास्वादा पुरुहूता पुरुष्टुता[1] ।
अशोच्या[2] भिन्नविषया[3] हिरण्यरजतप्रिया ॥१७२

अमन्यु, अमृतास्वादा, पुरुहूता, पुरुष्टुता, अशोच्या, भिन्नविषया, हिरण्यरजतप्रिया ।१७२

हिरण्यरजनी[4] हैमा हेमाभरणभूषिता ।
विभ्राजमाना दुर्ज्ञेया ज्योतिष्टोमफलप्रदा ॥१७३

हिरण्यरजनी, हैमा, हेमाभरणभूषिता, विभ्राजमाना, दुर्ज्ञेया, ज्योतिष्टोमफलप्रदा ।१७३

महानिद्रासमुद्भूतिरनिद्रा सत्यदेवता ।
दीर्घा ककुद्मिनी हृद्या शांतिदा शांतिवर्द्धिनी ॥१७४

महानिद्रासमुद्भूति, अनिद्रा, सत्यदेवता, दीर्घा, ककुद्मिनी, हृद्या, शान्तिदा, शान्तिवर्धिनी ।१७४

लक्ष्म्यादिशक्तिजननी शक्तिचक्रप्रवर्तिका ।
त्रिशक्तिजननी जन्या षड्भिपरिवर्ज्जिता[5] ॥१७५

लक्ष्म्यादिशक्तिजननी, शक्तिचक्रप्रवर्तिका, त्रिशक्तिजननी, जन्या, षड्भिपरिवर्जिता ।१७५

सुधौता[6] कर्मकरणी युगांतदहनात्मिका ।
संकर्षणो जगद्धात्री कामयोनिः किरीटिनी ॥१७६

सुधौता, कर्मकरणी, युगान्तदहनात्मिका, संकर्षणी, जगद्धात्री, कामयोनि, किरीटिनी ।१७६

ऐंद्री त्रैलोक्यनमिता वैष्णवी परमेश्वरी ।
प्रद्युम्नदयिता दात्री[7] युग्मदृष्टिस्त्रिलोचना ॥१७७

ऐन्द्री, त्रैलोक्यनमिता, वैष्णवी, परमेश्वरी, प्रद्युम्नदयिता, दात्री, युग्मदृष्टि, त्रिलोचना ।१७७

मदोत्कटा हंसगतिः प्रचण्डा चण्डविक्रमा ।
वृषावेशा[8] वियन्माता विन्ध्यपर्वतवासिनी ॥१७८

---

१. पुरस्कृता इति पा० । २. अमोघा इति पा० । ३. भिन्नहृदया इति पा० । ४. हिरण्यराजती हैमा इति, हिरण्यानी हैमवती इति पा० । ५. षड्वर्गपरिवर्त्तिका इति पा० । षड्वर्गः—कामादिगणः षड्भिपदमपि तदर्थकमिति संभावयामः । ६. सुधामा इति, सुधातेति पा० । ७. दान्ता इति पा० । ८. वृषे धर्मे आवेशो यस्याः इत्यर्थः । वृषवेगा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदोत्कटा, हंसगति, प्रचण्डा, चण्डविक्रमा, वृषावेशा, वियन्माता, विन्ध्यपर्वतवासिनी ।१७८

हिमवन्मेरुनिलया कैलासगिरिवासिनी ।
चाणूरहंतृतनया नीतिज्ञा कामरूपिणी ॥१७९

हिमवन्मेरुनिलया, कैलासगिरिवासिनी, चाणूरहन्तृतनया, नीतिज्ञा, कामरूपिणी ।१७९

वेदविद्या व्रतस्नाता ब्रह्मशैलनिवासिनी[1] ।
वीरभद्रप्रजा[2] वीरा महाकामसमुद्भवा ॥१८०

वेदविद्या, व्रतस्नाता, ब्रह्मशैलनिवासिनी, वीरभद्रप्रजा, वीरा, महाकामसमुद्भवा ।१८०

विद्याधरप्रिया सिद्धा विद्याधरनिराकृतिः ।
आप्यायनी हरंती च पावनी पोषणी कला ॥१८१

विद्याधरप्रिया, सिद्धा, विद्याधरनिराकृति, आप्यायनी, हरन्ती, पावनी, पोषणी, कला ।१८१

मातृका मन्मथोद्भूता वारिजा वाहनप्रिया ।
करीषिणी सुधावाणी[3] वीणावादनतत्परा ॥१८२

मातृका, मन्मथोद्भूता वारिजा, वाहनप्रिया, करीषिणी, सुधावाणी, वीणावादनतत्परा ।१८२

सेविता सेविका सेव्या[4] सिनीवाली गरुत्मती ।
अरुंधती हिरण्याक्षी मृगांका मानदायिनी ॥१८३

सेविता, सेविका, सेव्या, सिनीवाली, गरुत्मती, अरुन्धती, हिरण्याक्षी, मृगांका, मानदायिनी ।१८३

वसुप्रदा वसुमती वसोर्द्धारा वसुंधरा ।
धाराधरा वरारोहा[5] परावाससहस्रदा[6] ॥१८४

वसुप्रदा, वसुमती, वसोर्धारा, वसुन्धरा, धाराधरा, वरारोहा, परावाससहस्रदा ।१८४

---

१. धर्मशीलानिलाशनेति, ब्रह्मशैलनिवासिनीति पा० । २. वीरभद्रा प्रजा इति, वीरभद्रप्रिया इति पा० । ३. सधाधारा इति, स्वधावाणी, सुधावीणा इति पा० । ४. सेवा इति पा० । ५. वराननना इति पा० । ६. परावरसहस्रदा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीफला श्रीमती श्रीशा श्रीनिवासा शिवप्रिया ।
श्रीधरा श्रीकरी[1] कल्या श्रीधरार्द्धशरीरिणी ॥१८५

श्रीफला, श्रीमती, श्रीशा, श्रीनिवासा, शिवप्रिया, श्रीधरा, श्रीकरी, कल्या, श्रीधरार्धशरीरिणी ।१८५

अनंतदृष्टिरक्षुद्रा धात्रीशा धनदप्रिया ।
निहंत्री दैत्यसङ्घानां सिंहिका सिंहवासना ॥१८६

अनन्तदृष्टि, अक्षुद्रा, धात्रीशा, धनदप्रिया, दैत्यसंघनिहन्त्री, सिंहिका, सिंहवाहना ।१८६

सुवर्चला[2] च सुश्रोणी सुकीर्त्तिश्छिन्नसंशया ।
रसज्ञा रसदा रामा लेलिहानामृतस्रवा[3] ॥१८७

सुवर्चला, सुश्रोणी, सुकीर्ति, छिन्नसंशया, रसज्ञा, रसदा, रामा, लेलिहाना, अमृतस्रवा ।१८७

नित्योदिता स्वयंज्योतिरुत्सुका मृतजीवना[4] ।
वज्रदण्डा[5] वज्रजिह्वा वैदेही वज्रविग्रहा ॥१८८

नित्योदिता; स्वयंज्योति, उत्सुका, मृतजीवना, वज्रदण्डा, वज्रजिह्वा, वैदेही, वज्रविग्रहा १८८

मङ्गल्या मङ्गला माला निर्मला[6] मलहारिणी ।
गान्धर्वी करुका[7] चान्द्री कम्बलाश्वतरप्रिया ॥१८९

मङ्गल्या, मङ्गला, माला, निर्मला, मलहारिणी, गान्धर्वी, करुका, चान्द्री, कम्बलाश्वतरप्रिया ।१८९

सौदामिनी जनानन्दा[8] भ्रुकुटीकुटिलानना ।
कर्णिकारकरा कक्षा[9] कंसप्राणापहारिणी ॥१९०

सौदामिनी, जनानन्दा, भ्रुकुटी, कुटिलानना, कर्णिकारकरा, कक्षा, कंसप्राणापहारिणी ।१९०

युगन्धरा युगावर्त्ता त्रिसन्ध्या[10] हर्षवर्द्धनी ।
प्रत्यक्षदेवता दिव्या दिव्यगन्धा दिवः[11] परा ॥१९१

---

१. श्रीकरा इति पा० । २. सुषेणा चन्द्रनिलया इति पा० । ३. स्वरा इति पा० । ४. मृगजीवनीति पा० । ५. वज्रचण्डा इति पा० । ६. मलिना इति, मालिनीति पा० । ७. गारुडीति पा० । ८. निजानन्दा इति पा० । ९. यक्षा इति पा० । यक्षी इत्यर्थः । १०. त्रिवर्त्मा इति, त्रिविधा इति पा० । ११. दिवा परा इति, दिवाकरा इति पा० दिवाकरी इत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युगन्धरा[1] युगावर्ता, त्रिसन्ध्या, हर्षवर्धनी, प्रत्यक्षदेवता, दिव्या, दिव्यगन्धा, दिवःपरा ।१९१

शक्रासनगता शाक्री साध्या[2] चारुशरासना ।
इष्टा विशिष्टा शिष्टेष्टा शिष्टाशिष्टप्रपूजिता ॥१९२

शक्रासनगता, शाक्री, साध्या, चारुशरासना, इष्टा, विशिष्टा, शिष्टेष्टा, शिष्टाशिष्टप्रपूजिता ।१९२

शतरूपा शतावर्त्ता विनता सुरभिः सुरा[3] ।
सुरेन्द्रमाता सुद्युम्ना सुषुम्ना सूर्यसंस्थिता ॥१९३

शतरूपा, शतावर्ता, विनता, सुरभि, सुरा, सुरेन्द्र-माता, सुद्युम्ना, सुषुम्ना, सूर्यसंस्थिता ।१९३

समीक्ष्या सत्प्रतिष्ठा च निवृत्तिर्ज्ञानपारगा[4] ।
धर्मशास्त्रार्थकुशला धर्मज्ञा धर्मवाहना ॥१९४

समीक्ष्या, सत्प्रतिष्ठा, निवृत्ति, ज्ञानपारगा, धर्मशास्त्रार्थकुशला, धर्मज्ञा, धर्मवाहना ।१९४

धर्माधर्मविनिर्मात्री धार्मिकाणां शिवप्रदा ।
धर्मशक्तिर्धर्ममयी विधर्मा विश्वधर्मिणी ॥१९५

धर्माधर्मविनिर्मात्री, धार्मिकशिवप्रदा, धर्मशक्ति, धर्ममयी, विधर्मा, विश्व-धर्मिणी ।१९५

धर्मान्तरा[5] धर्ममयी धर्मपूर्वा धनावहा ।
धर्मोपदेष्ट्री धर्मात्मा[6] धर्मगम्या धराधरा ॥१९६

धर्मान्तरा, धर्ममयी, धर्मपूर्वा, धनावहा, धर्मोपदेष्ट्री, धर्मात्मा, धर्मगम्या, धराधरा ।१९६

कापाली[7] शकला मूर्त्तिः कलाकलितविग्रहा ।
सर्वशक्तिविनिर्मुक्ता सर्वशक्त्याश्रयाश्रया[8] ॥१९७

कापाली, शकला, मूर्ति, कलाकलितविग्रहा[9] सर्वशक्तिविनिर्मुक्ता, सर्वशक्त्या-श्रयाश्रया ।१९७

---

१. सान्ध्या वीराशरासना इति पा० । २. सुता इति पा० । ३. वेदपारगा इति पा० । ४. धर्मोत्तरा धर्मवेद्या इति पा० । ५. धर्मस्था इति पा० । ६. कापालीशकरा इति पा० । ७. सर्वशक्तिसमाश्रया इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वा सर्वेश्वरी सूक्ष्मा सूक्ष्मज्ञानस्वरूपिणी ।
प्रधानपुरुषेशेषा[1] महादेवैकसाक्षिणी[2] ॥१९८

सर्वा[1] सर्वेश्वरी, सूक्ष्मा, सूक्ष्मज्ञानस्वरूपिणी, प्रधानपुरुषेशेषा, महादेवैक-साक्षिणी ।१९८

सदाशिवा वियन्मूर्त्तिर्वेदमूर्त्तिरमूर्त्तिका[3] ।
एवं नाम्नां सहस्रेण स्तुत्वासौ हिमवान्गिरिः ॥१९९

भूयः प्रणम्य भीतात्मा प्रोवाचेदं कृताञ्जलिः ।
यदेतदैश्वरं रूपं घोरं[4] ते परमेश्वरि ॥२००

सदाशिवा, वियन्मूर्ति, वेदमूर्ति और अमूर्तिका—इस प्रकार एक हजार नामों से स्तुति करके वे हिमवान् गिरि पुनः प्रणाम करके भयभीत हो हाथ जोड़कर यह बोले—'परमेश्वरी ! तुम्हारा यह ऐश्वर रूप भयंकर है ।१९९-२००।

भीतोऽस्मि साम्प्रतं दृष्ट्वा रूपमन्यत्प्रदर्शय ।
एवमुक्ताथ सा देवी तेन शैलेन पार्वती ॥२०१

संहृत्य दर्शयामास स्वरूपमपरं पुनः ।
नीलोत्पलदलप्रख्यं नीलोत्पलसुगन्धि[5] च ॥२०२

इसे देखकर मैं भयभीत हूँ । सम्प्रति दूसरा रूप दिखाओ । हिमवान् के ऐसा कहने पर वह देवी पार्वती उस रूप को समेटकर पुनः दूसरे रूप में आ गईं । वह रूप नीलकमल के समान था । उसमें नीलकमल जैसा सुगन्ध था ।२०१-२०२।

द्विनेत्रं[6] द्विभुजं सौम्यं नीलालकविभूषितम् ।
रक्तपादाम्बुजतलं सुरक्तकरपल्लवम् ॥२०३

उसमें दो नेत्र तथा दो भुजायें थीं वह रूप सौम्य तथा केशपाशों से विभूषित था । उनके चरणों के अधोभाग रक्तकमल के समान तथा करपल्लव अत्यन्त लाल था ।२०३

श्रीमद्विलाससद्वृत्तं[7] ललाटतिलकोज्ज्वलम् ।
भूषितं चारुसर्वाङ्ग. भूषणैरतिकोमलम् ॥२०४

शोभा विलासमयी है तथा ललाटतिलकद्वारा वह उज्ज्वल है । विविध भूषणों द्वारा उनका वह अति कोमल एवं मनोहर सर्वांग विभूषित है ।२०४

---

१. प्रधानपुरुषेशी च इति पा० । २. महादेवतसाक्षिणीति पा० । ३. अमूर्त्तिगा इति पा० । ४. घोरं तदिति पा० । ५. नीलोत्पलसुगन्धिकमिति पा० । ६. त्रिनेत्रं सुभुजं इति पा० । ७. श्रीमद्विशालसंवृत्तामिति, श्रीमद्विशालसंवृद्धमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दधानस्मुरसा मालां विशालां हेमनिर्मिताम् ।
ईषत्स्मितं सुबिम्बोष्ठं नूपुरारावसंयुतम् ॥२०५

उन्होंने वक्षःस्थल पर अत्यन्त विशाल स्वर्णमाला धारण कर रखी है। उनका स्वरूप मुसकराहट से युक्त, सुन्दर बिम्बफल सदृश ओष्ठ एवं नूपुर के शब्द से युक्त था ।२०५

प्रसन्नवदनं दिव्यमनन्तमहिमास्पदम् ।
तदीदृशं समालोक्य स्वरूपं शैलसत्तमः ॥२०६

प्रसन्नमुख, दिव्य और अनन्त महिमा का आस्पद उनका ऐसा स्वरूप देखकर पर्वतराज ने भय त्याग दिया ।२०६

भीतिं सन्त्यज्य हृष्टात्मा बभाषे परमेश्वरीम् ।

भय त्यागकर प्रसन्नात्मा हिमालय ने परमेश्वरी से कहा।

हिमावानुवाच

अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे सफलं तपः ॥२०७

हिमवान् बोले—आज मेरा जन्म सफल हुआ। आज मेरा सम्पूर्ण तप सफल हुआ ।२०७

यन्मे साक्षात्त्वमव्यक्ता प्रपन्ना[1] दृष्टिगोचरम् ।
त्वया सृष्टं जगत् सर्वं प्रधानाद्यं त्वयि स्थितम् ॥२०८

जो साक्षात् अव्यक्ता तुम हमारी दृष्टिगोचर हुई हो। तुमने सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि की। प्रधान (प्रकृति) आदि तुममें स्थित है ।२०८

त्वय्येव लीयते देवि त्वमेव[2] परमा गतिः ।
वदन्ति केचित्त्वामेव प्रकृतिं प्रकृतेः पराम् ॥२०९

सम्पूर्ण जगत् तुममें ही लीन होता है। देवि ! तुम हो श्रेष्ठ गति हो। कोई तुम्हें प्रकृति कहते हैं और कोई प्रकृति से भी परे बताते हैं ।२०९

अपरे परमार्थज्ञाः शिवेति शिवसंश्रयात् ।
त्वयि प्रधानं[3] पुरुषो महान्ब्रह्मा तथेश्वरः ॥२१०

दूसरे परमार्थ के ज्ञाता जन शिव के संश्रय हेतु तुम्हें शिवा कहते हैं। प्रकृति, पुरुष, महत्तत्त्व, ब्रह्मा और ईश्वर तुमसे उत्पन्न हुए हैं ।२१०

---

१. प्रसन्ना दृष्टिगोचरा इति पा०। २. त्वमेव च परा गतिरिति पा०। ३. प्रधानपुरुषो इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविद्या नियतिर्माया कलाद्याः शतशोऽभवन्[1] ।
त्वं हि सा परमा शक्तिरनन्ता परमेष्ठिनी[2] ॥२११

अविद्या, नियति (अदृष्ट), माया, कला आदि शतशः पदार्थ तुमसे उत्पन्न हुए हैं। तुम्हीं वह परमाशक्ति, अनन्ता तथा परमेष्ठिनी हो ।२११

सर्वभेदविनिर्मुक्ता सर्वभेदाश्रयाश्रया ।
त्वमधिष्ठाय योगेशि महादेवो महेश्वरः ॥२१२
प्रधानाद्यं जगत्सर्वं[3] करोति विकरोति च ।
त्वयैव सङ्गतो देवः स्वात्मानन्दं[4] सश्नुमते ॥२१३

सब भेदों से रहित तथा सब भेदों के आश्रय के आश्रय तुम्हीं हो। हे योगेश्वरी! तुम्हें अधिष्ठित करके महेश्वर महादेव प्रकृति आदि सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि तथा संहार करते हैं। तुमसे युक्त होकर महादेव अपने आत्मानन्द का अनुभव करते हैं ।२१२-२१३।

त्वमेव परमानन्दस्त्वमेवानन्ददायिनी ।
त्वमक्षरं परं व्योम महज्ज्योतिर्निरञ्जनम् ॥२१४

तुम ही परमानन्द हो, तुम ही आनन्ददायिनी हो। तुम अक्षर हो, महाकाश हो, महाज्योतिःस्वरूप एवं निरञ्जन हो ।२१४

शिवं सर्वगतं सूक्ष्मं परं ब्रह्म सनातनम् ।
त्वं शक्रः[5] सर्वदेवानां ब्रह्मा ब्रह्मविदामसि ॥२१५

तुम मंगलमय, सभी पदार्थों में स्थित, सूक्ष्म, सनातन तथा परम ब्रह्मस्वरूप हो। तुम सभी देवताओं के बीच इन्द्र हो और ब्रह्मवेत्ताओं में ब्रह्मा हो ।२१५.

वायुर्बलवतां देवि योगिनां त्वं कुमारकः ।
ऋषीणाञ्च वसिष्ठस्त्वं व्यासो वेदविदामसि ॥२१६

देवि! तुम बलवानों में वायु, योगियों में कुमार (सनत्कुमार), ऋषियों में वसिष्ठ और वेदवेत्ताओं में व्यास हो ।२१६

सांख्यानां कपिलो देवो रुद्राणाञ्चापि शंकरः[6] ।
आदित्यानामुपेंद्रस्त्वं वसूनाञ्चैव पावकः ॥२१७

तुम सांख्यवेत्ताओं में कपिलदेव तथा रुद्रों में शंकर हो। आदित्यों में उपेन्द्र तथा वसुओं में पावक तुम हो ।२१७

---

१. शक्तयोऽभवन्निति पा०। २. परमेश्वरीति पा०। ३. जगत्कृत्स्नमिति पा०। ४. स्वमानन्दमिति पा०। ५. शक्तिरिति पा०। ६. रुद्राणामपि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदानां सामवेदस्त्वं गायत्रीच्छन्दसामसि[1] ।
अध्यात्मविद्या विद्यानां गतीनां परमा गतिः ॥२१८

वेदों में सामवेद, छन्दों में गायत्री, विद्याओं में अध्यात्मविद्या और गतियों में तुम परमा गति (मोक्ष) हो ।२१८

माया त्वं सर्वशक्तीनां कालः कलयतामसि ।
ओंकारः सर्वगुह्यानां वर्णानाञ्च द्विजोत्तमः ॥२१९

तुम सभी शक्तियों में माया और विनाशकों में काल हो । सभी गुह्य पदार्थों में ओंकार और वर्णों में ब्राह्मण हो ।२१९

आश्रमाणां गृहस्थस्त्वमीश्वराणां महेश्वरः ।
पुंसां त्वमेकः[2] पुरुषः सर्वभूतहृदि स्थितः ॥२२०

तुम आश्रमों में गार्हस्थ्य और ईश्वरों में महेश्वर हो । तुम पुरुषों में सभी प्राणियों के हृदय-स्थित अद्वितीय पुरुष हो ।२२०

सर्वोपनिषदां देवि[3] गुह्योपनिषदुच्यसे[4] ।
ईशानश्चापि[5] कल्पानां युगानां कृतमेव च ॥२२१

देवि ! तुम सभी उपनिषदों में गुह्य उपनिषद् कही जाती हो । तुम कल्पों में ईशान कल्प तथा युगों में सत्ययुग हो ।२२१

आदित्यः सर्वमार्गाणां[6] वाचां देवी सरस्वती ।
त्वं लक्ष्मीश्चारुरूपाणां विष्णुर्मायाविनामसि ॥२२२

तुम सकल मार्गों में आदित्य तथा वाणियो के मध्य देवी सरस्वती हो । तुम सुन्दर रूपों में लक्ष्मी तथा मायावियों में विष्णु हो ।२२२

अरुन्धती सतीनां [7]त्वं सुपर्णः पततामसि ।
सूक्तानां पौरुषं सूक्तं साम ज्येष्ठं च सामसु ॥२२३

तुम सतियों में अरुन्धती और पक्षियों में गरुड़ हो । सूक्तों में पौरुषसूक्त तथा सामों में ज्येष्ठ साम हो ।२२३

सावित्री चापि[7] जाप्यानां यजुषां शतरुद्रियम् ।
पर्वतानां महामेरुरनन्तो भोगिनामपि[8] ॥२२४

जपने योग्यों में तुम सावित्री हो और यजुषों में शतरुद्रीय हो । पर्वतों में महामेरु तथा सर्पों के मध्य अनन्त नाग हो ।२२४

---

१. सावित्रीति पा० । २. त्वमेकपुरुष इति । ३. मध्ये ब्रह्मोपनिषदुच्यते इति पा० । ४. ईश्वरश्चापि इति पा० । ५. सर्गेति पा० । ६. सूक्ष्माणां पौरुषं सूक्ष्मं ज्येष्ठसाम इति पा० ७.। चासि जप्यानामिति पा० । ८. भोगिनामसि इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वेषां त्वं परं ब्रह्म त्वन्मयं सर्वमेव हि ॥२२५

सभी पदार्थों के बीच तुम परब्रह्म हो अतएव सब कुछ त्वन्मय है (अर्थात् सबकुछ तुम्हीं हो) ।२२५

रूपं तवाशेषविकारहीनमगोचरं[1] निर्मलमेकरूपम्[2] ।
अनादिमध्यान्तमनन्तमाद्यं नमामि सत्यं तमसः परस्तात् ॥२२६

तुम्हारा रूप अशेष विकारों से रहित, अगोचर, निर्मल, अद्वितीय, बाल्य-यौवन-वार्धक्य-रहित, अनन्त, आदिभूत और तमःपरवर्ती ऐसे तुम्हारे सत्य रूप को नमस्कार करता हूँ ।२२६

यदेव पश्यन्ति जगत्प्रसूतिं वेदान्तविज्ञानविनिश्चितार्थाः ।
आनन्दमात्रं प्रणवाभिधानं तदेव रूपं शरणं प्रपद्ये ॥२२७

वेदान्तविज्ञान के निश्चित अर्थ को जानने वाले विद्वान् जिसे संसार की जननी समझते हैं, उस आनन्दमय, प्रणवनाम वाले रूप का मैं शरणापन्न हूँ ।२२७

अशेषभूतान्तरसन्निविष्टं[3] प्रधानपुंयोगवियोगहेतुम् ।
तेजोमयं जन्मविनाशहीनं प्राणाभिधानं प्रणतोऽस्मि रूपम् ॥२२८

समी प्राणियों के मध्य में स्थित, प्रकृति-पुरुष के संयोग-वियोग के जनक, तेजोमय, जन्म-मरण से रहित प्राण नामक रूप को नमस्कार करता हूँ ।२२८

आद्यन्तहीनं जगदात्मरूपं[4] विभिन्नसंस्थं प्रकृतेः परस्तात् ।
कूटस्थमव्यक्तवपुस्तथैव[5] नमामि रूपं पुरुषाभिधानम् ॥२२९

आदि और अन्त से हीन, जगदात्मस्वरूप, भिन्न-भिन्न रूपों में संस्थित, प्रकृति से परे, कूटस्थ, अव्यक्तशरीर तथा पुरुष नाम वाले रूप को नमस्कार करता हूँ ।२२९

सर्वाश्रयं सर्वजगद्विधानं सर्वत्रगं जन्मविनाशहीनम् ।
सूक्ष्मं विचित्रं त्रिगुणं प्रधानं नतोऽस्मि ते रूपमरूपभेदम् ॥२३०

सबके आश्रय, सम्पूर्ण जगत् के विधायक, सर्वत्रगामी, जन्म-मरण से रहित, सूक्ष्म, विचित्र, त्रिगुणमय, प्रधान, तथा रूपभेदरहित तुम्हारे रूप को नमस्कार है ।२३०

आद्यं महान्तं पुरुषाभिधानं[6] प्रकृत्यवस्थं त्रिगुणात्मबीजम् ।
ऐश्वर्यविज्ञानविरोधधर्मैः[7] समन्वितं देवि नतोऽस्मि रूपम् ॥२३१

---

१. तवाशेषकलाविहीन इति पा० । २. निर्मलरूपमेकमिति पा० । ३. सन्निधिस्थमिति पा० । ४. जगदात्मभूतमिति पा० । ५. करस्थमव्यक्तवपुस्तथैव इति पा० । ६. पुरुषात्मरूपमिति पा० । ७. विरागधर्मैरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवि ! आदिभूत, महत्, पुरुषसंज्ञक, प्रकृत्यवस्थ, सत्त्व, रज एवं तमोगुण के बीज, ऐश्वर्य, विज्ञान एवं विरोधी धर्मों से युक्त तुम्हारे रूप को नमस्कार है ।२३१

द्विसप्तलोकात्मकमम्बुसंस्थं विचित्रभेदं पुरुषैकनाथम् ।
अनेकभेदैरधिवासितं[1] ते नतोऽस्मि रूपं जगदण्डसंज्ञम् ॥२३२

चतुर्दशभुवनात्मक, जल में संस्थित, विचित्र भेदयुक्त, परमपुरुषयुक्त, अनेकभेद-युक्त, ब्रह्माण्ड नामक तुम्हारे रूप को नमस्कार है ।२३२

अशेषवेदात्मकमेकमाद्यं त्वत्तेजसा[2] पूरितलोकभेदम् ।
त्रिकालहेतुं परमेष्ठिसंज्ञं नमामि रूपं रविमंडलस्थम् ।२३३

अशेषवेदमूर्ति, अद्वितीय, आदिभूत, अपने तेज से लोकभेद को परिपूर्ण करने वाले, तीनों काल (भूत-भविष्य-वर्तमान) के कारण, परमेष्ठिसंज्ञक तुम्हारे सूर्यमंडलवर्ती रूप को नमस्कार है ।२३३

सहस्रमूर्द्धानमनन्तशक्तिं सहस्रबाहुं पुरुषं पुराणम् ।
शयानमन्तः सलिले तवैव[3] नारायणाख्यं प्रणतोऽस्मि रूपम् ॥२३४

सहस्र मस्तक वाले, अनन्त शक्ति वाले, सहस्र भुजा वाले, पुराण पुरुष और जल-मध्य में सोने वाले तुम्हारे ही नारायण नामक रूप को नमस्कार है ।२३४

दंष्ट्राकरालं त्रिदशाभिवन्द्यं युगान्तकालानलकर्तृरूपम्[4] ।
अशेषभूताण्डविनाशहेतुं नमामि रूपं तव कालसंज्ञम् ॥२३५

भयंकर दंष्ट्रा वाले, देवताओं से वन्दनीय, प्रलयकालीन अग्नि कर्तृक रूप वाले, समस्त ब्रह्माण्ड के विनाश के कारण तुम्हारे कालसंज्ञक रूप को नमस्कार है ।२३५

फणासहस्रेण विराजमानं भोगीन्द्रमुख्यैरपि[5] पूज्यमानम् ।
जनार्दनारूढतनुं प्रसुप्तं नतोऽस्मि रूपं तव शेषसंज्ञम् ॥२३६

सहस्रफणाओं से शोभायमान, सर्पराज प्रमुखों द्वारा पूज्यमान, विष्णु द्वारा आरूढ़ शरीर वाले तथा सोये हुए तुम्हारे शेष नामक रूप को नमस्कार है ।२३६

अव्याहतैश्वर्यमयुग्मनेत्रं ब्रह्मामृतानन्दरसज्ञमेकम्[6] ।
युगान्तशेषं दिवि नृत्यमानं नतोऽस्मि रूपं तव रुद्रसंज्ञम् ॥२३७

अप्रतिहत ऐश्वर्य वाले, त्रिनेत्र, ब्रह्मामृत रूप आनन्दरस के ज्ञाता, अद्वितीय, युगान्तस्थायी, स्वर्ग में नृत्यमान तुम्हारे रुद्रसंज्ञक रूप को नमस्कार है ।२३७

---

१. अनन्तेति, अनन्तभूतेरिति, अनन्तरूपैरिति पा० । २. स्वतेजसा इति पा० । ३. तथैव इति, तदेव इति पा० । ४. कल्परूपमिति पा० । ५. रतिपूज्यमानमिति, रभिपूज्यमानमिति, रसि पूज्यमानमिति पा० । ६. बिसंज्ञमेकमिति, मसंज्ञमेकमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रहीणशोकं प्रविहीनरूपं[1] सुरासुरैरर्चितपादपद्मम् ।
सुकोमलं देवि विभासि शुभ्रं नमामि ते रूपमिदं भवानि ॥२३८

हे देवि ! भवानि ! शोकविहीन, रूपहीन, देवों एवं असुरों द्वारा पूजित चरण-कमल वाले, अत्यन्त कोमल तथा प्रकाशमान तुम्हारे शुभ्र रूप को नमस्कार है ।२३८

ओं नमस्तेऽस्तु महादेवि नमस्ते परमेश्वरि ।
नमो भगवतीशानि शिवायै ते नमो नमः ॥२३९

हे महादेवि ! परमेश्वरि ! भगवति ! ईशानि ! तुम्हें नमस्कार है । शिवा को नमस्कार है ।२३९

त्वन्मयोऽहं त्वदाधारस्त्वमेव च गतिर्मम ।
त्वामेव शरणं यास्ये प्रसीद परमेश्वरि ॥२४०

मैं तुममय हूँ, तुम मेरा आधार हो, तुम्हीं मेरी गति हो और तुम्हारी ही शरण में जाऊँगा । परमेश्वरी ! प्रसन्न हो ।२४०

मया नास्ति समो लोके देवो वा दानवोऽपि वा ।
जगन्मातैव[2] मत्पुत्री सम्भूता तपसा[3] यतः ॥२४१

संसार में मेरे समान कोई देवता या दानव भी नहीं है, जिसलिए कि तपस्या के द्वारा जगन्माता ही मेरी पुत्री हुई है ।२४१

एषा तवाम्बिके देवि किलाभूत्पितृकन्यका ।
मेनाशेषजगन्मातुरहो[4] मे पुण्यगौरवम् ॥२४२

हे देवि अम्बिके ! यह पितरों की कन्या मेना सम्पूर्ण जगत् की माता तुम्हारी माता हुई, यह मेरे पुण्य का गौरव है ।२४२

पाहि माममरेशानि मेनया सह सर्वदा ।
नमामि तव पादाब्जं व्रजामि शरणं शिवम्[5] ॥२४३

हे अमरेशानि ! तुम मेना सहित मेरी सर्वदा रक्षा करो । मैं तुम्हारे चरणकमल को नमस्कार करता हूँ और शिव की शरण में जाता हूँ ।२४३

अहो मे सुमहद्भाग्यं महादेवोसमागमात् ।
आज्ञापय महादेवि किं करिष्यामि शंकरि ॥२४४

अहा ! महादेवी के आगमन से मेरा बहुत बड़ा भाग्योदय हुआ है । महादेवि ! शंकरि ! आज्ञा करो, मैं क्या करूँ ? ।२४४

---

१. विमलं पवित्रमिति पा० । २. भूतात्मा चैव इति पा० । ३. सा स्वयं यतः इति पा० । ४. अहो पुण्यस्य गौरवमिति पा० । ५. शिवामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतावदुक्त्वा वचनं तदा हिमगिरीश्वरः ।
संप्रेक्षमाणो[1] गिरिजाप्राञ्जलिः पार्श्वगोऽभवत्[2] ॥२४५

इतना वचन कहकर उस समय शैलाधिराज पार्वती की ओर देखते हुए हाथ जोड़कर उनके समीप पहुँच गये ।२४५

अथ सा तस्य वचनं निशम्य जगतोऽरणिः ।
सस्मितं प्राह पितरं स्मृत्वा पशुर्रीति पतिम् ॥२४६

अनन्तर उनका वचन सुनकर संसार की दावाग्नि के समान पार्वती ने पति शंकर का स्मरण करके मुसकराकर पिता से कहा ।२४६

श्रीदेव्युवाच

शृणुष्व चैतत्प्रथमं[3] गुह्यमीश्वरगोचरम् ।
उपदेशं गिरिश्रेष्ठ सेवितं ब्रह्मवादिभिः ॥२४७

श्रीदेवी बोली—पर्वतराज ! ईश्वरगोचरकारी तथा ब्रह्मवादियों से सेवित यह प्रथम गुप्त उपदेश सुनिए ।२४७

यन्मे साक्षात् परं रूपमैश्वरं दृष्टमद्भुतम् ।
सर्वशक्तिसमायुक्तमनन्तं प्रेरकं परम् ॥२४८
शान्तः समाहितमना मानाहंकारवर्जितः[4] ।
तन्निष्ठस्तत्परो भूत्वा तदेव शरणं व्रज ॥२४९

जो मेरा सर्वशक्तिसम्पन्न, अनन्त, परम प्रेरक, अद्भुत एवं श्रेष्ठ ऐश्वर रूप है, उसमें निष्ठा रखकर शान्त, समाहितचित्त, मान एवं अहंकार से रहित तथा पत्थर होकर आप उसी की शरण में जाइए ।२४८-२४९।

भक्त्या त्वनन्यया तात मद्भावं परमाश्रितः ।
सर्वयज्ञतपोदानैस्तदेवार्च्यय सर्वदा ॥२५०

तात ! अनन्य भक्ति के द्वारा मेरे परम भाव का आश्रय लेकर सभी यज्ञों, तपों एवं दानों द्वारा उसी की सर्वदा आराधना कीजिए ।२५०

तदेव मनसा पश्य तद्ध्यायस्व यजस्व तत् ।
ममोपदेशान्संसारं नाशयामि तवानघ ॥२५१

मन से उसी को देखिए, उसी का ध्यान कीजिए और उसी का पूजन कीजिए। हे निष्पाप ! मैं अपने उपदेश से आपकी जगद्बुद्धि को नष्ट कर दूँगी ।२५१

---

१. संप्रेक्ष्यमाणः इति पा० । २. पार्श्वतोऽभवदिति पा० । ३. चैतत्परममिति पा० । ४. दम्भाहङ्कारवर्जित इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहं[1] त्वां परया भक्त्या ऐश्वरं योगमास्थितम् ।
संसारसागरादस्मादुद्धराम्यचिरेण तु ॥२५२

परम भक्ति के द्वारा ऐश्वर योग में संस्थित आपका मैं इस संसार-सागर से शीघ्र उद्धार कर दूंगी ।२५२

ध्यानेन कर्मयोगेन भक्त्या ज्ञानेन चैव हि ।
प्राप्याहं ते गिरिश्रेष्ठ नान्यथा कर्मकोटिभिः ॥२५३

हे गिरिवर ! ध्यान, कर्मयोग, भक्ति तथा ज्ञान के द्वारा मुझे प्राप्त करना संभव नहीं है ।२५३

श्रुतिस्मृत्युदितं सम्यक्कर्म वर्णाश्रमात्मकम् ।
अध्यात्मज्ञानसहितं मुक्तये सततं कुरु ॥२५४

मुक्ति के लिए श्रुतियों एवं स्मृतियों द्वारा प्रतिपादित वर्णाश्रमविहित सम्यक् कर्म अध्यात्मज्ञान सहित सतत कीजिए ।२५४

धर्मात्संजायते भक्तिर्भक्त्यां संप्राप्यते परम् ।
श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितो धर्मो यज्ञादिको मतः ॥२५५

धर्म से भक्ति उत्पन्न होती है, भक्ति से परमतत्त्व प्राप्त होता है। श्रुति-स्मृति प्रतिपादित यज्ञ आदि कर्म धर्मजनक माना गया है ।२५५

नान्यतो जायतो धर्मो वेदाद्धर्मो[2] हि निर्बभौ ।
[3]तस्मान्मुमुक्षुर्धर्मार्थी मद्रूपं वेदमाश्रयेत् ॥२५६

अन्य किसी से धर्म उत्पन्न नहीं होता है। वेद से धर्म उत्पन्न हुआ है। इसलिए मुमुक्षु और धर्मार्थी जन मेरे रूप वेद का आश्रय ले ।२५६

ममैवैषा परा शक्तिर्वेदसंज्ञा[4] पुरातनी ।
ऋग्यजुःसामरूपेण सर्गादौ संप्रवर्त्तते ॥२५७

मेरी ही यह प्राचीन वेद नामावली परा शक्ति है। जो ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद से सृष्टि के आदि में प्रवर्तित हुई थी ।२५७

तेषामेव च गुप्त्यर्थं वेदानां भगवानजः ।
ब्राह्मणादीन्ससर्जाथ स्वे स्वे कर्मण्ययोजयत् ॥२५८

---

१. अहं वै मत्परान् भक्तानैश्वरं योगयास्थितानिति पा० । २. वेदाद्धर्मोऽपि इति, वेदार्थात्स हि निर्बभौ इति पा० । ३. धर्मार्थं श्रद्धया वेदमाश्रयेदिति पा० । ४. मूर्त्तिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हीं वेदों की रक्षा के लिए भगवान् ब्रह्मा ने ब्राह्मण आदि की सृष्टि करके (उन्हें) अपने-अपने कर्म में लगाया ।२५८

येन कुर्वन्ति मद्धर्मं[1] तदर्थं ब्रह्मनिर्मिताः ।
तेषामधस्तान्नरकांस्तामिस्रादीनकल्पयत् ॥२५९

जो मेरे धर्म (वेदविहित धर्म) को नहीं करते हैं, उनके लिए अत्यन्त अपकृष्ट तामिस्र आदि नरकों को रचा गया है ।२५९

न च वेदादृते किञ्चिच्छास्त्रं धर्माभिधायकम् ।
योऽन्यत्र रमते सोऽसौ न सम्भाष्यो द्विजातिभिः ॥२६०

वेद भिन्न धर्म प्रतिपादक दूसरा कोई शास्त्र नहीं है जो व्यक्ति वेद का परित्याग कर अन्य शास्त्रों में निरत रहता है, उससे द्विजातियों को नहीं बोलना चाहिए ।२६०

यानि शास्त्राणि दृश्यन्ते लोकेऽस्मिन्विविधानि[2] तु ।
श्रुतिस्मृतिविरुद्धानि निष्ठा तेषां हि तामसी ॥२६१

इस लोक में श्रुति-स्मृति-विरुद्ध जो विविध शास्त्र देखे जाते हैं, उनकी निष्ठा तामसी है ।२६१

कापालं भैरवञ्चैव[3] यामलं वाममार्हतम् ।
एवंविधानि चान्यानि मोहनार्थानि तानि तु ॥२६२

कापाल, भैरव, यामल, वाम, आर्हत इस प्रकार के अन्य जो शास्त्र हैं, वे सब असुरों को मोहित करने के लिए हैं ।२६२

ये कुशास्त्राभियोगेन मोहयन्तीह मानवान् ।
मया सृष्टानि शास्त्राणि मोहायैषां भवान्तरे[4] ॥२६३

जो व्यक्ति कुशास्त्र के योग से मानवों को मोहित करते हैं, उनको मेरे द्वारा रचित शास्त्र संसार के बीच मोहित करने के लिए हैं ।२६३

वेदार्थवित्तमैः[5] कार्यं यत्स्मृतं कर्म वैदिकम् ।
तत्प्रयत्नेन कुर्वन्ति मत्प्रियास्ते हि ये नराः ॥२६४

वेदार्थों के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ लोगों ने जिस वैदिक कर्म को करणीय बताया है, उसे जो मेरे प्रिय व्यक्ति हैं वे प्रयत्न पूर्वक करते हैं ।२६४

---

१. तद्धर्ममिति, तं धर्ममिति पा० । २. लोकेऽस्मिंस्त्रिविधानि इति पा० । ३. पञ्चरात्रञ्च इति पा० । ४. भवार्णवे इति पा० । ५. वेदान्तेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्णानामनुकम्पार्थं मन्नियोगाद्विराट् स्वयम् ।
स्वायम्भुवो मनुर्धर्मान्मुनीनां पूर्वमुक्तवान् ॥२६५

वर्णों पर अनुकम्पा करने के लिए मेरे आदेश से स्वयं विराट् पुरुष स्वायंभुव मनु ने पहले मुनियों के समीप धर्मों को बताया था ।२६५

श्रुत्वा चान्येऽपि मुनयस्तन्मुखाद्धर्ममुत्तमम् ।
चक्रुर्द्धर्मप्रतिष्ठार्थं धर्मशास्त्राणि चैव हि ॥२६६

दूसरे मुनियों ने भी उनके मुख से उत्तम धर्म को सुनकर धर्म की प्रतिष्ठा के लिए धर्मशास्त्रों की रचना की ।२६६

तेषु चान्तर्हितेष्वेवं युगान्तेषु महर्षयः ।
ब्रह्मणो वचनात्तानि करिष्यन्ति युगे युगे ॥२६७

प्रलयकाल में उन शास्त्रों के अन्तर्हित हो जाने पर ब्रह्मा के वचन से महर्षिगण प्रत्येक युग में पुनः उन शास्त्रों की रचना करेंगे ।२६७

अष्टादशपुराणानि व्यासाद्यैः[1] कथितानि तु ।
नियोगाद्ब्रह्मणो राजंस्तेषु धर्मः प्रतिष्ठितः ॥२६८

व्यास आदि ने अठारह पुराण कहे हैं । राजन् ! ब्रह्मा की आज्ञा से उनमें धर्म को प्रतिष्ठित किया गया ।२६८

अन्यान्युपपुराणानि तच्छिष्यैः कथितानि तु ।
युगे युगेऽत्र सर्वेषां कर्त्ता वै धर्मशास्त्रवित् ॥२६९

उनके शिष्यों ने अन्यान्य उपपुराणों की रचना की । प्रत्येक युग में यहाँ धर्मशास्त्रवेत्ताओं ने धर्मशास्त्रों का प्रणयन किया ।२६९

शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्द एव च ।
ज्योतिःशास्त्रं[2] न्यायविद्या सर्वेषामुपबृंहणम्[3] ॥२७०
एवं चतुर्दशैतानि तथा[4] हि द्विजसत्तमाः ।
चतुर्वेदैः सहोक्तानि धर्मो नान्यत्र विद्यते ॥२७१

शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिः शास्त्र, न्यायविद्या, सकल शास्त्रों का उपबृंहण (अर्थात् मीमांसा), (पूर्वोक्त पुराण शास्त्र तथा धर्मशास्त्र) एवं चतुर्वेद; हे द्विजश्रेष्ठो ! इस प्रकार चौदह शास्त्र कहे गये हैं इन शास्त्रों को छोड़कर अन्यत्र धर्म का निरूपण नहीं है ।२७०-२७१।

---

१. व्यासेन इति पा० । २. ज्योतिः शास्त्राध्यात्मविद्या इति पा० । ३. मीमांसा चोपबृंहणमिति पा० । ४. विद्यास्थानानि सत्तम इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं पैतामहं धर्मं मनुव्यासादयः परम् ।
स्थापयन्ति ममादेशाद्यावदाभूतसंप्लवम्[1] ॥२७२

इस प्रकार पितामह द्वारा कथित उत्तम धर्म को मनु, व्यास आदि महाप्रलय पर्यन्त स्थापित करते हैं ।२७२

ब्रह्मणा[2] सह ते सर्वे संप्राप्ते प्रतिसञ्चरे ।
परस्यांते[3] कृतात्मानः प्रविशन्ति परम्पदम्[4] ॥२७३

ब्रह्मा के परमायु शेष होने पर महाप्रलय उपस्थित होता है और आत्मतत्त्व के साक्षात्कारी मुनिगण ब्रह्मा सहित परब्रह्म में लीन होने जाते हैं ।२७३

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन धर्मार्थं वेदमाश्रयेत् ।
धर्मेण सहितं ज्ञानं परं ब्रह्म प्रकाशयेत् ॥२७४

इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से धर्म के लिए वेद का आश्रय लेना चाहिए । धर्म सहित ज्ञान परब्रह्म को प्रकाशित कर देता है ।२७४

ये तु संगान्[5] परित्यज्य मामेव शरणं गताः ।
उपासते सदा भक्त्या योगमैश्वरमास्थिताः ॥२७५

जो व्यक्ति संग (आसक्ति) त्यागकर मेरे शरणापन्न हो जाते हैं और ऐश्वर योग में संस्थित होकर भक्तिपूर्वक सदा उपासना करते हैं ।२७५

सर्वभूतदयावन्तः शांता दांता विमत्सराः ।
अमानिनो बुद्धिमन्तस्तापसाः शंसितव्रताः ॥२७६

तथा सभी प्राणियों के प्रति दयावान् शान्त, दान्त, मत्सररहित, अमानी, बुद्धिमान्, तपस्वी, व्रती, ।२७६

मच्चित्ता मद्गतप्राणा मज्ज्ञानकथने[6] रताः ।
संन्यासिनो गृहस्थाश्च वनस्था ब्रह्मचारिणः ॥२७७

मुझमें चित्त और प्राणों को लगाये हुए, मेरा ज्ञान कहने में निरत, संन्यासी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और ब्रह्मचारी हैं, ।२७७

तेषां नित्याभियुक्तानां मायातत्त्वं[7] समुत्थितम् ।
नाशयामि तमः कृत्स्नं ज्ञानदीपेन नो[8] चिरात् ॥२७८

---

१. अत्र यावत्पदं निरर्थकम् आ इति उपसर्गेण गतार्थत्वात् । २. ब्राह्मणैरिति पा० । ३. परस्यान्तःकृतात्मानः इति पा० । ४. परस्परमिति, प्रवेक्ष्यन्ति परं पदमिति पा० । ५. स्वर्गमिति, येऽन्यसङ्गानिति पा० । ६. मद्भावकथने इति पा० । ७. मायातनुसमुत्थितमिति पा० । ८. मा चिरादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन नित्यकर्मरत व्यक्तियों के घोर अन्धकारस्वरूप उत्पन्न मायातत्त्व को मैं शीघ्र ही ज्ञानदीप द्वारा नष्ट कर देती हूँ ।२७८

ते[1] सुनिधूंततमसो ज्ञानेनैकेन मन्मयाः ।
सदानन्दास्तु संसारे न जायन्ते पुनः पुनः ॥२७९

वे एक ज्ञान के द्वारा मेरे स्वरूप, सदानन्द तथा तमोगुणरहित होकर संसार में बार-बार जन्म नहीं लेते ।

तस्मात्सर्वप्रकारेण मद्भक्तो मत्परायणः ।
मामेवार्च्चय सर्वत्र मनसा शरणं गतः ॥२८०

इसलिए सब प्रकार से मेरे भक्त और मत्परायण होकर आप सर्वत्र मन से मेरी शरण में रहकर मेरी ही अर्चना करें ।२८०

अशक्तो यदि मे ध्यातुमैश्वरं रूपमव्ययम् ।
ततो मे परमं[2] रूपं कालाद्यं[3] शरणं व्रज ॥२८१

यदि मेरे अविनाशी ऐश्वर रूप का ध्यान करने में आप असमर्थ हों तो मेरे काल नामक परम रूप (परमेश्वर) की शरण में जाइए ।२८१

तद्यत्स्वरूपं[4] मे तात मनसो गोचरं तव ।
तन्निष्ठस्तत्परो भूत्वा तदर्चनपरो भव ॥२८२

इसलिए हे तात ! मेरा जो स्वरूप आपके मनोगोचर हो जाय, उसमें निष्ठा और परायणता रखकर उसकी अर्चना में निरत हो जायें ।२८२

यत्तु मे निष्कलं रूपं चिन्मात्रं केवलं शिवम् ।
सर्वोपाधिविनिर्मुक्तमनन्तममृतं परम् ॥२८३

मेरा जो रूप निष्कल, चिन्मात्र, केवल, शिव, समस्त उपाधियों से रहित, अनन्त, श्रेष्ठ और अमृत है ।२८३

ज्ञानेनैकेन तल्लभ्यं क्लेशेन परमं पदम् ।
ज्ञानमेव प्रपश्यन्तो मामेव प्रविशन्ति ते ॥२८४

उसे एक मात्र ज्ञान के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है । क्लेश से परम पद की प्राप्ति होती है । जो केवल ज्ञान को देखते हैं, वे मुझमें ही प्रवेश करते हैं ।२८४

---

१. ते तु निहूंतमनस इति, तेषु निधूंतमनस इति पा० । २. सकलमिति, तत्सर्वकलामिति पा० । ३. कलाद्यमिति, कालाद्यं पूर्णम् इति पा० । ४. यद्यदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥२८५

जो उसी रूप में बुद्धि लगाये रहते हैं, तदात्मा हैं तन्निष्ठ एवं तत्परायण हैं, वे ज्ञान द्वारा पापशून्य होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।२८५

मामनाश्रित्य परमं निर्वाणममलं[1] पदम् ।
प्राप्यते न हि राजेन्द्र ततो मां शरणं व्रज ॥२८६

राजेन्द्र ! बिना मेरा आश्रय लिये परम निर्मल पद निर्वाण (मोक्ष) को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इसलिए मेरी शरण में आइए।२८६

एकत्वेन पृथक्त्वेन तथा चोभयथापि वा ।
मामुपास्य महीपालं[2] ततो यास्यसि तत्पदम्[3] ॥२८७

हे महीपाल ! एकत्व या पृथक्त्व या दोनों रूप से मेरी उपासना करके उस पद को प्राप्त करें।२८७

मामनाश्रित्य तत्तत्त्वं स्वभावविमलं शिवम् ।
ज्ञायते न हि राजेन्द्र ततो मां शरणं व्रज ॥२८८

राजेन्द्र ! बिना मेरा आश्रय लिए स्वभावतः निर्मल एवं कल्याणकारक उस तत्त्व को नहीं जान सकते, अतः मेरे शरणापन्न होइए।२८८

तस्मात्त्वमक्षरं रूपं नित्यं वा रूपमैश्वरम् ।
आराधय प्रयत्नेन ततोऽन्धत्वं[4] प्रहास्यसि ॥२८९

इसलिए आप नित्य प्रयत्नपूर्वक अविनाशी रूप या ऐश्वर रूप की आराधना कीजिए। उससे अज्ञान या बन्धन से मुक्त हो जायेंगे।२८९

कर्मणा मनसा वाचा शिवं सर्वत्र सर्वदा ।
समाराधय भावेन ततो यास्यसि तत्पदम्[5] ॥२९०

कर्म, मन और वाणी द्वारा सब जगह सब काल सर्वतोभावेन शिव की आराधना कीजिए। उससे शिवपद की प्राप्ति होगी।२९०

न[6] वै यास्यन्ति तं देवं मोहिता मम मायया ।
अनाद्यनन्तं परमं महेश्वरमजं शिवम् ॥२९१

---

१. नफलप्रदमिति पा०। २. महाराज इति पा०। ३. मत्पदमिति पा०। ४. बन्धमिति पा०। ५. मत्पदमिति पा७। ६. न वै पश्यन्ति तत्तत्त्वमिति, न वै पश्यन्ति तं देवमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी माया से मोहित लोग उस अनादि, अनन्त, परम परमेश्वर तथा अजन्मा शंकर देव को नहीं पाते हैं ।२९१

सर्वभूतात्मभूतस्थं सर्वाधारं निरञ्जनम् ।
नित्यानन्दं निराभासं निर्गुणं तमसः परम् ॥२९२
अद्वैतमचलं ब्रह्म निष्कलं निष्प्रपञ्चकम् ।
स्वसंवेद्यमवेद्यं[1] तत्परे व्योम्नि व्यवस्थितम् ॥२९३

वे शिव सभी प्राणियों के आत्मा रूप में अवस्थित, सब के आधार, निरञ्जन (स्वप्रकाश), नित्यानन्द, निराभास, निर्गुण, तमोगुणातीत, अद्वैत, अचल, निष्प्रपञ्चक, स्वसंवेद्य, अवेद्य और परमाकाश में अवस्थित हैं ।२९२-२९३।

सूक्ष्मेण तमसा नित्यं वेष्टिता मम मायया ।
संसारसागरे घोरे जायन्ते च पुनः पुनः ॥२९४

मानवगण नित्य मेरी माया के द्वारा सूक्ष्म तम (अज्ञान) से वेष्टित होने के कारण भयंकर संसाररूपी समुद्र में बार-बार जन्म ग्रहण करते रहते हैं ।२९४

भक्त्या त्वनन्यया राजन् सम्यग्ज्ञानेन चैव हि ।
अन्वेष्टव्यं हि तद्ब्रह्म जन्मबन्धनिवृत्तये ॥२९५

राजन् ! जन्म-बन्धन से छुटकारा पाने के लिए अनन्य भक्ति तथा सम्यक् ज्ञान के द्वारा अन्वेषण करना चाहिए ।२९५

अहंकारञ्च मात्सर्यं कामं क्रोधपरिग्रहम् ।
अधर्माभिनिवेशञ्च त्यक्त्वा वैराग्यमास्थितः ॥२९६

अहंकार, मात्सर्य, काम, क्रोध, परिग्रह तथा अधर्म में मन लगाना त्यागकर वैराग्य ग्रहण करे ।२९६

सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
अवेक्ष्य[2] चात्मनात्मानं ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥२९७

सभी प्राणियों में अपने को देखे और अपने में सभी प्राणियों को देखे । इस प्रकार आत्मा के द्वारा आत्मा का दर्शन करके ब्रह्मत्व को प्राप्त करे ।२९७

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा सर्वभूताभयप्रदः ।
ऐश्वर्यं[3] परमां भक्तिं विन्देतानन्यभाविनीम्[4] ॥२९८

---

१. स्वसर्गाद्यमरेभ्यस्तत्पर मिति पा० । २. अन्वीक्ष्य इति पा० । ३. ऐश्वरीमिति पा० । ४. विन्देतानन्यग ामिनीमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मभूत, प्रसन्नात्मा तथा सभी प्राणियों को अभय देने वाला व्यक्ति ईश्वर-सम्बन्धी अव्यभिचारिणी श्रेष्ठ भक्ति को प्राप्त करता है ।२९८

वीक्ष्यते तत्परं तत्त्वमैश्वरं ब्रह्म निष्कलम् ।
सर्वसंसारनिर्मुक्तो ब्रह्मण्येवावतिष्ठते ॥२९९

उसे ईश्वर सम्बन्धी निरवयव ब्रह्मस्वरूप परमतत्त्व का दर्शन होता है। फिर वह समस्त संसार से मुक्त होकर ब्रह्म में अवस्थित हो जाता है ।२९९

ब्रह्मणोऽयं[1] प्रतिष्ठानं परस्य परमः शिवः ।
अनन्यश्चाव्ययश्चैकश्चात्माधारो महेश्वरः ॥३००

अनन्य, अविनाशी, अद्वितीय, आधारस्वरूप, परम मंगलमय, आत्मा महेश्वर पर-ब्रह्म की चरम निष्पत्ति है ।३००

ज्ञानेन कर्मयोगेन भक्त्या योगेन वा नृप[2] ।
सर्वसंसारमुक्त्यर्थमीश्वरं शरणं व्रज ॥३०१

राजन् ! संसार से मुक्ति पाने के लिए ज्ञान, कर्मयोग तथा भक्तियोग के द्वारा ईश्वर की शरण में जाइए ।३०१

एष गुह्योपदेशस्ते मया दत्तो गिरीश्वर ।
अन्वीक्ष्य[3] चैतदखिलं यथेष्टं कर्तुमर्हसि ॥३०२

हे पर्वतराज ! यह गुह्य उपदेश मैंने आपको दिया है। यह सब अच्छी तरह सोच विचार कर जो इच्छा हो वह करें ।३०२

अहं वै याचिता देवैः सञ्जाता परमेश्वरात् ।
विनिन्द्य दक्षं पितरं महेश्वरविनिन्दकम् ॥३०३

देवताओं द्वारा याचना करने पर मैं परमेश्वर से उत्पन्न हुई। महेश्वर की निन्दा करने वाले पिता दक्ष की मैंने निन्दा की ।३०३

धर्मसंस्थापनार्थाय तवाराधनकारणात् ।
मेना देहसमुत्पन्ना त्वामेव पितरं श्रिता ॥३०४

धर्म की स्थापना के लिए आपकी आराधना के कारण मैंने मेना के शरीर से उत्पन्न होकर आप ही को पिता के रूप में प्राप्त किया ।३०४

स त्वं नियोगाद्दैवस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ।
प्रदास्यसे मां रुद्राय स्वयंवरसमागमे ॥३०५

---

१. ब्राह्मणी हि प्रतिष्ठेयमिति, प्रतिष्ठायामिति पा०। ६. पुनरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सो आप परमात्मा ब्रह्मदेव की आज्ञा से स्वयंवर-स्थल में मुझे रुद्र को प्रदान करेंगे ।३०५

तत्सम्बन्धान्तरे[1] राजन् सर्वे देवाः सवासवाः ।
त्वां नमस्यन्ति वै तात प्रसीदति च शंकरः ॥३०६

राजन् ! उस सम्बन्ध के बीच इन्द्र समेत सभी देवगण आपको नमस्कार करेंगे । तात ! शंकर आप पर प्रसन्न होंगे ।३०६

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन मां विद्धीश्वरगोचराम् ।
संपूज्य[2] देवमीशानं शरण्यं शरणं व्रज ॥३०७

इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न द्वारा मुझे ईश्वर प्राप्त समझिए । आप रक्षक भगवान् शंकर को नमस्कार करके उनकी शरण में जाइए ।३०७

स एवमुक्तो हिमवान्[3] देवदेव्या गिरीश्वरः ।
प्रणम्य शिरसा देवीं प्रांजलिः पुनरब्रवीत् ॥३०८

पार्वती देवी के इस प्रकार कहने पर पर्वतराज हिमालय हाथ जोड़कर शिर से देवी को प्रणाम करके पुनः बोले—।३०८

विस्तरेण महेशानि योगं माहेश्वरं परम् ।
ज्ञानं वै चात्मनो योगं साधनानि प्रचक्ष्व मे ॥३०९

हे महेश्वरि ! श्रेष्ठ माहेश्वर योग, ज्ञान, आत्मयोग तथा साधन मुझे बताइए ।३०९

तस्यैतत्परमं ज्ञानमात्मना[4] योगमुत्तमम् ।
यथावद्व्याजहारेशा[5] साधनानि च विस्तरात् ॥३१०

तब ईश्वरी ने परम ज्ञान, उत्तम योग तथा साधनों को विस्तार से बताया ।३१०

निशम्य वदनाम्भोजाद्गिरीन्द्रो लोकपूजितः ।
लोकमातुः परं ज्ञानं योगासक्तोऽभवत्पुनः ॥३११

लोकपूजित गिरिराज लोकमाता पार्वती के मुखारविन्द से परम ज्ञान सुनकर पुनः योगासक्त हो गये ।३११

प्रददौ च महेशाय पार्वतीं भाग्यगौरवात् ।
नियोगाद्ब्रह्मणः साध्वी देवानाञ्चैव सन्निधौ ॥३१२

---

१. तत्सम्बन्धाच्च ते इति पा० । २. सन्तोष्य इति पा० । ३. भगवानिति पा० । ४. मात्मयोगमनुत्तममिति पा० । ५. व्याजहारैषा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पार्वती के सौभाग्य के कारण ब्रह्मा के आदेश से हिमालय ने देवताओं के सान्निध्य में साध्वी पार्वती शंकर को दे दी ।३१२

य इमं पठतेऽध्यायं देव्या माहात्म्यकीर्त्तनम् ।
शिवस्य सन्निधौ भक्त्या शुचिस्तद्भावभावितः ॥३१३
सर्वपापविनिर्मुक्तो दिव्ययोगसमन्वितः[1] ।
उल्लंघ्य ब्रह्मणो लोकं देव्याः स्थानमवाप्नुयात् ॥३१४

जो देवी के माहात्म्य-कीर्तन नामक इस अध्याय का शिव के समीप में पवित्र एवं तद्गतचित्त होकर पाठ करेगा, वह सभी पापों से रहित तथा दिव्य योग से समन्वित हो ब्रह्मलोक को लांघकर देवी का स्थान प्राप्त करेगा ।३१३-३१४।

यश्चैतत्पठति स्तोत्रं ब्राह्मणानां समीपतः ।
समाहितमनाः[2] सोऽपि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३१५

जो ब्राह्मणों के समीप समाहितचित्त होकर इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह सभी पापों से मुक्त हो जाता है ।३१५

नाम्नामष्टसहस्रन्तु देव्या यत्समुदीरितम् ।
ज्ञात्वार्कमण्डलगतामावाह्य[3] परमेश्वरीम् ॥३१६
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्भक्तियोगसमन्वितः ।
संस्मरन्परमं भावं देव्या माहेश्वरं परम् ॥३१७
अनन्यमानसो नित्यं जपेदामरणाद्द्विजः ।
सोऽन्तकाले स्मृतिं लब्ध्वा परं ब्रह्माधिगच्छति ॥३१८

देवी का अष्टोत्तर सहस्र नाम जो बताया है, उसे जानकर सूर्यमण्डलगता देवी का आवाहनपूर्वक गन्धपुष्पादि द्वारा पूजन करके देवी सहित महेश्वर के परम भाव स्मरण करते हुए अनन्य मन से मृत्यु पर्यन्त नित्य जप करने वाला व्यक्ति अन्तकाल में उनका स्मरण करके परब्रह्म को प्राप्त करता है ।३१६-३१८।

अथवा जायते विप्रो ब्राह्मणस्य शुचौ[4] कुले ।
पूर्वसंस्कारमाहात्म्याद्ब्रह्मविद्यामवाप्नुयात्[5] ॥३१९

अथवा वह ब्राह्मण के पवित्र कुल में विप्र होकर जन्म लेता और पूर्व संस्कार के माहात्म्य से ब्रह्मविद्या को प्राप्त कर लेता है ।३१९

---

१. देव्या इति पा० । २. देव्याः समाहितमना इति पा० । ३. सम्भाव्य इति पा० । ४. कुले शुचौ इति पा० । ५. सर्व्वसंस्कारमाहात्म्यादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्प्राप्य योगं परमं दिव्यं तत्पारमेश्वरम् ।
शान्तः सुसंयतो[1] भूत्वा शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥३२०

फिर परम दिव्य पारमेश्वर योग को प्राप्त करके शान्त एवं सुसंयमी होकर शिवसायुज्य मोक्ष को प्राप्त करता है ।३२०

प्रत्येकञ्चाथ नामानि जुहुयात्सवनत्रयम्[2] ।
महामारिकृतैर्दोषैर्ग्रहदोषैश्च[3] मुच्यते ॥३२१

जो व्यक्ति तीनों काल इस प्रत्येक नाम द्वारा हवन करेगा, वह महामारीकृत दोषों से तथा ग्रहदोषों से मुक्त हो जाएगा ।३२१

जपेद्वाहरहर्नित्यं संवत्सरमतन्द्रितः ।
श्रीकामः पार्वतीं देवीं पूजयित्वा विधानतः ॥३२२
सम्पूज्य पार्श्वतः[4] शम्भुं त्रिनेत्रं भक्तिसंयुतः ।
लभते महतीं लक्ष्मीं महादेवप्रसादतः[5] ३२३

जो लक्ष्मी चाहने वाला व्यक्ति विधानानुसार देवी पार्वती की पूजा करके एक वर्ष तक निरालस्यपूर्वक नित्य इन नामों का जप तथा देवी के बगल में त्रिलोचन शिव की भक्तिपूर्वक पूजा करता है, उसे महादेव की कृपा से महती लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ।३२२-३२३।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन जप्तव्यं हि द्विजातिभिः ।
सर्वपापापनोदार्थं देव्या नामसहस्रकम् ॥३२४

इसलिये द्विजातियों को सर्वपापनाशक देवी का सहस्रनाम सब प्रकार के प्रयत्नों से जप करना चाहिए ।३२४

सूत उवाच

प्रसङ्गात्कथितं विप्रा देव्या माहात्म्यमुत्तमम् ।
अतःपरं प्रजासर्गं भृग्वादीनां निबोधत ॥३२५

सूत बोले—विप्रगण ! प्रसंगवश देवी का उत्तम माहात्म्य मैंने कह दिया । इसके बाद भृगु आदि की प्रजासृष्टि सुनिए ।३२५

इति श्रीकूर्मपुराणे देव्या माहात्म्ये द्वादशोऽध्यायः ॥१२

श्री कूर्मपुराण में देवी के माहात्म्य-वर्णन प्रसंग में बारहवाँ अध्याय समाप्त ।१२

---

१. सर्वगत इति पा० । २. कुसुमत्रयमिति पा० । ३. पूतनादीति पा० । ४. सार्द्धत इति पा० । अर्द्धयुक्तं गौरीसहितं हरिसहितं वा इत्यर्थः । ५. महादेवप्रभावत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रयोदशोऽध्यायः

अथ दक्षकन्याख्यातिवंशः

सूत उवाच

भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना [लक्ष्मीर्नारायणप्रिया ।
देवौ धातृविधातारौ मेरोर्जामातरौ शुभौ ॥१

सूत बोले—भृगु की ख्याति नामकी स्त्री से नारायण की प्रिया लक्ष्मी उत्पन्न हुई। मेरु के धाता और विधाता नामक दो मंगलकारक देव जामाता है ।१

आयतिर्नियतिश्चैव मेरोः कन्ये महात्मनः ।
तयोर्धातृविधातृभ्यां[1] यौ च जातौ सुतावुभौ ॥२

महात्मा मेरु की आयति और नियति नामक दो कन्यायें थीं। उनके (पति क्रमशः) धाता और विधाता से दो पुत्र उत्पन्न हुए ।२

प्राणश्चैव मृकण्डुश्च मार्कण्डेयो मृकण्डुतः[2] ।
तथा वेदशिरा नाम प्राणस्य द्युतिमान्सुतः ॥३

उनके नाम थे—प्राण और मृकण्डु। मृकण्डु से मार्कण्डेय की उत्पत्ति हुई और प्राण का पुत्र वेदशिरा हुआ, जो उज्ज्वलकान्ति विशिष्ट था ।३

मरीचेरपि [सम्भूतिः पूर्णमासमसूयत[3] ।
कन्याचतुष्टयञ्चैव सर्वलक्षणसंयुतम् ॥४
तुष्टिर्ज्येष्ठा[4] तथा वृष्टिः कृष्टिश्चापचितिस्तथा ।
विरजाः पर्वतश्चैव पूर्णमासस्य[5] तौ सुतौ ॥५

मरीचि की पत्नी सम्भूति ने पूर्णमास नामक एक पुत्र को और तुष्टि, वृष्टि तथा अपचिति नामक सर्वलक्षणसंयुक्त चार कन्याओं का प्रसव किया। उनमें तुष्टि ज्येष्ठ कन्या थी। पूर्णमास के दो पुत्र हुए—विरजा और पर्वत ।४-५।

---

१. धातृविधात्रोस्ते भार्ये त्रयोर्जातौ सुतावुभौ इति पा०। २. मृकण्डुज इति पा०। ३. पौर्णमासमिति पा०। ४. कृषिरिति पा०। ५. हृष्टिरिति, पुष्टिश्चिति-ति पा०। ६. पौर्णमासस्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षमा तु सुषुवे पुत्रान्पुलहस्य प्रजापतेः ।
कर्दमञ्च वरीयांसं सहिष्णुं मुनिसत्तमम् ॥६
तथैव च कनीयांसं तपोनिद्धूतकल्मषम् ।
अनसूया तथैवात्रेर्जज्ञे[1] पुत्रानकल्मषान् ॥७

प्रजापति पुलह की पत्नी, क्षमा ने कई पुत्रों को जन्म दिया, जिनमें कर्दम सबसे श्रेष्ठ थे एवं मुनिश्रेष्ठ तथा तपः पूत सहिष्णु कनिष्ठ थे। उसी प्रकार अनसूया ने अत्रि से निष्पाप पुत्रों को उत्पन्न किया।६-७।

सोमं दुर्वाससञ्चैव दत्तात्रेयञ्च योगिनम् ।
स्मृतिश्चाङ्गिरसः पुत्री जज्ञे लक्षणसंयुता ॥८

उनके नाम थे—सोम, दुर्वासा और योगी दत्तात्रेय। अंगिरा से शुभलक्षणसम्पन्न स्मृति नामक पुत्री उत्पन्न हुई।८

सिनीवालीं कुहूञ्चैव राकामनुमतीमपि ।
प्रीत्यां पुलस्त्यो भगवान्दम्भो[2] जिमसृजत्प्रभुः ॥९

भगवान् पुलस्त्य ने प्रीति नामक पत्नी में सिनी वाली, कुहू, राका, अनुमती नामक पुत्रियों को तथा दम्भोजि नामक पुत्र को उत्पन्न किया।९

पूर्वजन्मनि सोगस्त्यः स्मृतः स्वायम्भुवेऽन्तरे ।
देवबाहुस्तथा कन्या द्वितीया[3] नाम नामतः ॥१०

पूर्वजन्म में स्वायम्भुवमन्वन्तर में वह दम्भोजि अगस्त्य मुनि हुए थे। इसके बाद पुलस्त्य-दम्पती ने दूसरी देवबाहु नामकी कन्या उत्पन्न की।१०

पुत्राणां षष्टिसाहस्रं सन्ततिः सुषुवे क्रतोः ।
ते चोर्ध्वरेतसः सर्वे बालखिल्या इति स्मृताः ॥११

क्रतु की पत्नी सन्नति ने साठ हजार पुत्रों को उत्पन्न किया। वे सब ऊर्ध्वरेता ब्रह्मचारी बालखिल्य नाम से प्रसिद्ध हुए।११

वसिष्ठश्च तथोर्ज्जायां सप्त पुत्रानजीजनत् ।
कन्याञ्च पुण्डरीकाक्षां सर्वशोभासमन्विताम् ॥१२

वसिष्ठ ने ऊर्जा नामक पत्नी से सात पुत्रों को और एक सकल शोभा सम्पन्न कमलनयनी कन्या को उत्पन्न किया।१२

---

१. जनयामास इत्यर्थः, क्वचिदन्तर्भूतण्यर्थः सम्भवति। २. दत्तोमिति, दत्तोनि मिति, दम्भोलीमिति, दम्भोलिमिति पा०। ३. सन्नतीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजोमात्रोर्ध्वबाहुश्च[1] सवनश्चानगस्तथा[2] ।
सुतपाः शुक्र इत्येते सप्त पुत्रा महौजसः ॥१३

सात पुत्रों के नाम ये थे—रज, मात्र, ऊर्ध्वबाहु, सवन, अनग, सुतपा एवं शुक्र (वसिष्ठ के ये सातों पुत्र) बहुत तेजस्वी थे ।१३

योऽसौ रुद्रात्मको वह्निर्ब्रह्मणस्तनयो द्विजाः ।
स्वाहा तस्मात्सुतान् लेभे त्रीनुदारान्महौजसः[3] ॥१४

विप्रगण ! ब्रह्मा का पुत्र जो रुद्रात्मक वह्नि था, उससे स्वाहा ने तीन उदार एवं महान् तेजस्वी पुत्रों को प्राप्त किया ।१४

पावकः पवमानश्च शुचिरग्निश्च[4] रूपतः ।
निर्मथ्यः पवमानः स्याद्वैद्युतः पावकः स्मृतः ॥१५

यश्चासौ तपते सूर्ये शुचिरग्निस्त्वसौ स्मृतः ।
तेषान्तु सन्ततावन्ये चत्वारिंशच्च पञ्च च ॥१६

(उन पुत्रों के नाम थे—) पावक, पवमान और शुचि । वे अग्निरूपधारी थे, निर्मथ्य अग्नि को पवमान और वैद्युत अग्नि को पावक कहते हैं । जो अग्नि सूर्य में तपता है, उसे शुचि अग्नि कहा जाता है । उसके पैंतालीस सन्तानें हुईं ।१५-१६।

पवमानः पावकश्च शुचिस्तेषां पिता[5] च यः ।
एते चैकोनपञ्चाशद्वह्नयः परिकीर्तिताः ॥१७

पवमान, पावक, शुचि तथा इनका पिता जो रुद्रात्मक वह्नि है—इन सबको मिलाकर उनचास वह्नि माने गये हैं ।१७

सर्वे तपस्विनः प्रोक्ताः सर्वे यज्ञेषु भागिनः[6] ।
रुद्रात्मकाः स्मृताः सर्वे त्रिपुंड्राङ्कितमस्तकाः ॥१८

ये सभी तपस्वी तथा सभी यज्ञों में भाग लेने वाले कहे गये हैं । ये सब रुद्रात्मक होने से अपने मस्तक को त्रिपुण्ड्र से अंकित रखते हैं ।१८

अयज्वानश्च[7] यज्वानः पितरो[8] ब्रह्मणः सुताः ।
अग्निष्वात्ता बर्हिषदो द्विधा तेषां व्यवस्थितिः ॥१९

अयज्वा और यज्वा पितर ब्रह्मा के पुत्र हैं । ये अग्निष्वात्त तथा बर्हिषद्—इन दो भागों में विभक्त हैं ।१९

---

१. राजोहश्चोर्ध्वबाहुश्चेति पा० । २. सवनोऽनशनस्तथा इति पा० । ३. नग्नीनमितौजस इति पा० । ४. ते त्रय इति पा० । ५. महाबल इति, पितामह इति पा० । ६. भोगिन इति पा० । ७. अयज्वानोऽपीति पा० । ८. इतरे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेभ्यः स्वधा सुतां जज्ञे[1] मेनां वै धारिणीं[2] तथा ।
ते उभे ब्रह्मवादिन्यौ योगिन्यौ मुनिसत्तमाः ॥२०

उनसे स्वधा ने मेना और धारिणी नामक दो कन्याओं को जन्म दिया। मुनि श्रेष्ठो! वे दोनों ब्रह्मवादिनी एवं योगिनी थीं।२०

असूत मेना मैनाकं क्रौञ्चन्तस्यानुजन्तथा ।
गङ्गा हिमवतो यज्ञ सर्वलोकैकपावनी ॥२१

मेना से मैनाक और उसके अनुज क्रौञ्च का जन्म हुआ। सभी लोकों को पवित्र करने वाली गंगा हिमालय से उत्पन्न हुई।२१

स्वयोगाग्निबलाद्देवीं[3] पुत्रीं लेभे महेश्वरीम् ।
यथाबत्कथितं पूर्वं देव्या माहात्म्यमुत्तमम् ॥२२

अपने योगाग्नि के बल से हिमालय ने देवी महेश्वरी (पार्वती) को पुत्री के रूप में प्राप्त किया। देवी का उत्तम महात्म्य मैं यथापूर्व बता चुका हूँ।२२

धारिणी मेरुराजस्य पत्नी पद्मसमानना ।
देवौ धातृविधातारौ मेरोर्जामातारावुभौ ॥२३

मेरुराज की पत्नी धारिणी कमलमुखी थी। मेरु के दो देव जमाता थे—धाता और विधाता।२३

एषा दक्षस्य कन्यानां मयापत्यानुसन्ततिः ।
व्याख्याता भवतां[4] सद्यो मनोः सृष्टिं निबोधत ॥२४

यह मैंने दक्ष-कन्याओं के पति तथा सन्तानों का वर्णन आप लोगों के सामने कर दिया। अब मनु की सृष्टि का श्रवण कीजिए।२४

इति कूर्मपुराणे द० त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३

श्री कूर्म पुराण में तेरहवाँ अध्याय समाप्त।१३

●

---

१. जनयामास इत्यर्थः। २. वैतरणीमिति पा०। ३. स्वयोगात्मबलाद्देवीमिति लेभे महेश्वरमिति पा.। ४. भवतामद्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्दशोऽध्यायः

अथ स्वायंभुवमनुवंशः

सूत उवाच

प्रियव्रतोत्तानपादौ मनोः स्वायम्भुवस्य तु ।
धर्मज्ञौ तौ महावीर्यौ शतरूपा व्यजीजनत् ॥१

सूत बोले—स्वायंभुव मनु के प्रियव्रत और उत्तानपाद नामक दो पुत्र हुए। वे दोनों धर्मज्ञाता तथा महापराक्रमी थे। शतरूपा ने उन्हें जन्म दिया था ।१

ततस्तूत्तानपादस्य[1] ध्रुवो नाम सुतोऽभवत् ।
भक्त्या[2] नारायणे देवे प्राप्तवान् स्थानमुत्तमम् ॥२

तदनन्तर उत्तानपाद के ध्रुव नाम का पुत्र हुआ। उसने भगवान् नारायण में भक्ति करके उत्तम स्थान को प्राप्त किया ।२

ध्रुवाच्छिष्टिश्च[3] भाव्यश्च भाव्याच्छम्भुर्व्यजायत ।
शिष्टेराधत्त सुच्छाया पञ्च पुत्रानकल्मषान् ॥३

ध्रुव से शिष्टि तथा भाव्य का जन्म हुआ। भाव्य से शम्भु उत्पन्न हुआ। शिष्टि से सुच्छाया ने पाँच निष्पाप पुत्रों का प्रसव किया ।३

वसिष्ठवचनाद्देवी तपस्तप्त्वा सुदुश्चरम् ।
आराध्य पुरुषं विष्णुं शालग्रामे जनार्दनम् ॥४

वसिष्ठ मुनि के वचन से उस देवी ने अत्यन्त दुश्चर तप करके शालग्राम में पुरुष विष्णु जनार्दन की आराधना की ।४

रिपुं रिपुञ्जयं विप्रं कपिलं[4] वृषतेजसम्[5] ।
नारायणपरान्शुद्धान्स्वधर्मपरिपालकान् ॥५

अतः उसने रिपु, रिपुञ्जय, विप्र, कपिल और वृषतेजा नामक पाँच पुत्रों का प्रसव किया। वे पुत्र नारायण-परायण, शुद्ध एवं स्वधर्म-परिपालक थे ।५

---

१. तयोरुत्तानपादस्येति पा०। २. भक्तो नारायणाद्देवादिति पा०। ३. ध्रुवात्सृष्टिश्च धान्यश्च भार्या शम्भुर्व्यजायत इति पा०। ४. विकलमिति, वृकलमिति, वृकमिति पा०। ५. वृकतेजसमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिपोराधत्त महिषी चाक्षुषं सर्वतेजसम् ।
सोऽजीजनत्पुष्करिण्यां सुरूपं[4] चाक्षुषं मनुम् ॥६

प्रजापतेरात्मजायां वीरणस्य[5] महात्मनः ।
मनोरजायन्त दश सुतास्ते[10] सुमहौजसः ॥७

कन्यायां सुमहावीर्यो वैराजस्य प्रजापतेः ।
ऊरुः पूरुः शतद्युम्नस्तपस्वी सत्यवाक्[11] शुचिः ॥८

अग्निष्टुदतिरात्रश्च सुद्युम्नश्चाभिमन्युकः ।
ऊरोरजनयत्पुत्रान्षडाग्नेयी महाबलान् ॥९

अङ्गं सुमनसं ख्यातिं[12] क्रतुमाङ्गिरसं शिवम् ।
अङ्गाद्वेनोऽभवत्पश्चाद्वैन्यो वेनादजायत ॥१०

रिपु की पत्नी ने सर्वतेजोमय चक्षुस् नामक पुत्र को जन्म दिया। उस चक्षु ने अपनी महात्मा वीरण प्रजापति की पुत्री पुष्करिणी नामक पत्नी से रूपवान् चाक्षुष मनु को उत्पन्न किया। चाक्षुष मनु ने प्रजापति वैराज की कन्या से अत्यन्त पराक्रमी तथा महान् तेजस्वी दस पुत्रों को उत्पन्न किया ऊरु, पूरु, शतद्युम्न, तपस्वी, सत्यवाक् शुचि, अग्निष्टुत्, अतिराज, सुद्युम्न और अभिमन्युक को। ऊरु से अग्नेयी ने अंग, सुमनस्, ख्याति, क्रतु, आंगिरस एवं शिव नामक अतीव बलवान् छह पुत्रों को प्रसव किया। अंग से वेग उत्पन्न हुआ और पश्चात् वेग से वैन्य की उत्पत्ति हुई ।६-१०।

योऽसौ पृथुरिति ख्यातः प्रजापालो महाबलः ।
येन दुग्धा मही पूर्वं प्रजानां हितकाम्यया[13] ॥११

नियोगाद्ब्रह्मणः साद्धं[6] देवेन्द्रेण महौजसा ।

जो वैन्य महाबलवान्, प्रजापालक तथा पृथु नाम से विख्यात हुए। जिन्होंने पहले प्रजाओं की भलाई के लिए ब्रह्मा की आज्ञा से महातेजस्वी इन्द्र के साथ पृथ्वी का दोहन किया ।११½

वेनपुत्रस्य वितते पुरा पैतामहे मखे ॥१२

सूतः पौराणिको जज्ञे मायारूपः स्वयं हरिः ।
प्रवक्ता सर्वशास्त्राणां धर्मज्ञो गुरुवत्सलः[14] ॥१३

पूर्वकाल में वेनपुत्र के अतिविस्तृत पैतामह यज्ञ में मायारूपधारी स्वयं हरि।

---

१. वेरण्यमिति, वीरिण्यामिति पा०। २. मरण्यस्य इति पा०। ३. नकुलायां महौजस इति, त इलायामिति पा०। ४. सत्यवानिति पा०। ५. स्वातिमिति पा०। ६. हितकारणादिति पा०। ७. गुणवत्सलः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पौराणिक सूत के रूप में जन्म ग्रहण किया, जो सभी शास्त्रों के प्रवक्ता, धर्मज्ञाता एवं गुरु-वत्सल थे।१२-१३।

तं मां वित्त मुनिश्रेष्ठाः पूर्वोद्भूतं सनातनम्।
अस्मिन्मन्वन्तरे व्यासः कृष्णद्वैपायनः स्वयम् ॥१४

मुनिश्रेष्ठों ! पूर्व में उत्पन्न एवं सनातन वह सूत मुझे समझिए। इस मन्वन्तर में वे हरि स्वयं कृष्णद्वैपायन व्यास हुए।१४

श्रावयामास मां प्रीत्या पुराणः[1] पुरुषो हरिः।
मदन्वये तु ये सूताः सम्भूता वेदवर्जिताः ॥१५
तेषां पुराणवक्तृत्वं वृत्तिरासीदजाज्ञया।

पुराण पुरुष हरि रूप व्यास ने मुझे प्रेम पूर्वक पुराण सुनाया। मेरे वंश में जो वेद वर्जित सूत उत्पन्न हुए थे, वे विष्णु की आज्ञा से पुराणों के वक्ता होकर जीविका चलाते थे।१५½

स च वैन्यः पृथुर्धीमान्सत्यसन्धो जितेन्द्रियः ॥१६
सार्वभौमो महातेजाः स्वधर्मपरिपालकः।
तस्य बाल्यात्प्रभृत्येव भक्तिर्नारायणेऽभवत् ॥१७

वह वैन्य विशाल बुद्धि वाला, सत्यप्रतिज्ञ, जितेन्द्रिय, चक्रवर्ती, महातेजस्वी और अपने धर्म का परिपालन करने वाला था। बाल्यकाल से ही उसकी भक्ति नारायण में थी।१६-१७।

गोवर्द्धनगिरिं[2] प्राप्तस्तपस्तेपे जितेन्द्रियः।
तपसा भगवान्प्रीतः शंखचक्रगदाधरः ॥१८

वह जितेन्द्रिय गोवर्धन पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगा। उसकी तपस्या से शंखचक्रगदाधारी भगवान् विष्णु प्रसन्न हो गये।१८

आगत्य देवो राजानं प्राह दामोदरः स्वयम्।
धार्मिकौ रूपसम्पन्नौ सर्वशस्त्रभृतांवरौ ॥१९
मत्प्रसादादसन्दिग्धौ पुत्रौ तव भविष्यतः।
एवमुक्त्वा हृषीकेशः स्वकीयां प्रकृतिं गतः ॥२०

आकर स्वयं दामोदर देव ने राजा से कहा—मेरी कृपा से तुम्हें निःसन्देह दो पुत्र होंगे, जो धार्मिक, रूपसम्पन्न तथा सकल शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ होंगे। इतना कहकर अपनी प्रकृति में स्थित (अन्तर्हित) हो गये।१९-२०।

---

१. पुराणमिति पा०। २. सम्बन्धनगिरिमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

.Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैन्योऽपि वेदविधिना निश्चलां भक्तिमुद्वहन् ।
सोऽपालयत्स्वकं राज्यं चिन्तयन्मधुसूदनम् ॥२१

पृथु भी वेदविधि से भगवान् में निश्चल भक्ति धारण करके मधुसूदन का चिन्तन करते हुए अपने राज्य का पालन करने लगे ।२१

अचिरादेव तन्वङ्गी भार्या तस्य शुचिस्मिता ।
शिखण्डिनं हविर्द्धानमन्तर्द्धानाद्व्यजायत ॥२२

शीघ्र ही पवित्र हास्य वाली तथा कृशांगी पृथु-पत्नी ने शिखण्डी, हविर्धान तथा अन्तर्धान नामक पुत्रों को उत्पन्न किया ।२२

शिखण्डिनोऽभवत्पुत्रः सुशील इति विश्रुतः ।
धार्मिको रूपसम्पन्नो वेदवेदाङ्गपारगः ॥२३

शिखण्डी का पुत्र सुशील नाम से प्रसिद्ध हुआ । वह धार्मिक, रूपवान् तथा वेद-वेदांग में पारंगत था ।२३

सोऽधीत्य विधिवद्वेदान्धर्मेण तपसि स्थितः ।
मतिञ्चक्रे भाग्ययोगात्संन्यासम्प्रति धर्मवित् ॥२४

वह धर्म से वेदों का विधिपूर्वक अध्ययन करके तपस्या करने में लग गये । फिर धर्मज्ञ सुशील ने भाग्ययोग से संन्यास के प्रति बुद्धि को मोड़ दिया ।२४

स कृत्वा तीर्थसंसेवां स्वाध्याये तपसि स्थितः ।
जगाम हिमवत्पृष्ठं[1] कदाचित्सिद्धसेवितम् ॥२५

वह तीर्थसेवन करके स्वाध्याय और तप में स्थित हो गया । किसी समय वह सिद्धों से सेवित हिमालय के पृष्ठभाग में पहुँचे ।२५

तत्र धर्मवनं[2] नाम धर्मसिद्धिप्रदं वनम् ।
अपश्यद्योगिनां गम्यमगम्यं ब्रह्मविद्विषाम् ॥२६

वहाँ धर्मसिद्धिदायक एक धर्मवन को उसने देखा, जो योगियों के लिए गम्य और ब्रह्मविद्वेषियों के लिए अगम्य था ।२६

तत्र मन्दाकिनीनाम सुपुण्या विमला नदी ।
पद्मोत्पलवनोपेता सिद्धाश्रमविभूषिता ॥२७

वहीं मन्दाकिनी नामक एक अत्यन्त पुण्यदायिनी निर्मल नदी थी, जो कमलवन से युक्त तथा सिद्धों के आश्रम से विभूषित थी ।२७

---

१. शृङ्गमिति पा० । २. धर्मपदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स तस्या दक्षिणे तीरे मुनीन्द्रैर्योगिभिर्युतम्[1] ।
सुपुण्यमाश्रमं रम्यमपश्यत्प्रीतिसंयुतः ॥२८

वह उस नदी के दक्षिण तट पर मुनीन्द्रों तथा योगियों से युक्त, अत्यन्त पवित्र और रमणीय आश्रम को देखकर हर्षित हुआ ।२८

मन्दाकिनीजले स्नात्वा सन्तर्प्य पितृदेवताः ।
अर्च्चयित्वा महादेवं पुष्पैः पद्मोत्पलादिभिः ॥२९

मन्दाकिनी के जल में स्नान करके देवताओं और पितरों का तर्पण किया । अनन्तर कमल आदि पुष्पों से महादेव की अर्चना की ।२९

ध्यात्वार्कसंस्थमीशानं शिरस्याधाय चाञ्जलिम् ।
सम्प्रेक्षमाणो भास्वन्तं तुष्टाव परमेश्वरम् ॥३०

फिर सूर्यमण्डल में अवस्थित शंकर का ध्यान करके अंजलि को सिर से लगाकर सूर्य की ओर देखते हुए परमेश्वर की स्तुति करने लगे ।३०

रुद्राध्यायेन गिरिशं रुद्रस्य चरितेन च ।
अन्यैश्च विविधैः स्तोत्रैः शाम्भवैर्वेदसम्भवैः ॥३१

रुद्राध्याय, रुद्र के चरित्र और वेदोत्पन्न अन्य विविध शिव-स्तुतियों से शंकर की स्तुति की ।३१

अथास्मिन्नन्तरेऽपश्यत्समायान्तं महामुनिम् ।
श्वेताश्वतरनामानं महापाशुपतोत्तमम् ॥३२

इसी बीच महान् शिव भक्त श्वेताश्वतर नामक महामुनि को आते हुए, उसने देखा ।३२

भस्मसन्दिग्धसर्वाङ्गं कौपीनाच्छादनान्वितम् ।
तपसा कर्षितात्मानं[2] शुक्लयज्ञोपवीतिनम् ॥३३

वे मुनि सर्वांग में भस्म लेपे हुए, कौपीनधारी, तपस्या से क्षीणकाय तथा धवल यज्ञोपवीत पहने हुए थे ।३३

समाप्य संतस्वं[3] शम्भोरानन्दास्राविलेक्षणः ।
ववन्दे शिरसा पादौ प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥३४

उन्होंने शंकर की स्तुति समाप्त की उनकी आँखें आनन्द के आँसुओं से भर गईं । हाथ जोड़कर मुनि के चरणों में शिर झुकाकर प्रणाम किया और यह वचन बोले ।३४

---

१. योगिभिर्युते इति पा० । २. हर्षितात्मानमिति पा० । ३. संस्तवपदं परिचर्यार्थे रूढमपि अत्र सम्यक्स्तवरूपे वर्त्तते इति मुख्यम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि यन्मे साक्षान्मुनीश्वर ।
योगीश्वरोऽद्य भगवान्दृष्टो योगविदां वरः ॥३५॥

मुनीश्वर ! मैं धन्य हूँ, अनुगृहीत हूँ जो साक्षात् योगीश्वर और योगवेत्ताओं में श्रेष्ठ आपने आज मुझे दर्शन दिया ।३५

अहो मे सुमहद्भाग्यं तपांसि सफलानि मे ।
किं करिष्यामि शिष्योऽहं तव मां पालयानघ ॥३६॥

अहा ! मेरा बड़ा भाग्य है । मेरी तपस्यायें सफल हो गईं । क्या करूँ ? मैं आपका शिष्य हूँ । निष्पाप ! आप मेरा पालन करें ।३६

सोऽनुगृह्याथ राजानं सुशीलं शीलसंयुतम् ।
शिष्यत्वे प्रतिजग्राह तपसा क्षीणकल्मषम् ॥३७

सुन्दर स्वभाव वाले तथा शीलवान् राजा पर अनुग्रह करके उन्होंने तपस्या द्वारा निष्पाप बने राजा को शिष्य बना लिया ।३७

सान्न्यासिकं विधिं कृत्स्नं कारयित्वा विचक्षणः ।
ददौ तदैश्वरं ज्ञानं स्वशाखाविहितव्रतम् ॥३८॥

संन्यास लेने की सम्पूर्ण विधि कराकर विद्वान् मुनि ने अपनी शाखा के अनुसार विहित व्रत तथा ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान उसे दे दिया ।३८

अशेषं[1] वेदसारं तत्पशुपाशविमोचनम् ।
अन्त्याश्रममिति ख्यातं ब्रह्मादिभिरनुष्ठितम् ॥३९

वह ज्ञान असीम, वेदों का सार, पशुपाश-विमोचक, अन्त्याश्रम नाम से विख्यात ब्रह्मा आदि के द्वारा अनुष्ठित है ।३९

उवाच शिष्यान्संप्रेक्ष्य ये तदाश्रमवासिनः ।
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या ब्रह्मचर्यपरायणाः ॥४०॥

उस आश्रम के वासी जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा ब्रह्मचर्यपरायण शिष्य थे, उन्हें देखकर कहा ।४०

मया प्रवर्त्तितां शाखामधीत्यैवेह योगिनः ।
समासते महादेवं ध्यायन्तो विश्वमैश्वरम्[2] ॥४१

योगिगण मेरे द्वारा प्रवर्तित शाखा का अध्ययन करके यहीं विश्वरूप परमेश्वर महादेव का ध्यान करते हुए आसीन हैं ।४१

---

१. अशेषवेदसारमिति पा० । २. निष्कलं शिवमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इह देवो महादेवो रममाणः सहोमया ।
अध्यास्ते भगवानीशो भक्तानामनुकम्पया ॥४२

यहीं भगवान् देवाधिदेव महादेव भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए उमा के साथ क्रीड़ा करते हुए रहते हैं ।४२

इहाशेषजगद्धाता पुरा नारायणः स्वयम् ।
आराधयन्महादेवं लोकानां हितकाम्यया ॥४३

यहां सम्पूर्ण जगत् का धारण करने वाले स्वयं नारायण ने लोगों की हित-कामना से पूर्वकाल में महादेव की आराधना की थी ।४३

इहैनं देवमीशानं देवानामपि दैवतम् ।
आराध्य महतीं सिद्धिं लेभिरे देवदानवाः ॥४४

यहीं देव-दानवों ने देवाधिदेव शंकर देव की आराधना करके महान् सिद्धि प्राप्त की थी ।४४

इहैव मुनयः सर्वे[1] मरीच्याद्या महेश्वरम् ।
दृष्ट्वा तपोबलाज्ज्ञानं लेभिरे सार्वकालिकम्[2] ॥४५

यहीं मरीचि आदि सभी मुनियों ने महेश्वर का दर्शन करके तपोबल से सब काल का ज्ञान प्राप्त किया था ।४५

तस्मात्त्वमपि राजेन्द्र तपोयोगसमन्वितः ।
तिष्ठ[3] नित्यं मया सार्द्धं ततः सिद्धिमवाप्स्यसि ॥४६

इसलिए राजेन्द्र ! आप भी तप और योग से युक्त होकर नित्य मेरे साथ रहिये । इससे आप सिद्धि प्राप्त कर लेंगे ।४६

एवमाभाष्य विप्रेन्द्रो देवं ध्यात्वा पिनाकिनम् ।
आचचक्षे महामन्त्रं यथावत्सर्वसिद्धये[4] ॥४७

सर्वपापोपशमनं वेदसारं विमुक्तिदम् ।
अग्निरित्यादिकं[5] पुण्यमृषिभिः सम्प्रवर्त्तितम् ॥४८

विप्रेन्द्र ने इस प्रकार कहकर शंकर देव का ध्यान करके सकल सिद्धि के लिए सर्वपापनाशक वेदों का सारभूत, मोक्षदायक तथा पुण्यदायक 'अग्नि' इत्यादि मंत्र का विधिपूर्वक उपदेश किया ।४७-४८।

---

१. पूर्वमिति पा० । २. सार्वकामिकमिति पा० । ३. आस्स्व इति पा० । ४. स्वार्थसिद्धये इति, तथा तत्कार्यसिद्धय इति पा० । ५. अस्तिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोऽपि तद्वचनाद्राजा सुशीलः श्रद्धयान्वितः ।
साक्षात्पाशुपतो भूत्वा वेदाभ्यासरतोऽभवत्[1] ॥४९

मुनि के वचन से वह सुशील राजा भी श्रद्धा-युक्त एवं साक्षात् पाशुपत (शिव-भक्त) होकर वेदाभ्यास में निरत हो गये ।४९

भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गः कन्दमूलफलाशनः ।
शान्तो दान्तो जितक्रोधः संन्यासविधिमाश्रितः ॥५०

वे संन्यास विधि का अवलम्बन लेकर सर्वांग में भस्म रमाते थे, कन्द-मूल-फल भोजन करते थे । शान्त, दान्त और क्रोधजयी हो गये थे ।५०

हविर्धानस्तथाग्नेय्या[2] जनयामास वै सुतम्[3] ।
प्राचीनबर्हिषं नाम्ना धनुर्वेदस्य पारगम् ॥५१

हविर्धान ने आग्नेयी से प्राचीन बर्हिष नामक पुत्र को उत्पन्न किया, जो धनुर्वेद में पारगंत था ।५१

प्राचीनबर्हिर्भगवान्सर्वशस्त्रभृतां वरः ।
समुद्रतनयायां वै दश पुत्रानजीजनत् ॥५२

शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ भगवान् प्राचीन बर्हि ने समुद्रपुत्री से दश पुत्रों को उत्पन्न किया ।५२

प्रचेतसस्ते विख्याता राजानः प्रथितौजसः ।
अधीतवन्तः स्वं[4] वेदं नारायणपरायणाः ॥५३

प्रचेतस् नाम से विख्यात वे पुत्र प्रसिद्ध पराक्रमी राजा हुए । उन्होंने नारायण-परायण होकर अपने वेद का अध्ययन किया ५३

दशभ्यस्तु प्रचेतोभ्यो मारिषायां प्रजापतिः ।
दक्षो जज्ञे महाभागो यः पूर्वं ब्रह्मणः सुतः ॥५४

दश प्रचेताओं से मारिषा में महाभाग प्रजापति दक्ष उत्पन्न हुए, जो पहले ब्रह्मा के पुत्र थे ।५४

स तु दक्षो महेशेन रुद्रेण सह धीमता ।
कृत्वा विवादं रुद्रेण शप्तः प्राचेतसोऽभवत् ॥५५

वे धीमान् दक्ष रुद्र शंकर से विवाद करके उनसे शाप पाकर प्राचेतस (प्रचेता-पुत्र) हुए ।५५

---

१. वेदात्मा सततोऽभवदिति पा० । २. हविर्धातुस्तथाग्नेयामिति पा० । ३. सत्सुतमिति, सुव्रतमिति पा० । ४. स्ते वेदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समायान्तं महादेवो दक्षं देव्या गृहं हरः ।
दृष्ट्वा यथोचितां पूजां दक्षाय प्रददौ स्वयम् ॥५६
तदा वै तमसाविष्टः सोऽधिकां ब्रह्मणः सुतः ।
पूजामनर्हामन्विच्छञ्जगाम कुपितो गृहम् ॥५७

महादेव ने महादेवी के घर आते हुए दक्ष को देखकर स्वयं उनकी यथोचित पूजा की किन्तु ब्रह्मपुत्र-दक्ष उस समय अधिक क्रोध से आविष्ट थे, अतः पूजा को अनुपयुक्त समझकर वे कुपित होकर घर से चले गये ।५६-५७।

कदाचित्स्वगृहं प्राप्तां सतीं दक्षः सुदुर्मनाः ।
भर्त्रा सह विनिन्द्यैनां भर्त्सयामास वै रुषा ॥५८

किसी समय अपने घर आयी हुई सती को (देखकर) खिन्नमना दक्ष ने क्रोध से पतिसहित सती की भर्त्सना की ।५८

अन्ये जामातरः श्रेष्ठा भर्तुस्तव पिनाकिनः ।
त्वमप्यसत्सुताऽस्माकं[1] गृहाद्गच्छ यथागतम् ।।५९

(उन्होंने कहा—)तुम्हारे पति शिव से मेरे और जामाता कहीं श्रेष्ठ हैं । तुम मेरी असत् पुत्री हो । जैसे आयी हो वैसी चली जाओ ।५९

तस्य तद्वाक्यमाकर्ण्य सा देवी शङ्करप्रिया ।
विनिन्द्य पितरं दक्षं ददाहात्मानमात्मना ॥६०

उनकी वह बात सुनकर शंकर की प्रिया उस देवी ने पिता दक्ष की निन्दा करके अपने से अपने को जला दिया ।६०

प्रणम्य पशुभर्त्तारं[2] भर्तारं कृत्तिवाससम् ।
हिमवद्दुहिता साभूत्तपसा तस्य तोषिता ॥६१

व्याघ्रचर्मधारी स्वामी पशुपति को प्रणाम करके हिमालय की तपस्या से सन्तुष्ट वह देवी हिमालय की पुत्री हुई ।६१

ज्ञात्वा तां[3] भगवान्रुद्रः प्रपन्नार्त्तिहरो हरः ।
शशाप दक्षं कुपितः समागत्याथ तद्गृहम् ॥६२
त्यक्त्वा देहमिमं ब्राह्मं क्षत्रियाणां कुले भव ।
स्वस्यां सुतायां मूढात्मा पुत्रमुत्पादयिष्यसि ॥६३

---

१. त्वमप्यस्मद्गृहाद्गच्छ सुतास्माकमिति पा० । २. पशुभर्त्तारं-पशूनां जीवानां भर्त्तारं पशुपतिमित्यर्थः । ३. तु इति पा३ । तू इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सती को दग्ध जानकर भक्त-पीड़ा-हारी भगवान् रुद्र महादेव ने कुपित होकर दक्ष के घर आकर उन्हें शाप दे दिया—तुम इस ब्राह्म शरीर को त्याग कर क्षत्रिय-कुल में जन्म लोगे और मूढात्मा होकर अपनी पुत्री से ही पुत्र उत्पन्न करोगे ।६३

एवमुक्त्वा[1] महादेवो ययौ कैलासपर्वतम् ।
स्वायम्भुवोऽपि कालेन दक्षः प्राचेतसोऽभवत् ॥६४

इस प्रकार कहकर महादेव कैलास पर्वत पर चले गये । स्वायम्भुव दक्ष भी काल क्रम से प्रचेतापुत्र होकर उत्पन्न हुए ।६४

एतद्वः कथितं सर्वं मनोः स्वायम्भुवस्य तु ।
निसर्ग[2] दक्षपर्यन्तं शृण्वतां पापनाशनम् ॥६५

स्वायम्भुव मनु की दक्ष पर्यन्त सृष्टि की यह कथा मैंने आप लोगों को बता दी, जो सुनने वालों के लिए पापनाशक है ।६५

[3]इति श्रीकूर्मपुराणे राजवंशानुकीर्त्तने चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

श्री कूर्मपुराण में राजवंश का अनुकीर्तन नामक चौदहवाँ अध्याय समाप्त ।१४।

पञ्चदशोऽध्यायः

अथ दक्षयज्ञविध्वंसनम्

देवानां दानवानाञ्च गन्धर्वोरगरक्षसाम् ।
उत्पत्तिं विस्तराद्ब्रूहि[4] सूत वैवस्वतेऽन्तरे ॥१

नैमिषारण्यवासी ऋषियों ने कहा—सूत जी ! वैवस्वत मनु के अधिकार-काल में देवों, दानवों, गन्धर्वों, सर्पों और राक्षसों की उत्पत्ति विस्तार से बताइए ।१

स शप्तः शम्भुना पूर्वं दक्षः प्राचेतसो नृपः ।
किमकार्षीन्महाबुद्धे श्रोतुमिच्छाम साम्प्रतम् ॥२

---

१. एवं शप्त्वा इति पा० । २. विसर्गमिति पा० । ३. अत्र अध्यायसमाप्तिर्न दृश्यते लिखितपुस्तके । ४. विस्तरात्सूत ब्रूहीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे महाबुद्धे ! पूर्वकाल में शिव से शाप मिलने पर राजा प्राचेतस दक्ष ने क्या किया ? वह अब हम सुनना चाहते हैं ।२

सूत उवाच

वक्ष्ये नारायणेनोक्तं पूर्वकल्पानुषङ्गिकम् ।
त्रिकालबद्ध[1] पापघ्नं प्रजासर्गस्य विस्तरम् ॥३[1]

सूत बोले—पूर्वकल्प के प्रसंग-क्रम में नारायण ने तीनों काल में पापनाशक प्रजा सृष्टि का विस्तार जो बताया था, उसे मैं कहूँगा ।३

स शप्तः शम्भुना पूर्वं दक्षः प्राचेतसो नृपः ।
विनिन्द्य[2] पूर्ववैरेण गंगाद्वारेऽयजद्भवम् ॥४

प्रचेता-पुत्र राजा दक्ष ने पूर्वकाल में शंकर द्वारा अभिशप्त होने पर पूर्व वैर के कारण निन्दा करके हरिद्वार में विष्णु-यज्ञ किया ।४

देवाश्च सर्वे भागार्थमाहूता[3] विष्णुना सह ।
सहैव मुनिभिः सर्वैरागता मुनिपुंगवाः ॥५

उस यज्ञ में भाग लेने के लिए विष्णु के साथ सभी देवगण तथा सभी मुनियों समेत महर्षिगण पधारे ।५

दृष्ट्वा देवकुलं[4] कृत्स्नं शंकरेण विना गतम् ।
दधीचो[5] नाम विप्रर्षिः प्राचेतसमथाब्रवीत् ॥६

शंकर के बिना आये हुए समस्त देव परिवार को देखकर दधीच नामक विप्रर्षि ने प्राचेतस से कहा ।६

दधीच[1] उवाच

ब्रह्माद्यास्तु पिशाचान्ता यस्याज्ञानुविधायिनः ।
स देवः साम्प्रतं रुद्रो विधिना किन्न[2] पूज्यते ॥७

दधीच बोले—ब्रह्मा आदि से लेकर पिशाच पर्यन्त जिनकी आज्ञा का पालन करते हैं, उन रुद्रदेव की विधिपूर्वक पूजा आप इस समय क्यों नहीं कर रहे हैं ? ।७

दक्ष उवाच

सर्वेष्वेव हि यज्ञेषु न भागः परिकल्पितः ।
न मन्त्रा[1] भार्यया सार्द्धं शंकरस्येति नेज्यते[2] ॥८

---

१. त्रिकालवन्तमिति पा० । २. विचिन्त्येति । ३. भोगार्थमाहूता इति पा० । ४. देवगणसर्वं । ५. दधीचिर्नामेति पा० । ६. दधीचिरिति पा० । ७. किं स । ८. नमस्ते । ९. नेष्यते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्ष बोले—सभी यज्ञों में पत्नी समेत इसे भाग नहीं दिया गया है। तथा इसके लिए मंत्रों की कल्पना भी नहीं की गयी है। इसलिए शंकर की पूजा नहीं की।८

विहस्य दक्षं कुपितो वचः प्राह महामुनिः।
शृण्वतां सर्वदेवानां सर्वज्ञानमयः[1] स्वयम् ॥९

स्वयं सर्वज्ञानमय महामुनि दधीच कुपित होकर उच्च हास्य करके सभी देवताओं को सुनाते हुए बोले।९

दधीच उवाच

यतः प्रवृत्तिर्विश्वात्मा यश्चासौ[2] परमेश्वरः।
सम्पूज्यते सर्वयज्ञैर्विदित्वा किन्न शङ्करः ॥१०

दधीच ने कहा—जिनसे सबकी उत्पत्ति हुई है, जो विश्व के आत्मा स्वरूप हैं एवं जो परमेश्वर हैं, यह जानकर क्या सभी यज्ञों द्वारा शंकर की पूजा नहीं की जाती है ?।१०

दक्ष उवाच

न ह्ययं शङ्करो रुद्रः[3] संहर्त्ता तामसो हरः।
नग्नः कपाली विदितो विश्वात्मा नोपपद्यते ॥११

दक्ष बोले—यह रुद्र शंकर (मंगलकर्ता) नहीं है, यह तो संहार करने वाला तामस हर है। यह नंगा तथा कपाली (कपालमालाधारी) के रूप मे लोगों को विदित है। इसे विश्वात्मा कहना उचित नहीं है।११

ईश्वरो हि जगत्स्रष्टा प्रभुर्नारायणो हरिः[4]।
सत्त्वात्मकोऽसौ भगवानिज्यते सर्वकर्मसु ॥१२

प्रभु नारायण हरि ही ईश्वर तथा जगत् की सृष्टि करने वाले हैं। सत्त्वगुणावलम्बी वही भगवान् सभी कर्मों में पूजित होते हैं।१२

दधीच उवाच

किं त्वया भगवानेष सहस्रांशुर्न दृश्यते।
सर्वलोकैकसंहर्त्ता कालात्मा परमेश्वरः ॥१३

दधीच बोले—क्या तुम्हें समस्त लोकों के एकमात्र संहारकर्ता तथा कालस्वरूप ये भगवान् सहस्ररश्मि परमेश्वर दिखाई नहीं दे रहे हैं ?।१३

१, सर्वज्ञानमयो हि स इति पा०। २. यश्चास्य इति पा०। ३. भद्रः। ४. स्वराडिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यं गृह्णन्तीह विद्वांसो धार्मिका ब्रह्मवादिनः ।
सोऽयं साक्षी तीव्ररुचिः कालात्मा शाङ्करी तनुः ॥१४

जिनकी स्तुति ब्रह्मवादी, धार्मिक, विद्वान् लोग करते हैं। सो ये सर्वलोकसाक्षी, कालात्मा, तीव्ररश्मि (सूर्य) महादेव की मूर्ति हैं।१४

एष रुद्रो महादेवः कपाली[1] च घृणी हरः ।
आदित्यो भगवान्सूर्यो नीलग्रीवो विलोहितः ॥१५

ये रुद्र ही महादेव, कपाली, दयालु महादेव, आदित्य, सूर्यदेव नीलकण्ठ एवं विलोहित हैं।१५

संस्तूयते सहस्रांशुः साम्नाध्वर्युहोतृभिः ।
पश्यैनं[2] विश्वकर्माणं रुद्रमूर्तिं त्रयीमयम् ॥१६

सामवेदाध्यायी अध्वर्यु तथा होतृगण सहस्रांशु की स्तुति किया करते हैं। आप इन विश्वकर्मा, वेदमय, रुद्रमूर्ति को देखिए।१६

दक्ष उवाच

य एते द्वादशादित्या आगता यज्ञभागिनः ।
सर्वे सूर्या इति ज्ञेया न ह्यन्यो विद्यते रविः ॥१७

दक्ष बोले—जो यह बारह आदित्य यज्ञ में भाग लेने के लिए आये हैं, इन सब को सूर्य समझना। इनके अतिरिक्त और कोई सूर्य नहीं है।१७

एवमुक्ते तु मुनयः समायाता दिदृक्षवः ।
बाढमित्यब्रुवन्दक्षं तस्य साहाय्यकारिणः ॥१८

दक्ष के ऐसा कहने पर यज्ञ देखने की इच्छा से जो मुनि वहाँ आये थे, उन्होंने दक्ष की सहायता करने के निमित्त उनसे कहा—बिलकुल ठीक है।१८

तमसाविष्टमनसो न पश्यन्तो[3] वृषध्वजम् ।
सहस्रशोऽथ शतशो बहुशो भूय[4] एव हि ॥१९

शतशः सहस्रशः बहुत से मुनियों ने अज्ञानावृतचित्त होने के कारण शंकर को नहीं देखा।१९

निन्दन्तो वैदिकान्मन्त्रान् सर्वभूतपतिं हरम् ।
अपूजयन्दक्ष[5] वाक्यं मोहिता विष्णुमायया ॥२०

---

१. सोऽर्थंसाक्षीति पा०। २. कपर्दीति पा०। ३. पश्यन्ति। ४. मन्यंते इति पा०। ५. भूय एव विनिन्द्यते इति पा०। ६. विष्णुवाक्यमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णु की माया से मोहित वे लोग वैदिक मन्त्रों और समस्त प्राणियों के स्वामी शिव की निन्दा करते हुए, दक्ष के वचन का अनुमोदन करने लगे ।२०

देवाश्च सर्वे भागार्थमागता वासवादयः ।
नापश्यन्देवमीशानमृते नारायणं हरिम् ॥२१

यज्ञ में भाग लेने के लिए आये हुए इन्द्र आदि देवताओं ने नारायण हरि को छोड़कर शंकर देव को नहीं देखा ।२१

हिरण्यगर्भो भगवान्ब्रह्मा ब्रह्मविदां वरः ।
पश्यतामेव सर्वेषां क्षणादन्तरधीयत ॥२२

ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् हिरण्यगर्भ ब्रह्मा सबके देखते ही क्षणभर में अन्तर्ध्यान हो गये ।२२

अन्तर्हिते भगवति दक्षो नारायणं हरिम् ।
रक्षकं जगतां[1] देवं जगाम शरणं स्वयम् ॥२३

भगवान् के अन्तर्हित हो जाने पर दक्ष संसार के रक्षक नारायण देव हरि की शरण में गये ।२३

प्रवर्त्तयामास च तं यज्ञं दक्षोऽथ निर्भयः ।
रक्षको[2] भगवान्विष्णुः शरणागतरक्षकः ॥२४

दक्ष निर्भय होकर यज्ञ करने लगे। शरणागत के रक्षक भगवान् विष्णु उनके रक्षक थे ।२४

पुनः प्राह च तं दक्षं दधीचो भगवान्मुनिः ।
संप्रेक्ष्यर्षिगणान्देवान्सर्वान्वै रुद्रविद्विषः ॥२५

भगवान् दधीच ऋषिगणों और सभी देवों को रुद्रद्वेषी देखकर दक्ष से पुनः बोले ।२५

अपूज्य पूजने चैव पूज्यानां चाप्यपूजने ।
नरः पापमवाप्नोति महद्वै नात्र संशयः ॥२६

अपूज्य व्यक्ति की पूजा करने और पूज्य व्यक्ति की पूजा न करने पर मनुष्य महान् पापभागी होता है, इसमें सन्देह नहीं ।२६

असतां प्रग्रहो यत्र सताञ्चैव विमानना ।
दण्डो[3] दैवकृतस्तत्र सद्यः पतति दारुणः ॥२७

जहाँ असज्जनों का सम्मान और सज्जनों का अपमान होता है, वहाँ दैवनिर्दिष्ट घोर दण्ड तुरन्त आ गिरता है ।२७

---

१. जगतोविष्णुं । २. रक्षते । ३. दण्डादिकृतत ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवमुक्त्वाथ[1] विप्रर्षिः शशापेश्वरविद्विषः ।
समागतान्ब्राह्मणांस्तान्दक्षसाहाय्यकारिणः ॥२८

इस प्रकार कहकर विप्रर्षि ने शंकर-द्वेषियों को शाप दे दिया। दक्ष की सहायता करने वाले समागत उन सभी ब्राह्मणों को शाप पड़ गया ।२८

यस्माद्बहिः कृतो वेदाद्भवद्भिः[2] परमेश्वरः ।
विनिन्दितो महादेवः शंकरो लोकवन्दितः[3] ॥२९

भविष्यन्ति[4] त्रयीबाह्याः सर्वेऽपीश्वरविद्विषः ।
[5]निन्दन्तोहैश्वरं मार्गं कुशास्त्रासक्तचेतसः ॥३०

मुनि ने कहा—जिसलिए आप लोगों ने परमेश्वर को वेद से बहिष्कृत करके लोकवन्दित महादेव शंकर की निन्दा की है इसलिए सभी वेद बहिष्कृत और ईश्वर-द्वेषी होंगे। कुशास्त्रों में आसक्तचित्त होकर ईश्वरीय मार्ग के निन्दक होंगे ।२९-३०।

मिथ्याधीतसमाचारा मिथ्याज्ञानप्रलापिनः ।
प्राप्य घोरं कलियुगं कलिजैः परिपीडिताः[6] ॥३१

मिथ्या समाचार का अध्ययन करेंगे, मिथ्या ज्ञान का प्रलाप करेंगे। घोर कलियुग को प्राप्त करके कलियुगी लोगों से परिपीडित होंगे ।४

त्यक्त्वा तपोबलं कृत्स्नं गच्छध्वं नरकान्पुनः ।
भविष्यति हृषीकेशः स्वाश्रितोऽपि पराङ्मुखः ॥३२

सम्पूर्ण तपोबल को त्यागकर नरकों में जायेंगे। अपने आश्रित हृषीकेश भी आप लोगों से पराङ्मुख हो जायेंगे ।३२

एवमुक्त्वाथ विप्रर्षिर्विरराम तपोनिधिः ।
जगाम मनसा रुद्रमशेषाघविनाशनम् ॥३३

इस प्रकार कहकर तपोनिधि ब्रह्मर्षि विरत हो गये और मन से, अशेषपापनाशी रुद्र के पास पहुँच गये ।३३

एतस्मिन्नन्तरे देवी महादेवं महेश्वरम् ।
पतिं पशुपतिं देवं ज्ञात्वैतत्प्राह सर्वदृक्[7] ॥३४

इतने में सर्वदर्शिनी सती देवी यह सब जानकर महादेव, महेश्वर, पशुपति, पतिदेव से बोलीं ।३४

---

१. एवमुक्त्वा स इति पा०। २. देवो भवद्भिरिति पा०। ३. लोकपूजित इति पा०। ४. भविष्यध्वमिति पा०। ५. निन्दन्तो ह्यैश्वरं मार्गं कुशास्त्रासक्तमानसा इति पा०। ६. परिवर्द्धिता इति पा०। ७. विश्ववित्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीदेव्युवाच

दक्षो यज्ञेन यजते पिता मे पूर्वजन्मनि ।
विनिन्द्य भवतो भावमात्मानं चापि शंकर ॥३५

श्री देवी ने कहा—हे शंकर मेरे पूर्व जन्म के पिता दक्ष आपके भाव की तथा अपनी भी निन्दा करके यज्ञ कर रहे हैं ।३५

देवा[1] महर्षयश्चासंस्तत्र साहाय्यकारिणः ।
विनाशयाशु तं यज्ञं वरमेतं वृणोम्यहम् ॥३६

उसमें देवता और महर्षिगण उनकी सहायता कर रहे हैं । आप शीघ्र उस यज्ञ को नष्ट कर दें, यह वर मैं माँगती हूँ ।३६

एवं विज्ञापितो देव्या देवदेवः परः प्रभुः ।
ससर्ज सहसा रुद्रं दक्षयज्ञजिघांसया ॥३७

इस प्रकार देवी के निवेदन करने पर देवों के देव परम प्रभु शंकर ने दक्ष-यज्ञ का विध्वंस करने के लिए सहसा रुद्र का सृजन किया ।३७

सहस्रशिरसं[2] क्रुद्धं सहस्राक्षं महाभुजम् ।
सहस्रपार्णि दुर्द्धर्षं युगान्तानलसन्निभम् ॥३८

उस रुद्र के हजार सिर, हजार नेत्र और हजार हाथ थे । वह क्रुद्ध, दुर्धर्ष तथा प्रलयकालीन अग्नि के समान था ।३८

दंष्ट्राकरालं दुष्प्रेक्ष्यं शङ्खचक्रधरं[3] प्रभुम् ।
दण्डहस्तं[4] महानादं शार्ङ्गिणं भूतिभूषणम् ॥३९

उसकी दंष्ट्रा भयंकर थी । वह दुर्धर्ष, शंख-चक्रधारी प्रभु, दण्डहस्त, महाशब्द-कारी, और भस्मभूषित था ।३९

वीरभद्र इति ख्यातं देवदेवसमन्वितम्[5] ।
स जातमात्रो देवेशमुपतस्थे कृताञ्जलिः ॥४०

वह बीरभद्र नाम से प्रसिद्ध तथा देवदेव (शिव) से समन्वित था । वह उत्पन्न होते ही हाथ जोड़कर शंकर के समीप उपस्थित हुआ ।४०

---

१. देवाः सप्तर्षिभिस्तंत्र येन इति पा० । २. सहस्रशीर्षपादञ्चेति पा० । ३. शंखचक्रगदाधरमिति पा० । ४. महाप्रभं दण्डहस्तं महानन्दं सुशार्ङ्गिणम् । भूतिभूषणसंबन्धं महादेवमिवापरम् । ५. देवदेवसमत्विषमिति, देवं देवसमन्वितमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमाह[1] दक्षस्य मखं विनाशाय शिवोऽस्तु ते ।
विनिन्द्य[2] मां स यजते गङ्गाद्वारे गणेश्वर ॥४१

उससे शिव ने कहा—हे गणेश्वर ! दक्ष के यज्ञ का विध्वंस करो। वे मेरी निन्दा करके गंगाद्वार में यज्ञ कर रहे हैं ।४१

ततो बन्धप्रमुक्तेन सिंहेनैकेन[3] लीलया ।
वीरभद्रेण दक्षस्य विनाशमगमत्क्रतुः ॥४२

तदनन्तर बन्धन से छूटे हुए सिंह के समान वीरभद्र ने लीलापूर्वक जाकर दक्ष के यज्ञ का विनाश कर दिया ।४२

मन्युना चोमया सृष्टा भद्रकाली महेश्वरी ।
तया च साद्धं[4] वृषभं समारुह्य ययौ गणः ॥४३

देवी (पार्वती) ने भी क्रोध से महेश्वरी भद्रकाली की सृष्टि की। बैल पर चढ़ कर वीरभद्र भद्रकाली के साथ दक्ष यज्ञ में पहुँचा ।४३

अन्ये सहस्रशो रुद्रा निसृष्टास्तेन धीमता ।
रोमजा इति विख्यातास्तस्य साहाय्यकारिणः ॥४४

उस धीमान् ने दूसरे सहस्रों रुद्र की सृष्टि की। उसकी सहायता करने वाले वे गण रोम से उत्पन्न हुए ।४४

शूलशक्तिगदाहस्ता[5] दण्डोपलकरास्तथा ।
कालाग्निरुद्रसङ्काशा नादयन्तो दिशो दश ॥४५

उनके हाथों में त्रिशूल, शक्ति और गदा थी। वे कालाग्नि रुद्र के समान दसों दिशाओं में नाद कर रहे थे। ४५

सर्वे वृषभमारूढा[6] सभार्याश्चातिभीषणाः ।
समावृत्य गणश्रेष्ठं[7] ययुर्दक्षमखं प्रति ॥४६

अत्यन्त भयानक वे गण पत्नियों सहित बैल पर आरूढ होकर गणश्रेष्ठ (वीरभद्र) को घेर कर दक्ष-यज्ञ की ओर जाने लगे ।४६

सर्वे सम्प्राप्य तन्देशं गङ्गाद्वारमिति श्रुतम् ।
ददृशुर्यज्ञदेशं वै दक्षस्यामिततेजसः[8] ॥४७

---

१. तमाह दक्षस्य मुखं विनाशय शिवन्त्विति इति पा०। २. विनीय इति, विनीय लघूकृत्य इत्यर्थः। ३. सिंहेनैवेत्य इति पा० एकेन सिंहेन इव इति शेषः। ४. हस्ताष्टंकोपल। ५. वृषसमारूढा इति पा०। ६. गणश्रेष्ठा ययुर्दक्षगृहं। ७. समासीनं प्रजापतिमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी ने गंगाद्वार में उस स्थान पर जाकर अमित तेजस्वी दक्ष के यज्ञ-स्थान को देखा ।४७

देवाङ्गनासहस्राढ्यमप्सरोगीतनादितम् ।
वेणुवीणानिनादाढ्यं वेदवादाभिनादितम् ॥४८

वहाँ हजारों देवांगनायें तथा अप्सरायें गीत गाने में व्यस्त थीं। वंशी और वीणा बज रही थीं और वेदध्वनि हो रही थी ।४८

दृष्ट्वा सर्हाषभिर्देवैः समासीनम्प्रजापतिम् ॥४९
उवाच स[1] प्रियो रुद्रैर्वीरभद्रः स्मयन्निव ॥५०

देवों और ऋषियों के साथ बैठे हुए प्रजापति (दक्ष) को देखकर रुद्रों का प्रिय वह वीरभद्र मुसकराते हुए बोला—।४९-५०।

वयं ह्यनुचराः[2] सर्वे शर्वस्यामिततेजसः ।
भागार्थं लिप्सया भागान् प्राप्ता यच्छत्वभीप्सितान् ॥५१

हम लोग अमित तेजस्वी शंकर के अनुचर हैं। यज्ञ में भाग लेने के लिए आये हैं। हमें अभीष्ट भाग दीजिए ।५१।

अथ चेत्कस्यचिदियं[3] माया मुनिवरोत्तमाः ।
भागो भद्रवभ्यो[4] देयस्तु नास्मभ्यमिति कथ्यताम् ॥५२
तम्ब्रूताज्ञापयति यो वेत्स्यामो[5] हि वयं ततः ।
एवमुक्ता गणेशेन प्रजापतिपुरःसराः ॥५३

हे मुनिश्रेष्ठो ! यदि यह किसी की माया (आज्ञा) है कि आप लोगों को भाग देना चाहिए हम लोगों को नहीं तो जिसने आज्ञा दी है, उसे बता दीजिए। हम समझ लेंगे। इस प्रकार गणेश के द्वारा कहे जाने पर प्रजापति को आगे करके देवताओं ने कहा ।५२-५३।

देवा ऊचुः

प्रमाणं[6] वो न जानीमो भागे मन्त्रा इति प्रभुम् ।
मन्त्रा ऊचुः सुरा यूयं तमोपहतचेतसः ॥५४

देवगण बोले—आपलोगों को भाग देने में मन्त्र प्रमाण नहीं हैं। (इस पर) मन्त्र गण बोल उठे—देवताओ ! तुम लोगों का चित्त अज्ञान से उपहत है ।५४

---

१. भद्रया । २. धनुर्धराः । ३. भागाभिलिप्सया प्राप्ता भागान्यच्छध्वमीप्सितानिति पा० । ४. कस्यचिदियमाज्ञा मुनिसुरोत्तमा इति पा० । ५. भगवतो देयमस्मभ्यमिति । ६. विनंक्ष्यामो वयं तत इति पा० । ७. नेज्यते यज्ञभागेन न च मन्त्रा इति प्रभुरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

येनाध्वरस्य राजानं पूजयेयुर्महेश्वरम्[1] ।
ईश्वरः सर्वभूतानां सर्वदेवतनुर्हरः[2] ॥५५

इसलिए यज्ञ के राजा महेश्वर की पूजा करें (क्योंकि) शंकर सभी प्राणियों तथा सभी देवताओं के शरीर हैं ।५५

पूज्यते सर्वयज्ञेषु सर्वाभ्युदयसिद्धिदः ।
एवमुक्त्वा महेशानमायया[3] नष्टचेतनाः ॥५६
न मेनिरे ययुर्मन्त्रा देवान्मुक्त्वा स्वमालयम् ।
ततः सभद्रो[4] भगवान् सभार्यः सगणेश्वरः ॥५७
स्पृशन् कराभ्यां विप्रर्षिं[5] दधीचं प्राह देवहा ।
मन्त्राः प्रमाणं न कृता युष्माभिर्बलदर्पितैः ॥५८

सब प्रकार की सम्पदा तथा सिद्धि देने वाले शिव समस्त यज्ञों में पूजे जाते हैं। इस प्रकार कहकर और शंकर की माया से नष्ट चेतना वाले देवों के न मानने पर उन्हें छोड़कर मन्त्रगण अपने निवास स्थान को चले गये। तदनन्तर गणेश्वर और भार्या सहित भगवान् वीरभद्र विप्रर्षि दधीच का दोनों हाथों से स्पर्श करके देवताओं से बोले— बल से गर्वित होकर आप लोगों ने मन्त्रों को प्रमाण नहीं माना ।५६-५८।

यस्मात्प्रसह्य तस्माद्वो नाशयाम्यद्य गर्वितान् ।
इत्युक्त्वा यज्ञशालां तां ददाह गणपुङ्गवः ॥५९

जिसलिए बलपूर्वक तुम लोगों ने ऐसा किया, अतः गर्वीले तुम लोगों को अभी विनष्ट कर देता हूँ। इतना कहकर गणश्रेष्ठ ने उस यज्ञशाला को जला दिया ।५९

गणेश्वराश्च संक्रुद्धा यूपानुत्पाट्य चिक्षिपुः ।
प्रस्तोत्रा सह होत्रा च अश्वञ्चैव गणेश्वराः ॥६०

गणेश्वरों ने अत्यन्त कुपित होकर यूपों को उखाड़कर फेंक दिया। प्रस्तोता और होता के साथ अश्व को भी फेंका ।६०

गृहीत्वा भीषणाः सर्वे गङ्गास्रोतसि चिक्षिपुः ।
वीरभद्रोऽपि दीप्तात्मा शक्रस्यैवोद्यतं[6] करम् ॥६१

---

१. पूजयध्वं महेश्वरम् । २. सर्वभूततनुर्हरिरिति पा० । ३. महेशानमिति पा० । ४. ततः स रुद्रो भगवानिति पा० । ५. ब्रह्मर्षिं दधीचमिति पा० । ६. शक्रस्योद्यच्छतः करमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यष्टम्भयददीनात्मा तथान्येषां दिवौकसाम् ।
भगनेत्रे[1] तथोत्पाटच करायेणैव लीलया ॥६२

सब भीषण गणेश्वरों उन्हें पकड़कर गंगा के प्रवाह में फेंक दिया। अदुःखितचित्त तथा दीप्तात्मा वीरभद्र ने प्रहार करने को उद्यत इन्द्र तथा अन्यान्य देवताओं के हाथ को स्तम्भित कर दिया। फिर अपनी अंगुली से ही भग देवता के नेत्र लीलापूर्वक निकाल लिये।६१-६२।

निहत्य मुष्टिना दन्तान् पूष्णश्चैवमपातयत् ।
तथा चन्द्रमसं देवं पादाङ्गुष्ठेन लीलया ॥६३

धर्षयामास बलवान् स्मयमानो गणेश्वरः ।
वह्नेर्हस्तद्वयं छित्त्वा[2] जिह्वामुत्पाटच लीलया ॥६४

मुष्टि प्रहार करके पूषा देवता के दाँतो को गिरा दिया और बलवान् गणेश्वर ने मुसकराते हुए अपने पैर के अंगूठे से लीलापूर्वक चन्द्रदेव को दबा दिया, अग्निदेव के दोनों हाथ काटकर लीलापूर्वक जीभ उखाड़ ली।६३-६४।

जघान मूर्ध्नि पादेन मुनीनपि मुनीश्वराः[3] ।
तथा विष्णुं सगरुडं समायान्तं महाबलः ॥६५

विव्याध निशितैर्बाणैः स्तम्भयित्वा सुदर्शनम् ।
समालोक्य महाबाहुरागत्य गरुडो गणम् ॥६६

जघान पक्षैः सहसा ननादाम्बुनिधिर्यथा ।
ततः सहस्रशो रुद्रः[4] ससर्ज गरुडान् स्वयम् ॥६७

वैनतेयादभ्यधिकान् गरुडं[5] ते प्रदुद्रुवुः ।
तान्दृष्ट्वा गरुडो धीमान् पलायत[6] महाजवः ॥६८

मुनीश्वरवृन्द ! महाबली गणेश्वर ने मुनियों को भी लात मारी। फिर गरुड सहित आते हुए विष्णु को तीक्ष्ण बाणों से बेध कर सुदर्शनचक्र को स्तम्भित कर दिया। यह देखकर महापराक्रमी गरुड एकाएक आकर अपने पंखों से रुद्रगण पर प्रहार करते हुए, समुद्र के समान गरजने लगे। तब रुद्र ने स्वयं हजारों गरुडों की सृष्टि कर ली जो विनतापुत्र गरुड से भी बढ़-चढ़कर थे। उन्होंने गरुड पर आक्रमण कर दिया। उन्हें देखकर महावेगशाली बुद्धिमान् गरुड भाग गये।६५-६८।

---

१. भगस्य नेत्रे चोत्पाटच करजाग्रेण इति पा०। २. भित्त्वा। ३. मुनीश्वरान्। ४. भद्र इति पा०। ५. गरुडन्तमिति पा०। ६. धीमानपायत इति, अपायत पलायत अप-अय-त।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विसृज्य माधवं वेगात्तदद्भुतमिवाभवत्[1] ।
अन्तर्हिते वैनतेये भगवान् पद्मसम्भवः ॥६९

वेग से भागते हुए उन्होंने विष्णु को भी छोड़ दिया, यह अद्भुत बात हुई । गरुड के अन्तर्हित हो जाने पर भगवान् ब्रह्मा आये ।६९

आगत्य वारयामास वीरभद्रञ्च केशवम् ।
प्रासादयामास च तं गौरवात्परमेष्ठिनः ॥७०

वे वीरभद्र और विष्णु को रोक कर बीच बचाव करने लगे । ब्रह्मा के प्रति आदरभाव के कारण दोनों प्रसन्न हो गये ।७०

संस्तूय[2] भगवानीशं शम्भुस्तत्रागमत्स्वयम् ।
वीक्ष्य देवाधिदेवं तमुमां सर्वगुणैर्वृताम् ॥७१

तुष्टाव भगवान् ब्रह्मा दक्षः सर्वे दिवौकसः ।
विशेषात्पार्वतीं देवीमीश्वरार्द्धशरीरिणीम् ॥७२

भगवान् ब्रह्मा ने शंकर की स्तुति की । शंभु स्वयं वहाँ आये । देवाधिदेव महादेव तथा सर्वगुणसम्पन्ना उमा को देखकर भगवान् ब्रह्मा, दक्ष तथा सभी देवता उनकी स्तुति करने लगे, विशेषरूप से शिव की अर्धशरीरधारिणी पार्वती देवी की स्तुति में जुट गये ।७१-७२।

स्तोत्रैर्नानाविधैर्दक्षः प्रणम्य च कृताञ्जलिः ।
ततो भगवती देवी प्रहसन्ती महेश्वरम् ॥७३

दक्ष ने हाथ जोड़कर प्रणाम करके अनेक प्रकार के स्तोत्रों से उनकी स्तुति की । तब भगवती देवी ने हँसकर महेश्वर से कहा ।७३

प्रसन्नमनसा रुद्रं वचः प्राह घृणांनिधिः[3] ।
त्वमेव जगतः स्रष्टा शासिता चैव रक्षिता[4] ॥७४

दयानिधि ने प्रसन्न मन से रुद्र से कहा—आप ही जगत् के स्रष्टा, शासक तथा रक्षक हैं ।७४

अनुग्राह्यो भगवता दक्षश्चापि दिवौकसः[5] ।
ततः प्रहस्य भगवान् कपर्दी[6] नीललोहितः ॥७५

---

१. भवत् । विहन्तुं वीरभद्रस्तु केशवं हीनविक्रमम् । शूलमुद्यम्य वेगेन यावद्धन्तुं मनोदधे । ब्रह्मणा विश्रुतं तच्च दधाव पद्मसंभवः । २. संश्रुत्य भगवानीशः साम्बस्तत्रागमत्स्वयम् । संवीक्ष्य देवं तं साम्बं तदा सर्वगणैर्वृतम् । ३. घृणानिधिः करुणालयः । "कारुण्यं करुणा घृणा" इत्यमरः । ४. रक्षक इति पा० । ५. दिवौकसाम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उवाच प्रणतान्देवान् प्राचेतसमथो हरः ।
गच्छध्वं[1] देवताः सर्वाः प्रसन्नो भवतामहम् ॥७६

भगवान् दक्ष एवं देवताओं पर भी अनुग्रह करें । तदनन्तर कपर्दी, नीललोहित भगवान् शिव हँसकर प्रणत देवगण तथा दक्षराज से बोले—सभी देवगण आप जायँ । मैं आप लोगों से प्रसन्न हूँ ।७५-७६।

संपूज्यः सर्वयज्ञेषु न निन्द्योऽहं विशेषतः ।
त्वञ्चापि शृणु मे दक्ष वचनं सर्वरक्षणम्[2] ॥७७

मैं सभी यज्ञों में पूज्य हूँ, विशेषतः मेरी निन्दा नहीं करनी चाहिए । दक्ष ! तुम भी सब की रक्षा करने वाला मेरा वचन सुनो ।७७

त्यक्त्वा लोकैषणामेतां मद्भक्तो भव यत्नतः ।
भविष्यसि गणेशानः कल्पान्तेऽनुग्रहान्मम ॥७८

तुम इस लोकैषणा को जीत कर यत्नपूर्वक मेरा भक्त बन जाओ । कल्प के अन्त में तुम मेरी कृपा से गणेश्वर होगे ।७८

तावत्तिष्ठ ममादेशात्स्वाधिकारेषु निर्वृतः ।
एवमुक्त्वा तु[3] भगवान् सपत्नीकः सहानुगः ॥७९
अदर्शनमनुप्राप्तो दक्षस्यामिततेजसः ।
अन्तर्हिते महादेवे शंकरे पद्मसम्भवः ॥८०
व्याजहार स्वयं दक्षमशेषजगतो हितम् ।

ब्रह्मोवाच

किञ्चायं[4] भवतो मोहः प्रसन्ने वृषभध्वजे ॥८१

तब तक तुम मेरे आदेश से अपने अधिकार का पालन करो । ऐसा कर भगवान् पत्नी और अनुचरों के साथ अमित तेजस्वी दक्ष के सामने से अन्तर्हित हो गये । शंकर महादेव के अदृश्य हो जाने पर स्वयं ब्रह्मा ने दक्ष से संसार के कल्याण की बात कही ।

ब्रह्मा बोले—शंकर के प्रसन्न हो जाने पर आपका यह कैसा मोह है ।७९-८१।

यदा[5] च स स्वयं देवः पालयेत्त्वामतन्द्रितः[6] ।
सर्वेषामेव भूतानां हृद्येष परमेश्वरः[7] ॥८२

---

१. गच्छध्वमित्यार्षं, गच्छत इति साधु । २. सर्वलक्षणमिति पा० । ३. लोकैषणां लोकानामेषणां प्रेषणां दुष्प्रवर्त्तनामित्यर्थः । ४. स इति पा० । ५. किं तवापगतो मोह इति पा० । ६. यदाचष्टे । ७. पालयैतदतन्द्रितः । ८. वसतीश्वर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब कि वे निरालस्यभाव से स्वयं आपका पालन करेंगे। वे परमेश्वर सभी प्राणियों के हृदय में रहते हैं।८२

पश्यन्ति[1] यं ब्रह्मभूता विद्वांसो वेदवादिनः।
स चात्मा[2] सर्वभूतानां स बीजं परमा गतिः ॥८३

उन्हें वेदवादी ब्रह्मस्वरूप विद्वान् देखते हैं। वे सभी प्राणियों के आत्मा, बीज तथा परम गति हैं।८३

स्तूयते वैदिकैर्मन्त्रैर्देवदेवो महेश्वरः।
तमर्चयन्ति[3] ये रुद्रं स्वात्मना च सनातनम् ॥८४
चेतसा भावयुक्तेन ते यान्ति[4] परमं[5] पदम्।

देवाधिदेव महेश्वर की वैदिक मंत्रों से स्तुति जाती है। उस सनातन रुद्र की जो अपने मन से एवं भाव-युक्त चित्त से अर्चना करते हैं, वे परम पद को प्राप्त करते हैं।८४½

तस्मादनादिमध्यान्तं विज्ञाय परमेश्वरम् ॥८५
कर्मणा मनसा वाचा समाराधय यत्नतः।
यत्नात्परिहरेशस्य[6] निन्दां स्वात्मविनाशनीम् ॥८६

इसलिए आदि, मध्य और अन्त से रहित परमेश्वर को जानकर कर्म, मन और वाणी से यत्नपूर्वक उनकी आराधना करो। आत्मविनाशकारिणी शिव निन्दा को यत्नपूर्वक त्याग दो।८५-८६।

भवन्ति[7] सर्वदोषाय निन्दकस्य क्रिया[8] हि ताः।
यस्तु चैव महायोगी रक्षको विष्णुरव्ययः ॥८७
स[9] देवो भगवान्रुद्रो महादेवो न संशयः।

निन्दा करने वाले की क्रियायें सभी दोषों को उत्पन्न करती हैं। जो ये महायोगी, रक्षक एवं अविनाशी विष्णु हैं, वह देव भगवान् रुद्र महादेव हैं, इसमें सन्देह नहीं।८७½

मन्यन्ते ये जगद्योनिं विभिन्नं विष्णुमीश्वरात् ॥८८
मोहादवेद[10] निष्ठत्वात्ते यान्ति नरकं नराः।

जो व्यक्ति संसार के मूल विष्णु को शंकर से भिन्न मानते हैं और मोहवश वेद भिन्न शास्त्र में निष्ठा रखते हैं, वे नरक को जाते हैं।८८½

१. पश्यन्त्येनमिति। २. स आत्मा। ३. तमर्चयति यो रुद्रं स्वात्मन्येकंमिति पा०। ४. स याति इति पा०। ५. परमां गतिम्। ६. यः करोति हरेस्तस्य निन्दामात्मविनाशिनीमिति पा०। ७. तरन्तीति पा०। ८. क्रिया यत इति पा०। ९. स देवदेवो भगवानिति पा०। १०. तेभेदवादनिष्ठत्वात्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदानुवर्त्तिनो रुद्रं देवं नारायणं तथा ॥८९
एकीभावेन पश्यन्ति मुक्तिभाजो भवन्ति ते ।

वेद के अनुगामी जो व्यक्ति रुद्रदेव तथा नारायण को एक भाव से देखते हैं, वे मुक्तिभागी होते हैं ।८९½

यो विष्णुः स स्वयं रुद्रो यो रुद्रः स जनार्दनः ॥९०
इति मत्वा भजेद्देवं स याति परमां गतिम् ।

जो विष्णु हैं, वही स्वयं रुद्र हैं और जो रुद्र हैं वही जनार्दन हैं । यह मानकर जो देव की सेवा करता है, वह परम गति को प्राप्त करता है ।९०½

सृजत्येष[1] जगत्सर्वं विष्णुस्तत्पश्यतीश्वरः ॥९१
इत्थं जगत्सर्वमिदं रुद्रनारायणोद्भवम् ।

ये विष्णु सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करते हैं और शिव उसको देखते हैं । इस प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् शंकर और नारायण से उत्पन्न है ।९१½

तस्मात्त्यक्त्वा हरेर्निन्दां हरे[2] चापि समाहितः ॥९२
समाश्रय महादेवं शरण्यं ब्रह्मवादिनाम् ।

इसलिए हरि तथा हर की निन्दा त्यागकर सावधान होकर ब्रह्मवादी एवं रक्षक महादेव का आश्रय लो ।९२½

उपश्रुत्याथ वचनं विरिञ्चस्य प्रजापतिः ॥९३
जगाम शरणं देवं गोपतिं कृत्तिवाससम् ।

ब्रह्मा का वचन सुनकर दक्ष उठकर व्याघ्रचर्माम्बरधारी, वृषभपति महादेव की शरण में गये ।९३½

येऽन्ये शापाग्निदिनद्ग्धाः दधीचस्य महर्षयः ॥९४
द्विषन्तो[3] मोहिता देवं सम्बभूवुः कलिष्वथ ।
त्यक्त्वा तपोबलं कृत्स्नं विप्राणां कुलसम्भवाः ॥९५

और जो महादेव से द्वेष करते हुए देवमायाविमोहित महर्षि दधीच के शापाग्नि से दग्ध हो गये थे, वे अपने सम्पूर्ण तपोबल को त्यागकर कलियुग में ब्राह्मणों के कुल में उत्पन्न हुए ।९४-९५।

---

१. सृजत्येव जगत्सर्वं विष्णुस्तस्यार्द्धमीश्वरः इति, विष्णुस्तस्य महेश्वर इति पा० । २. विष्णावपि इति पा० । ३. द्विषन्तो मोहिता देवं शरण्यं ब्रह्मवादिनाम् । उपश्रुत्वाथ वचनं संबभूवः कलिष्वथ ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वसंस्कारमाहात्म्याद्ब्रह्मणो वचनादिह ।
मुक्तशापास्ततः सर्वे कल्पान्ते रौरवादिषु ॥९६
निपात्यमानाः कालेन सम्प्राप्यादित्यवर्चसम् ।
ब्रह्माणं जगतामीशमनुज्ञाताः स्वयम्भुवा ॥९७
समाराध्य तपोयोगादीशानं[1] त्रिदशाधिपम् ।
भविष्यन्ति यथापूर्वं शंकरस्य प्रसादतः ॥९८

पश्चात् पूर्व संस्कार के माहात्म्य तथा ब्रह्मा के वचन से वे सब शाप से मुक्त होकर कल्पान्त में रौरव आदि नरकों में गिराये जाते हुए अन्त में सूर्य-सदृश कान्ति वाले जगदीश ब्रह्मा को प्राप्त करके उनकी आज्ञा से देवाधिदेव महादेव की आराधना करके उनकी कृपा से पूर्ववत् हो जायेंगे ।९६-९८।

एतद्वः कथितं सर्वं दक्षयज्ञनिषूदनम् ।
शृणुध्वं दक्षपुत्रीणां[2] सर्वासां चैव सन्ततिम् ॥९९

यह सब दक्षयज्ञ का विध्वंस आप लोगों को बता दिया । अब सब दक्षपुत्रियों की सन्तान के बारे में सुनिए ।९८

इति कूर्मपुराणे दक्षयज्ञविध्वंसो नाम पञ्चदशोऽध्यायः[3] ॥१५॥

श्रीकूर्मपुराण में दक्षयज्ञविध्वंस नामक पन्द्रहवाँ अध्याय समाप्त ॥१५॥

●

१. दीशानममराधिपम् । २. दक्षपुत्राणां सर्वेषां । ३... चतुर्दशोऽध्यायः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षोडशोऽध्यायः

अथ दक्षकन्यावंशकथनम्

सूत उवाच[1]

प्रजाः सृजेति सन्दिष्टः[2] पूर्वं दक्षः स्वयंभुवा ।
ससर्ज देवान् गन्धर्वानृषींश्चैवासुरोरगान् ॥१

सूत बोले—पूर्वकाल में ब्रह्मा ने दक्ष को आज्ञा दी कि प्रजाओं की सृष्टि करो। तब उन्होंने देवों, गन्धर्वों, ऋषियों असुरों और सर्पों की सृष्टि की ।१

[3]यदास्य सृजतः[4] पूर्वं न व्यवर्द्धन्त ताः प्रजाः ।
तदा ससर्ज भूतानि मैथुनेनैव सर्वतः[5] ॥२

जब उनके सृष्टि करते रहने पर प्रजाओं की वृद्धि नहीं हुई तब मैथुन क्रिया द्वारा प्रजाओं की सृष्टि करने लगे ।२

अशिक्न्यां[6] जनयामास वीरणस्य प्रजापतेः ।
सुतायां धर्मयुक्तायां पुत्राणान्तु सहस्रकम् ॥३

उन्होंने वीरण नामक प्रजापति की धर्मयुक्त पुत्री अशिक्नी के गर्भ से एक सहस्र पुत्र उत्पन्न किये ।३

तेषु पुत्रेषु नष्टेषु मायया नारदस्य तु ।
षष्टिं दक्षोऽसृजत्कन्या वैरिण्यां[7] वै प्रजापतिः ॥४

नारद की माया से उन सभी पुत्रों के विनष्ट हो जाने पर प्रजापति दक्ष ने वैरिणी से साठ कन्याओं को उत्पन्न किया ।४

ददौ स[8] दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश ।
विंशत्सप्त[9] च सोमाय चतस्रोऽरिष्टनेमये ॥५

द्वे चैव बहुपुत्राय[10] द्वे कृशाश्वाय धीमते ।
द्वे चैवांगिरसे तद्वत्तासां वक्ष्येऽथ विस्तरम् ॥६

---

१. कूर्मउवाच ' २. व्यादिष्ट इति पा० । ३. सृज्यमानस्येति पा० । ४. धर्मत इति पा० । ५. अशक्त्यामिति पा० । ६. वैरण्यामिति पा० । ७. चेति पा० । ८. सप्तविंशतिरिति पा० । ९. नेमिने । १०. भृगुपुत्राय ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें से दस कन्यायें धर्म को, दीं, तेरह कश्यप को सत्ताईश चन्द्रमा को, चार अरिष्टनेमि को, दो बहुपुत्र को, दो धीमान् कृशाश्व को और दो अंगिरा को दीं। अब उनसे कैसे वंश का विस्तार हुआ, वह मैं बताऊँगा।५-६।

मरुत्ववती[1] वसुर्यामी लम्बा भानुररुन्धती[2]।
संकल्पा च मुहूर्त्ता च साध्या विश्वा च भामिनी ॥७
धर्मपत्न्यो दश त्वेतास्तासां पुत्रान्निबोधत।
विश्वेदेवास्तु विश्वायां साध्या साध्यानजीजनत् ॥८

मरुत्वती, वसु, यामी, लम्बा, भानु, अरुन्धती, संकल्पा, मूहूर्ता, साध्या, भामिनी, एवं विश्वा— ये दस पत्नियाँ धर्म की थीं। इनके पुत्रों के नाम सुनो। विश्वा से विश्वेदेवा गण हुए और साध्या ने साध्यगण को उत्पन्न किया।७-८।

मरुत्वत्यां[3] मरुत्वन्तोवस्वास्तुवसवस्तथा।
भानोस्तु भानवाश्चैव मुहूर्त्तास्तु[4] मुहूर्त्तजाः ॥९

मरुत्वती ने मरुद्गण, वसु ने वसुगण, भानु ने भानुगण और मुहूर्ता ने मुहूर्तगण को जन्म दिया।९

लम्बायाश्चाथ घोषो वै नागवीथी[5] तु यामिजा।
पृथिवीविषयं सर्वमरुन्धत्यामजायत ॥१०

लम्बा से घोष की, यामि से नागवीथी की और अरुन्धती से पृथिवी के समस्त विषयों की उत्पत्ति हुई।१०

संकल्पायास्तु संकल्पो धर्मपुत्रा दश स्मृताः।
ये त्वनेकवसुप्राणा देवा ज्योतिःपुरोगमाः ॥११
वसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम्।
आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानलोऽनिलः[6] ॥१२
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च[7] वसवोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः।
आपस्य पुत्रो वैतण्ड्यः श्रमः शान्तो ध्वनिस्तथा ॥१३

संकल्पा से संकल्प ने जन्म ग्रहण किया। ये सब धर्म के पुत्र कहे गये हैं। जो देवता अनेक वसुप्राण तथा ज्योतिः पुरोगम हैं, वे आठ वसु कहलाये। उनका विवरण

---

१. अरुन्धती। २. मरुत्वती। ३. मरुत्वन्तो मरुत्वत्यां वसवोऽष्टौ वसोः सुताः इति, अरुन्धत्यामरुन्धत्यान् इति, पा०। ४. मुहूर्तास्समुहूर्तकाः। ५. वागवीथी तु यामिजा इति पा०। ६. धवश्चैवानिलो नल इति पा०। ७. प्रभावश्च इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताऊँगा। आप, ध्रुव, सोम, धर, अनल, अनिल, प्रत्यूष और प्रभास—ये वसुओं के नाम हैं। आप के पुत्र वैतण्ड्य, श्रम, शान्त तथा ध्वनि हुए ।११-१३।

ध्रुवस्य[1] पुत्रो भगवान् कालो लोकप्रकाशनः ।
सोमस्य भगवान्वर्चा धरस्य द्रविणः सुतः ॥१४

ध्रुव का पुत्र भगवान् लोकप्रकाशन काल हुआ। सोम का पुत्र भगवान् वर्चा और धर का पुत्र द्रविण हुआ ।१४

[2]मनोजवोनिलस्यासीदविज्ञातगतिस्तथा ।
कुमारो ह्यनलस्यासीत्सेनापतिरिति स्मृतः ॥१५

मनोजव और अविज्ञातगति अनिल के पुत्र थे। सेनापति कुमार अनल का पुत्र था ।१५

देवलो भगवान्योगी प्रत्यूषस्याभवत्सुतः ।
विश्वकर्मा प्रभासस्य शिल्पकर्त्ता[3] प्रजापतिः ॥१६

भगवान् योगी देवल प्रत्यूष का पुत्र हुआ। शिल्पकर्ता प्रजापति विश्वकर्मा प्रभास का पुत्र हुआ १६

अदितिर्दितिदनुस्तद्वदरिष्टा सुरसा तथा ।
सुरभिर्विनता चैव ताम्रा क्रोधवशा[4] त्विरा ॥१७
कद्रुर्मुनिश्च धर्मज्ञा तत्पुत्रान्वै निबोधत ।
अंशो धाता भगस्त्वष्टा मित्रोऽथ वरुणोऽर्यमा ॥१८

अदिति, दिति, दनु, अरिष्टा, सुरसा, सुरभि, विनता, ताम्रा, क्रोधवशा, इरा, कद्रु, धर्मज्ञा मुनि (ये कश्यपपत्नी दक्षकन्यायें थीं)। इनके पुत्रों के नाम सुनिये—अंश धाता, भग, त्वष्टा, मित्र, वरुण, अर्यमा ।१७-१८।

विवस्वान् सविता पूषा ह्यंशुमान्विष्णुरेव च ।
तुषिता नाम ते पूर्वं चाक्षुषस्यान्तरे मनोः ॥१९

विवस्वान्, सविता, पूषा, अंशुमान् और विष्णु—ये बारह देवता पहले चाक्षुष मन्वन्तर में तुषित नाम से विख्यात थे ।१९

वैवस्वतेऽन्तरे प्रोक्ता आदित्याश्चादितेः सुताः ।
दितिः पुत्रद्वयं लेभे कश्यपाद्बलगर्वितम्[5] ॥२०

---

१. धवस्य इति पा०। २. पुरोजव इति पा०। ३. शिल्पकर्मा। ४. क्रोधवशादिरा इति पा०। ५. ह्यादित्या अदितेः सुता इति पा०। ६. बलसंयुतमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैवस्वत मनु के अधिकार-काल में ये अदिति के पुत्र होकर आदित्य कहलाये। दिति ने कश्यप मुनि से बलगर्वित दो पुत्रों को प्राप्त किया ।२०

हिरण्यकशिपुं ज्येष्ठं हिरण्याक्षं तथानुजम्[1] ।
हिरण्यकशिपुर्दैत्यो महाबलपराक्रमः ॥२१

उनमें ज्येष्ठ था हिरण्यकशिपु और उसका छोटा भाई था हिरण्याक्ष । दैत्य हिरण्यकशिपु महान् बली और पराक्रमी था ।२१

आराध्य तपसा देवं ब्रह्माणं परमेश्वरम्[2] ।
दृष्ट्वा लेभे वरान्दिव्यांस्तुत्वासौ विविधैः स्तवैः ॥२२

उसने तपस्या से परमेश्वर ब्रह्मदेव की आराधना करके उनका दर्शन प्राप्त किया और विविध प्रकार के स्तोत्रों से उनकी स्तुति करके दिव्य वर प्राप्त कर लिये ।२२

अथ तस्य बलाद्देवाः सर्वे[3] एव महर्षयः ।
बाधितास्ताडिता जग्मुर्ब्रह्मदेवं पितामहम् ॥२३

शरण्यं शरणं देवं शम्भुं सर्वजगन्मयम् ।
ब्रह्माणं लोककर्त्तारं त्रातारं पुरुषं परम् ॥२४

कूटस्थं जगतामेकं पुराणं पुरुषोत्तमम् ।
स याचितो देववरैर्मुनिभिश्च[4] मुनीश्वराः ॥२५

सर्वदेवहितार्थाय जगाम कमलासनः ।
संस्तूयमानः प्रणतैर्मुनीन्द्रैरमरैरपि ॥२६

तदनन्तर वह बलपूर्वक सभी देवों और महर्षियों को पीड़ा एवं ताडना देने लगा। इस कारण वे सब देवाधिदेव ब्रह्मा के पास पहुँचे, जो शरण देने वाले, रक्षक, सर्व जगन्मय, लोककर्ता, त्राता, संसार के बीच एकमात्र, कूटस्थ, पुराण पुरुष और पुरुषोत्तम है। हे मुनीश्वरगण ! देवश्रेष्ठों एवं मुनियों के द्वारा प्रार्थित होने पर ब्रह्मा सकल देवताओं के कल्याणार्थ चल पड़े। मुनीन्द्र और देवगण प्रणाम पूर्वक उनकी स्तुति कर रहे थे ।२३-२६।

क्षीरोदस्योत्तरं कूलं[5] यत्रास्ते हरिरीश्वरः ।
दृष्ट्वा देवं जगद्योनिं विष्णुं विश्वगुरुं शिवम्[6] ॥२७
ववन्दे चरणौ[7] मूर्ध्ना कृताञ्जलिरभाषत ।

१. तथापरमिति, चतुर्जयमिति, च पा०। २. परमेष्ठिनमिति पा०। ३. सुरर्षय इति, सर्वेवै परमर्षयः इति च पा०। ४. देवदेवैरिति, मुनिवरैः इति च पा०। ५. तीरं। ६. हरिम्। ७. वरदं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षीरसागर की उत्तरी तट पर जहाँ ईश्वर विष्णु रहते हैं, वहाँ ब्रह्मा पहुँचे। ब्रह्मा ने संसार के मूल, विश्व को गुरु, शिव और मंगलस्वरूप विष्णु के देख कर चरण-वन्दना की और हाथ जोड़कर कहा ।२७½

ब्रह्मोवाच

त्वं गतिः सर्वभूतानामनन्तोऽस्यखिलात्मकः ॥२८

ब्रह्मा बोले—आप सभी प्राणियों की गति, अनन्त और सर्वात्मक हैं ।२८

व्यापी सर्वामरवपुर्महायोगी सनातनः ।
त्वमात्मा सर्वभूतानां प्रधानप्रकृतिः[1] परा ॥२९

सर्वव्यापी, सभी देवों के देह स्वरूप, महायोगी, सनातन, सभी प्राणियों के आत्मा प्रधान पुरुष और परा प्रकृति हैं ।२९

वैराग्यैश्वर्यनिरतो वागतीतो निरञ्जनः ।
त्वं कर्त्ता चैव भर्त्ता[2] च विहन्ता च सुरद्विषाम् ॥३०

वैराग्य और ऐश्वर्य में निरत, वाणी से परे और निरञ्जन हैं। आप ही संसार के कर्ता, भर्ता और देव-द्रोहियों के हन्ता हैं ।३०

त्रातुमर्हस्यनन्तेश त्रातासि परमेश्वर ।
इत्थं स विष्णुर्भगवान् ब्रह्मणा सम्प्रबोधितः ॥३१

हे अनन्त ! हे ईश ! आप हमारी रक्षा करने योग्य हैं। परमेश्वर ! रक्षा करें। इस प्रकार ब्रह्मा ने विष्णु भगवान् को जगा दिया ।३१

प्रोवाचोन्निद्रपद्माक्षः पीतवासाः सुरान्द्विजाः[3] ।
किमर्थं सुमहावीर्याः सुप्रजापतिकाः सुराः ॥३२
इमं देशमनुप्राप्ताः किं वा कार्यं करोमि वः ।

देवा ऊचुः

हिरण्यकशिपुर्नाम ब्रह्मणो वरदर्पितः ॥३३

द्विजगण ! तब पीताम्बरधारी विष्णु ने अपने कमललोचन को खोलकर देवताओं से कहा—हे महापराक्रमी देवगण ! प्रजापति के साथ आप लोग इस देश में किसलिए आये हैं ? अथवा मैं आप लोगों का कौन-सा कार्य करूँ ?

देवगण बोले—हिरण्यकशिपु ब्रह्मा के वरदान से गर्वी हो गया है ।३२-३३।

---

१. प्रधानपुरुषं परम् प्रधानं प्रकृतिरिति, प्रधानपुरुषं परम् इति च पा० ।
२. हर्ता । ३ सुरार्च्चित इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाधते भगवन्दैत्यो देवान् सर्वान् सहर्षिभिः ।
अवध्यः सर्वभूतानां त्वामृते पुरुषोत्तमम् ॥३४

भगवन् ! वह दैत्य ऋषियों सहित सभी देवों को पीडित कर रहा है। वह आप पुरुषोत्तम को छोड़कर सभी प्राणियों के लिए वह अवध्य है।३४

हन्तुमर्हसि सर्वेषां त्रातासि[1] त्वं जगन्मय ।
श्रुत्वा तद्देवतैरुक्तं स विष्णुर्लोकभावनः[2] ॥३५
वधाय दैत्यमुख्यस्य सोऽसृजत्पुरुषं स्वयम् ।
मेरुपर्वतवर्ष्माणं[3] घोररूपं भयानकम् ॥३६
शंखचक्रगदापाणिं तं प्राह गरुडध्वजः ।
हत्वा तं दैत्यराजानं[4] हिरण्यकशिपुं पुनः ॥३७
इमं देशं समागन्तुं क्षिप्रमर्हसि पौरुषात् ।
निशम्य वैष्णवं वाक्यं प्रणम्य पुरुषोत्तमम् ॥३८
महापुरुषमव्यक्तं ययौ दैत्यमहापुरम् ।
विमुञ्चन् भैरवं नादं शङ्खचक्रगदाधरः ॥३९

जगन्मय ! आप सबके रक्षक हैं, इसलिए उसका वध करने योग्य हैं। देवताओं का कथन सुनकर लोकरक्षक विष्णु ने दैत्य श्रेष्ठ का वध करने के लिए स्वयं एक पुरुष की सृष्टि की। उसका शरीर सुमेरुपर्वत के समान था, भयंकर रूप था और वह हाथों में शंख, चक्र और गदा धारण किये हुए था। उससे भगवान् ने कहा--तुम पराक्रम से दैत्यराज हिरण्यकशिपु को मारकर पुनः शीघ्र इस देश में आ जाओ। विष्णु का वचन सुनकर उसने अव्यक्त, महापुरुष और पुरुषोत्तम भगवान् को प्रणाम किया। पश्चात् शंखचक्रगदाधारी वह भयंकर नाद करता हुआ दैत्य के महानगर की ओर चल पड़ा ।३५-३९।

आरुह्य गरुडं देवो महामेरुरिवापरः ।
आकर्ण्य दैत्यप्रवरा महामेघरवोपमम् ॥४०
समं[5] च चक्रिरे नादं तथा तथा दैत्यपतेर्भयात् ।

असुरा ऊचुः

कश्चिदागच्छति महान् पुरुषो देवनोदितः[6] ॥४१

वह गरुड पर आरूढ़ था और दूसरा महामेरुपर्वत के समान दीखता था। महा-

१. त्वं त्रातासीति । २. पावनः । ३. मेरुपर्वतसंकाशं । ४. दैत्यराजमिति साधु । ५. समाचचक्षिरे इति पा० । ६. देवचोदितः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेघ के समान उसका नाद सुनकर बड़े-बड़े दैत्य एक साथ महाशब्द करने लगे। और दैत्यराज के भय से उन्होंने कहा।

असुरगण बोले—देवप्रेरित कोई महापुरुष आ रहा है।४०-४१।

विमुञ्चन् भैरवं नादं तं जानीमो जनार्दनम्।
ततः सहासुरवरैर्हिरण्यकशिपुः स्वयम् ॥४२
सन्नद्धैः सायुधैः पुत्रैः सप्रह्लादैस्तदा[1] ययौ।
दृष्ट्वा[2] तं गरुडारूढं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥४३

वह भयंकर नाद कर रहा है, हम समझते हैं कि वह जनार्दन (विष्णु) है। तदनन्तर श्रेष्ठ असुरों के साथ स्वयं हिरण्यकशिपु जाने लगा। उसके साथ अस्त्र-शस्त्र-सुसज्जित उसके पुत्र और प्रह्लाद भी थे। उन लोगों ने उस विष्णु-पुरुष को देखा, जो गरुड पर आरूढ था। करोड़ों सूर्य के समान उसकी कान्ति थी।४२-४३।

पुरुषं पर्वताकारं नारायणमिवापरम्।
दुद्रुवुः केचिदन्योन्यमूचुः सम्भ्रान्तलोचनाः ॥४४

उस पुरुष की आकृति पर्वत के समान थी। वह दूसरे नारायण के समान दिखाई पड़ता था। उसे देखकर कुछ असुर भाग गये। कुछ भयविह्वल नेत्रों से परस्पर बोलने लगे।४४

अयं[3] स देवो देवा नां गोप्ता नारायणो रिपुः।
अस्माकमव्ययो नूनं तत्सुतो वा समागतः ॥४५

यह तो देवों का रक्षक अविनाशी नारायण देव है, जो हमारा शत्रु है। निश्चय ही वही या उसका पुत्र आया है।४५

इत्युक्त्वा शस्त्रवर्षाणि स ससृजुः पुरुषाय ते।
स तानि[4] चाक्षतो देवो नाशयामास लीलया ॥४६

यह कहकर वे उस पुरुष पर शस्त्र बरसाने लगे। किन्तु उन शस्त्रों से बिना क्षत-विक्षत हुए उस देव ने लीलापूर्वक उनको नष्ट कर दिया।४६

हिरण्यकशिपो[5] पुत्राश्चत्वारः प्रथितौजसः।
पुत्रं[6] नारायणोद्भूतं युयुधुर्मेघनिःस्वनाः ॥४७

---

१. प्रह्लादाद्यैरिति पा०। २. तु गरुडासीनमिति पा०। ३. देवोऽभगवान्। ४. तानि चाशेषतो देव इति, तांस्तु सचाक्षतो देव इति पा०। ५. तदा हिरण्यकशिपोरिति पा०। ६. पुत्रा नारायणसुतं इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिरण्यकशिपु के चार विख्यात पराक्रमी पुत्र थे। मेघ के समान गरजने वाले वे असुर नारायण के पुत्र उस पुरुष से युद्ध करने लगे।४७

प्रह्लादश्चानुह्लादश्च संह्लादो ह्लाद एव च।
प्रह्लादः प्राहिणोद्ब्राह्ममनुह्लादोऽथ वैष्णवम् ॥४८
संह्लादश्चापि कौमारमाग्नेयं ह्लाद एव च।
तानि तं पुरुषं प्राप्य चत्वार्यस्त्राणि वैष्णवम् ॥४९
न शेकुश्चालितु[1] विष्णुं वासुदेवं यथातथम्[2]।

(असुरों के नाम थे—) प्रह्लाद, अनुह्लाद, संह्लाद और ह्लाद। उनमें प्रह्लाद ब्रह्मास्त्र, अनुह्लाद वैष्णवास्त्र, संह्लाद कौमारास्त्र और ह्लाद आग्नेयास्त्र चलाने लगे। वे चारों अस्त्र उस पुरुष के पास पहुँच कर यथार्थ वासुदेव विष्णु का बाल बाँका भी नहीं कर सके।४८-४९½।

अथासौ चतुरः पुत्रान्महाबाहुर्म्महाबलः ॥५०
प्रगृह्य पादेषु करैश्चिक्षेप च ननाद च।
विमुक्तेष्वथ पुत्रेषु हिरण्यकशिपुः स्वयम् ॥५१
पादेन ताडयामास वेगेनोरसि तं बली।
स तेन पीडितोऽत्यर्थं गरुडेन सहानुगः[3] ॥५२
अदृश्यः प्रययौ तूर्णं यत्र नारायणः प्रभुः।
गत्वा विज्ञापयामास प्रवृत्तमखिलं तदा ॥५३

तदनन्तर उस महाबली और महापराक्रमी ने अपने हाथों से चारो पुत्रों की टांगें पकड़कर दूर फेंक दिया और गर्जन किया। पुत्रों के फेंक दिये जाने पर हिरण्यकशिपु स्वयं वहाँ आया और पैर से वेगपूर्वक उस पुरुष की छाती पर प्रहार किया। उससे अत्यन्त पीडित होने पर वह पुरुष गरुड के साथ अदृश्य हो गया और शीघ्र नारायण प्रभु के पास पहुँचकर उसने सारा वृत्तान्त उन्हें बता दिया।५०-५३।

सञ्चिन्त्य मनसा देवः सर्वज्ञानमयोऽमलः।
नरस्यार्द्धतनुं कृत्वा सिंहस्यार्द्धतनुं तथा[4] ॥५४

सर्वज्ञानमय तथा निर्मल विष्णुदेव ने मन ही मन सोचकर अपना आधा शरीर मनुष्य का और आधा सिंह का बना लिया।५४

---

१. बाधितुमिति पा०। २. यथाबलात् इति पा०।३. यथाशुगः, सहाच्युतः इति च पा०। ४. तदा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नृसिंहवपुरव्यक्तो[1] हिरण्यकशिपोः पुरे ।
आविर्बभूव सहसा मोहयन्दैत्यदानवान्[2] ॥५५

नरसिंह का शरीर धारण करके अव्यक्त भगवान् दैत्यों और दानवों को मोहित करते हुए सहसा हिरण्यकशिपु के सामने प्रकट हुए ।५५

दंष्ट्राकरालो योगात्मा युगान्तदहनोपमः ।
समारुह्यात्मनः शक्तिं सर्वसंहारकारिकाम्[3] ॥५६

उनकी दंष्ट्रा बहुत भयंकर थी । वे योगात्मा प्रलयाग्नि के सदृश दीख रहे थे। उन्होंने सर्वसंहारकारिणी अपनी शक्ति का अवलम्बन ले लिया ।५६

भाति नारायणोऽनन्तो[4] यथा मध्यन्दिने रविः ।
दृष्ट्वा नृसिंहं पुरुषं प्रह्लादं ज्येष्ठपुत्रकम् ॥५७
वधाय प्रेरयामास नरसिंहस्य सोऽसुरः ।
इमं नृसिंहं पुरुषं पूर्वस्मादूनशक्तिकम्[5] ॥५८
सहैव तेऽनुजैः[6] सर्वैर्नाशयाशु मयेरितः ।

अनन्त नारायण भगवान् मध्याह्नकालीन सूर्य के समान शोभित हो रहे थे। नरसिंह पुरुष को देखकर असुर हिरण्यकश्यप ने अपने ज्येष्ठ पुत्र प्रह्लाद को नरसिंह का वध करने के लिए प्रेरित किया और कहा—यह नृसिंह पुरुष पहले के पुरुष से कम शक्ति वाला है । मेरे कहने से तुम शीघ्र अपने सभी भाइयों के साथ जाकर उसे शीघ्र मार डालो ।५७-५८½।

स तन्नियोगादसुरः प्रह्लादो विष्णुमव्ययम् ॥५९
युयुधे सर्वयत्नेन नरसिंहेन निर्जितः[7] ।
ततः संमोहितो[8] दैत्यो हिरण्याक्षस्तदानुजः ॥६०

पिता के आदेश से वह असुर प्रह्लाद अविनाशी विष्णु को मारने के लिए प्रस्थित हुआ और सब प्रकार के प्रयत्नों से नरसिंह से युद्ध करने लगा, किन्तु पराजित हो गया । तदनन्तर हिरण्यकशिपु का अनुज हिरण्याक्ष दैत्य संमोहित हो गया ।५९-६०।

ध्यात्वा पशुपतेरस्त्रं ससर्ज च ननाद च ।
तस्य देवाधिदेवस्य विष्णोरमिततेजसः ॥६१

शंकर के अस्त्र का ध्यान करके उसका प्रक्षेप और गर्जन किया । किन्तु शंकर का अस्त्र देवाधिदेव अमिततेजस्वी विष्णु को कोई हानि नहीं कर सका ।६१½

---

१. तनु । २. दैत्यपुङ्गवानिति पा० । ३. कारणम् । ४. देवो । ५. पूर्वस्माद्दर-शक्तिकमिति, दुग्रशक्तिकम् इति च पा० । ६. तनुजैः । ७. यत्नतः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न हानिमकरोदस्त्रं तथा देवस्य शूलिनः ।
दृष्ट्वा पराहतं त्वस्त्रं प्रह्लादो भाग्यगौरवात् ॥६२
मेने सर्वात्मकं देवं वासुदेवं सनातनम् ।
सन्त्यज्य सर्वशस्त्राणि सत्त्वयुक्तेन चेतसा[1] ॥६३
ननाम शिरसा देवं योगिनां हृदयेशयम् ।

अस्त्र को निवृत्त देखकर भाग्य के गौरव से प्रह्लाद ने उस देव को सर्वात्मा सनातन वासुदेव समझा। तब उसने सत्त्वयुक्त चित्त से सकल शस्त्रों का त्याग करके योगियों के हृदय में सोने वाले विष्णुदेव को शिर से प्रणाम किया ।६२-६३½।

स्तुत्वा नारायणं स्तोत्रैः ऋग्यजुःसामसम्भवैः ॥६४
निवार्य पितरं भ्रातॄन् हिरण्याक्षं तदाब्रवीत् ।

ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद के स्तोत्रों से नारायण की स्तुति करके पिता, भाइयों और हिरण्याक्ष को रोककर उनसे कहा ।६४½

अयं नारायणोऽनन्तः शाश्वतो भगवानजः ॥६५
पुराणः[2] पुरुषो देवो महायोगी जगन्मयः ।
अयं धाता विधाता च स्वयंज्योतिर्निरञ्जनः ॥६६

ये भगवान् नारायण, अनन्त, शाश्वत और अज हैं। ये धाता, विधाता, स्वयं ज्योतिः स्वरूप और निरञ्जन हैं ।६५-६६।

प्रधानं पुरुषं तत्त्वं मूलप्रकृतिरव्यया[3] ।
ईश्वरः सर्वभूतानामन्तर्यामी गुणातिगः ॥६७
गच्छध्वमेनं शरणं विष्णुमव्यक्तमव्ययम्[4] ।

ये प्रधान, पुरुष, जगत् के मूल तत्त्व, मूलप्रकृति, अव्यय सकल प्राणियों के ईश्वर, अन्तर्यामी और गुणों से परे हैं। इन अव्यक्त और अविनाशी विष्णु की शरण में आप जाइए ।६७½

एवमुक्तः[5] सुदुर्बुद्धिर्हिरण्यकशिपुः स्वयम् ॥६८
प्रोवाच पुत्रमत्यर्थं मोहितो विष्णुमायया ।
अयं सर्वात्मना वध्यो नृसिंहोऽल्पपराक्रमः ॥६९

१. तेजसा । २. प्रधानपुरुष इति पा० । ३. अव्यय इति पा० । ४. भावानामिति पा० । ५. मच्युतम् । ६. एवमुक्त इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह कहे जाने पर अत्यन्त दुर्बुद्धि तथा विष्णु की माया से अतीव मोहित हिरण्यकशिपु ने पुत्र से कहा—'यह अल्प पराक्रमी नृसिंह सर्वथा वध करने योग्य है ।६८-६९।

समागतोऽस्मद्भवेनमिदानीं कालचोदितः ।
विहस्य पितरं पुत्रो वचः प्राह महामतिः ॥७०

यह काल से प्रेरित होकर हमारे भवन में आया है ।' महाबुद्धिमान् पुत्र ने हँसकर पिता से कहा ।७०

मा निन्दस्वैनमीशानं[1] भूतानामेकमव्ययम् ।
कथं देवो महादेवः शाश्वतः कालवर्जितः ॥७१
कालेन हन्यते विष्णुः कालात्मा कालरूपधृक् ।

इनकी निन्दा मत कीजिए । ये सभी प्राणियों के एकमात्र ईश्वर था अविनाशी हैं । ये महादेव, शाश्वत एवं कालवर्जित हैं । ये कालस्वरूप तथा कालरूपधारी विष्णु हैं । काल इनका क्या विनाश करेगा ? ।७१½

ततः[2] सुवर्णकशिपुर्दुरात्मा[3] कालचोदितः ॥७२
निवारितोऽपि[4] पुत्रेण युयुधे[5] हरिमव्ययम् ।
संरक्तनयनोऽनन्तो हिरण्यनयनाग्रजम् ॥७३
नखैर्विदारयामास प्रह्लादस्यैव पश्यतः ।

तदनन्तर दुरात्मा हिरण्यकशिपु पुत्र के मना करने पर भी कालप्रेरित होने से अविनाशी विष्णु से युद्ध करने लगा । अनन्त भगवान् ने आँखें लाल करके हिरण्याक्ष के बड़े भाई को प्रह्लाद के देखते-देखते नखों से फाड़ डाला ।७२-७३½।

हते हिरण्यकशिपौ हिरण्याक्षो[6] महाबलः[7] ॥७४
विसृज्य पुत्रं प्रह्लादं दुद्रुवे भयविह्वलः ।
अनुह्लादादयः पुत्रा अन्ये च शतशोऽसुराः ॥७५
नृसिंहदेहसम्भूतैः सिंहैर्नीता यमक्षयम्[8] ।
ततः संहृत्य तद्रूपं हरिर्नारायणः प्रभुः ॥७६

हिरण्यकशिपु के मार दिये जाने पर महाबली हिरण्याक्ष भयभीत होकर पुत्र प्रह्लाद को छोड़कर भाग गया । तब अनुह्लाद आदि पुत्रों को नृसिंह के शरीर से

---

१. निन्दस्व इति, आर्षमात्मनेपदम् । २. ततो हिरण्य । ३. प्रोवाच विधिनोदित इति पा० । ४. निराकृतो । ५. युयोध । ६. भूत्वा । ७. महासुरः । ८. यमालयम् इति पा० । यमक्षयं यमस्य क्षयमालयम्, क्षिधातोर्वा सार्थकादधिकरणे अल् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न सिंहों ने मार डाला। तदनन्तर प्रभु नारायण भगवान् ने अपने (नृसिंह) रूप को त्याग दिया।७४-७६।

स्वमेव परमं रूपं ययौ नारायणाह्वयम्।
गते नारायणे दैत्यः[1] प्रह्लादोऽसुरसत्तमः[2] ॥७७
अभिषेकेण युक्तेन हिरण्याक्षमयोजयत्।
स बाधयामास सुरान्रणे जित्वा मुनीनपि ॥७८

फिर अपने नारायण नामक परम रूप को धारण कर लिया। नारायण के चले जाने पर असुरश्रेष्ठ दैत्य प्रह्लाद ने शास्त्रयुक्त अभिषेक क्रिया द्वारा हिरण्याक्ष को राज-सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दिया। वह युद्ध में देवताओं को जीतकर मुनियों को भी पीडित करने लगा।७७-७८।

लब्ध्वान्धकं महापुत्रं तपसाराध्य शंकरम्।
देवाञ्जित्वा सदेवेन्द्रान्[3] क्षुब्ध्वा च धरणीमिमाम् ॥७९

उसने तपस्या द्वारा शंकर की आराधना करके अन्धक नामक महान् पुत्र प्राप्त किया। और इन्द्र सहित देवों को जीतकर पृथ्वी को क्षुब्ध कर दिया।७९

नीत्वा रसातलं चक्रे वेदान्वै[4] निष्प्रभांस्तथा।
ततः सब्रह्मका देवाः [5]परिम्लानमुखश्रियः ॥८०

फिर उसे पाताल ले जाकर वेदों को प्रभाहीन कर दिया। तब ब्रह्मा सहित सभी देवों की मुख श्री मुरझा गयी।८०

गत्वा विज्ञापयामासुर्विष्णवे हरिमन्दिरम्।
स चिन्तयित्वा विश्वात्मा[6] तद्वधोपायमव्ययः ॥८१

उन्होंने हरि-मन्दिर में जाकर विष्णु से निवेदन किया। विश्वात्मा, अविनाशी भगवान् उस (असुर) के वध का उपाय सोचने लगे।८१

सर्वदेवमयं[7] शुभ्रं वाराहञ्च[8] पुरा दधे।
गत्वा हिरण्यनयनं हत्वा तं पुरुषोत्तमः ॥८२

पहले पुरुषोत्तम भगवान् ने सर्वदेवमय श्वेत वाराह का रूप धारण किया और हिरण्याक्ष के पास जाकर उसका वध किया।८२

---

१. देवः। २. दैत्यसत्तमः। ३. सेन्द्रादीन् बद्धा इति पा०। ४. बन्दीमिन्दी वरप्रभामिति पा०। ५. परिभ्रष्ट। ६. सर्वात्मा। ७. वेदमयं। ८. वाराहं वपुरादधे इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दंष्ट्रयोद्धारयामास[1] कल्पादौ धरणीमिमाम् ।
त्यक्त्वा वाराहसंस्थानं संस्थाप्यैवं[2] सुरद्विषः ॥८३

फिर कल्प के आदि में पृथ्वी को अपनी दंष्ट्रा पर उठाकर ले आये। पश्चात् देवद्रोहियों को मार कर उन्होंने अपना वाराहरूप त्याग किया ।८३

स्वामेव प्रकृतिं दिव्यां ययौ विष्णुः परं पदम् ।
तस्मिन् हतेऽमरारिर्यौ प्रह्लादो विष्णुतत्परः ॥८४

अपनी ही दिव्य प्रकृति का अवलम्बन लेकर श्रीविष्णु परम धाम पहुँच गये। उस देवशत्रु के मार दिये जाने पर प्रह्लाद विष्णुपरायण हो गये ।८४

अपालयत्स्वकं राज्यं भावं त्यक्त्वा तदासुरम् ।
यजते[3] विधिवद्देवान्विष्णोराराधने रतः ॥८५

वे अपना आसुर भाव का त्याग करके विष्णु की आराधना में निरत हो प्रजा का पालन करते हुए विधिपूर्वक यज्ञ करते थे ।८५

निःसपत्नं सदा राज्यं तस्यासीद्विष्णुवैभवात् ।
ततः कदाचिदसुरो ब्राह्मणं गृहमागतम् ॥८६

विष्णु के प्रसाद से उनका राज्य सदा निष्कण्टक हो गया। तदनन्तर कभी एक ब्राह्मण उनके घर आया ।८३

न[4] च सम्भाषयामास देवानाञ्चैव मायया ।
स तेन तापसोऽत्यर्थं मोहितेनावमानितः ॥८७

किन्तु देवताओं की माया से मोहित होने के कारण प्रह्लाद ने ब्राह्मण से संभाषण नहीं किया। इससे ब्राह्मण अपमानित हुआ ।८७

शशापासुरराजानं[5] क्रोधसंरक्तलोचनः ।
यत्तद्बलं[6] समाश्रित्य ब्राह्मणानवमन्यसे ॥८८
सा शक्तिर्वैष्णवी[7] दिव्या विनाशन्ते गमिष्यति ।
इत्युक्त्वा प्रययौ तूर्णं प्रह्लादस्य गृहाद्द्विजः ॥८९

क्रोध से आँखें लाल करके उसने असुरराज को शाप दिया कि तूने जिसके बल का आश्रय लेकर ब्राह्मणों का अपमान किया है, वही दिव्य वैष्णवी शक्ति तेरा नाश करेगी। यह कहकर ब्राह्मण प्रह्लाद के घर से शीघ्र निकल गया ।८८-८९।

---

१. दंष्ट्रयोर्धारयामास इति, दंष्ट्रया धारयामास इति च पा० । २. संस्थाप्य च सुरद्विष इति पा० । ३. इयाज विधिना देवान् इति पा० । ४. तापसं नार्च्चयामासेति पा० । ५. असुरराजं तमिति पा० । ६. यद्बलञ्च इति पा० । ७. भक्तिरिति पा०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुमोह राज्यसंसक्तः सोऽपि शापबलात्ततः[1] ।
बाधयामास विप्रेन्द्रान्न विवेद जनार्दनम् ॥६०

वह भी शाप के कारण राज्य में आसक्त होकर मोहित हो गया। द्विजश्रेष्ठों को पीडित करने लगा और भगवान् को भूल गया ।६०

पितुर्वधमनुस्मृत्य क्रोधं चक्रे हरिं प्रति ।
तयोः समभवद्युद्धं सुघोरं रोमहर्षणम् ॥६१

पिता के वध का स्मरण करके हरि के प्रति क्रोध करने लगा। उन दोनों में रोमांचकारी अत्यन्त भयंकर युद्ध हुआ ।६१

नारायणस्य देवस्य प्रह्लादस्यामरद्विषः ।
कृत्वा स सुमहद्युद्धं विष्णुना तेन निर्जितः ॥६२

देवद्रोही प्रह्लाद तथा नारायणदेव में महान् युद्ध होने के बाद विष्णु ने असुर को जीत लिया ।६२

पूर्वसंस्कारमाहात्म्यात्परस्मिन् पुरुषे हरौ ।
सञ्जातं तस्य विज्ञानं शरण्यं[2] शरणं ययौ ॥६३

पहले के संस्कार के माहात्म्य से परम पुरुष हरि का उसे ज्ञान हो गया। तब वह रक्षक हरि की शरण में पहुँचा ।६३

ततः प्रभृति दैत्येन्द्रो ह्यनन्यां भक्तिमुद्वहन् ।
नारायणे महायोगमवाप पुरुषोत्तमे ॥६४

तब से दैत्यराज नारायण की अनन्य भक्ति करने लगा और महायोग द्वारा उसने पुरुषोत्तम को प्राप्त किया ।६४

हिरण्यकशिपोः पुत्रे योगसंसक्तचेतसि ।
अवाप तन्महद्राज्यमन्धकोऽसुरपुंगवः ॥६५

हिरण्यकशिपु के पुत्र प्रह्लाद के योगासक्त चित्त हो जाने पर असुरश्रेष्ठ अन्धक ने उसका महान् राज्य हस्तगत कर लिया। ६५

हिरण्यनेत्रतनयः शम्भोर्देहसमुद्भवः ।
मन्दरस्थामुमां देवीं चकमे पर्वतात्मजाम् ॥६६

शंकर देहोत्पन्न हिरण्याक्ष-पुत्र अन्धक मन्दराचल पर अवस्थित पर्वतपुत्री उमा की कामना करने लगा ।६६

---

१. यज्यबलाकृतः इति पा० २. ययौ स शरणं हरेः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरा दारुवने पुण्ये मुनयो गृहमेधिनः ।
ईश्वराराधनार्थाय तपश्चेरुः सहस्रशः ॥९७

पूर्वकाल में पवित्र दारुवन में हजारों गृहस्थ मुनि शंकर की आराधना करने के लिए तपस्या कर रहे थे ।९७

ततः कदाचिन्महती[1] कालयोगेन दुस्तरा ।
अनावृष्टिरतीवोग्रा ह्यासीद्भूतविनाशिनी ॥९८

तदनन्तर किसी समय कालयोग से बहुत भयंकर सूखा पड़ गया । प्राणियों का विनाश करने वाली वह अनावृष्टि अत्यन्त उग्र हो गई ।९८

समेत्य सर्वे मुनयो गौतमं तपसां निधिम् ।
अयाचन्त क्षुधाविष्टा आहारं[2] प्राणधारणम् ॥९९

क्षुधापीडित वे सब मुनि तपोनिधि गौतम मुनि के पास आकर प्राणरक्षक भोजन की याचना करने लगे ।९९

स तेभ्यः प्रददावन्नं मृष्टं बहुतरं बुधः ।
सर्वे बुभुजिरे विप्रा निर्विशंकेन चेतसा ॥१००

विद्वान् गौतम सब को प्रचुर मात्रा में परिष्कृत भोजन देने लगे । सभी मुनि निर्भय चित्त से भोजन करते थे ।१००

गते च द्वादशे वर्षे कल्पान्त इव शांकरी ।
बभूव वृष्टिर्महती [3]यथापूर्वमभूज्जगत् ॥१०१

कल्पान्त के समान बारह वर्ष बीत जाने पर कल्याणप्रद महती वृष्टि हुई । संसार की स्थिति पूर्ववत् हो गई ।१०१

ततः सर्वे मुनिवराः समामन्त्र्य परस्परम् ।
महर्षिं गौतमं प्रोचुर्गच्छाम इति वेगतः ॥१०२

तब सब मुनियों ने परस्पर मंत्रणा करके महर्षि गौतम से कहा—'हम लोग अभी जा रहे हैं ।' ।१०२

निवारयामास च तान् कञ्चित्कालं यथासुखम् ।
उषित्वा मद्गृहेऽवश्यं गच्छध्वमिति पण्डिताः ॥१०३

गौतम ने उन लोगों को रोक दिया और कहा—'पंडितो ! कुछ दिन और मेरे गृह में सुखपूर्वक निवास करके चले जाइएगा' ।१०३

---

१. महता इति पा० । २. ह्याहारमिति पा० । ३. यथापूर्णमभूदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो मायामयीं सृष्ट्वा कृष्णां[1] गां सर्व एव ते ।
समीपं प्रापयामासुर्गौतमस्य महात्मनः ॥१०४

तब सभी पण्डितों ने मिलकर एक मायामयी काली गौ की सृष्टि की और उसको महात्मा गौतम के पास पहुँचा दिया ।१०४

सोऽनुवीक्ष्य कृपाविष्टस्तस्याः संरक्षणोत्सुकः ।
गोष्ठे तां बन्धयामास स्पृष्टमात्रा ममार सा ॥१०५

महात्मा उसे देखकर दया से युक्त हो गये । उसके संरक्षण के प्रति उत्सुक होकर गोशाला में बँधवा दिया । किन्तु उसका स्पर्श करते ही वह मर गई ।१०५

स शोकेनाभिसन्तप्तः कार्याकार्यं महामुनिः ।
न पश्यति स्म सहसा तमृषिं मुनयोऽब्रुवन् ॥१०६

महामुनि शोक से अभिसन्तप्त होकर कर्तव्याकर्तव्य के निर्णय में असमर्थ हो गये । सहसा उस ऋषि से मुनियों ने कहा ।१०६

गोवध्येयं[2] द्विजश्रेष्ठ यावत्तव शरीरगा ।
तावत्तेऽन्नं न भोक्तव्यं गच्छामो वयमेव हि ॥१०७

यह गोहत्या जब तक आपके शरीर में रहेगी तब तक हम लोग आपका अन्न ग्रहण नहीं करेंगे । हम जा रहे हैं ।१०७

तेनातोऽनुमताः[3] सन्तो देवदारुवनं शुभम् ।
जग्मुः पापवशन्नीत्वा[4] तपश्चर्तुं यथा पुरा ॥१०८

उनसे अनुमति मिल जाने पर वे लोग गौतम को पापी बनाकर पवित्र देवदारु-वन में तपस्या करने के लिए चले गये ।१०८

स तेषां मायया जातां[5] गोवध्यां गौतमो मुनिः ।
केनापि हेतुना ज्ञात्वा शशापातीवकोपतः[6] ॥१०९

गौतम मुनि किसी कारण से उन लोगों द्वारा माया से रचित गौ को जानकर अत्यन्त क्रोधवश शाप दे दिया ।१०९

भविष्यन्ति[7] त्रयीबाह्या महापातकिभिः समाः ।
बहुशस्ते[8] तथा शापाज्जायमानाः पुनः पुनः ॥११०

---

१. कृशाङ्गीमिति, कृशांगामिति पा० । २. गोवधोयं इति पा० । गोवध्येयं-गोः वध्या हत्या, क्यपि भावे हनो वधादेश आर्षः । ३. तेन तेन युताः इति पा० एवमुक्ता मुनिवरं गौतमं तपसां निधिमिति पा० । ४. नीता इति पा० । ५. जातं गोवधं इति । ६. कोपन इति पा० । ७. भविष्यथ त्रयी बाह्य इति । ८. बभूवुः इति ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम लोग मेरे शापवश वेदबहिष्कृत तथा महापातकियों के समान होगे। बार-बार तुम्हें जन्म लेना पड़ेगा।११०

सर्वे संप्राप्य देवेशं शङ्करं विष्णुमव्ययम्।
अस्तुवन् लौकिकैः स्तोत्रैरुच्छिष्टा[1] इव सर्वगौ ॥१११
देवदेवौ[2] महादेवौ भक्तनार्त्तिनाशनौ।
कामवृत्त्या[3] महायोगौ पापान्नस्त्रातुमर्हतः ॥११२

तब उच्छिष्ट के समान (अपवित्र) वे लोग देवाधिपति शंकर और अविनाशी विष्णु की लौकिक स्तोत्रों से स्तुति करने लगे—आप दोनों सर्वव्यापी, देवों के देव, महान् देव, भक्तों की पीड़ा हरने वाले और स्वेच्छया महायोगी हैं। हमें पाप से मुक्त करें।१११-११२।

तदा पार्श्वंस्थितं विष्णुं संप्रेक्ष्य वृषभध्वजः।
किमेतेषां भवेत्कार्यं प्राह पुण्यैषिणामिति[4] ॥११३

तब बगल में स्थित विष्णु को देखकर शंकर ने कहा—इन पुण्य चाहने वाले लोगों का कार्य कैसे होगा।११३

ततः स भगवान्विष्णुः शरण्यो भक्तवत्सलः।
गोपतिं प्राह विप्रेन्द्रानालोक्य प्रणतान्[5] हरिः ॥११४

तदनन्तर शरण देने वाले भक्तवत्सल भगवान् विष्णु प्रणाम करते हुए विप्रेन्द्रों को देखकर बोले।११४

न वेदबाह्ये पुरुषे पुण्यलेशोऽपि शङ्कर।
सङ्गच्छते महादेव धर्मो वेदाद्विनिर्भौ[6] ॥११५

शंकर! वेदबहिष्कृत पुरुष में पुण्य का लेश भी नहीं रहता है। क्योंकि महादेव! धर्म की उत्पत्ति वेद से हुई है।११५

तथापि [7]भक्तवात्सल्याद्रक्षितव्या महेश्वर।
अस्माभिः सर्व एवैते गन्तारो नरकानपि ॥११६

महेश्वर! तो भी भक्तवत्सलता के कारण हमें नरक जाने पर भी इनकी रक्षा करनी चाहिए।११६

---

१. रुच्छिष्टैरिव सर्वगैरिति पा०। २. ऊचुर्देवौ इति। ३. का नो वृत्तिर्महाभागौ विप्रान्नस्त्रातुमर्हथ इति। ४. पुण्यैषिणोमिति इति। ५. प्रणतो हरिरिति पा० ६. विनिर्यतौ इति पा०। ७. भक्ता इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्माद्धि[1] वेदबाह्यानां रक्षणार्थाय पापिनाम् ।
विमोहनाय शास्त्राणि करिष्यामो[2] वृषध्वज ॥११७

इसलिए हे वृषध्वज ! वेदवहिष्कृत पापियों की रक्षा के लिए हम मोह में डालने वाले शास्त्रों की रचना करेंगे ।११७

एवं सम्बोधितो[3] रुद्रो माधवेन[4] मुरारिणा ।
चक्रार मोहशास्त्राणि केशवोऽपि शिवेरितः ॥११८

कापालं नाकुलं[5] वामं भैरवं पूर्वपश्चिमम् ।
पञ्चरात्रं पाशुपतं[6] तथान्यानि सहस्रशः ॥११९

इस प्रकार मुरारि माधव के द्वारा सम्बोधित होने पर रुद्र ने और शिव द्वारा प्रेरित होने पर केशव ने भी कापाल, नाकुल, वाम, भैरव, पूर्वपश्चिम, पञ्चरात्र, पाशुपत और अन्यान्य हजारों मोहशास्त्रों की रचना की ।११८-११९।

सृष्ट्वा तानाह[7] निर्वेदाः कुर्वाणाः शास्त्रचोदितम् ।
पतन्तो नरके घोरे बहून् कल्पान् पुनः पुनः ॥१२०

जायन्तो[8] मानुषे लोके क्षीणपापचयास्ततः ।
ईश्वराराधनबलाद्गच्छध्वं सुकृताङ्गतिम् ॥१२१

रचना करने के उपरान्त उन्होंने उन ब्राह्मणों से कहा—तुम लोग वेदविहीन होकर अनेक कल्पों तक बार-बार भयंकर नरक में गिरते हुए मनुष्य लोक में जन्म ग्रहण करोगे । तब शास्त्रानुमोदित कर्म करते हुए ईश्वराराधन के बल से पापराशि के क्षीण हो जाने पर सद्गति लाभ करोगे ।१२०-१२१।

वर्त्तध्वं मत्प्रसादेन नान्यथा निष्कृतिर्हि[9] वः ।
एवमीश्वरविष्णुभ्यां चोदितास्ते महर्षयः ॥१२२

आदेशं प्रत्यपद्यन्त शिवस्यासुरविद्विषः[10] ।
चक्रुस्तेऽन्यानि शास्त्राणि तत्र तत्र रताः पुनः ॥१२३

तुम लोग मेरे आदेश के अनुसार चलो, अन्यथा तुम्हारा उद्धार नहीं होगा । इस प्रकार महादेव और विष्णु से प्रेरित होकर वे महर्षि असुरद्रोही शिव के आदेश का प्रति-

---

१. तस्माद्वै इति पा० । २. करिष्यावो इति पा० । ३. संभावितो इति । ४. माधवेनासुरारिणा इति । ५. लाकुलमिति पा० । ६. तथा कालं इति । ७. तावूचतुरिति, तान्याह इति पा० । ८. जायन्ते इति, जायन्त इत्यत्रशतृरार्षः । ९. निकृतिरिति पा० । १०. शिरसा मुरविद्विषः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पालन करने लगे। और उन्होंने शास्त्रनिरत होकर अन्यान्य शास्त्रों की भी रचना की ।१२२-१२३।

शिष्यानध्यापयामासुर्दर्शयित्वा फलानि च ।
मोहापसदनं[1] लोकमवतीर्य्य महीतले ॥१२४
चकार शंकरो भिक्षां हितायैषां द्विजैः सह ।
कपालमालाभरणः प्रेतभस्मावगुण्ठितः ॥१२५

उनका फल दिखाकर शिष्यों को पढ़ाने लगे। इधर शंकर भूतल पर मोह के कुगृहभूत लोक में अवतार लेकर उनके कल्याण के लिए ब्राह्मणों के साथ भिक्षाटन करने लगे। शंकर ने कपालमाला धारण की और शरीर में प्रेतभस्म लेप लिया ।१२४-१२५।

विमोहयँल्लोकमिमं[1] जटामण्डलमण्डितः ।
निक्षिप्य पार्वतीन्देवीं विष्णावमिततेजसि ॥१२६

अमिततेजस्वी विष्णु के पास पार्वती को छोड़कर जटामण्डल से मण्डित शिव लोक को मोहित करने लगे ।१२६।

नियोज्य भगवान्रुद्रो भैरवं दुष्टनिग्रहे ।
दत्त्वा नारायणे देव्यानन्दनं[2] कुलनन्दनम् ॥१२७

भगवान् रुद्र ने दुष्टों के निग्रहार्थ भैरव को नियुक्त करके देवी के कुलनन्दन पुत्र को नारायण को सौंप दिया ।१२७

संस्थाप्य तत्र च गणान्देवानिन्द्रपुरोगमान् ।
प्रस्थिते च महादेवे विष्णुर्विश्वतनुः स्वयम् ॥१२८
स्त्रीरूपधारी नियतं सेवते स्म महेश्वरीम् ।
ब्रह्मा हुताशनः शक्रो यमोऽन्ये सुरपुंगवाः ॥१२९

वहाँ अपने गणों तथा इन्द्र आदि देवताओं को स्थापित करके महादेव प्रस्थित हो गये। स्वयं विश्व शरीर विष्णु, ब्रह्मा, अग्नि, इन्द्र, यम तथा अन्य देवश्रेष्ठ सुन्दर स्त्रीरूप धारण करके महादेवी महेश्वरी पार्वती देवी की नियमपूर्वक सेवा करने लगे ।१२८-१२९।

सिषेविरे महादेवीं स्त्रीरूपं शोभनं[3] गताः ।
नन्दीश्वरश्च भगवान् शम्भोरत्यन्तवल्लभः ॥१३०

---

१. मोहयेन्त इमं लोकमिति, मोहाय स इमं लोकमिति च पा०। २. देवीं नन्दिनमिति पा०। ३. तत्र संगताः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारदेशे गणाध्यक्षो यथापूर्वमतिष्ठत[1] ।
एतस्मिन्नन्तरे दैत्यो ह्यन्धको नाम दुर्मतिः ॥१३१
आहर्तुकामो गिरिजामाजगामाथ मन्दरम् ।
सम्प्राप्तमन्धकं दृष्ट्वा शंकरः कालभैरवः[2] ॥१३२
न्यषेधयदमेयात्मा कालरूपधरो हरः ।
तयोः समभवद्युद्धं सुघोरं रोमहर्षणम् ॥१३३

शंकर के अत्यन्त प्रिय गणाध्यक्ष भगवान् नन्दीश्वर द्वारदेश में पूर्व की भाँति (पहरेदार के रूप में) खड़े हो गये। इस बीच दुर्बुद्धि अन्धक नामक दैत्य पार्वती का हरण करने के लिए मन्दराचल पर आया। अन्धक को आया देखकर अमित तेजस्वी कालरूपधारी शंकर मूर्ति कालभैरव ने उसे रोका। उन दोनों में रोमाञ्चकारी अत्यन्त भयंकर युद्ध छिड़ गया।१३०–१३३

शूलेनोरसि तं दैत्यमाजघान वृषध्वजः ।
ततः सहस्रशो दैत्याः[3] सहस्रान्धकसंज्ञिताः ॥१३४

शंकर ने दैत्य की छाती पर त्रिशूल से प्रहार किया। तब अन्धक दैत्य ने अन्धक नामक हजारों दैत्यों को सृष्टि कर दी।१३४

नन्दीश्वरादयो[4] दैत्यैरन्धकैरभिनिर्जिताः ।
घण्टाकर्णो मेघनादश्चण्डेशश्चण्डतापनः ॥१३५

उन अन्धक दैत्यों से नन्दीश्वर आदि शिव के गण पराजित हो गये। घण्टाकर्ण, मेनाद, चण्डेश, चण्डतापन।१३५।

विनायको मेघवाहः सोमनन्दी च[5] वैद्युतः ।
सर्वेऽन्धकं दैत्यवरं सम्प्राप्यातिबलान्विताः ॥१३६
युयुधुः शूलशक्त्यृष्टिगिरिकूटपरश्वधैः ।
भ्रामयित्वा तु हस्ताभ्यां गृहीत्वा चरणद्वयम् ॥१३७
दैत्येन्द्रेणातिबलिना क्षिप्तास्ते शतयोजनम् ।
ततोऽन्धकनिसृष्टा[6] ये शतशोऽथ सहस्रशः ॥१३८
कालसूर्यप्रतीकाशा भैरवञ्चाभिदुद्रुवुः[7] ।
हाहेति[8] शब्दः सुमहान् बभूवातिभयंकरः ॥१३९

---

१. यथावत्समुपस्थितः इति पा०। २. कालचोदित इति पा०। ३. दैत्यः ससर्जान्धकसंज्ञितानिति पा०। ४. नंदीशानादयश्चाथचंडीशश्चण्डतापनः। विनायकोमेघनादः इति, नन्दिकेशादयो इति च पा०। ५. विशां पतिरिति पा०। ६. निसृष्टास्ते इति पा०। ७. भैरवन्त्वभिदुद्रुवुरिति पा०। ८. जहीति इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनायक, मेघवाह, सोमनन्दी एवं वैद्युत नामक अति बलशाली गण दैत्यराज अन्धक को पाकर शूल, शक्ति, ऋष्टि, गिरिकूट तथा परश्वध नामक अस्त्रों से युद्ध करने लगे। अनन्तर अत्यन्त बली दैत्यराज ने उन लोगों के दोनों पैर पकड़कर घुमाकर सौ योजन की दूरी पर क्रमशः फेंक दिया। तत्पश्चात् अन्धक द्वारा सृष्टि किये गये प्रलयकालीन सूर्य के समान सैकड़ों-हजारों दैत्यों ने भैरव पर आक्रमण कर दिया। हाहाकार का अत्यन्त महान् और अत्यन्त भयंकर शब्द हुआ।१३६-१३९

युयुधे भैरवो देवः[1] शूलमादाय भैरवम्[2]।
दृष्ट्वान्धकानां सुबलं दुर्जयन्निर्जितो हरः ॥१४०

भयंकर त्रिशूल लेकर भैरवदेव युद्ध करने लगे, किन्तु शंकरमूर्ति भैरव अन्धकों की अतिमहती दुर्जय सेना को देखकर पराजितप्राय हो गये।१४०

जगाम शरणन्देवं वासुदेवमजं विभुम्।
सोऽसृजद्भगवान्विष्णुर्देवीनां शतमुत्तमम् ॥१४१

तब वे अजन्मा विभु वासुदेव की शरण में गये। भगवान् विष्णु ने सैकड़ों उत्तम देवियों की सृष्टि की।१४१

देवीपार्श्वस्थितो देवो विनाशाय सुरद्विषाम्।
तदान्धकसहस्रन्तु देवीभिर्यमसादनम्[3] ॥१४२
नीतं केशवमाहात्म्याल्लीलयैव रणाजिरे।

उस समय देवद्रोहियों के विनाश के लिए विष्णुदेव पार्वती के समीप बैठे हुए थे। उन देवियों ने हजारों अन्धकों को विष्णु की महिमा से लीलापूर्वक मारकर यमालय में भेज दिया।१४२½

दृष्ट्वा पराहतं सैन्यमन्धकोऽपि महासुरः ॥१४३
पराङ्मुखो रणात्तस्मात्पलायत महाजवः।

दूसरे से आहत अपनी सेना को देखकर महासुर अन्धक रण से विमुख होकर बड़े वेग से भाग गया।१४३½

ततः क्रीडां महादेवः कृत्वा द्वादशवार्षिकीम् ॥१४४
हिताय भक्तलो[4]कानामाजगामाथ मन्दरम्।
सम्प्राप्तमीश्वरं ज्ञात्वा सर्व एव गणेश्वराः ॥१४५

---

१. रुद्र इति पा०। २. भीषणमिति पा०। ३. सदनमेव सादनं स्वार्थे अण्। ४. लोके भक्तानामाजगामाथ मन्दरमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समागम्योपतिष्ठन्त भानुमन्तमिव द्विजाः ।
प्रविश्य भवनं[1] पुण्यमयुक्तानां दुरासदम् ॥१४६

तदनन्तर महादेव बारह वर्षों की अपनी क्रीड़ा सम्पन्न करके भक्तों के कल्याणार्थ मन्दराचल पर आ गये । ईश्वर को आये हुए जानकर सभी गणेश्वर वहाँ आकर उपस्थित हो गये जैसे द्विजगण सूर्य का उपस्थान करते हैं। तब शंकर ने पुण्यदायक भवन में प्रवेश किया जहाँ योग-विहीनों के लिए प्रवेश करना बहुत कठिन है ।१४४-१४६

ददर्श नन्दिनन्देवं भैरवं केशवं शिवः ।
प्रणामप्रवणं देवं सोऽनुगृह्याथ नन्दिनम् ॥१४७

शिव ने वहाँ नन्दी, भैरव और विष्णुदेव को देखा, जो प्रणाम करने के लिए झुके हुए थे । शंकर ने नन्दी को अनुगृहीत किया ।१४७

प्रीत्यैनं पूर्वमीशानः[2] केशवं परिषस्वजे ।
दृष्ट्वा[3] देवो महादेवीं प्रीतिविस्फारितेक्षणाम् ॥१४८

और विष्णुदेव को प्रीतिपूर्वक आलिंगन किया । तत्पश्चात् प्रेम से आँखें फाड़कर ताकती हुई महादेवी को उन्होंने देखा ।१४८

प्रणतः[4] शिरसा तस्याः[5] पादयोरीश्वरस्य च ।
न्यवेदयज्जयन्तस्मै[6] शङ्करायाथ शङ्करः ॥१४९
भैरवो विष्णुमाहात्म्यमप्रतीतः[7] पार्श्वगोऽभवत् ।

महादेवी तथा शिव के चरणो में प्रणाम करके शंकर की मूर्ति भैरव ने विष्णु का माहात्म्य निवेदन किया । फिर विश्वास के साथ उनके समीप बैठ गये ।१४९½

श्रुत्वा तं विजयं शम्भुर्विक्रमङ्केशवस्य च ॥१५०
समास्ते भगवानीशो देव्या सह वरासने ।
ततो देवगणाः सर्वे मरीचिप्रमुखा द्विजाः ॥१५१
आजग्मुर्मन्दरन्द्रष्टुं देवदेवं त्रिलोचनम् ।

वह विजय तथा विष्णु का पराक्रम सुनकर भगवान् शंभु पार्वती देवी के साथ उत्तम आसन पर बैठ गये । तदनन्तर सभी देवगण और मरीचि आदि द्विजगण देवाधिपति त्रिलोचन का दर्शन करने के लिए मन्दराचल पर आये ।१५०-१५१½

---

१. भुवनमिति पा० । २. आघ्रायमूर्द्धमीशान इति पा० । ३. दृष्ट्वा देवी महादेवं प्रीतिविस्फारितेक्षणा इति पा० । ४. नमाम इति पा० । ५. तस्य इति पा० । ६. निवेद्य विजयं तस्मै शंकरायाथ भैरवः इति पा० । ७. प्रणत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

येन तद्विजितं पूर्वन्देवीनां शतमुत्तमम् ॥१५२
समागतन्दैत्यसैन्यमीशदर्शनकांक्षया[1] ।
दृष्ट्वा वरासनासीनन्देव्या चंद्रविभूषणम् ॥१५३
प्रणेमुरादरादेव्यो गायन्ति स्मातिलालसाः ।
प्रणेमुर्गिरिजां देवीं वामपार्श्वे पिनाकिनः ॥१५४

सैकड़ों देवियाँ, जिन्होंने पहले दैत्य-सेना को जीता था, शंकर के दर्शन की अभिलाषा से वहाँ आयीं। उन देवियों ने श्रेष्ठ आसन पर देवी के साथ बैठे हुए शंकर को देखकर आदर से प्रणाम किया और वे अत्यन्त लालसा से गायन करने लगीं। फिर शंकर के वामभाग में स्थित गिरिजा तेवी को प्रणाम किया।१५२-१५४

देवासनगतान्देवीं नारायणमनोमयीम्[2] ।
दृष्ट्वा सिंहासनासीनं देव्यो[3] नारायणं तथा ॥१५५
प्रणम्य देवमीशानं पृष्टवत्यो वराङ्गनाः ।

कन्या ऊचुः

कस्त्वं विभ्राजसे कान्त्या केयम्बाला रविप्रभा ॥१५६

महादेव के आसन पर स्थित नारायणमनोमयी गिरिजा देवी तथा सिंहासनासीन नारायण को देखकर देवियों ने प्रणाम किया। फिर उन उत्तम स्त्रियों ने शंकरदेव से पूछा।

कन्यायें बोलीं—अपनी कान्ति से चमकते हुए आप कौन हैं? सूर्य की प्रभा जैसी यह बाला कौन है?।५५-५६।

को न्वयम्भाति[4] वपुषा पङ्कजायतलोचनः ।
निशम्य तासां वचनं वृषेन्द्रवरवाहनः ॥१५७
व्याजहार महायोगी भूताधिपतिरव्ययः ।
अयन्नारायणो गौरी जगन्माता सनातनः ॥१५८

यह कमललोचन कौन है, जो शरीर से सुशोभित हो रहा है? उनका बचन सुनकर नन्दीवाहन, महायोगी, भूताधिपति और अविनाशी शिव ने कहा—ये सनातन नारायण हैं और ये जगन्माता गौरी हैं।१५७-१५८

---

१. वाञ्छया इति। २ ममामयम् इति पा०। ३. देव्यानारायणेन च इति पा०। ४. कान्वियम्भाति वपुषा पङ्कजायतलोचना इति, का त्वियं भाति वपुषा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभज्य संस्थितो देवः स्वात्मानं बहुधेश्वरः[1] ।
न मे विदुः परन्तत्त्वं देव्याश्च[2] न महर्षयः ॥१५९

ये देवेश्वर बहुधा अपने को विभक्त करके स्थित होते हैं। महर्षिगण मेरा और देवी उमा का परम तत्त्व नहीं जानते हैं।५९

एकोऽयं वेद विश्वात्मा[3] भवानी विष्णुरेव च ।
अहं हि निस्पृहः[4] शान्तः केवलो निष्परिग्रहः ॥१६०

अकेले ये विश्वात्मा विष्णु और भवानी ही जानतीं हैं। मैं तो निस्पृह, शान्त, केवल और परिग्रहशून्य हूँ।१६०

मामेव केशवं प्राहुर्लक्ष्मीं देवीमथाम्बिकाम् ।
एष धाता विधाता[5] च कारणं कार्यमेव च ॥१६१

मुझे ही विद्वान् लोग विष्णु, लक्ष्मी तथा अम्बिका कहते हैं। ने विष्णु धाता, विधाता, कारण और कार्य हैं।१६१

कर्त्ता कारयिता विष्णुर्भुक्तिमुक्तिफलप्रदः ।
भोक्ता[6] पुमानप्रमेयः संहर्त्ता कालरूपधृक् ॥१६२

भोग-मोक्ष देने वाले विष्णु कर्ता और कारयिता भी हैं। ये भोक्ता, पुरुष, अज्ञेय, संहार करने वाले और कालरूपधारी हैं।१६२

स्रष्टा पाता[7] वासुदेवो विश्वात्मा विश्वतोमुखः ।
कूटस्थो ह्यक्षरो व्यापी योगी नारायणोऽव्ययः[8] ॥१६३

ये स्रष्टा, रक्षक, वासुदेव, विश्वात्मा, सब ओर मुख वाले, कूटस्थ, अविनाशी, सर्वव्यापी, योगी, नारायण और अविकारी हैं।१६३

तारकः पुरुषो ह्यात्मा केवलं परमं पदम् ।
सैषा माहेश्वरी गौरी मम शक्तिर्निरञ्जना ।१।६४

ये तारणकर्ता, पुरुष, आत्मा और केवलमात्र परम पद हैं। और ये गौरी माहेश्वरी, मेरी निरञ्जना शक्ति हैं।१६४

शांता[9] सत्या सदानन्दा परं पदमिति श्रुतिः ।
अस्यां सर्वमिदञ्जातमत्रैव लयमेष्यति ॥१६५

---

१. परमेश्वरी। २. देवाद्या इति पा०। ३. देवदेवात्मा इति, पा०। ४. निष्क्रियः इति। ५. स्वभक्तानामप्रमेय इति पा०। ६. धाता इति पा०। ७. नारायणः स्वयमिति, नारायणाह्वयः इति च पा०। ८. शान्तानन्दा परासत्या।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये शान्ता, सत्या, सदानन्दा और वेद में परम पद कही गई हैं। सम्पूर्ण जगत् इन्हीं से उत्पन्न हुआ है और इन्हीं में विलीन होगा।१६५

एषैव सर्वभूतानां गतीनामुत्तमा गतिः।
तयाहं संगतो देव्या केवलो निष्कलः परः ॥१६६

ये ही सकल प्राणियों के आश्रयों में उत्तम आश्रय हैं। इनसे मिलकर मैं केवल और परम कलाहीन हूँ।१६६

पश्याम्यशेषमेवाहं[1] परमात्मानमव्ययम्।
तस्मादनादिमद्वैतं विष्णुमात्मानमीश्वरम् ॥१६७

एकमेव विजानीथ ततो यास्यथ निर्वृतिम्।
मन्यन्ते विष्णुमव्यक्तमात्मानं श्रद्धयान्विता ॥१६८

ये भिन्नदृष्ट्या चेशानं पूजयन्तो न मे प्रियाः।
द्विषन्ति ये जगत्सूतिं मोहिता रौरवादिषु ॥१६९

पच्यमाना न मुच्यन्ते कल्पकोटिशतैरपि।
तस्मादशेषभूतानां रक्षको विष्णुरव्ययः ॥१७०

मैं अनन्त, अविनाशी, परमात्मा को देखता हूँ। इसलिए अनादि, अद्वैत, ईश्वर, आत्मस्वरूप विष्णु को एकमात्र समझो। तब मोक्ष प्राप्त करोगे। जो श्रद्धालु अव्यक्त और आत्मस्वरूप विष्णु को शिव से भिन्न दृष्टि से देखते हैं, वे शंकर की पूजा करते हुए भी मुझे प्रिय नहीं हैं। जो मोहवश जगन्माता पार्वती से द्वेष करते हैं, वे रौरव आदि नरकों में पकाये जाते हुए करोड़ों कल्प तक नहीं छोड़े जाते हैं। इसलिए अशेष प्राणियों के रक्षक अविनाशी विष्णु हैं।१६७-१७०।

यथावदिह विज्ञाय ध्येयः सर्वापदि प्रभुः।
श्रुत्वा भगवतो वाक्यं देवाः[2] सर्वे गणेश्वराः ॥१७१

नेमुर्नारायणं देवं देवीं च हिमशैलजाम्।
प्रार्थयामासुरीशाने भक्तिं भक्तजनप्रिये ॥१७२

भवानीपादयुगले नारायणपदाम्बुजे।

इन बातों को ठीक-ठीक जानकर सभी आपत्तियों में प्रभु का ध्यान करना चाहिए। भगवान् का वचन सुनकर सभी देवों और गणेश्वरों ने नारायण देव तथा पार्वती देवी को प्रणाम किया। फिर भक्तजनों के प्रिय महादेव, पार्वती के चरणयुगल तथा नारायण के चरणकमल में भक्ति के लिए प्रार्थना की।१७१-१७२½

---

१. मेवेदमिति पा०। २. देव्यः सर्वगणेश्वरा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो नारायणन्देवं गणेशा मातरोऽपि च ॥१७३
न पश्यन्ति जगत्सूतिं तद्द्भुतमिवाभवत् ।

तदनन्तर गणेश्वर और मातृगण ने नारायण देव को तथा जगन्माता को नहीं देखा, यह अद्भुत बात हुई ।१७३½

तदन्तरे महादैत्यो ह्यन्धको मन्मथान्धकः ॥१७४
मोहितो गिरिजां देवीमाहर्तुं गिरिमाययौ ।

इस बीच कामान्ध अन्धक नामक महादैत्य मोहित होकर पार्वती का हरण करने के लिए पर्वत पर आया ।१७४½

अथानन्तवपुः श्रीमान्योगी नारायणोऽमलः ।
तत्रैवाविरभूद्दैत्यैर्युद्धाय पुरुषोत्तमः ॥१७५

इसके बाद अनन्तशरीरधारी, श्रीमान्, योगी, निर्मल, पुरुषोत्तम नारायण वहीं दैत्यों से युद्ध करने के लिए प्रकट हो गये ।१७५

कृत्वाथ पार्श्वे भगवन्तमीशो युद्धाय विष्णुं गणदेवमुख्यैः ।
शिलादपुत्रेण च मातृकाभिः स कालरुद्रोऽपि जगाम देवः ॥१७६

अनन्तर शंकर ने अपने बगल में भगवान् विष्णु, प्रधान गणदेवता, शिलादपुत्र, मातृकागण और कालरुद्र को साथ करके युद्धार्थ प्रस्थान कर दिया ।१७६

त्रिशूलमादाय कृशानुकल्पं[1] स देवदेवः प्रययौ पुरस्तात् ।
तमन्वयुस्ते गणराजवर्या[2] जगाम देवोऽपि सहस्रबाहुः ॥१७७

अग्नि के समान (देदीप्यमान) महादेव त्रिशूल लेकर आगे-आगे चले। उनके पीछे गणराज श्रेष्ठ एवं सहस्रबाहु विष्णुदेव चलने लगे ।१७७

रराज मध्ये भगवान् सुराणां विवाहनो[3] वारिजपर्णवर्णः ।
तदा[4] सुमेरोः शिखराधिरूढस्त्रिलोकदृष्टिर्भगवानिवार्कः ॥१७८

उस समय देवताओं के बीच कमलपत्र के समान वर्ण वाले भगवान् विवाहन शोभित हो रहे थे मानों सुमेरुपर्वत के शिखर पर आरूढ़ तीनों लोक के नेत्र भगवान् सूर्य हों ।१७८

जयन्ननादिर्भगवानमेयो[5] हरेः[6] सहस्राकृतिराविरासीत् ।
त्रिशूलपाणिर्गगने सुघोषः पपात देवोपरि पुष्पवृष्टिः ॥१७९

---

१. कल्पः इति पा० । २. वर्गा । ३. गोवाहनो । ४. तथा स मेरोः । ५. जयत्यनादिर्भगवानमेय इति, जगत्यनादिरिति पा० । ६. हरिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयशील, अनादि, अमेय, त्रिशूलपाणि भगवान् शंकर ने महान् घोष करते हुए आकाशमार्ग में सहस्र आकृतियाँ धारण कर लीं। उनके ऊपर पुष्पवृष्टि होने लगी ।१७९

समागतं वीक्ष्य गणेशराजं समावृतं दैत्यरिपुं गणेशैः ।
युयोध शक्रेण समातृकाभिर्गणैरशेषैरमरप्रधानैः ॥१८०

गणेशराज को आये हुए तथा दैत्यरिपु को गणश्रेष्ठ द्वारा घिरे हुए देखकर इन्द्र, मातृकागण एवं समस्त देवप्रधानों के साथ अन्धक युद्ध करने लगा ।१८०

विजित्य सर्वानपि बाहुवीर्यात्स संयुगे शम्भुरनन्तधामा[1] ।
समाययौ यत्र स कामरुद्रो विमानमारुह्य विहीनसत्त्वः[2] ॥१८१

युद्ध में वह अपने बाहुबल से सबको जीतकर उस ओर गया जहाँ अनन्ततेजस्वी शिव कालरुद्र के साथ विमान पर आरूढ़ होकर खिन्न थे ।१८१

दृष्ट्वान्धकं समायान्तं भगवान् गरुडध्वजः ।
व्याजहार महादेवं भैरवं भूतिभूषणम् ॥१८२

अन्धक को आते हुए देखकर भगवान् विष्णु ने भूतिभूषण, भैरव, महादेव से कहा—।१८२

हन्तुमर्हसि दैत्येशमन्धकं लोककण्टकम् ।
त्वामृते भगवान् शक्तो हन्ता[3] नान्योऽस्य विद्यते ॥१८३

लोक के कण्टक दैत्यराज अन्धक को आप ही मार सकते हैं। आपको छोड़कर दूसरा कोई इसको मारने में समर्थ नहीं है ।१८३

त्वं हर्त्ता सर्वलोकानां कालात्मा ह्यैश्वरी तनुः ।
स्तूयते[4] विविधैर्मन्त्रैर्वेदविद्भिर्विचक्षणैः ॥१८४

आप सभी लोकों के हर्ता, कालात्मा तथा ईश्वरीय शरीरधारी हैं। वेदवेत्ता विद्वान् विविध मंत्रों से आपकी स्तुति करते हैं ।१८४

स वासुदेवस्य वचो निशम्य भगवान् हरः ।
निरीक्ष्य विष्णुं हनने दैत्येन्द्रस्य मतिन्दधौ ॥१८५

भगवान् शंकर ने विष्णु की बात सुनकर उनकी ओर देखकर दैत्यराज की हत्या का विचार किया ।१८५

---

१. शम्भुमनन्तधामा। २. विनाशबुद्धिम्। ३. हन्तुं। ४. स्तुत्वा स विविधैरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगाम देवतानीकं गणानां हर्षवर्द्धनम्[1] ।
स्तुवन्ति भैरवं देवमन्तरिक्षचरा जनाः ॥१८६

तब गणों का हर्ष बढ़ाने वाली देव-सेना चल पड़ी और अन्तरिक्ष चारी देवगण भैरवरूप महादेव की स्तुति करने लगे—।१८६

जयानन्त[2] महादेव कालमूर्त्ते सनातन ।
त्वमग्निः सर्वभावानामन्तस्तिष्ठसि[3] सर्वगः ॥१८७

हे अनन्त ! आपकी जय हो। महादेव ! कालमूर्ते ! सनातन ! आप सर्वगामी तथा अग्निरूप से सभी प्राणियों के भीतर रहते हैं ।१८७

त्वमन्तको[4] लोककर्त्ता त्वन्धाता हरिरव्ययः ।
त्वं ब्रह्मा त्वं महादेवस्त्वन्धाम परमं पदम् ॥१८८

आप निधनकर्ता, लोककर्ता, धाता और अविनाशी हरि हैं। आप ब्रह्मा, आप महादेव, आप तेजः स्वरूप और परम पद हैं ।१८८

ओंकारमूर्तिर्योगात्मा[5] त्रयीनेत्रस्त्रिलोचनः ।
महाविभूतिर्विश्वेशो जयानन्त[6] जगत्पते ॥१८९

आप ओंकारमूर्ति, या योगात्मा, वेदनेत्र, त्रिलोचन, महाविभूति और विश्वेश हैं। हे अनन्त ! हे जगत्पते ! आपकी जय हो ।१८९

ततः कालाग्निरुद्रोऽसौ गृहीत्वान्धकमीश्वरः ।
त्रिशूलाग्रेषु विन्यस्य प्रननर्त्त सताङ्कृतिः ॥१९०

तदनन्तर सज्जनों के रक्षक वे ईश्वर कालाग्निरुद्र अन्धक को पकड़कर त्रिशूल के अग्रभाग पर रखकर नाचने लगे ।१९०

दृष्ट्वान्धकं देवगणाः शूलप्रोतं पितामहः ।
प्रणेमुरीश्वरं देवं भैरवम्भवमोचनम् ॥१९१

ब्रह्मा और देवगण शूलविद्ध अन्धक को देखकर संसार से छुड़ाने वाले ईश्वर भैरवदेव को प्रणाम करने लगे ।१९१

अस्तुवन्मुनयः सिद्धा जगुर्गन्धर्वकिन्नराः ।
अन्तरिक्षेऽप्सरःसङ्घा[7] नृत्यन्ति स्म मनोहराः॥ १९२

---

१. हर्षमुद्वहन्तिति पा० । २. जय देव। ३. सर्वभूतानामन्तश्चरसि नित्यशः इति पा० । ४. त्वमेव सर्वलोकानां हर्ता धाता त्वमव्ययः इति, त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार इति च पा० । ५. अकारमूर्तिर्योगात्मा ओंकारमूर्त्तिरीशात्मा इति च पा० । ६. देवेशजयाशेषजगत्पते इति पा० । ७. अन्तरिक्षेऽप्सरसः सर्वा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनिगण तथा सिद्धगण स्तुति करने लगे। अन्तरिक्ष में मनोहर अप्सराओं का समूह नाचने लगा।१९२

संस्थापितोऽथ शूलाग्रे सोऽन्धको दग्धकिल्बिषः।
उत्पन्नाखिलविज्ञानस्तुष्टाव परमेश्वरम्[1] ॥१९३

अनन्तर शूलाग्र पर स्थापित होने से अन्धक निष्पाप हो गया एवं उसमें समस्त विज्ञानों का अविर्भाव हुआ, जिससे वह परमेश्वर की स्तुति करने लगा।१९३

अन्धक उवाच

नमामि मूर्ध्ना भगवंतमेकं समाहितो यं विदुरीशतत्त्वम्।
पुरातनं पुण्यमनंतरूपं कालं कविं योगवियोगहेतुम् ॥१९४

अन्धक बोला—मैं समाहित चित्त होकर भगवान् को सिर से प्रणाम करता हूँ, जिन्हें लोग अद्वितीय, ईशतत्त्व, पुरातन, पुण्यस्वरूप, काल, कवि और योग-वियोग के हेतु जानते हैं।१९४

दंष्ट्राकरालं[2] दिवि नृत्यमानं हुताशवक्त्रं ज्वलनार्करूपम्।
सहस्रपादाक्षिशिरोभियुक्तं भवन्तमेकं प्रणमामि रुद्रम् ॥१९५

भयंकर दंष्ट्रा वाले, आकाश में नाचने वाले, अग्नि के समान मुखवाले, देदीप्यमान सूर्यस्वरूप, सहस्र चरण, नेत्र और शिर वाले, रुद्ररूप और एकमात्र आपको नमस्कार है।१९५

जयादिदेवामरपूजिताङ्घ्रे विभागहीनामलतत्त्वरूप।
त्वमग्निरेको बहुधाभिपूज्यो बाह्यादिभेदैरखिलात्मरूपः ॥१९६

हे देवपूजित चरण वाले, विभागहीन, निर्मलतत्त्वरूप, आदिदेव! आपकी जय हो। आप एक अग्निस्वरूप होने पर भी अनेक प्रकार से पूजनीय हैं। बाह्य आदि भेदों से आप अखिलात्मस्वरूप हैं।१९६

त्वामेकमाहुः पुरुषं पुराणमादित्यवर्णन्तमसः परस्तात्।
त्वं पश्यसीदं परिपाश्यजस्रं त्वमन्तको योगिगणानुजुष्टः[3] ॥१९७

आपको एकमात्र पुराण पुरुष, सूर्यवर्ण और तमोगुण से परे कहते हैं। आप इस जगत् को देखते हैं, नित्य रक्षा करते हैं और आप संहारकर्ता तथा योगिगणों के आराध्य हैं।१९७

---

१. पुरुषोत्तममिति पा०। २. दंष्ट्राकरालञ्च विनर्त्तमानमिति पा०। नृत्यमानमित्यत्र आर्षमात्मनेपदम्। ३. अनुसृष्टइति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकोऽन्तरात्मा बहुधा निविष्टो देहेषु देहादिविशेषहीनः[1] ।
त्वमात्मतत्त्वं परमात्मशब्दं[2] भवन्तमाहुः शिवमेव केचित्[3] ॥१९८

आप एकमात्र अन्तरात्मा तथा सबके देहों में अनेक प्रकार से निविष्ट हैं। आप का कोई अपना विशेष देहादि नहीं है। आप आमतत्त्व हैं। आपको परमात्मा और कोई शिव कहते हैं।१९८

त्वमक्षरं ब्रह्मपरं पवित्रमानंदरूपं प्रणवाभिधानम् ।
त्वमीश्वरो वेदविदां[4] प्रसिद्धः स्वायम्भुवोऽशेषविशेषहीनः ॥१९९

आप अविनाशी ब्रह्म, परम पवित्र, आनन्दरूप, एवं प्रणव नामक हैं। आप ईश्वर, वेदवेत्ताओं में प्रसिद्ध एवं अशेष विशेषहीन स्वायम्भुव हैं।१९९

त्वमिंद्ररूपो वरुणोऽग्निरूपो हंसः प्राणो मृत्युरंतोऽसि[5] यज्ञः ।
प्रजापतिर्भगवानेकरूपो[6] नीलग्रीवः स्तूयसे वेदविद्भिः ॥२००

वेदज्ञाता लोग इन्द्र, वरुण, अग्नि, हंस, प्राण, मृत्यु, अन्त, यज्ञ, प्रजापति, एकरूप, भगवान् नीलग्रीव इत्यादि नामों से आपकी स्तुति करते हैं।२००

नारायणस्त्वं जगतामनादिः[7] पितामहस्त्वं प्रपितामहश्च ।
वेदांतगुह्योपनिषत्सु गीतः सदाशिवस्त्वं परमेश्वरोऽसि ॥२०१

आप नारायण, अनादि, संसार के पितामह एवं प्रपितामह तथा वेदान्तगुह्य हैं। उपनिषदों में आप ही गाये गये हैं। आप सदाशिव और परमेश्वर हैं।२०१

नमः[8] परस्मै तमसः परस्तात्परात्मने [9]पञ्चनवांतराय ।
त्रिशक्त्यतीताय निरञ्जनाय सहस्रशक्त्यासनसंस्थिताय ॥२०२

तमोगुण से परे, परमात्मा, चतुर्दशभुवनात्मक, तीन शक्तियों से अतीत, निरञ्जन, सहस्रशक्त्यासनसंस्थित आपको नमस्कार है।२०२

त्रिमूर्त्तयेऽनंतपदात्ममूर्तये जगन्निवासाय जगन्मयाय ।
नमो[10] जनानां हृदि संस्थिताय फणीन्द्रहाराय नमोऽस्तु तुभ्यम् ॥२०३

---

१. वेदादि। २. परमात्मभूतमिति पा०। ३. विष्णुम् इति पा०। ४. वेदपदेष्वसिद्ध इति पा०। ५. ऽग्नियज्ञ इति, मृत्युमन्तासि यज्ञ इति पा०। ६. भगवानेकरुद्र इति पा०। ७. जगतामथादिरिति पा०। ८. नमः परस्तात्तमसः परस्मै परात्मने पञ्चपरांतनेश। ९. पञ्चनवान्तराय—पञ्च नव च चतुर्दश इत्यर्थः। अन्तराणि अवकाशाः यस्य तथोक्ताय चतुर्दशलोकव्यापिने इत्यर्थः। पञ्चपदान्तराय इति, पञ्चपरान्तराय इति, नमः परस्मै च परान्तराय इति च पा०। १०. नमो ललाटार्पितलोचनाय नमो जनानां हृदिसंस्थिताय। फणीन्द्रहाराय नमोस्तु तुभ्यं मुनीन्द्रसिद्धार्चितपादपद्म। ऐश्वर्यधर्मासनसंस्थिताय नमः परान्तायं भवोद्भवाय। सहस्रचंद्रार्कसहस्रमूर्तये नमोग्निचन्द्रार्कविलोचनाय इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिमूर्ति, अनन्त, परमात्ममूर्ति, जगन्निवास, जगन्मय, लोगों के हृदय में अवस्थित और नागेन्द्रों के हार वाले आपको नमस्कार है।२०३

मुनीन्द्रसिद्धार्चितपादपद्म ऐश्वर्यधर्मासनसंस्थिताय ।
नमः परान्ताय भवोद्भवाय सहस्रचन्द्रार्कसहस्रमूर्ते[1] ॥२०४

नमोस्तु सोमाय सुमध्यमाय नमोऽस्तु देवाय[2] हिरण्यबाहो[3] ।
नमोऽग्निचंद्रार्कविलोचनाय नमोऽम्बिकायाः पतये मृडाय ॥२०५

मुनीन्द्रों और सिद्धों से पूजित चरणकमल वाले, हे सहस्र सूर्य-चन्द्रमा के समान, हे सहस्रमूर्ते ! ऐश्वर्य और धर्म के आसन पर संस्थित, परान्त एवं भवोद्भव ! आपको नमस्कार है। सोम और सुमध्यम ! आपको नमस्कार है। हिरण्यबाहु ! आपको नमस्कार है। अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य नेत्र वाले आपको नमस्कार है। अम्बिकापति मृड (शिव) को नमस्कार है।२०४-२०५।

नमोऽस्तु गुह्याय गुहांतराय वेदान्तविज्ञानविनिश्चिताय ।
त्रिकालहीनामलधामधाम्ने नमो महेशाय नमः शिवाय ॥२०६

गुह्य, गुहान्तर और वेदान्तविज्ञान से विनिश्चित आपको नमस्कार है। त्रिकाल रहित और निर्मल धाम वाले महेश को नमस्कार है। शिव को नमस्कार है।२०६

एवं[4] स्तुतः स भगवान् शूलाग्रादवतार्य तम् ।
तुष्टः प्रोवाच हस्ताभ्यां स्पृष्ट्वा च परमेश्वरः ॥२०७

इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान् परमेश्वर सन्तुष्ट हो गये और उसे त्रिशूल के अग्रभाग से उतारकर हाथों से स्पर्श करके बोले।२०७

प्रीतोऽहं सर्वथा दैत्य स्तवेनानेन साम्प्रतम् ।
साम्प्राप्य गाणपत्यं मे सन्निधाने सदा[5] वस ॥२०८

दैत्य ! तुम्हारे इस स्तोत्र से मैं अब सर्वथा सन्तुष्ट हूँ। मेरा गणपति होकर तुम सर्वदा मेरे निकट में वास करो।२०८

आरोगश्छिन्नसंदेहो देवैरपि सुपूजितः ।
नंदीश्वरस्यानुचरः सर्वदुःखविवर्जितः ॥२०९

तुम नीरोग, सन्देहरहित, देवों से अत्यन्त पूजित, नन्दीश्वर का अनुचर और समस्त दुःखों में वर्जित होकर रहोगे।२०९

---

१. सहस्रचन्द्रार्कविलोडनाय इति पा०। २. ते देव इति पा०। ३. बाहवे। ४. एवं स्तुवन्तमिति पा०। ५. वसामर इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं व्याहृतमात्रे तु देवदेवेन देवताः ।
गणेश्वरं महादैत्यमंधकं देवसन्निधौ ॥२१०

इस प्रकार महादेव के कहते ही महादैत्य अन्धक देव के समीप गणेश्वर हो गया ।२१०

सहस्रसूर्यसङ्काशं त्रिनेत्रं चंद्रचिह्नितम् ।
नीलकण्ठं जठामौलिं शूलाशक्तं महाकरम् ॥२११

सहस्र सूर्यों के समान वह चमक रहा था । वह त्रिनेत्र तथा चन्द्रमा से शोभित था । वह नीलकंठ, जटाजूटधारी एवं त्रिशूल पर अपना महान् कर रखे हुए था ।२११

दृष्ट्वा तं तुष्टुवुर्दैत्यमाश्चर्यं परमङ्गताः ।
उवाच भगवान् विष्णुर्देवदेवं स्मयन्निव ॥२१२

उस दैत्य को देखकर देवता लोग परम आश्चर्य में पड़ कर महादेव की स्तुति करने लगे । भगवान् विष्णु ने मुसकराते हुए, महादेव से कहा ।२१२

स्थाने तव महादेव प्रभावः पुरुषो महान् ।
नेक्षते ज्ञातिजान्[1] दोषान् गृह्णाति च गुणानपि ॥२१३

हे महादेव ! आपका प्रभाव उचित है । आप महान् पुरुष हैं । आप आत्मीय लोगों के दोषों को नहीं देखते हैं, गुणों को ग्रहण कर लेते हैं ।२१३

इतीरितोऽथ भैरवो गणेशदेवपुङ्गवः[2]
सकेशवः सहांधको जगाम शङ्करांतिकम् ।
निरीक्ष्य देवमागतं[3] स शङ्करः सहांधकं
समाधवं समातृकं जगाम निर्वृतिं हरः ॥२१४

गणदेवताश्रेष्ठ भैरव इस प्रकार कहे जाने पर विष्णु और अन्धक सहित महादेव के निकट पहुँच गये । नारायण, अन्धक और मातृगण सहित आये हुए कालभैरव को देखकर शंकर सुखी हुए ।२१४

प्रगृह्य पाणिनेश्वरो हिरण्यलोचनात्मजं
जगाम यत्र शैलजा विमानमीशवल्लभा ।
विलोक्य सा समागतं पतिं[4] भवार्तिहारिणम्
उवाच[5] सान्धकं[6] सुखं प्रसादमन्धकस्प्रति ॥२१५

---

१. ऽज्ञानजानिति पा० । २. गणेशो देवपुङ्गवैरिति, गणेशः इति पा० । ३. दैत्यमागतं । ४. भवम्भवार्त्तिहारिणमिति पा० । ५. अवापेति पा० । ६. सादरं ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब महादेव हाथ से अन्धक को पकड़कर वहाँ गये जहाँ शिववल्लभा पार्वती विमान में विराजमान थीं। भवबाधाहारी पति को अन्धक सहित आये हुए देखकर पार्वती अन्धक के प्रति अनुग्रह करती हुई बोलीं।२१५

अथान्धको महेश्वरीं ददर्श देवपार्श्वगां
पपात दण्डवत् क्षितौ ननाम पादपद्मयोः।
नमामि देववल्लभामनादिमद्रिजामिमां
यतः प्रधानपूरुषौ निहन्ति याखिलञ्जगत् ॥२१६

अनन्तर अन्धक महेश्वरी को महादेव के पार्श्व में स्थित देखकर पृथ्वी पर दण्ड के समान गिरकर चरणकमलों में प्रणाम करने लगा। वह बोला—जिनसे प्रकृति और पुरुष उत्पन्न होते हैं और जो सम्पूर्ण जगत् का संहार करती हैं, उन अनादि शिववल्लभा पार्वती को मैं प्रणाम करता हूँ।२१६

विभाति या शिवासने शिवेन साकमव्यया
हिरण्मयेऽतिनिर्म्मले नमामि[1] तां हिमाद्रिजाम्
यदन्तराखिलञ्जगज्जगन्ति यान्ति संक्षयं
नमामि यत्र[2] तामुमामशेषदोषवर्ज्जिताम् ॥२१७

जो अविनाशिनी देवी शिव के साथ अत्यन्त निर्मल सुवर्णमय शिवासन पर शोभित हो रही हैं उन पार्वती को मैं नमस्कार करता हूँ। जिनके भीतर यह सम्पूर्ण जगत् अस्तित्व एवं संहार को प्राप्त करते हैं उन सकल दोष रहित पार्वती को प्रणाम करता हूँ।२१७

न जायते न हीयते न वर्द्धते च तामुमां
नमामि तां गुणातिगां गिरीशपुत्रिकामिमाम्।
क्षमस्व देवि शैलजे कृतं मया विमोहितं
सुरासुरैर्नमस्कृतं नमामि ते पदाम्बुजम् ॥२१८

जिनका जन्म, ह्रास और वृद्धि नहीं होती, उन गुणातीत हिमालय कन्या को प्रणाम करता हूँ। हे पार्वती देवी! मैंने मोहित होकर ऐसा आचरण किया, मेरा अपराध क्षमा करें। देवों और असुरों से नमस्कृत आपके चरणकमल को नमस्कार करता हूँ।२१८

इत्थं भगवती देवी भक्तिनम्रेण पार्वती।
संस्तुता दैत्यपतिना पुत्रत्वे जगृहेऽन्धकम् ॥२१९

---

१. नमामि तामिमामजामिति, च पा०। २. सुरासुरैर्यदर्च्चितामिति, यत्रशैलजामशेषभेदवर्जितामिति च पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार भक्ति से नम्र होकर दैत्य ने भगवती पार्वती देवी की स्तुति की। तब भगवती ने अन्धक को पुत्र के रूप में स्वीकार कर लिया ।२१९

ततः स मातृभिः साद्धं भैरवो रुद्रसम्भवः ।
जगाम त्वाज्ञया शम्भोः पातालं परमेश्वरः ॥२२०

तदनन्तर रुद्रोत्पन्न भैरव परमेश्वर शंकर की आज्ञा से मातृगण के साथ पाताल में चले गये ।२२०

यत्र सा तामसी विष्णोर्मूर्त्तिः संहारकारिका ।
समास्ते हरिरव्यक्तो नृसिंहाकृतिरीश्वरः ॥२२१

जहाँ वह संहार करने वाली तामसी विष्णु-मूर्ति रहती है, जो अव्यक्त, नृसिंहाकृति, ईश्वर हरि हैं ।२२१

ततोऽनन्ताकृतिः शम्भुः शेषेणापि सुपूजितः ।
कालाग्निरुद्रो भगवान् युयोजात्मानमात्मनि ॥२२२

तदनन्तर अनन्ताकृति शंकर की शेषनाग ने भी पूजा की। भगवान् कालाग्निरुद्र ने आत्मा को परमात्मा से मिला दिया ।२२२

युञ्जतस्तस्य देवस्य सर्वा एवाथ मातरः ।
बुभुक्षिता महादेवं प्रणम्याहुस्त्रिलोचनम् ॥२२३

भैरव के योगलीन हो जाने पर सभी मातायें क्षुधापीडित होकर त्रिलोचन महादेव को प्रणाम करके कहने लगीं ।२२३

मातर ऊचुः

बुभुक्षिता महादेव त्वमनुज्ञातुमर्हसि[1] ।
त्रैलोक्यं भक्षयिष्यामो नान्यथा तृप्तिरस्ति नः ॥२२४

मातायें बोलीं—हे महादेव ! हम भूखी हैं। आप आज्ञा दें। तीनों लोक को हम खा जायेंगी, अन्यथा हमारी तृप्ति नहीं होगी ।२०४

एतावदुक्त्वा वचनं मातरो विष्णुसम्भवाः ।
भक्षयाञ्चक्रिरे सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥२२५

इतना कहकर विष्णु से उत्पन्न मातायें समस्त चराचर सहित तीनों लोक का भक्षण करने लगीं ।२२५

ततः स भैरवो देवो नृसिंहवपुषं[2] हरिम् ।
दध्यौ नारायणन्देवं प्रणम्य च कृताञ्जलिः ॥२२६

१. त्वनुज्ञा दीयतां त्वया इति पा० । २. नृसिंहं पुरुषं ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदुपरान्त उन भैरव देव ने नृसिंह शरीरधारी हरि का ध्यान करके हाथ जोड़ कर नारायण देव को प्रणाम किया।२२६

उमेशचिन्तितं ज्ञात्वा क्षणात्प्रादुरभूद्धरिः।
विज्ञापयामास च तं भक्षयन्तीह मातरः ॥२२७

शंकर की चिन्ता जानकर हरि तत्क्षण प्रकट हो गये। उनसे निवेदन किया कि यहाँ मातायें भक्षण कर रही हैं।२२७

निवारयाशु त्रैलोक्यं[1] त्वदीया भगवन्निति।
संस्मृता[2] विष्णुना देव्यो नृसिंहवपुषा पुनः।
उपतस्थुर्महादेवं नरसिंहाकृतिं[3] ततः ॥२२८

भगवन् शीघ्र तीनों लोक को बचाइए। वे (मातायें) आपकी हैं।

पुनः नृसिंहशरीरधारी विष्णु के द्वारा स्मरण किये जाने पर देवियाँ नरसिंहाकृति महादेव के पास गयीं।२२८

सम्प्राप्य सन्निधिं विष्णोः सर्वसंहारकारिकाः।
प्रददुः शम्भवे शक्तिं भैरवायातितेजसे ॥२२९

विष्णु का सान्निध्य पाकर सर्वसंहारकारिणी देवियों ने अत्यन्त तेजस्वी भैरव शंभु को शक्ति प्रदान की।२२९

अपश्यंस्ता जगत्सूतिं[4] नृसिंहमतिभैरवम्।
क्षणादेकत्वमापन्नं शेषाहिं[5] चापि मातरः ॥२३०

उन माताओं ने देखा कि जगत् के उत्पादक अत्यन्त भीषण नृसिंह तथा अनन्त शेष क्षण भर में एक हो गये।२३०

व्याजहार हृषीकेशो ये भक्ताः शूलपाणये।
ये च[6] मां संस्मरन्तीह पालनीयाः प्रयत्नतः ॥२३१

विष्णु ने शंकर से कहा—जो हमारे भक्त हैं और जो मेरा स्मरण करते हैं, उनका पालन हम प्रयत्नपूर्वक करते हैं।२३१

ममैव मूर्त्तिरतुला सर्वसंहारकारिका।
महेश्वरांगसंभूता[7] भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ॥२३२

---

१. विनाशयन्तीति पा०। २. संस्तुता। ३. नरसिंहाकृतिञ्च तमिति पा०। ४. जगन्मूर्तिं। ५. शेषा हिंस्यंति मातरः। ६. ये धर्मानिति पा०। ७. महेश्वरांश-सम्भूतेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेश्वर के अंग से उत्पन्न सबका संहार करने वाली और भुक्ति-मुक्ति देनेवाली जो अनुपम मूर्ति है, वह मेरी ही है ।२३२

अनन्तो भगवान् कालो द्विधावस्था ममैव[1] तु ।
तामसी राजसो मूर्तिर्देवदेवश्चतुर्मुखः ॥२३३

भगवान् अनन्त और कालभैरव मेरी दो प्रकार की अवस्थामात्र है । यह मेरी तामसी मूर्ति है और देवदेव ब्रह्मा राजसी मूर्ति है ।२३३

सोहं[2] ऽदेवो दुराधर्षः काले लोकप्रकालनः ।
भक्षयिष्यामि[3] कल्पान्ते रौद्रेण निखिलं जगत् ॥२३४

सो दुराधर्ष, लोकप्रकाशन और कालस्वरूप देव मैं कल्पान्त में रौद्ररूप से सम्पूर्ण जगत् का भक्षण करूँगा ।२३४

या सा[4] विमोहिनी मूर्त्तिर्मम नारायणाह्वया[5] ।
सत्त्वोद्रिक्ता जगत्सर्वं[6] संस्थापयति नित्यदा ॥२३५

जो मेरी नारायण नाम की मोहिनी मूर्ति है, वह सत्त्वगुण से उद्रिक्त है तथा नित्य सम्पूर्ण जगत् का पालन करती है ।२३५

स[7] विष्णुः परमं ब्रह्म परमात्मा परा गतिः ।
मूलप्रकृतिरव्यक्ता सदानन्देति कथ्यते ॥२३६

वही विष्णु परम ब्रह्म, परमात्मा, परागति, मूलप्रकृति अव्यक्त और सदानन्द कहे जाते हैं ।२३६

इत्येवं[8] बोधिता देव्यो विष्णुना विष्णुमातरः ।
प्रपेदिरे महादेवं तमेव शरणं परम्[9] ॥२३७

विष्णु–समुद्भूत मातायें विष्णु के द्वारा इस प्रकार प्रबोधित होने पर उन्हीं महादेव की श्रेष्ठ शरण में प्राप्त हुईं ।२३७

एतद्वः कथितं सर्वं मयान्धकनिषूदनम्[10] ।
माहात्म्यं देवदेवस्य भैरवस्यामितौजसः[11] ॥२३८

---

१. शिवस्य च इति पा० । २. सोऽयमिति पा० । ३. भक्षयिष्यति कल्पान्ते रुद्रात्मा इति पा० । ४. या सा विमोहिका मूर्तिरस्य इति पा० । ५. नारायणप्रिया । ६. जगत्कृत्स्नामिति पा० । ७. सहि, विष्णुः परं विप्राः इति पा० । ८. इत्येव मोहिता । ९. हरमिति पा० । १०. निबर्हणमिति पा० । ११. भैरवस्यामिततेजस इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सब मैंने अन्धक का विनाश तथा अमित तेजस्वी देवदेव भैरव का माहात्म्य आप लोगों को बता दिया ।२३८

इति श्रीकूर्मपुराणे अन्धकनिबर्हणं नाम × षोडशोऽध्यायः ॥१६

श्रीकूर्मपुराण में अन्धक-विनाशन नामक सोलहवाँ अध्याय समाप्त ।१६

सप्तदशोऽध्यायः

अथ त्रिविक्रमचरितम्

सूत उवाच[1]

अन्धके निगृहीते वै प्रह्लादस्य महात्मनः ।
विरोचनो नाम बली[2] बभूव नृपतिः सुतः ॥१

सूत बोले—अन्धक के निगृहीत हो जाने पर महात्मा प्रह्लाद का विरोचन नामक बलवान् पुत्र राजा हुआ ।१

देवाञ्जित्वा सदेवेन्द्रान् बहून्वर्षान्महासुरः[3] ।
पालयामास धर्मेण त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥२

महासुर विरोचन ने इन्द्र सहित देवताओं को जीतकर बहुत वर्षों तक धर्मपूर्वक चराचर सहित त्रिभुवन का पालन किया ।२

तस्यैव वर्त्तमानस्य कदाचिद्विष्णुचोदितः ।
सनत्कुमारो भगवान् पुरं प्राप महामुनिः ॥३

उसके इस प्रकार रहते किसी समय विष्णु द्वारा प्रेरित महामुनि भगवान् सनत्कुमार असुरराज के नगर में पहुँचे ।३

गत्वा[4] सिंहासनगतो ब्रह्मपुत्रं महासुरः ।
ननामोत्थाय सिरसा प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥४

सिंहासन पर आसीन महासुर ने उठकर मुनि की अगवानी की तथा हाथ जोड़कर शिर से मुनि को प्रणाम किया और कहा ।४

× पंचदशः लि० पु० । १. श्रीकूर्म उवाच । २. पुत्र इति पा० । ३. बहून्युद्धे । ४. दृष्ट्वा ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि सम्प्राप्तो मे पुरोत्तमम्[1] ।
योगीश्वरोऽद्य भगवान्यतोऽसौ ब्रह्मवित्स्वयम्[2] ॥५

मैं धन्य हूँ, अनुगृहीत हूँ जो आज योगीश्वर एवं ब्रह्मवेत्ता भगवान् स्वयं मेरी श्रेष्ठ पुरी में पधारे हैं ।५

किमर्थमागतो ब्रह्मन् स्वयन्देवः पितामहः ।
ब्रूहि मे ब्रह्मणः पुत्र किं कार्यं करवाण्यहम् ॥६

ब्रह्मन् ! आप स्वयं ब्रह्मदेव हैं । किस हेतु आये हैं ब्रह्मपुत्र ! मुझे बताइए, मैं आपका कौन-सा कार्य करूँ ।६

सोऽब्रवीद्भगवान्देवो धर्मयुक्तं महासुरम् ।
द्रष्टुमभ्यागतोऽहं वै भवन्तं भाग्यवानसि ॥७

उन भगवान् देव ने धर्मयुक्त महासुर से कहा—"आप भाग्यवान् हैं, मैं आपको देखने के लिए आया हूँ ।७

सुदुर्लभा[3] नीतिरेषा दैत्यानान्दैत्यसत्तम ।
त्रिलोके धार्मिको नूनं त्वादृशोऽन्यो न विद्यते ॥८

हे दैत्यश्रेष्ठ ! दैत्यों की यह नीति अत्यन्त दुर्लभ है । आपके समान धार्मिक निश्चित ही तीनों लोक में दूसरा कोई नहीं है ।८

इत्युक्तोऽसुरराजोऽसौ[4] पुनः प्राह महामुनिम् ।
धर्माणां परमं धर्मं ब्रूहि मे ब्रह्मवित्तम ॥९

यह कहे जाने पर उस असुरराज ने पुनः महामुनि से कहा—'हे ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ ! धर्मों में जो परम धर्म है, वह बताइए ।९

सोऽब्रवीद्भगवान्योगी दैत्येन्द्राय महात्मने[5] ।
सर्वगुह्यतमं धर्ममात्मज्ञानमनुत्तमम् ॥१०

उन भगवान् योगी ने महात्मा दैत्यराज से कहा—'सबसे गुह्यतम और श्रेष्ठ धर्म है आत्मज्ञान' ।१०

स लब्ध्वा परमं ज्ञानं दत्त्वा च गुरुदक्षिणाम् ।
निधाय[6] पुत्रे तद्राज्यं योगाभ्यासरतोऽभवत् ॥११

---

१. पुरातन इति, पुरान्तरमिति पा० । पुरोत्तमं-पुरेषु उत्तमं सर्वोत्कृष्टं पुरमित्यर्थः । २. भगवान् यतात्मा इति पा० । ३. दुर्लभान्यतरेषाञ्च इति पा० । ४. राजस्तु इति पा० । ५. महामुनिः । ६. नियम्य इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब दैत्यराज परम ज्ञान प्राप्त करके, गुरुदक्षिणा देकर और पुत्र को राज्य सौंपकर योगाभ्यास में निरत हो गया ।११

स तस्य पुत्रो मतिमान्[1] बलिर्नाम महासुरः ।
ब्रह्मण्यो धार्मिकोऽत्यर्थं विजिग्येऽथ पुरन्दरम् ॥१२

उसका पुत्र था बुद्धिमान् महासुर बलि । वह ब्राह्मणभक्त, अत्यन्त धार्मिक और इन्द्र-विजेता था ।१२

कृत्वा तेन महद्युद्धं शक्रः सर्वामरैर्वृतः ।
जगाम निर्जितो विष्णुन्देवं शरणमच्युतम् ॥१३

उसके साथ महान् युद्ध करके सभी देवताओं समेत पराजित इन्द्र विष्णुदेव की शरण में गये ।१३

तदन्तरेऽदितिर्देवी देवमाता सुदुःखिता ।
दैत्येन्द्राणां वधार्थाय पुत्रो मे स्यादिति स्वयम् ॥१४

इस बीच देवमाता अदिति ने अत्यन्त दुःखी होकर दैत्येन्द्रों के वध के निमित्त 'मुझे एक पुत्र हो' ऐसी कामना की ।१४

तताप सुमहाघोरं[2] तपोराशिं ततः परम् ।
प्रपन्ना विष्णुमव्यक्तं शरण्यं शरणं हरिम्[3] ॥१५

ततः पर वे स्वयं अत्यन्त महाघोर तप करने में लग गयीं और अव्यक्त, शरण देने वाले और रक्षक विष्णु की शरणागत हुईं ।१५

कृत्वा हृत्पद्मकिञ्जल्के[4] निष्कलं परमम्पदम् ।
वासुदेवमनाद्यंतमानन्दं व्योम केवलम् ॥१६

उन्होंने अपने हृदयकल के केसरों के मध्य निष्कल, परम पद वासुदेव, आदि-अन्तरहित, आनन्दस्वरूप, व्योममय और अद्वितीय भगवान् का ध्यान किया ।१६

प्रसन्नो भगवान्विष्णुः शङ्खचक्रगदाधरः ।
आविर्बभूव योगात्मा देवमातुः पुरो हरिः ॥१७

शंख-चक्र-गदा-धारी, योगात्मा, भगवान् विष्णु देवमाता के सामने प्रकट हो गये ।१७

---

१. भगवानिति पा० । २. सुमहद्घोरमिति पा० । ३. शिवमिति पा० । ४. किञ्जल्कमध्ये तु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्ट्वा समागतं विष्णुमदितिर्भक्तिसंयुता ।
मेने कृतार्थमात्मानं तेषयामास केशवम् ॥१८

आये हुए विष्णु को देखकर भक्तियुक्त अदिति ने अपने को कृतार्थ माना और केशव को सन्तुष्ट किया ।१८

अदितिरुवाच

जयाशेषदुःखौघनाशैकहेतो जयानन्तमाहात्म्योगाभियुक्त ।
जयानादिमध्यान्तविज्ञानमूर्त्ते जयाकाशकल्पामलानन्दरूप[1] ॥१९

अदिति बोलीं--हे अशेष दुःख समूह के नाश के एकमात्र कारण ! आपकी जय हो । हे अनन्त माहात्म्य ! हे योगाभियुक्त ! आपकी जय हो । हे आदि, मध्य और अन्त से रहित ! हे विज्ञानमूर्ते ! आपकी जय हो । हे आकाशतुल्य ! हे आनन्दस्वरूप ! आपकी जय हो ।१९

नमो विष्णवे कालरूपाय तुभ्यं नमो नारसिंहाय शेषाय तुभ्यम् ।
नमः कालरुद्राय संहारकर्त्रे नमो वासुदेवाय तुभ्यं नमस्ते ॥२०

विष्णु और कालरूप आपको नमस्कार है। नारसिंह और शेष रूप आपको नमस्कार है । कालरुद्र और संहारकर्ता को नमस्कार है । हे वासुदेव ! आपको नमस्कार है ।२०

नमो विश्वमायाविधानाय तुभ्यं नमो योगगम्याय सत्याय तुभ्यम् ।
नमोऽधर्मविज्ञाननिष्ठाय तुभ्यं नमस्ते वराहाय भूयो नमस्ते ॥२१

हे विश्वमायाविधानकारी ! आपको नमस्कार है। हे योगगम्य ! हे सत्य ! आपको नमस्कार है । हे धर्मज्ञाननिष्ठ ! आपको नमस्कार है । हे वराह ! आपको बार-बार नमस्कार है ।२१

नमस्ते सहस्रार्कचन्द्राभमूर्त्ते नमो वेदविज्ञानधर्माभिगम्य[2] ।
नमो[3] भूधरायाप्रमेयाय तुभ्यं प्रभो विश्वयोनेऽथ भूयो नमस्ते ॥२२

हे सहस्र सूर्य और सहस्र चन्द्रमा के समान दीप्त मूर्ति वाले ! आपको नमस्कार है । हे वेद, विज्ञान और धर्म द्वारा प्राप्य ! आपको नमस्कार है । भूधर और अप्रमेय ! आपको नमस्कार है । प्रभो ! विश्वयोने ! आपको बार-बार नमस्कार है ।२२

नमः शम्भवे सत्यनिष्ठाय तुभ्यं नमो हेतवे विश्वरूपाय तुभ्यम् ।
नमो योगपीठान्तरस्थाय तुभ्यं शिवायैकरूपाय भूयो नमस्ते ॥२३

---

१. जयाशेषकल्पामलानन्तरूप । २. वेदविज्ञानाय धर्माभिगम्य इति पा० । ३. नमो देवदेवादिदेवाय तुभ्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शंभु तथा सत्यनिष्ठ आपको नमस्कार है। विश्व के कारण और विश्वरूप आपको नमस्कार है। योगपीठान्तस्थ आपको नमस्कार है। अद्वितीयरूपी शिव को बार-बार नमस्कार है।२३

एवं स भगवान् विष्णुर्देवमात्रा[1] जगन्मयः।
तोषितश्छंदयामास वरेण प्रहसन्निव ॥२४

देवमाता द्वारा इस प्रकार सन्तुष्ट किये गये भगवान् विष्णु ने हँसते हुए, उनसे वर माँगने के लिए अनुरोध किया।२४

प्रणम्य शिरसा भूमौ सा वव्रे वरमुत्तमम्।
त्वामेव पुत्रं देवानां हिताय वरये वरम् ॥२५

उन्होंने भूमि पर माथा टेककर प्रणाम किया और उत्तम वर माँगा—'मैं देवताओं के कल्याण के लिए आप ही को पुत्ररूप में वर माँगती हूँ'।२५

तथास्त्वित्याह भगवान् प्रपन्नजनवत्सलः।
दत्त्वा वरानप्रमेयस्तत्रैवान्तरधीयत ॥२६

शरणागतवत्सल भगवान् ने कहा—'तथास्तु'। वर देकर अप्रमेय विष्णु वहीं अन्तर्हित हो गये।२६

ततो बहुतिथे काले भगवन्तं जनार्दनम्।
दधार गर्भं[2] देवानां माता नारायणं स्वयम् ॥२७

अनन्तर बहुत दिन बीत जाने पर देवमाता ने स्वयं नारायण भगवान् जनार्दन को गर्भ में धारण कर लिया।२७

समाविष्टे हृषीकेशे देवमातुरथोदरम्।
उत्पाता जज्ञिरे घोरा बलेर्वैरोचनेः पुरे ॥२८

तब देवमाता के उदर में हृषीकेश के प्रविष्ट हो जाने पर विरोचन-पुत्र बलि के नगर में घोर उत्पात होने लगे।२८

निरीक्ष्य सर्वानुत्पातान्दैत्येन्द्रो भयविह्वलः।
प्रह्लादमसुरं वृद्धं प्रणम्याह पितामहम् ॥२९

सभी उत्पातों को देखकर भयविह्वल दैत्यराज ने अपने वृद्ध पितामह असुर प्रह्लाद से कहा।२९

---

१. कृष्णो देवमात्रा इति पा०। २. गर्भे इति।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलिरुवाच

पितामह महाप्राज्ञ जायतेऽस्मिन्पुरान्तरे[1] ।
किमुत्पातो[2] भवेत्कार्यमस्माकं किंनिमित्तकः ॥३०

बलि बोले—पितामह ! महाविद्वान् ! हमारे इस नगर के भीतर किस कारण उत्पात हो रहा है ? हमें क्या करना चाहिए ? ।३०

निशम्य तस्य वचनञ्चिरं ध्यात्वा महासुरः ।
नमस्कृत्य हृषीकेशमिदं वचनमब्रवीत् ॥३१

बलि की बात सुनकर बहुत देर तक ध्यान करके महासुर (प्रह्लाद) ने भगवान् को प्रणाम करके यह वचन कहा ।३१

प्रह्लाद उवाच

यो यज्ञैरिज्यते विष्णुर्यस्य सर्वमिदं जगत् ।
दधारासुरनाशार्थं माता तं त्रिदिवौकसाम् ॥३२

प्रह्लाद बोले—जिन विष्णु की यज्ञों द्वारा आराधना की जाती है, जिनके वश में यह सम्पूर्ण जगत् है; उनको देवमाता ने असुरों के विनाश के लिए धारण कर लिया है ।३२

यस्मादभिन्नं सकलं भिद्यते योऽखिलादपि ।
स वासुदेवो देवानां मातुर्देहं समाविशत् ॥३३

जिनसे सब अभिन्न है और जो सबसे भिन्न है, वे वासुदेव देवमाता के शरीर में प्रविष्ट हुए हैं ।३३

न यस्य देवा जानन्ति स्वरूपं परमार्थतः ।
स विष्णुरदितेर्देहं स्वेच्छयाद्य समाविशत् ॥३४

देवगण जिनके स्वरूप को परमार्थतः नहीं जानते हैं, वे विष्णु आज स्वेच्छा देवमाता के शरीर में प्रविष्ट हैं ।३४

यस्माद्भवन्ति भूतानि यत्र संयान्ति संक्षयम् ।
सोऽवतीर्णो महायोगी पुराणपुरुषो हरिः ॥३५

जिनसे प्राणी उत्पन्न होते हैं और जिनमें विलीन होते हैं, वे महायोगी, पुराण-पुरुष हरि अवतीर्ण होंगे ।३५

---

१. जायन्देऽस्मत्पुरेऽधुना इति पा० । २. किमुत्पातैर्भवेत्कार्यमस्माकं किंनिमित्तकैरिति, किमुत्पाता भवेत्कार्यमस्माकं किंनिमित्तका इति पा० ।

 CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न यत्र विद्यते नामजात्यादिपरिकल्पना ।
सत्तामात्रात्मरूपोऽसौ विष्णुरंशेन[1] जायते ॥३६

जिनमें नाम, जाति आदि की परिकल्पना नहीं होती है वे सत्तामात्र आत्मरूपी विष्णु अंश से उत्पन्न होते हैं ।३६

यस्य सा[2] जगतां माता शक्तिस्तद्धर्मधारिणी[3] ।
माया भगवती लक्ष्मीः सोऽवतीर्णो जनार्दनः ॥३७

संसार की माता भगवती लक्ष्मी जिनकी माया या धर्मधारिणी शक्ति है, वे जनार्दन अवतीर्ण होंगे ।३७

यस्य सा तामसी मूर्त्तिः शंकरो राजसी तनुः ।
ब्रह्मा सञ्जायते विष्णुरंशेनैकेन सत्त्वधृक्[4] ॥३८

जिनकी वह तामसी मूर्ति शंकर और राजसी मूर्ति ब्रह्मा होते हैं, वे सत्त्वगुणधारी विष्णु एक अंश से जन्म ग्रहण करते हैं ।३८

इति सञ्चिन्त्य गोविन्दं भक्तिनम्रेण चेतसा ।
तमेव गच्छ शरणं ततो यास्यसि निर्वृतिम् ॥३९

भक्तिविनम्र चित्त से गोविन्द का इस प्रकार ध्यान करके उन्हीं की शरण में जाओ । इससे सुख प्राप्त करोगे ।३९

ततः प्रह्लादवचनाद्बलिर्वैरोचनिर्हरिम् ।
जगाम शरणं विश्वं पालयामास धर्मवित्[5] ॥४०

तदनन्तर प्रह्लाद के वचन से विरोचन-पुत्र बलि हरि की शरण में गये धर्मवेत्ता विश्व का पालन करने लगे ।४०

काले प्राप्ते महाविष्णुं देवानां हर्षवर्द्धनम् ।
असूत कश्यपाच्चैनं देवमातादितिः स्वयम् ॥४१

समय आने पर देवों के हर्ष बढ़ाने वाले महाविष्णु को स्वयं देवमाता अदिति ने कश्यप से उत्पन्न किया ।४१

चतुर्भुजं विशालाक्षं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम् ।
नीलमेघप्रतीकाशं भ्राजमानं श्रिया वृतम् ॥४२

(उत्पन्न बालक की) चार भुजायें थीं । नेत्र विशाल थे । वक्षःस्थल पर श्रीवत्स-

---

१. विष्णुरूपेण जायते इति । २. साक्षाज्जगन्माता । ३. धर्मिणीति पा० । ४. सत्त्वतः, सत्त्वभृदिति च पा० । ५. धर्मतः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिह्न अंकित था। उनका वर्ण नीले मेघ के समान था। श्री से युक्त होकर वे सुशोभित हो रहे थे।४२

उपतस्थुः सुराः सर्वे सिद्धाः साध्याश्च चारणाः।
उपेन्द्र इन्द्रप्रमुखा ब्रह्मा चर्षिगणैर्वृतः ॥४३

तब ऋषिगणों से युक्त ब्रह्मा, उपेन्द्र, इन्द्र आदि सभी देवगण, सिद्ध, साध्य और चारणगण उनकी उपासना करने लगे।४३

कृतोपनयनो वेदानध्यैष्ट[1] भगवान् हरिः।
सदाचारं[2] भरद्वाजात्त्रिलोकाय[3] प्रदर्शयन् ॥४४

उपनयन संस्कार हो जाने के बाद तीनों लोक को दिखाने के लिए भगवान् हरि ने वेदों का अध्ययन तथा सदाचार की शिक्षा भरद्वाज मुनि से ग्रहण की।४४

एवञ्च[4] लौकिकं मार्गं प्रदर्शयति स प्रभुः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते ॥४५

प्रभु ने इस प्रकार लौकिक मार्ग का प्रदर्शन किया। वे जो करते हैं, लोग उसे प्रमाण मानकर अनुसरण करते हैं।४५

ततः कालेन मतिमान् बलिर्वैरोचनिः स्वयम्।
यज्ञैर्यज्ञेश्वरं विष्णुमर्च्चयामास सर्वगम् ॥४६

तदनन्तर समय आने पर बुद्धिमान् विरोचन-पुत्र बलि स्वयं यज्ञों द्वारा सर्वव्यापी विष्णु की अर्चना की।४६

ब्राह्मणान्पूजयामास दत्त्वा बहुतरं धनम्।
ब्रह्मर्षयः समाजग्मुर्यज्ञवाटं महात्मनः ॥४७

बहुत धन देकर ब्राह्मणों की पूजा की। महात्मा बलि के यज्ञ में ब्रह्मर्षिगण पधारे।४७

विज्ञाय विष्णुर्भगवान् भरद्वाजप्रचोदितः।
आस्थाय वामनं रूपं यज्ञदेशमथागमत् ॥४८

यह जानकर भरद्वाजजी के आदेश से विष्णु भगवान् वामन-रूप धारण करके यज्ञ भूमि में आये।४८

---

१. वेदानध्यगीष्टाव्ययो हरिः। २. समाचारमिति पा०। ३. त्रैलोक्याय प्रदर्शय। ४. एवं हि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णाजिनोपवीताङ्ग[1] आषाढेन विराजितः ।
ब्राह्मणो जटिलो वेदानुद्गिरन् सुमहाद्युतिः[2] ॥४९

उनके अंग कृष्णमृगचर्म तथा पलाशदण्ड से सुशोभित थे। ब्राह्मण वेष में वे जटाधारी, अत्यन्त कान्तिमान् होते हुए वेदोच्चारण कर रहे थे।४९

सम्प्राप्यासुरराजस्य समीपं भिक्षुको हरिः ।
स्वपद्भ्यां[3] क्रमितं देशमयाचत बलिं त्रिभिः ॥५०

भिक्षा करने के इच्छुक हरि असुरराज बलि के समीप जाकर अपने पैरों से तीन पग परिमित स्थान की याचना की।५०

प्रक्षाल्य चरणौ विष्णोर्बलिर्भावसमन्वितः ।
आचामयित्वा[4] भृङ्गारमादाय स्वर्णनिर्मितम् ॥५१

भक्ति समन्वित राजा बलि सोने की झारी लेकर विष्णु के चरणों को धोया और आचमन कराया।५१

दास्ये[5] तथेदं भवते पदत्रयं प्रीणातु देवो हरिरव्ययाकृतिः ।
विचिन्त्य देवस्य कराग्रपल्लवे निपातयामास सुशीलतज्जलम् ॥५२

मैं आपको तीन पग स्थान दूँगा। नाशरहित आकृति वाले भगवान् हरि प्रसन्न हों।' यह कह कर बलि ने वामन भगवान् के हस्ताग्रपल्लव पर सुशीतल जल गिराया।५२

विचक्रमे पृथिवीमेष चैतामथान्तरिक्षं दिवमादिदेवः ।
व्यपेतरागन्दितिजेश्वरन्तं प्रकर्तुकामः[6] शरणं प्रपन्नम् ॥५३

अनन्तर दैत्यराज को अपने प्रति क्षीणानुराग तथा शरणागत करने लिए आदि देव भगवान् ने पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक तक चंक्रमण किया।५३

आक्रम्य लोकत्रयमीशपादः प्राजापत्याद्ब्रह्मलोकं जगाम ।
प्रणेमुरादित्यमुखाः[7] सुरेन्द्रा ये तत्र लोके निवसन्ति सिद्धाः ॥५४

प्रभु का चरण तीनों लोक को आक्रान्त करके प्रजापतिलोक होते हुए ब्रह्मलोक तक पहुँच गया। उस लोक में जो सिद्धगण निवास करते हैं वे तथा सूर्य आदि देवश्रेष्ठ-गण उनको प्रणाम करने लगे।५४

---

१. कृष्णाजिनोत्तरीयाङ्ग इति पा०। २. भस्ममण्डित इति पा०। ३. स्वपदन्त-मितं। ४. आचमय्य इति साधु। ५ ददाम्यथेदम्भवते इति पा०। ६. प्रहर्तुकामः। ७. प्रणेमुरादित्यसहस्रकल्पमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथोपतस्थे भगवाननादिः पितामहस्तोषयामास विष्णुम् ।
भित्त्वा तदण्डस्य कपालमूर्ध्वं[1] जगाम दिव्याभरणोऽथ[2] भूयः ॥५५

पश्चात् अनादि भगवान् पितामह ने उपासनापूर्वक विष्णु को सन्तुष्ट किया । तो भी वह चरण ब्रह्माण्ड के कपाल का भेदन करके ऊपर चला गया, पुनः दिव्य आभरणों से युक्त हो गया ।५५

अथाण्डभेदान्निपपात शीतलं महाजलं[3] पुण्यकृद्भिश्च जुष्टम् ।
प्रवर्त्तिता[4] चापि सरिद्वरा[5] सा गंगेत्युक्त्वा ब्रह्मणा व्योमसंस्था ॥५६

अनन्तर अण्ड के भेदन से शीतल महाजल, जिसका सेवन पुण्यात्मा लोग करते हैं, गिरने लगा । वह जल श्रेष्ठ नदी के रूप में परिणत होकर आकाशमार्ग से बहने लगा, जिसका नाम ब्रह्मा ने गंगा रखा ।५६

गत्वा महान्तं प्रकृतिं ब्रह्मायोनिं[6] ब्रह्माणमेकं पुरुषं विश्वयोनिम् ।
अतिष्ठदीशस्य पदं तदव्ययं दृष्ट्वा देवास्तत्र तत्र स्तुवन्ति ॥५७

भगवान् का चरण विश्वयोनि, पुरुष नामक, ब्रह्मरूपी महदावरण एवं ब्रह्मयोनि प्रकृत्यावरण पर्यन्त जाकर अवस्थित हो गया । उन-उन स्थानों में स्थित देवगण प्रभु के उस अविनाशी पद का दर्शन करके स्तुति करते थे ।५७

आलोक्य तं पुरुषं विश्वकायं महान्[7] बलिर्भक्तियोगेन विष्णुम् ।
ननाम नारायणमेकमव्ययं स्वचेतसा यं प्रणमन्ति वेदाः ॥५८

जिन अद्वितीय एवं अविनाशी नारायण को (वेद-वेत्ता) अपना चित्त लगाकर (एकाग्रमन से) प्रणाम करते हैं, उन विश्वकाय पुरुष विष्णु को महान् बली ने भक्तियोग द्वारा देखकर प्रणाम किया ।५८

तमब्रवीद्भगवानादिकर्त्ता भूत्वा पुनर्वामनो वासुदेवः ।
ममैव दैत्याधिपतेऽधुनेदं लोकत्रयं भवता भावदत्तम्[8] ॥५९

भगवान् आदिकर्ता वासुदेव पुनः वामनरूप धारण करके उस (बलि) से कहा— दैत्यराज ! अभी आपने ही मुझे तीनों लोक भक्तिपूर्वक समर्पित किये हैं ।५९

प्रणम्य मूर्ध्ना पुनरेव दैत्यो निपातयामास जलं कराग्रे ।
दास्ये तवात्मानमनन्तधाम्ने त्रिविक्रमायामितविक्रमाय ॥६०

दैत्य ने शिर से उन्हें प्रणाम करके हाथ के अग्रभाग पर जल गिराया और कहा— 'त्रिविक्रम ! पराक्रमी ! अनन्त तेज वाले ! मैं आपको आत्मसमर्पण करूँगा ।६०

---

१. कपालमूर्ध्नि । २. देव्याभरणानीति पा० । ३. पुण्यं जलं । ४. प्रवर्त्तते इति पा० । ५. सरिद्वरा तदागङ्गेति नाम्ना ननु इति पा० । ६. प्रधानमिति पा० । ७. विश्वबीजमिति पा० । ८- बलिर्महान्तं भक्ति इति पा० । ९. यत्प्रदत्तम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगृह्य सूनोरपि सम्प्रदत्तं प्रह्लादसूनोरथ शङ्खपाणिः ।
जगाद दैत्यं जगदन्तरात्मा पातालमूलं प्रविशेति भूयः ॥६१

अनन्तर संसार के अन्तरात्मा शंखपाणि भगवान् ने प्रह्लाद के पुत्र के पुत्र (बलि) का दान ग्रहण करके दैत्य से कहा--तुम पाताल के मूल में प्रवेश करो ।६१

समास्यतां भवता तत्र नित्यं भुक्त्वा भोगान्देवतानामलभ्यान् ।
ध्यायस्व[1] मां सततं भक्तियोगात्प्रवेक्ष्यसे कल्पदाहे पुनर्माम् ॥६२

आप वहाँ नित्य देवदुर्लभ भोगों को भोगते हुए निवास करें । भक्तियोग से मेरा सतत ध्यान करना । कल्प के अवसान में तुम मुझमें प्रवेश करोगे ।६२

उक्त्वैवं दैत्यसिंहं[2] तं विष्णुः सत्यपराक्रमः ।
पुरन्दराय त्रैलोक्यं ददौ जिष्णुरुरुक्रमः ॥६३

सत्यपराक्रमी विजयशील तथा महान् पराक्रमी विष्णु ने उस दैत्यराज से ऐसा कहकर इन्द्र को तीनों लोक दे दिये ।६३

संस्तुवन्ति महायोगं सिद्धा देवर्षिकिन्नराः ।
ब्रह्मा शक्रोऽथ भगवान्रुद्रादित्यमरुद्गणाः ॥६४

सिद्ध, देवर्षि, किन्नर, ब्रह्मा, भगवान् इन्द्र, रुद्र, आदित्य और मरुद्गण महायोग की स्तुति करते हैं ।६४

कृत्वैतदद्भुतं कर्म विष्णुर्वामनरूपधृक् ।
पश्यतामेव सर्वेषां तत्रैवान्तरधीयत ॥६५

यह अद्भुत कर्म करके वामनरूपधारी विष्णु सबके देखते ही देखते वहीं अन्तर्हित हो गये ।६५

सोऽपि दैत्यवरः श्रीमान्पातालं प्राप नोदितः ।
प्रह्लादेनासुरवरैर्विष्णुभक्तस्तु[3] तत्परः ॥६६

प्रह्लाद की प्रेरणा से विष्णुभक्त और विष्णुपरायण श्रीमान् बलि दैत्य-श्रेष्ठों के साथ पाताल पहुँच गया ।६६

अपृच्छद्विष्णुमाहात्म्यं भक्तियोगमनुत्तमम् ।
पूजाविधानं प्रह्लादं तदाहासौ[4] चकार सः ॥६७

---

१. ध्यायस्वेति आर्षमात्मनेपदम् । २. सिंहन्तु विष्णुरिति, सिंहं तं जिष्णुरिति च पा० । ३. भक्तैकतत्परः इति पा० । ४. सचाहासौ ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बलि ने प्रह्लाद से विष्णुमाहात्म्य, सर्वोतम भक्तियोग और पूजा का विधान पूछा। उन्होंने जो बताया; उसको बलि ने किया।६७

अथ रथचरणं[1] सशङ्खपाणिं सरसिजलोचनमीशमप्रमेयम् ।
शरणमुपययौ स भावयोगात्प्रणयगतिं प्रणिधाय कर्मयोगम् ॥६८

अनन्तर राजा बलि प्रणयगति, कर्मयोग, प्रणिधान करके भक्तियोग से शंख-चक्र-गदा-पद्म युक्त पाणि वाले, कमललोचन, अप्रमेय, प्रभु विष्णु की शरण में गये।६८

एष वः कथितो विप्रा वामनस्य पराक्रमः ।
स देवकार्याणि सदा करोति पुरुषोत्तमः ॥६९

विप्रगण! यह मैं वामन भगवान् का पराक्रम आप लोगों को बता दिया। वे पुरुषोत्तम सदा देवकार्य करते हैं।६९

इति श्रीकूर्मपुराणे त्रिविक्रमचरितवर्णनं नाम +सप्तदशोऽध्यायः ॥१७

श्रीकूर्मपुराण में त्रिविक्रमचरित्रवर्णन नामक सत्रहवाँ अध्याय समाप्त।१७।

●

अष्टादशोऽध्यायः

अथ वंशानुकीर्तनम्

सूत[2] उवाच

बलेः पुत्रशतं त्वासीन्महाबलपराक्रमम् ।
तेषां प्रधानो द्युतिमान्बाणो[3] नाम महाबलः[4] ॥१

सूत बोले—राजा बलि के सौ पुत्र थे, जो महान् बल-पराक्रमी थे। उनमें महाबली द्युतिमान् बाण प्रधान था।१

सोऽतीव शङ्करे भक्तो राजा राज्यमपालयत् ।
त्रैलोक्यं वशमानीय[5] बाधयामास वासवम् ॥२

शंकर का अत्यन्त भक्त बाण राजा राज्यपालन काल में तीनों लोक को वश में करके इन्द्र को पीडित करने लगा।२

---

१. रथचरणाञ्जशंखपाणिमिति पा०। + षोडशोऽध्यायः लिं पु०। २. श्रीकूर्म उवाच। ३. महाबलपराक्रम इति पा०। ४. महासुर इति पा०। ५. वशमानिन्ये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः शक्रादयो देवा गत्वोचुः कृत्तिवाससम् ।
त्वदीयो बाधते ह्यस्मान्बाणो नाम महासुरः ॥३

तब इन्द्र आदि देवों ने शंकर के पास जाकर कहा—"आपका भक्त बाण नामक महासुर हमें पीडा दे रहा है' ।३

व्याहृतो दैवतैः सर्वैर्देवदेवो महेश्वरः ।
ददाह बाणस्य पुरं शरेणैकेन लीलया ॥४

सभी देवताओं के निवेदन करने पर देवों के देव महेश्वर ने एक ही शर से लीलापूर्वक बाण के नगर को जला डाला ।४

दह्यमाने पुरे तस्मिन्बाणो रुद्रं त्रिशूलिनम् ।
ययौ शरणमीशानञ्जोपंति नीललोहितम् ॥५

नगर को जलते हुए देखकर बाण राजा वृषभपति, नीललोहित, ईशान, त्रिशूलधारी, रुद्र की शरण में गया ।५

मूर्ध्न्याधाय तल्लिङ्गं शाम्भवं रागवर्ज्जितः[1] ।
निर्गत्य तु पुरात्तस्मात्तुष्टाव परमेश्वरम् ॥६

रागरहित होकर वह एक शिवलिंग को मस्तक पर रखकर उस नगर से निकल कर परमेश्वर की स्तुति करने लगा ।६

संस्तुतो भगवानीशः शङ्करो नीललोहितः ।
गाणपत्येन बाणं तं योजयामास भावतः ॥७

स्तुति किये जाने पर भगवान् प्रभु, शंकर, नीललोहित ने बाण को स्नेह से अपने गाणपत्य पद पर नियुक्त कर दिया ।७

अथैवञ्च[2] दनोः पुत्रास्ताराद्याश्चातिभीषणाः[3] ।
तारस्तथा शम्बरश्च कपिलः शंकरस्तथा[4] ।
स्वर्भानुर्वृषपर्वा च प्राधान्येन प्रकीर्तिताः[5] ॥८

इस प्रकार दनु के पुत्र तार आदि अत्यन्त भीषण हुए, जिनमें तार, शम्बर, कपिल, शंकर, स्वर्भानु और वृषपर्वा प्रधान थे ।८

सुरसायाः सहस्रन्तु सर्पाणामभवद्द्विजाः ।
अनेकशिरसां तद्वत्खेचराणां महात्मनाम् ॥९

---

१. नीतिवर्णितम्, भीतिवर्जित इति पा० । २. अथाभवन्निति पा० । ३. ताराद्यास्तु विभीषणा इति पा० । ४. सञ्चरस्तथा इति पा० । ५. प्रतिष्ठिता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्विजगण ! सुरसा के गर्भ से हजारों सर्प तथा अनेक शिर वाले महात्मा खेचर उत्पन्न हुए ।९

अरिष्टा जनयामास गन्धर्वाणां सहस्रकम् ।
अनन्ताद्या महानागाः काद्रवेयाः प्रकीर्त्तिताः ॥१०

अरिष्टा ने सहस्र गन्धर्वों को उत्पन्न किया । अनन्त आदि महानाग कद्रू के पुत्र कहलाये १०

ताम्रा च जनमायास षट् कन्या द्विजपुंगवाः ।
शुकीं श्येनीञ्च भासीञ्च सुग्रीवां[1] ग्रन्थिकां शुचिम् ॥११

द्विजश्रेष्ठो ! ताम्रा ने शुकी, श्येनी, भासी, सुग्रीवा, ग्रन्थिका और शुचि नामक छह कन्याओं को उत्पन्न किया ।११

गास्तथा जनयामास सुरभिर्महिषीस्तथा ।
इरा[2] वृक्षलतावल्लीतृणजातीश्च सर्वशः ॥१२

सुरभि ने गौओं तथा भैंसों को जन्म दिया और इरा से वृक्ष, लता, वल्ली तथा तृणजातियों की उत्पत्ति हुई ।१२

तथा[3] वै यक्षरक्षांसि मुनिरप्सरसस्तथा ।
रक्षोगणं क्रोधवशाज्जनयामास सत्तमाः[4] ॥१३

हे सत्तम मुनिगण ! मुनि ने यक्षों, राक्षसों, अप्सराओं तथा रक्षोगण को क्रोध से उत्पन्न किया ।१३

विनतायाश्च पुत्रौ द्वौ प्रख्यातौ गरुडारुणौ ।
तयोश्च[5] गरुडो धीमान्तपस्तप्त्वा सुदुश्चरम् ।
प्रसादाच्छूलिनः प्राप्तो वाहनत्वं हरेः स्वयम् ॥१४

विनता के दो पुत्र प्रख्यात हुए—गरुड और अरुण । उनमें बुद्धिमान् गरुड ने कठिन तप करके शंकर की कृपा से स्वयं विष्णु का वाहनत्व प्राप्त किया ।१४

आराध्य तपसा देवं[6] महादेवं तथारुणः ।
सारथ्ये कल्पितः पूर्वं प्रीतेनार्कस्य शम्भुना ॥१५

तथा अरुण तपस्या द्वारा महादेव की आराधना करके प्रसन्न शंकर के द्वारा सूर्य के सारथि बनाये गये ।१५

---

१. सुग्रीवीं च वकीमिति पा० । २. तारा इति पा० । ३. निकषा इति पा० । ४. सत्तमम् । ५. तयोस्तु इति पा० । ६. रुद्रमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैवस्वतेऽन्तरे ह्यस्मिञ्छृण्वतां पापनाशनम्[1] । १६

इस वैवस्वत मन्वन्तर में कश्यप के दायाद—इन सब स्थावर-जंगमों का विवरण बता दिया, जो सुनने वालों के पाप का नाशक है।१६

सप्तविंशसुताः प्रोक्ताः सोमपत्न्याश्च सुव्रताः ।
अरिष्टनेमिपत्नीनामपत्यानां[2] ह्यनेकशः ॥१७

हे सुव्रती मुनिगण ! चन्द्र-पत्नियों के सत्ताईस पुत्र हुए और अरिष्टनेमि की पत्नियों की अनेक सन्तानें हुईं।१७

बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्रो विद्युतः स्मृताः[3] ।
तद्वदंगिरसः श्रेष्ठा[4] ऋषयो[5] वृषसत्कृताः ॥१८

विद्वान् बहुपुत्र की चार विद्युत् नाम की पुत्रियाँ हुईं। उसी तरह अंगिरा के वृषसत्कृत नामक श्रेष्ठ ऋषिगण पुत्र हुए।१८

कृशाश्वस्य तु देवर्षेर्देवः[6] प्रहरणः सुतः ।
एते युगसहस्रान्ते जायन्ते पुनरेव हि ।
मन्वन्तरेषु नियतन्तुल्यकार्य्यैः स्वनामभिः ॥१९

देवर्षि कृशाश्व के प्रहरणदेव नामक एक पुत्र हुआ। ये सब हजारों युग के अन्त में मन्वन्तरकाल में तुल्य कार्यों के अनुसार अपने नामधारणपूर्वक नियत जन्म ग्रहण करते हैं।१९

इति श्रीकूर्म्मपुराणे वंशानुकीर्त्तनं नामाऽष्टादशोऽध्यायः[7] ॥१८

श्रीकूर्मपुराण में वंशानुकीर्तन नामक अठारहवाँ अध्याय समाप्त ॥१८॥

---

१. पापनाशनाः। २. मपत्यानीह षोडश इति पा०। ३. सुता इति पा०। ४. पुत्रा इति पा०। ५. विश्रुताऋषिसत्तमाः, ब्रह्मसत्कृता इति च पा०। ६. देवप्रहरणाः सुता इति पा०। ७. सप्तदशोऽध्यायः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकोनविंशोऽध्यायः

अथ ऋषिवंशकथनम्

सूत उवाच[1]

एतानुत्पाद्य पुत्रांस्तु प्रजासन्तानकारणात् ।
कश्यपः पुत्रकामस्तु[2] चचार सुमहत्तपः ॥१

सूत बोले---कश्यप मुनि प्रजा विस्तार के लिए इन पुत्रों को उत्पन्न करके और पुत्र लाभ के लिए महान् तप करने में लग गये ।१

तस्यैवन्तपतोऽत्यर्थं प्रादुर्भूतौ सुताविमौ ।
वत्सरश्चासितश्चैव[3] तावुभौ ब्रह्मवादिनौ ।२

इस प्रकार अत्यन्त तप करते हुए उनके ये दो पुत्र हुए---वत्सर और असित । ये दोनों ब्रह्मवादी थे ।२

वत्सरान्नैध्रुवो[4] जज्ञे रैभ्यश्च[5] सुमहायशाः ।
रैभ्यस्य[6] जज्ञिरे शूद्राः[7] पुत्राः श्रुतिमतां वराः ॥३

वत्सर से नैध्रुव और अत्यन्त महायशस्वी रैभ्य उत्पन्न हुए । रैभ्य के वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ शूद्र नामक पुत्र हुए ।३

च्यवनस्य सुता भार्या[8] नध्रुवस्य महात्मनः ।
सुमेधा जनयामास पुत्रान्वै कुण्डपायिनः[9] ॥४

च्यवन की पुत्री महात्मा नध्रुव की पत्नी सुमेधा ने कुण्डपायी (ज्ञाज्ञिक) पुत्रों को जन्म दिया ।४

असितस्यैकपर्णायां[10] ब्रह्मिष्ठः समपद्यत ।
नाम्ना वै देवलः पुत्रो योगाचार्यो महातपाः ॥५

असित की एकपर्णा नामक पत्नी में योगाचार्य, महान् तपस्वी तथा ब्रह्मिष्ठ देवल नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।५

---

१. कूर्म उवाच । २. गोत्रकामस्तु । ३. वत्सरस्तामसश्चैव इति पा० । ४. वत्सराद्वै ध्रुव इति पा० । ५. वैद्यश्च इति पा० । ६. वैद्यस्य इति पा० ७. वैद्या इति पा० । ८. पत्नीतिपा० । ९. याज्ञिन इति पा० । १०. वर्णायामिति पा०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाण्डिल्यः[1] परमः श्रीमान् सर्वतत्त्वार्थविच्छुचिः[2] ।
प्रसादात्पार्वतीशस्य योगमुत्तमवाप्तवान्[3] ॥६

दूसरा पुत्र शाण्डिल्य परम श्रीमान्, सर्वतत्त्वार्थवेत्ता, पवित्र और पार्वतीपति की कृपा से उत्तम योगवेत्ता हुआ ।६

शाण्डिल्यो नैध्रुवो रैभ्यः[4] त्रयः पुत्रास्तु काश्यपाः ।
नरप्रकृतयो[5] विप्राः पुलस्त्यस्य वदामि वः ॥७

शाण्डिल्य, नैध्रुव और रैभ्य—ये तीन पुत्र कश्यपक्षीय थे। अब पुलस्त्यपक्षीय नरप्रकृतिक विप्रों का विवरण मैं आप लोगों को बता रहा हूँ ।७

तृणबिन्दोः सुता विप्रा नाम्ना ऐलविलाः स्मृताः ।
पुलस्त्याय तु राजर्षिस्तां कन्यां प्रत्यपादयत् ॥८

विप्रगण ! तृणबिन्दु की पुत्री ऐलविला नाम से कही गई है। राजर्षि (तृणबिन्दु) ने वह पुत्री पुलस्त्य मुनि को प्रदान की ।८

ऋषिस्त्वैलविलस्तस्यां विश्रवाः समपद्यत ।
तस्य पत्न्यश्चतस्रस्तु पौलस्त्यकुलवर्द्धिकाः ॥९

पुष्पोत्कटा च वाका[6] च कैकसी[7] देववर्णिनी[8] ।
रूपलावण्यसम्पन्नास्तासांश्च शृणुत प्रजाः ॥१०

उससे ऋषि ऐलविल तथा विश्रवा उत्पन्न हुए। विश्रवा की पुष्पोत्कटा, वाका, कैकसी और देववर्णिनी नामक चार पत्नियाँ थीं जो रूप-लावण्य से सम्पन्न तथा पौलस्त्य-कुलवर्धिका थीं। उनकी सन्तानों का विवरण सुनिए ।९-१०।

ज्येष्ठं वैश्रवणं तस्य सुषुवे देववर्णिनी ।
कैकस्यजनयत्पुत्रं[9] रावणं राक्षसाधिपम् ॥११

देववर्णिनी ने वैश्रवण नामक ज्येष्ठ पुत्र को उत्पन्न किया। कैकसी ने राक्षसपति रावण को जन्म दिया ।११

कुम्भकर्णं शूर्पणखान्तथैव च विभीषणम् ।
पुष्पोत्कटाप्यजनयत्पुत्रान्विश्रवसः शुभान्[10] ॥१२

---

१. शाण्डिल्यानां पर इति पा०। २. वित्सुधीः इति पा०। ३. योगमुत्तममासवानिति पा०। ४. वैद्य इति पा०। ५. नवप्रकृतय इति पा०। ६. वाक्या इति पा०। ७. निकषा इति रामायणेऽभिधीयते। ८. वेदरूपिणीति पा०। ९. निकषाजनयत्। १०. सुतानीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी के गर्भ से कुम्भकर्ण और विभीषण नामक और दो पुत्रों तथा शूर्पणखा नाम की एक पुत्री का जन्म हुआ। पुष्पोत्कटा ने भी विश्रवा मुनि से शुभ पुत्रों को उत्पन्न किया।१२

महोदरं प्रहस्तञ्च महापार्श्वं खरन्तथा।
कुम्भीनसीन्तथा कन्यां वाका याः सृजते[1] प्रजाः ॥१३

उनके नाम हैं—महोदर, प्रहस्त, महापार्श्व तथा खर। कुम्भीनसी नामक एक कन्या भी उससे हुई। वाका ने जो सन्तानें उत्पन्न कीं, उनके नाम ये हैं—।१३

त्रिशिरा दूषणश्चैव विद्युज्जिह्वो महाबलः।
इत्येते क्रूरकर्माणः पौलस्त्या राक्षसा दश।
सर्वे तपोबलोत्कृष्टा रुद्रभक्ताः सुभीषणाः ॥१४

त्रिशिरा, दूषण और महाबली विद्युज्जिह्व। पुलस्त्यवंशी ये दसों राक्षस बड़े क्रूरकर्मा हुए। ये अत्यन्त भयंकर, रुद्रभक्त एवं उत्कृष्ट तपोबल से सम्पन्न थे।१४

पुलहस्य[2] मृगाः पुत्राः सर्वे व्याला दंष्ट्रिणः।
भूताः पिशाचा ऋक्षाश्च[3] शूकरा हस्तिनस्तथा ॥१५

मृग, सर्प, दंष्ट्री, भूत, पिशाच, ऋक्ष, शूकर तथा हस्ती—ये सब पुलह मुनि के पुत्र हुए।१५

अनपत्यः क्रतुस्तस्मिन् स्मृतो[4] वैवस्वतेऽन्तरे।
मरीचेः कश्यपः पुत्रः स्वयमेव प्रजापतिः ॥१६

वैवस्वत मनु के अधिकारकाल में क्रतु सन्तानहीन थे। स्वयं प्रजापति कश्यप मरीचि के पुत्र थे।१६

भृगोरथाभवच्छुक्रो[5] दैत्याचार्यो महातपाः।
स्वाध्याययोगनिरतो[6] हरभक्तो महाद्युतिः ॥१७

स्वाध्याय और योग में निरत, शिवभक्त, महाकान्तिमान्, महातपस्वी, दैत्याचार्य शुक्र भृगु के पुत्र हुए।१७

अत्रेः पुत्रोऽभवद्वह्निः सोदर्यस्तस्य[7] नैध्रुवः।
कृशाश्वस्य तु विप्रर्षेः[8] घृताच्यामिति नः श्रुतम् ॥१८

---

१. शृणुत इति पा०। २. पुलस्त्यस्य इति पा०। ३. सर्पाश्च इति, रक्षाश्च इति पा०। ४. कृते। ५. भृगोरप्यभवच्छुक्र इति पा०। ६. योगसंयुक्तो। ७. सोदर्यस्ताः पतिव्रताः इति। पा०। ८. विप्रेन्द्रा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्रि के पुत्र वह्नि और उनका सहोदर नैध्रुव हुआ। विप्रर्षि कृशाश्व का जन्म घृताची से हुआ था, ऐसा हमने सुना है।१८

स तस्याञ्जनयामास[1] स्वस्त्यात्रेयान्महौजसः।
वेदवेदाङ्गनिरतान्तपसा हतकिल्बिषान् ॥१९

अत्रि मुनि ने घृताची से वेदवेदांगनिष्णात, तपस्या से निष्पाप और महातेजस्वी स्वस्त्यात्रेय-आदि को उत्पन्न किया।१९

नारदस्तु वसिष्ठाय ददौ देवीमरुन्धतीम्।
ऊर्ध्व[2] रेतास्तु तत्रैव शापाद्दक्षस्य नारदः ॥२०

नारद ने वसिष्ठ को अरुन्धती देवी दी। वहीं दक्ष के शाप से नारद ऊर्ध्वरेता हो गये थे।२०

हर्यश्वेषु तु नष्टेषु मायया नारदस्य तु[3]।
शशाप नारदं दक्षः क्रोधसंरक्तलोचनः ॥२१

नारद की माया से (दक्ष-पुत्र) हर्यश्वों के विनष्ट हो जाने पर दक्ष ने क्रोध से आँखें लाल कर नारद को शाप दे दिया—।२१

यस्मान्मम सुताः सर्वे भवता मायया द्विज।
क्षयन्नीतास्त्वशेषेण निरपत्यो भविष्यसि ॥२२

द्विज! जिसलिए तूने माया द्वारा मेरे सभी पुत्रों को निःशेष रूप से नष्ट कर दिया, अतः तू सन्तानहीन होगा।२२

अरुन्धत्यां वसिष्ठस्तु शक्तिमुत्पादयत्सुतम्[4]।
शक्तेः पराशरः श्रीमान् सर्वज्ञस्तपतां वरः ॥२३

वसिष्ठ ने अरुन्धती से शक्ति नामक पुत्र को उत्पन्न किया। शक्ति से श्रीमान् सर्वज्ञ और तपस्वियों में श्रेष्ठ पराशर मुनि उत्पन्न हुए।२३

आराध्य देवदेवेशमीशानन्त्रिपुरान्तकम्।
लेभे त्वप्रतिमं[5] पुत्रं कृष्णद्वैपायनं प्रभुम् ॥२४

पराशर ने देवदेवेश्वर त्रिपुरान्तक शंकर की आराधना करके अनुपम पुत्र कृष्ण-द्वैपायन प्रभु को प्राप्त किया।२४

---

१. स तासु जनयामास इति पा०। २. ऊर्ध्वरेतास्तत्र मुनिरिति पा०। ३. च इति। ४. शक्तिं ह्यजनयत् इति पा०। ५. सत्यप्रतिमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वैपायनाच्छुको जज्ञे भगवानेव शंकरः ।
अंशांशेनावतीर्योर्व्यां स्वं प्राप परमं पदम् ॥२५

द्वैपायन से भगवान् शंकर ही शुक्र के रूप में उत्पन्न हुए। वे अपने अंशों के अंश से पृथ्वी पर अवतार लेकर अन्त में अपने परम पद को चले गये ।२५

शुकस्यास्याभवन् पुत्राः पञ्चात्यन्ततपस्विनः ।
भूरिश्रवाः प्रभुः शम्भुः कृष्णो गौरश्च पञ्चमः ॥२६

शुक्र के अत्यन्त तपस्वी पाँच पुत्र हुए—भूरिश्रवा, प्रभु, शम्भु, कृष्ण और पञ्चम गौर ।२६

कन्या कीर्त्तिमती चैव योगमाता धृतव्रता ।
एतेऽत्रिवंशाः कथिता ब्रह्मणा ब्रह्मवादिनाम् ॥२७

उनकी कन्यायें तीन थीं—कीर्तिमती, योगमाता और धृतव्रता। ब्रह्मवादियों के समक्ष ब्रह्मा के द्वारा ये सब अत्रिवंशीय बताये गये हैं ।२७

अत ऊर्ध्वं निबोधध्वं कश्यपाद्राजसन्ततिम् ।

इसके बाद कश्यप से उत्पन्न क्षत्रिय सन्तानों की उत्पत्ति का विवरण सुनिए ।२८

इति श्रीकूर्मपुराणे ऋषिवंशवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥१९

श्रीकूर्मपुराण में ऋषिवंशवर्णन नामक उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त ॥१९॥

●

विंशोऽध्यायः

अथ राजवंशकीर्तनम्

सूत उवाच

अदितिः सुषुवे पुत्रमादित्यं कश्यपात्प्रभुम् ।
तस्यादित्यस्य चैवासीद्भार्याणां तु चतुष्टयम् ॥१

सूत बोले—अदिति ने कश्यप से प्रभु आदित्य को उत्पन्न किया। उन आदित्य की चार पत्नियां थीं ।१

संज्ञा राज्ञी[1] प्रभा छाया पुत्रांस्तासान्निबोधत ।
संज्ञा त्वाष्ट्री[2] तु सुषुवे सूर्यान्मनुमनुत्तमम् ॥२

१. त्वष्ट्री-त्वष्टुः विश्वकर्मणः अपत्यं स्त्री ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(उनके नाम हैं)—संज्ञा, राज्ञी, प्रभा और छाया। उनके पुत्रों के नाम सुनिए। त्वष्टा की पुत्री संज्ञाने सूर्य से सर्वोत्तम मनु (वैवस्वत) को प्रसूत किया।२

यमञ्च यमुनाञ्चैव राज्ञी रेवंतमेव च।
प्रभा प्रभातमादित्या छाया सावर्णिमात्मजम्[2] ॥३
शनिञ्च[3] तपतीञ्चैव विष्टिञ्चैव यथाक्रमम्।
मनोस्तु प्रथमस्यासन्नव पुत्रास्तु तत्समाः ॥४

राज्ञी से यम, यमुना तथा रेवंत की उत्पत्ति हुई। प्रभा ने आदित्य से प्रभात को और छाया ने क्रमशः सावर्णि, शनि, तपती और विष्टि को उत्पन्न किया। प्रथम मनु (वैवस्वत) के उन्हीं के समान नौ पुत्र थे।३-४।

इक्ष्वाकुश्चैव नाभागो धृष्टः शर्यातिरेव च।
नरिष्यंतश्च नाभागो ह्यरिष्टः करुषस्तथा ॥५
पृषध्रश्च महातेजा नवैते शक्रसन्निभाः।
इला ज्येष्ठा वरिष्ठा च सोमवंशं व्यवर्द्धयत् ॥६

(उनके नाम हैं—) नाभाग, धृष्ट, शर्गाति, नरिष्यन्त, नाभाग, अरिष्ट, करुष तथा महातेजस्वी पृषध्र—ये नवों इन्द्र के समान थे। मनु की ज्येष्ठा और वरिष्ठा पुत्री इला ने सोमवंश को बढ़ाया।५-६।

बुधस्य गत्वा भवनं सोमपुत्रेण सङ्गता।
असूत सोमजाद्देवी पुरूरवसमुत्तमम् ॥७

बुध के भवन में जाकर चन्द्र-पुत्र से संगम करके देवी इला ने पुरूरवा नामक उत्तम पुत्र को जन्म दिया। ७

पितृणां तृप्तिकर्त्तारं बुधादिति हि नः श्रुतम्।
प्राप्य पुत्रं सुविमलं सुद्युम्न इति विश्रुतम् ॥८
इला पुत्रत्रयं लेभे पुनः स्त्रीत्वमविन्दत।
उत्कलञ्च गयञ्चैव विनतञ्च[5] तथैव च ॥९

बुध से उत्पन्न वह पुत्र पितरों के लिए तृप्तिकारक हुआ, ऐसा हमने सुना है। इला अत्यन्त निर्मल पुत्र (पुरूरवा) को प्राप्त करके (पुरुष रूप में) सुद्युम्न नाम से प्रसिद्ध हुई। सुद्युम्न रूप से उत्कल, गय और विनत नामक तीन पुत्रों का लाभ करके इला पुनः स्त्री बन गई।८-९।

---

१. रात्री इति २. सावर्णिनामानं मनुमित्यर्थः। ३. शनिञ्चैव तपन्तीञ्च इति पा०। ४. महाभाग इति पा०। ५. सोमवंशविवृद्धये इन्त पा०। ६. विनताश्वं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वे तेऽप्रतिमप्रख्याः प्रपन्नाः कमलोद्भवम् ।
इक्ष्वाकोश्चाभवद्वीरो विकुक्षिर्नाम पार्थिवः ॥१०

वे सभी पुत्र अप्रतिम और ब्रह्मपरायण थे। वीर राजा विकुक्षि इक्ष्वाकु से उत्पन्न हुआ ।१०

ज्येष्ठपुत्रः स तस्यासीद्दश पञ्च च तत्सुताः ।
तेषां ज्येष्ठः ककुत्स्थोऽभूत्काकुत्स्थस्तु सुयोधनः ॥११

वह इक्ष्वाकु का ज्येष्ठ पुत्र था। उसके पन्द्रह पुत्र हुए। उनमें ज्येष्ठ ककुत्स्थ था। ककुत्स्थ का पुत्र सुयोधन हुआ ।११

सुयोधनात्पृथुः श्रीमान्विश्वकश्च पृथोः सुतः ।
विश्वकादार्द्रको[1] धीमान्युवनाश्वश्च तत्सुतः ॥१२

सुयोधन से श्रीमान् पृथु हुआ और पृथु का पुत्र विश्वक हुआ। विश्वक से धीमान् आर्द्रक और उसका पुत्र युवनाश्व हुआ ।१२

स गोकर्णमनुप्राप्य युवनाश्वः प्रतापवान् ।
दृष्ट्वासौ गौतमं विप्रं तपन्तमनलप्रभम् ॥१३

वे प्रतापी युवनाश्व गोकर्णतीर्थ में गये। वहाँ उन्होंने अग्नि के समान तेजस्वी गौतम विप्र को तप करते हुए देखा ।१३

प्रणम्य दण्डवद्भूमौ पुत्रकामो महीपतिः ।
अपृच्छत्कर्मणा केन धार्मिकं प्राप्नुयां सुतम् ॥१४

पुत्राभिलाषी राजा ने भूमि पर दण्डवत् लेटकर प्रणाम किया और पूछा--मैं किस कर्म से धार्मिक पुत्र को प्राप्त कर सकूंगा ? ।१४

गौतम उवाच

आराध्य पुरुषं[2] पूर्वं नारायणमनामयम् ।
अनादिनिधनं देवन्धार्मिकं प्राप्नुयात्सुतम् ॥१५

गौतम बोले—आदि-अन्त से रहित, अनामय, आदिपुरुष, देव, नारायण की आराधना करके धार्मिक पुत्र प्राप्त करो ।१५

तस्य[3] पुत्रः स्वयं ब्रह्मा पौत्रः[4] स्यान्नीललोहितः ।
तमादिकृष्णमीशानमाराध्याप्नोति सत्सुतम् ॥१६

---

१. दाहुको । २. पूर्वपुरुषमिति पा० । ३. यस्य इति पा० । ४. लोकनां प्रपितामहः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं ब्रह्मा जिनके पुत्र हैं और नीललोहित पौत्र हैं, उन आदि कृष्ण ईशान की आराधना करके सत् पुत्र प्राप्त किया जा सकता है ।१६

न यस्य भगवान् ब्रह्मा प्रभावं वेत्ति तत्त्वतः ।
तमाराध्य हृषीकेशं प्राप्नुयाद्धार्मिकं सुतम् ॥१७

जिनके प्रभाव को भगवान् ब्रह्मा तत्त्वतः नहीं जानते हैं, उन हृषीकेश की आराधना करके मनुष्य धार्मिक पुत्र प्राप्त करे ।१७

स गौतमवचः श्रुत्वा युवनाश्वो महीपतिः ।
आराधयन् हृषीकेशं वासुदेवं सनातनम् ॥१८

वे राजा युवनाश्व गौतम की बात सुनकर सनातन, वासुदेव, हृषीकेश की आराधना करने लगे ।१८

तस्य पुत्रोऽभवद्वीरः सावस्तिरिति[1] विश्रुतः ।
निर्मिता येन सावस्तिः[2] गौडदेशे महापुरी ॥१९

उसके सावस्ति नाम से विख्यात वीर पुत्र हुआ । जिसने गौड देश में महापुरी सावस्ति बसाई ।१९

तस्माच्च बृहदश्वोऽभूत्तस्मात्कुवलयाश्वकः ।
धुन्धुमारः[3] समभवत् धुन्धुं हत्वा महासुरम् ॥२०

उससे बृहदश्व उत्पन्न हुआ और उससे कुवलयाश्वक । वह धुन्धु नामक महासुर को मारकर धुन्धुमार कहलाया ।२०

धुन्धुमारस्य तनयास्त्रयः प्रोक्ता द्विजोत्तमाः ।
दृढाश्वश्चैव दण्डाश्वः कपिलाश्वस्तथैव च ॥२१

द्विजश्रेष्ठो ! धुन्धुमार के तीन पुत्र कहे गये हैं—दृढाश्व, दण्डाश्व और कपिलाश्व ।२१

दृढाश्वस्य प्रमोदस्तु[4] हर्यश्वस्तस्य चात्मजः ।
हर्यश्वस्य निकुम्भस्तु निकुम्भात्संहताश्वकः ॥२२

दृढाश्व का पुत्र प्रमोद और उसका पुत्र हर्यश्व था । हर्यश्व से निकुम्भ और निकुम्भ से संहताश्वक की उत्पत्ति हुई ।२२

---

१. श्रावस्तिरिति, श्रावन्तिरितिपा० । २. श्रावस्तिरिति, श्रावन्तीति पा० । ३. धुन्धुमारत्वमगमादिति पा० । ४. प्रमेयस्तु इति, प्रमोदिस्तु इति, प्रमेहस्तु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृताश्वोऽथ रणाश्वश्च संहिताश्वस्य वै सुतौ ।
युवनाश्वो रणाश्वस्य शक्रतुल्यबलो युधि ॥२३

संहिताश्व के दो पुत्र हुए—कृताश्व और रणाश्व । रणाश्व का पुत्र युवनाश्व युद्ध में इन्द्रतुल्य बलवान् था ।२३

कृत्वा तु वारुणीमिष्टिमृषीणां[1] वै प्रसादतः ।
लेभे त्वप्रतिमं पुत्रं विष्णुभक्तमनुत्तमम् ॥२४

युवनाश्व ने वारुणीयाग करके ऋषियों की कृपा से सर्वगुणोत्तम, महाप्राज्ञ, समस्त शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ मान्धाता नामक अप्रतिम पुत्र प्राप्त किया ।२४

मान्धातारं महाप्राज्ञं सर्वशस्त्रभृतां वरम् ।
मान्धातुः पुरुकुत्सोऽभूदम्बरीषश्च वीर्यवान् ॥२५

मुचुकुन्दश्च पुण्यात्मा[2] सर्वे शक्रसमा युधि ।
अम्बरीषस्य दायादो युवनाश्वोऽपरः स्मृतः ॥२६

मान्धाता के तीन पुत्र हुए—पुरुकुत्स, शक्तिशाली अम्बरीष और पुण्यात्मा मुचुकुन्द । ये सब युद्ध में इन्द्र के समान थे । अम्बरीष का दूसरा युवनाश्व (नामधारी) पुत्र हुआ ।१५-२६

हरितो युवनाश्वस्य हारितस्तत्सुतोऽभवत् ।
पुरुकुत्सस्य दायादस्त्रसदस्युर्महायशाः ॥२७

युवनाश्व का पुत्र हरित और उसका पुत्र हारित हुआ । पुरुकुत्स का पुत्र महा-यशस्वी त्रसदस्यु हुआ ।२७

नर्मदायां समुत्पन्नः सम्भूतिस्तत्सुतः स्मृतः ।
विष्णुवृद्धः सुतस्तस्य[3] त्वनरण्योऽभवत्ततः[4] ।
बृहदश्वोऽनरण्यस्य हर्यश्वस्तत्सुतोऽभवत् ॥२८

उसका पुत्र सम्भूति नर्मदा से उत्पन्न हुआ । सम्भूति का पुत्र विष्णुवृद्ध और विष्णुवृद्ध के पुत्र का नाम अनरण्य था । अनरण्य का पुत्र बृहदश्व और उसका पुत्र हर्यश्व हुआ ।२८

सोऽतीव धार्मिको राजा कर्दमस्य प्रजापतेः ।
प्रसादाद्धार्मिकं पुत्रं लेभे सूर्यपरायणम् ॥२९

---

१. वारुणीमिष्टि-वरुणदेवताकं यागमित्यर्थः । २. धर्मात्मा । ३. विष्णुभक्तः । ४. ऽभवत्परः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अत्यन्त धार्मिक राजा था। कर्दम प्रजापति की कृपा से उसे धार्मिक तथा सूर्यपरायण पुत्र प्राप्त हुआ।२९

स तु सूर्यं समभ्यर्च्य राजा वसुमनाः शुभम्।
लेभे त्वप्रतिमं पुत्रं त्रिधन्वानमरिन्दमम् ॥३०॥

उसका नाम वसुमना था। उस राजा वसुमना ने कल्याणकारक सूर्य की अर्चना करके शत्रुदमनकारी त्रिधन्वा नामक निरुपम पुत्र प्राप्त किया।३०

अयजच्चाश्वमेधेन शत्रूञ्जित्वा द्विजोत्तमाः।
स्वाध्यायवान्दानशीलस्तितीर्षुर्धर्मतत्परः[1] ॥३१

द्विजश्रेष्ठो! उसने शत्रुओं को जीतकर अश्वमेध यज्ञ किया। वह स्वाध्यायनिरत, दानशील, मोक्ष चाहने वाला और धर्मतत्पर था।३१

ऋषयस्तु समाजग्मुर्यज्ञवाटं महात्मनः।
वसिष्ठकश्यपमुखा देवाश्चेन्द्रपुरोगमाः ॥३२

उस महात्मा के यज्ञ में वसिष्ठ, कश्यप आदि ऋषि एवं इन्द्र आदि देवगण पधारे।३२

तान् प्रणम्य महाराजः पप्रच्छ विनयान्वितः।
समाप्य विधिवद्यज्ञं[2] वसिष्ठादीन्द्विजोत्तमान् ॥३३

उन्हें प्रणाम कर विधिपूर्वक यज्ञ सम्पन्न करके महाराज ने विनम्र होकर वसिष्ठ आदि द्विजवरों से पूछा।३३

वसुमना उवाच

किं[3] हि श्रेयस्करतरं लोकेऽस्मिन् ब्राह्मणर्षभाः।
यज्ञस्तपो वा संन्यासो ब्रूत मे सर्ववेदिनः ॥३४

वसुमना बोले—हे ब्राह्मणपुंगवो! इस लोक में अपेक्षाकृत अधिक कल्याण करने वाला कौन है? क्या यज्ञ है या तप है या संन्यास है? हे सर्वज्ञों! मुझे बतायें।३४

वसिष्ठ उवाच

अधीत्य वेदान्विधिवत्सुतांश्चोत्पाद्य[3] यत्नतः।
इष्ट्वा यज्ञेश्वरं यज्ञैर्गच्छेद्वनमथात्मवान् ॥३५

---

१. तितिक्षुर्धर्मतत्परः इति पा०। २. किञ्चिच्छ्रेयस्करं ह्यस्मिल्लोके ब्राह्मणसत्तमाः। ३. पुत्रांश्चोत्पाद्य धर्मतः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसिष्ठ बोले—वेदों का विधिवत् अध्ययन कर पुत्रों को यत्नपूर्वक उत्पन्न करके यज्ञों द्वारा यज्ञेश्वर भगवान् का यजन करे। अनन्तर समाहितचित्त होकर वन में जाय यह श्रेयस्कर है।३५

पुलस्त्य उवाच

आराध्य तपसा देवं योगिनम्परमेश्वरम्[1]।
प्रव्रजेद्विधिवद्यज्ञैरिष्ट्वा [पूर्वं सुरोत्तमान् ॥३६

पुलस्त्य बोले—पहले यज्ञों द्वारा देवश्रेष्ठों का यजन करे, फिर तपस्या द्वारा योगिदेव परमेश्वर की आराधना करके विधिपूर्वक संन्यास ले (यह श्रेयस्कर है)।३६

पुलह उवाच

यमाहुरेकं पुरुषं[2] [पुराणम्परमेश्वरम्।
तमाराध्य सहस्रांसुन्तपसो[3] मोक्षमाप्नुयात् ॥३७

पुलह बोले—जिन्हें एकमात्र पुराणपुरुष परमेश्वर कहा जाता है, तपस्या द्वारा उन सहस्रांशु की आराधना करके मोक्ष प्राप्त करे।३७

जमदग्निरुवाच

अजो[4] विश्वस्य कर्त्ता यो जगद्बीजं सनातनः।
अन्तर्यामी च भूतानां स देवस्तपसेज्यते ॥३८

जमदग्नि बोले—जो जगत् के बीज, सभी प्राणियों के अन्तर्यामी, सनातन, अजन्मा तथा विश्व के कर्ता हैं, वे विष्णुदेव तपस्या द्वारा आराधनीय हैं।३८

विश्वामित्र उवाच

योऽग्निः सर्वात्मकोऽनन्तः स्वयम्भूर्विश्वतोमुखः।
स रुद्रस्तपसोग्रेण पूज्यते नेतरैर्मखैः ॥३९

विश्वामित्र बोले—जो अग्निस्वरूप, सर्वात्मक, अनन्त, सब ओर मुख वाले और स्वयम्भू हैं, उन रुद्र की उग्र तपस्या द्वारा आराधना करे यज्ञों की आवश्यकता नहीं है।३९

---

१. परमेष्ठिनमिति पा०। २ पुराणं शाश्वतं प्रभुम्। ३. तमसो इति पा०। ४. अजस्य नाभिमध्ये कमीश्वरेण समर्पितम्। बीजं भगवतो येन स देवस्तपसेज्यते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरद्वाज उवाच

यो यज्ञैरिज्यते देवो [1]वासुदेवः सनातनः ।
स[2] सर्वदैवततनुः पूज्यते परमेश्वरः ॥४०

भरद्वाज बोले—जो यज्ञों द्वारा सनातन वासुदेव की पूजा करता है, वह सर्व-देवैकमूर्ति परमेश्वर की पूजा करता है ।४०

अत्रिरुवाच

यतः सर्वमिदं जातं यस्यापत्यं[3] प्रजापतिः ।
तपः सुमहदास्थाय पूज्यते[4] स महेश्वरः ॥४१

अत्रि बोले—जिनसे यह सब उत्पन्न हुआ है और प्रजापति (ब्रह्मा) जिनके पुत्र हैं, उन महेश्वर की घोरतर तपस्या करे ।४१

गौतम उवाच

यतः प्रधानपुरुषौ यस्य [5]शक्तिरिदं जगत् ।
स देवदेवस्तपसा पूजनीयः सनातनः ॥४२

गौतम बोले—जिनसे प्रकृति और पुरुष उत्पन्न हुए हैं और यह जगत् जिनकी शक्ति है, वे सनातन देवदेव पूजनीय हैं ।४२

कश्यप उवाच

सहस्रनयनो देवः साक्षी शम्भुः प्रजापतिः ।
प्रसीदति महायोगी पूजितस्तपसा परः ॥४३

कश्यप बोले—जो पर देवता, सहस्रनेत्र, कर्मसाक्षी, महायोगी और प्रजापति हैं, वे शम्भु तपस्या द्वारा पूजित होने पर प्रसन्न होते हैं ।४३

क्रतुरुवाच

प्राप्ताध्ययनयज्ञस्य लब्धपुत्रस्य चैव हि[3] ।
नान्तरेण तपः कश्चिद्धर्मशास्त्रेषु दृश्यते ॥४४

क्रतु बोले—अध्ययन, यज्ञ और पुत्रोत्पादन कर चुके हुए व्यक्ति के लिए तपस्या को छोड़कर और कोई धर्मशास्त्रों में नहीं दिखाई देता है ।४४

इत्याकर्ण्य स राजर्षिस्तान् प्रणम्यातिहृष्टधीः ।
विसर्जयित्वा[6] संपूज्य त्रिधन्वानमथाब्रवीत् ॥४५

---

१. जातवेदा इति पा० । २. ससर्वदैवतं शम्भुरिज्यते परमेश्वरः । ३. यस्याहं हि । ४. परमेश्वरः । ५. शक्तिमयमिति पा० । ६. विसर्जयित्वा इति आर्षम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सुनकर राजर्षि वसुमना ने उन मुनियों को प्रणाम करके अत्यन्त प्रसन्न होकर उनकी अर्चना करने के उपरान्त विदाई दी और पश्चात् त्रिधन्वा से कहा—।४५

अपराधयिष्ये तपसा देवमेकाक्षराह्वयम् ।
प्राणं बृहन्तं पुरुषमादित्यान्तरसंस्थितम् ॥४६

मैं तपस्या द्वारा सूर्यमण्डल संस्थित, जगत् के प्राणस्वरूप एकाक्षर बृहत् पुरुष देवता की आराधना करूँगा ।४६

त्वन्तु धर्मरतो नित्यं पालयैतदतन्द्रितः ।
चातुर्वर्ण्यसमायुक्तमशेषं क्षितिमण्डलम् ॥४७

तुम आलस्यरहित और धर्मनिरत होकर चारों वर्णों से युक्त इस सम्पूर्ण पृथ्वी-मण्डल का नित्य पालन करो ।४७

एवमुक्त्वा स तद्राज्यं निधायात्मभवे नृपः ।
जगामारण्यमनघस्तपस्तप्तुमनुत्तमम् ॥४८

ऐसा कहकर पुत्र को अपना राज्य सौंपकर वह निष्पाप राजा परमोत्तम तप करने के लिए वन में चला गया ।४८

हिमवच्छिखरे रम्ये देवदारुवनाश्रये ।
कन्दमूलफलाहारैरुत्पन्नैरयजत्सुरान् ॥४९

देवदारुवृक्षों के वन से युक्त हिमालय के रमणीय शिखर पर उत्पन्न कन्द, मूल और फलों को खाकर देवताओं की आराधना करने लगा ।४९

संवत्सरशतं साग्रं तपोनिर्द्धूतकिल्बिषः[2] ।
जजाप मनसा[3] देवीं सावित्रीं वेदमातरम्[4] ॥५०

तपस्या से दग्ध पाप वाला राजा एक सौ वर्षों तक वेदमाता सावित्री का मानसिक जप करने लगा ।५०

तस्यैवन्तपतो[5] देवः स्वयम्भूः परमेश्वरः ।
हिरण्यगर्भो विश्वात्मा[6] तं देशमगमत्स्वयम् ॥५१

उसके इस प्रकार तप करते हिरण्यगर्भ, विश्वात्मा, परमेश्वर, स्वयम्भू देव स्वयं वहाँ आये ।५१

---

१. देवदारुवने शुभे । २. कल्मष इति पा० । ३. तपसा इति । ४. देवमातरमिति पा० । ५. जपत इति पा० । ६. भगवानिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्ट्वा देवं समायान्तं ब्रह्माणं[1] विश्वतोमुखम् ।
ननाम शिरसा तस्य पादयोर्नाम कीर्त्तयन् ॥५२

सब ओर मुख वाले ब्रह्मदेव को आते हुए देखकर नाम कीर्तन करते हुए उनके चरणों में शिर से प्रणाम किया ।५२

नमो देवाधिदेवाय ब्रह्मणे परमात्मने[2] ।
हिरण्यमूर्त्तये तुभ्यं सहस्राक्षाय वेधसे ॥५३

आप देवाधिदेव, ब्रह्मा, परमात्मा, हिरण्यमूर्ति; सहस्राक्ष और वेधा हैं, आपको नमस्कार है ।५३

नमो धात्रे विधात्रे च नमो देवात्ममूर्त्तये[3] ।
सांख्ययोगाधिगम्याय नमस्ते ज्ञानमूर्त्तये ॥५४

धाता और विधाता को नमस्कार है । देवात्ममूर्ति को नमस्कार है । सांख्य और और योग द्वारा प्राप्य को नमस्कार है । ज्ञानमूर्ति को नमस्कार है ।५४

नमस्त्रिमूर्त्तये तुभ्यं स्रष्ट्रे सर्वार्थवेदिने ।
पुरुषाय पुराणाय योगिनां गुरवे नमः ॥५५

तीन मूर्ति वाले आपको नमस्कार है । स्रष्टा, सकल अर्थों के वेत्ता आपको नमस्कार है । पुराण-पुरुष और योगियों के गुरु को नमस्कार है ।५५

ततः प्रसन्नो भगवान्विरिञ्चिर्विश्वभावनः ।
वरं वरय भद्रन्ते वरदोऽस्मीत्यभाषत ॥५६

तदनन्तर भगवान् विश्वभावन ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर कहा—तुम्हारा कल्याण हो । मैं वर देने वाला हूँ, तुम वर मांगो ।५६

राजोवाच

जपेयन्देवदेवेश गायत्रीं वेदमातरम् ।
भूयो वर्षशतं साग्रं तावदायुर्भवेन्मम ॥५७

राजा बोला—हे देवदेवेश ! मैं पुनः सौ वर्षों तक वेदमाता गायत्री का जप कर सकूं, उतनी आयु मेरी हो ।५७

बाढमित्याह विश्वात्मा समालोक्य नराधिपम् ।
स्पृष्ट्वा कराभ्यां सुप्रीतस्तत्रैवान्तरधीयत ॥५८

---

१. ब्रह्माणमिमतौजसम् । २. परमेष्ठिने । ३. वेदात्ममूर्त्तये ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वात्मा ने राजा को देखकर कहा—बहुत अच्छा। अत्यन्त प्रसन्न भगवान् दोनों हाथों से राजा का स्पर्श करके वहीं अन्तर्हित हो गये।५८

सोऽपि लब्धवरः श्रीमाञ्जजापातिप्रसन्नधीः।
शान्तस्त्रिषवणस्नायी कन्दमूलफलाशनः॥५९

वर पाकर वह राजा अत्यन्त प्रसन्न चित्त से जप करने लगा। शान्त होकर वह तीनों काल स्नान कंद, मूल और फल का भोजन करता था।५९

तस्य पूर्णे वर्षशते भगवानुग्रदीधितिः।
प्रादुरासोन्महायोगी भानोर्मण्डलमध्यतः॥६०

उसके सौ वर्ष पूरे हो जाने पर प्रखर किरण वाले भगवान् महायोगी सूर्यमण्डल के मध्य से प्रकट हुए।६०

तं दृष्ट्वा [1]वेदवपुषं मण्डलस्थं सनातनम्।
स्वयम्भुवमनाद्यन्तं ब्रह्माणं [2]विस्मयङ्गतः॥६१

वेदशरीरधारी, मण्डलस्थ, सनातन, स्वयंभू, आदि और अन्त से रहित ब्रह्मा को देखकर राजा विस्मय में पड़ गया।६१

तुष्टाव वैदिकैर्मन्त्रैः सावित्र्या च विशेषतः।
क्षणादपश्यत्पुरुषं तमेव परमेश्वरम्॥६२

वह वैदिक मन्त्रों से विशेषतः सावित्री मन्त्र से उनकी स्तुति करने लगा। क्षणभर बाद उसने उन्हीं परमेश्वर पुरुष को देखा।६२

चतुर्मुखं जटामौलिमष्टहस्तं त्रिलोचनम्।
चन्द्रावयवलक्ष्माणं नरनारीतनुं हरम्॥६३

उनके चार मुख थे, मस्तक पर जटा थी, आठ हाथ थे और तीन नेत्र थे। वे चन्द्रमा के अवयव से चिह्नित और अर्धनारीश्वर शरीरधारी शिव थे।६३

भासयन्तं जगत्कृत्स्नं नीलकण्ठं स्वरश्मिभिः।
रक्ताम्बरधरं [3]रक्तं रक्तमाल्यानुलेपनम्॥६४

वे सम्पूर्ण जगत् को अपनी रश्मियों से उद्भासित कर रहे थे। वे नीलकण्ठ, रक्ताम्बरधारी, लाल तथा लाल माला और चन्दन से युक्त थे।६४

तद्भावभावितो दृष्ट्वा सद्भावेन[4] परेण हि।
ननाम शिरसा रुद्रं [5]सावित्र्या तेन चैव हि॥६५

---

१. देवदेवेशमिति पा०। २. शरणं गतः। ३. देवं। ४. भावेन परमेण हि। ५. सावित्र्यानेनेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा ने उस समय उनके प्रति भाव से आर्द्रचित्त होकर परम सद्भाव से उन्हें देखकर गायत्री उच्चारणपूर्वक मस्तक से रुद्र को प्रणाम किया ।६५

नमस्ते नीलकण्ठाय भास्वते परमेष्ठिने ।
त्रयीमयाय रुद्राय कालरूपाय[1] हेतवे ॥६६

(और राजा ने कहा—) नीलकण्ठ, प्रकाशमान परमेष्ठी, वेदमय, रुद्र, कालरूप और सबके कारणभूत आपको नमस्कार है ।६६

तदा प्राह महादेवो राजानं प्रीतमानसः ।
इमानि मे रहस्यानि नामानि शृणु चानघ ॥६७

तब महादेव ने प्रसन्नचित्त होकर राजा से कहा—हे निष्पाप राजन् ! ये मेरे रहस्य नाम हैं ।६७

सर्ववेदेषु गीतानि संसारशमनानि तु ।
नमस्कुरुष्व[2] नृपते एभिर्मां सततं शुचिः[3] ॥६८

ये सभी वेदों में गाये गये हैं। ये संसारनाशक हैं। नृपते ! पवित्र होकर इन नामों से सतत मुझे प्रणाम करो ।६८

अधीष्व[4] शतरुद्रीयं यजुषां सारमुद्धृतम् ।
जपस्वानन्यचेतस्को[5] मय्यासक्तमना नृप ॥६९

नृप ! अनन्यमना तथा मुझमें आसक्तचित्त होकर यजुर्वेद के सारभूत शतरुद्रीय अध्याय का अध्ययन तथा जप करो ।६९

ब्रह्मचारी निराहारो [6]भस्मनिष्ठः समाहितः ।
जपेदामरणाद्रुद्रं स याति परमं पदम् ॥७०

जो व्यक्ति ब्रह्मचारी, स्वल्पाहारी, भस्मनिष्ठ तथा समाहितचित्त होकर मरणकाल पर्यन्त इसका जप करता है, उसे परम पद का लाभ होता है ।७०

इत्युक्त्वा भगवानुद्रो भक्तानुग्रहकाम्यया ।
पुनः संवत्सरशतं राज्ञे ह्यायुरकल्पयत् ॥७१

यह कहकर भगवान् रुद्र ने भक्त पर अनुग्रह करने की इच्छा से राजा को पुनः एक सौ वर्षों की आयु दे दी ।७१

दत्त्वास्मै तत्परं ज्ञानं वैराग्यं परमेश्वरः ।
क्षणादन्तर्दधे रुद्रस्तदद्भुतमिवाभवत् ॥७२

---

१. कालरुद्राय । २. नमस्कुरुष्व सततमिति पा० । ३. शुभैः । ४. अध्यायं । ५. जपस्व इत्यार्षमात्मनेपदम् । ६. भस्मदिग्धः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमेश्वर रुद्र राजा को परम ज्ञान तथा वैराग्य देकर क्षण भर में अन्तर्हित हो गये, यह अद्भुत बात हुई ।७२

राजापि तपसा रुद्रं जजापानन्यमानसः ।
[1]भस्मच्छन्नस्त्रिषवणं स्नात्वा शान्तः समाहितः ॥७३

राजा भी भस्मलिप्त शरीर, त्रिकालस्नायी, शान्त, समाहितचित्त और अनन्यमना होकर तपस्या द्वारा शतरुद्रीय जप करने लगे ।७३

जपतस्तस्य नृपतेः पूर्णे वर्षशते पुनः ।
योगप्रवृत्तिरभवत्कालात्कालपरं[2] पदम् ॥७४
विवेशैतद्वेदसारं[3] स्थानं वै परमेष्ठिनः ।
भानोः सुमण्डलं[4] शुभ्रं ततो यातो महेश्वरम् ॥७५

जप करते हुए उस राजा के सौ वर्ष पूरे हो जाने पर योग में उसकी प्रवृत्ति हो गई । तदनन्तर राजा परमेष्ठी सूर्य के मण्डल मध्यवर्ती वेदसार शुभ्रवर्ण कालपर परम पद को प्राप्त हो गया । पश्चात् उसने महेश्वरत्व लाभ किया ।७४-७५।

यः पठेच्छृणुयाद्वापि राज्ञश्चरितमुत्तमम्[5] ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके महीयते ॥७६

जो मनुष्य राजा वसुमना का यह उत्तम चरित्र पढ़ेगा या सुनेगा, वह समस्त पापों से मुक्त होकर ब्रह्मलोक में पूजित होगा है ।७६

इति श्रीकूर्मपुराणे राजवंशकीर्त्तने विंशोऽध्यायः ॥२०॥

श्री कूर्मपुराण में राजवंश कीर्तन नामक बीसवां अध्याय समाप्त ।२०

---

१. भस्मच्छन्नं त्रिषवशमिति पा० । २. कालात्मकमिति, कालान्तकमिति, कालात्कालात्परं पदमिति पा० । ३. विवेशवेदसारं च, विवेश तद्वेदसारमिति । ४. श्रीमण्डलमिति । ५. राज्ञां चरितमिति । × एकोनविंशः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकविंशोऽध्यायः

सूत[1] उवाच

त्रिधन्वा राजपुत्रस्तु धर्मेणापालयन्महीम् ।
तस्य पुत्रोऽभवद्विद्वांस्त्रय्यारुण इति श्रुतः ॥१

सूत बोले—राजपुत्र त्रिधन्वा धर्मपूर्वक पृथ्वी का पालन करने लगा। उसका विद्वान् पुत्र त्रय्यारुण नाम से विख्यात हुआ।१

तस्य सत्यव्रतो नाम कुमारोऽभून्महाबलः ।
भार्या सत्यधना[2] नाम हरिश्चन्द्रमजीजनत् ॥२

उसका सत्यव्रत महाबली पुत्र हुआ। उसकी पत्नी सत्यधना ने हरिश्चन्द्र को जन्म दिया।२

हरिश्चन्द्रस्य पुत्रोऽभूद्रोहितो[3] नाम वीर्यवान् ।
रोहितस्य[4] वृकः पुत्रस्तस्माद्बाहुरजायत ॥३

हरिश्चन्द्र का रोहित नामक शक्तिशाली पुत्र हुआ। रोहित का पुत्र वृक और उससे बाहु की उत्पत्ति हुई।३

हरितो रोहितस्याथ धुन्धुस्तस्य सुतोऽभवत् ।
विजयश्च सुदेवश्च धुन्धुपुत्रौ बभूवतुः ।
विजयस्याभवत्पुत्रः[5] कारुको नाम वीर्यवान् ।
सगरस्तस्य पुत्रोऽभूद्राजा परमधार्मिकः ।
द्वे भार्ये सगरस्यापि प्रभा भानुमती तथा ॥४

रोहित का पुत्र हरित और उसका पुत्र धुन्धु हुआ। धुन्धु के दो पुत्र हुए विजय और सुदेव। विजय का कारुक नामक शक्तिशाली पुत्र हुआ। उसका पुत्र सगर परम धार्मिक हुआ। सगर की दो पत्नियाँ थीं—प्रभा और भानुमती।४

ताभ्यामाराधितो[6] वह्निः प्रददौ वरमुत्तमम् ।
एकं भानुमती पुत्रमगृह्णादसमञ्जसम् ॥५

---

१. कूर्म उवाच इति। २. सत्यव्रतानाम इति। ३. कुरुको नाम इति। ४. कुरुकस्य इति। ५. कुरुको नाम वीर्यवान्। कुरुकस्य वृकः पुत्रस्तस्माद्बाहुरजायत इति। ६. ताभ्यामाराधितः प्रादादौर्वोऽग्निरिति, ताभ्यामाराधितः प्रादात्पुराग्निरिति।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन दोनों ने अग्निदेव की अराधना की। अग्नि ने उन्हें उत्तम वर दिया। भानुमती ने एक पुत्र असमञ्जस को ग्रहण किया।५

प्रभा षष्टिसहस्रन्तु पुत्राणां जगृहे शुभा।
असमञ्जसपुत्रोऽभूदंशुमान्नाम[1] पार्थिवः ॥६

कल्याणी प्रभा ने साठ हजार पुत्रों को ग्रहण किया। असमञ्जस का पुत्र अंशुमान् नामक राजा हुआ।६

तस्य पुत्रो दिलीपस्तु दिलीपात्तु भगीरथः।
येन भागीरथी गङ्गा तपः कृत्वावतारिता ॥७
प्रसादाद्देवदेवस्य महादेवस्य धीमतः।
भगीरथस्य तपसा देवः प्रीतमना हरः ॥८
बभार शिरसा गङ्गां सोमान्ते[2] सोमभूषणः।
भगीरथसुतश्चापि श्रुतो नाम बभूव ह ॥९

उसका पुत्र दिलीप और दिलीप से भगीरथ की उत्पत्ति हुई। जिसने तप करके देवाधीश्वर धीमान् महादेव को कृपा से भागीरथी गंगा को भूतल पर उतारा। भगीरथ की तपस्या से चन्द्रभूषण महादेव प्रसन्न होकर चन्द्रमा के अन्त में गंगा को सिर पर धारण कर लिया। भगीरथ का पुत्र श्रुतनाम से ख्यात हुआ।७-९

नाभागस्तस्य दायादः सिंधुद्वीपस्ततोऽभवत्[3]।
अयुतायुः सुतस्तस्य ऋतुपर्णो[4] मयाबलः ॥१०

उसका पुत्र नाभाग हुआ और उससे सिन्धुद्वीप की उत्पत्ति हुई। सिन्धुद्वीप का अयुतायु और उसका पुत्र महाबलवान् ऋतुपर्ण हुआ।१०

ऋतुपर्णस्य पुत्रोऽभूत्सुदासो नाम धार्मिकः।
सौदासस्तस्य तनयः ख्यातः[5] कल्माषपादकः ॥११

ऋतुपर्ण का सुदास नामक धार्मिक पुत्र हुआ। उसका पुत्र सौदास कल्माषपादक नाम से ख्यात था।११

वसिष्ठस्तु महातेजाः क्षेत्रे कालमाषपादके[6]।
अश्मकं जनयामास तस्मिन्वाकुकुलध्वजम् ॥१२

महातेजस्वी वसिष्ठ ने कल्माषपादक की पत्नी से इक्ष्वाकुकुलश्रेष्ठ अश्मक को उत्पन्न किया।१२

---

१. असमञ्जसस्य तनयो ह्यंशुमान्नाम इति, पुत्रोभूदंशुमान्नाम इति। २. सोमः सोमविभूषणः इति। ३. सिन्धुद्वीपसमोऽभवदिति। ४. ऋतुपर्णस्तु तत्सुतः इति। ५. ततः इति। ६. कल्माषपादके इति।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्मकस्योत्कलायान्तु[1] नकुलो नाम पार्थिवः ।
स हि रामभयाद्राजा[2] वनं प्राप सुदुःखितः ॥१३

अश्मक की उत्कला नामक पत्नी से राजा नकुल का जन्म हुआ। वह राजा परशुराम के भय से अत्यन्त दुःखी हो वन में चला गया।१३

दधत्[3] स नारीकवचं तस्माच्छतरथोऽभवत् ।
तस्माद्दिबलिबिलिः[4] श्रीमान् वृद्धशर्मा च तत्सुतः ॥१४

उसने नारीकवच धारण किया था। (अर्थात् वह विवस्त्र नारियों से घिरकर वन में गया था)। उससे शतरथ उत्पन्न हुआ। उससे श्रीमान् बिलिबिलि हुआ। उसका पुत्र वृद्धशर्मा हुआ।१४

तस्माद्विश्वसहस्तस्मात्खट्वाङ्ग[5] इति विश्रुतः ।
दीर्घबाहुः सुतस्तस्माद्रघुस्तस्मादजायत[6] ॥१५

उससे विश्वसह और विश्वसह से प्रसिद्ध खट्वाङ्ग की उत्पत्ति हुई। उसका पुत्र दीर्घबाहु और उससे रघु उत्पन्न हुआ।१५

रघोरजः समुत्पन्नो राजा दशरथस्ततः ।
रामो दाशरथिर्वीरो धर्मज्ञो लोकविश्रुतः ॥१६

भरतो लक्ष्मणश्चैव शत्रुघ्नश्च महाबलः ।
सर्वे शक्रसमा युद्धे विष्णुशक्तिसमन्विताः ॥१७

रघु से अज उत्पन्न हुए और उनसे दशरथ। दशरथ से वीर, धर्मज्ञ और लोक-विख्यात राम, भरत, लक्ष्मण एवं महाबली शत्रुघ्न उत्पन्न हुए। ये सभी युद्ध में इन्द्र के समान और विष्णुशक्ति से समन्वित थे।१६-१७।

जज्ञे रावणनाशार्थं विष्णुरंशेन विश्वभुक्[7] ।
रामस्य भार्या सुभगा जनकस्यात्मजा शुभा ॥१८
सीता[8] त्रिलोकविख्याता शीलौदार्यगुणान्विता ।
तपसा तोषिता देवी जनकेन गिरीन्द्रजा ॥१९

रावण के नाश के लिए विश्वभोक्ता विष्णु अपने अंश से अवतीर्ण हुए थे। राम की पत्नी सुन्दरी, कल्याणी, जनक-पुत्री सीता तीनों लोक में विख्यात एवं शील और

---

१. अश्मकस्योत्तरायान्तु इति। २. कामभयादिति। ३. सुतं, बिभ्रदिति। ४. दिलिविल इति, तस्मादिलिविलिः श्रीमान् वृद्धधर्म्मा च तत्सुत इति पा०। ५. वट्वाङ्ग इति, वेट्वङ्ग इति, वट्वङ्ग इति पा०। ६. सुतस्तस्य रघुस्तस्मादिति पा०। ७. विश्वहृदिति पा०। ८. सीतेति लोकविख्याता इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदारता गुणों से विभूषित थीं। जनक ने तपस्या द्वारा पार्वती देवी को सन्तुष्ट किया था।१८-१९।

प्रायच्छज्जानकीं सीतां राममेवाश्रितां पतिम्।
प्रीतश्च भगवानीशस्त्रिशूली नीललोहितः ॥२०
प्रददौ शत्रुनाशार्थं जनकायाद्भुतं धनुः।
स राजा जनको धीमान्[1] दातुकामः सुतामिमाम् ॥२१
अघोषयदमित्रघ्नो लोकेऽस्मिन्द्विजपुङ्गवाः।
इदं धनुः समादातुं यः शक्नोति जगत्त्रये ॥२२
देवो वा दानवो वापि स सीतां लब्धुमर्हति।
विज्ञाय रामो बलवाञ्जनकस्य गृहं प्रभुः ॥२३
भञ्जयामास चादाय गत्वासौ लीलयैव हि।
उद्ववाहाथ[2] तां कन्यां पार्वतीमिव शंकरः ॥२४

अतः पार्वती ने उन्हें जानकी सीता प्रदान की, जिन्होंने पति के रूप में राम का ही वरण किया। त्रिशूलधारी, नीललोहित भगवान् शंकर ने प्रसन्न होकर शत्रु-नाश के लिए जनक को एक अद्भुत धनुष दिया। उन शत्रुनाशक धीमान् राजा जनक ने अपनी उस पुत्री का दान करने की इच्छा से इस लोक में घोषणा की—द्विजश्रेष्ठो! तीनों लोक में जो व्यक्ति चाहे देव या दानव ही क्यों न हो, इस धनुष को उठा लेगा, वही सीता को प्राप्त कर सकेगा। बलवान् प्रभु राम ने जनक के घर का पता लगाकर वहाँ जाकर लीलापूर्वक धनुष उठाकर तोड़ डाला और उस कन्या (जानकी) से विवाह कर लिया जैसे शंकर ने पार्वती से किया था।२०-२४।

रामः परमधर्मात्मा सेनामिव[3] च षण्मुखः।
ततो बहुतिथे काले राजा दशरथः स्वयम् ॥२५
रामं ज्येष्ठसुतं वीरं राजानं कर्त्तुमर्हसि।
तस्याथ पत्नी सुभगा कैकेयी चारुहासिनी[4] ॥२६
निवारयामास पतिं प्राह सम्भ्रान्तमानसा।
मत्सुतं भरतं वीरं राजानं कर्त्तुमारभत्[5] ॥२७

राम परम धर्मात्मा तथा सेना के लिए कीर्तिकेय के समान थे। तदनन्तर बहुत समय बीत जाने पर राजा दशरथ ने स्वयं अपने ज्येष्ठ पुत्र वीर राम को राजा बनाने

१. श्रीमान्, विद्वानिति पा०। २. उद्ववाह च इति पा०। उदुवाह इति तु वक्तये उद्ववाह इत्यार्षम्। ३. देवसेनामिवाग्निजः इति पा०। ४. चारुभाषिणीति पा०। ५. कर्त्तुमारभदित्यत्र परस्मैपदमार्षम्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उपक्रम किया। किन्तु उनकी मनोरम हास्य वाली सुन्दरी पत्नी कैकेयी ने रोक दिया। वह घबराये हुए मन से बोली—मेरे पुत्र वीर भरत को राजा बनाइए।२५-२७।

पूर्वमेव वरौ यस्माद्दत्तौ मे भवता[1] यतः।
स तस्या वचनं श्रुत्वा राजा दुःखितमानसः ॥२८

क्योंकि पहले ही आप मुझे दो वर दे चुके हैं। वे राजा उसकी बात सुनकर बहुत दुःखी हुए।२८

बाढमित्यब्रवीद्वाक्यं तथा रामोऽपि धर्मवित्।
प्रणम्याथ पितुः पादौ लक्ष्मणेन सहाच्युतः ॥२९

उन्होंने कहा—ठीक है। धर्मवेत्ता राम भी पिता के चरणों में प्रणाम करके लक्ष्मण के साथ वन को चल पड़े।२९

ययो वनं सपत्नीकः कृत्वा समयमात्मवान्।
संवत्सराणां चत्वारि दश चैव महाबलः ॥३०

महाबली एवं संयमी राम चौदह वर्षों का समय निश्चित करके पत्नी को साथ लेकर वन में गये।३०

उवास तत्र भगवान्[2] लक्ष्मणेन सह प्रभुः।
कदाचिद्वसतोऽरण्ये रावणो नाम राक्षसः ॥३१
परिव्राजकवेषेण[3] सीतां हृत्वा ययौ पुरीम्।
अदृष्ट्वा लक्ष्मणो रामः सीतामाकुलितेन्द्रियौ ॥३२

वहाँ प्रभु राम लक्ष्मण के साथ निवास करने लगे। उनके अरण्य में निवास करते हुए, कभी रावण नामक राक्षस संन्यासी के वेश में आया और वह सीता का अपहरण करके अपनी पुरी में ले गया। सीता को न देखकर राम और लक्ष्मण व्याकुलेन्द्रिय हो गये।३१-३२।

दुःखशोकाभिसन्तप्तौ बभूवतुररिन्दमौ।
ततः कदाचित्कपिना सुग्रीवेण द्विजोत्तमाः ॥३३
वानराणामभूत्सख्यं रामस्याक्लिष्टकर्मणः।
सुग्रीवस्यानुगो वीरो हनूमान्नाम वानरः ॥३४

वे दोनों शत्रुदमनकारी वीर दुःख और शोक से अत्यन्त सन्तप्त हुए। द्विजश्रेष्ठो!

---

१. भवतानघ, भवता च यदिति पा०। २. मतिमानिति पा०। ३. परिव्राज-करूपेणेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदनन्तर कभी वानरों के राजा सुग्रीव के साथ अक्लिष्टकर्मा (लीलापूर्वक कार्य सम्पादन करने वाले) राम की मित्रता हो गई। सुग्रीव के अनुगामी हनूमान् नाम वानर थे।३३-३४।

वायुपुत्रो महातेजा रामस्यासीत्प्रियः सदा[1]।
स कृत्वा परमं धैर्यं रामाय कृतनिश्चयः ॥३५
आनयिष्यामि तां सीतामित्युक्त्वा विचचार ह।
महीं सागरपर्यन्तां सीतादर्शनतत्परः ॥३६

हनुमान् वायु के पुत्र, महातेजस्वी और राम के सदा प्रिय थे। उन्होंने परम धैर्य धारण करके राम के लिए निश्चय किया कि मैं सीता को ले आऊँगा। यह कहकर सीता के दर्शन में तत्पर हो वे सागर पर्यन्त पृथ्वी पर विचरण करने लगे।३५-३६।

जगाम रावणपुरीं लङ्कां सागरसंस्थिताम्।
तत्राथ निर्जने[2] देशे वृक्षमूले शुचिस्मिताम् ॥३७
अपश्यदमलां सीतां राक्षसीभिः समावृताम्।
अश्रुपूर्णेक्षणां हृद्यां संस्मरन्तीमनिन्दिताम् ॥३८
राममिन्दीवरश्यामं लक्ष्मणञ्चात्मसंस्थिताम्।

सागर मध्यवर्ती रावण की लंकापुरी में वे पहुँच गये। वहाँ हनुमान् ने निर्जन प्रदेश में वृक्ष के मूल में पवित्र हास्य वाली, निर्मल, राक्षसियों से घिरी हुई, अश्रुपूर्ण नेत्रों वाली, मनोरमा, अनिन्दिता और नीलकमल के समान श्यामवर्ण राम तथा जितेन्द्रिय लक्ष्मण का स्मरण करती हुई सीता को देखा।३७-३८½।

निवेदयित्वा[3] चात्मानं सीतायै रहसि प्रभुः[4] ॥३९

प्रभु हनुमान् ने एकान्त में सीता को अपना परिचय दिया।३९

असंशयाय प्रददावस्यै रामाङ्गुलीयकम्।
दृष्ट्वांगुलीयकं सीता पत्युः परमशोभनम् ॥४०
मेने समागतं रामं प्रीतिविस्फुरितेक्षणा[5]।
समाश्वास्य तदा सीतां दृष्ट्वा[6] रामस्य चान्तिकम् ॥४१
नयिष्ये[7] त्वां महाबाहुमुक्त्वा रामं ययौ पुनः।
निवेदयित्वा रामाय सीतादर्शनमात्मवान् ॥४२

विश्वासोत्पादन के निमित्त राम की अँगूठी उनको दी। पति की परम सुन्दर

---

१. सखा इति पा०। २. विजने। ३. निवेदयित्वा इत्यार्षं, निवेद्य इति साधु। ४. स्वयमिति पा०। ५. विस्तारितेक्षणा। ६. अन्वेष्य।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगूठी देखकर उन्होंने राम को आये हुए माना तथा आंखें फैलाकर देखने लगीं। तब सीता को देखकर हनुमान् ने उन्हें सान्त्वना दी कि मैं महाबाहु राम के पास आपको पहुँचा दूंगा। यह कहकर हनुमान् राम के पास चले गये। जितेन्द्रिय वायुपुत्र ने सीता का दर्शन राम से निवेदन कर दिया।४०-४२।

तस्थौ रामेण पुरतो लक्ष्मणेन च पूजितः।
ततः स रामो बलवान्साद्धं हनुमता स्वयम् ॥४३
लक्ष्मणेन च युद्धाय बुद्धिञ्चक्रे[1] हि रक्षसः।
कृत्वाथ वानरशतैर्लंकामार्गं[2] महोदधेः ॥४४
सेतुं परमधर्मात्मा रावणं हतवान्प्रभुः।
सपत्नीकं हि समुतं सभ्रातृकमरिन्दमः ॥४५

हनुमान् राम के सामने खड़े रहे और लक्ष्मण ने उनका सम्मान किया। तदनन्तर उन बलवान् राम ने स्वयं हनुमान् तथा लक्ष्मण के साथ, राक्षस (रावण) से युद्ध का विचार करके सैकड़ों वानरों के द्वारा समुद्र में पुल बँधवाकर लंका का मार्ग बनाया। तत्पश्चात् परम धर्मात्मा शत्रुदमनकारी प्रभु (राम) ने पत्नी, पुत्र तथा भाई समेत रावण का वध किया।४३-४५।

आनयामास तां सीतां वायुपुत्रसहायवान्।
सेतुमध्ये महादेवमीशानं कृत्तिवाससम् ॥४६
स्थापयामास लिङ्गस्थं[3] पूजयामास राघवः।
तस्य देवो महादेवः पार्वत्या सह शंकरः ॥४७
प्रत्यक्षमेव भगवान्ददत्तवान्वरमुत्तमम्।
यत्त्वया स्थापितं लिङ्गम्[4] द्रक्ष्यन्तीदं द्विजातयः ॥४८
महापातकसंयुक्तास्तेषां पापं विनंक्ष्यति।
अन्यानि चैव पापानि स्नातस्यात्र महोदधौ ॥४९
दर्शनादेव लिङ्गस्य नाशं यान्ति न संशयः।

फिर वायुपुत्र की सहायता से वे सीता को ले आये। राम ने पुल के बीच व्याघ्रचर्मधारी, ईशान, महादेव को शिवलिंग में स्थापित करके पूजन किया। तब पार्वती के साथ भगवान् शंकर ने राम को उत्तम वर दिया कि आपने जो लिंग स्थापित किया है, इसका जो महापातक से युक्त द्विजाति दर्शन करेंगे, उनका पाप नष्ट हो जाएगा।

---

१. चक्रे तिराक्षसमिति पा०। २. मार्गं महोदधौ। ३. लिङ्गञ्चेति पा०। ४. तत्र इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँ सागर में स्नान करके शिवलिंग का दर्शन करते ही अन्य समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं।४६-४९½।

यावत्स्थास्यन्ति गिरयो यावदेषा च मेदिनी ॥५०
यावत्सेतुश्च तावच्च स्थास्याम्यत्र[1] तिरोहितः।
स्नानं दानं तपः श्राद्धं सर्वं भवतु[2] चाक्षयम् ॥५१

जब तक पर्वत रहेंगे, जब तक यह पृथ्वी रहेगी और जब तक यह सेतु रहेगा तब तक मैं यहाँ छिपकर रहूँगा। यहाँ स्नान, दान, तपस्या, श्राद्ध सबका फल अक्षय होता है।५०-५१।

स्मरणादेव लिङ्गस्य दिनपापं[3] प्रणश्यति।
इत्युक्त्वा भगवाञ्छम्भुः[4] परिष्वज्य तु राघवम् ॥५२
सनन्दी[5] सगणो रुद्रस्तत्रैवान्तरधीयत।
रामोऽपि पालयामास राज्यं धर्मपरायणः ॥५३

इस शिवलिंग के स्मरणमात्र से दिन में किया गया पाप नष्ट हो जाता है। इतना कहकर भगवान् शंकर राम का आलिंगन करके नन्दी वाहन तथा गण समेत वहीं अन्तर्हित हो गये। धर्मपरायण राम भी राज्य का पालन करने लगे।५२-५३।

अभिषिक्तो[6] महातेजा भरतेन महाबलः।
विशेषाद्ब्रह्मणान्सर्वान्पूजयामास चेश्वरम् ॥५४

भरत ने महान् तेजस्वी और महाबली राम का राज्याभिषेक किया। विशेषरूप से सभी ब्राह्मणों और शंकर की उन्होंने पूजा की।५४

यज्ञेन यज्ञहन्तारमश्वमेधेन[7] शङ्करम्।
रामस्य तनयो जज्ञे कुश इत्यभिविश्रुतः ॥५५

उन्होंने यज्ञ के द्वारा यज्ञहन्ता शंकर की आराधना की। राम के कुश नामक विख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ।५५

लवश्च सुमहाभागः सर्वतत्त्वार्थवित्सुधीः।
अतिथिस्तु कुशाज्जज्ञे निषधस्तत्सुतोऽभवत् ॥५६

अत्यन्त भाग्यशाली तथा सभी तत्त्वार्थ का ज्ञाता, विद्वान् लव भी उनके पुत्र हुआ। कुश से अतिथि उत्पन्न हुआ और उसका पुत्र निषध हुआ।५६

---

१. स्थास्यन्त्यत्र तिरोहता इति पा०। २. भविष्यत्यक्षयं महदिति पा०। ३. नाशं यान्ति न संशय इति पा०। ४. सोमः। ५. सहाम्बः। ६. महाबाहुरयोध्यायां। ७. यज्ञभोक्तारं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नलश्च[1] निषधस्यासीत् नभास्तस्मादजायत ।
नभसः पुण्डरीकाक्षः क्षेमधन्वा तु तत्सुतः ॥५७

निषध का पुत्र नल और उससे नभ की उत्पत्ति हुई। नभ से पुण्डरीकाक्ष और उसका पुत्र क्षेमधन्वा हुआ ।५७

तस्य पुत्रोऽभवद्वीरो देवानीकः प्रतापवान् ।
अहीनगुस्तस्य सुतो महस्वांस्तत्सुतोऽभवत्[2] ॥५८

उसका पुत्र देवानीक प्रतापी और वीर था। उसका पुत्र अहीनगु और उसका पुत्र महस्वान् हुआ ।५८

तस्माच्चन्द्रावलोकस्तु ताराधीशश्च[3] तत्सुतः ।
ताराधीशाच्चन्द्रगिरिर्भानुवित्तस्ततोऽभवत् ॥५९

उससे चन्द्रावलोक हुआ और उसका पुत्र ताराधीश हुआ। ताराधीश से चन्द्रगिरि और उससे भानुवित्त हुआ ।५९

श्रुतायुरभवत्तस्मादेते वेश्वाकुवंशजाः ।
सर्वे प्राधान्यतः प्रोक्ताः समासेन द्विजोत्तमाः ॥६०

उससे श्रुतायु हुआ। ये सब इक्ष्वाकु के वंशज थे। द्विजश्रेष्ठो ! ये सब संक्षेप में मुख्य रूप से बताये गये हैं ।६०

य इमं शृणुयान्नित्यमिक्ष्वाकोर्वंशमुत्तमम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो देवलोके[4] महीयते ॥६१

जो इस इक्ष्वाकु के उत्तम वंश का नित्य श्रवण करेगा, वह सब पापों से मुक्त हो कर देवलोक में पूजित होता है ।६१

इति श्रीकूर्मपुराणे इक्ष्वाकुवंशवर्णनं नाम ×एकविंशोऽध्यायः ॥२१

श्रीकूर्मपुराण में इक्ष्वाकुवंशवर्णन नामक इक्कीसवाँ अध्याय समाप्त ॥२१॥

●

---

१. नलस्तु निषधस्याभूदिति पा० । २. सहस्त इति, सहस्वानिति, सहस्रांशुःसुतोभवदिति च पा० । ३. तारापीडस्तु इति पा० । ४. स्वर्गलोके । ×विंशोऽध्यायः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वाविंशोऽध्यायः

सूत[1] उवाच

ऐलः पुरूरवाश्चाथ राजा राज्यमपालयत् ।
तस्य पुत्रा बभूवुर्हि षडिन्द्रसमतेजसः[2] ॥१

सूत बोले—अनन्तर इलापुत्र पुरूरवा राज्य का पालन करने लगा। उसके इन्द्र के समान तेजस्वी छह पुत्र हुए।१

आयुर्मायुरमायुश्च विश्वायुश्चैव वीर्यवान् ।
शतायुश्च श्रुतायुश्च दिव्याश्चैवोर्वशीसुताः ॥२

आयु, मायु, अमायु, शक्तिशाली विश्वायु, शतायु, और श्रुतायु। ये सब दिव्य एवं उर्वशी के पुत्र थे।२

आयुषस्तनया वीराः पञ्चैवासन्महौजसः ।
स्वर्भानुतनयायां वै प्रभायामिति नः श्रुतम् ॥३

आयु के पाँच ही महान् तेजस्वी वीर पुत्र स्वर्भानु की पुत्री प्रभा से उत्पन्न हुए थे, ऐसा हमने सुना है।३

नहुषः प्रथमस्तेषां धर्मज्ञो लोकविश्रुतः ।
नहुषस्य तु दायादाः पञ्चेन्द्रोपमतेजसः[3] ॥४
उत्पन्नाः पितृकन्यायां विरजायां महाबलाः ।
यातिर्ययातिः[4] संयातिरायातिः पञ्चमोऽश्वकः ॥५

उनमें नहुष पहला पुत्र था, जो धर्मज्ञाता एवं लोकविख्यात था। नहुष के इन्द्र के समान तेजस्वी पाँच महाबली पुत्र पितरों की कन्या विरजा से उत्पन्न हुए—याति, ययाति, संयाति, आयाति और पाँचवाँ अश्वक।४-५।

तेषां ययाति पञ्चानां महाबलपराक्रमः ।
देवयानीमुशनसः सुतां भार्यामवाप सः ॥६

---

१. रोमहर्षण उवाचेति पा०। २. षडिन्द्रोपमतेजस इति पा०। ३. पञ्चासन्नमितौजसः इति, षडिन्द्रोपमतेजस इति पा०। ४. यतिरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन पाँचों में ययाति महाबल पराक्रमी था। उसने शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी को पत्नी रूप में प्राप्त किया ।६

शर्मिष्ठामासुरीञ्चैव तनयां वृषपर्वणः ।
यदुञ्च तुर्वसुञ्चैव देवयानी व्यजायत[1] ॥७

उसने असुर वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा को भी पत्नी बना लिया। देवयानी ने यदु और तुर्वसु को उत्पन्न किया ।७

द्रुह्युञ्चानुञ्च पूरुञ्च शर्मिष्ठा चाप्यजीजनत् ।
सोऽभ्यषिञ्चदतिक्रम्य ज्येष्ठं यदुमनिन्दितम् ॥८

पुरुमेव कनीयांसं पितुर्वचनपालकम् ।
दिशि दक्षिणपूर्वस्यां तुर्वसुं पुत्रमादिशत् ॥९

शर्मिष्ठा ने भी द्रुह्यु, अनु और पुरु को जन्म दिया। ययाति ने अनिन्दित ज्येष्ठ पुत्र यदु का उल्लंघन करके पिता के वचन का पालन करने वाले कनिष्ठ पुत्र पूरु का ही राज्याभिषेक किया और दक्षिण-पूर्व दिशा का राज्य तुर्वसु को सौंपा ।८-९।

दक्षिणापरयो राजा यदुं श्रेष्ठं[2] न्ययोजयत् ।
प्रतीच्यामुत्तरायाञ्च द्रुह्युञ्चानुमकल्पयत् ॥१०

राजा ने दक्षिण और पश्चिम दिशा के भाव में श्रेष्ठ पुत्र यदु को नियुक्त किया। पश्चिम और उत्तर दिशा में द्रुह्य और अनु को प्रतिष्ठित किया ।१०

तैरियं पृथिवी सर्वा धर्मतः परिपालिता ।
राजापि दारसहितो वनं प्राप महायशाः ॥११

वे राजा सम्पूर्ण पृथिवी का धर्मपूर्वक पालन करने लगे और महायशस्वी राजा ययाति पत्नी सहित वन को चले गये ।११

यदोरप्यभवन् पुत्राः पञ्च देवसुतोपमाः ।
सहस्रजित्तथा श्रेष्ठः[3] क्रोष्टुर्नीलो जिनो रघुः ॥१२

यदु के भी देवपुत्र के समान पाँच पुत्र हुए। उनमें सहस्रजित् श्रेष्ठ था और शेष चार थे—क्रोष्टु, नील, जिन और रघु ।१२

सहस्रजित्सुतस्तद्वच्छतजिन्नाम पार्थिवः ।
सुताः शतजितोऽप्यासंस्त्रयः परमधार्मिकाः ॥१३

---

१. अत्र अन्तर्भूतण्यन्तत्वादजनयदित्येवार्थः। २. दक्षिणापरयोः—दक्षिणस्यामपरस्याञ्च दिशि इत्यर्थः। ३. ज्येष्ठमयोजयत्। ४. ज्येष्ठः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहस्रजित् का पुत्र था शतजित् नामक राजा और शतजित् के परम धार्मिक ये तीन पुत्र हुए ।१३

हैहयश्च हयश्चैव राजा वेणुहयश्च यः ।
हैहयस्याभवत्पुत्रो धर्म इत्यभिविश्रुतः ॥१४

हैहय, हय और राजा वेणुहय । हैहय का पुत्र धर्म नाम से विख्यात हुआ ।१४

तस्य पुत्रोऽभवद्विप्रा धर्मनेत्रः प्रतापवान् ।
धर्मनेत्रस्य कीर्त्तिस्तु सञ्जितस्तत्सुतोऽभवत्[1] ॥१५

विप्रवृन्द ! धर्म का पुत्र प्रतापी धर्मनेत्र हुआ । धर्मनेत्र का पुत्र कीर्ति और उसका पुत्र सञ्जित हुआ ।१५

महिष्मः[2] सञ्जितस्याभूद्भद्रश्रेण्यस्तदन्वयः ।
भद्रश्रेण्यस्य दायादो दुर्दमो नाम पार्थिवः ॥१६

सञ्जित का पुत्र महिष्म और उसका पुत्र भद्रश्रेण्य हुआ । भद्रश्रेण्य का पुत्र दुर्दम नामक राजा हुआ ।

दुर्दमस्य सुतो धीमानन्धको[3] नाम वीर्यवान् ।
अन्धकस्य तु दायादाश्चत्वारो लोकसंमताः ॥१७
कृतवीर्यः कृताग्निश्च कृतवर्मा च[4] तत्सुतः ।
कृतौजाश्च चतुर्थोऽभूत्कार्त्तवीर्यस्तथार्जुनः[5] ॥१८

दुर्दम का पुत्र धीमान् तथा शक्तिमान् अन्तक हुआ । अन्धक के चार लोकप्रसिद्ध पुत्र हुए—कृतवीर्य, कृताग्नि, कृतवर्मा और चौथा कृतौजा । कृतवीर्य का कार्त्तवीर्यार्जुन नामक पुत्र हुआ ।१७-१८।

सहस्रबाहुर्द्युतिमान्धनुर्वेदविदां वरः ।
तस्य रामोऽभवन्मृत्युर्जामदग्न्यो जनार्दनः ॥१९

वह सहस्र भुजाओं से सम्पन्न, द्युतिमान् तथा धनुर्वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ था । जमदग्नि के पुत्र भगवान् परशुराम ने उसे निहत किया था ।१९

तस्य पुत्रशतान्यासन्पञ्च तत्र महारथाः ।
कृतास्त्रा बलिनः शूरा धर्मात्मानो मनस्विनः ॥२०

---

१. संज्ञित इति पा० । २. महिष्मानिति पा० । ३. धीमान्धेनुको । ४. तथैव च इति पा० । ५. कार्त्तवीर्यार्जुनोऽभवदिति, कार्तवीर्यो यथार्जुनः इति च पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूरश्च शूरसेनश्च कृष्णो[1] धृष्णस्तथैव च ।
जयध्वजश्च बलवान्नारायणपरो नृपः ॥२१

कार्तवीर्यार्जुन के सैकड़ों पुत्र थे, जिनमें पाँच महारथी, अस्त्र चलाने में निपुण, बली, वीर, धर्मात्मा और मनस्वी थे। उनके नाम थे—शूर, शूरसेन, कृष्ण, धृष्ण और जयध्वज। इनमें जयध्वज बलवान् तथा नारायणपरायण राजा हुआ।२०-२१।

शूरसेनादयः पूर्वे चत्वारः प्रथितौजसः ।
रुद्रभक्ता महात्मानः पूयजन्ति स्म शङ्करम् ॥२२

शूरसेन आदि प्रथम चार राजा प्रसिद्धपराक्रमी, रुद्रभक्त और महात्मा थे। वे शंकर की उपासना करते थे।२२

जयध्वजस्तु मतिमान्देवं नारायणं हरिम्[2] ।
जगाम शरणं विष्णु दैवतं धर्मतत्परः ॥२३

बुद्धिमान् एवं धर्मपरायण जयध्वज भगवान् नारायण हरि के शरणापन्न हो विष्णु देवता की उपासना करता था।२३

तमूचुरितरे पुत्रा नायं धर्मस्तवानघ ।
ईश्वराराधनरतः पितास्माकमिति श्रुतिः ॥२४

उससे अन्य पुत्रों ने कहा—हे निष्पाप! तुम्हारा यह धर्म नहीं है। हमारे पिताजी शंकर की आराधना में निरत रहते थे, ऐसा सुना जाता है।२४

तानब्रवीन्महातेजा ह्येष धर्मः परो मम ।
विष्णोरंशेन सम्भूता राजानो ये महीतले ॥२५

उनसे महातेजा जयध्वज ने कहा—यह मेरा परम धर्म है। पृथ्वी पर जितने राजा हुए हैं, वे विष्णु के अंश से उत्पन्न हुए हैं।२५

राज्यं पालयितावश्यं[3] भगवान्पुरुषोत्तमः ।
पूजनीयोऽजितो[4] विष्णुः पालको जगतां हरिः ॥२६

भगवान् पुरुषोत्तम राज्य का अवश्य पालन करेंगे। संसार के पालक हरि एवं अजित विष्णु पूजनीय हैं।२६

सात्त्विको राजसी चैव तामसो च स्वयं[5] प्रभुः ।
तिस्रस्तु मूर्त्तयः प्रोक्ताः सृष्टिस्थित्यन्तहेतवः[6] ॥२७

---

१. धृष्टः कृष्ण इति पा०। २. प्रभुम्। ३. पालयितापूर्वं। ४. पूजनीयश्च प इति पा०। ५. स्वयम्भुव इति पा०। ६. मूर्तयः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभु की सृष्टि, स्थिति और प्रलय की हेतुभूत तीन प्रकार की मूर्तियाँ हैं—सात्त्विकी, राजसी और तामसी ।२७

सत्त्वात्मा[1] भगवान्विष्णुः संस्थापयति सर्वदा ।
सृजेद्ब्रह्मा रजोमूर्त्तिः संहरेत्तामसो हरः ॥२८

सत्त्व स्वरूप भगवान् विष्णु सर्वदा सृष्टि की स्थापना करते हैं । रजोमूर्ति ब्रह्मा सृष्टि करते हैं और तामस महेश संहार करते हैं ।२८

तस्मान्महीपतीनान्तु राज्य पालयतामिदम्[2]
आराध्यो भगवान्विष्णुः केशवः केशिमर्दनः ॥२९

इसलिए इस राज्य का पालन करते हुए राजाओं के आराध्य केशिहन्ता केशव भगवान् विष्णु हैं ।२९

निशम्य तस्य वचनं भ्रातरोऽन्ये मनस्विनः ।
प्रोचुः संहारको[3] रुद्रः पूजनीयो मुमुक्षुभिः ॥३०

उसका वचन सुनकर दूसरे जो मनस्वी भाई थे वे बोल पड़े —मुमुक्षु जनों को संहारक रुद्र की पूजा करनी चाहिए ।३०

अयं हि भगवान्रुद्रः सर्वं जगदिदं शिवः ।
तमोगुणं समाश्रित्य कालान्ते[4] संहरेत्प्रभुः ॥३१

ये भगवान् रुद्र शिव कालान्त (कल्पान्त) में तमोगुण का आश्रय लेकर इस सम्पूर्ण जगत् का संहार कर देते हैं ।३१

या सा घोरतमा मूर्त्तिरस्य तेजोमयी परा[5] ।
संहरेद्विद्यया पूर्वं[6] संसारं[7] शूलभृत्तया ॥३२

उनकी जो अत्यन्त घोर तेजोमयी परम विद्या मूर्ति है, उससे शंकर संसार का संहार करते हैं ।३२

ततस्तानब्रवीद्राजा[8] विचित्यासौ जयध्वजः ।
सत्त्वेन मुच्यते जन्तुः सत्त्वात्मा भगवान्हरिः ॥३३

तदनन्तर राजा जयध्वज ने सोचकर उन लोगों से कहा—सत्त्वगुण से प्राणी मुक्त हो जाता है और भगवान् हरि सत्त्वस्वरूप हैं ।३३

तमूचुर्भ्रातरो रुद्रः सेवितः सात्त्विकैर्जनैः ।
मोचयेत्सत्त्वसंयुक्तः[9] पूजयेत्सततं हरम् ॥३४

---

१. सर्वात्मा । २. मयम् । ३. संहारकृद्रुद्रः इति पा० । ४. कल्पान्ते । ५. शुभा । ६. सर्वमिति । ७. संसारे मूलभूतया । ८. नब्रवीत्सर्वान् प्रयतात्मा । ९. मोचयेत्सत्त्वसंयुक्तं पूजितः शंकरो हरः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे भाइयों ने कहा—सात्त्विक लोग रुद्र की सेवा करते हैं। सत्त्वसंयुक्त मनुष्य सर्वदा शंकर का पूजन करके अपने को मुक्त कराये।३४

अथाब्रवीद्राजपुत्रः प्रहसन्वै[1] जयध्वजः।
स्वधर्मो[2] मुक्तये मुक्तो नान्यो मुनिभिरिष्यते ॥३५

इसके बाद राजपुत्र जयध्वज ने हँसते हुए कहा—मुक्ति के लिए अपना धर्म समीचीन होता है, दूसरा नहीं—ऐसा मुनियों को अभीष्ट है।३५

तथा च वैष्णवीं शक्तिं नृपाणान्दधतां[3] सदा।
आराधनं परो धर्मो मुरारेरमितौजसः ॥३६

इसलिए वैष्णवी शक्ति का सदा धारण करते हुए राजाओं के लिए अमित तेजस्वी विष्णु की आराधना करना परम धर्म है।३६

तमब्रवीद्राजपुत्रः कृष्णो मतिमतां वरः।
यदर्जुनोऽस्मज्जनकः स धर्मं कृतवानिति ॥३७

तब बुद्धिमानों में श्रेष्ठ राजपुत्र कृष्ण ने उससे कहा—हमारे पिता अर्जुन ने जिसका अनुष्ठान किया, वही हमारा धर्म हैं।३७

एवं विवादे विततेशूरसेनोऽब्रवीद्वचः।
प्रमाणमृषयो ह्यत्र ब्रूयुस्ते तत्तथैव[4] तत् ॥३८

इस प्रकार विवाद बढ़ जाने पर शूरसेन ने यह वचन कहा—इस विषय में प्रमाण ऋषि लोग हैं। वे जो कहें वही हमें करना है।३८

ततस्ते राजशार्दूलाः पप्रच्छुर्ब्रह्मवादिनः।
गत्वा सर्वे सुसंरब्धाः सप्तर्षीणां तदाश्रमम्[5] ॥३९

तदनन्तर उन राजश्रेष्ठों ने ब्रह्मवादियों से पूछा और सब अत्यन्त उत्साहित होकर सप्तर्षियों के आश्रम में पहुँचे।३९

तानब्रुवंस्ते मुनयो वसिष्ठाद्या यथार्थतः।
या यस्यामिमता पुंसः सा हि तस्यैव देवता ॥४०

वसिष्ठ आदि मुनियों ने उनसे यथार्थतः बताया कि जिस देवता में जिसकी अभिरुचि हो, वही उसका उपास्य देव है।४०

किन्तु कार्यविशेषेण[6] पूजिता चेष्टदा नृणाम्।
विशेषात्सर्वदा नार्यं नियमो ह्यन्यथा नृपाः ॥४१

---

१. सह सत्त्वैरिति पा०। २. पन्था इति, अधर्म्ममुक्तये मुक्त इति पा०। ३. देवसंमतम्। ४. यत्तथैव इति पा०। ५. तदाश्रयमिति पा०। ६. धर्मविशेषेण।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु कार्य विशेष से पूजित होने पर देवता मनुष्यों का इष्ट-साधन करते हैं। नृपगण ! कार्यविशेष व्यतीत हो जाने पर सब समय ऐसा हो यह नियम नहीं है।४१

नृपाणां दैवतं विष्णुस्तथेशश्च[1] पुरन्दरः।
विप्राणामग्निरादित्यो ब्रह्मा चैव पिनाकधृक्[2] ॥४२

राजाओं के देवता विष्णु, शंकर और इन्द्र हैं। ब्राह्मणों के देवता अग्नि, सूर्य, ब्रह्मा और शंकर हैं।४२

देवानां दैवतं विष्णुर्दानवानां त्रिशूलधृक्[3]।
गन्धर्वाणां तथा सोमो यक्षाणामपि कथ्यते ॥४३

देवों के देवता विष्णु और दानवों के देवता त्रिशूलधारी (शिव) हैं। चन्द्रमा गन्धर्वों और यक्षों के भी देवता कहे जाते हैं।

विद्याधराणां वाग्देवी सिद्धानां भगवान् हरिः।
रक्षसां शंकरो रुद्रः किन्नराणाञ्च पार्वती ॥४४

सरस्वती विद्याधरों की और भगवान् हरि सिद्धों के और शंकर रुद्र राक्षसों के देवता माने जाते हैं। पार्वती किन्नरों की देवता हैं।४४

ऋणीणां भगवान्[4] ब्रह्मा महादेवस्त्रिशूलभृत्।
मान्या स्त्रीणामुमा[5] देवी तथा विष्ण्वीशभास्कराः[6] ॥४५

ऋषियों के देवता भगवान् ब्रह्मा और त्रिशूलधारी महादेव हैं। स्त्रियों के देवता विष्णु, शिव, सूर्य तथा पार्वती देवी हैं।४५

गृहस्थानाञ्च सर्वे स्युर्ब्रह्म[1] वै ब्रह्मचारिणाम्।
वैखानसानामर्कः स्याद्यतीनां च महेश्वरः ॥४६

गृहस्थों के देवता सब हैं। ब्रह्मचारियों के देवता ब्रह्म, वानप्रस्थियों के सूर्य और संन्यासियों के देवता महेश्वर हैं।४६

भूतानां भगवान्रुद्रः कूष्माण्डानां विनायकः।
सर्वेषां भगवान् ब्रह्मा देवदेवः प्रजापतिः ॥४७

भूतों के भगवान् रुद्र और कूष्माण्डों के देवता विनायक हैं। देवेश्वर प्रजापति भगवान् ब्रह्मा सबके देवता है।४७

---

१. तथैव चेति पा०। २. त्रिशूलभृदिति पा०। ३. देवतं। ४. मनूनां स्यादुमा इति पा०। ५. विष्णुः सभास्करः इति पा०। ६. ब्रह्मा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्येवं भगवान् ब्रह्मा स्वयं देवो ह्यभाषत ।
तस्माज्जयध्वजो नूनं विष्ण्वाराधनमर्हति ॥४८

ऐसा भगवान् ब्रह्मा ने स्वयं कहा है। इसलिए जयध्वज निश्चित रूप से विष्णु की आराधना करने के अधिकारी हैं।४८

किन्तु रुद्रेण तादात्म्यं बुध्वा पूज्यो हरिर्नरैः ।
अन्यथा नृपतेः शत्रुं न हरिः संहरेद्यतः ॥४९

किन्तु रुद्र के साथ विष्णु का तादात्म्य समझकर मनुष्य हरि की आराधना करे। अन्यथा राजा के शत्रु का नाश हरि नहीं करेंगे।४९

सम्प्रणम्याथ[1] ते जग्मुः पुरीं परमशोभनाम् ।
पालयाञ्चक्रिरे पृथ्वीञ्जित्वा सर्वान्निपूर्णे ॥५०

अनन्तर वे (राजागण) प्रणाम करके अपने परम सुन्दर नगरी में चले गये और युद्ध में शत्रुओं को जीतकर पृथ्वी का पालन करने लगे।५०

ततः कदाचिद्विप्रेन्द्रा विदेहो नाम दानवः ।
भीषणः सर्वसत्त्वानां पुरीं[2] तेषां समाययौ ॥५१

हे विप्रेन्द्रगण ! तदन्तर एक बार सभी प्राणियों के लिए भीषण विदेह नामक दानव उनके नगर में गये।५१

दंष्ट्राकरालो दीप्तात्मा युगान्तदहनोपमः ।
शूलमादाय सूर्याभं नादयन्वै दिशो दश ॥५२

वह अपनी दंष्टा से भयंकर, प्रदीप्त शरीर तथा प्रलयकालिक अग्नि के सदृश था। सूर्य के समान चमकते हुए त्रिशूल लेकर दसो दिशाओं को शब्दायमान करता हुआ वह चल रहा था।५२

तन्नादश्रवणान्मर्त्यास्तत्र ये निवसन्ति ते ।
तत्यजुर्ज्जीवितं त्वन्येदुद्रुवुर्भयविह्वलाः ॥५३

वहाँ जो मनुष्य निवास कर रहे थे, वे उसके नाद सुनने से प्राणत्याग करने लगे। कुछ लोग भयविह्वल हो भागने लगे।५३

ततः सर्वे सुसंयत्ताः कार्त्तवीर्यात्मजास्तदा[3] ।
शूरसेनादयः पञ्च राजानस्तु महाबलाः ॥५४

---

१. तान् प्रणम्याथ इति पा०। २. पुरमिति पा०। ३. कार्त्तवीर्यार्जुनात्मजा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब कृतवीर्य के पुत्र शूरसेन आदि पाँच महाबली राजा सब युद्ध के लिए सुसज्जित हो गये ।५४

युयुधुर्दानवं शक्तिगिरिकूटासिमुद्गरैः ।
तान् सर्वान्[1] स हि विप्रेन्द्राः शूलेन प्रहसन्निव ॥५५

वे शक्ति, गिरिकूट, तलवार तथा मुद्गर लेकर दानव के प्रति दौड़े। विप्रेन्द्रो! उस उस दानव ने शूल से मानो परिहास करते हुए उन सबको हतप्रभ कर दिया ।५५

युद्धाय कृतसंरम्भा विदेहं त्वभिदुद्रुवुः ।
शूरोऽस्त्रं प्राहिणोद्रौद्रं शूरसेनस्तु वारुणम् ॥५६

वे पाँचो राजा युद्ध के लिए उत्साहित होकर आक्रमण करने लगे। शूर ने रौद्र-अस्त्र को और शूरसेन ने वारुण अस्त्र छोड़ा ।५६

प्राजापत्यं तथा कृष्णो वायव्यं धृष्ण एव च ।
जयध्वजश्च कौबेरमैन्द्रमाग्नेयमेव च ॥५७

कृष्ण ने प्रजापत्य अस्त्र को, धृष्ण ने वायव्य को और जयध्वज ने कौबेर, ऐन्द्र और आग्नेय अस्त्र को चलाया ।५७

भञ्जयामास[2] शूलेन तान्यस्त्राणि स दानवः ।
ततः कृष्णो महावीर्यो गदामादाय भीषणाम् ॥५८

उस दानव ने उन अस्त्रों को अपने शूल से तोड़ दिया। तदनन्तर महाशक्तिशाली कृष्ण ने अपनी भयंकर गदा उठा ली ।५८

स्पृष्टमात्रेण[3] तरसा चिक्षेप च ननाद च ।
सम्प्राप्य सा गदास्योरो विदेहस्य शिलोपमम् ॥५९

न दानवञ्चालयितुं शशाकान्तकसन्निभम् ।
दुद्रुवुस्ते भयग्रस्ता दृष्ट्वा तस्यातिपौरुषम् ॥६०

छूते ही वेग से उसे फेंक दिया और गरजने लगा। वह गदा चट्टान के समान उस विदेह की छाती पर गिरकर यमराज के सदृश उस दानव को विचलित न कर सकी। उसका अति पौरुष देखकर राजा लोग भयभीत होकर भाग गये ।५९-६०।

जयध्वजस्तु मतिमान् सस्मार जगतः पतिम् ।
विष्णुं जयिष्णुं लोकादिमप्रमेयमनामयम् ॥६१

---

१. सर्वान् दानवो विप्राः शूलेन प्रहसन्निव। वारयामास घोरात्मा कल्पान्ते भैरवो यथा। शूरसेनादयः पञ्च राजानस्तु महाबलाः इति पा०। २. जंभयामास। ३. सृष्ट्वा मन्त्रेण इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रातारं पुरुषं पूर्वं[1] श्रीपतिं पीतवाससम् ।
ततः प्रादुरभूच्चक्रं सूर्यायुतसमप्रभम् ॥६२

बुद्धिमान् जयध्वज संसार पति, के जयशील, लोक के आदि, अप्रमेय, क्लेशरहित, रक्षक, पूर्व पुरुष, लक्ष्मीपति, पीताम्बर विष्णु का स्मरण करने लगा। तब दस हजार सूर्य के समान चमकने वाला सुदर्शन चक्र प्रकट हुआ ।६१-६२।

आदेशाद्वासुदेवस्य भक्तानुग्रहणात्तदा[2] ।
जग्राह जगतां योनिं स्मृत्वा नारायणं नृपः ॥६३

भक्तों पर अनुग्रह करने के लिए वासुदेव की आज्ञा से आये हुए उस चक्र को राजा ने जगत् के उत्पत्तिस्थल नारायण का स्मरण करने के उपरान्त ग्रहण कर लिया ।६३

प्राहिणोद्वै विदेहाय दानवेभ्यो यथा हरिः ।
सम्प्राप्य तस्य घोरस्य स्कंधदेशं सुदर्शनम् ॥६४
पृथिव्यां पातयामास शिरोऽद्रिशिखराकृति ।
तस्मिन् हते देवरिपौ सूराद्या भ्रातरो नृपाः ॥६५

विदेह के ऊपर चक्र को छोड़ दिया जैसे विष्णु दानवों पर छोड़ते हैं। उस भयंकर दानव के स्कन्धप्रदेश को पाकर चक्र ने पहाड़ की चोटी के समान उसके शिर को भूमि पर गिरा दिया। उस देवशत्रु के निहत हो जाने पर शूर आदि भ्रातृ-भूपति प्रसन्न हुए ।६४-६५।

तद्धि चक्रं पुरा विष्णुस्तपसाराध्य शंकरम् ।
यस्मादवाप तत्तस्मादसुराणां विनाशकम् ॥६६

पूर्वकाल में विष्णु ने तपस्या से शंकर की आराधना करके उस चक्र को जिस लिए प्राप्त किया था इसलिए वह चक्र असुरों का विनाशक है ।६६

समाययुः पुरीं रम्यां भ्रातरञ्चाप्यपूजयन् ।
श्रुत्वा जगाम भगवाञ्जयध्वजपराक्रमम्[3] ॥६७
कार्त्तवीर्यसुतं द्रष्टुं विश्वामित्रो महामुनिः ।
तमागतमथो दृष्ट्वा राजा सम्भ्रान्तलोचनः[4] ॥६८

वे राजा लोग रमणीय पुरी में पहुँचे और भाई का पूजन किया। जयध्वज का पराक्रम सुनकर महामुनि भगवान् विश्वामित्र कार्तवीर्य के पुत्र को देखने के लिए आये। उनको आये देखकर राजा की आँखें घबराहट के कारण चंचल हो गईं ।६७-६८।

---

१. सर्वमिति पा० । २. भक्तानुग्रहकारणादिति पा० । ३. कृत्वा जयपराक्रममिति पा० । ४. सम्भ्रान्तमानस इति, मयास्त्रेण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समावेश्यासने रम्ये पूजयामास भावतः ।
उवाच भगवन् घोरः प्रसादाद्भवतोऽसुरः ॥६९
निपातितो मया सोऽथ[1] विदेहो दानवेश्वरः ।
त्वद्वाक्याच्छिन्नसन्देहो विष्णुं सत्यपराक्रमम् ॥७०
प्रपन्नः शरणं तेन प्रसादो मे कृतः शुभः ।
यक्ष्यामि[2] परमेशानं विष्णुं पद्मदलेक्षणम् ॥७१

श्रद्धाभाव से उन्हें रमणीय आसन पर बैठाकर पूजा की और कहा—भगवन्! आपकी कृपा से मैंने दानवेश्वर विदेह नामक असुर को मार गिराया है। आपके वाक्य से मेरा सन्देह दूर हो गया। मैं सत्यपराक्रमी विष्णु की शरण में प्राप्त हूँ। उन्होंने मुझ पर मंगलमयी कृपा की है। मैं कमलपत्र के समान नेत्र वाले परम प्रभु विष्णु का यजन करूँगा ।६९-७१।

कथं केन विधानेन[3] सम्पूज्यो हरिरीश्वरः ।
कोऽयं नारायणो देवः किंप्रभावश्च सुव्रत ॥७२

किस प्रकार किस विधि से ईश्वर हरि का पूजन करना चाहिए? उत्तमव्रती ये नारायणदेव कौन हैं? इनका क्या प्रभाव है? ।७२

सर्वमेतन्ममाचक्ष्व परं कौतूहलं हि मे ।
जयध्वजस्य वचनं श्रुत्वा शान्तो मुनिस्ततः ।
दृष्ट्वा हरौ परां भक्तिं विश्वामित्र उवाच ह ॥७३

यह सब मुझे बता दें? मुझे बड़ा कुतूहल हो रहा है? तब जयध्वज का वचन सुनकर और विष्णु के प्रति राजा की परा भक्ति जानकर शान्त मुनि विश्वामित्र ने कहा ।७३

विश्वामित्र उवाच

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां यस्मिन्सर्वं यतो जगत् ॥७४
स विष्णुः सर्वभूतात्मा तमाश्रित्य विमुच्यते ।
यमक्षरात्परतरात्परं प्राहुर्गुहाश्रयम्[4] ॥७५

विश्वामित्र बोले—जिनसे प्राणियों की उत्पत्ति होती है और जिनमें सम्पूर्ण जगत् स्थित है, वे सर्वभूतात्मा विष्णु हैं। उनका आश्रय लेने से मुक्ति मिलती है। उन्हें तत्त्ववेत्ता लोग परतर ब्रह्म की अपेक्षा श्रेष्ठ तथा गुहास्थित कहते हैं ।७४-७५।

१. संख्ये इति पा०। २. पश्यामि। ३. प्रकारेण इति पा०। ४. गुहाशया इति, यमक्षरात्क्षराच्चैव परं प्राहुर्गुहाशयमिति पा०। गुहा मनीषिणां परिशुद्धा बुद्धिरिति शङ्करभाष्ये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनन्दं परमं व्योम स वै नारायणः स्मृतः ।
नित्योदितो निर्विकल्पो नित्यानन्दो निरञ्जनः[1] ॥७६

चतुर्व्यूहधरो विष्णुरव्यूहः प्रोच्यते स्वयम्[2] ।
परमात्मा परन्धाम परं व्योम परं पदम् ॥७७

उन्हें परमानन्दमय एवं व्योमस्वरूप भी कहते हैं। वे ही नारायण कहे गये हैं। वे नित्योदित, निर्विकल्प, नित्यानन्द, निरञ्जन, चतुर्व्यूहधर, विष्णु तथा स्वयं अव्यूह कहे जाते हैं। वे परमात्मा, परम धाम, परमाकाशमय तथा परम पद हैं।७६-७७।

त्रिपादमक्षरं ब्रह्म तमाहुर्ब्रह्मवादिनः[3] ।
स वासुदेवो विश्वात्मा योगात्मा पुरुषोत्तमः ॥७८

ब्रह्मवादी ऋषि उनको त्रिपाद अक्षर ब्रह्म कहते हैं। वे विश्वात्मा, योगात्मा, पुरुषोत्तम वासुदेव हैं।७८

यस्यांशसम्भवो[4] ब्रह्मा रुद्रोऽपि परमेश्वरः ।
स्ववर्णाश्रमधर्मेण[5] पुंसां यः पुरुषोत्तमः ॥७९

अकामाद्व्रतभावेन[6] समाराध्यो न चान्यथा ।
एतावदुक्त्वा भगवान्विश्वामित्रो महातपाः ॥८०

शूराद्यैः पूजितो विप्रो जगामाथ स्वमाश्रमम् ।

जिनके अंश से ब्रह्मा तथा परमेश्वर रुद्र भी उत्पन्न हुए हैं। अपने वर्णाश्रमधर्म के के अनुसार मनुष्य कामनारहित व्रतभाव से उन पुरुषोत्तम को आराधना करे अन्यथा नहीं। इतना कहकर महातपस्वी भगवान् विश्वामित्र शूर आदि राजाओं से पूजित कर अपने आश्रम को चले गये।७९-८०½।

अथ शूरादयो देवमयजन्त महेश्वरम् ॥८१
यज्ञेन यज्ञगम्यं तं निष्कामा रुद्रमव्ययम् ।
तान्वसिष्ठस्तु भगवान्याजयामास धर्मवित् ॥८२

अनन्तर शूर आदि राजा लोग यज्ञ द्वारा प्राप्य, अविनाशी, रुद्र, महेश्वर की यज्ञ द्वारा आराधना करने लगे। धर्मवेत्ता भगवान् वसिष्ठ ने उन लोगों को यज्ञ कराया।८१-८२।

गौतमोऽगस्तिरात्रिश्च सर्वे रुद्रपराक्रमाः[7] ।
विश्वामित्रस्तु भगवान्जयध्वजमरिन्दमम् ॥८३

---

१. निरामयः। २. बुधैः। ३. वेंद। ४. यस्याङ्गादभवद्ब्रह्मा। ५. सवर्णाश्रमधर्मेण इति पा०। ६. रुद्रस्यायं परा मूर्त्तिरिति, अकामहतभावेन इति, अकामाहृतभावेन इति पा०। ७. रुद्रपरायणा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याजयामास भूतादिमादिदेवं जनार्दनम् ।
तस्य यज्ञे महायोगी साक्षाद्देवः स्वयं हरिः ॥८४
आविरासीत्स भगवान्तदद्भुतमिवाभवत् ॥८५

उनके यज्ञ कराने वाले ये मुनि भी थे—गौतम, अगस्ति और अत्रि। ये सब रुद्र-परायण थे। भगवान् विश्वामित्र ने शत्रुदमनकारी जयध्वज को यज्ञ कराया, जिसमें भूतों के आदि तथा आदिदेव जनार्दन की आराधना करायी। उसके यज्ञ में महायोगी, साक्षात् देव, स्वयं भगवान् हरि प्रकट हुए। यह अद्भुत बात हुई।८३-८५।

जयध्वजोऽपि तं विष्णुं रुद्रस्य परमां तनुम् ।
इत्येवं सर्वदा बुद्ध्वा यत्नेनायजदच्युतम् ॥८६

जयध्वज ने भी उन विष्णु को रुद्र का उत्तम शरीर सदा समझकर यत्नपूर्वक अच्युत का यजन किया।८६

य इमं शृणुयान्नित्यं जयध्वजपराक्रमम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥८७

जो नित्य इस जयध्वज-पराक्रम का वर्णन सुनेगा, वह समस्त पापों से मुक्त हो कर विष्णुलोक को प्राप्त करेगा।८७

इति श्रीकूर्मपुराणे सोमवंशानुकीर्त्तनं नाम × द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२

श्री कूर्मपुराण में चन्द्रवंशानुकीर्तन नामक बाईसवाँ अध्याय समाप्त ॥२२॥

× एकविंशोध्यायः लि० पु०
कू० पु० १८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रयोविंशोऽध्यायः

सूत उवाच

जयध्वजस्य पुत्रोऽभूत्तालजङ्घ इति स्मृतः ।
शतं पुत्रास्तु तस्यासन्तालजङ्घा इति[1] स्मृताः ॥१

सूत बोले—जयध्वज का पुत्र तालजंघ नाम से प्रसिद्ध हुआ। तालजंघ के सौ पुत्र हुए जो तालजंघ कहलाये।१

तेषां ज्येष्ठो महावीर्यो वीतिहोत्रोऽभवन्नृपः ।
वृषप्रभृतयश्चान्ये यादवाः पुण्यकर्मिणः ॥२

उनमें ज्येष्ठ पुत्र महाशक्तिशाली वीतिहोत्र राजा हुआ। वृषप्रभृति अन्य यदुवंशी राजा पुण्यकर्मा हुए।२

वृषो[2] वंशकरस्तेषां तस्य पुत्रोऽभवन्मधुः ।
मधोः पुत्रशतं त्वासीद्वृषणस्तस्य[3] वंशभाक् ॥३

उनका वंश चलाने वाला वृष था। उसका पुत्र मधु हुआ। मधु के सौ पुत्र हुए। उनमें वंशधर वृषण हुआ।३

वीतिहोत्रसुतश्चापि[4] विश्रुतोऽनन्त[5] इत्यतः ।
दुर्ज्जयस्तस्य पुत्रोऽभूत्सर्वशास्त्रविशारदः ॥४

वीतिहोत्र का पुत्र विश्रुत था। उससे अनन्त उत्पन्न हुआ। उसका पुत्र दुर्जय सकल शास्त्रों में पारंगत था।४

तस्य भार्या रूपवती गुणैःसर्वैरलंकृता ।
पतिव्रतासीत्पतिना[6] स्वधर्मपरिपालिका ॥५

उसकी पत्नी रूपवती सभी गुणों से विभूषित थी। पति के साथ अपने धर्म का पालन करती हुई वह पतिव्रता थी।५

स कदाचिन्महाराजः[7] कालिन्दीतीरसंस्थिताम् ॥
अपश्यदुर्वशीं देवीं गायन्तीं मधुरश्रुतिम्[8] ॥६

---

१ प्रकीर्त्तिता इति पा०। २. वृषा इति, वृषादंश कर इति पा०। ३. कर्षण इति वृषश इति पा० पुत्रोभूत् इति,। ४. सुतश्चासीदिति पा०। ५. ऽवनिरक्षक इति, इत्युत इति पा०। ६. सत्यवती। ७. कदाचिन्महाभाग इति पा०। ८. मधुरस्वरामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः कामाहतमनास्तत्समीपमुपेत्य[1] वै ।
प्रोवाच सुचिरं कालं देवि रन्तुं मयार्हसि ॥७

उस महाराज ने किसी समय यमुना के तट पर मधुर स्वर में गाती हुई उर्वशी देवी को देखा। तदनन्तर कामपीडित मन से वह उसके समीप जाकर बोला—देवि! मैं चिरकाल तक तुमसे रमण करना चाहता हूँ।६-७।

सा देवी नृपतिं दृष्ट्वा रूपलावण्यसंयुतम् ।
रेमे तेन चिरं कालं कामदेवमिवापरम् ॥८

उस देवी ने रूप-लावण्य से युक्त दूसरे कामदेव के समान राजा को देखकर चिरकाल तक उससे रमण किया।८

कालात्प्रबुद्धो राजा[2] तामुर्वशीं प्राह शोभनाम् ।
गमिष्यामि पुरीं रम्यां हसन्तीत्यब्रवीद्वचः[3] ॥९

समय से चेतना जागने पर राजा ने सुन्दरी उर्वशी से कहा—'मैं अपनी सुन्दर नगरी को जाऊँगा।' उसने हँसकर कहा।९

न[4] ह्येतेनोपभोगेन भवतो राजसुन्दर ।
प्रीतिः सञ्जायते मह्यं स्थातव्यं वत्सरं पुनः ॥१०

हे राजसुन्दर! आपके साथ इतना संभोग करने से मेरी प्रीति बढ़ गई है। इसलिए एक वर्ष आप और रहिए।१०

तामब्रवीत्स मतिमान् गत्वा शीघ्रतरं पुरीम् ।
आगमिष्यामि भूयोऽत्र तन्मेऽनुज्ञातुमर्हसि ॥११

उससे बुद्धिमान् राजा ने कहा—'मैं नगरी में जाकर बहुत शीघ्र लौट आऊँगा। इसलिए तुम मुझे आज्ञा दो'।११

तामब्रवीत्सा सुभगा तथा कुरु विशाम्पते ।
नान्याप्सरसा तावद्रन्तव्यं भवता पुनः ॥१२

तब उर्वशी ने राजा से कहा—'राजन् ऐसा ही करें। किन्तु तब तक दूसरी अप्सरा के साथ रमण न करें'।१२

ओमित्युक्त्वा ययौ तूर्णं पुरीं परमशोभनाम् ।
गत्वा पतिव्रतां पत्नीं दृष्ट्वा भीतोऽभवन्नृपः ॥१३

---

१. कामयमानां तां स समीपमिति। २. राजासावुर्वशीमिति पा०। ३. प्राब्रवीद्वचः। ४. नह्यनेनोपभोगेनेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा 'ठीक है' कहकर अपनी परम सुन्दरी नगरी को चला गया। वहाँ पतिव्रता पत्नी को देखकर राजा भयभीत हो गया।१३

संप्रेक्ष्य सा गुणवती भार्या तस्य पतिव्रता।
भीतं[1] प्रसन्नया प्राह वाचा पीनपयोधरा ॥१४

उसकी पतिव्रता पत्नी स्थूलकुचा गुणवती ने उसे भयभीत देखकर प्रसन्नतापूर्वक कहा।१४

स्वामिन् किमत्र भवतो भीतिरद्य प्रवर्त्तते।
तद्ब्रूहि[2] मे यथातत्त्वं न राज्ञां[3] कीर्त्तयेत्त्विदम् ॥१५

स्वामिन्! आज क्यों आप भयभीत हो रहे हैं? मुझे यथार्थ बात बता दें। मैं यह किसी से नहीं कहूँगी।१५

स तस्या वाक्यमाकर्ण्य लज्जावनतमानसः।
नोवाच किञ्चिन्नृपतिर्ज्ञानदृष्ट्या विवेद सा ॥१६

राजा उसका वाक्य सुनकर लज्जा से नतमस्तक हो गया। वह कुछ भी नहीं बोला। किन्तु वह ज्ञानदृष्टि से जान गयी।१६

न भेतव्यं त्वया राजन् कार्यं[4] पापविशोधनम्।
भीते त्वयि महाराज राष्ट्रं ते नाशमेष्यति ॥१७

राजन्! आप डर मत करें[5], पाप का प्रायश्चित्त करें। महाराज आपके भयभीत रहने पर आपका राष्ट्र नष्ट हो जाएगा।१७

ततः[6] स राजा द्युतिमान्निर्गत्य तु पुरात्ततः।
गत्वा कण्वाश्रमं पुण्यं दृष्ट्वा तत्र महामुनिम् ॥१८

तदनन्तर वह राजा द्युतिमान् नगर से निकलकर कण्वाश्रम में गया। वहाँ महामुनि कण्व से मिलकर प्रायश्चित की जिज्ञासा की।१८

निशम्य[7] कण्ववदनात्प्रायश्चित्तविधिं शुभम्[8]।
जगाम हिमवत्पृष्ठं[9] समुद्दिष्टं महाबलः ॥१९

कण्व के मुख से प्रायश्चित्त का मंगलमय विधान सुनकर महाबली राजा बताये गये हिमालय के पृष्ठ पर पहुँचा।१९

---

१. भीतं प्राह प्रसन्नेवेति पा०। २. तद्ब्रवीहि यथा तत्त्वमिति, ब्रूहिमे स्वं यथातत्त्वं न भयं कर्तुमर्हसि इति च पा०। ३. रागादिति पा०। ४. कुरु। ५ तदेति पा। ६. निर्दिश्य इति पा०। ७. नृपः। ८. हिमवत्पार्श्वं समुद्दिश्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोऽपश्यत्पथि[1] राजेन्द्रो गन्धर्ववरमुत्तमम् ।
भ्राजमानं श्रिया व्योम्नि भूषितं दिव्यमालया ॥२०

उस राजेन्द्र ने मार्ग में श्रेष्ठ गन्धर्व को देखा। वह गन्धर्व आकाश में श्री से देदीप्यमान तथा दिव्य माला से विभूषित था ।२०

वीक्ष्य[2] मालाममित्रघ्नः सस्माराप्सरसं वराम् ।
उर्वशीं तां मनश्चक्रे तस्या[3] एवेयमर्हति ॥२१

शत्रुनाशक राजा ने माला को देखकर श्रेष्ठ अप्सरा उर्वशी का स्मरण करने लगा। उसने निश्चय किया कि उर्वशी की ही यह माला हो सकती है ।२१

सोऽतीव कामुको राजा गन्धर्वेणाथ तेन हि ।
चकार सुमहद्युद्धं मालामादातुमुद्यतः ॥२२

माला ले लेने में तत्पर उस अतीव कामुक राजा ने उस गन्धर्व के साथ महान् युद्ध किया ।२२

विजित्य समरे मालां गृहीत्वा दुर्ज्जयो द्विजाः ।
जगाम तामप्सरसं कालिन्दीं द्रष्टुमादरात् ॥२३

द्विजगण ! वह दुर्जय राजा समर में जीतकर माला लेकर यमुना का आदरपूर्वक दर्शन करने के लिए अप्सरा के पास गया ।२३

अदृष्ट्वाप्सरसं तत्र कामबाणाभिपीडितः ।
बभ्राम सकलां पृथ्वीं सप्तद्वीपसमन्विताम् ॥२४

वहाँ अप्सरा को न देखकर कामबाण से अत्यन्त पीडित सातो द्वीप सहित सम्पूर्ण पृथ्वी पर भ्रमण करने लगा ।२४

आक्रम्य[4] हिमवत्पार्श्वमुर्वशीदर्शनोत्सुकः ।
जगाम शैलप्रवरं हेमकूटमिति श्रुतम्[5] ॥२५

उर्वशी के दर्शन के लिए उत्कण्ठित राजा हिमालय के पार्श्व को लांघकर पर्वतश्रेष्ठ हेमकूट पर गया, ऐसा सुना जाता है ।२५

तत्र तत्राप्सरोवर्या[6] दृष्ट्वा तं सिंहविक्रमम् ।
कामं सन्दधिरे घोरं भूषितं चित्रमालया[7] ॥२६

---

१. सोऽपश्यदथ इति पा०। २. वीक्ष्यमाणो ह्यमित्रघ्न इति पा०। ३. तस्यामेव महामतिः। ४. जगाम। ५. स्मृतमिति पा०। ६. साचा। ७. दिव्यमालया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन स्थानों में श्रेष्ठ अप्सराओं ने सिंह के समान पराक्रमी तथा चित्रमाला से भूषित उस राजा को देखकर भयंकर काम को धारण किया ।२६

संस्मरन्नुर्वशीवाक्यं तस्यां संसक्तमानसः ।
न पश्यति स्म ताः सर्वा गिरेः शृङ्गाणि जग्मिवान् ॥२७

किन्तु उर्वशी की बात याद करके उसमें आसक्त राजा ने उन अप्सराओं की ओर दृष्टिपात नहीं किया, बल्कि पर्वत की चोटियों पर वह चला गया ।२७

तत्राप्यप्सरसं दिव्यमदृष्ट्वा कामपीडितः ।
देवलोकं महामेरुं ययौ देवपराक्रमः ॥२८

काम पीडित राजा ने वहाँ भी दिव्य अप्सरा को नहीं देखा । तब देवतुल्य पराक्रमी राजा देवताओं के निवासस्थल महामेरुपर्वत पर गया ।२८

स तत्र मानसं नाम सरस्त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
भेजे शृङ्गमतिक्रम्य[1] स्वबाहुबलभावितः ॥२९

अपने बाहुबल से सम्पन्न राजा वहाँ शिखर का अतिक्रमण करके तीनों लोक में प्रसिद्ध मानस सरोवर में पहुँचा ।२९

तस्य[2] तीरेषु सुभगाञ्चरन्तीमतिलालसाम् ।
दृष्ट्वाननवद्याङ्गीं[3] तस्यै मालान्ददौ पुनः ॥३०

उस सरोवर के किनारे अत्यन्त लालसा वाली अनिन्द्य सुन्दरी उर्वशी को देखकर पुनः उसको माला दे दी ।३०

स मालया तदा देवीं भूषितां प्रेक्ष्य मोहितः ।
रेमे कृतार्थमात्मानं[4] जानानः[5] सुचिरन्तया ॥३१

तब माला से भूषित देवी को देखकर वह मोहित हो गया । चिरकाल तक उसके साथ रमण करके उसने अपने को कृतार्थ माना ।३१

अथोर्वशी राजवर्यं रतान्ते वाक्यमब्रवीत् ।
किं कृतं भवता वीर पुरीं गत्वा तदा[6] नृप ॥३२

अनन्तर रति के अन्त में उर्वशी ने श्रेष्ठ राजा से यह वाक्य कहा—वीर ! राजन् ! उस समय नगर में जाकर आपने क्या किया ?।३२

---

१. शृङ्गाण्यतिक्रम्य इति पा० । २. स तस्य तीरे इति पा० । ३. दृष्ट्वातामनवद्याङ्गीं । ४. मेने इति पा० । ५. नभः सुरुचिरं यथा इति पा० । ६. वृथा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स तस्यै सर्वमाचष्ट पत्न्या यत्समुदीरितम् ।
कण्वस्य दर्शनञ्चैव[1] मालापहरणं तथा ॥३३

राजा ने उससे सब बता दिया जो उसकी पत्नी ने कहा था। और कण्व मुनि का दर्शन तथा माला का अपहरण भी बताया ।३३

श्रुत्वैतद्व्याहृतं तेन गच्छेत्याह हितैषिणी ।
शापं दास्यति[2] ते कण्वो ममापि भवतः प्रिया ॥३४

यह विवरण सुनकर राजा की हितैषिणी उर्वशी ने कहा—तब आप जाइए, अन्यथा आपको कण्व शाप दे देंगे और मुझे आपकी पत्नी (शाप देगी) ।३४

तया सकृन्महाराजः प्रोक्तोऽपि मदमोहितः ।
न[3] च तत्कृतवान्वाक्यं तत्र संन्यस्तमानसः ॥३५

उसके बार-बार कहने पर भी मद से मोहित तथा उसको सौंपे हुए मन वाले राजा ने उसका कहना नहीं माना ।३५

तदोर्वशी कामरूपा राज्ञे स्वं रूपमुत्कटम् ।
सुरोमशं पिङ्गलाक्षं दर्शयामास सर्वदा ॥३६

तब यथेच्छ रूप धारण करने वाली उर्वशी ने अपना उत्कट रूप राजा को दिखाया, जिसमें बड़े-बड़े रोएँ थे और आँखें पीली थीं। ऐसा रूप सर्वदा उसने दिखलाया ।३६

तस्यां विरक्तचेतस्कः स्मृत्वा कण्वाभिभाषितम् ।
धिङ्मामिति विनिश्चित्य[4] तपः कर्तुं[5] समारभत् ॥३७

उससे विरक्तचित्त होकर कण्व के वचन का स्मरण करके 'मुझे धिक्कार है' ऐसा निश्चय करके तप करना आरंभ कर दिया ।३७

संवत्सरद्वादशकं कन्दमूलफलाशनः ।
भूय एव द्वादशकं वायुभक्षोऽभवन्नृपः ॥३८

बारह वर्षों तक कन्द, मूल और फल आहार करके उसने तप किया। राजा ने पुनः बारह वर्षों तक केवल वायु पीकर तप किया ।३८

गत्वा कण्वाश्रमं भीत्या[6] तस्मै सर्वं न्यवेदयत् ।
वासमप्सरसा भूयस्तपोयोगमनुत्तमम् ॥३९

---

१. वचनं । २. शापंददातीति पा० । ३. न तत्याजाथ तत्पार्श्वमिति पा० । ४. कुत्सितम् । ५. विनिश्चित्य तपः कर्तुं, ततः कर्तुमिति पा० । समारभत इति साधु । ६. प्रीत्येति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर डरते हुए कण्वाश्रम में जाकर मुनि से सब निवेदन कर दिया। पुनः अप्सरा के साथ वास तथा परमोत्तम तप के बारे में बताया।३९

वीक्ष्य तं राजशार्दूलं प्रसन्नो भगवानृषिः।
कर्त्तुकामो हि निर्बीजं तस्याघमिदमब्रवीत् ॥४०

कण्व उवाच

उस नृपश्रेष्ठ को देखकर भगवान् ऋषि ने प्रसन्न होकर राजा के पाप को निर्बीज करने की कामना से यह कहा।४०

गच्छ[1] वाराणसीं दिव्यामीश्वराध्युषितां पुरीम्।
आस्ते मोचयितु[2] लोकं तत्र देवो[3] महेश्वरः ।४१

कण्व बोले—शंकर की निवास-नगरी दिव्य वाराणसी जाओ। लोगों को मोक्ष देने के लिए वहाँ महेश्वर देव रहते हैं।४१

स्नात्वा सन्तर्प्य विधिवद्गङ्गायां देवताः पितॄन्।
दृष्ट्वा विश्वेश्वरं लिङ्गं किल्बिषान्मोक्ष्यसे[4] क्षणात् ॥४२

वहाँ गंगा में स्नान करके देवों और पितरों का सन्तर्पण करने के उपरान्त विश्वेश्वर लिंग का दर्शन करो। ऐसा करने से क्षण भर में पाप से मुक्त हो जाओगे।४२

प्रणम्य शिरसा कण्वमनुज्ञाप्य च दुर्ज्जयः।
वाराणस्यां हरं[5] दृष्ट्वा पापान्मुक्तोऽभवत्ततः ॥४३

मस्तक से कण्व को प्रणाम करके आज्ञा लेकर दुर्जय राजा वाराणसी में शिव को देखकर पाप मुक्त हो गया।४३

जगाम स्वपुरीं शुभ्रां[6] पालयामास मेदिनीम्[7]।
याजयामास तं कण्वो याचितो घृणया मुनिः ॥४४

फिर अपनी शुभ्र पुरी में जाकर पृथ्वी का पालन करने लगा। याचना करने पर कण्व मुनि ने उस राजा को कृपापूर्वक यज्ञ कराया।४४

तस्य पुत्रोऽथ मतिमान् सुप्रतीक[8] इति स्मृतः।
बभूव जातमात्रं तं राजानमुपतस्थिरे ॥४५

उर्वश्याञ्च महावीर्याः सप्त देवसुतोपमाः।
कन्या जगृहिरे सर्वा गन्धर्व्यो दयिता द्विजाः ॥४६

---

१. गत्वा इति पा०। २. देव्या इति पा०। ३. मोक्ष्यसेखिलात्। इति पा०। ४. शिवमिति०। ५. रम्यामिति पा०। ६. धर्मत इति पा०। ७. सुप्रीत इति, विश्रुत इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका पुत्र सुप्रतीक नाम से प्रसिद्ध हुआ। उर्वशी के महाशक्तिशाली देवपुत्र सदृश सात पुत्र उत्पन्न होते ही राजा के पास उपस्थित हो गये। द्विजगण उन्होंने गन्धर्व कन्याओं से विवाह किया।४५-४६।

एष वः कथितः सम्यक् सहस्रजित उत्तमः।
वंशः पापहरो नृणां क्रोष्टोरपि निबोधत ॥४७

यह सहस्रजित् का उत्तम वंश आप लोगों का बता दिया, जो मनुष्यों के पापों का हरण करने वाला है। अब क्रोष्टु का भी वंश सुन लीजिए।४७

इति श्रीकूर्मपुराणे राजवंशानुकीर्त्तने × त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

श्रीकूर्मपुराण में राजवंशानुकीर्तन नामक तेईसवाँ अध्याय समाप्त।२३।

●

चतुर्विंशोऽध्यायः

अथ वंशकीर्तिवर्णनम्

सूत उवाच

क्रोष्टोरेकोऽभवत्पुत्रो वज्रवानिति विश्रुतः।
तस्य पुत्रोऽभवच्छान्तिः कुशिकस्तत्सुतोऽभवत्[1] ॥१

अथ वंशकीर्तनम्

सूत बोले—क्रोष्टु का वज्रवान् नाम से प्रसिद्ध एक पुत्र हुआ। उसका पुत्र शान्ति और शान्ति का पुत्र कुशिक हुआ।१

कुशिकादभवत्पुत्रो नाम्ना चित्ररथो बली।
अथ चैत्ररथिर्लोके शशबिन्दुरिति[2] स्मृतः ॥२

कुशिक का पुत्र बलवान् चित्ररथ हुआ। चित्ररथ का पुत्र लोक में शशबिन्दु नाम से ख्यात हुआ।२

× द्वाविंशः लि० पु०। १. कुशंकुरिति पा०। २. शशिविन्दुरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्य पुत्रः पृथुयशा राजाभूद्धर्मतत्परः ।
पृथुकर्मा[1] च तत्पुत्रस्तस्मात्पृथुजयोऽभवत् ॥३

उसका पुत्र राजा पृथुयशा धर्मपरायण था। उसके पुत्र का नाम पृथुकर्मा था। पृथुकर्मा का पुत्र पृथुजय हुआ ।३

पृथुकीर्तेरभूत्तस्मात्पृथुदानस्ततोऽभवत् ।
पृथुश्रवास्तस्य पुत्रस्तस्यासीत्पृथुसत्तमः ॥४

उससे पृथुकीर्ति हुआ और उससे पृथुदान। पृथुदान का पुत्र पृथुश्रवा और उससे पृथुसत्तम का जन्म हुआ ।४

उशनास्तस्य पुत्रोऽभूच्छतेषुस्तत्सुतोऽभवत् ।
तत्माद्वै[2] रुक्मकवचः परावृत्तश्च तत्सुतः ॥५

पृथुसत्तम का पुत्र उशना और उसका पुत्र शतेषु हुआ। उससे रुक्मकवच का जन्म हुआ और उसका पुत्र परावृत्त हुआ ।५

परावृत्तसुतो जज्ञे यामघो लोकविश्रुतः ।
तस्माद्विदर्भः सञ्जज्ञे विदर्भात्क्रथकौशिकौ ॥६

परावृत्त का पुत्र यामघ संसार में प्रसिद्ध हुआ। उससे विदर्भ उत्पन्न हुए और विदर्भ से क्रथ और कौशिक उत्पन्न हुए ।६

[3]लोमपादस्तृतीयस्तु बभ्रुस्तस्यात्मजो नृपः ।
धृतिस्तस्याभवत्पुत्रः[4] श्वेतस्तस्याप्यभूत्सुतः ॥७

उसका तीसरा पुत्र लोमपाद था। जिसका पुत्र धृति और उसका पुत्र श्वेत हुआ ।७

श्वेतस्य[5] पुत्रो बलवान्नाम्ना विश्वसहः स्मृतः[6] ।
तस्य पुत्रो महावीर्यः [7]प्रभावात्कौशिकः स्मृतः ॥८

श्वेत का पुत्र बलवान् विश्वसह कहा गया है। उसका पुत्र महावीर्य प्रभाव से कौशिकस्मरण किया गया है ।८

अभूत्तस्य सुतो धीमान् सुमन्तश्च[8] ततोऽनलः ।
अनलस्य[9] सुतः श्वेनिः श्वेनेरन्येऽभवन्सुताः ॥९

---

१. पृथुवर्मा इति पा० । २. तस्याभूदिति पा० । ३. रोमपाद इति, रोमपादसुतो यस्तु रुद्रस्तस्यात्मजोऽभवदिति पा० । ४ सन्तः इति, सत इति पा० । ५. सन्तस्य इति पा० । ६. शुभ इति पा० । ७. प्रजावान् कौशिकस्तत इति पा० । ८. सुमन्तुस्तत्सुतोऽनल इति, ततोऽमल इति पा० । ९. कौशिकस्य सुतश्चेदिश्चैद्यस्तस्याभवन्सुताः, अमलस्य इति ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका पुत्र हुआ धीमान् सुमन्त और उससे अनल की उत्पत्ति हुई। अनल का पुत्र श्वेनि और उससे अनेक पुत्रों ने जन्म लिया।९

तेषां प्रधानो द्युतिमान्वपुष्मान्तत्सुतोऽभवत्।
वपुष्मतो बृहन्मेधाः श्रीदेवस्तत्सुतोऽभत् ॥१०

उनमें प्रधान था द्युतिमान्। द्युतिमान् का पुत्र वपुष्मान् हुआ। वपुष्मान् का पुत्र बृहन्मेधा और उसका पुत्र श्रीदेव हुआ।

तस्य वीतरथो विप्रा रुद्रभक्तो महाबलः।
[1]क्रथस्याप्यभवत्कुन्तिर्वृ[2]ष्णिस्तस्याभवत्सुतः ॥११

विप्रवृन्द! श्रीदेव का पुत्र शिवभक्त एवं महाबली वीतरथ हुआ। क्रथ का पुत्र कुन्ति और कुन्ति से वृष्णि उत्पन्न हुआ।११

तस्मान्नवरथो नाम बभूव सुमहाबलः।
कदाचिन्मृगयां यातो दृष्ट्वा राक्षसमूर्ज्जितम् ॥१२

उससे अत्यन्त महाबली पुत्र उत्पन्न हुआ। किसी समय वह शिकार खेलने गया तो एक बड़ा तेजस्वी राक्षस उसे दिखाई पड़ा।१२

दुद्राव महताविष्टो[3] भयेन मुनिपुङ्गवाः।
अन्वधावत संक्रुद्धो राक्षसस्तं महाबलः ॥१३

मुनिश्रेष्ठो! महान् भय से आविष्ट हो राजा भागने लगा। अत्यन्त क्रुद्ध महाबली राक्षस ने उसका पीछा किया।१३

दुर्योधनोऽग्निसंकाशः शूलासक्तमहाकरः।
राजा नवरथो भीतो[4] नातिदूरादवस्थितम् ॥१४

वह दुर्योधन राक्षस अग्नि के समान देदीप्यमान था। उसके हाथ में शूल अस्त्र था। राजा नवरथ भयभीत था। उसने कुछ ही दूरी पर एक स्थान देखा।१४

अपश्यत्परमं स्थानं सरस्वत्याः सुगोपितम्।
स तद्वेगेन महता सम्प्राप्य मतिमान्नृपः ॥१५

वह सरस्वती का स्थान बहुत सुरक्षित था। बुद्धिमान् राजा बड़े वेग से दौड़कर वहाँ पहुँच गया।१५

---

१. कुंभी इति। २. सुतः। वृष्णेर्निवृतिरुत्पन्नो दशार्हस्तत्सुतो द्विजाः। दशार्हपुत्रोमारस्याज्जीवसूस्तत्सुतोभवत्। आसीद्भीमरथो वीरो निष्कृतिः परवीरहा। तस्य भीमरथः पुत्रस्तस्माद्वैतरथोभवत्। दाता धर्मरतो नित्यं सत्यशीलपराक्रमः। इति। ३. सभयाविष्टो भवनं। ४. भीत्या।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ववन्दे शिरसा दृष्ट्वा साक्षाद्देवीं सरस्वतीम् ।
तुष्टाव वाग्भिरिष्टाभिर्बद्धाञ्जलिरमित्रजित् ॥१६

साक्षात् सरस्वती देवी का दर्शन करके उसने शिर से प्रणाम किया। शत्रुजयी राजा हाथ जोड़कर इष्ट वाक्यों से स्तुति करने लगा।१६

पपात दण्डवद्भूमौ त्वयहं शरणङ्गतः ।
नमस्यामि महादेवीं साक्षाद्देवीं सरस्वतीम् ॥१७

भूमि पर दण्डवत् गिरकर उसने कहा—मैं आपका शरणागत हूँ। मैं महादेवी साक्षात् सरस्वती को नमस्कार करता हूँ।१७

वाग्देवतामनाद्यन्तामीश्वरीं ब्रह्मचारिणीम्[1] ।
नमस्ये जगतां योनिं योगिनीं परमां कलाम् ॥१८

वाग्देवता, आदि-अन्त से रहित, ईश्वरी, ब्रह्मचारिणी, संसार का उद्भव-स्थान, योगिनी तथा परमा कला को मैं नमस्कार करता हूँ।१८

हिरण्यगर्भसम्भूतां[2] त्रिनेत्रां चन्द्रशेखराम् ।
नमस्ये परमानन्दां चित्कलां[3] ब्रह्मरूपिणीम् ॥१९

पाहि मां परमेशानि[4] भीतं शरणमागतम् ।
एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धो राजानं राक्षसेश्वरः ॥२०

हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) से उत्पन्न, तीन आँखों वाली, मौलि पर चन्द्रमा धारण करने वाली, परमानन्दस्वरूप, चित्स्वरूप, कलास्वरूप तथा ब्रह्मरूपिणी को नमस्कार करता हूँ।१९-२०।

हन्तुं समागतः स्थानं यत्र देवी सरस्वती ।
समुद्यम्य तथा[5] शूलं प्रविष्टो बलगर्वितः[6] ॥२१

हे परमेश्वरी! भयभीत एवं शरणागत मेरी रक्षा करें। इस बीच क्रुद्ध राक्षसराज राजा को मारने के लिए उस स्थान में पहुँच गया, जहाँ देवी सरस्वती थीं। बल से गर्वित राक्षस शूल उठाकर प्रविष्ट हुआ।२१

त्रिलोकमातुर्हि[7] स्थानं शशाङ्कादित्यसन्निभम् ।
तदन्तरे महद्भूतं युगान्तादित्यसन्निभम् ॥२२

---

१. धर्मचारिणीम्। २. हिरण्यगर्भमहिषीमिति। ३. निष्कलां। ४. शांकरीशानि इति पा०। ५. तदा इति, महाशूलमिति पा०। ६. बलदर्पित इति पा०। ७. मातुस्संस्थानं इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रैलोक्य-माता का वह स्थान चन्द्रमा और सूर्य के समान था। इतने में प्रलय-कालिक सूर्य के समान एक पुरुष वहाँ उत्पन्न हुआ ।२२

शूलेनोरसि निर्भिद्य पातयामास तं भुवि ।
गच्छेत्याह महाराज न स्थातव्यं त्वया पुनः ॥२३

उसने राक्षस की छाती पर शूल मारकर भूमि पर गिरा दिया और राजा से कहा— महाराज ! जाओ। तुम्हें फिर यहाँ नहीं रहना चाहिए ।२३

इदानीं निर्भयस्तूर्णं स्थानेऽस्मिन्राक्षसो हतः ।
ततः प्रणम्य हृष्टात्मा राजा नवरथः परम् ॥२४

पुरीं जगाम विप्रेन्द्राः पुरन्दरपुरोपमाम् ।
स्थापयामास देवेशीं तत्र भक्तिसमन्वितः ॥२५

अब तुम इस स्थान में शीघ्र निर्भय हो जाओ। राक्षस मार दिया गया है। विप्रेन्द्रो ! तदनन्तर राजा नवरथ अत्यन्त प्रसन्न होकर प्रणाम करके इन्द्रपुरी के समान अपनी पुरी को चला गया। वहाँ देवेश्वरी सरस्वती को भक्तिभावपूर्वक स्थापित किया ।२४-२५।

ईजे[1] च विविधैर्यज्ञैर्होमैर्देवीं सरस्वतीम् ।
तस्य चासीद्दशरथः पुत्रः परमधार्मिकः ॥२६

विविध यज्ञों और हवनों से देवी सरस्वती की आराधना की। उसका पुत्र परम धार्मिक दशरथ हुआ ।२६

देव्या भक्तो महातेजाः शकुनिस्तस्य चात्मजः ।
तस्मात्करम्भः सम्भूतो[2] 'देवरातोऽभवत्ततः ॥२७

वह देवी का भक्त और महातेजस्वी था। उसका पुत्र शकुनि हुआ। उससे करम्भ उत्पन्न हुआ और उससे देवरात हुआ ।२७

ईजे स चाश्वमेधेन देवक्षत्रश्च[4] तत्सुतः ।
मधुस्तस्य तु दायादस्तस्मात्कुरुरजायत[5] ॥२८

उसने अश्वमेध यज्ञ किया और उसका पुत्र देवक्षत्र हुआ। देवक्षत्र का पुत्र मधु हुआ और उसका पुत्र कुरु उत्पन्न हुआ ।२८

---

१. यजते इति पा०। २. संजातो इति पा०। ३. देवराडभवत् इति पा०। ४. देवक्षेत्रश्च इतिपा०। ५. तस्मात्कुरुवंशोऽभवदिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्रद्वयमभूत्तस्य सुत्रामा चानुरेव च ।
अनोस्तु [1]प्रियगोत्रोऽभूदंशुस्तस्य च रिक्थभाक् ॥२९

कुरु के दो पुत्र हुए—सुत्रामा और अनु। अनु का पुत्र प्रियगोत्र हुआ और उसका पुत्र अंशु।२९

अथांशोरन्धको[2] नाम विष्णुभक्तः प्रतापवान् ।
महात्मा दाननिरतो धनुर्वेदविदां वरः ॥३०

अंशु का पुत्र विष्णुभक्त और प्रतापी अन्धक हुआ। वह महात्मा, दान में निरत तथा धनुर्वेद-वेत्ताओं में श्रेष्ठ था।३०

स नारदस्य वचनाद्वासुदेवार्चने रतः ।
शास्त्रं प्रवर्त्तयामास कुण्डगोलादिभिः श्रुतम्[3] ॥३१

वह नारद के वचन से वासुदेव की अर्चना में निरत हुआ। उसने कुण्ड और गोल (सधवा स्त्री के गर्भ से उत्पन्न जारज पुत्र को 'कुण्ड' और विधवा के जारज पुत्र को 'गोल' कहते हैं) आदि के विषयों से युक्त एक शास्त्र चलाया।३१

तस्य नाम्ना तु विख्यातं सात्वतानाञ्च[4] शोभनम् ।
प्रवर्त्तते महच्छास्त्रं कुण्डादीनां हितावहम् ॥३२

उसके नाम से प्रसिद्ध वह महान् शास्त्र सात्वतों के लिए सुन्दर और कुण्ड आदि के लिए कल्याणकारक हुआ।३२

सात्वतस्तस्य पुत्रोऽभूत्सर्वशास्त्रविशारदः ।
पुण्यश्लोको महाराजस्तेन[5] वै तत्प्रवर्त्तितम् ॥३३

अन्धक का पुत्र सात्वत सकल शास्त्रों में पारंगत था। पवित्र कीर्ति वाले उस महाराज ने उस शास्त्र को चलाया।३३

सात्वतान्सत्त्वसम्पन्नान्कौशल्या[6] सुषुवे सुतान् ।
अन्धकं वै महाभोजं वृष्णिं देवावृधं नृपम् ॥३४

सात्वत से कौशल्या ने शक्ति सम्पन्न पुत्रों को उत्पन्न किया। जिनके नाम थे अन्धक, महाभोज, वृष्णि और राजा देवावृध।३४

---

१. कुरुकुत्सोऽभूदिति पा०। २. अथांशो सात्वत इति, सत्वतो नाम इति, साधक इति पा०। ३. श्रितम् इति पा०। ४. सात्वतं नाम इति पा०। ५. तेनचैतत् इति पा०। ६. सात्वतात्सत्व सम्पन्नं कौशल्या सुषुवे सुतमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्येष्ठञ्च भजमानाख्यं धनुर्वेदविदां[1] वरम् ।
तेषां देवावृधो राजा चचार परमं तपः ॥३५

इन सबमें ज्येष्ठ था भजमान, जो धनुर्वेदज्ञाताओं में अग्रणी था। इन भाइयों में राजा देवावृध ने परम तप किया।३५

पुत्रः सर्वगुणोपेतो मम भूयादिति प्रभुः ।
तस्य बभ्रुरिति ख्यातः पुण्यश्लोकोऽभवन्नृपः ॥३६

उसने भगवान् से प्रार्थना की कि मेरा पुत्र सर्वगुणी हो। उसका पुत्र बभ्रु नाम से प्रसिद्ध पवित्रकीर्ति राजा हुआ।३६

धार्मिको रूपसम्पन्नस्तत्त्वज्ञानरतः सदा ।
भजमानाः[2] श्रियन्दिव्यां भजमानाद्विजज्ञिरे ॥३७

बभ्रु धार्मिक, रूप सम्पन्न और तत्त्वज्ञान में सदा निरत रहने वाला था। भजमान से दिव्य श्री धारण करने वाले भजमान संज्ञक पुत्र उत्पन्न हुए।३७

तेषां प्रधानौ विख्यातौ निमिः[3] कृकण एव च ।
महाभोजकुले जाता भोजा वैमातृकास्तथा[4] ॥३८

उनमें प्रधान दो पुत्र प्रसिद्ध हुए—निमि और कृकण। महाभोज के वंश में भोज तथा वैमातृक नामक पुत्र हुए।३८

वृष्णेः[5] सुमित्रो बलवाननमित्रस्तिमिस्तथा ।
अनमित्रादभून्निघ्नो निघ्नस्य द्वौ बभूवतुः ॥३९

वृष्णि के बलवान् पुत्र सुमित्र, अनमित्र तथा तिमि हुए। अनमित्र से निघ्न हुआ और निघ्न के दो पुत्र हुए।३९

प्रसेनस्तु महाभागः सत्राजिन्नाम चोत्तमः[6] ।
[7]अनमित्रात्सिनिर्जज्ञे कनिष्ठो वृष्णिनन्दनात् ॥४०

उनमें एक था महाभाग प्रसेन और दूसरा था उत्तम सत्राजित्। अनमित्र से सिनि उत्पन्न हुआ। वृष्णि के पुत्र अनमित्र से कनिष्ठ सिनि उत्पन्न हुआ।४०

सत्यवाक् सत्यसम्पन्नः सत्यकस्तत्सुतोऽभवत् ।
सात्यकिर्युयुधानस्तु तस्यासङ्गोऽभवत्सुतः[8] ॥४१

---

१. धनुर्वेदविशारदम्। २. भजमानस्य मूञ्जज्यामिति, भजमानस्य संज्ञायामिति पा०। ३. शनिःकृकश एव च इति, कृतक इति पा०। ४. वैमूतिकस्तथा इति पा०। ५. वृष्णेस्तु पुत्र इति, विष्णोस्तु मित्र इति, विष्णोस्तु पुत्र इति पा०। ६. पार्थिवः इति पा०। ७. च्छिनिरिति, च्छनिरिति पा०। ८. तस्याष्टाङ्ग इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका पुत्र सत्यक हुआ जो सत्यवक्ता एवं सत्यसम्पन्न था। सत्यक का पुत्र युयुधान और उसका पुत्र असंग हुआ।४१

कुणिस्तस्य[1] सुतो धीमांस्तस्य पुत्रो युगन्धरः।
माद्र्यां[2] वृष्णिः सुतो जज्ञे वृष्णेर्वै यदुनन्दनः ॥४२

असंग का पुत्र धीमान् कुणि हुआ और कुणि का पुत्र युगन्धर। माद्री से यदुनन्दन वृष्णि का जन्म हुआ।४२

जज्ञाते तनयौ वृष्णेः श्वफल्कश्चित्रकस्तु हि।
श्वफल्कः काशिराजस्य सुतां भार्यामविन्दत ॥४३

वृष्णि के दो पुत्र हुए--श्वफल्क और चित्रक। श्वफल्क ने काशिराज की पुत्री को भार्या के रूप में प्राप्त किया।४३

तस्यामजनयत्पुत्रमक्रूरं नाम धार्मिकम्[3]।
उपमंगु[4] तथा मंगुमन्ये च बहवः सुताः ॥४४

उसमें अक्रूर नामक धार्मिक पुत्र को उत्पन्न किया। उपमंगु, मंगु तथा अन्य भी बहुत-से पुत्र उसके हुए।४४

अक्रूरस्य स्मृतः[5] पुत्रो देववानिति विश्रुतः।
उपदेवश्च देवात्मा[6] तयोर्विश्वप्रमाथिनौ ॥४५

अक्रूर का एक पुत्र देववान् नाम से प्रसिद्ध हुआ। उपदेव और देवात्मा भी उसके पुत्र थे। उन दोनों के दो पुत्र थे—विश्व और प्रभावी।४५

चित्रकस्याभवत्पुत्रः पृथुर्विपृथुरेव च।
अश्वग्रीवः सुबाहुश्च सुधाश्वकगवेक्षकौ[7] ॥४६

चित्रक के पुत्र पृथु, विपृथु, अश्वग्रीव, सुबाहु, सुधाश्वक और गवेक्षक हुए।४६

अन्धकस्य[8] सुतायान्तु लेभे च चतुरः सुतान्।
कुकुरं भजमानञ्च[9] शमीकं बलगर्वितम् ॥४७

अन्धक की पुत्री में उसके चार पुत्र हुए--कुकुर, भजमान, शमीक और बल-गर्वित।४७

---

१. कालस्तस्येति, कुलिस्तस्य इति पा०। २. साध्या इति पा०। ३. पर्थिवम् इति पा०। ४. उपमद्गुस्तथामद्गुरिति पा०। ५. सुतोजज्ञे इति पा०। ६. पुण्यात्मा इति पा०। ७. सुपाश्वंकगवेषणौ इति पा०। ८. अन्धकात्काश्यदुहिता इति पा०। ९. भकमानं च अन्धकं बलबर्हिषम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुकुरस्य सुतो वृष्णिवृ[1]ष्णेस्तु तनयोऽभवत् ।
कपोतरोमा[2] विख्यातस्तस्य पुत्रो विलोमकः ॥४८

कुकुर का पुत्र वृष्णि और वृष्णि का पुत्र कपोतरोमा विख्यात हुआ। उसका पुत्र विलोमक हुआ।४८

तस्यासीत्तुम्बुरुसखा विद्वान्पुत्रस्तमः[3] किल ।
तमस्याप्यभवत्पुत्रस्तथैवानकदुन्दुभिः[4] ॥४९

विलोमक का विद्वान् पुत्र तम हुआ। उसका मित्र तुम्बुरु था। तम का पुत्र आनकदुन्दुभि था।४९

स गोवर्द्धनमासाद्य तताप विपुलं तपः ।
वरं तस्मै ददौ देवो ब्रह्मा लोकमहेश्वरः[5] ॥५०

उसने गोवर्धनपर्वत पर जाकर महान् तप किया। लोक-महेश्वर ब्रह्मदेव ने उसे वरदान दिया।५०

वंशस्ते[6] चाक्षया कीर्त्तिर्ज्ञानियोगस्तथोत्तमः ।
गुरोरप्यधिकं विप्राः[7] कामरूपित्वमेव च ॥५१

तुम्हारा वंश बढ़े, अक्षय कीर्ति और उत्तम ज्ञानयोग प्राप्त हो। विप्रगण! उसे गुरु से भी अधिक इच्छानुसार रूप धारण करना प्राप्त हुआ।५१

स लब्ध्वा वरमव्यग्रो वरेण्यो[8] वृषवाहनम् ।
पूजयामास गानेन स्थाणुं त्रिदशपूजितम् ॥५२

वह वर प्राप्त करके निश्चिन्त और वरेण्य होकर देवपूजित, वृषवाहन शिव का गायन के द्वारा पूजन करने लगा।५२

तस्य[9] गानरतस्याथ भगवानम्बिकापतिः ।
कन्यारत्नं ददौ देवो दुर्लभं त्रिदशैरपि ॥५३

गान में निरत उस राजा को भगवान् शंकर ने एक देवदुर्लभ कन्या-रत्न दिया।५३

तया स सङ्गतो राजा गानयोगमनुत्तमम् ।
अशिक्षयदमित्रघ्नः प्रियां[10] तां भ्रान्तलोचनाम् ॥५४

---

१. धृष्णिधृ[ष्]णेस्तु इति पा०। २. कपोतनामा विपुलस्तस्य पुत्रो विलोपकः इति पा०। ३. पुत्रोनलः इति पा०। ४. स्थीयते तस्य नाम्नातु तयोरानकदुन्दुभिः इति पा०। ५. लोकपितामहः इति पा०। ६. वंशस्य चाव्यया कीर्तिरिति पा०। ७. पुत्रं इति पा०। ८. वरेण्यमिति पा०। ९. तस्य गानेन वश्योऽथ इति पा०। १०. प्रियां रक्ताङ्गलोचनाम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शत्रुनाशक राजा ने उससे संगत करके विभ्रमयुक्त नेत्रों वाली उस प्रिया को अत्युत्तम गानयोग सिखाया ।५४

तस्यामुत्पादयामास सुभुजं नाम शोभनम् ।
रूपलावण्यसम्पन्नां ह्रीमतीमिति[1] कन्यकाम् ॥५५

उसमें आनकदुन्दुभि ने सुभुज नामक एक सुन्दर पुत्र और रूप-लावण्य से सम्पन्न ह्रीमती नामक एक कन्या उत्पन्न की ।५५

ततस्तं जननी पुत्रं बाल्ये वयसि शोभनम् ।
शिक्षयामास विधिवद्गानविद्याञ्च[2] कन्यकाम् ॥५६

तब उस पुत्र और पुत्री को माता ने बाल्यावस्था में गान-विद्या की विधिवत् शिक्षा दी ।५६

कृतोपनयनो वेदानधीत्य विधिवद्गुरोः ।
उद्ववाहात्मजां[3] कन्यां गन्धर्वाणां तु मानसीम् ॥५७

उस बालक सुभुज ने उपनयनसंस्कार के बाद गुरु से वेदों को विधिपूर्वक पढ़कर गन्धर्वों की मानसी कन्या से विवाह किया ।५७

तस्यामुत्पादयामास पञ्च पुत्राननुत्तमान् ।
वीणावादनतत्त्वज्ञान् गानशास्त्रविशारदान् ॥५८

उसमें अत्युत्तम पाँच पुत्रों को उत्पन्न किया । वे सब वीणा-वादन के तत्त्वज्ञाता और गानशास्त्र में विशारद थे ।५८

पुत्रैः पौत्रैः सपत्नीको राजा गानविशारदः ।
पूजयामास गानेन देवं त्रिपुरनाशनम् ॥५९

पुत्रों, पौत्रों और पत्नी समेत वह गानविशारद राजा गान के द्वारा महादेव की आराधना करता था ।५९

ह्रीमतीञ्चारुसर्वाङ्गीं[4] श्रीमिवायतलोचनाम् ।
सुबाहुनामा गन्धर्वस्तामादाय ययौ पुरीम् ॥६०

सर्वांगसुन्दरी, विशालाक्षी तथा लक्ष्मी के समान ह्रीमती से विवाह करके सुबाहु नामक गन्धर्व अपनी नगरी में ले गया ।६०

---

१. ह्रीमतीमपीति पा० । २. विविधां गानविद्यां चेति पा० । ३. उद्ववाहात्मनः कन्यां इति पा० । ४. ह्रीमती चापि या कन्या श्रीरिवायतलोचना इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्यामप्यभवन् पुत्रा गन्धर्वस्य सुतेजसः ।
सुषेणधीरसुग्रीवसुभोजनरवाहनाः ॥६१

उसमें भी गन्धर्व के तेजस्वी पुत्र हुए—सुषेण, धीर, सुग्रीव, सुभोज एवं नर वाहन ।६१

अथासीदभिजित्पुत्रश्चन्दनोदकदुन्दुभेः[1] ।
पुनर्वसुश्चाभिजितः सम्बभूवाहुकस्ततः[2] ॥६२

अनन्तर चन्दनोदकदुन्दुभि के अभिजित् नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ । अभिजित् का पुत्र पुनर्वसु और उससे सम्बभूवाहुक हुआ ।६२

आहुकस्योग्रसेनश्च देवकश्च द्विजोत्तमाः ।
देवकस्य सुता वीरा जज्ञिरे त्रिदशोपमाः[3] ॥६३

द्विजश्रेष्ठों ! आहुक के उग्रसेन तथा देवक ये दो पुत्र हुए । देवक के देवोपम वीर पुत्र उत्पन्न हुए ।६३

देववानुपदेश्च सुदेवो देवरक्षितः ।
तेषां स्वसारः सप्तासन्वसुदेवाय[4] तां ददौ ॥६४

धृतदेवोपदेवा[5] च तथान्या देवरक्षिता ।
श्रीदेवा शान्तिदेवा च सहदेवा च सुव्रता ॥६५

देवकी चापि तासां तु वरिष्ठाभूत्सुमध्यमा ।
उग्रसेनस्य पुत्रोऽभून्न्यग्रोधः कंस एव च ॥६६

उनके नाम हैं—देववान्, उपदेव, सुदेव और देवरक्षित । उनकी बहनें सात थीं—धृतदेवा, उपदेवा, देवरक्षिता, श्रीदेवा, शान्तिदेवा, सहदेवा और देवकी । उत्तम व्रत वाली तथा सुन्दरी देवकी उन बहनों में सबसे बड़ी थी, जो वसुदेव को दी गई । उग्रसेन के पुत्र थे—न्यग्रोध और कंस ।६४-६६।

सुभूमी[6] राष्ट्रपालश्च तुष्टिमाञ्छङ्कुरेव[7] च ।
भजमानादभूत्पुत्रः प्रख्यातोऽसौ विदूरथः ॥६७

तथा सुभूमि, राष्ट्रपाल, तुष्टिमान् और शंकु । भजमान से प्रख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ विदूरथ ।६७

---

१. वीरस्थानकदुन्दुभिरिति पा० । २. सम्बभूवाहुकः सुत इति पा० । ३. त्रिदशोपमाः इति पा० । ४. सुदेवाय च तां ददौ इति पा० । ५. वृकदेव्युपदेवीति, वृकदेवोपदेवीति पा० । ६. सुसीमा इति पा० । ७. चक्षुरेव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्यसूरसमस्तस्मात्प्रतिक्षत्रश्च[1] तत्सुतः ।
स्वयं भोजस्ततस्तस्माद्धात्रीकः[2] शत्रुतापनः ॥६८

विदूरथ का सूरसम और उसका पुत्र प्रतिक्षत्र हुआ । प्रतिक्षत्र का पुत्र स्वयंभोज और उसका पुत्र शत्रु को जलाने वाला धात्रीक हुआ ।६८

कृतवर्माथ तत्पुत्रः शूरसेनः[3] सुतोऽभवत् ।
वसुदेवोऽथ[4] तत्पुत्रो नित्यं धर्मपरायणः ॥६९

धात्रीक का पुत्र कृतवर्मा और कृतवर्मा का पुत्र शूरसेन हुआ शूरसेन का पुत्र नित्य धर्मपरायण वसुदेव हुआ ।६९

वसुदेवान्महाबाहुर्वासुदेवो जगद्गुरुः ।
बभूव देवकीपुत्रो देवैरभ्यर्थितो हरिः ॥७०

वसुदेव से महापराक्रमी, जगद्गुरु वासुदेव कृष्ण हुए । देवताओं के प्रार्थना करने पर विष्णु देवकी के पुत्र रूप में अवतीर्ण हुए ।७०

रोहिणी च महाभागा वसुदेवस्य शोभना ।
असूत पत्नी संकर्षं रामं ज्येष्ठं हलायुधम् ॥७१

वसुदेव की सुन्दरी पत्नी महाभागा रोहिणी ने हल अस्त्र वाले ज्येष्ठ पुत्र बलराम को उत्पन्न किया ।७१

स एव परमात्मासौ वासुदेवो जगन्मयः ।
हलायुधः स्वयं साक्षाच्छेषः सङ्कर्षणः प्रभुः ॥७२

वही वासुदेव जगन्मय परमात्मा हैं । हलायुध (बलराम) स्वयं साक्षात् शेषावतार संकर्षण प्रभु हैं ।७२

भृगुशापच्छलेनैव मानयन्मानुषीं तनुम् ।
बभूव[5] तस्यां देवक्यां रोहिण्यामपि माधवः ॥७३

भृगु मुनि के शाप के बहाने मनुष्य-शरीर धारण करते हुए माधव (विष्णु) देवकी और रोहिणी में भी हुए ।७३

---

१. प्रतिक्षत्रस्ततोऽभवदिति पा० । २. भोजःसुतस्तस्माद्धाह्लिकः इति पा० । ३. शतधर्मा च वीर्यवान्, देवलस्तत्सुतः स्मृत इति च पा० । ४. शूरस्यामारिगीयातुवसु देवोभवत्सुतः, स शूरस्ततसुतो धीमान्वसुदेवोऽथ तत्सुत इति च पा० । ५. बभूवुरस्यामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उमादेहसमुद्भूता[1] योगनिद्रा च कौशिकी ।
नियोगाद्वासुदेवस्य यशोदातनया त्वभूत् ॥७४

पार्वती के शरीर से उत्पन्न योगनिद्रा कौशिकी वासुदेव की आज्ञा से यशोदा की पुत्री हुई ।७४

ये चान्ये वसुदेवस्य वासुदेवाग्रजाः सुताः ।
प्रागेव कंसस्तान्सर्वाञ्जघान मुनिसत्तमाः[2] ॥७५

मुनिश्रेष्ठो ! वसुदेव के कृष्ण के अग्रज जो अन्य पुत्र हुए, उन सबको कंस ने पहले ही मार दिया था ।७५

सुषेणश्च ततो[3] दायी भद्रसेनो महाबलः ।
वज्रदम्भो[4] भद्रसेनः कीर्तिमानपि पूजितः[5] ॥७६

वसुदेव के सुषेण, दायी, भद्रसेन, महाबल, वज्रदम्भ, भद्रसेन और पूजित कीर्तिमान् भी पुत्र हुए थे ।७६

हतेष्वेतेषु सर्वेषु रोहिणी वसुदेवतः ।
असूत रामं लोकेशं बलभद्रं हलायुधम् ॥७७

इन सबके मार दिये जाने पर रोहिणी ने वसुदेव से लोकेश्वर, हलायुध, बलभद्र, बलराम को उत्पन्न किया ।७७

जातेऽथ रामे देवानामादिमात्मानमच्युतम् ।
असूत देवकी कृष्णं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम्[6] ॥७८

बलराम के उत्पन्न हो जाने पर देवों के आदिम आत्मा, अच्युत और श्रीवत्स चिह्न से अंकित वक्षःस्थल वाले श्रीकृष्ण को देवकी ने उत्पन्न किया ।७८

रेवती नाम[7] रामस्य भार्यासीत्सुगुणान्विता ।
तस्यामुत्पादयामास पुत्रौ द्वौ निशितोल्मुकौ[8] ॥७९

उत्तम गुणों से युक्त रेवती बलराम की पत्नी हुई । उसमें उन्होंने निशित और उल्मुक नामक दो पुत्रों को उत्पन्न किया ।७९

षोडशस्त्रीसहस्राणि कृष्णस्याक्लिष्टकर्मणः ।
बभूवुश्चात्मजास्तासु शतशोऽथ सहस्रशः ॥८०

---

१. उमा देवी समुद्भूता इति पा० । २. मुनिपुङ्गवा इति पा० । ३. तथोदापिर्भद्रसेन इति पा० । ४. रुद्रवासोभद्रसेनः, ऋजुदासो भद्रदासः इति च पा० । ५. पूर्वज इति पा० । ६. श्रीवत्सकृतलक्षणमिति पा० । ७. निशयोल्मुकौ इति, निषधोल्मुका इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्लिष्टकर्मा श्रीकृष्ण की सोलह हजार स्त्रियाँ हुईं। उनसे सैकड़ों और हजारों उनके पुत्र हुए।८०

चारुदेष्णः सुचारुश्च चारुवेषो यशोधरः।
चारुश्रवाश्चारुयशाः प्रद्युम्नः साम्ब एव च ॥८१
रुक्मिण्यां वासुदेवस्य महाबलपराक्रमाः।
विशिष्टाः सर्वपुत्राणां सम्बभूवुरिमे सुताः ॥८२

चारुदेष्ण, सुचारु, चारुवेष, यशोधर, चारुश्रवा, चारुयशा, प्रद्युम्न और साम्ब—ये महान् वली और पराक्रमी पुत्र, जो सब पुत्रों में विशिष्ट थे, रुक्मिणी में उत्पन्न हुए।८१-८२।

तान्दृष्ट्वा तनयान्वीरान्रौक्मिणेयाञ्जनार्दनात्।
जाम्बवत्यब्रवीत्कृष्णं भार्या तस्य शुचिस्मिता ॥८३

श्रीकृष्ण से रुक्मिणी में उत्पन्न उन वीर पुत्रों को देखकर श्रीकृष्ण की पवित्र हास्य वाली पत्नी जाम्बवती ने उनसे कहा।८३

मम त्वं पुण्डरीकाक्ष विशिष्टगुणवत्तरम्[1]।
सुरेशसम्मितं[2] पुत्रं देहि दानवसूदन ॥८४

हे पुण्डरीकाक्ष! हे दानव-मर्दनकारी! मुझे आप देवराजतुल्य अत्यन्त विशिष्ट गुणशाली पुत्र दें।८४

जाम्बवत्या वचः श्रुत्वा जगन्नाथः स्वयं हरिः।
समारेभे तपः कर्तुं तपोनिधिररिन्दमः ॥८५

जाम्बवती की बात सुनकर शत्रुदमनकारी, तपोनिधि हरि ने स्वयं तप करना प्रारंभ कर दिया।८५

तच्छृणुध्वं मुनिश्रेष्ठा यथासौ देवकी सुतः।
दृष्ट्वा लेभे सुतं रुद्रं तप्त्वा तीव्रं महत्तपः ॥८६

मुनिश्रेष्ठो! जिस प्रकार देवकीपुत्र ने रुद्र का तीव्र महान् तप करके पुत्र प्राप्त किया, वह सुनिए।८६

इति श्रीकूर्मपुराणे यदुवंशानुकीर्तनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ।२४।

श्रीकूर्मपुराण में यदुवंशानुकीर्तन नामक चौबीसवाँ अध्याय समाप्त।२४।

---

१. विशिष्टं गुणवत्तरमिति पा०। २. सुरेशसदृशमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चविंशोऽध्यायः

अथ यदुवंशकृष्णकीर्तिवर्णनम्

सूत उवाच

अथ देवो हृषीकेशो भगवान्पुरुषोत्तमः ।
तताप घोरं पुत्रार्थं निधानं तपसस्तपः[1] ॥१

सूत बोले—अनन्तर तपोनिधि पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण ने पुत्र के लिए घोर तप किया ।१

स्वेच्छयाप्यवतीर्णोऽसौ कृतकृत्योऽपि विश्वसृक्[2] ।
चचार स्वात्मनो मूलं बोधयन्परमेश्वरम्[3] ॥२

स्वेच्छा से अवतार लेने पर भी और कृतकृत्य होने पर भी विश्वस्रष्टा भगवान् अपने मूल स्वरूप परमेश्वरत्व को स्थापित करने के लिए तप में लग गये ।२

जगाम योगिभिर्जुष्टं नानापक्षिसमाकुलम् ।
आश्रमं तूपमन्योर्वै मुनीन्द्रस्य महात्मनः ॥३

योगियों से सेवित और नाना पक्षियों से परिपूर्ण मुनीन्द्र महात्मा उपमन्यु के आश्रम में गये ।३

पतत्रिराजमारूढः सुपर्णमततेजसम् ।
शंखचक्रगदापाणिः श्रीवत्साङ्कितलक्षणः ॥४

हाथों में शंख, चक्र और गदा से शोभित तथा श्रीवत्स चिह्न से युक्त श्रीकृष्ण तेजस्वी पक्षिराज गरुड़ पर आरूढ़ होकर वहाँ पहुँचे ।४

नानाद्रुमलताकीर्णं नानापुष्पोपशोभितम् ।
ऋषीणामाश्रमैर्जुष्टं वेदघोषनिनादितम् ॥५

वह आश्रम अनेक वृक्षों एवं लताओं से व्याप्त, नाना प्रकार के पुष्पों से सुशोभित, ऋषियों के आश्रमों से सेवित एवं वेदध्वनि से निनादित था ।५

---

१. तपसान्तपः इति पा० । २. विश्वधृगिति पा० । ३. भावमैश्वरमिति पा० । ४. शार्ङ्गलगजसंकुलमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंहर्क्षशरभाकीर्णं शार्दूलगजसंयुतम् ।
विमलस्वादुपानीयैः सरोभिरुपशोभितम् ॥६

सिंह, रीछ, शरभ, बाघ तथा हाथी वहाँ बहुत थे। निर्मल तथा स्वादिष्ठ जल वाले सरोवरों से वह आश्रम शोभित था।६

आरामैर्विविधैर्जुष्टं देवतायतनैः शुभैः ।
ऋषिभिर्ऋषिपुत्रैश्च[1] महा मुनिगणैस्तथा ॥७

वहाँ अनेक प्रकार के बगीचे तथा पवित्र देवालय थे। ऋषियों, ऋषिपुत्रों तथा महामुनियों के समूह विराजमान थे।७

वेदाध्ययनसम्पन्नैः सेवितं चाग्निहोत्रिभिः ।
योगिभिर्ध्याननिरतैर्नासाग्रन्यस्तलोचनैः ॥८

वेदाध्ययन सम्पन्न मुनियों, अग्निहोत्रियों और नासाग्र भाग पर दृष्टि स्थिर किये हुए एवं ध्याननिरत योगियों से वह आश्रम युक्त था।८

उपेतं सर्वतः पुण्यं ज्ञानिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
नदीभिरभितो जुष्टं जापकैर्ब्रह्मवादिभिः ॥९

वह पवित्र आश्रम तत्त्वदर्शी ज्ञानियों से भरा था। उसके समीप ही नदियाँ बह रही थीं। जप करने वाले ब्रह्मवादियों से वह सेवित था।९

सेवितं तापसैः पुण्यैरीशाराधनतत्परैः ।
प्रशान्तैः[2] सत्यसङ्कल्पैर्निःशोकैर्निरुपद्रवैः[3] ॥१०

ईश्वराराधन में तत्पर प्रशान्त, सत्यसंकल्प वाले एवं शोकरहित पुण्यशाली तपस्वी वहाँ रह रहे थे।१०

भस्मावदातसर्वाङ्गैः रुद्रजाप्यपरायणैः ।
मुण्डितैर्जटिलैः शुद्धैस्तथान्यैश्च शिखाजटैः[4] ॥११

सम्पूर्ण अंगों में भस्म रमाये, रुद्रयज्ञ करने में तत्पर, मुण्डी, जटाधारी तथा अन्य बटिल शिखाधारी वहाँ रहते थे।११

सेवितं तापसैर्नित्यं ज्ञानिभिर्ब्रह्मवादिभिः[5] ।
तत्राश्रमवरे[6] रम्ये सिद्धाश्रमविभूषिते ॥१२

---

१. सेवितं मुनिपुत्रैश्चेति पा०। २. प्रशान्तसर्वसंल्पैर्विशोकैर्निरुपद्रवैः इति पा०। ३. निरुपल्पवैरिति पा०। ४. शिरोव्वजैः इति पा०। ५. न्यासिभिरिति पा०। ६. तदाश्रमवरे इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्धाश्रमविभूषित उस रमणीय श्रेष्ठ आश्रम का ज्ञानी, ब्रह्मवादी एवं तपस्वी नित्य सेवन करते थे।१२

गंगा भगवती[1] नित्यं वहत्येवाघनाशिनी।
स[2] तत्र वीक्ष्य विश्वात्मा तापसान्वीतकल्मषान् ॥१३

पापनाशिनी भगवती गंगा वहाँ नित्य बहती है। वहाँ विश्वात्मा ने निष्पाप तपस्वियों को देखा।१३

प्रणामेनाथ वचसा पूजयामास माधवः।
तं ते दृष्ट्वा जगद्योनिं शंखचक्रगदाधरम् ॥१४

माधव ने उन्हें प्रणाम किया और वाणी से पूजा की। संसार के मूलकारण तथा शंख-चक्र-गदाधारी भगवान् को उन तपस्वियों ने देखा।१४

प्रणेमुर्भक्तिसंयुक्ता योगिनां परमं गुरुम्।
स्तुवन्ति वैदिकैर्मन्त्रैः[3] कृत्वा हृदि सनातनम् ॥१५

योगियों के परम गुरु भगवान् को उन लोगों ने भक्तिभाव से प्रणाम किया और सनातन देव को हृदय में रखकर वैदिक मंत्रों से स्तुति की।१५

प्रोचुरन्योन्यमव्यक्तमादिदेवं महामुनिम्।
अयं स भगवानेकः साक्षी नारायणः परः ॥१६

फिर आदिदेव, अव्यक्त, महामुनि ईश्वर के बारे में वे लोग आपस में कहने लगे कि ये भगवान् एक, साक्षी, नारायण और परमपुरुष हैं।१६

आगच्छत्यधुना देवः प्रधानपुरुषः[4] स्वयम्।
अयमेवाव्ययः स्रष्टा संहर्त्ता चैव रक्षकः ॥१७

अमूर्तो मूर्तिमान् भूत्वा मुनीन्द्रष्टुमिहागतः।
एष धाता विधाता च समागच्छति सर्वगः ॥१८

इस समय स्वयं प्रधानपुरुष देव आये हैं। यही अविनाशी, स्रष्टा, संहर्ता तथा रक्षक हैं। ये अमूर्त होने पर भी मूर्तिमान् होकर मुनियों को देखने के लिए आये हैं। ये धाता, विधाता सर्वत्र व्याप्त हैं।१७-१८।

अनादिरक्षयोऽनन्तो[5] महाभूतो महेश्वरः।
श्रुत्वा बुद्ध्वा हरिस्तेषां वचांसि वचनातिगः ॥१९

---

१. भागीरथी इति पा०। २. स तानुद्दिश्य, सतान्वीक्ष्य इति पा०। ३. विविधैः स्तोत्रैरिति पा०। ४. पुराणपुरुष इति पा०। ५. अनादिरजरानन्त इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Árya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनादि, अक्षय, अनन्त, महाभूत, महेश्वर और वाणी से परे हरि ने उन लोगों के वचनों को सुना और समझा ।१९

ययौ स तूर्णं गोविन्दः[1] स्थानं तस्य महात्मनः ।
उपस्पृश्याथ भावेन तीर्थे तीर्थे स यादवः ॥२०

तब गोविन्द शीघ्रता से उस महात्मा के स्थान पर गये । यदुवंशी कृष्ण ने प्रत्येक तीर्थ में श्रद्धा भाव से आचमन किया ।२०

चकार देवकीसूनुर्देवर्षिपितृतर्पणम् ।
नदीनां तीरसंस्थाने स्थापितानि मुनीश्वरैः ॥२१
लिंगानि पूजयामास शम्भोरमिततेजसः ।
दृष्ट्वा दृष्ट्वा समायान्तं यत्र[2] यत्र जनार्दनम् ॥२२

देवकी पुत्र ने देवता, ऋषि और पितरों का तर्पण किया । नदियों के तटप्रदेश में मुनीश्वरों ने अमित तेजस्वी महादेव के शिवलिंग स्थापित किये थे । उनका जनार्दन ने दर्शन किया ।२१-२२।

पूजयाञ्चक्रिरे पुष्पैरक्षतैस्तन्निवासिनः ।
समीक्ष्य वासुदेवं तं शार्ङ्गशङ्खासिधारिणम् ॥२३

वहाँ के निवासियों ने शार्ङ्ग धनुष, शंख और खड्गधारी वासुदेव को देखकर पुष्पों और अक्षतों से उनकी पूजा की ।२३

तस्थिरे निश्चलाः सर्वे शुभाङ्गा[3] यतमानसाः ।
यानि तत्रारुरुक्षूणां मानसानि जनार्दनम् ॥२४
दृष्ट्वा समाहितान्यासन्निष्क्रामन्ति पुरा हरिम् ।
अथावगाह्य गङ्गायां कृत्वा देवर्षितर्पणम् ॥२५

शुभ अंगों वाले और संयत मन वाले सभी लोग वहाँ निश्चल भाव से खड़े रहे। वहाँ योगाभ्यासियों के जो मन पहले निष्क्रमण कर जाते थे, वे जनार्दन के दर्शन से समाधिस्थ हो गये । अनन्तर श्रीकृष्ण ने गंगा में स्नान करके देवों, ऋषियों तथा पितरों का तर्पण किया ।२४-२५।

आदाय पुष्पवर्याणि मुनीन्द्रस्याविशद्गृहम्[4] ।
दृष्ट्वा तं योगिनां श्रेष्ठं भस्मोद्धूलितविग्रहम् ॥२६

---

१. भगवानिति पा० । २. तत्र तत्र इति पा० ।३. शुभाङ्गावनताननाः, शुभाङ्गं तन्निवासिन इति पा० । ४. मुनीशस्येति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जटाचीरधरं शान्तं ननाम शिरसा मुनिम्[1] ।
आलोक्य कृष्णमायान्तं पूजयामास तत्त्ववित् ॥२७

उत्तम पुष्प लेकर उन्होंने मुनीन्द्र के गृह में प्रवेश किया। योगियों में श्रेष्ठ, भस्म से लिप्त शरीर, जटाचीर-धारी उस शान्त मुनि को देखकर उन्होंने प्रणाम किया। तत्त्ववेत्ता मुनि ने आये हुए कृष्ण देखकर उनकी पूजा की।२६-२७।

आसने वासयामास[2] योगिनां[3] प्रथमातिथिम् ।
उवाच वचसां योनिञ्जानीमः[4] परमम्पदम् ॥२८

विष्णुमव्यक्तसंस्थानं शिष्यभावेन संस्थितम् ।
स्वागतं ते हृषीकेश सफलानि तपांसि नः ॥२९

योगियों के प्रथम अतिथि श्रीकृष्ण को आसन पर बैठाया और कहा—हम वाणी के उद्भवस्थल, परम पद, अव्यक्त संस्थान और शिष्य भाव से उपस्थित विष्णु को जानते हैं। हृषीकेश ! आपका स्वागत है। हमारे तप सफलीभूत हो गये। १२८-२९।

यत्साक्षादेव विश्वात्मा मद्गेहं विष्णुरागतः ।
त्वां[5] न पश्यन्ति मुनयो यतन्तोऽपीह[6] योगिनः ॥३०

क्योंकि साक्षात् विश्वात्मा विष्णु ही मेरे घर आये हैं। आपको मुनि एवं यत्नशील योगी भी नहीं देख पाते हैं।३०

तादृशस्यात्रभवतः[7] किमागमनकारणम् ।
×श्रुत्वोपमन्योस्तद्वाक्यं भगवान्देवकीसुतः[8] ॥३१

व्याजहार महायोगी प्रसन्न[9] प्राणिपत्य तम् ।

ऐसे पूजनीय आपके आने का कारण क्या है ? उपमन्यु का वचन सुनकर महायोगी भगवान् श्रीकृष्ण ने प्रसन्न मुनि को प्रणाम करके कहा।३१

कृष्ण उवाच

भगवन्द्रष्टुमिच्छामि गिरीशं कृत्तिवाससम् ॥३२

कृष्ण बोले—भगवन् ! चर्मवस्त्रधारी शंकर को मैं देखना चाहता हूँ।३२

---

१. महीमिति पा०। २. चालयामास इति पा०। ३. योगिनमिति पा०। ४. योनिमयोनिमिति पा०। ५. त्वां नमस्यन्तीति पा०। ६. यतन्त इत्यार्षं, यतमाना इति साधु। ७. तादृशस्याथ भवंत इति, तावद्राख्याहि भवत इति पा० ।×सूत उवाच। लि० पु। ८. केशिमर्दन इति पा०। ९. वचनमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्प्राप्तो भवतः स्थानं भगवद्दर्शनोत्सुकः ।
कथं स भगवानीशो दृश्यो योगविदां वरः ॥३३

भगवान् के लिए उत्सुक होकर मैं आपके स्थान में आया हूँ। योगवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् ईश्वर कैसे दृश्य होंगे।३३

मयाचिरेण कुत्राहं[1] द्रक्ष्यामि तमुमापतिम् ।
प्रत्याह[2] भगवानुक्तो दृश्यते परमेश्वरः ॥३४

मैं शीघ्र उन उमापति को कहाँ देखूंगा ? मुनि ने कहा—भगवान् परमेश्वर दिखाई देंगे।३४

भक्त्यैवोग्रेण तपसा तत्कुरुष्वेह संयतः[3] ।
× इहेश्वरं देवदेवं[4] मुनीन्द्रा ब्रह्मवादिनः ॥३५
ध्यायन्त्याराधयन्त्येनं[5] योगिनस्तापसाश्च ये ।

संयमशील होकर यहाँ आप उग्र तप और भक्ति करें। यहाँ ब्रह्मवादी मुनीन्द्र, योगी तथा तपस्वी देवाधिदेव शंकर का ध्यान और आराधना करते हैं।३५½

इह देवः सपत्नीको भगवान् वृषभध्वजः ॥३६
क्रीडते विविधैर्भूतैर्योगिभिः परिवारितः ।

यहाँ सपत्नीक भगवान् शंकर अनेक प्रकार के भूतों और योगियों से घिरकर क्रीडा करते हैं।३६½

इहाश्रमे पुरारुद्रं तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ॥३७
लेभे महेश्वराद्योगं वसिष्ठो भगवानृषिः ।

इस आश्रम में पूर्वकाल में शंकर का अत्यन्त दारुण तप करके भगवान् वसिष्ठ मुनि ने महेश्वर से योग प्राप्त किया।३७½

इहैव भगवान्व्यासः कृष्णद्वैपायनः स्वयम्[6] ॥३८
दृष्ट्वा तं परमेशानं[7] लब्धवान् ज्ञानमैश्वरम् ।

यहीं स्वयं भगवान् कृष्णद्वैपायन ने उन शंकर का दर्शन करके ईश्वरीय ज्ञान-लाभ किया।३८½

---

१. पुत्रार्थमिति पा०। २. इत्याह इति, यथेह, वनेह भगवान् रुद्र इति च पा०। ३. प्रयत्नतः इति पा०। × उपमन्युरुवाच लि० पु०। ४. महादेवमिति पा०। ५. ध्यायंति साधवो देवं योगिनस्तपसा स्वयम्ध्यायन्त आसते देवं याजिनस्तापसाश्च ये इति च पा०। ६. प्रभुरिति पा०। ७. परमं ज्ञानं लब्धवानीश्वरमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इहाश्रम[1] पदे रम्ये तपस्तप्त्वा कपर्दिनः[2] ॥३९
अविन्दन्पुत्रकान्रुद्रात्सुरयो भक्तिसंयुताः ।

इस रमणीय आश्रम में विद्वानों ने तप करके कपर्दी रुद्र से पुत्रों को प्राप्त किया ।३९½

इह[3] देवा महादेवीं भवानीञ्च महेश्वरीम् ॥४०
संस्तुवन्तो महादेवं निर्भया निर्वृतिं ययुः ।

यहाँ देवगण महादेवी महेश्वरी भवानी तथा महादेव की सम्यक् प्रकार से स्तुति करते हुए निर्भय होकर शान्ति को प्राप्त हुए ।४०½

इहाराध्य महादेवं सावर्णिस्तपतां वरः ॥४१
लब्धवान्परमं योगं ग्रन्थकारत्वमुत्तमम् ।
प्रवर्त्तयामास सतां[4] कृत्वा वै संहितां शुभाम्[5] ॥४२

यहाँ तपस्वियों में श्रेष्ठ सावर्णि ने महादेव की आराधना करके परम योग तथा उत्तम ग्रन्थकारत्व को प्राप्त किया। फिर शुभ संहिता की रचना करके उसे सज्जनों में प्रचारित किया ।४१-४२।

(इहैव संहितां दृष्ट्वा कामो यः शशिपायिनः ।
महादेवश्चकारेमां पौराणीं तन्नियोगतः ॥४३
द्वादशैव सहस्राणि श्लोकानां पुरुषोत्तम ।
इह प्रवर्त्तिता पुण्या द्व्यष्टसाहस्रिकोत्तरा ।
वायवीयोत्तरं नाम पुराणं वेदसंमतम्) ॥

द्विजः[6] पौराणिकीं पुण्यां प्रसादेन द्विजोत्तमैः ।
इहैव[7] ख्यापितं शिष्यैर्वैशम्पायनभाषितम् ॥४३

(हे पुरुषोत्तम ! यहीं चन्द्रमौलि महादेव का तप करके उनकी आज्ञा से द्विज सावर्णि ने पौराणिकी संहिता की रचना की। उसके पूर्वभाग में बारह हजार श्लोक हैं और उत्तरभाग में सोलह हजार। वह पवित्र संहिता वेदसंमत वायुपुराण नाम से विख्यात है।) द्विज ने शिव की कृपा से पवित्र पौराणिकी संहिता को प्राप्त किया और उनके द्विजवर शिष्यों ने वैशम्पायन द्वारा भाषित पुराण को यहीं प्रख्यात किया ।४३

---

१. इहाश्रमवरे इति पा० २. कपर्द्दिनमिति पा०। ३. इहैव देवताः पूर्वं कालाद्भीता महेश्वरम्। दृष्टवन्तो हरं देवमिति, इहैव देवताः पूर्वं कालाग्निं वा महेश्वरमिति पा०। ४. शुभामिति पा०। ५. द्विजा इति पा०। ६. पौराणिकीं सुपुण्यार्थं सच्छिष्येष्विति पा०। ७. इहैव स्थापितं देवं शिशपायनभाषितम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याज्ञवल्क्यो महायोगी दृष्ट्वात्र तपसा हरम् ।
चकार तन्नियोगेन योगशास्त्रमनुत्तमम् ॥४४

महायोगी याज्ञवल्क्य ने यहाँ तप द्वारा शंकर का दर्शन करके उनके आदेश से परमोत्तम योगशास्त्र की रचना की ।४४

इहैव भृगुणा पूर्वं तप्त्वा पूर्वं महातपः ।
शुक्रो महेश्वरात्पुत्रो लब्धो योगविदां वरः ॥४५

यहीं पूर्वकाल में योगवेत्ताओं में श्रेष्ठ भृगु मुनि ने महान् तप करके महेश्वर से शुक्राचार्य को पुत्ररूप में प्राप्त किया ।४५

तस्मादिहैव देवेश[1] तपस्तप्त्वा सुदुश्चरम् ।
द्रष्टुमर्हसि विश्वेशमुग्रं भीमं कपर्दिनम् ॥४६

इसलिए हे देवस्वामी ! यहीं अत्यन्त कठिन तप करके आप उग्र, भीम, कपर्दी तथा विश्वेश्वर का दर्शन पा सकते हैं ।४६

एवमुक्त्वा ददौ ज्ञानमुपमन्युर्महामुनिः ।
व्रतं पाशुपतं योगं कृष्णायाक्लिष्टकर्मणे ॥४७

इस प्रकार कहकर महामुनि उपमन्यु ने अक्लिष्टकर्मा श्रीकृष्ण को ज्ञान, योग एवं पाशुपत व्रत का उपदेश किया ।४७

स तेन मुनिवर्येण व्याहृतो मधुसूदनः ।
तत्रैव तपसा देवं रुद्रमाराधयत्प्रभुः[2] ॥४८

मुनिवर के ऐसा कहने पर श्रीकृष्ण वहीं तप द्वारा शंकर की आराधना करने लगे ।४८

भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गो मुण्डो वल्कलसंयुतः ।
जजाप रुद्रमनिशं[3] शिवैकाहितमानसः ॥४९

उन्होंने सर्वांग में भस्म लेप लिया, मुण्डित और वल्कलधारी बन गये। शिव में एकाग्र चित्त हो दिनरात रुद्र का जप करने में लग गये ।४९

ततो बहुतिथे काले सोमः[4] सोमार्द्धभूषणः ।
अदृश्यत महादेवो व्योम्नि देव्या महेश्वरः ॥५०

---

१. देवेशं तपस्तप्त्वा महेश्वरम् इति पा० । २. प्रभुमिति पा० । ३. रुद्रं मनसा तत्रैकाहितमानसः इति पा० । ४. सौम्यः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदनन्तर बहुत समय बीत जाने पर अर्धचन्द्रालंकृत महादेव पार्वती के साथ आकाश में दिखाई पड़े ।५०

किरीटिनं गदिनं चित्रमालं पिनाकिनं शूलिनं[1] देवदेवम् ।
शार्दूलचर्माम्बरसंवृताङ्गं देव्या महादेवमसौ ददर्श ॥५१

मुकुट, गदा, चित्रमाला, पिनाक धनुष, त्रिशूल तथा व्याघ्रचर्मधारी देवाधिदेव महादेव को पार्वती के साथ, श्रीकृष्ण ने देखा ।५१

प्रभुं पुराणं पुरुषं पुरस्तात्सनातनं योगिनमीशितारम् ।
अणोरणीयांसमनन्तशक्तिं प्राणेश्वरं शम्भुमसौ ददर्श ॥५२

प्रभु, पुराणपुरुष, सनातन, योगी, ईश, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, अनन्तशक्तिसम्पन्न और प्राणों के ईश्वर शंभु को उन्होंने देखा ।५२

परश्वधासक्तकरं त्रिनेत्रं नृसिंहचर्मावृतभस्मगात्रम् ।
सबृंहद्गरन्तं प्रणवं बृहंतं सहस्रसूर्यप्रतिमं ददर्श ॥५३

हाथ में फरसा लिये हुए, तीन नेत्रों वाले, नरसिंह के चर्म से आवृत एवं भस्म से युक्त शरीर वाले, महान् प्रणव का उच्चारण करते हुए तथा सहस्रसूर्य के समान भासमान शिव को देखा ।५३

न यस्य देवा न पितामहोऽपि नेन्द्रो न चाग्निर्वरुणो न मृत्युः ।
प्रभावमद्यापि वदन्ति रुद्रं तमादिदेवं पुरतो[2] ददर्श ॥५४

जिनके प्रभाव को न तो देवता, न ब्रह्मा, न इन्द्र न अग्नि, न वरुण, न यमराज ही आज तक कह पाये हैं, उन आदिदेव को सामने देखा ।५४

तदान्वपश्यद्गिरिशस्य वामे स्वात्मानमव्यक्तमनन्तरूपम् ।
स्तुवन्तमीशं बहुभिर्वचोभिः शङ्खासिचक्रान्वित[3] हस्तमाद्यम् ॥५५

तब शंकर, वामभाग में अपने अव्यक्त के आद्य और अनन्तरूप को देखा, जिनके हाथों में शंख, खड्ग तथा चक्र थे और जो नानावाक्यों द्वारा शंकर की स्तुति कर रहे थे ।५५

कृताञ्जलिं दक्षिणतः सुरेशं हंसाधिरूढं पुरुषं ददर्श ।
स्तुवानमीशस्य परं प्रभावं पितामहं लोकगुरुं दिविस्थम् ॥५६

---

१. देवदेवं महेशमिति पा० । २. विदन्ति इति पा० । ३. प्रयत इति पा० । ४. चक्रार्पित इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिव के दाहिने तरफ अंजलि बाँधे, हंस पर आरूढ़, देवताओं के प्रभु, लोकगुरु, आकाशस्थ ब्रह्मा को शंकर की स्तुति करते हुए देखा ।५६

गणेश्वरानकंसहस्रकल्पान्नन्दीश्वरादीनमितप्रभावान्[1] ।
त्रिलोकभर्तुः पुरतोऽन्वपश्यत्कुमारमग्निप्रतिमं गणेशम्[2] ॥५७

तीनों लोक के स्वामी शिव के आगे सहस्र सूर्यों के समान गणेश्वरों, अमित प्रभाव वाले नन्दीश्वरों, अग्नितुल्य कार्तिकेय एवं गणेश को देखा ।५७

मरीचिमत्रिं पुलहं पुलस्त्यं प्रचेतसं दक्षमथापि कण्वम् ।
पराशरं तत्परतो वसिष्ठं स्वायम्भुवञ्चापि मनुं ददर्श ॥५८

श्रीकृष्ण ने वहाँ मरीचि, अत्रि, पुलह, पुलस्त्य, प्रचेतस्, दक्ष, कण्व, पराशर, वसिष्ठ और स्वायम्भुव मनु को देखा ।

तुष्टाव मन्त्रैरमरप्रधानं बद्धाञ्जलिर्विष्णुरुदारबुद्धिः ।
प्रणम्य देव्या गिरिशं स्वभक्त्या स्वात्मन्यथात्मानमसौ विचिन्त्य ॥५९

उदार बुद्धि श्रीकृष्ण ने हाथ जोड़कर गौरी सहित देवश्रेष्ठ शंकर को भक्तिपूर्वक प्रणाम करके अपने मन में आत्मचिन्तन किया और स्तुति करना प्रारंभ किया ।५९

कृष्ण उवाच

नमोऽस्तु ते शाश्वत सर्वयोग[3] ब्रह्मादयस्त्वामृषयो[4] वदन्ति ।
तमश्च[5] सत्त्वञ्च रजस्त्रयञ्च त्वामेव सर्वं प्रवदन्ति संतः ॥६०

श्री कृष्ण बोले—हे शाश्वत ! सर्वयोग ! आपको नमस्कार है । ऋषिगण आपको ब्रह्माधिपतिकहते हैं । एवं साधुगण तम, रज और सत्त्व तीनों आप ही को कहते हैं ।६०

त्वं ब्रह्मा[6] हरिरथ रुद्रविश्वकर्त्ता संहर्त्ता दिनकरमण्डलाधिवासः ।
प्राणस्त्वं हुतवहवासवादिभेदस्त्वामेकं[7] शरणमुपैमि देवमीशम् ॥६१

आप ब्रह्मा, हरि रुद्र, विश्वकर्ता, संहर्ता और सूर्यमण्डल में निवास करने वाले हैं । आप प्राण, अग्नि और इन्द्र आदि के भेद हैं । मैं एकमात्र ईश्वरदेव आपकी शरण में प्राप्त हूँ ।६१

साङ्ख्यास्त्वामगुणमथाहुरेकरूपं[8] योगस्थं सततमुपासते हृदिस्थम् ।
वेदास्त्वामभिदधतीह रुद्रमीड्यं[9] त्वामेकं शरणमुपैमि देवमीशम् ॥६२

---

१. गणेश्वरानेक इति पा० । २. विशाखमिति पा० । ३. विश्वयोग इति, सर्वयोने इति पा० । ४. ब्रह्माधिपन्त्वामृषय इति पा० । ५. तपश्चतत्त्वञ्च रजस्तमश्च इति, त्वमेव सत्त्वं च रजस्तमश्च इति पा० । ६. त्वं ब्रह्माविरसिविश्वयोनिरग्निः संहर्ता इति पा० । ७. वासवादिदेवस्त्वामेकमिति पा० । ८. स्त्वात्रिगुणमथाहुरेकयोनिमिति पा० । ९. रुद्रमग्निमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांख्यकगण आपको निर्गुण तथा एकरूप बताते हैं और योगी योग एवं हृदय में स्थित आपकी सतत उपासना करते हैं। वेद आपको रुद्र और स्तुत्य कहते हैं। एकमात्र देवेश आपकी में सतत शरण ग्रहण करता हूँ।६२

त्वत्पादे कुसुममथापि पत्रमेकं दत्त्वासौ भवति विमुक्तविश्वबन्धः।
सर्वाद्यं प्रणुदति सिद्धयोगिजुष्टं स्मृत्वा ते पदयुगलं भवत्प्रसादात् ॥६३

आपके चरणों में एक पुष्प या पत्र समर्पित करके मनुष्य संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है। सिद्धों और योगियों से सेवित आपके चरणों का स्मरण करने से आपकी कृपा से सब पाप नष्ट हो जाते हैं।६३

यस्याशेषविभागहीनममलं हृद्यन्तरावस्थितं
ते[1] त्वां योनिमनन्तमेकमचलं सत्यं परं सर्वगम् ॥६४

स्थानं प्राहुरनादिमध्यनिधनं यस्मादिदं जायते।
नित्यं तत्राहमुपैमि सत्यविभवं विश्वेश्वरं तं शिवम् ॥६५

जो सम्पूर्ण विभागों से रहित, निर्मल, हृदय के भीतर अवस्थित, (सबके) उत्पत्ति-स्थान, अनन्त, अद्वितीय, सत्य, सर्वोत्तम, सर्वव्यापक, अनादि-मध्य-निधन स्थान स्वरूप एवं सम्पूर्ण जगत् जिनसे उत्पन्न होता है ऐसे सत्यविभव, विश्वेश्वर शिव का मैं प्रति दिन आश्रय ग्रहण करता हूँ।६४-६५।

ओं नमो नीलकण्ठाय त्रिनेत्राय च रंहसे
महादेवाय ते नित्यमीशानाय नमो नमः ॥६६

नीलकण्ठ, त्रिनेत्र एवं रंहस् (वेगस्वरूप) को नमस्कार है। महादेव को नित्य नमस्कार है और ईशान को बार-बार नमस्कार है।६६

नमः पिनाकिने तुभ्यं नमो मुण्डाय दण्डिने।
नमस्ते वज्रहस्ताय दिग्वस्त्राय कपर्दिने ॥६७

पिनाकी को नमस्कार है। मुण्ड और दण्डी को नमस्कार है। वज्रहस्त, दिगम्बर और कपर्दी को नमस्कार है।६७

नमो भैरवनादाय[2] कालरूपाय दंष्ट्रिणे।
नागयज्ञोपवीताय नमस्ते वह्निरेतसे[3] ॥६८

भयंकर नाद करने वाले, कालरूप और दंष्ट्री को नमस्कार है। नागयज्ञोपवीत-धारी को तथा वह्निरेता को नमस्कार है।६८

१. तत्त्वं ज्योतिरिति, यस्य ज्योतिरिति पा०। २. भैरवनाशाय इति पा०।
३. ब्रह्मरेतसे इति, चाकरेतसे इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमोऽस्तु ते गिरीशाय स्वाहाकाराय ते नमः ।
नमो मुक्ताट्टहासाय भीमाय च नमो नमः ॥६९

गिरीश को नमस्कार है। स्वाहाकार को नमस्कार है। उन्मुक्त अट्टहास करने वाले को तथा भीमस्वरूप को बार-बार नमस्कार है।६९

नमस्ते कामनाशाय नमः कालप्रमाथिने ।
नमो भैरववेषाय हराय च निषङ्गिणे ॥७०

कामनाशक को नमस्कार है। कालप्रभावी को नमस्कार है। भैरववेशधारी एवं निषङ्गी हर को नमस्कार है।७०

नमोऽस्तु ते त्र्यम्बकाय नमस्ते कृत्तिवाससे ।
नमोऽत्र्यम्बकाधिपतये पशूनां[1] पतये नमः ॥७१

तीन नेत्र वाले को नमस्कार है। चर्मवस्त्रधारी को नमस्कार है। पशुओं के पति को नमस्कार है।७१

नमस्ते व्योमरूपाय व्योमाधिपतये नमः ।
नरनारीशरीराय साङ्ख्ययोगप्रवर्त्तिने ॥७२

व्योमरूप को नमस्कार है। व्योमाधिपति को नमस्कार है। नरनारीदेहधारी को नमस्कार है। सांख्य और योग के प्रवर्तक को नमस्कार है।७२

नमो भैरवनाथाय देवानुगतलिङ्गिने ।
कुमारगुरवे तुभ्यं[2] देवदेवाय ते नमः ॥७३

भैरवनाथ एवं देवानुगतलिंगी को नमस्कार है। कुमारगुरु तथा देवों के देव को नमस्कार है।७३

नमो यज्ञाधिपतये नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।
मृगव्याधाय महते ब्रह्माधिपतये नमः ॥७४

यज्ञपति को नमस्कार है। ब्रह्मचारी को नमस्कार है। महान् मृगव्याध तथा ब्रह्माधिपति को नमस्कार है।७४

नमो हंसाय[3] विश्वाय मोहनाय नमो नमः ।
योगिने योगगम्याय योगमायाय ते नमः ॥७५

हंस को नमस्कार है। विश्व और मोहन को बार-बार नमस्कार है। योगी, योग द्वारा प्राप्य तथा योगमाया वाले को नमस्कार है।७५

---

१. वसूनामिति पा०। २. नित्यमिति पा०। ३. भवाय, मोहाय इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमस्ते प्राणपालाय[1] घण्टानादप्रियाय च ।
कपालिने नमस्तुभ्यं ज्योतिषां पतये नमः ॥७६

प्राणपाल तथा घण्टानादप्रिय को नमस्कार है। कपाली तथा ज्योतिष्पति को नमस्कार है ।७६

नमो नमोऽस्तु ते तुभ्यं भूय एव नमो नमः ।
मह्यं सर्वात्मना कामान् प्रयच्छ परमेश्वर ॥७७

आपको बार-बार नमस्कार है। पुनः आपको बार-बार नमस्कार है। हे परमेश्वर! आप सब प्रकार से मेरी कामनाओं को पूर्ण करें ।७७

सूत उवाच

एवं हि भक्त्या देवेशमभिष्टूय[2] स माधवः ।
पपात पादयोर्विप्रा देवदेव्योः स दण्डवत् ॥७८

सूत बोले—इस प्रकार माधव देवेश्वर शिव की स्तुति करके महादेव और पार्वती के चरणों में दण्डवत् गिर पड़े ।७८

उत्थाप्य भगवान् सोमः कृष्णं केशिनिषूदनम् ।
बभाषे मधुरं वाक्यं मेघगम्भीरनिःस्वनः[3] ॥७९

तब भगवान् शिव ने केशिहन्ता कृष्ण को उठाकर मेघ के समान गंभीर वाणी में मधुर वचन कहा ।७९

×किमर्थं पुण्डरीकाक्ष तप्यते[4] भवता तपः ।
त्वमेव दाता सर्वेषां कामानां कर्मणामिह[5] ॥८०

हे पुण्डरीकाक्ष! आप क्यों तप कर रहे हैं? यहाँ सबके कर्मों और कामनाओं के देने वाले आप ही हैं ।८०

त्वं हि सा परमा मूर्त्तिर्मम नारायणाह्वया ।
न[6] विना त्वां जगत्सर्वं विद्यते पुरुषोत्तम ॥८१

आप ही मेरी नारायण नाम की श्रेष्ठ मूर्ति हैं। पुरुषोत्तम! आपके बिना सम्पूर्ण जगत् कुछ नहीं है ।८१

वेत्थ नारायणानन्तमात्मानं[7] परमेश्वरम् ।
महादेवं महायोगं स्वेन[8] योगेन केशव ॥८२

१. प्राणनादाय इति पा०। २. मभिस्तुत्य इति पा०। ३. निस्वनम् इति पा०। ×शिव उवाच लि० पु०। ४. तपस्तप्तं त्वयाव्यय इति पा०। ५. कामिनामिह इति पा०। ६. नानवाप्तं त्वया तात, नानवाप्तं त्वयीशान इति पा०। ७. पुरुषोत्तममिति पा०। ८. येन इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारायण ! केशव ! आप अनन्त, आत्मा, परमेश्वर, महायोगी को अपने योग से जानते हैं ।८२

×श्रुत्वा तद्वचनं कृष्णः प्रहसन्वै वृषध्वजम् ।
उवाचान्वीक्ष्य विश्वेशं देवीञ्च हिमशैलजाम् ॥८३

उनका वचन सुनकर हंसते हुए कृष्ण ने विश्वनाथ तथा पार्वती देवी की ओर देखकर शंकर से कहा ।८३

ज्ञातं हि भवता सर्वं स्वेन योगेन शङ्कर ।
इच्छाम्यात्मसमं पुत्रं त्वद्भक्तं देहि शङ्कर ॥८४

शंकर ! आपने अपने योग के प्रभाव से सब समझ लिया है । मैं अपने समान, आपका भक्त पुत्र चाहता हूँ । शंकर ! दीजिए ।८४

तथास्त्वित्याह विश्वात्मा प्रहृष्टमनसा हरः ।
देवीमालोक्य गिरिजां केशवं परिषस्वजे ॥८५

विश्वात्मा शिव ने प्रसन्न मन से कहा—'वैसा हो' । फिर पार्वती देवी को देख कर कृष्ण का आलिंगन किया ।८५

ततः सा जगतां माता शङ्कराद्धशरीरिणी ।
व्याजहार हृषीकेशं देवी हिमगिरीन्द्रजा ॥८६

तदनन्तर जगत् की माता और शंकर की अर्धांगिनी गिरिजा देवी ने श्रीकृष्ण से कहा ।८६

अहं[1] जाने तवानन्त निश्चलां सर्वदाच्युत ।
अनन्यामीश्वरे[2] भक्तिमात्मन्यपि च केशव ॥८७

हे अनन्त ! अच्युत ! केशव ! परमात्मा के प्रति और शंकर के प्रति जो आपकी सर्वदा निश्चला भक्ति रहती है उसे मैं जानती हूँ ।८७

त्वं हि नारायणः साक्षात्सर्वात्मा पुरुषोत्तमः ।
प्रार्थितो दैवतैः पूर्वं सञ्जातो देवकीसुतः ॥८८

आप साक्षात् नारायण, सर्वात्मा, पुरुषोत्तम हैं । पूर्वकाल में देवताओं के प्रार्थना करने पर आप देवकी पुत्र हुए हैं ।८८

×सूत उवाच लि० पा० । १. वत्स जाने तवात्यन्तनिश्चला भक्तिरच्युत इति पा० । २. जनन्यामीश्वरे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्य त्वमात्मनात्मानमात्मानं मम[1] सम्प्रति ।
नावयोर्विद्यते भेद एकं पश्यन्ति सूरयः ॥७९

इस समय आप अपने आत्मा और मेरे आत्मा को देखिए, हम दोनों में कोई भेद नहीं है। विद्वान् लोग हमें एक ही समझते हैं ।८९

इमानिह[2] वरानिष्टान्मत्तो गृह्णीष्व केशव ।
सर्वज्ञत्वं तथैश्वर्यं ज्ञानं तत्परमेश्वरम् ॥९०

ईश्वरे निश्चलां भक्तिमात्मन्यपि परं बलम् ।
एवमुक्तस्तया कृष्णो महादेव्या[3] जनार्दनः ॥९१

आदेशं[4] शिरसा गृह्य देवोऽप्याह[5] तथेश्वरम् ।
प्रगृह्य कृष्णं भगवानथेशः[6] करेण देव्या सह देवदेवः ।
सम्पूज्यमानो मुनिभिः सुरेशैर्जगाम कैलासगिरिं गिरीशः ॥९२

केशव ! यहाँ इन अभीष्ट वरों को मुझसे ग्रहण कीजिए—सर्वज्ञता, ऐश्वर्य, ज्ञान, ईश्वर में निश्चला भक्ति और आत्मा में परम बल। महादेवी के ऐसा कहने पर जनार्दन कृष्ण ने आदेश को शिर से ग्रहण किया। तब शंकर भी आशीर्वाक्य कहने लगे। फिर देवों के देव गिरीश हाथ से कृष्ण को पकड़कर देवों और मुनियों द्वारा पूजित होते हुए, पार्वती के साथ कैलास पर्वत पर चले गये ।९०-९२।

इति श्रीकूर्मपुराणे यदुवंशानुकीर्त्तने कृष्णतपश्चरणं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

श्रीकूर्मपुराण में यदुवंश के वर्णन प्रसंग में कृष्णतपश्चरण नामक पचीसवाँ अध्याय समाप्त ।२५।

---

१. अमलं पद्ममिति, परमं पदमिति पा०। २. अन्यानपीति पा०। ३. देवदेव्या इति पा०। ४. आशिष इति पा०। ५. देवः प्राह महेश्वर इति पा०। ६. भगवानपीश इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षड्विंशोऽध्यायः

अथ शंकरकीर्तिवर्णनम्

सूत उवाच

प्रविश्य मेरुशिखरं कैलासं कनकप्रभम्[1] ।
ररामः[2] भगवान्सोमः केशवेन महेश्वरः ॥१

सूत बोले—सुमेरु पर्वत के शिखरभूत, सुनहले कैलास पर्वत पर पार्वती और कृष्ण के साथ पहुँच कर भगवान् शिव क्रीड़ा करने लगे ।१

अपश्यंस्ते महात्मानं कैलासगिरिवासिनः ।
पूजयाञ्चक्रिरे कृष्णं देवदेवमिवाच्युतम् ॥२

कैलासगिरि निवासी जनों ने महात्मा, अच्युत कृष्ण को देखकर महादेव के समान उनकी पूजा की ।२

चतुर्बाहुमुदाराङ्गं कालमेघसमप्रभम् ।
किरीटिनं शार्ङ्गपाणिं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम् ॥३

श्री कृष्ण की चार भुजायें थीं, सुडोल अंग थे, काले बादल के समान कान्ति थीं । वे मुकुटधारी, हाथ में शार्ङ्ग धनुष लिये हुए, श्रीवत्स चिह्न से अंकित वक्षःस्थल वाले थे ।३

दीर्घबाहुं विशालाक्षं पीतवाससमच्युतम् ।
दधानमुरसा मालां वैजयन्तीमनुत्तमाम् ॥४

उनकी बाँहें लम्बी थीं, नेत्र विशाल थे, वस्त्र पीला था और छाती पर अत्यन्त श्रेष्ठ वैजयन्ती माला लटक रही थी (ऐसे अच्युत को देखा) ।४

भ्राजमानं श्रिया देव्या[3] युवानमतिकोमलम् ।
पद्मांघ्रिं पद्मनयनं सस्मितं सद्गतिप्रदम् ॥५

---

१. भगवान् शिवः इति पा० । २. ररामः इति परस्मैपदमार्षम् । ३. देव्या-ननेन्दुमतीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे श्री देवी से शोभायमान, युवा तथा अत्यन्त कोमल थे। उनके चरण और नेत्र कमल के समान थे। वे मुसकरा रहे और उत्तम गति देने वाले थे।५

कदाचित्तत्र लीलार्थं देवकीनन्दवर्द्धनः[1]।
भ्राजमानः श्रिया कृष्णश्चचार गिरिकन्दरम्[2] ॥६

वहाँ किसी समय लीला के लिए श्री से शोभित देवकी नन्दन श्रीकृष्ण पर्वत-कन्दराओं में विचरण करने लगे।६

गन्धर्वाप्सरसां मुख्या नागकन्याश्च कृत्स्नशः।
सिद्धा यक्षाश्च गन्धर्वा देवास्तं[3] च जगन्मयम् ॥७

दृष्ट्वाश्चर्यं परं गत्वा हर्षादुत्फुल्ललोचनाः।
मुमुचुः पुष्पवर्षाणि तस्य मूर्धनि महात्मनः ॥८

गन्धर्व, श्रेष्ठ अप्सरायें, सभी नागकन्यायें, सिद्ध, यक्ष, गन्धर्व और देवगणों ने उन जगन्मय को देखकर आश्चर्यित हो हर्ष से विकसित नेत्र होकर उन महात्मा के मस्तक पर फूलों की वर्षा की।७-८।

गन्धर्वकन्यका दिव्यास्तद्वदप्सरसो[4] वराः।
दृष्ट्वा चक्रमिरे कृष्णं सुस्तुतं[5] शुचिभूषणाः ॥९

अच्छी तरह स्तुति किये गये कृष्ण को देखकर दिव्य गन्धर्वकन्यायें तथा श्रेष्ठ अप्सरायें काममोहित हो गईं।९

काश्चिद्गायन्ति विविधं[6] गानं गीतविशारदाः।
सम्प्रेक्ष्य देवकीसूनुं सुन्दरं[7] काममोहिताः ॥१०

गीतविशारद कुछ ललनायें सुन्दर कृष्ण से चार आँखें होने पर काममोहित हो विविध प्रकार के गीत गाने लगीं।१०

काश्चिद्विलासबहुला नृत्यन्ति स्म तदग्रतः।
सम्प्रेक्ष्य सस्मितं काश्चित्पपुस्तद्वदनामृतम् ॥११

कुछ विलासबहुल रमणियाँ उनके आगे नृत्य करने लगीं। कुछ मुसकराते हुए उन्हें देखकर उनके मुखामृत का पान करने लगीं।११

---

१. देवक्यानन्दवर्धनः इति पा०। २. गिरिकन्दरे इति पा०। ३. स्तत्रतत्रेति पा०। ४. अप्सरसामिति पा०। ५. स्रस्तवस्त्रविभूषणा इति पा०। ६. विविधा गीतीरिति पा०। ७. सुस्मितमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश्चिद्भूषणवर्याणि स्वांगादादाय[1] सादरम् ।
भूषयाञ्चक्रिरे कृष्णं कन्या[2] लोकविभूषणम् ।

कुछ कन्यायें अपने अंग से उत्तम आभूषण लेकर लोक-विभूषण कृष्ण को आदर-पूर्वक भूषित कर दिया ।१२

काश्चिद्भूषणवर्याणि समादाय तदङ्गतः ।
स्वात्मानं भूषयामासुः स्वात्मकैरपि माधवम् ॥१३

किन्हीं कन्याओं ने कृष्ण के अंग से आभूषण उतारकर अपने अंगों में धारण कर लिया और अपने आभूषणों से माधव को भूषित कर दिया ।१३

काचिदागत्य कृष्णस्य समीपं काममोहिता ।
चुचुम्ब वदनाम्भोजं हरेर्मुग्धमृगेक्षणा ॥१४

कोई काममोहित मृगनयनी नायिका कृष्ण पर आसक्त होकर उनके समीप आकर उनके मुखकमल का चुम्बन करने लगी ।१४

प्रगृह्य काचिद्गोविन्दं[3] करेण भवनं स्वकम् ।
प्रापयामास लोकादिं मायया तस्य मोहिता ॥१५

कोई नायिका गोविन्द को हाथ से पकड़कर उनकी माया से मोहित होने के कारण लोकादि प्रभु को अपने घर ले गयी ।१५

तासां स भगवान् कृष्णः कामान् कमललोचनः ।
बहूनि कृत्वा रूपाणि पूरयामास लीलया ॥१६

कमललोचन भगवान् कृष्ण ने लीलापूर्वक बहुत-से रूप बनाकर उन रमणियों के कामभाव को पूर्ण किया ।१६

एवं वै[4] सुचिरं कालं देवदेवपुरे हरिः ।
रेमे नारायणः श्रीमान्मायया मोहयञ्जगत् ॥१७

इस प्रकार दीर्घकाल तक महादेव की पुरी में श्रीमान् कमललोचन नारायण ने जगत् को माया से मोहित करके रमण किया ।१७

गते बहुतिथे काले द्वारवत्या[5] निवासिनः ।
बभूवुर्विकला भीता गोविन्दविरहे जनाः ॥१८

---

१. समादाय तदंगतः इति पा० । २. कामिन्यो लोकभूषणमिति पा० । ३. चापि गोविन्दमिति पा० । ४. तु इति पा० । ५. द्वारावत्यामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत समय बीत जाने पर द्वारकापुरी के निवासी लोग श्रीकृष्ण के विरह में व्याकुल एवं भयभीत हो गये ।१८

ततः सुपर्णो बलवान्पूर्वमेव[1] विसर्ज्जितः ।
स कृष्णं मार्गमाणस्तु हिमवन्तं ययौ गिरिम्[2] ॥१९

तदनन्तर बलवान् गरुड पहले ही उनकी खोज में निकल पड़े । वे कृष्ण को ढूंढ़ते हुए हिमालय पर्वत पर गये ।१९

अदृष्ट्वा तत्र गोविन्दं प्रणम्य शिरसा मुनिम् ।
आजगामोपमन्युं तं पुरीं द्वारवतीं पुनः ॥२०

वहाँ गोविन्द को न देखकर शिर से उपमन्यु मुनि को प्रणाम करके पुनः द्वारका पुरी लौट आये ।२०

तदन्तरे महादैत्या राक्षसाश्चातिभीषणाः ।
आजग्मुर्द्वारकां शुभ्रां भीषयन्तः[3] सहस्रशः ॥२१

इस बीच हजारों अत्यन्त भीषण महादैत्य राक्षस सबको डराते हुए शुभ्र द्वारकापुरी में आ गये ।२१

स तान् सुपर्णो बलवान् कृष्णतुल्यपराक्रमः ।
हत्वा युद्धेन महतः रक्षति स्म पुरीं शुभाम् ॥२२

कृष्ण तुल्य पराक्रमी बलवान् गरुड ने महान् युद्ध में उन दैत्यों को मारकर शुभ द्वारकापुरी की रक्षा की ।२२

एतस्मिन्नेव काले तु नारदो भगवानृषिः ।
दृष्ट्वा कैलासशिखरे कृष्णं द्वारवतीं गतः ॥२३

उसी समय कैलास के शिखर पर कृष्ण को देखकर भगवान् नारद ऋषि द्वारका गये ।२३

ते[4] दृष्ट्वा नारदमृषिं सर्वे तत्र निवासिनः ।
प्रोचुर्नारायणो नाथः कुत्रास्ते भगवान् हरिः ॥२४

वहाँ के उन सब निवासियों ने नारद ऋषि को देखकर पूछा—भगवान् नारायण प्रभु हरि कहाँ हैं ?२४

स तानुवाच भगवान्कैलासशिखरे हरिः ।
रमतेऽद्य महायोगी तं दृष्ट्वाहमिहागतः ॥२५

---

१. भगवानिति पा० । २. नगमिति पा० । ३. संशयन्त इति पा० । ४. तमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारद ने उनसे कहा--महायोगी भगवान् हरि आज-कल कैलास के शिखर पर रमण कर रहे हैं। मैं उन्हें देखकर आया हूँ।२५

तस्योपश्रुत्य वचनं सुपर्णः पततां वरः।
जगामाकाशगो विप्राः कैलासं गिरिमुत्तमम् ॥२६

विप्रवृन्द! उनकी बात सुनकर पक्षियों में श्रेष्ठ गरुड आकाशमार्ग से कैलास पर्वत पर पहुँच गये।२६

ददर्श देवकीसूनुं भवने रत्नमण्डिते।
तत्रासनस्थं[1] गोविन्दं देवदेवान्तिके हरिम् ॥२७

वहाँ रत्नमण्डित भवन में महादेव के समीप आसन पर स्थित देवकीपुत्र हरि को देखा।२७

उपास्यमानममरैर्दिव्यस्त्रीभिः समन्ततः।
महादेवगणैः सिद्धैर्योगिभिः परिवारितम् ॥२८

चारों ओर देववृन्द और दिव्य स्त्रियाँ उनकी उपासना कर रहे थे। महादेव के गण और सिद्ध, योगी उन्हें घेरे हुए थे।२८

प्रणम्य दण्डवद्भूमौ सुपर्णः शङ्करं शिवम्।
निवेदयामास[2] हरिं प्रवृत्तं द्वारकापुरे ॥२९

गरुड ने शिवशंकर को भूमि पर दण्डवत् प्रणाम किया और द्वारकापुरी में जो घटना हुई थी, उसे निवेदित किया।२९

ततः प्रणम्य शिरसा शङ्करं नीललोहितम्।
आजगाम पुरीं कृष्णः सोऽनुज्ञातो हरेण तु ॥३०

तदनन्तर कृष्ण नीललोहित शंकर को मस्तक से प्रणाम करके उनकी आज्ञा से द्वारकापुरी आ गये।३०

आरुह्य कश्यपसुतं स्त्रीगणैरभिपूजितः।
वचोभिरमृतास्वादैर्मानितो मधुसूदनः ॥३१

जब वे गरुड पर आरूढ हुए तो स्त्रियों ने उनकी पूजा की तथा अमृतोपम वचनों से मधुसूदन का सम्मान किया।३१

वीक्ष्य यान्तममित्रघ्नं गन्धर्वाप्सरसां[3] वराः।
अन्वगच्छन्महायोगं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥३२

---

१. वरासनस्थमिति पा०। २. वेदयामास स तत इति पा०। ३ गन्धर्वाप्सरसां गणः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शत्रुनाशक कृष्ण को जाते हुए देखकर गन्धर्वों और अप्सराओं में श्रेष्ठ जन महायोगी एवं शंख-चक्र-गदाधारी कृष्ण का अनुगमन करने लगे ।३२

विसर्जयित्वा विश्वात्मा[1] सर्वा एवाङ्गना हरिः ।
ययौ स तूर्णं गोविन्दो दिव्यां द्वारवतीं पुरीम् ॥३३

अनन्तर विश्वात्मा गोविन्द सभी ललनाओं को लौटाकर दिव्य द्वारकापुरी को चले गये ।३३

गते[2] देवेऽसुररिपौ न कामिन्यो मुनीश्वराः ।
निशेव चन्द्ररहिता विना तेन चकाशिरे ॥३४

मुनीश्वरो ! असुरशत्रु भगवान् के चले जाने पर कामिनियाँ उसी प्रकार शोभित नहीं हुईं जैसे चन्द्रमा से रहित होने पर रात्रि ।३४

श्रुत्वा पौरजनास्तूर्णं कृष्णागमनमुत्तमम् ।
मण्डयाञ्चक्रिरे दिव्यां पुरीं द्वारवतीं शुभाम् ॥३५

नगरवासी लोग कृष्ण के आने का समाचार सुनकर शीघ्र शुभ द्वारकापुरी को सजाने लगे ।३५

पताकाभिर्विशालाभिर्ध्वजैरन्तर्बहिः[3] कृतैः ।
मालादिभिः[4] पुरीं रम्यां भूषयाञ्चक्रिरे जनाः ॥३६

लोग विशाल पताकाओं, भीतर-बाहर लगाये हुए ध्वजों और माला आदि से रमणीय पुरी को मण्डित करने लगे ।३६

अवादयन्त विविधान्वादित्रान् मधुरस्वनान् ।
शङ्खान् सहस्रशो दध्मुर्वीणावादान्वितेनिरे ॥३७

मधुर शब्द करने वाले विविध प्रकार के बाजे बजाने लगे । हजारों शंख बजने लगे और वीणावादन प्रारंभ हो गया ।३७

प्रविष्टमात्रे गोविन्दे पुरीं द्वारवतीं शुभाम् ।
अगायन्मधुरं गानं स्त्रियो यौवनशोभिताः[5] ॥३८

शुभ द्वारकापुरी में गोविन्द के प्रविष्ट होते ही यौवन से सुशोभित रमणियाँ मधुर गीत गाने लगीं ।३८

---

१. सर्वात्मा सर्वनिव हि तान् गणान् इति पा० । २. गतेऽसुररिपौ नैव कामिन्यो मुनिपुङ्गवाः इति पा० । ३. ध्वजैरत्नपरिष्कृतैरिति पा० । ४. लाजादिभिरिति पा० । ५. यौवनपालिता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्ट्वा ननृतुरीशानं स्थिताः प्रासादमूर्द्धसु ।
मुमुचुः पुष्पवर्षाणि वसुदेवसुतोपरि ॥३९

भगवान् को देखकर महलों की चोटी पर स्थित नारियाँ नाचने लगीं तथा वसुदेव के पुत्र पर पुष्पवर्षा करने लगीं ।३१

प्रविश्य भगवान्[1] कृष्णस्त्वाशीर्वादाभिवर्द्धितः ।
वरासने महायोगी भाति देवीभिरन्वितः[2] ॥४०

भवन में प्रवेश करने पर श्रेष्ठ जनों ने उन्हें आशीर्वाद दिया । तब वे महायोगी श्रेष्ठ आसन पर बैठकर देवियों से युक्त हुए ।४०

सुरम्ये मण्डपे शुभ्रे शङ्खाद्यैः परिवारितः ।
आत्मजैरभितो मुख्यैः स्त्रीसहस्रैश्च संवृतः ।
तत्रासनवरे रम्ये जाम्बवत्या सहाच्युतः ॥४१
भ्राजते[3] चोमया देवो यथा देव्या समन्वितः ॥ ४२

अत्यन्त रमणीय धवल मण्डप में श्रीकृष्ण शंख आदि से विभूषित हो बैठ गये। उनके पास हजारों स्त्रियाँ और पुत्र आ पहुँचे । वहाँ उत्तम रमणीय आसन पर जाम्बवती के साथ श्रीकृष्ण उसी तरह सुशोभित हुए जैसे पार्वती के साथ शिव ।४१-४२।

आजग्मुर्देवगन्धर्वा द्रष्टुं लोकादिमव्ययम् ।
महर्षयः पूर्वजाता मार्कण्डेयादयो द्विजाः[4] ॥४३

द्विजगण ! लोक के आदि एवं अविनाशी हरि के दर्शनार्थ देवता, गन्धर्व तथा पूर्वोत्पन्न मार्कण्डेय आदि महर्षि आये ।४३

ततः स भगवान् कृष्णो[5] मार्कण्डेयं समागतम् ।
ननामोत्थाय शिरसा स्वासनञ्च[6] ददौ हरिः ॥४४

तदनन्तर भगवान् कृष्ण हरि उठकर, आये हुए मार्कण्डेय मुनि को शिर से प्रणाम किया और अपना आसन दिया ।४४

संपूज्य[7] तानृषिगणान् प्रणामेन सहानुगः ।
विसर्जयामास हरिर्दत्त्वा[8] तदभिवाञ्छितान् ॥४५

---

१. भवनमिति पा० । २. देवीभिरर्चितः इति पा० । ३. भ्राजते चानया देव्या भवान्येव समं शिवः इति पा० । ४. हरिम् इति पा० । ५. विष्णुरिति पा० । ६. त्वासनं प्रददौ पुनरिति पा० । ७. संपूज्यर्षिगणान् सर्वान् प्रणामेन महाभुज इति पा० । ८. दत्त्वा तदभिवाञ्छितानित्यत्र पुंस्त्वमार्षं सामान्यत्वात् क्लीबत्वमेवोचितम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरि ने अपने अनुयायियों के साथ प्रणाम से उन ऋषि गणों की पूजा करके उन्हें अभीष्ट वस्तु देकर विदा किया ।४५

तदा मध्याह्नसमये देवदेवः स्वयं हरिः ।
स्नातः[1] शुक्लाम्बरो भानुमुपतिष्ठन्[2] कृताञ्जलिः ॥४६

तब देवाधिदेव स्वयं हरि ने मध्याह्न के समय स्नान करके उज्ज्वल वस्त्र धारण कर हाथ जोड़कर सूर्य का उपस्थान किया ।४६

जजाप जाप्यं विधिवत्प्रेक्षमाणो दिवाकरम् ।
तर्पयामास देवेशो देवान् पितृगणान्मुनीन् ॥४७

सूर्य को देखते हुए विधिपूर्वक जपनीय मन्त्र का जप किया । देवस्वामी ने देवों, पितृगणों और मुनियों का तर्पण किया ।४७

प्रविश्य देवभवनं मार्कण्डेयेन चैव हि ।
पूजयामास लिङ्गस्थं भूतेशं भूतिभूषणम् ॥४८

मार्कण्डेय के साथ देवमन्दिर में प्रवेश करके लिंगस्थित भूतिभूषण, भूतपति (शंकर) की पूजा की ।४८

समाप्य नियमं सर्वं नियन्ता[3] स स्वयं नृणाम् ।
भोजयित्वा मुनिवरं ब्राह्मणानभिपूज्य च ॥४९

मनुष्यों के नियामक हरि ने स्वयं सभी नियमों को पूर्ण करके मुनिवर (मार्कंडेय) को भोजन कराया और ब्राह्मणों की पूजा की ।४९

कृत्वात्मयोगं विप्रेन्द्रा मार्कण्डेयेन चाच्युतः ।
कथां पौराणिकीं पुण्यां चक्रे पुत्रादिभिर्वृतः[4] ॥५०

मनुष्यों के नियामक हरि स्वयं सभी नियमों को पूर्ण करके मुनिवर मार्कण्डेय के साथ पौराणिक कथा प्रारंभ की ।५०

अथैतत्सर्वमखिलं दृष्ट्वा कर्म महामुनिः ।
मार्कण्डेयो हसन्कृष्णं बभाषे मधुरं वचः ॥५१

अनन्तर यह सब कर्म देखकर महामुनि मार्कण्डेय ने हंसते हुए कृष्ण से मधुर वचन कहा ।५१

---

१. स्नात्वा इति पा० । २. उपतिष्ठन्नित्यार्षम् । उपतिष्ठमान इति साधु ।
३. नियन्तासौ नृणां स्वयमिति पा० । ४. पौरादिभिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्कण्डेय उवाच

कः समाराध्यते देवो भवता कर्मभिः शुभैः ।
ब्रूहि त्वं कर्मभिः पूज्यो योगिनां[1] ध्येय एव च ॥५२

मार्कण्डेय बोले—आप शुभ कर्मों के द्वारा किस देवता की आराधना करते हैं ? बताइए, क्योंकि कर्मों द्वारा पूजनीय तथा योगियों द्वारा ध्यान करने योग्य तो आप ही हैं ।५२

त्वं हि तत्परमं ब्रह्म निर्वाणममलं[2] पदम् ।
भारावतरणार्थाय जातो वृष्णिकुले प्रभुः[3] ॥५३

आप ही परम ब्रह्म तथा निर्मल निर्वाण (मोक्ष) पद हैं । प्रभु आप पृथ्वी का भार उतारने के लिए वृष्णिकुल में अवतीर्ण हुए हैं ।५३

तमब्रवीन्महाबाहुः[4] कृष्णो ब्रह्मविदां वरः ।
शृण्वतामेव पुत्राणां सर्वेषां प्रहसन्निव ॥५४

ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ महाबाहु कृष्ण ने सभी पुत्रों के सुनते हुए मुसकराकर मुनि से कहा ।५४

श्रीभगवानुवाच[5]

भवता कथितं सर्वं सत्यमेव न संशयः ।
तथापि देवमीशानं पूजयामि सनातनम् ॥५५

श्रीभगवान् बोले—आपने सब सत्य कहा है, इसमें कोई सन्देह नहीं है । तो भी मैं सनातन शंकर देव की पूजा करता हूँ ।५५

न मे विप्रास्ति कर्त्तव्यं नानवाप्तं कथञ्चन ।
पूजयामि तथापीशं जानन्वै परमं शिवम् ॥५६

विप्र ! मुझे कुछ भी कर्तव्य नहीं हैं और कोई भी वस्तु मुझे अप्राप्त नहीं हैं । तो भी मैं जानबूझकर परम शिव स्वामी की पूजा करता हूँ ।५६

न वै पश्यन्ति ते देवं मायया मोहिता जनाः ।
ततश्चैवात्मनो[6] मूलं ज्ञापयन् पूजयामि तम् ॥५७

माया से मोहित जन उस देव को नहीं देखते हैं । इसलिए मैं अपना मूल जानता हुआ उनकी पूजा करता हूँ ।५७

---

१. योगिभिर्ध्येय इति पा० । २. निर्वाणममलं परमि ति पा० । ३. हरिरिति पा० । ४. महातेजा इति पा० । ५. कृष्ण उवाच इति पा० । ६. ततोऽहं स्वात्मनो मूलं ज्ञापयामि च तं शिवमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न च लिङ्गार्चनात्पुण्यं लोके[1] दुर्गतिनाशनम् ।
तथा[2] लिङ्गे हितायैषां लोकानां पूजयेच्छिवम् ॥५८

शिवलिंग-पूजन से बढ़कर पुण्य नहीं हैं। वह दुर्गति का नाशक है। लोगों के कल्याण के लिए लिंग में शिव की पूजा करनी चाहिए।५८

योऽहं तल्लिंगमित्याहुर्वेदवादविदो जनाः ।
ततोऽहमात्ममीशानं[3] पूजयाम्यात्मनैव[4] तत् ॥५९

जो मैं हूँ वही शिवलिंग है, ऐसा वेदवाद के जानने वाले विद्वान् कहते हैं। इसलिए मैं अपने से ही आत्मस्वरूप ईशान की पूजा करता हूँ।५९

तस्यैव परमा मूर्त्तिस्तन्मयोऽहं न संशयः ।
नावयोर्विद्यते भेदो वेदेष्वेतन्न[5] संशयः ॥६०

मैं ही उनकी परमा मूर्ति हूँ और मैं ही शिवमय हूँ। हम दोनों में कोई भेद नहीं है। यह बात वेद में हैं, इसमें सन्देह नहीं है।६०

एष देवो महादेवः सदा संसारभीरुभिः ।
याज्यः[6] पूज्यश्च वन्द्यश्च ज्ञेयो लिंगे महेश्वरः ॥६१

सदा संसार से डरने वालों को इन्हीं देव महादेव का यजन, पूजन तथा वन्दन करना चाहिए। शिवलिंग में महेश्वर को जानना चाहिए ।६१

मार्कण्डेय उवाच

किं तल्लिंगं सुरश्रेष्ठ लिंगे संपूज्यते च कः ।
ब्रूहि कृष्ण विशालाक्ष गहनं ह्येतदुत्तमम् ॥६२

मार्कण्डेय बोले—हे देवश्रेष्ठ ! वह लिंग क्या है ? और लिंग में किसकी पूजा की जाती है ? हे कृष्ण ! हे विशालनेत्र ! यह उत्तम गहन विषय बता दें।६२

श्रीभगवानुवाच

अव्यक्तं लिंगमित्याहुरानन्दं ज्योतिरक्षयम्[7] ।
वेदा महेश्वरं देवमाहुर्लिंगिनमव्ययम्[8] ।
पुरा चैकार्णवे घोरे नष्टे स्थावरजंगमे ॥६३
प्रबोधार्थं ब्रह्मणो मे प्रादुर्भूतो[9] महाशिवः ।

---

१. लोकेऽस्मिद् भीतिनाशनमिति पा०। २. विप्र इति पा०। ३. आत्मनात्मस्वरूपं स्वार्थे षण् ततो नलोपः। ४. पूजयाम्यात्मदेवतमिति पा०। ५. वेदेष्वेवं विनिश्चयः, विनिश्चितमिति पा०। ६. ध्येय इति पा०। ७. ज्योतिरक्षरमिति पा०। ८. लिङ्गमिति स्वयमिति पा०। ९. प्रादुर्भूतः स्वयं शिव इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्मात्कालात्समारभ्य ब्रह्मा चाहं सदैव हि ।
पूजयावो महादेवं लोकानां हितकाम्यया ॥६४

श्रीभगवान् बोले—लिंग अव्यक्त, आनन्द, ज्योति और अक्षय है। वेदों ने महेश्वर देव को लिंगी तथा अविनाशी कहा है। पूर्वकाल में भयंकर एकार्णव बन जाने तथा स्थावर और जंगम के नष्ट हो जाने पर मेरे और ब्रह्मा के प्रबोधनार्थ महाशिव का प्रादुर्भाव हुआ। उस समय से लेकर ब्रह्मा और मैं लोगों की हित-कामना से सदैव महादेव की पूजा करते हैं।६३-६४।

मार्कण्डेय उवाच

कथं लिंगमभूत्पूर्वमैश्वरं परमं पदम् ।
प्रबोधार्थं स्वयं कृष्ण वक्तुमर्हसि साम्प्रतम् ॥६५

मार्कण्डेय बोले—हे कृष्ण ! पूर्वकाल में आप दोनों के प्रबोधनार्थ परमपद ईश्वर लिंगरूप में कैसे उद्भूत हुए ? इस समय बता वें।६५

श्रीभगवानुवाच

आसीदेकार्णवं घोरमविभागं[1] तमोमयम् ।
मध्ये चैकार्णवे तस्मिञ्छंखचक्रगदाधरः ।
सहस्रशीर्षा भूत्वाहं सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥६६
सहस्रबाहुः पुरुषः[2] शयितोऽहं सनातनः ।

श्रीभगवान् बोले—जब एकार्णव घोर, अविभक्त, अंधकारमय था तब उस एकार्णव के बीच शंख-चक्र-गदाधारी, सहस्र शिरवाला, सहस्र नेत्र वाला एवं सहस्र भुजा वाला मैं सनातन पुरुष सोया हुआ था।६६½

एतस्मिन्नन्तरे दूरे पश्यामि स्मामितप्रभम् ।
कोटिसूर्यप्रतीकाशं भ्राजमानं श्रियावृतम् ॥६७
चतुर्वक्त्रं महायोगं[3] पुरुषं कारणं प्रभुम् ।
कृष्णाजिनधरं देवमृग्यजुः सामभिः स्तुतम् ॥६८

इस बीच दूर में मैंने अमित कान्ति वाले, सूर्य के समान देदीप्यमान, शोभा से युक्त, चार मुख वाले, महायोगी, कारण पुरुष, प्रभु, कृष्णमृगचर्मधारी देव (ब्रह्म) को देखा, जिनकी स्तुति ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद कर रहे थे।६७-६८।

---

१. मविमाव्यमिति पा०। २. युक्तात्मा इति पा०। ३. महाघोरं पुरुषं काञ्चनप्रभमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमेषमात्रेण स[1] मां प्राप्तो योगविदां वरः ।
व्याजहार स्वयं ब्रह्मा स्मयमानो महाद्युतिः ॥६९

योगवेत्ताओं में श्रेष्ठ, महाकान्तिमान् ब्रह्मा मुसकराते हुए क्षणभर में मेरे पास स्वयं आ गये और बोले—।६९

कस्त्वं कुतो वा किञ्चेह तिष्ठसे वद मे प्रभो ।
अहं कर्त्ता हि लोकानां स्वयम्भूः प्रपितामहः ॥७०

तुम कौन हो ? कहां से आये हो ? यहां क्यों रह रहे रहो ? प्रभो ! मुझे बता दो। मैं तीनों लोक का रचयिता स्वयंभू ब्रह्मा हूँ ।७०

एवमुक्तस्तदा तेन ब्रह्मणाहमुवाच ह[2] ।
अहं कर्त्तास्मि लोकानां संहर्ता च पुनः पुनः ॥७१

इस प्रकार पूछे जाने पर उस पुरुष ने ब्रह्मा से कहा—बार-बार लोकों की सृष्टि तथा संहार करने वाला तो मैं हूँ ।७१

एवं विवादे विततते मायया परमेष्ठिनः ।
प्रबोधार्थं परं लिंगं प्रादुर्भूतं शिवात्मकम् ॥७२

माया के कारण ब्रह्मा के साथ इस प्रकार विवाद छिड़ जाने पर हम लोगों को प्रबोधन देने के लिए शिव रूप परम लिंग का प्रादुर्भाव हुआ ।७२

कालानलसम[3]प्रख्यं ज्वालामालासमाकुलम् ।
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्तमादिमध्यान्तवर्जितम् ॥७३

वह कालाग्नि के समान, ज्वाला-मालाओं से व्याप्त, क्षय-वृद्धि से रहित और आदि, मध्य तथा अन्त से वर्जित था ।७३

ततो मामाह भगवानधो गच्छ त्वमाशु वै ।
अन्तमस्य विजानीष्व[4] ऊर्ध्वं गच्छेऽहमित्यजः ॥७४

तब भगवान् ब्रह्मा ने मुझसे कहा कि तुम शीघ्र नीचे जाओ। मैं ऊपर को जाता हूँ। हम दोनों इसके आदि-अन्त का पता लगायें ।७४

तदाशु समयं कृत्वा गतावूर्ध्वमधश्च तौ ।
पितामहोऽप्यहं नान्तं ज्ञातवन्तौ समेत्य[5] तौ ॥७५

तब शीघ्र हम दोनों नियम करके ऊपर-नीचे को गये। किन्तु हम दोनों को आदि-अन्त का पता न चला। फिर हम इकट्ठे हुए ।७५

---

१. तु इति पा० । २. तमिति पा० । ३. शतेति पा० ४. विजानीया इति पा० । ५. समाः शतमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो विस्मयमापन्नौ भीतौ देवस्य शूलिनः ।
मायया मोहितौ तस्य ध्यायन्तौ विश्वमीश्वरम् ॥७६
प्रोच्चरन्तौ महानादमोङ्कारं परमं पदम् ।
तं प्राञ्जलिपुटौ[1] भूत्वा शम्भुं तुष्टुवतुः परम् ॥७७

तदनन्तर आश्चर्यान्वित, भयभीत एवं शिव की माया से मोहित होकर विश्वेश्वर का ध्यान करते हुए महानाद, परमपद, ओंकार का उच्चारण करते हुए हाथ जोड़कर परम शिव की स्तुति करने लगे ।७६-७७।

ब्रह्मविष्णू ऊचतुः

अनादिमूलसंसाररोगवैद्याय शम्भवे ।
नमः शिवाय शान्ताय ब्रह्मणे लिंगमूर्त्तये ॥७८

ब्रह्मा और विष्णु बोले—आदि-मूल से रहित, संसाररूपी रोग के वैद्य, शान्त, लिंगमूर्ति, ब्रह्म, शिव को नमस्कार है ।७८

प्रलयार्णवसंस्थाय प्रलयोद्भूतिहेतवे ।
नमः शिवाय शान्ताय ब्रह्मणे लिंगमूर्त्तये ॥७९

प्रलयसमुद्र में संस्थित, प्रलयोत्पत्ति के कारण, लिंगमूर्ति, शान्त, ब्रह्म, शिव को नमस्कार है ।७९

ज्वालामालाप्रतीकाय[2] ज्वलनस्तम्भरूपिणे[3] ।
नमः शिवाय शान्ताय ब्रह्मणे लिंगमूर्त्तये ॥८०

ज्वाला-समूह के प्रतीक, ज्वलनस्तम्भरूपी, लिंगमूर्ति, शान्त, ब्रह्म, शिव को नमस्कार है ।८०

आदिमध्यान्तहीनाय स्वभावामलदीप्तये ।
नमः शिवायानन्ताय ब्रह्मणे लिंगमूर्त्तये ॥८१

आदि, मध्य और अन्त से हीन, स्वभावतः निर्मलदीप्ति और लिंगमूर्ति, अनन्त, ब्रह्म, शिव को नमस्कार है ।८१

× प्रधानपुरुषेशाय व्योमरूपाय वेधसे ।
नमः शिवाय शान्ताय ब्रह्मणे लिंगमूर्त्तये ॥८२

प्रधान पुरुष, ईश, व्योमरूप, विधाता, लिंगमूर्ति, शान्त, ब्रह्म, शिव को नमस्कार है ।८२

---

१. कृताञ्जलिपुटौ इति पा० । २. वृताङ्गाय इति पा० । ३. स्तम्भमूर्त्तये इति पा० । × महादेवाय महते ज्योतिषेऽनन्तशक्तये । नमः शिवाय इत्यधिकः पाठः लि. पु. ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्विकाराय सत्याय नित्यायातुलतेजसे[1] ।
वेदान्तसाररूपाय कालरूपाय ते नमः ॥८३

निर्विकार, सत्य, नित्य, अतुल तेजस्वी, वेदान्त के साररूप तथा कालरूप आपको नमस्कार है ।८३

नमः शिवाय शान्ताय ब्रह्मणे लिंगमूर्त्तये ।
एवं संस्तूयमानस्तु व्यक्तो भूत्वा महेश्वरः ॥८४

शिव, शान्त, ब्रह्म और लिंगमूर्ति आपको नमस्कार है। इस प्रकार स्तुति किये जाने पर महेश्वर प्रकट हो गये ।८४

भाति[2] देवो महायोगी सूर्यकोटिसमप्रभः ।
वक्त्रकोटिसहस्रेण ग्रसमान इवाम्बरम् ॥८५

उस समय वे देव महायोगी, करोड़ों सूर्य के समान कान्तिमान् तथा हजार करोड़ मुखों से मानों आकाश को ग्रस रहे थे ।८५

सहस्रहस्तचरणः सूर्यसोमाग्निलोचनः ।
पिनाकपाणिर्भगवान् कृत्तिवासास्त्रिशूलधृक् ॥८६

उनके हजारों हाथ और पैर थे। सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि उनके तीन नेत्र थे। उनके हाथ में पिनाक धनुष था। भगवान् चर्मवस्त्र एवं त्रिशूल धारण किये हुए थे ।८६

व्यालयज्ञोपवीतश्च मेघदुन्दुभिनिःस्वनः ।
अथोवाच महादेवः प्रीतोऽहंसुरसत्तमौ ॥८७

उनका यज्ञोपवीत सर्प का था। स्वर मेघध्वनि या दुन्दुभिध्वनि के समान था। अनन्तर महादेव ने कहा—देवश्रेष्ठो ! मैं प्रसन्न हूँ ।८७

पश्येतं[3] मां महादेवं भयं सर्वं प्रमुच्यताम् ।
युवां प्रसूतौ गात्रेभ्यो मम पूर्वं सनातनौ ॥८८

मुझ महादेव को देखो। सारा भय त्याग दो। तुम दोनों सनातन पूर्वकाल में मेरे अंगों से ही उत्पन्न हुए थे ।८८

अयं[4] मे दक्षिणे पार्श्वे ब्रह्मा लोकपितामहः[5] ।
वामपार्श्वे[6] च मे विष्णुः पालको हृदये हरः ॥८९

यह लोकपितामह ब्रह्मा मेरे दक्षिण पार्श्व में रहते हैं, पालन करने वाले विष्णु वामभाग में और हर हृदय के मध्य में विराजमान हैं ८९

---

१. नित्यायामलमूर्त्तये, नित्यायामलतेजसे च इति पा०। २. आदिदेव इति पा०। ३. पश्यतमिति पा०। ४. स्वयंभूर्दक्षिणे इति पा०। ५. लोककरः प्रभुरिति पा०। ६. वामे पार्श्वे चैव इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रीतोऽहं युवयोः सम्यग्वरं दद्मि[1] यथेप्सितम् ।
एवमुक्त्वाथ[2] मां देवो महादेवः स्वयं शिवः ॥९०
आलिंग्य देवं ब्रह्माणं प्रसादाभिमुखोऽभवत् ।
ततः प्रहृष्टमनसौ प्रणिपत्य महेश्वरम् ॥९१

मैं तुम दोनों से प्रसन्न हूँ, इसलिए यथेच्छ वरदान दे रहा हूँ। मुझसे ऐसा कहकर स्वयं शंकर देव महादेव ब्रह्मा का आलिंगन करके प्रसन्नमुख हुए। तब प्रसन्नचित होकर ब्रह्मा और विष्णु ने महेश्वर को प्रणाम किया।९०-९१।

ऊचतुः प्रेक्ष्य तद्वक्त्रं नारायणपितामहौ ।
यदि प्रीतिः समुत्पन्ना यदि देयो[3] वरो हि नः ॥९२
भक्तिर्भवतु नौ नित्यं त्वयि[4] देव महेश्वरे ।

उनका मुख देखकर ब्रह्मा और विष्णु ने कहा—देव ! यदि आप प्रसन्न हैं और हमें वर देना चाहते हैं तो आप महेश्वर में हमारी नित्य भक्ति हो।९२½

ततः स भगवानीशः प्रहसन्परमेश्वरः ॥९३
उवाच मां महादेवः प्रीतं[5] प्रीतेन चेतसा ।

तदनन्तर भगवान् परमेश्वर महादेव हँसते हुए प्रसन्नचित्त से प्रसन्न मुझसे बोले।९३½।

देवदेव उवाच

प्रलयस्थितिसर्गाणां कर्त्ता त्वं धरणीपते[6] ॥९४.

देवाधीश्वर ने कहा—हे पृथ्वीपते ! तुम सृष्टि, स्थिति और प्रलय करने वाले हो।९४

वत्स वत्स हरे विश्वं पालयैतच्चराचरम् ।
त्रिधा भिन्नोऽस्म्यहं विष्णो ब्रह्मविष्णुहराख्यया[7] ॥९५
सर्गरक्षालयगुणैर्निर्गुणोऽपि निरञ्जनः ।
संमोहं त्यज भो विष्णो पालयैनं पितामहम् ॥९६

वत्स हरे ! तुम इस चराचर विश्व का पालन करो। विष्णो ! एक ही मैं तीन प्रकार से विभक्त हूँ, जिनकी संज्ञा है—ब्रह्मा, विष्णु और महेश। मैं निर्गुण और निरञ्जन होने पर भी सृष्टि, रक्षा और प्रलय इन तीन गुणों से युक्त हूँ। हे विष्णो ! तुम संमोह त्याग दो और इस पितामह का पालन करो।९५-९६।

---

१. ददमीति आर्षं, ददामीति साधु। २, एवमुक्त्वा तु इति पा०। ३. देयो वरो हितो इति पा०। ४. भुवि इति पा०। ५. प्रीतिनम्रेण इति पा०। ६. धरणीतले इति पा०। ७. शिवाख्यया इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भविष्यत्येव भगवांस्तव पुत्रः सनातनः ।
अहं[1] च भवतो वक्त्रात्कल्पादौ सुररूपधृक् ॥९७
शूलपाणिर्भविष्यामि क्रोधजस्तव पुत्रकः ।

यह सनातन भगवान् तुम्हारा पुत्र होगा । कल्प के आरंभ में मैं देवरूप धारण करके आपके मुख से उत्पन्न होऊँगा । मेरे हाथ में त्रिशूल रहेगा । मैं तुम्हारा क्रोधज (क्रोध से उत्पन्न) पुत्र कहलाऊँगा ।९७½।

एवमुक्त्वा महादेवो ब्रह्माणं मुनिसत्तम ॥९८
अनुगृह्य च मां देवस्तत्रैवान्तरधीयत ।

मुनिश्रेष्ठ ! महादेव ब्रह्मा से ऐसा कह कर और ब्रह्मा पर अनुग्रह करके वहीं अन्तर्हित हो गये ।९८½।

ततःप्रभृति लोकेषु लिंगार्च्चा सुप्रतिष्ठिता ॥९९

तब से लोकों में शिवलिंग की पूजा सुप्रतिष्ठित हो गई ।९९

लिङ्ग[2] तत्तु यतो ब्रह्मन् ब्रह्मणः परमं वपुः ।
एतल्लिंगस्य माहात्म्यं भाषितं ते मयानघ ॥१००

ब्रह्मन् ! शिवलिंग वह है जिससे ब्रह्मा को परम शरीर प्राप्त हुआ । निष्पाप ! यह शिवलिंग का माहात्म्य मैंने तुम्हें बता दिया ।१००

एतद्बुध्यन्ति योगज्ञा न देवा न च दानवाः ।
एतद्धि परमं ज्ञानमव्यक्तं शिवसंज्ञितम् ॥१०१

इसको योगवेत्ता लोग जानते हैं, देवता और दानव नहीं । यह शिवसंज्ञक परम अव्यक्त ज्ञान है ।१०१

येन सूक्ष्ममचिन्त्यं तत्पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः[3] ।
तस्मै भगवते नित्यं नमस्कारं प्रकुर्महे ॥१०२

ज्ञाननेत्र से उस सूक्ष्म और अचिन्त्य को देखा जा सकता है । उन भगवान् को हम नित्य नमस्कार करते हैं ।१०२

महादेवाय देवाय[4] देवदेवाय भृंगिणे[5] ।
नमो वेदरहस्याय[6] नीलकण्ठाय ते नमः ॥१०३

महादेव, देव, देवों के देव भृंगी और वेदों के रहस्य को नमस्कार है । हे नीलकण्ठ ! आपको नमस्कार है ।१०३

१. अहं प्रभवतो वक्त्रात् कल्पान्ते घोररूपधृगिति पा० । २. लिङ्गं त्वक्षयनादिति पा० । ३. ज्ञानचक्षुषेति पा० ४. रुद्राय इति पा० । ५. लिङ्गिने इति पा० । ६. देवरहस्याय इति पा० । ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभीषणाय शान्ताय स्थाणवे हेतवे[1] नमः ।
ब्रह्मणे वामदेवाय[2] त्रिनेत्राय महीयसे ॥१०४

विभीषण, शान्त, स्थाणु और हेतु को नमस्कार है। ब्रह्म, वामदेव, त्रिनेत्र और महीयान् को नमस्कार है।१०४

शंकराय महेशाय गिरीशाय शिवाय च ।
नमः कुरुष्व सततं ध्यायस्व च[3] महेश्वरम् ॥१०५

शंकर, महेश, गिरीश और शिव को सतत नमस्कार करो और महेश्वर का ध्यान करो।१०५

संसारसागरादस्मादचिराद्धरिष्यसि ।
एवं स वासुदेवेन व्याहृतो मुनिपुङ्गवः[4] ॥१०६

इस संसार-सागर से शीघ्र उद्धार हो जायेगा। वासुदेव ने इस प्रकार उस मुनिवर से कहा।१०६

जगाम मनसा देवमीशानं विश्वतोमुखम् ।
प्रणम्य शिरसा कृष्णमनुज्ञातो[5] महामुनिः ॥१०७

मुनि मन ही मन विश्वतोमुख (सब ओर मुख वाले) ईशान महादेव के पास पहुँचे। फिर कृष्ण को शिर से प्रणाम करके उनसे महामुनि ने अनुमति ली।१०७

जगाम चेप्सितं शम्भुं[6] देवदेवं त्रिशूलिनम् ।
य इमं श्रावयेन्नित्यं लिङ्गाध्यायमनुत्तमम् ॥१०८
शृणुयाद्वा पठेद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ।

अनन्तर अभीष्ट देवेश्वर, त्रिशूली, शम्भु के पास चले गये। जो इस अत्युत्तम लिंगाध्याय को नित्य सुनाता है या सुनता है या पढ़ता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है।१०८½।

श्रुत्वा सकृदपि ह्येतत्पश्चरणमुत्तमम् ॥१०९
वासुदेवस्य विप्रेन्द्राः पापं मुञ्चति[7] मानवः ।
जपेद्वाहरहर्नित्यं ब्रह्मलोके महीयते ।
एवमाह महायोगी कृष्णद्वैपायनः प्रभुः ॥११०

---

१. योगिने इति पा०। २. देवदेवा य इति पा०। ३. मनसाहरमिति पा०। ४. मुनिसत्तमाः इति पा०। ५. विष्णुमिति पा०। ६ देशं देवदेवञ्च शूलिनमिति पा०। ७. मुञ्चन्ति मानवा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विप्रेन्द्रगण ! वासुदेव (कृष्ण) के इस परमोत्तम तप के श्रवण से मनुष्य पाप से मुक्त हो जाता है । अथवा प्रतिदिन नित्य इसका जप करने से वह ब्रह्मलोक में पूजित होता है। महायोगी कृष्णद्वैपायन प्रभु ने ऐसा ही कहा है ।१०९-११०।

इति श्रीकूर्मपुराणे यदुवंशानुकीर्त्तने लिंगोत्पत्तिर्नाम षड्विंशोऽयायः ॥२६

श्रीकूर्मपुराण में यदुवंश के अनुकीर्तन में लिंगोत्पत्ति नामक छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त ।२६।

सप्तविंशोऽध्यायः

सूत उवाच

ततो लब्धवरः कृष्णो जाम्बवत्यां महेश्वरात् ।
अजीजनन्महात्मानं साम्बमात्मजमुत्तमम्[1] ॥१

सूत बोले—तदुपरान्त महेश्वर से वर प्राप्त किये हुए कृष्ण ने जाम्बवती से परमोत्तम महात्मा साम्ब नामक पुत्र को उत्पन्न किया ।१

प्रद्युम्नस्य ह्यभूत्पुत्रो ह्यनिरुद्धो महाबलः ।
तावुभौ गुणसम्पन्नौ कृष्णस्यैवापरे तनू ॥२

प्रद्युम्न का पुत्र महाबली अनिरुद्ध हुआ । वे दोनों गुणसम्पन्न थे । और कृष्ण के ही दूसरे शरीर प्रतीत होते थे ।२

हत्वा च कंसं नरकमन्यांश्च शतशोऽसुरान् ।
विजित्य लीलया शक्रञ्जित्वा[2] बाणं महासुरम् ॥३
स्थापयित्वा जगत्कृत्स्नं लोके[3] धर्मांश्च शाश्वतान् ।
चक्रे नारायणो गन्तुं स्वस्थानं बुद्धिमुत्तमाम् ॥४

कंस, नरकासुर तथा अन्य सैकड़ों असुरों को मारकर इन्द्र तथा बाणासुर को लीलापूर्वक जीतकर सम्पूर्ण जगत् एवं लोक में शाश्वत धर्मों को स्थापित करके नारायण ने अपने स्थान को जाने का उत्तम विचार किया ।३-४।

---

१. साम्बमात्मजसत्तममिति पा० । २. शत्रून् इति पा० । ३. लोकधर्मांश्च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतस्मिन्नन्तरे विप्रा भृग्वाद्याः कृष्णमीश्वरम् ।
आजग्मुर्द्वारकां द्रष्टुं कृतकार्यं सनातनम् ॥५

विप्रवृन्द ! इस बीच भृगु आदि मुनि ईश्वर, कृत-कार्य एवं सनातन कृष्ण को देखने के लिए द्वारकापुरी में आये ।५

स तानुवाच विश्वात्मा प्रणिपत्याभिपूज्य च ।
आसनेसूपविष्टान्वै[1] सह रामेण धीमता ॥६

विश्वात्मा धीमान् कृष्ण ने बलराम के साथ उन्हें प्रणाम और पूजन करके उनके आसनासीन हो जाने पर कहा ।६

गमिष्यामि परं स्थानं स्वकीयं विष्णुसंज्ञितम् ।
कृतानि सर्वकार्याणि प्रसीदध्वं[2] मुनीश्वराः ॥७

मैं अपने विष्णु संज्ञक परम स्थान को जाऊँगा । मुनीश्वरों ! प्रसन्न होइए, मैंने सब कार्य पूरे कर लिये ।७

इदं कलियुगं घोरं सम्प्राप्तमधुनाऽशुभम् ।
भविष्यन्ति जनाः सर्वे ह्यस्मिन्पापानुवर्त्तनः ॥८

इस समय अकल्याणकारी घोर कलियुग आ गया है । इसमें सभी लोग पाप का अनुसरण करेंगे ।८

प्रवर्त्तयध्वं [3]विज्ञानमज्ञानाञ्च हितावहम् ।
येनेमे कलिजैः पापैर्मुच्यन्ते हि[4] द्विजोत्तमाः ॥९

द्विजश्रेष्ठो ! आप लोग अज्ञानी जनों के लिए हित कर विशिष्ट ज्ञान का प्रचार कीजिए, जिससे ये लोग कलिजन्य पापों मुक्त हो जायँ ।९

ये मां जनाः संस्मरन्ति कलौ सकृदपि प्रभुम् ।
तेषां नश्यति[5] तत्पापं भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥१०

येऽर्च्चयिष्यन्ति मां भक्त्या नित्यं कलियुगे द्विजाः ।
विधिना वेददृष्टेन ते गमिष्यन्ति तत्पदम् ॥११

कलियुग में जो लोग एक बार भी मुझ प्रभु का स्मरण करेंगे, उन भक्तों का पाप नष्ट हो जाएगा । द्विजगण ! कलियुग में पुरुषोत्तम क्षेत्र में जो नित्य भक्तिपूर्वक वेदोक्त विधि से मेरी अर्चना करेंगे, वे परमपद को प्राप्त करेंगे ।१०-११।

---

१. आसनेषूपविष्टेषु इति पा० । २. प्रसीदंतु इति पा० आर्षमात्मनेपदम् । ३. वै ज्ञानं ब्राह्मणानामिति पा० । ४. वै इति पा० । ५. नश्यतु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये ब्राह्मणा वंशजाता युष्माकं वै सहस्रशः ।
तेषां नारायणे भक्तिर्भविष्यति कलौ युगे ॥१२

कलियुग में आप लोगों के वंश में जो हजारों ब्राह्मण उत्पन्न होंगे, उनकी भक्ति नारायण में होगी ।१२

परात्परतरं यान्ति नारायणपरा जनाः ।
न ते तत्र गमिष्यन्ति ये द्विषन्ति महेश्वरम् ॥१३

नारायण परायण लोग श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठतर ब्रह्म को प्राप्त करेंगे । वे लोग वहाँ नहीं जायेंगे जो महेश्वर से द्वेष करते हैं ।१३

ध्यानं [1]योगस्तपस्तप्तं ज्ञानं यज्ञादिको विधिः ।
तेषां विनश्यति क्षिप्रं ये निन्दन्ति महेश्वरम्[2] ॥१४

जो महादेव की निन्दा करते हैं, उनका ध्यान, योग, तप ज्ञान, यज्ञादिक क्रियायें शीघ्र नष्ट हों जाती हैं ।१४

यो मां समर्च्चयेन्नित्यमेकान्तं भावमाश्रितः ।
विनिन्दन्देवमीशानं स याति नरकायुतम् ॥१५

जो नित्य एकान्त भाव का आश्रय लेकर मेरी अर्चना करता है, किन्तु शंकर देव की निन्दा करता है, वह दश हजार नरकों में जाता है ।१५

[3]तस्मात्संपरिहर्तव्या निन्दा पशुपतेर्द्विजाः ।
कर्मणा मनसा वाचा मद्भक्तेष्वपि यत्नतः ॥१६

द्विजगण ! इसलिए कर्म, मन तथा वाणी से शंकर की निन्दा का परित्याग कर देना चाहिए, मेरे भक्तों को विशेष रूप से ।१६

ये च दक्षाध्वरे शप्ता दधीचेन द्विजोत्तमाः ।
भविष्यन्ति कलौ भक्तैः परिहार्या प्रयत्नतः ॥१७

द्विज श्रेष्ठो ! दक्ष के यज्ञ में दधीच ने जिन ब्राह्मणों को शाप दिया था, वे कलियुग में उत्पन्न होंगे । भक्त गण यत्नपूर्वक उनका परिहार करे ।१७

द्विषन्तो देवमीशानं युष्माकं वंशसम्भवाः ।
शप्ताश्च गौतमेनोर्व्यां न सम्भाष्या द्विजोत्तमैः[4] ॥१८

शंकर देव से द्वेष करने वाले आपके वंशजों को गौतम ने शाप दिया था, उनसे द्विजोत्तमों को बोलना नहीं चाहिए ।१८

---

१. होम इति पा० । २. पिनाकिनमिति पा० । ३. तस्मात्सा परिहर्तव्या इति पा० । ४. द्विजोत्तमा : इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवमुक्ताश्च[1] कृष्णेन सर्वे ते वै महर्षयः ।
ओमित्युक्त्वा ययुस्तूर्णं स्वानि स्थानानि सत्तमाः ॥१९

सज्जनश्रेष्ठो ! कृष्ण के ऐसा कहने पर वे सब महर्षि 'अच्छा' यह कह कर अपने-अपने स्थानों को चले गये ।१९

ततो नारायणः कृष्णो लीलयैव जगन्मयः ।
संहृत्य स्वकुलं सर्वं ययौ तत्परमं पदम् ॥२०

तदन्तर जगन्मय नारायण कृष्ण लीला से ही अपने सम्पूर्ण कुल का नाश करके परम पद को चले गये ।२०

इत्येष वः समासेन राज्ञां [2]वशः सुकीर्तितः ।
न शक्यो विस्तराद्वक्तुं किं भूयः श्रोतुमिच्छथ ॥२१

यह राजाओं के बंश का वर्णन मैंने संक्षेप में किया है। विस्तार से इसका वर्णन नहीं कर सकता हूँ। अब और आप लोग क्या सुनना चाहते हैं ।२१

यः पठेच्छृणुयाद्वापि वंशानां कथनं शुभम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः[3] स्वर्गलोके महीयते ॥२२

जो व्यक्ति वंशों का पवित्र वर्णन पढ़ता है या सुनता है, वह सब पापों से मुक्त होकर स्वर्ग लोक में पूजित होता है ।२२

इति श्रीकूर्मपुराणे राजवंशानुकीर्त्तनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७

श्री कूर्मपुराण में राज-वंश-वर्णन नामक सत्ताइसवाँ अध्याय समाप्त ॥२७॥

अष्टाविंशोऽध्यायः

अथ पार्थाय व्यासदर्शनम्

ऋषय ऊचुः

कृतं त्रेता द्वापरञ्च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।
एषां प्रभावं[4] सूताद्य कथयस्व समासतः ॥१

---

१. इत्येवमुक्ता पा० । २. वंशोऽनुकीर्तितः इति पा० । ३. स्वभावमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषियों ने कहा—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग—ये चार युग हैं। सूत जी! इनका प्रभाव संक्षेप में आज हमें बता दें ।१

सूत उवाच

गते नारायणे कृष्णे स्वमेव परमं पदम् ।
पार्थः परमधर्मात्मा पाण्डवः शत्रुतापनः ॥२
कृत्वा चैवोत्तरविधिं शोकेन महतावृतः ।
अपश्यत्पथि गच्छन्तं कृष्णद्वैपायनं मुनिम् ॥३

सूत बोले—नारायण कृष्ण के अपने ही परम पद में चले जाने पर परमधर्मात्म. शत्रुनाशक, पाण्डव अर्जुन ने महान् शोक से उनका और्ध्वदेहिक क्रिया सम्पन्न करके मार्ग में जाते हुए कृष्णद्वैपायन मुनि को देखा ।२-३।

शिष्यैः प्रशिष्यैरभितः संवृतं ब्रह्मवादिनम् ।
पपात दण्डवद्भूमौ त्यक्त्वा शोकं तदार्जुनः ॥४

शिष्य-प्रशिष्यों से घिरे हुए ब्रह्मवादी मुनि को दण्डवत् प्रणाम करके अर्जुन उस समय शोकरहित हो गये ।४

उवाच परमप्रीत्या[1] कस्मादेतन्महामुने[2] ।
इदानीं गच्छसि क्षिप्रं कं[3] वा देशं प्रति प्रभो ॥५

उन्होंने परम प्रेम पूर्वक व्यास मुनि से पूछा—महामुने! प्रभो! इस समय आप शीघ्रता पूर्वक किस देश को जा रहे हैं ? ।५

सन्दर्शनाद्वै भवतः शोको मे विपुलो[4] गतः ।
इदानीं मम यत्कार्यं ब्रूहि पद्मदलेक्षण ॥६

आपके दर्शन से मेरा बहुत-सा शोक नष्ट हो गया। हे कमलनेत्र! इस समब मुझे जो करना चाहिए, उसका उपदेश दें ।६

तमुवाच महायोगी कृष्णद्वैपायनः स्वयम् ।
उपविश्य नदीतीरे शिष्यैः परिवृतो मुनिः ॥७

शिष्यों से घिरे हुए महायोगी कृष्ण द्वैपायन मुनि स्वयं नदी के किनारे बैठकर अर्जुन से कहने लगे ।७

इति × श्रीकूर्मपुराणे पार्थाय व्यासदर्शनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८

---

१. परमप्रीतः परिहर्त्तव्या इति पा०। २. कस्मोद्देशान्महामुने इति पा०। ३. गङ्गादेशमिति पा०। + अन्त अध्यायसमाप्तिर्न दृश्यते लि० पु०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री कूर्मपुराण में अर्जुन के व्यास-दर्शन की प्राप्ति नामक अट्ठाइसवाँ अध्याय समाप्त ॥२८॥

एकोनत्रिंशोऽध्यायः

अथ युगवंशानुकीर्तनम्

व्यास उवाच

इदं कलियुगं घोरं सम्प्राप्तं पाण्डुनन्दन ।
ततो गच्छामि देवस्य पुरीं[1] वाराणसीं शुभाम् ॥१

व्यास बोले—पाण्डुपुत्र ! यह घोर कलियुग आ गया है। इसलिए मैं महादेव की पवित्र नगरी काशी जा रहा हूँ।१

अस्मिन् कलियुगे घोरे लोकाः पापानुवर्त्तिनः ।
भविष्यन्ति महाबाहो[2] वर्णाश्रमविवर्जिताः ॥२

हे महापराक्रमी ! इस घोर कलियुग में लोग वर्णाश्रमधर्म से रहित पापाचारी होंगे ।२

नान्यत्पश्यामि जन्तूनां मुक्त्वा[3] वाराणसीं पुरीम् ।
सर्वपापोपशमनं[4] प्रायश्चित्तं कलौ युगे ॥३

कलियुग में लोगों के सभी पापों का शमन करने वाली प्रायश्चित्त स्वरूप वाराणसी पुरी को छोड़कर और दूसरा स्थान नहीं दीख रहा है ।३

कृतं त्रेता द्वापरञ्च सर्वेष्वेतेषु वै नराः ।
भविष्यन्ति महात्मानो धार्मिकाः सत्यवादिनः ॥४

सत्ययुग, त्रेता और द्वापर—इन युगों में मनुष्य महात्मा, धार्मिक और सत्यवादी होते हैं ।४

त्वं हि लोकेषु विख्यातो धृतिमाञ्जनवत्सलः[5] ।
पालयाद्य परं धर्मं स्वकीयं मुच्यसे भयात् ॥५

---

१. वाराणसीं महापुरीमि इति पा० । २. महापापामिति पा० । ३. त्यक्त्वा इति पा० । ४. सर्वपापप्रशमनमिति पा० । ५. धृतिमान्भूतवत्सलः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम लोगों में धैर्यशाली तथा जनप्रेमी के रूप में विख्यात हो। आज तुम अपना धर्मपालन करो, भय से मुक्त हो जाओगे ।५

एवमुक्तो भगवता पार्थः परपुरञ्जयः ।
पृष्टवान्प्रणिपत्यासौ युगधर्मान्द्विजोत्तमाः ॥६

द्विजश्रेष्ठो ! भगवान् के ऐसा कहने पर दूसरे के नगर को जीतने वाले अर्जुन ने मुनि को प्रणाम करके युग धर्मों के बारे में पूछा ।६

तस्मै प्रोवाच सकलं मुनिः सत्यवतीसुतः ।
प्रणम्य देवमीशानं युगधर्मान्सनातनान्[1] ॥७

सत्यवती पुत्र व्यास मुनि भगवान् शंकर को प्रणाम करके अर्जुन को सनातन युगधर्म बताने लगे ।७

व्यास उवाच

वक्ष्यामि ते समासेन युगधर्मान्नरेश्वर ।
न शक्यते मया राजन्विस्तरेणाभिभाषितुम् ॥८

व्यास बोले—नरेन्द्र ! मैं संक्षेप में युग धर्म बताऊँगा। राजन् ! विस्तार से बताने में मैं असमर्थ हूँ ।८

आद्यं कृतयुगं प्रोक्तं ततस्त्रेतायुगं बुधैः ।
तृतीयं द्वापरं पार्थ चतुर्थं कलिरुच्यते ॥९

पार्थ ! विद्वानों ने पहला सत्ययुग बताया है। दूसरा त्रेता, तीसरा द्वापर और चौथा कलियुग कहा जाता है ।९

ध्यानं तपः[2] कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते[3] ।
द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं[4] कलौ युगे ॥१०

सत्ययुग में ध्यान और तप धर्म है। त्रेता में ज्ञान, द्वापर में यज्ञ और कलियुग में एक मात्र दान धर्म है ।१०

ब्रह्मा कृतयुगे देवस्त्रेतायां भगवान्रविः ।
द्वापरे दैवतं विष्णुः कलौ देवो[5] महेश्वरः ॥११

सत्ययुग में देवता ब्रह्मा हैं, त्रेता में भगवान् सूर्य, द्वापर में विष्णु देवता हैं और कलियुग में शिव ।११

---

१. सनातनः इति पा० + २. परमिति पा०। ३. ज्ञानमध्वर इति पा०। ४. दानमेव इति पा०। ५. रुद्र इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मा विष्णुस्तथा सूर्यः सर्व एव कलावपि ।
पूज्यन्ते भगवान्रुद्रश्चतुर्ष्वपि पिनाकधृक् ॥१२

ब्रह्मा, विष्णु तथा सूर्य सभी देवता कलियुग में भी पूजे जाते हैं और पिनाक धनुषधारी शिव चारों युगों में पूजे जाते हैं ।१२

आद्ये कृतयुगे धर्मश्चतुष्पादः प्रकीर्त्तितः[1] ।
त्रेतायुगे त्रिपादः स्याद्द्विपादो द्वापरे स्थितः ॥१३

पहले सत्ययुग में धर्म के चार चारण थे । त्रेता युग में तीन चरण और द्वापर में दो चरण रह गये ।१३

त्रिपादहीनस्तिष्ठेत्तु सत्तामात्रेण तिष्ठति ।
कृते तु मिथुनोत्पत्तिर्वृत्तिः साक्षादलोलुपा ॥१४

इस कलियुग में तीन चरणों से ही धर्म सत्ता मात्र से स्थित है । सत्ययुग में मैथुनी सृष्टि तो होती थी । किन्तु लोगों में जीविका के प्रति लोलुपता नहीं थी ।१४

प्रजास्तृप्ताः सदा सर्वाः सर्वानन्दाश्च भोगिनः[2] ।
अधमोत्तमत्वं नास्त्यासां निर्विशेषाः[3] पुरञ्जय ॥१५

सभी प्रजायें सदा तृप्त, सब प्रकार से आनन्दित और भोगी होती थीं । उनमें ऊँच-नीच का भाव नहीं रहता था । हे अर्जुन ! सभी एक जैसे होते थे ।१५

तुल्यमायुः सुखं रूपं तासु[4] तस्मिन् कृते युगे ।
विशोकास्तत्त्वबहुला[5] एकान्तबहुलास्तथा ॥१६

उस सत्युग में सबकी आयु, सुख और रूप तुल्य होते थे । वे शोकरहित, तत्त्वज्ञानी और एकान्त प्रेमी होते थे ।१६

ध्याननिष्ठास्तपोनिष्ठा महादेवपरायणाः ।
ता वै निष्कामचारिण्यो नित्यं मुदितमानसाः ॥१७

वे ध्याननिष्ठ, तपोनिष्ठ तथा शिवपरायण होते थे । वे निष्काम कर्म करने वाले तथा नित्य प्रसन्न चित्त रहने वाले थे ।१७

पर्वतोदधिवासिन्यो ह्यनिकेताः परन्तप ।
रसोल्लासः[6] कालयोगात्त्रेताख्ये नश्यति[7] द्विजाः ॥१८

---

१. सनातन इति पा० । २. भोगिन्य इति वक्तव्ये भोगिन इति आर्षम् । ३. सदानन्दाः पुरन्ध्रय इति पा० । ४. तासामिति पा० । ५. सत्त्वबहुला इति पा० । ६. भावेनकामचारिण्य इति पा० । ७. आलस्यात्कालयोगाच्च इति, रसोल्लासः कालयोगादिति पा० । ८. नश्यते नृप नश्यते तत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्जुन ! वे पर्वत तथा समुद्र के पास रहने वाले, गृहविहीन होते थे। द्विजगण ! समय के प्रभाव से त्रेता में प्रजा के रस और उल्लास की सिद्धि नष्ट होने लगी।१८

तस्यां सिद्धौ प्रनष्टायामन्या सिद्धिरवर्त्तत ।
अपां सौख्ये प्रतिहते[1] तदा मेघात्मना तु वै ॥१९
मेघेभ्यस्तनयित्नुभ्यः प्रवृत्तं वृष्टिसर्ज्जनम् ।
सकृदेव तया वृष्ट्या संयुक्ते[2] पृथिवीतले ॥२०
प्रादुरासन् तथा तासां वृक्षा वै गृहसंज्ञिताः ।
सर्वैः प्रत्युपयोगस्तु तासां तेभ्यः प्रजायते ॥२१

उस सिद्धि के नष्ट हो जाने पर दूसरी सिद्धि मिल गई। जल का सुख नष्ट हो पर गर्जन करते हुए मेघों से वृष्टि की सृष्टि होने लगी। एक ही बार उस वृष्टि से पृथिवी के संयुक्त होने पर प्रजाओं के गृह स्वरूप वृक्ष उत्पन्न हो गये। उपयोग की सभी वस्तुएँ उन वृक्षों से मिलने लगीं। १९–२१।

वर्त्तयन्ति स्म तेभ्यस्तास्त्रेतायुगमुखे प्रजाः ।
ततः कालेन महता तासामेव विपर्ययात्[3] ॥२२
रागलोभात्मको[4] भावस्तदा ह्याकस्मिकोऽभवत् ।
विपर्ययेण तासां[5] तु तेन तत्काल भाविता ॥२३

त्रेतायुग के प्रारंभ में प्रजायें उन वृक्षों से जीविका चलाने लगीं। तदनन्तर महान् समय बीत जाने पर प्रजाओं के व्यतिक्रमदोष से राग और लोभ का भाव अकस्मात् उत्पन्न हो गया। २२–२३।

प्रणश्यन्ति ततः सर्वे वृक्षास्ते गृहसंज्ञिताः ।
ततस्तेषु प्रनष्टेषु विभ्रान्ता मैथुनोद्भवाः ॥२४

तत्पश्चात् गृहस्वरूप वे सभी वृक्ष नष्ट हो गये। उन वृक्षों के नष्ट हो जाने पर मैथुनोत्पन्न प्रजायें विभ्रान्त हो गईं।२४

अभिध्यायन्ति तां सिद्धिं सत्याभिध्यानतस्तदा[6] ।
प्रादुर्बभूवुस्तासां तु वृक्षास्ते गृहसंज्ञिताः ॥२५

तब सत्ययुग के सुखों का ध्यान उन्हें आने लगा। उनके स्मरण-ध्यान से वे गृहस्वरूप वृक्ष उग आये।२५

---

१. प्रतिगते इति पा०। २. संपृक्ते इति पा०। ३. विपर्यये इति पा०। ४. भोगात्मक इति पा०। ५. नाशाच्च इति पा०। ६. सत्याभिध्यायिन पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्त्राणि ते प्रसूयन्ते फलान्याभरणानि च ।
तेष्वेव जायते तासां गन्धवर्णरसान्वितम् ॥२६

वृक्ष फल, वस्त्र और आभूषण उन्हें देने लगे। उन्हीं वृक्षों से प्रजाओं को सुगन्ध, सौन्दर्य और रस मिलने लगे।२६

अमाक्षिकं महावीर्यं पुटके पुटके मधु ।
तेन ता वर्त्तयन्ति स्म त्रेतायुगमुखे प्रजाः ॥२७

दोने-दोने में अमाक्षिक (मक्खियों से नहीं) मधु उन्हें प्राप्त हो जाता था। उससे प्रजायें त्रेता युग के प्रारंभ में जीवन-निर्वाह करने लगीं।२७

[1]हृष्टास्तुष्टास्तया सिद्धया सर्वा वै विगतज्वराः।
पुनः[2] कालान्तरेणैव ततो[3] लोभावृतास्तदा ॥२८

उस सिद्धि (भोग्य वस्तुओं की प्राप्ति) से प्रजायें प्रसन्न, सन्तुष्ट एवं सन्ताप रहित रहती थीं। पुनः कालान्तर में प्रजायें लोभ से घिर गईं।२८

वृक्षांस्तान् पर्यगृह्णन्त मधु वा माक्षिकं बलात् ।
तासां तेनापचारेण पुनर्लोभकृतेन वै ॥२९

प्रनष्टा मधुना सार्द्धं कल्पवृक्षाः क्वचित् क्वचित् ।
[4]शीतवर्षातपैस्तीव्रैस्तास्ततो[5] दुःखिता भृशम् ॥३०

तब वे वृक्षों से बल पूर्वक मधु वा भोग्य पदार्थ लेने लगीं। उनके उस लोभ जन्य अपराध से कल्पवृक्ष कहीं-कहीं मधु सहित नष्ट हो गये। तब वे प्रजायें उत्कट सर्दी, गर्मी तथा धूप से अत्यन्त पीड़ित होने लगीं।२९-३०।

द्वन्द्वैः संपीड्यमानास्तु चक्रुरावरणानि च ।
कृत्वा द्वन्द्वविनिर्घातान्[6] वार्त्तोपायमचिन्तयन् ॥३१

सर्दी-गर्मी आदि द्वन्द्वों से पीड़ित होने पर उन्होंने द्वन्द्वों के निवारणार्थ उपाय किया तथा अपनी जीविका के बारे में भी सोचा।३१

नष्टेषु मधुना सार्द्धं[7] कल्पवृक्षेषु वै तदा ।
ततः प्रादुरभूत्तासां सिद्धिस्त्रेतायुगे पुनः ॥३२

उस समय मधु के साथ कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने पर त्रेतायुग में प्रजाओं के लिए पुनः सिद्धि उद्भूत हुई।३२

---

१. हृष्टाः पुष्टास्तथा सिद्धाः। २. तत इति पा०। पुनरिति पा०। ४. तीक्ष्णैरिति पा०। ५. ततस्ता इति पा०। ६. द्वन्द्वप्रतीकारानिति, प्रतीघातानिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्त्तायाः साधिका ह्यन्या वृष्टिस्तासां निकामतः ।
तासां वृष्टयुदकानीह यानि निम्नैर्गतानि तु ॥३३
अभवन्[1] वृष्टिसन्तत्या स्रोतःस्थानानि निम्नगाः ।
यदा[2] आपो बहुतरा आपन्नाः पृथिवीतले ॥३४
अपां भूमेश्च संयोगादौषध्यस्तास्तदाभवन् ।
अफालकृष्टाश्चानुप्ता ग्राम्यारण्याश्चतुर्दश ॥३५
ऋतुपुष्पफलैश्चैव वृक्षगुल्माश्च जज्ञिरे ।
ततः प्रादुरभूत्तासां रागो लोभश्च सर्वशः ॥३६

उनकी जीविका की साधक वृष्टि इच्छानुसार हुई । उनके लिए वर्षा के जो जल नीचे गिरे वे वृष्टि समूह के कारण स्रोतः स्थान नदी के रूप में परिणत हो गये । पृथ्वीतल पर जब बहुत जल प्राप्त हो गये तब जल और भूमि के संयोग से ओषधियाँ उत्पन्न हो गईं । बिन जोते-बोये गाँवों और जंगलों में चारों तरफ ऋतु के अनुसार फूल-फलों से पेड़-पौधे जम गये । तब उन प्रजाओं में राग और लोभ सब ओर से आ गये ।३३-३६ ।

अवश्यम्भावितार्थेन त्रेतायुगवशेन वै ।
ततस्ताः पर्यगृह्णन्त नदीक्षेत्राणि पर्वतान् ॥३७

त्रेतायुग के वश में अवश्यम्भावी धर्मानुसार प्रजाओं ने नदीक्षेत्रों और पर्वतों का आश्रय लिया ।३७

वृक्षगुल्मौषधीश्चैव प्रसह्य तु यथाबलम् ।
विपर्ययेण तासां[3] ता ओषध्यो विविशुर्महीम् ॥३८

वृक्षों, पौधों (लताओं) एवं ओषधियों को वे लोग बल पूर्वक ग्रहण करने लगे । उन को विपरीत आचरण के कारण ओषधियाँ पृथ्वी में प्रवेश करने लगीं ।३८

पितामहनियोगेन दुदोह पृथिवीं पृथुः ।
ततस्ता जगृहुः सर्वा ह्यन्योन्यं क्रोधमूर्च्छिताः ॥३९

तब ब्रह्मा के आदेश से राजा पृथु ने पृथ्वी का दोहन किया । तदनन्तर सभी प्रजाओं ने अपनी-अपनी वस्तुएँ प्राप्त कीं । किन्तु क्रोधमूर्च्छित होकर वे लोग एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे ।३९

---

१. अवहन्निति पा० । २. ये पुनस्तदपां स्तोका इति पा० । ३. नाशाच्च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदाचारे[1] विनष्टे तु बलात्कालबलेन च ।
मर्यादायाः प्रतिष्ठार्थं[2] ज्ञात्वैतद्भगवानजः ॥४०

बलवान् काल ने बलपूर्वक उनका सदाचार नष्ट कर दिया । यह जानकर मर्यादा की प्रतिष्ठा के लिए भगवान् ब्रह्मा ने सृष्टि करना प्रारम्भ किया ।४०

ससर्ज क्षत्रियान्ब्रह्मा ब्राह्मणानां हिताय वै ।
वर्णाश्रमव्यवस्थाञ्च त्रेतायां कृतवान्प्रभुः ॥४१

ब्राह्मणों के हित के लिए ब्रह्मा ने क्षत्रियों की सृष्टि की और प्रभु ने त्रेतायुग में वर्णों और आश्रमों की व्यवस्था की ।४१

यज्ञप्रवर्तनञ्चैव पशुहिंसाविवर्ज्जितम् ।
द्वापरेऽप्यथ विद्यन्ते मतिभेदात्तथा[3] नृणाम् ॥४२

रागो लोभस्तथा युद्धं मत्वा बुद्धिविनिश्चयम् ।
एको[4] वेदश्चतुष्पादस्त्रिधा त्विह विभाव्यते ॥४३

पशु-हिंसा से रहित यज्ञों का प्रवर्तन किया । अनन्तर द्वापर युग में मनुष्यों के बुद्धि भेद के कारण मनुष्य-समाज में राग, लोभ, युद्ध, स्वरूपार्थ का अनिश्चय—ये सब बातें घटने लगीं । उसी समय चार चरण वाला वेद तीन भागों में विभक्त हो गया ।४२-४३ ।

वेदव्यासैश्चतुर्द्धा च न्यस्यते द्वापरादिषु ।
ऋषिपुत्रैः पुनर्वेदा भिद्यन्ते दृष्टिविभ्रमैः ॥४४

मन्त्रब्राह्मणविन्यासैः स्वरवर्णविपर्ययैः ।
संहिता ऋग्यजुःसाम्नां प्रोच्यन्ते[5] परमर्षिभिः ॥४५

पश्चात् द्वापर आदि में वेदव्यास ने उसे चार भागों में विभक्त कर दिया । फिर ऋषिपुत्रों के दृष्टिभेद के कारण मंत्र, ब्राह्मण आदि के विन्यासों तथा स्वर और वर्ण के व्यतिक्रम द्वारा ऋक्, यजुस् और साम की संहितायें बन गईं ।४४-४५ ।

[6]सामान्योद्भावना चैव दृष्टिभेदैः क्वचित्क्वचित् ।
ब्राह्मणं कल्पसूत्राणि ब्रह्मप्रवचनानि[7] च ॥४६

इतिहासपुराणानि धर्मशास्त्राणि सुव्रत ।
अवृष्टिर्मरणञ्चैव तथैवान्ये[8] ह्युपद्रवाः ॥४७

---

१. पशुदारधनाद्यास्तु आप्तदारधनाद्यास्तु इति च पा० । २. प्रतिष्ठानमिति पा० । ३. तत्त्वानामविनिश्चय इति पा० । ४. एको देवश्चतुष्पादस्त्रेतास्विह विधीयते इति पा० । ५. संहन्यंते श्रुतर्षिभिरिति पा० । ६. सामान्याद्वै कृताश्चैव इति पा० । ७. मंत्रप्रवचनानि तुइति पा० । ८. तथैव व्याध्युपद्रवा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे उत्तमव्रती ! उनमें कहीं-कहीं दृष्टिभेदों से सामान्य उद्भावना की गई। ब्राह्मण, कल्पसूत्र, ब्रह्मप्रवचन, इतिहास, पुराण तथा धर्मशास्त्र की रचना हुई। उस समय से वर्षा का अभाव, मृत्यु तथा अन्य उपद्रव भी होने लगे।४६-४७।

वाङ्मनःकायजैर्दोषैर्निर्वेदो जायते नृणाम्।
निर्वेदाज्जायते तेषां दुःखमोक्षविचारणा ॥४८

तब मनुष्यों को वाचनिक, मानसिक तथा शारीरिक कष्ट होने लगा। कष्ट होने पर उससे छुटकारा पाने का विचार उत्पन्न हुआ।४८

विचारणाच्च वैराग्यं वैराग्याद्बोधदर्शनम्।
दोषाणां दर्शनाच्चैव द्वापरे ज्ञानसम्भवः ॥४९

विचार से वैराग्य और वैराग्य से दोषदृष्टि उत्पन्न हुई। दोषों के देखने से ही द्वापर में ज्ञान संभव हुआ।४९

एषा जस्तमोयुक्ता वृत्तिर्वै द्वापरे द्विजाः।
आद्ये कृते तु धर्मोऽस्ति स त्रेतायां प्रवर्त्तते।५०

द्विजगण ! यह रजोगुणी और तमोगुणी वृत्ति द्वापर में हुई। सत्ययुग में जो धर्म था वही त्रेता में चला।५०

द्वापरे व्याकुलीभूत्वा[1] प्रणश्यति कलौ युगे ॥५१

द्वापर में वह व्याकुल होकर कलियुग में विनाश को प्राप्त हो जाती है।५१

इति श्रीकूर्मपुराणे युगवंशानुकीर्त्तनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः।२९

श्रीकूर्मपुराण में युग-वंशानुकीर्तन नामक उनतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥२९॥

●

१. व्याकुलीभूय इति साधु। +अष्टाविंशोऽध्यायः लि० पु०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिंशोऽध्यायः

अथव्यासार्जुनसंवादे युगधर्मनिरूपणम्

व्यास उवाच

तिष्ये मायामसूयाञ्च[1] वधञ्चैव तपस्विनाम् ।
साधयन्ति नरा नित्यं तमसा व्याकुलीकृताः ॥१

व्यास बोले—कलिकाल में मनुष्य तमोगुण से व्याकुल रहकर छिद्रान्वेषण तथा तपस्वियों का वध करेंगे ।१

कलौ प्रमारको रोगः सततं क्षुद्भयं तथा ।
अनावृष्टिभयं घोरं देशानाञ्च विपर्ययः ॥२

कलियुग में संहारक रोग (हैजा, प्लेग, कैंसर आदि) होंगे । भूख, भय, घोर दुर्भिक्ष तथा देश-विप्लव होंगे ।२

अधार्मिका निराहारा[2] महाकोपाल्पतेजसः ।
अनृतं ब्रुवते लुब्धस्तिष्ये जाताः सुदुष्प्रजाः ॥३

कलियुग में लोग अधार्मिक, निराहार, महाक्रोधी, अल्प तेजस्वी, लोभी, मिथ्यावादी तथा दुःसन्तान वाले होंगे ।३

दुरिष्टैर्दुरधीतैश्च दुराचारैर्दुरागमैः ।
विप्राणां कर्मदोषैश्च प्रजानां जायते भयम् ॥४

दुष्ट इच्छा, दुरध्ययन, दुराचार, दुष्प्राप्ति तथा ब्राह्मणों के कर्मदोष से प्रजाओं का भय उत्पन्न होगा ।४

नाधीयते[3] तदा वेदान् न यजन्ति द्विजातयः ।
यजन्ति[4] यज्ञान्वेदांश्च पठन्ते चाल्पबुद्धयः ॥५

द्विजातिगण वेदों को नहीं पढ़ेंगे और यज्ञ नहीं करेंगे । (इसके विपरीत) मन्द बुद्धि लोग वेद पढ़ेंगे तथा यज्ञ करेंगे ।५

---

१. मायामसूयांच भयंचैव, द्वयञ्चैव इति च पा० । २. अनाचाराः इति पा० । ३. नाधीयन्ते कलौ वेदा इति पा० । ४. यजन्त्यन्यायतो देवान्मन्यन्ते बाह्यबुद्धयः, यजन्त्यन्यायतो देवानिति, जपन्त्यन्यायतो वेदानिति च पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूद्राणां मन्त्रयोगैश्च[1] सम्बन्धो ब्राह्मणैः सह ।
भविष्यति कलौ तस्मिञ्छयनासनभोजनैः ॥६

कलियुग में एक जगह सोने, बैठने, भोजन करने तथा मन्त्रयोग के द्वारा शूद्रों का सम्बन्ध ब्राह्मणों से होगा ।६

राजानः शूद्रभूयिष्ठा ब्राह्मणान्बाधयन्ति च ।
भ्रूणहत्या वीरहत्या प्रजायेत[2] नरेश्वरे ॥७

शूद्रप्राय राजा ब्राह्मणों को पीड़ित करेंगे । राजाओं में भ्रूणहत्या तथा वीरहत्या होगी ।७

स्नानं होमं जपं दानं देवतानां तथार्चनम् ।
तथान्यानि[3] च कर्माणि न कुर्वन्ति द्विजातयः ॥८

द्विजातिगण स्नान, होम, जप, दान, देवार्चन तथा अन्य पुण्य कर्म नहीं करेंगे ।८

विनिन्दन्ति महादेवं ब्राह्मणान् पुरुषोत्तमम् ।
आम्नायधर्मशास्त्राणि[4] पुराणानि कलौ युगे ॥९

कलियुग में लोग महादेव, ब्राह्मण, विष्णु, वेद, धर्मशास्त्र तथा पुराणों की निन्दा करेंगे ।९

कुर्वन्त्यवेददृष्टानि कर्माणि विविधानि तु ।
स्वधर्मे तु रुचिर्नैव ब्राह्मणानां प्रजायते ॥१०

लोग अनेक प्रकार के अवैदिक कर्म करेंगे । ब्राह्मणों को अपने धर्म में रुचि नहीं होगी ।१०

कुशीलचर्याः पाषण्डैर्वृथारूपैः समावृताः ।
बहुयाचनका लोका भविष्यन्ति परस्परम् ॥११

लोग दुष्ट स्वभाव के अनुसार आचरण करने वाले, वृथा रूप धारण करने वाले तथा पाखंडियों से घिरे रह कर परस्पर बहुत याचना करने वाले होंगे ।११

अट्टशूला जनपदाः शिवशूलाश्चतुष्पथाः ।
प्रमदाः केशशूलाश्च[5] भविष्यन्ति कलौ युगे ॥१२

कलियुग में जनपद अन्न बेचने वाले, लोग चौराहे पर शिवलिंग बेचने वाले तथा स्त्रियाँ भग बेचने वाली होंगी ।१२

---

१. मन्त्रमौनैश्च इति पा० । २. स जायेत नरेश्वर इति पा० । ३. अन्यानि चैव इति पा० । ४. सदंशास्त्राणि, स्मृतिशास्त्राणीति पा० । ५. केशशूलिन्यो इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुक्लदन्ता जिनाख्याश्च मुण्डाः काषाय वाससः।
शूद्रा धर्मं चरिष्यन्ति युगान्ते समुपस्थिते ॥१३

कलियुग उपस्थित होने पर शुभ्र दाँत वाले जैनी, मुण्डी, काषायवस्त्रधारी शूद्र धर्माचरण करेंगे।१३

सस्यचौरा भविष्यन्ति तथा चेलाभिमर्शिनः।
[1]चौराच्चौराश्च हर्त्तारो हर्त्तुर्हन्ता तथापरः ॥१४

लोग फसल चुरायेंगे, वस्त्रों का अपहरण करेंगे। चोरों के भी अपहरण करने वाले चोर होंगे तथा हत्या करने वाले का भी हत्यारा होगा।१४

दुःखप्रचुरमल्पायुर्देहोत्सादः[2] सरोगता।
अधर्माभिनिवेशत्वात्तमो वृत्तं कलौ स्मृतम् ॥१५

दुखों की बहुलता होगी, लोग अल्पायु होंगे, देह में रोग, चोट-चपेट या पीड़ा होगी। अधर्म में रुचि होने से कलियुग में तामसी वृत्ति होगी।१५

काषायिणोऽथ निर्ग्रन्थास्तथा कापालिकाश्च ये।
वेदविक्रयिणश्चान्ये तीर्थविक्रयिणः परे ॥१६

कोई काषायवस्त्रधारी और शास्त्राध्ययन शून्य, कोई कापालिक, कोई वेदविक्रेता और कोई तीर्थविक्रेता होंगे।१६

आसनस्थान्द्विजान्दृष्ट्वा चालयन्त्यल्पबुद्धयः।
ताडयन्ति द्विजेन्द्रांश्च शूद्रा राजोपजीविनः ॥१७

आसन पर बैठे हुए द्विजों को देखकर अल्पबुद्धि वाले उन्हें उठा देंगे। राजाश्रित शूद्र ब्राह्मण-श्रेष्ठों को ताड़ित करेंगे।१७

उच्चासनस्थाः शूद्राश्च[3] द्विजमध्ये परन्तप।
[4]द्विजामानकरो राजा कलौ कालबलेन तु ॥१८

हे शत्रुतापन अर्जुन! ब्राह्मणों के बीच शूद्र उच्च आसनों पर बैठेंगे। कलियुग में समय के बल से राजा द्विजों का अपमान करेंगे।१८

पुष्पैश्च [5]भूषणैश्चैव तथान्यैर्मङ्गलैर्द्विजाः।
शूद्रा[6]न्परिचरन्त्यल्पश्रुतभाग्यबलान्विताः ॥१९

---

१. चौराश्चौरस्य इति पा०। २. प्रचुरताल्पायुरिति पा०। ३. शूद्रास्तु इति पा०। ४. ज्ञात्वा न हिंसते इति पा०। ५. हिंसतैश्चैव इति पा०। ६. शूद्रानभ्यर्चयन्त्यल्प इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अल्प ज्ञान, अल्प भाग्य तथा अल्प बल वाले द्विजगण फूलों, आभूषणों और अन्य मांगलिक वस्तुओं से शूद्रों की परिचर्या करेंगे ।१९

न प्रेक्षन्तेऽर्चितांश्चापि शूद्रान्द्विजवरान्नृप ।
सेवावसरमालोक्य द्वारे तिष्ठन्ति च द्विजाः ॥२०

राजन् ! पूजित होने पर भी शूद्र ब्राह्मणों की ओर दृष्टिपात नहीं करेंगे और ब्राह्मण उनकी सेवा का अवसर देखकर द्वार पर खड़े रहेंगे ।२०

वाहनस्थान्समावृत्य शूद्राञ्छूद्रोपजीविनः ।
सेवन्ते ब्राह्मणास्तांस्तु स्तुवन्ति [1]स्तुतिभिः कलौ ॥२१

कलियुग में शूद्र से जीविका चलाने वाले ब्राह्मण सवारी पर चढ़े हुए शूद्रों को घेरकर उनकी सेवा करेंगे और स्तोत्रों से स्तुति करेंगे ।२१

अध्यापयन्ति वै वेदाञ्छूद्रान्शूद्रोपजीविनः ।
एवं निर्वेदकानर्थान्नास्तिक्यं[2] घोरमाश्रिताः ॥२२

इस प्रकार घोर नास्तिक्यभाव का अवलम्बन करके शूद्रोपजीवी ब्राह्मण शूद्रों को वेद एवं वेदबहिर्भूत अर्थों को पढ़ायेंगे ।२२

तपोयज्ञकलानान्तु[3] विक्रेतारो द्विजोत्तमाः ।
यतयश्च भविष्यन्ति शतशोऽथ सहस्रशः ॥२३

उत्तम द्विज तथा सैकड़ों-हजारों संन्यासी तप, यज्ञ और कलाओं का विक्रय करेंगे ।२३

[4]नाशयन्तः स्वकान्धर्मानधिगच्छन्ति तत्पदम् ।
गायन्ति [5]लौकिकैर्गानैर्देवतानि नराधिप ॥२४

महाराज ! अपने धर्मों का नाश करते हुए वे लोग नौकरी पायेंगे । लौकिक गानों से लोग देवताओं का गायन करेंगे ।२४

[6]वामपाशुपताचारास्तथा वै पाञ्चरात्रिकाः ।
भविष्यन्ति कलौ तस्मिन्ब्राह्मणाः क्षत्रियास्तथा ॥२५

कलियुग में ब्राह्मण और क्षत्रिय वामाचारी, पाशुपताचारी और पाञ्चरात्रिक (सम्प्रदायविशेष के मानने वाले) होंगे ।२५

---

१. श्रुतिभिरिति पा० । २. पठंति वैदिकान्मंत्रान् इति पा० । ३. फलानां तु इति पा० । ४. नाशयन्ति ह्यधोतानि गच्छन्ति चानघ इति पा० । ५. गीतैरिति पा० । ६. वामाः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञाने[1] कर्मण्यपगते लोके निष्क्रियतां गते।
कीटमूषिकसर्पाश्च धर्षयिष्यन्ति मा[2]नुषान् ॥२६

ज्ञान और कर्म के नष्ट हो जाने पर लोग निष्क्रिय हो जायेंगे तब कीड़े, चूहे और साँप मनुष्यों को काट खायेंगे ।२६

कुर्वन्ति चावतारांणि ब्राह्मणानां कुलेषु वै।
देवी[3]शापविनिर्दग्धाः पुरा दक्षाध्वरे द्विजाः ॥२७

पूर्वकाल में दक्ष के यज्ञ में देवी के शाप से जले हुए ब्राह्मण कलियुग में ब्राह्मणों के कुल में अवतार लेंगे ।२७

निन्दन्ति च महादेवं तमसाविष्टचेतसः।
वृथा धर्मञ्चरिष्यन्ति कलौ तस्मिन्युगान्तिके ॥२८

तमोगुण से आविष्ट चित्तवाले वे ब्राह्मण कलियुग के अन्तिम काल में महादेव की निन्दा करेंगे और और व्यर्थ के धर्म का आचरण करेंगे ।२८

सर्वे वीरा भविष्यन्ति ब्राह्मणाद्याः स्वजातिषु।
ये चान्ये शापनिर्दग्धा गौतमस्य महात्मनः ॥२९

सर्वे तेऽवतरिष्यन्ति[4] ब्राह्मणास्तासु योनिषु।
विनिन्दन्ति हृषीकेशं ब्राह्मणा ब्रह्मवादिनः ॥३०

ब्राह्मण आदि सभी अपनी जातियों में वीर होंगे। महात्मा गौतम के शाप से निर्दग्ध जो अन्य ब्राह्मण हैं वे सब उन योनियों में अवतीर्ण होंगे और ब्रह्मवादी ब्राह्मण विष्णु की निन्दा करेंगे ।२९-३०।

वेदबाह्यव्रताचारा दुराचारा वृथाश्रमाः।
मोहयंति जनान् सर्वान् दर्शयित्वा फलानि च ॥३१

तमसाविष्टमनसो बैडालव्रतिकाधमाः।
कलौ रुद्रो महादेवो लोकानामीश्वरः परः ॥३२

वेदबहिर्भूत व्रतों का आचरण करने वाले, दुराचारी, व्यर्थ श्रम करने वाले, तमोगुण से आविष्ट चित्त वाले, बिडालव्रती (जैसे बिल्ली चूहे का शिकार करने से पूर्व विनीत भाव से ध्याननिष्ठ रहती है, उसी तरह का विडालव्रती का धर्म भाव होता है), अधम जन सभी लोगों को फल दिखाकर मोहित करेंगे। कलियुग में रुद्र, महादेव लोगों के परम ईश्वर हैं ।३१-३२।

---

१. ज्ञान इति पा०। २. मानवानिति पा०। ३. दधीचिशापनिर्दग्धाः इति पा०।
४. ते च भविष्यन्तीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदेव[1] साधयेन्नृणां देवतानां च दैवतम् ।
करिष्यत्यवतारा[2]णि शंकरो नीललोहितः ॥३३
श्रौत[3]स्मार्त्तप्रतिष्ठार्थं भक्तानां हितकाम्यया ।
उपदेक्ष्यंति तज्ज्ञानं शिष्याणां ब्रह्मसंज्ञितम् ॥३४

मनुष्य देवताओं के भी देवता उन्हीं शंकर की उपासना करे। नीललोहित शंकर श्रौत और स्मार्त धर्मों की प्रतिष्ठा के लिए अवतार धारण करेंगे। भक्तों की हित कामना से वे शिष्यों को ब्रह्मसंज्ञक ज्ञान का उपदेश करेंगे ।३३-३४।

सर्ववेदान्तसारं हि धर्मान्वेदनिदर्शितान्[4] ।
सर्ववर्णान् समुद्दिश्य स्वधर्मा ये निदर्शिताः ॥३५

सभी वर्णों को उद्देश्य करके जो स्वधर्म उपदिष्ट हुए हैं, उन वेद-प्रतिपादित धर्मों तथा वेदान्त-तत्त्व का वे उपदेश करेंगे ।३५

ये तं[5]म्प्रीता निषेवन्ते येन केनोपचारतः ।
विजित्य कलिजान्दोषान्यान्ति ते परमं पदम् ॥३६

जो मनुष्य किसी भी उपचार से अत्यन्त प्रीति पूर्वक शंकर की सेवा करेंगे, वे कलिजन्य दोषों को त्यागकर परम पद को प्राप्त करेंगे ।३६

अनायासेन सुमहत्पुण्यमाप्नोति मानवः ।
अनेकदोषदुष्टस्य कलेरेको महान् गुणः ॥३७

ऐसा मनुष्य अनायास महान् पुण्य पा लेता है। यद्यपि कलियुग अनेक दोषों से दुष्ट है, फिर इसमें एक महान् गुण है ।३७

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन प्राप्य माहेश्वरं युगम् ।
विशेषाद्ब्राह्मणो रुद्रमीशानं शरणं व्रजेत् ॥३८

इसलिए सब प्रकार के प्रयत्नों से माहेश्वर युग (कलियुग) को पाकर विशेष रूप से ब्राह्मण ईशान रुद्र की शरण में जाये ।३८

ये नमन्ति विरूपाक्षमीशानं कृत्तिवाससम् ।
प्रसन्नचेतसो रुद्रं ते यान्ति[6] परमं पदम् ॥३९

जो व्यक्ति चर्मवस्त्रधारी त्रिलोचन रुद्र शंकर को प्रणाम करते रहते हैं, वे प्रसन्नचित्त होकर परम पद को प्राप्त करते हैं ।३९

---

१. न देवता भवेन्नृणामिति पा० । २. वलीवत्वमार्षम् । ३. कलौ तस्मात्प्रतिष्ठार्थं लोकानां हितकाम्यया इति पा० । ४. निदर्शनानिति पा० । ५. ये विप्रास्तानिति पा० । ६. यान्ति ते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथा रुद्रनमस्कारः सर्वकामफलो ध्रुवः ।
अन्यदेवनमस्कारान्न[1] तत्फलमवाप्नुयात् ॥४०

जैसे रुद्र को नमस्कार करने से सकल कामनाओं का फल निश्चित रूप से मिलता है, वैसे अन्य देवताओं को नमस्कार करने से वह फल नहीं मिलता है ।४०

एवंविधे कलियुगे दोषाणामेव शोधनम् ।
महादेवनमस्कारो ध्यानं दानमिति[2] श्रुतिः ॥४१

इस प्रकार के कलियुग में दोषों का ही शोधन होता है । महादेव को नमस्कार करना ध्यान और दान है—ऐसा वेद का कथन है ।४१

तस्मादनीश्वरानन्यान्[3] त्यक्त्वा देवं महेश्वरम् ।
समाश्रयेद्विरूपाक्षं[4] यदीच्छेत्परमं परम् ॥४२

इसलिए यदि परम पद की इच्छा हो तो अनीश्वर अन्य देवों को त्यागकर महेश्वर त्रिलोचन का आश्रय ग्रहण करना चाहिए ।४२

नार्चयन्तीह ये रुद्रं शिवं त्रिदशवंदितम् ।
तेषां दानं तपो यज्ञो वृथा जीवितमेव च ॥४३

जो देववन्दित रुद्र शिव की अर्चना नहीं करते हैं, उनका दान, तप, यज्ञ और जीवन भी व्यर्थ है ।४३

नमो रुद्राय महते देवदेवाय शूलिने ।
त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय योगिनां गुरवे नमः ॥४४

रुद्र, महान्, देवाधिपति, शूलधारी, त्रिनेत्र को नमस्कार है और योगियों के गुरु को नमस्कार है ।४४

नमोऽस्तु देव[5]देवाय महादेवाय वेध[6]से ।
शम्भवे स्थाणवे नित्यं शिवाय परमेष्ठिने ॥४५

देव-देव, महादेव, वेधा, शम्भु, स्थाणु, शिव और परमेष्ठी को नित्य नमस्कार है ।४५

नमः सोमा[7]य रुद्राय महा[8]ग्रासाय हेतवे ।
प्रपद्येऽहं विरूपाक्षं शरण्यं ब्रह्मचारिणम् ॥४६

---

१. आत्मदेवनमस्कारान्नतं साकल्यमाप्नुयात् इति पा० । २. दानं परा गतिरिति पा० । ३. तस्मादधीश्वरानन्यानिति पा० । ४. विरूपाक्षमीशानं कृत्तिवाससम् । प्रसन्नचेतसो रुद्रं यांति ते परमं पदम् इति पा० । ५. वामदेवाय इति पा० । ६. धीमते इति पा० । ७. शिवाय इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोम, रुद्र, महान् ग्रास करने वाले और कारण स्वरूप को नमस्कार है। त्रिलोचन, शरण देने वाले तथा ब्रह्मचारी की शरण में मैं प्राप्त हूँ।४६

महादेवं महायोगमीशानं चाम्बिकापतिम्।
योगिनां योगदातारं योगमायासमावृतम् ॥४७
योगिनां गुरुमाचार्यं[1] योगिगम्यं पिनाकिनम्।
संसारतारणं रुद्रं ब्रह्माणं ब्रह्मणोऽधिपम् ॥४८
शाश्वतं सर्वगं शान्तं ब्रह्मण्यं ब्राह्मणप्रियम्।
कपर्दिनं कालमूर्त्तिममूर्तिं[2] परमेश्वरम् ॥४९
एकमूर्त्तिं महामूर्त्तिं वेदवेद्यं दिवस्पतिम्।
नीलकण्ठं विश्वमूर्त्तिं व्यापिनं विश्वरेतसम्[3] ॥५०
कालाग्निं कालदहनं कामदं कामनाशनम्।
नमस्ये[4] गिरिशं देवं चन्द्रावयवभूषणम्[5] ॥५१
विलोहितं लेलिहानमादित्यं परमेष्ठिनम्।
उग्रं पशुपतिं भीमं भास्करं परमं[6] तपः ॥५२

महादेव, महायोगी, ईशान, अम्बिकापति, योगियों को योग देने वाले, योगमाया से आवृत, योगियों के गुरु, आचार्य, योगियों द्वारा प्राप्य, पिनाकधारी, संसार से तारने वाले, रुद्र, ब्रह्मा, ब्रह्मा के अधिपति, शाश्वत, सर्व-व्यापक, शास्त्र एवं ब्राह्मणों के रक्षक, ब्राह्मण प्रिय, कपर्दी, कालमूर्ति, अमूर्ति, परमेश्वर, एक मूर्ति, महामूर्ति, वेद द्वारा जानने योग्य, दिवस्पति, नीलकण्ठ, विश्व-मूर्ति, व्यापक, विश्वरेता, कालाग्नि, कालदहन, कामनादायक, काम-विनाशक, गिरीश, देव, चन्द्र-भूषण, विलोहित, लेलिहान, आदित्य, परमेष्ठी, उग्र, पशुपति, भीम, भास्कर और परम तपः स्वरूप को मैं नमस्कार करता हूँ।४७-५२।

इत्येतल्लक्षणं प्रोक्तं युगानां वै समासतः।
अतीतानागतानां वै यावन्मन्वन्तरक्षयः ॥५३

यह संक्षेप में युगों का लक्षण बताया है। जब तक मन्वन्तर काल का क्षय नहीं होगा तब तक के लिए भूत और भविष्यत् काल के युगों का लक्षण संक्षेप में बताया है।५३

---

१. परमाचार्यमिति पा०। २. ममरेश्वरमिति पा०। ३. विश्चेतसमिति पा०। ४. नमस्ये-नमस्करोमि। आर्षमात्मनेपदम्। ५. भूषितमिति पा०। ६. तमसः परमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्वन्तरेण चैकेन सर्वाण्येवान्तराणि वै ।
व्याख्यातानि न सन्देहः कल्पः कल्पेन[1] चैव हि ॥५४

एक मन्वन्तर के कथन द्वारा अन्यान्य सभी मन्वन्तर की कथा कथित हो गई। इसी प्रकार एक कल्प के द्वारा सभी कथा व्याख्यात हो जाती है, इसमें सन्देह नहीं ।५४

मन्वन्तरेषु चैतेषु अतीतानागतेषु वै ।
तुल्याभिमानिनः सर्वे नामरूपैर्भवन्त्युत ॥५५

अतीत और अनागत सभी मन्वन्तरों में सभी अपने तुल्य रूप और नाम धारण करके तुल्यरूप से कार्यानुष्ठान करते हैं ।५५

× एवमुक्तो भगवता किरीटी श्वेतवाहनः ।
बभार परमां भक्तिमीशानेऽव्यभिचारिणीम् ॥५६

भगवान् व्यास के ऐसा कहने पर अर्जुन ने शंकर में परम अव्यभिचारिणी भक्ति धारण की ।५६

नमश्चकार तमृषिं कृष्णद्वैपायनं प्रभुम् ।
सर्वज्ञं सर्वकर्त्तारं साक्षाद्विष्णुं व्यवस्थितम्[2] ॥५७

उन्होंने सर्वज्ञ, सर्वकर्ता साक्षात् विष्णु के समान व्यवस्थित उन ऋषि कृष्ण द्वैपायन को नमस्कार किया ।५७

तमुवाच पुनर्व्यासः पार्थं[3] परपुरञ्जयम् ।
कराभ्यां सुशुभाभ्याञ्च संस्पृश्य प्रणतं मुनिः ॥५८

दूसरे के नगर को जीतने वाले प्रणत अर्जुन को व्यास ने अपने दोनों मंगलकारक हाथों से स्पर्श करके पुनः कहा ।५८

[4]धन्योऽस्यनुगृहीतोऽसि त्वादृशोऽन्यो न विद्यते ।
त्रैलोक्ये शङ्करे नूनं भक्तः परपुरञ्जय ॥५९

हे शत्रुनगरविजेता ! मैं धन्य हूँ, अनुगृहीत हूँ। तीनों लोक में तुम्हारे समान शंकर का भक्त दूसरा कोई नहीं है ।५९

दृष्टवानसि तं देवं विश्वाक्षं विश्वतोमुखम् ।
प्रत्यक्षमेव [5]सर्वेषां रुद्रं [6]सर्वजगन्मयम् ॥६०

---

१. कल्पे तथैव हि इति पा० । × सूत उवाच इति लि० पु० । २. सनातनम् इति पा० । ३. साक्षात् । ४. धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मीति पा० । ५. सर्वेशमिति, सर्वज्ञमिति पा० । ६. सर्वजगद्धरमिति, सर्वजगद्गुरुम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब ओर नेत्र वाले एवं सब ओर मुख वाले, सम्पूर्ण जगन्मय उन रुद्रदेव को तुमने प्रत्यक्ष ही देखा है ।६०

ज्ञानं तदै[1]श्वरं दिव्यं यथावद्विदितं त्वया ।
स्वयमेव [2]हृषीकेशः प्रीत्योवाच सनातनः ॥६१

तुमने ईश्वर (महादेव) का दिव्य ज्ञान ठीक-ठीक समझ लिया है। स्वयं ही सनातन श्री कृष्ण ने प्रीतिपूर्वक ऐसा कहा है ।६१

गच्छ गच्छ स्वकं स्थानं न शोकं कर्त्तुमर्हसि ।
व्रजस्व परया भक्त्या शरण्यं शरणं शिवम् ॥६२

तुम अपने स्थान को जाओ, शोक करने योग्य नहीं हो। परम भक्ति से शरण-दाता शिव की शरण में जाओ ।६२

एवमुक्त्वा स भगवाननुगृह्यार्जुनं प्रभुः[3] ।
जगाम शङ्करपुरीं समाराधयितुं [4]भवम् ॥६३

इस प्रकार भगवान् प्रभु अर्जुन से कहकर और उन्हें अनुगृहीत करके शिव की आराधना करने के लिए शंकर पुरी में चले गये ।६३

[5]पाण्डवेयोऽपि तद्वाक्यात्संप्राप्य शरणं शिवम् ।
सन्त्यज्य सर्वकर्माणि [6]ज्ञात्वा तत्परमोऽभवत् ॥६४

अर्जुन भी उनके वचन से शंकर की शरण प्राप्त करके समस्त कार्यों को त्याग कर शिव को जानकर तत्परायण हो गये ।६४

नार्चनेन समः शम्भोर्भक्त्या भूतो भविष्यति ।
मुक्त्वा सत्यवतीसूनुं [7]कृष्णं वा देवकीसुतम् ॥६५

सत्यवती पुत्र व्यास तथा देवकी पुत्र कृष्ण को छोड़कर अर्जुन के समान शंकर का भक्त न कोई हुआ और न होगा ।६५

तस्मै भगवते नित्यं नमः [8]शान्ताय धीमते ।
पाराशर्याय मुनये व्यासायामिततेजसे ॥६६

शान्त, धीमान्, अमित तेजस्वी, उन भगवान् पराशर-पुत्र व्यास मुनि को नित्य नमस्कार है ।६६

---

१. तच्चैश्वरमिति पा० । २. हृषीकेशः प्रत्युवाच समासतः इति, गुडाकेशमति पा० । ऋषीकाणामिन्द्रियाणामीशः जितेन्द्रिय इत्यर्थः, सनातनः चिरजीवी, व्यास इत्यर्थः । अथवा हृषीकेशस्य अवतारत्वाद्व्यासो हृषीकेशः इत्युक्तः, तथाच "व्यासो नारायणः स्वयम्" इति । ३. प्रतीति, पुनरिति । पा० । ४. शिवमिति पा० । ५. पाण्डवोऽपि च इति पा० । ६. तद्भक्तिपरमोऽभवदिति पा० । ७. सत्यायेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णद्वैपायनः साक्षाद्विष्णुरेव सनातनः ।
को ह्यन्यस्तत्त्वतो रुद्रं वेत्ति तं परमेश्वरम् ॥ ६७

कृष्ण द्वैपायन मुनि साक्षात् सनातन विष्णु ही हैं। उनके अतिरिक्त उन परमेश्वर रुद्र को तत्त्वतः कौन जानता है।६७

नमः कुरुध्वं तमृषिं कृष्णं सत्यवतीसुतम् ।
पाराशर्यं महात्मानं योगिनं विष्णुमव्ययम् ॥६८

पराशर-पुत्र, महात्मा, योगी, अविनाशी, विष्णु स्वरूप, उन सत्यवती-नन्दन कृष्णद्वैपायन ऋषि को नमस्कार करो।६८

एवमुक्त्वा तु मुनयः सर्व एव समाहिताः ।
प्रणेमुस्तं महात्मानं व्यासं सत्यवतीसुतम् ॥६९

ऐसा कहकर सभी मुनियों ने समाहित होकर उन सत्यवती-पुत्र महात्मा व्यास को प्रणाम किया।६९

इति श्रीकूर्मपुराणे व्यासार्जुनसंवादे युगधर्मनिरूपणं नाम × त्रिंशोऽध्यायः ।३०

श्री कूर्मपुराण में व्यास और अर्जुन के संवाद में युगधर्म-निरूपण नामक तीसवाँ अध्याय समाप्त ।३०

एकत्रिंशोऽध्यायः

अथ वाराणसीमाहात्म्यम्

ऋषय ऊचुः

प्राप्य वाराणसीं दिव्यां कृष्णद्वैपायनो मुनिः ।
किमकार्षीन्महाबुद्धिः श्रोतुं कौतूहलं हि नः ॥१

ऋषिगण बोले—दिव्य वाराणसी जाकर महाबुद्धिमान् कृष्णद्वैपायन मुनि ने क्या किया, यह सुनने के लिए हमें कुतूहल हो रहा है।१

सूत उवाच

प्राप्य वाराणसीं दिव्यामुपस्पृश्य महामुनिः ।
पूजयामास जाह्नव्यां देवं विश्वेश्वरं शिवम् ॥२

× एकोनत्रिंशोऽध्यायः लि. पु.।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूत बोले—दिव्य वाराणसी पहुँचकर महामुनि ने आचमन किया और गंगाजी में विश्वेश्वर महादेव शिव की पूजा की।२

तमागतं मुनिं दृष्ट्वा तत्र ये निवसन्ति वै ।
पूजयाञ्चक्रिरे व्यासं मुनयो मुनिपुङ्गवम् ॥३

मुनि को आये हुए देखकर वहाँ के निवासियों, मुनियों ने मुनिश्रेष्ठ व्यास का पूजन किया।३

पप्रच्छुः प्रणताः सर्वे कथां[1] पापप्रणाशिनीम् ।
महादेवाश्रयां पुण्यां मोक्षधर्मान्सनातनान् ॥४

सभी लोगों ने प्रणाम करके उनसे महादेव सम्बन्धी पापनाशिनी कथा तथा सनातन मोक्ष धर्मों को पूछा।४

स चापि कथयामास सर्वज्ञो भगवानृषिः
माहात्म्यं देवदेवस्य धर्म्यं[2] वेदनिदर्शनात् ॥५

सर्वज्ञ भगवान् ऋषि देवाधीश्वर शिव का धर्मयुक्त तथा वेद में उदाहृत महात्म्य कहने लगे।५

तेषां मध्ये मुनीन्द्राणां व्यासशिष्यो महामुनिः ।
पृष्टवाञ्जैमिनिर्व्यासं गूढमर्थं सनातनम् ॥६

उन मुनीन्द्रों के बीच में व्यासशिष्य महामुनि जैमिनि ने व्यास जी से सनातन गूढ़ अर्थ पूछा।६

जैमिनिरुवाच

भगवन् संशयञ्चैकं छेत्तुमर्हसि सर्ववित्[3] ।
न विद्यते ह्यविदितं भवतः परमर्षिणः ॥७

जैमिनि बोले—भगवन्! सर्ववेत्ता आप एक सन्देह का निराकरण कर दें। परम ऋषि आपके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं है।७

केचिद्ध्यानं प्रशंसन्ति धर्ममेवापरे जनाः ।
अन्ये साङ्ख्यं तथा योगं तपश्चान्ये[4] महर्षयः ॥८

कोई तो ध्यान की प्रशंसा करते हैं, दूसरे लोग धर्म की ही प्रशंसा करते हैं। अन्य जन सांख्य तथा योग की तथा दूसरे महर्षि तपस्या की प्रशंसा करते हैं।८

१ कथाः पापविनाशिनीरिति पा०। २. धर्मान्वेदनिदर्शितानिति पा०। ३. तत्त्वविदिति पा०। ४. तपस्त्वन्ये इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्यमथो नूनमन्ये[1] प्राहुर्महर्षयः ।
अहिंसां सत्यमप्यन्ये संन्यासमपरे विदुः ॥९

इतर महर्षि ब्रह्मचर्य की निश्चित प्रशंसा करते हैं। उनसे भिन्न ऋषि अहिंसा की और अन्य विद्वान् संन्यास की प्रशंसा करते हैं ।९

केचिद्दयां प्रशंसन्ति दानमध्ययनं तथा ।
तीर्थयात्रां तथा केचिदन्ये चेन्द्रियनिग्रहम् ॥१०

कोई दया की प्रशंसा करते हैं, कोई दान तथा स्वाध्याय की, कोई तीर्थयात्रा की और कोई इन्द्रियसंयम की ।१०

किमेषाञ्च[2] भवेच्छ्रेयः प्रब्रूहि मुनिपुङ्गव ।
यदि वा विद्यतेऽप्यन्यद्गुह्यं तद्वक्तुमर्हसि ॥११

इनमें कौन श्रेष्ठ है, हे मुनिश्रेष्ठ ! वह बता दें। यदि इनसे भिन्न भी कोई गुप्त हो तो, उसे बता दें ।११

श्रुत्वा स जैमिनेर्वाक्यं कृष्णद्वैपायनो मुनिः ।
प्राह गम्भीरया वाचा प्रणम्य वृषकेतनम् ॥१२

जैमिनि का वचन सुनकर कृष्णद्वैपायन मुनि ने शंकर को प्रणाम करके गंभीर वाणी में कहा ।१२

× श्रीभगवानुवाच

साधु साधु महाभाग यत्पृष्टं भवता मुने ।
वक्ष्ये गुह्यतमाद्गुह्यं शृण्वन्त्वन्ये महर्षयः ॥१३

श्री भगवान् बोले—महाभाग ! आपने जो पूछा, वह बहुत बढ़िया है। मुने ! मैं गुप्त से गुप्त बात भी बता दूंगा। सभी महर्षि सुनें ।१३

ईश्वरेण पुरा प्रोक्तं ज्ञानमेतत्सनातनम् ।
गूढमप्राज्ञविद्विष्टं सेवितं सूक्ष्मदर्शिभिः ॥१४

पूर्वकाल में शंकर ने यह सनातन ज्ञान बताया था, जो गूढ़ है, मूर्खों ने जिससे द्वेष किया और सूक्ष्मदर्शियों ने जिसका सेवन किया ।१४

नाश्रद्दधाने दातव्यं नाभक्ते परामेष्ठिनः ।
नावेदविदुषे[3] देयं ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ॥१५

---

१. मौनमन्ये इति पा०। २. किमेतेषामिति पा०। ×.व्यास उवाच इति लि० पु०। ३. न वेदविदुषो ज्ञेयमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह ज्ञान अश्रद्धालु को नहीं देना चाहिए। ब्रह्मा या शिव के अभक्त को तथा वेद से भिन्न के विद्वान् को यह ज्ञानों में उत्तम ज्ञान नहीं देना चाहिए।१५

मेरुशृङ्गे महादेवमीशानं त्रिपुरद्विषम्।
देवासनगता देवी महादेवमपृच्छत ॥१६

सुमेरुपर्वत के शिखर पर त्रिपुरशत्रु ईशान, महादेव के साथ एक आसन पर विराजमान पार्वती ने महादेव से पूछा।१६

श्रीदेव्युवाच

देवदेव महादेव भक्तानामार्त्तिनाशन।
कथं त्वां पुरुषो देवमचिरादेव पश्यति ॥१७

श्री देवी बोलीं—हे देवों के देव, महादेव! भक्तों की पीड़ा के नाशक! मनुष्य कैसे आपका दर्शन शीघ्र प्राप्त करे (वह बताएँ)।१७

साङ्ख्ययोगस्तपो[1] ध्यानं कर्मयोगश्च[2] वैदिकः।
आयासबहुलान्याहुर्यानि चान्यानि शङ्कर ॥१८

हे शंकर! सांख्य, योग, तप, ध्यान, वैदिक कर्मयोग—ये तथा अन्य साधन बहुत कष्टदायक हैं।१८

येन विभ्रान्तचित्तानां विज्ञानां[3] योगिनामपि।
दृश्यो हि भगवान्सूक्ष्मः सर्वेषामपि देहिनाम् ॥१९

एतद्गुह्यतमं ज्ञानं गूढं ब्रह्मादिसेवितम्।
हिताय सर्वभक्तानां ब्रूहि कामाङ्गनाशन ॥२०

भ्रान्त चित्त वाले, विज्ञों, योगियों तथा सभी देह-धारियों को जिससे सूक्ष्म भगवान् का दर्शन हो जाये, वह ब्रह्मा आदि से सेवित, गूढ़ एवं अत्यन्त गुह्य ज्ञान, हे कामदाहक! सभी भक्तों के कल्याणार्थ बता दें।१९–२०।

ईश्वर उवाच

अवाच्येमेतद्गूढार्थं[4] ज्ञानमज्ञैर्बहिष्कृतम्।
वक्ष्ये तव यथातत्त्वं यदुक्तं परमर्षिभिः ॥२१

ईश्वर बोले—यह गूढार्थज्ञान अवाच्य है, अज्ञजनों से बहिष्कृत है। मैं तुमको ठीक-ठीक बता दूंगा, जैसा कि परमर्षियों ने कहा है।२१

---

१. तथा इति पा०। २. योगोऽथ इति पा०। ३. योगिनां कर्मिणामपीति, स्वकर्मकर्मिणामपीति पा०। ४. विज्ञानमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परं गुह्यतमं क्षेत्रं मम वाराणसी पुरी ।
सर्वेषामेव भूतानां संसारार्णवतारिणी ॥२२

मेरी वाराणसीपुरी परम गुह्यतम क्षेत्र है। सभी प्राणियों को संसार-सागर से पार उतारने वाली है।२२

तस्मिन्[1] भक्ता महादेवि मदीयं व्रतमास्थिताः ।
निवसन्ति महात्मानः परं नियममास्थिताः ॥२३

हे महादेवि ! उस नगरी में मेरे व्रत में आस्था रखने वाले भक्तगण और परम नियमशील महात्मा लोग निवास करते हैं।२३

उत्तमं सर्वतीर्थानां स्थानानामुत्तमञ्च यत्[2] ।
ज्ञानानामुत्तमं ज्ञानमविमुक्तं परं मम ॥२४

जो सभी तीर्थों और सभी स्थानों में उत्तम है तथा ज्ञान स्वरूप है, वह अविमुक्त क्षेत्र (वाराणसी) मेरा है।२४

स्थानान्तरे पवित्राणि तीर्थान्यायतनानि च ।
श्मशाने संस्थितान्येव दिवि[3] भूमिगतानि च ॥२५

स्थानान्तर में, श्मशान में, स्वर्ग में, भूमि पर जो पवित्र तीर्थ तथा मन्दिर हैं, वे यहाँ (काशी में) संस्थित हैं।२५

भूलोके नैव संलग्नमन्तरिक्षे ममालयम् ।
अविमुक्ता न पश्यन्ति मुक्ताः पश्यन्ति चेतसा ॥२६

मेरा मन्दिर भूलोक में नहीं है, अन्तरिक्ष में संलग्न है। जो पुरुष मुक्त नहीं हुए हैं, वे उसे नहीं देखते हैं, पर मुक्त पुरुष चित्त से देखते हैं।२६

श्मशानमेतद्विख्यातमविमुक्तमिति स्मृतम्[4] ।
कालो भूत्वा जगदिदं संहराम्यत्र सुन्दरि ॥२७

यह क्षेत्र श्मशान नाम से विख्यात है। अविमुक्त भी इसे कहते हैं। हे सुन्दरि ! मैं काल होकर यहाँ इस संसार का संहार करता हूँ।२७

देवीदं सर्वगुह्यानां स्थानं प्रियतमं मम ।
मद्भक्ता यत्र[5] गच्छन्ति मामेव प्रविशन्ति ते ॥२८

देवि ! सभी गुह्य स्थानों में श्रेष्ठ यह स्थान मुझे अत्यन्त प्रिय है। यहाँ जो मेरे भक्त आते हैं, वे मुझमें ही प्रवेश करते हैं।२८

---

१. तत्र इति पा०। २. तदिति पा०।३ . दिव्येति पा०। ४. श्रुतिमिति पा०। ५. तत्र इति, तमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दत्तं जप्तं हुतञ्चेष्टं तपस्तप्तं कृतञ्च यत् ।
ध्यानमध्ययनं ज्ञानं सर्वं तत्राक्षयं भवेत् ॥२९

यहाँ किया गया दान, जप, हवन, यज्ञ, तप, ध्यान, अध्ययन और ज्ञान सब अक्षय होता है ।२९

जन्मान्तरसहस्रेषु यत्पापं पूर्वसञ्चितम् ।
अविमुक्ते प्रविष्टस्य तत्सर्वं व्रजति क्षयम् ॥३०

सहस्रों जन्मों में जो पाप पूर्व संचित है, वह अविमुक्त में प्रवेश करने से नष्ट हो जाता है ।३०

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा ये वर्णसङ्कराः ।
स्त्रियो म्लेच्छाश्च ते चान्ये संकीर्णाः[1] पापयोनयः ॥३१
कीटाः पिपीलिकाश्चैव ये चान्ये मृगपक्षिणः ।
कालेन निधनं प्राप्ता अविमुक्ते वरानने ॥३२
चन्द्रार्द्धमौलयस्त्र्यक्षा महावृषभवाहनाः ।
शिवो मम पुरे देवि जायन्ते तत्र मानवाः ॥३३

हे श्रेष्ठमुखि ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसंकर, स्त्रियाँ, म्लेच्छ, पापोत्पन्न संकीर्ण जाति, कीट, पतंग, पशु, पक्षी,—जो कोई समय आने पर काशी में मृत्यु को प्राप्त होते हैं वे, हे देवि ! शिवे ! अर्ध चन्द्र से अलंकृत मस्तक, त्रिनेत्र तथा नन्दी वाहन से युक्त हो मेरे लोक में अवस्थित होते हैं ।३१–३३।

नाविमुक्ते मृतः कश्चिन्नरकं याति किल्बिषी ।
ईश्वरानुगृहीता हि सर्वे यान्ति पराङ्गतिम् ॥३४

कोई भी पापी अविमुक्त में मरने पर नरक में नहीं जाता है। ईश्वर से अनुगृहीत हो सभी श्रेष्ठ गति को प्राप्त करते हैं ।३४

मोक्षं सुदुर्लभं ज्ञात्वा[2] संसारं चातिभीषणम् ।
अश्मना चरणौ हत्वा वाराणस्यां वसेन्नरः ॥३५

मोक्ष को अत्यन्त दुर्लभ और संसार को अत्यन्त भयानक जानकर मनुष्य पत्थर से पैरों को तोड़कर काशी में वास करे (यहाँ पैरों को तोड़ने का तात्पर्य है कि काशी से अन्यत्र न जाये) ।३५

---

१. सङ्कीर्णाः-अनुलोमप्रतिलोमाभ्यां सङ्करजातीया इत्यर्थः । २. मत्वा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्लभा त[1]पसोऽवाप्तिर्भू[2]तस्य परमेश्वरि।
यत्र तत्र विपन्नस्य गतिः संसारमोक्षणी ॥३६

परमेश्वरि! प्राणी के लिए तप की प्राप्ति दुर्लभ है। किन्तु काशी में यत्र-तत्र मरने से भी प्राणी को संसार से मोक्ष दिलाने वाली गति मिलती है।३६

प्रसादा[3]द्दह्यते ह्येनो मम शैलेन्द्रनन्दिनि।
अत्रा[4]बुधा न पश्यन्ति मम मायाविमोहिताः ॥३७

हे गिरिराजपुत्रि! यहाँ मेरी कृपा से उसका पाप दग्ध हो जाता है। मेरी माया से मोहित मूर्ख लोग इस क्षेत्र को नहीं देखते हैं।३७

अविमुक्तं न पश्[5]यन्ति मूढा ये तमसावृताः।
विण्मूत्ररेतसां मध्ये संविशन्ति पुनः पुनः ॥३८

जो मूर्ख तमोगुण से आवृत रहते हैं वे अविमुक्त को नहीं देखते हैं और वे विष्ठा, मूत्र और वीर्य के बीच बार-बार प्रवेश करते हैं (अर्थात् उन्हें बार-बार गर्भवास करना पड़ता है)।३८

हन्यमानोऽपि यो देवि[6] विशेद्विघ्नशतैरपि।
स याति परमं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ॥३९

हे देवि! जो व्यक्ति सैकड़ों विघ्नों से पीड़ित होते हुए भी काशी में पहुँच जाते हैं, उन्हें शोक नहीं होता है।३९

जन्ममृत्युजरामुक्तं परं याति शिवालयम्।
अपुनर्मरणानां हि सा गतिर्मोक्षकांक्षिणाम् ॥४०

वह व्यक्ति जन्म, मृत्यु और जरा से मुक्त शिवालय में पहुँचता है। जो पुनर्मरण न चाहें और मोक्षाभिलाषी हों, उनके लिए काशी ही गति है।४०

यां प्राप्य कृतकृत्यः स्यादिति मन्येत[7] पण्डितः।
न दानैर्न तपोभिश्च न यज्ञै[8]र्नापि विद्यया ॥४१
प्राप्यते गतिरुत्कृष्टा या विमुक्ते तु लभ्यते।
नानावर्णा विवर्णाश्च चण्डालाद्या जुगुप्सिताः ॥४२
किल्बिषैः पूर्णदेहा ये [9]प्रकृष्टैस्तापकैस्तथा।
भेषजं परमं तेषामविमुक्तं विदुर्बुधाः ॥४३

---

१. तपसा चापि पूतस्य इति पा०। २. जायते ह्येतदिति पा०। ३. अपि इति, अविद्वांस इति पा०। ४. सेवन्ते इति पा०। ५. विद्वानिति, पुमान्देवि शश्वद्विघ्नशतैरिति, विद्वानिति पा०। ६. मन्यन्ति पण्डिता इति पा०। ७. विशिष्टैः पातकैरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस काशी को पाकर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है, ऐसा विद्वान् लोग मानते हैं। दान, तपस्या यज्ञ और विद्या से वह उत्कृष्ट गति नहीं प्राप्त होती है जो अविमुक्त क्षेत्र में मिलती है। नाना प्रकार के वर्ण वाले, वर्णहीन वाले, चाण्डाल आदि निन्दित वर्ण वाले, पापों से भरे देह वाले तथा त्रिविध तापों से परितप्त मनुष्यों के लिए अविमुक्त क्षेत्र परम औषध स्वरूप है, ऐसा विद्वानों ने कहा है।४१-४३।

अविमुक्तं परं ज्ञानमविमुक्तं परं पदम्।
अविमुक्तं परन्तत्त्वमविमुक्तं परं शिवम् ॥४४

अविमुक्त क्षेत्र परम ज्ञान, परम पद, परम तत्त्व और परम शिव स्वरूप है।४४

कृत्वा वै नैष्ठिकीन्दीक्षामविमुक्ते वसन्ति ये।
तेषां तत्परमं ज्ञानं ददाम्यन्ते परं पदम् ॥४५

जो मनुष्य नैष्ठिकी दीक्षा लेकर काशी में निवास करते हैं, उन्हें वह परम ज्ञान और अन्त में परम पद मैं देता हूँ।४५

प्रयागं नैमिषं पुण्यं श्रीशैलोऽथ हिमालयः।
केदारं भद्रकर्णञ्च गया पुष्करमेव च ॥४६

कुरुक्षेत्रं रुद्रकोटिर्नर्मदा हाटकेश्वरम्।
शालिग्रामञ्च पुष्पाग्रं वंशं कोकामुखं तथा ॥४७

प्रभासं विजयेशानं गोकर्णं शङ्कुकर्णकम्।
एतानि पुण्यस्थानानि त्रैलोक्ये विश्रुतानि च ॥४८

[1]यास्यन्ति परमं मोक्षं वाराणस्यां यथा मृताः।
वाराणस्यां विशेषेण गङ्गा त्रिपथगामिनी ॥४९

[2]प्रविष्टा नाशयेत्पापं जन्मान्तरशतैः कृतम्।

प्रयाग, पवित्र नैमिषारण्य, श्रीशैल, हिमालय, केदार, भद्रकर्ण, गया, पुष्कर, कुरुक्षेत्र, रुद्रकोटि, नर्मदा, द्वारकेश्वर, शालिग्राम, पुष्पाग्र, वंश, कोकामुख, प्रभास, विजयेशान, गोकर्ण, शंकुकर्ण—ये पुण्यस्थान तीनों लोक में प्रसिद्ध हैं। किन्तु वाराणसी में मरने पर जैसा परम मोक्ष मिलता है, वैसा ये तीर्थ नहीं दे सकते। वाराणसी में विशेष रूप से प्रविष्ट हुई त्रिपथगामिनी गंगा मनुष्य के सैकड़ों जन्म के किये हुए पाप को नष्ट कर देती है।४६-४९½।

१. न यास्यन्ति परमिति पा०। २. प्रवेशादिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यत्र सुलभा गङ्गा श्राद्धं दानं तथा [1]जपः ॥५०
व्रतानि सर्वमेवैतद्वाराणस्यां सुदुर्लभम्।
यजेत्तु जुहुयान्नित्यं ददात्यर्च्चयतेऽपरान्[2] ॥५१

अन्यत्र गंगा, श्राद्ध, दान तथा जप सुलभ है, किन्तु व्रत और ये सब वाराणसी में दुर्लभ हैं। वाराणसी में नित्य यज्ञ और हवन करे, दान करे और अन्य देवताओं का पूजन करे।५०-५१।

वायुभक्षश्च सततं वाराणस्यां स्थितो नरः।
यदि पापो यदि शठो यदि [3]चा धार्म्मिको नरः ॥५२
वाराणसीं समासाद्य पुनाति [4]स कुलत्रयम्।

वायु पीकर सतत वाराणसी में रहने वाला व्यक्ति यदि पापी, शठ और अधार्मिक हो तो भी वह वाराणसी को पाकर अपने तीन कुलों को पवित्र कर लेता है।५२½

वाराणस्यां महादेवं ये[5] स्तुवन्त्यर्च्चयन्ति च ॥५३
सर्व्वपापविनिर्मुक्तास्ते विज्ञेया गणेश्वराः।

वाराणसी में जो महादेव की स्तुति और पूजा करते हैं, वे सभी पापों से छूटकर शिव के गणेश्वर होते हैं।५३½

अन्यत्र यागाज्ज्ञानाद्वा संन्यासादथवान्यतः ॥५४
प्राप्यते तत्परं[6] स्थानं सहस्रेणैव जन्मना।
ये [7]भक्ता देवदेवेशे वाराणस्यां वसन्ति वै।५५
ते विदन्ति परं मोक्षमेकेनैव तु जन्मना।
यत्र योगस्तथा ज्ञानं मुक्तिरेकेन जन्मना ॥५६

अन्य तीर्थों में योग, ज्ञान, संन्यास अथवा अन्य साधना से जिस परम स्थान को प्राप्ति सहस्र जन्मों में होती है, वह वाराणसी में रहकर शंकर की भक्ति करने से एक ही जन्म में परम मोक्ष मिल जाता है। वहाँ योग, ज्ञान और मोक्ष एक ही जन्म में प्राप्त हो जाते हैं।५४-५६।

---

१. तपः इति पा०। २. ऽमरानिति पा०। ३. वाधार्मिक इति पा०। ४. सकलं कुलमिति पा०। ५. येऽर्च्चयन्ति स्तुवन्ति च इति पा०। ६. परममिति पा०। ७. भक्त्या देवस्यइति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविमुक्तं समासाद्य नान्यद्गच्छेत्तपोवनम् ।
यतो मया न मुक्तं तदविमुक्तमिति स्मृतम् ॥५७

अविमुक्त क्षेत्र को पाकर दूसरे तपोवन में जाने की आवश्यकता नहीं है। जिसलिए मैंने इस क्षेत्र को नहीं छोड़ा, इसलिए इसे अविमुक्त कहते हैं।५७

तदेव गुह्यं गुह्यानामेतद्विज्ञाय मुच्यते ।
[1]ज्ञानध्याननिविष्टानां परमानन्दमिच्छताम् ॥५८
या [2]गतिर्विहिता सुभ्रु साविमुक्ते मृतस्य तु ।

वही क्षेत्र गुह्यों में भी गुह्य है, यह जानकर मनुष्य मुक्त हो जाता है। हे सुन्दर भौंह वाली! ज्ञान-ध्यान में संलग्न रहते हुए परमानन्द के इच्छुकों को जो गति प्राप्त होती है, वह गति अविमुक्त में मरने वाले को मिलती है।५८½

यानि कान्यविमुक्तानि देवैरुक्तानि नित्यशः ॥५९
पुरी वाराणसी तेभ्यः स्थानेभ्योऽप्यधिका शुभा ।
यत्र साक्षान्महादेवो देहान्तेऽक्षय्य [4]मीश्वरः ॥६०
व्याचष्टे तारकं ब्रह्म तथैव [5] ह्यविमुक्तकम् ।
यत्तत्परतरं तत्त्वमविमुक्तमिति स्मृतम् ॥६१

देवताओं ने जो कोई मोक्षदायक स्थान बताये हैं, उन स्थानों से भी अधिक शुभदायक वाराणसी पुरी है। जहाँ साक्षात् ईश्वर महादेव देहान्त के समय जीव को तारक ब्रह्म और अविमुक्त मंत्र का उपदेश करते हैं। देवि! जो परात्पर तत्त्व है वह अविमुक्त कहा गया है।५९-६१।

एकेन जन्मना देवि वाराणस्यां [6]तदाप्यते ।
भ्रूमध्ये नाभिमध्ये च हृदयेऽपि च मूर्द्धनि ॥६२
यथाविमुक्तमादित्ये वाराणस्यां व्यवस्थितम् ।
वरणायास्तथा [7]ह्यस्या मध्ये वाराणसी पुरी ॥६३

वाराणसी में वह एक ही जन्म में प्राप्त हो जाती है। भौंहों के मध्य में, नाभि के मध्य में, हृदय में, मस्तक में और आदित्यलोक में जिस प्रकार अविमुक्त अवस्थित है उसी प्रकार वाराणसी में अविमुक्त व्यवस्थित है। वरुणा नदी और असी नदी के मध्य में वाराणसी पुरी विराजमान है।६२-३३।

---

१. मेतद्विज्ञानमुच्यते इति पा०। २. ज्ञानध्यानाभिनिष्ठानामिति पा०। ३. योगान्ते विहिता मुक्तिः साविमुक्तमृतस्य तु इति पा०। ४. स्वयमीश्वर इतिपा०। ५. तत्रैव इति पा०। ६. तदाप्नुयादिति पा०। ७. चास्या इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्रैव संस्थितं तत्त्वं नित्यमेवाविमुक्तिकम् ।
वाराणस्याः परं स्थानं न भूतं न भविष्यति ॥६४

अविमुक्तिक तत्त्व वाराणसी में ही नित्य संस्थित है। वाराणसी से श्रेष्ठ स्थान न हुआ है और न होगा।६४

यथा नारायणो देवो [1]महादेवाद्विश्वेश्वरात् ।
तत्र देवाः सगन्धर्वाः सयक्षोरगराक्षसाः ॥६५
उपासते मां सततं देवदेवः पितामहः ।

जैसे नारायणदेव महादेव ईश्वर से बढ़कर नहीं है। उसी प्रकार अन्य स्थान वाराणसी से श्रेष्ठ नहीं है। वहाँ देव, गन्धर्व, यक्ष, नाग, राक्षस तथा देवाधिदेव ब्रह्मा सतत मेरी उपासना करते हैं।६५½

महापातकिनो ये च ये तेभ्यः पापकृत्तमाः ॥६६
वाराणसीं समासाद्य ते यान्ति परमां गतिम् ।
तस्मान्मुमुक्षुर्नियतो वसेच्चामरणान्तिकम् ॥६७

जो महापातकी हैं और जो उनसे भी बढ़कर पापकारी हैं, वे वाराणसी में आकर परम गति को प्राप्त करते हैं। इसलिए मोक्षाभिलाषी जन निश्चित रूप से मरण पर्यन्त काशी में वास करे।६६-६७।

वाराणस्यां महादेवि ज्ञानं लब्ध्वा विमुच्यते ।
किन्तु विघ्ना भविष्यन्ति पापोपहतचेतसाम् ॥६८

महादेवि! वाराणसी में ज्ञान लाभ करके मनुष्य मुक्त हो जाता है। किन्तु पाप से विनष्ट चित्त वालों को वहाँ विघ्न होते हैं।६८

ततो नैव चरेत्पापं कायेन मनसा गिरा ।
एतद्रहस्यं वेदानां पुराणानां[2] द्विजोत्तमाः ॥६९

द्विजश्रेष्ठो! इसलिए वहाँ शरीर से, मन से तथा वाणी से पाप नहीं करना चाहिए, वेदों और पुराणों का यही रहस्यज्ञान है।६९

अविमुक्ताश्रयं ज्ञानं न किञ्चि[3]द्वेद्मि तत्परम् ।
देवतानामृषीणाञ्च शृण्वतां परमेष्ठिनाम् ॥७०
देव्यै देवेन कथितं सर्वपापविनाशनम्[4] ।

---

१. महादेवं निरंजनम् इति पा०। २. पुरुषाणाञ्च सुव्रता इति पा०। ३. कश्चिद्वेत्ति तत्त्वत इति पा०। ४. प्रणाशनमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाराणसी आश्रित ज्ञान से श्रेष्ठ ज्ञान मैं कुछ नहीं जानता हूँ। परमेष्ठी ऋषिगण और देवगण के समक्ष महादेव ने पार्वती से सर्वपापनाशक वाराणसी के सम्बन्ध में यह कहा।७०½

यथा नारायणः श्रेष्ठो देवानां पुरुषोत्तमः ॥७१
यथेश्वराणां गिरिशः स्थानानाञ्चैतदुत्तमम्।

जैसे देवताओं में पुरुषोत्तम नारायण श्रेष्ठ हैं और जैसे ईश्वरों में महेश्वर श्रेष्ठ हैं वैसे स्थानों में वाराणसी उत्तम स्थान है।७१½

यैः समाराधितो रुद्रः पूर्वस्मिन्नेव जन्मनि ॥७२
ते विन्दन्ति परं क्षेत्रमविमुक्तं शिवालयम्।
कलिकल्मषसम्भूता येषामुपहता [मतिः ॥७३
न तेषां वीक्षितुं[1] शक्यं स्थानं तत्परमेष्ठिनः।

जिन्होंने पूर्वजन्म में शंकर की आराधना की, वे शिवधाम, उत्तम अविमुक्तक्षेत्र को प्राप्त करते हैं।।

कलियुग के पाप से उत्पन्न जिनकी मति मारी गई है, वे शिवपुरी काशी को देख भी नहीं सकते ७२-७३½

ये स्मरन्ति सदा कालं विन्दन्ति[2] च पुरीमिमाम् ॥७४
तेषां विनश्यति क्षिप्रमिहामुत्र च पातकम्।

जो सर्वदा काशी का स्मरण करते रहते हैं, और इस पुरी में आते हैं, उनका इस लोक और परलोक का समस्त पाप शीघ्र नष्ट हो जाता है।७४½

यानि चेह प्रकुर्वन्ति पातकानि कृतालयाः ॥७५
नाशयेत्तानि सर्वाणि तेन कालतनुः शिवः।

यहाँ रहने वालों से जो पाप (अज्ञानवश) हो जाते हैं, इन सब पापों को काल-शरीरधारी शिव नष्ट कर देते हैं।७५½

आगच्छतामिदं स्थानं सेवितुं मोक्षकांक्षिणाम् ॥७६
मृतानां वै पुनर्जन्म न भूयो भवसागरे।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वाराणस्यां [वसन्नरैः ॥७७

मोक्ष की अभिलाषा से इस स्थान का सेवन करने के लिए आने वाले यदि मर जाते हैं तो, उनका भवसागर में पुनर्जन्म नहीं होता है। इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से मनुष्य वाराणसी में निवास करे।७६-७७।

१. वैदितुमिति पा०। २. वहन्तीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगी वाप्यथवायोगी पापी वा पुण्यकृत्तमः।
न लोकवचनात् पित्रोर्न चैव गुरुवादतः॥७८
मतिरुत्क्रमणीया स्यादविमुक्तगतिं प्रति॥७९

योगी हो अथवा अयोगी, पापी हो अथवा पुण्यकर्मा, उसे यहाँ वास करना चाहिए। न तो लोगों के कहने से, न माता-पिता और न गुरु के कहने से ही अविमुक्त क्षेत्र में गति लाभ करने के सम्बन्ध में मति बदलनी चाहिए।७८-७९।

सूत उवाच

[1]एवमुक्त्वाथ भगवान्व्यासो वेदविदां वरः।
सहैव शिष्यप्रवरैर्वाराणस्याञ्चचार [ह] ॥८०

सूत बोले--इस प्रकार कहने के पश्चात् वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् व्यास अपने शिष्य प्रवरों के साथ वाराणसी में भ्रमण करने लगे।८०

इति श्रीकूर्मपुराणे वाराणसीमाहात्म्यं नाम+एकत्रिंशोऽध्यायः॥३१

श्री कूर्मपुराण में वाराणसी महात्म्य नामक एकतीसवाँ अध्याय समाप्त।३१।

●

द्वात्रिंशोऽध्यायः

अथ वाराणसीमाहात्म्यम्

सूत उवाच

स शिष्यैः संवृतो धीमान् गुरुर्द्वैपायनो मुनिः।
जगाम विपुलं[2] लिंगमोंकारं मुक्तिदायकम्॥१

सूत बोले—बुद्धिमान् गुरु द्वैपायन मुनि (व्यास) शिष्यों को साथ लेकर मुक्ति दायक विशाल ओंकारलिंग के पास पहुँचे।१

तत्राभ्यर्च्य महादेवं शिष्यैः सह महामुनिः।
प्रोवाच तस्य माहात्म्यं मुनीनां भावितात्मनाम्॥२

वहाँ महामुनि ने शिष्यों के साथ महादेव की अर्चना करके पवित्रात्मा मुनियों से इस लिंग का माहात्म्य बतलाया।२

---

१. +इत्येवमुक्त्वा इति पा०। +त्रिंशोऽध्यायः लि० पु०। २. विमलमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इदं तद्विमलं लिंगमोङ्कारं नाम शोभनम् ।
अस्य स्मरणमात्रेण मुच्यते सर्वपातकैः ॥३

यह वह ओंकार नामक निर्मल और सुन्दर शिवलिंग है, जिसके स्मरणमात्र से मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है ।३

अत्र[1] तत्परमं ज्ञानं पञ्चायतनमुत्तमम् ।
[2]अर्चितं मुनिभिर्नित्यं वाराणस्यां विमोक्षदम् ॥४

यहाँ परमज्ञानस्वरूप उत्तम पञ्चायतनलिंग है । मुनि लोग नित्य उस लिंग की अर्चना करते हैं । वाराणसी में वह लिंग मोक्षदायक है ।४

अत्र साक्षान्महादेवः पञ्चायतनविग्रहः ।
रमते[3] भगवान्रुद्रो जन्तूनामपवर्गदः ॥५

यहाँ साक्षात् भगवान् महादेव रुद्र पञ्चायतन शरीरधारी होकर क्रीड़ा करते रहते हैं और प्राणियों को मोक्ष देते है ।५

यत्तत्पाशुपतं ज्ञानं पञ्चार्थमिति कथ्यते[4] ।
तदेव विमलं लिंगमोङ्कारं समवस्थितम् ॥६

पाशुपत ज्ञानस्वरूप पञ्चार्थ नाम से जो लिंग कहा जाता है, वही विमल लिंग है । वही ओंकारलिंग के ऊपर अवस्थित है ।६

शान्त्यतीता परा शान्तिर्विद्या चैव यथाक्रमम्[5] ।
प्रतिष्ठा च निवृत्तिश्च पञ्चार्थे लिंगमैश्वरम् ॥७

शान्त्यतीता, परा शान्ति, विद्या, प्रतिष्ठा और निवृत्ति—ये यथाक्रम मिलकर पञ्चार्थ ऐश्वर लिंग है ।७

पञ्चानामपि देवानां ब्रह्मादीनां यदाश्रयम्[6] ।
[7]ओङ्कारबोधितं लिङ्गं [8]पञ्चायतनमुच्यते ॥८

ब्रह्मा आदि पाँचों देवताओं का आश्रय होकर ओंकार बोधित यह लिंग पञ्चायतन कहलाता है ।८

---

१. अत्रैतदिति पा० । २. सेवितमिति पा० । ३. वसते इति पा० । ४. शक्यते इति पा० । ५. पराकला । प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च इति पा० । ६. सदाश्रयमिति पा० । ७. ओङ्कारबोधकमिति । ८. मव्ययमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्मरेदैश्वरं लिङ्गं पञ्चायतनमव्ययम् ।
देहान्ते तत्परं ज्योतिरानन्दं विशते पुनः ॥९

अविनाशी पञ्चायतन ऐश्वर लिंग का स्मरण करना चाहिए। ऐसा करने वाला व्यक्ति देहान्त होने पर आनन्दमय परम ज्योति में प्रवेश करता है ।९

अत्र देवर्षयः पूर्वं सिद्धा ब्रह्मर्षयस्तथा ।
उपास्य देवमीशानं प्राप्तवन्तः परं पदम् ॥१०

यहाँ पहले देवर्षिगण, सिद्धगण तथा ब्रह्मर्षिगण ईशान देव की उपासना करके परम पद को प्राप्त हुए ।१०

मत्स्योदर्यास्तटे पुण्यं स्थानं गुह्यतमं शुभम् ।
गोचर्ममात्रं विप्रेन्द्रा ओंकारेश्वरमुत्तमम् ॥११

हे विप्रेन्द्रगण ! मत्स्योदरी के तट पर मंगलकारक अत्यन्त गुह्य, पवित्र स्थान है। वहाँ गोचर्म (चरसा) प्रमाण उत्तम ओंकारेश्वर शिवलिंग है ।११

कृत्तिवासेश्वरं लिङ्गं मध्यमेश्वरमुत्तमम् ।
विश्वेश्वरं तथोंकारं कपर्दीश्वरमुत्तमम् ॥१२

एतानि गुह्यलिंगानि वाराणस्यां द्विजोत्तमाः ।
न कश्चिदिह जानाति विना शम्भोरनुग्रहात् ॥१३

हे द्विजश्रेष्ठो ! कृत्तिवासेश्वरलिंग, उत्तम मध्यमेश्वरलिंग, विश्वेश्वरलिंग, ओंकारलिंग तथा उत्तम कपर्दीश्वरलिंग—ये वाराणसी में गुह्यलिंग कहलाते हैं। इन लिंगों को बिना शंकर की कृपा के कोई नहीं जानता है ।१२-१३

एवमुक्त्वा ययौ कृष्णः पाराशर्यो महामुनिः ।
कृत्तिवासेश्वरं लिंगं द्रष्टुं देवस्य शूलिनः ॥१४

इस प्रकार कहकर पराशर-पुत्र महामुनि कृष्णद्वैपायन व्यास शंकर देव कृत्तिवासेश्वर लिंग को देखने के लिए गये ।१४

समभ्यर्च्य[1] सदा शिष्यैर्माहात्म्यं कृत्तिवाससः[2] ।
कथयामास विप्रेभ्यो भगवान् ब्रह्मवित्तमः ॥१५

शिष्यों के साथ उनकी अर्चना करके ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् व्यास ने ब्राह्मणों से कहा ।१५

---

१. बुधः इति पा० । २. तथा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्मिन् स्थाने पुरा दैत्यो हस्ती भूत्वा भवान्तिकम् ।
ब्राह्मणान् हन्तुमायातो येऽत्र[1] नित्यमुपासते ॥१६

पूर्वकाल में एक दैत्य हाथी का रूप बनाकर इस स्थान में शंकर के पास जो ब्राह्मण यहाँ नित्य उपासना करते थे, उन्हें मारने के लिए आया था ।१६

तेषां लिंगान्महादेवः प्रादुरासीत्त्रिलोचनः ।
रक्षणार्थे द्विजश्रेष्ठा भक्तानां भक्तवत्सलः ॥१७

द्विजश्रेष्ठो ! उन भक्तों की रक्षा के लिए भक्तवत्सल त्रिलोचन महादेव उस लिंग से प्रकट हो गये ।१७

हत्वा गजाकृतिं दैत्यं शूलेनावज्ञया हरः ।
वाससस्याकरोत्कृत्तिं कृत्तिवासेश्वरस्ततः ॥१८

शंकर ने अपने त्रिशूल से अवज्ञापूर्वक उस गजाकार दैत्य को मारकर उसके चमड़े का वस्त्र धारण कर लिया । इसलिए शिव कृत्तिवासेश्वर कहलाये ।१८

अत्र[2] सिद्धिं परां प्राप्ता मुनयो मुनिपुंगवाः ।
तेनैव च शरीरेण प्राप्तास्तत्परमं पदम् ॥१९

मुनिश्रेष्ठो ! यहाँ मुनियों ने परम सिद्धि प्राप्त की और उसी शरीर से परम पद को प्राप्त कर लिया था ।१९

विद्या विद्येश्वरा रुद्राः शिवा ये वः[3] प्रकीर्त्तिताः ।
कृत्तिवासेश्वरं लिंगं नित्यमावृत्य संस्थिताः ॥२०

विद्या, विद्येश्वर, रुद्र और शिव जो आप लोगों को बताये गये हैं, वे नित्य कृत्तिवासेश्वर लिंग को घेरकर अवस्थित रहते हैं ।२०

ज्ञात्वा कलियुगं घोरमधर्मबहुलं जनाः ।
कृत्तिवासं न मुञ्चन्ति कृतार्थास्ते न संशयः ॥२१

पापों की अधिकता से युक्त घोर कलियुग को जानकर जो लोग कृत्तिवासलिंग को नहीं छोड़ेंगे वे कृतार्थ हो जायेंगे, इसमें सन्देह नहीं ।२१

जन्मान्तरसहस्रेण मोक्षोऽन्यत्राप्यते न वा ।
एकेन जन्मना[4] मोक्षः कृत्तिवासे तु लभ्यते ॥२२

अन्यत्र हजारों जन्म में मोक्ष मिले या न मिले, किन्तु कृतिवास में एक जन्म में ही मोक्ष मिल जाता है ।२२

---

१. येनेति पा० । २. तत्र इति पा० । ३. च इति पा० । ४. वसता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलयः सर्वसिद्धानामेतत्स्थानं वदन्ति हि।
गोपितं देवदेवेन महादेवेन शम्भुना ॥२३

इस स्थान को सभी सिद्धों का आलय कहते हैं। देवाधीश्वर महादेव शंभु ने इस स्थान को गोपित रखा है।२३

युगे युगे ह्यत्र दान्ता ब्राह्मणा वेदपारगाः।
उपासते महादेवं जपन्ति शतरुद्रियम् ॥२४

प्रत्येक युग में यहाँ इन्द्रियों का दमन करने वाले वेदपारंगत ब्राह्मण महादेव की उपासना करते हुए शतरुद्रिय का जप करते हैं।२४

स्तुवन्ति सततं देवं महादेवं [1]त्रियम्बकम्।
ध्यायन्तो[2] हृदये नित्यं स्थाणुं [3]सर्वान्तरं शिवम् ॥२५

वे त्रिलोचन देव महादेव की सतत स्तुति करते हैं तथा सबके भीतर रहने वाले स्थाणु शिव का अपने हृदय में ध्यान करते हैं।२५

गायन्ति सिद्धाः किल गीतकानि[4] ये वाराणस्यां निवसन्ति विप्राः।
तेषा मथैकेन भवेन मुक्तिर्ये कृत्तिवासं शरणं प्रपन्नाः ॥२६

सिद्ध जन गीत गाते हैं कि जो ब्राह्मण वाराणसी में निवास करते हैं तथा कृत्तिवास लिंग की शरण में रहते हैं, वे एक ही जन्म में मोक्ष पा जाते हैं।२६

सम्प्राप्य लोके जगतामभीष्टं सुदुर्लभं विप्रकुलेषु जन्म।
ध्यानं[5] समादाय जपन्ति रुद्रं ध्यायन्ति[6] चित्ते यतयो महेशम् ॥२७

इस लोक में संसार के अभीष्ट तथा अत्यन्त दुर्लभ विप्रकुल में जन्म पाकर ध्यान करके रुद्र-मंत्र का जप तथा चित्त में महेश का ध्यान संन्यासी लोग करते हैं।२७

आराधयन्ति प्रभुमीशितारं वाराणसीमध्यगता मुनीन्द्राः।
यजन्ति यज्ञैरभिसन्धिहीनाः स्तुवन्ति रुद्रं प्रणमन्ति शम्भुम् ॥२८

वाराणसी के मध्य में अवस्थित मुनीन्द्रगण ईश्वर प्रभु की, आराधना करते हैं, यज्ञों से यजन करते हैं, निष्कपट होकर रुद्र की स्तुति करते हैं और शंभु को प्रणाम करते हैं।२८

---

१. त्र्यम्बकमिति, त्रक्षकं कृत्तिवाससमिति पा०। २. ध्यायन्तीति पा०। ३. सर्वोत्तरमिति पा०। ४. वाराणसीं ये निवसन्ति विप्राः इति पा०। ५. काले इति पा०। ६. ध्यायन्ति ये चित्तगतं महेशमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमो भवायामलभावधाम्ने स्थाणुं प्रपद्ये गिरिशं पुराणम् ।
स्मरामि रुद्रं हृदये निविष्टं जाने महादेवमनेकरूपम् ॥२९

भव (शिव) को नमस्कार है, निर्मल भाव धाम को नमस्कार है। स्थाणु, गिरिश तथा पुराण पुरुष की शरण में मैं प्राप्त हूँ। हृदय में प्रविष्ट रुद्र का मैं स्मरण करता हूँ। अनेक रूप वाले महादेव को मैं जानता हूँ।

इति श्रीकूर्मपुराणे वाराणसीमाहात्म्यं नाम × द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥३२

श्री कूर्मपुराण में वाराणसीमाहात्म्य नामक बत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३२॥

●

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

समाभाष्य मुनीन्धीमान्देवदेवस्य शूलिनः ।
जगाम लिङ्गं तद्द्रष्टुं कपर्दीश्वरमव्ययम् ॥१

सूत बोले—श्रीमान् व्यास मुनियों से संभाषण करके देवों के देव शंकर के अविनाशी कपर्दीश्वर लिंग का दर्शन करने के लिए गये ।१

स्नात्वा तत्र विधानेन तर्पयित्वा पितॄन्द्विजाः ।
पिशाच मोचने तीर्थे पूजयामास शूलिनम् ॥२

द्विजगण ! वहाँ पिशाचमोचनतीर्थ में स्नान करके विधिपूर्वक पितरों का तर्पण किया और शंकर की पूजा की ।२

तत्राश्चर्यमपश्यंस्ते सुनयो गुरुणा सह ।
मेनिरे क्षेत्रमाहात्म्यं प्रणेमुर्गिरिशं हरम् ॥३

वहाँ गुरु के साथ मुनियों ने एक आश्चर्य देखा, क्षेत्र का महात्म्य मान लिया और गिरीश शिव को प्रणाम किया ।३

कश्चिदभ्याजगामेमं शार्दूलो घोररूपधृक् ।
मृगीमेकां भक्षयितुं कपर्दीश्वरमुत्तमम् ॥४

१ योग इति पा० ।+एकत्रिंशोऽध्यायः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तम कपर्दीश्वर शिवलिंग के पास एक भयंकर रूपधारी बाघ एक हरिणी को खाने के लिए पहुँचा ।४

तत्र सा भीतहृदया कृत्वा कृत्वा प्रदक्षिणम् ।
धावमाना[1] सुसम्भ्रान्ता व्याघ्रस्य वशमागता ॥५

वहाँ वह हरिणी भयभीत हृदय होकर शिवलिंग के चारों तरफ दौड़ती हुई प्रदक्षिणा करने लगी । फिर घबराकर दौड़ती हुई वह बाघ के वश में आ गई ।५

तां विदार्य नखैस्तीक्ष्णैः शार्दूलः सुमहाबलः ।
जगाम [2]चान्यद्विजनं स दृष्ट्वा तान्मुनीश्वरान् ॥६

महाबली बाघ उसे अपने तीक्ष्ण नखों से फाड़कर खा गया और उन मुनीश्वरों को देखकर दूसरे वन में चला गया ।६

मृतमात्रा च सा बाला कपर्दी[3]शाग्रतो मृगी ।
अदृश्यत महाज्वाला व्योम्नि सूर्यसमप्रभा ॥७

कपर्दीश के आगे प्राण त्यागते ही वह बाला मृगी आकाश में सूर्य के समान कान्ति धारण कर महाज्वाला के रूप में दिखाई पड़ी ।७

त्रिनेत्रा नीलकण्ठा[3] च शशाङ्काङ्कितशेखरा[4] ।
वृषाधिरूढा पुरुषैस्तादृशैरेव संयता ॥८

वह त्रिनेत्रा, नीलकण्ठा, चन्द्रमा से अंकित मस्तकवाली, बैल पर आरूढ़ तथा वैसे ही पुरुषों से घिरी हुई थी ।८

पुष्पवृष्टिं विमुञ्चन्ति खेचरास्तस्य मूर्द्धनि ।
गणेश्वरः स्वयं भूत्वा न दृष्टस्तत्क्षणात्ततः ॥९

आकाशचारीगण उसके मस्तक पर फूलों की वर्षा करने लगे । वह स्वयं गणेश्वर होकर उस क्षण के बाद से नहीं दिखाई पड़ी ।९

दृष्ट्वैतदाश्चर्यवरं[5] जैमिनिप्रमुखास्तदा ।
कपर्दीश्वरमाहात्म्यं पप्रच्छुर्गुरुमच्युतम् ॥१०

यह महान् आश्चर्य देखकर जैमिनि आदि मुनियों ने गुरुदेव व्यास से पूछा ।१०

---

१. वारयामास सम्भ्रान्ता इति पा० । २. देशं विजनं देव दृष्ट्वा मुनीश्वर मिति पा० । ३. नीलखट्वाङ्गा इति पा० । ४. मूर्द्धजा इति पा० । ५. तरमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेषां प्रोवाच भगवान्देवाग्रे चोपविश्य सः ।
कपर्दीशस्य माहात्म्यं प्रणम्य वृषभध्वजम् ।११

महादेव के सामने बैठकर कपर्दीश शिवलिंग को प्रणाम करके भगवान् व्यास उन लोगों को कपर्दीश का माहात्म्य सुनाने लगे ।११

(स्मृत्यैवाशेषपापौघं क्षिप्रमस्य विनश्यति ।
कामक्रोधादयो दोषा वाराणस्यां निवासिनः ॥
विघ्नाः सर्वे विनश्यन्ति कपर्दीश्वरपूजनात् ॥
तस्मात्सदैव द्रष्टव्यं कपर्दीश्वरमुत्तमम् ॥)

(कपर्दीश का स्मरण करते ही शीघ्र अशेष पापों का समूह नष्ट हो जाता है। वाराणसी में निवास करने वालों के काम, क्रोध आदि दोष तथा सभी विघ्न कपर्दीश्वर के पूजन से नष्ट हो जाते हैं। इसलिए उत्तम कपर्दीश्वर लिंग का दर्शन सदैव करना चाहिए।)

इदं देवस्य तल्लिङ्गं कपर्दीश्वरमुत्तमम् ॥
पूजितव्यं प्रयत्नेन स्तोतव्यं वैदिकैः स्तवैः ॥१२

महादेव के उस उत्तम कपर्दीश्वर लिंग का प्रयत्नपूर्वक पूजन तथा वैदिक स्तोत्रों से स्तुति करनी चाहिए ।१२

ध्यायतामत्र नियतं योगिनां शान्तचेतसाम् ।
जायते योगसिद्धिश्च[1] षण्मासेन न संशयः ॥१३

यहाँ नियमपूर्वक ध्यान करने वाले शान्तचित्त योगियों को योगसिद्धि छह मासों में मिल जाती है, इसमें सन्देह नहीं ।१३

ब्रह्महत्यादिपापानि विनश्यन्त्यस्य पूजनात् ।
पिशाचमोचने कुण्डे स्नातस्यात्र समीपतः ॥१४

यहाँ समीप ही पिशाचमोचनकुण्ड में स्नान करके इस लिंग के पूजन से ब्रह्महत्या आदि पाप नष्ट हो जाते हैं ।

अस्मिन् क्षेत्रे पुरा विप्रास्तपस्वी शंसितव्रतः ।
शङ्कुकर्ण इति ख्यातः पूजयामास शूलिनम् ॥१५

विप्रवृन्द ! पूर्वकाल में इस क्षेत्र में शंकुकर्ण नामक उत्तमव्रतधारी तपस्वी शंकर की पूजा करता था ।१५

---

१. सिद्धिः सा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जजाप रुद्रमनिशं प्रणवं रुद्ररूपिणम् ।
पुष्पधूपादिभिः स्तोत्रैर्नमस्कारैः प्रदक्षिणैः ॥१६

वह दिनरात रुद्र का मंत्र जपता था। वह पुष्प धूप, स्तोत्र, नमस्कार और प्रदक्षिण आदि के द्वारा रुद्ररूपी प्रणव की आराधना करता था ।१६

उवाच तत्र योगात्मा कृत्वा दीक्षां तु नैष्ठिकीम् ।
कदाचिदागतं प्रेतं पश्यति स्म क्षुधान्वितम् ॥१७

वह योगात्मा नैष्ठिकी दीक्षा ग्रहण करके वहाँ निवास करता था। उसने किसी समय वहाँ आये हुए एक क्षुधापीडित प्रेत को देखा ।१७

अस्थिचर्मपिनद्धाङ्गं निःश्वसन्तं मुहुर्मुहुः ।
तं दृष्ट्वा स मुनिश्रेष्ठः कृपया परया युतः ॥१८

उस प्रेत के अंग मात्र हड्डी और चमड़े से युक्त थे। वह बार-बार हाँफ रहा था। उसे देखकर मुनिवर को बड़ी दया आयी ।१८

प्रोवाच को भवान् कस्माद्देशाद्देशमिमं गतः ।
तस्मै पिशाचः क्षुधया पीड्यमानोऽब्रवीद्वचः ॥१९

मुनि ने पूछा—'आप कौन हैं ? किस देश से यहाँ आये हैं ? भूख से व्याकुल पिशाच ने उनसे यह वचन कहा ।१९

पूर्वजन्मन्यहं विप्रो धनधान्यसमन्वितः ।
पुत्रपौत्रादिभिर्युक्तः कुटुम्बभरणोत्सुकः ॥२०

पूर्व जन्म में मैं धनधान्य से सम्पन्न ब्राह्मण था। मेरे पुत्र-पौत्र आदि सभी थे मैं कुटुम्ब के भरण करने में तत्पर रहता था ।२०

न पूजिता मया देवा गावोऽप्यतिथयस्तथा ।
न कदाचित्कृतं पुण्यमल्पं वा स्वल्पमेव वा ॥२१

किन्तु मैंने कभी देवों, गौओं तथा अतिथियों की पूजा नहीं की। कभी किञ्चिन्मात्र भी पुण्य नहीं किया ।२१

एकदा भगवान्रुद्रो[1] गोवृषेश्वरवाहनः ।
विश्वेश्वरो वाराणस्यां दृष्टः स्पृष्टो नमस्कृतः ॥२२

एक बार वाराणसी में वृषभराज (नन्दी) वाहन वाले विश्वेश्वर भगवान् रुद्र का मैं दर्शन, स्पर्श और नमस्कार किये ।२२

---

१. देव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदाचिरेण कालेन पञ्चत्वमहमागतः ।
न दृष्टं तन्महाघोरं यमस्य वदनं मुने ॥२३

मुने ! तत्पश्चात् शीघ्र ही मैं मृत्यु को प्राप्त हो गया । परन्तु यम का महा-भयानक चेहरा नहीं देखा ।२३

ईदृशीं योनिमापन्नः पैशाचीं क्षुधयार्दितः ।
पिपासया[1] परिक्रान्तो न जानामि हिताहितम् ॥२४

अब ऐसी पिशाच-योनि को पाकर भूख से पीडित तथा प्यास से आक्रान्त हो अपना हित और अहित नहीं समझ रहा हूँ ।२४

यदि कञ्चित्समुद्धर्त्तुमुपायं पश्यसि प्रभो ।
कुरुष्व तं नमस्तुभ्यं त्वामहं शरणं गतः ॥२५

प्रभो ! यदि कोई उद्धार का उपाय आप देख रहे हैं तो उसे कीजिए । आपको नमस्कार है । मैं आपकी शरण में प्राप्त हूँ ।२५

इत्युक्तः शङ्कुकर्णोऽथ पिशाचमिदमब्रवीत् ।
त्वादृशो न हि लोकेऽस्मिन्विद्यते पुण्यकृत्तमः ॥२६

अनन्तर इस प्रकार कहा जाने पर शंकुकर्ण ने पिशाच से कहा—तुम्हारे समान पुण्यकर्मा इस लोक में कोई नहीं है ।२६

यत्त्वया भगवान् पूर्वं दृष्टो विश्वेश्वरः शिवः ।
संस्पृष्टो वन्दितो भूयः कोऽन्यस्त्वत्सदृशो भुवि ॥२७

जो तुमने पहले भगवान् विश्वेश्वर शिव का दर्शन, स्पर्श और वंदन किया । फिर तुम्हारे समान इस भूमि पर दूसरा कौन है ?२७

तेन कर्मविपाकेन देशमेतं समागतः ।
स्नानं कुरुष्व शीघ्रं त्वमस्मिन् कुण्डे समाहितः ॥२८

उसी कर्म के फल से तुम इस देश में आये हो । तुम समाहित होकर शीघ्र इस कुण्ड में स्नान करो ।२८

येनेमां कुत्सितां योनिं क्षिप्रमेव प्रहास्यसि ॥२९

जिससे इस कुत्सित योनि को शीघ्र त्याग दोगे ।२९

---

१. पिपासयाधुनाक्रान्त इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स एवमुक्तो मुनिना पिशाचो दयावता देववरं त्रिनेत्रम् ।
स्मृत्वा कपर्दीश्वरमीशितारं चक्रे समाधाय मनोऽवगाहम् ॥३०

दयालु मुनि के द्वारा इस प्रकार कहा जाने पर पिशाच ने तीन नेत्र वाले, शासक, कपर्दीश्वर महादेव का स्मरण करके मन को समाहित कर स्नान किया ।३०

[1]तदावगाहान्मुनिसन्निधाने ममार दिव्याभरणोपपन्नः ।
अदृश्यतार्कप्रतिमे विमाने शशांकचिह्नांकितचारुमौलिः ॥३१

तब स्नान करने से वह मुनि के समीप ही मर गया और दिव्य आभूषणों से विभूषित हो सूर्य सदृश चमकने वाले विमान में चन्द्रमौलि महादेव के रूप में दिखाई पड़ा ।३१

विभाति रुद्रैरुदितो दिविस्थैः समावृतो योगिभिरप्रमेयैः ।
स बालखिल्यादिभिरेष देवो यथोदये भानुरशेषदेवः ॥३२

रुद्रगणों तथा आकाशस्थ महान् योगियों द्वारा घिरा हुआ वह पहले का पिशाच उसी तरह शोभित होने लगा जैसे उदयकाल में बालखिल्य आदि मुनियों से परिवृत ये सबके देव सूर्य देव शोभायमान होते हैं ।३२

स्तुवंति सिद्धा दिवि देवसंघा नृत्यंति दिव्याप्सरसोऽभिरामाः ।
मुञ्चन्ति वृष्टिं कुसुमालिमिश्रां गन्धर्वविद्याधरकिन्नराद्याः ॥३३

आकाश में सिद्धगण तथा देववृन्द उसकी स्तुति करने लगे, सुन्दरी दिव्य अप्सरायें नृत्य करने लगीं और गन्धर्व, विद्याधर, किन्नर आदि उसके ऊपर भ्रमर मिश्रित पुष्पों की वृष्टि करने लगे ।३३

संस्तूयमानोऽथ मुनींद्र संघैरवाप्य बोधं भगवत्प्रसादात् ।
समाविशन्मण्डलमेवमग्र्यं[2] त्रयीमयं यत्र विभाति रुद्रः ॥३४

मुनीन्द्रवृन्द उसकी स्तुति कर रहे थे और भगवान् की कृपा से उसने ज्ञान प्राप्त कर लिया। तदनन्तर वह वेदमय प्रधान मण्डल में प्रविष्ट हो गया, जहाँ रुद्र विराजमान रहते हैं ।३४

दृष्ट्वा विमुक्तं स पिशाचभूतं मुनिः प्रहृष्टो मनसा महेशम् ॥
विचिन्त्य रुद्रं कविमेवमग्र्यं प्रणम्य तुष्टाव कपर्दिनं तम् ॥३५

---

१. तदावगाढो मुनिसंनिधाने समानदिव्या इति, सदावगाह्य इति पा० । २. मेतदग्र्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस पिशाच को मुक्त देखकर मुनि बहुत हर्षित हुए और मन से प्रधान कविस्वरूप रुद्र महेश का चिन्तन करके उन कपर्दीश्वर (शिव) को प्रणाम करने के पश्चात् स्तुति करने लगे ।३५

शंकुकर्ण उवाच

नमामि[1] नित्यं परतः परस्ताद्गोप्तारमेकं पुरुषं पुराणम् ।
व्रजामि योगेश्वरमीशितारमादित्यमग्निं कलिलाधिरूढम् ॥३६

शंकुकर्ण बोले—नित्य, पर से भी परे, रक्षक, अद्वितीय, पुराण पुरुष, योगेश्वर, सूर्यस्वरूप, अग्निस्वरूप और कलिलाधिरूढ़ भगवान् को नित्य नमस्कार है ।३६

त्वां ब्रह्मपारं हृदि सन्निविष्टं हिरण्मयं योगिनमादिहीनम्[2] ।
व्रजामि रुद्रं शरणं दिविस्थं महामुनिं ब्रह्मपरं[3] पवित्रम् ॥३७

हे देव ! आप ब्रह्मा से परे, सबके हृदय में सन्निविष्ट, हिरण्मय, योगी, आदि-हीन, रक्षक, आकाश में स्थित, महामुनि, ब्रह्मपरायण और पवित्र हैं । मैं आपका शरणागत हूँ ३७

सहस्रपादाक्षिशिरोऽभियुक्तं सहस्रबाहुं तमसः परस्तात् ।
त्वां ब्रह्मपारं प्रणमामि शंभुं हिरण्यगर्भाधिपतिं त्रिनेत्रम् ॥३८

सहस्र चरणों, नेत्रों, मस्तकों तथा भुजाओं से युक्त, तम से परे, ब्रह्मपार, हिरण्य-गर्भ के अधिपति और त्रिलोचन आप शंभु को मैं प्रणाम करता हूँ ।३८

यतः प्रसूतिर्जगतो विनाशो येनाहृतं सर्वमिदं शिवेन ।
तं ब्रह्मपारं भगवन्तमीशं प्रणम्य नित्यं शरणं प्रपद्ये ॥३९

जिनसे संसार की उत्पत्ति और विनाश होता है, जो शिव इस सबका आहरण करते हैं, उन ब्रह्मपार, नित्य, भगवान् ईश को प्रणाम करके मैं शरणागत होता हूँ ।३९

अलिङ्गमालोकविहीनरूपं[4] स्वयंप्रभुं चित्प्रतिमैकरुद्रम् ॥
तं ब्रह्मपारं परमेश्वरं त्वां नमस्करिष्ये न यतोऽन्यदस्ति ॥४०

चिह्न रहित, आलोक से विहीन रूप वाले, स्वयंप्रभु, चित्स्वरूप, एकमात्र रुद्र आपको नमस्कार है । जिनके अतिरिक्त और कुछ नहीं है, उन ब्रह्मपार, परमेश्वर आपको मैं प्रणाम करता हूँ ।४०

---

१. कपर्दिनं त्वामिति पा० । २. भोगिनमादिमन्तमिति पा० । ३. ब्रह्ममयमिति पा० । ४. सहस्ररूपमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यं योगिनस्त्यक्तसबीजयोगाल्लब्ध्वा समाधिं परमात्मभूताः ।
पश्यन्ति देवं प्रणतोऽस्मि नित्यं[1] तद्ब्रह्मपारं भवतः स्वरूपम् ॥४१

जिन देव को योगी लोग सबीज योग के त्याग से समाधि प्राप्त करके परमात्म-स्वरूप होकर देखते हैं, उन ब्रह्मपार आपके स्वरूप को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ ।४१

न यत्र नामानि[2] विशेषतृप्तिर्न संदृशे तिष्ठति यत्स्वरूपम्[3] ।
तं ब्रह्मपारं प्रणतोऽस्मि नित्यं स्वयंभुवं त्वां शरणं प्रपद्ये ॥४२

हे देव ! मैं आपके ब्रह्मपारस्वरूप को नित्य प्रणाम करता हूँ, जिसके नाम नहीं है, जिसे विशेषतृप्ति सुख नहीं है और जिसका स्वरूप भी नहीं है, वैसे ब्रह्मपार शिव को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ । ऐसे स्वयम्भू आपकी शरण मैं ग्रहण करता हूँ ।४२

यद्वेदवेदाभिरता[4] विदेहं स ब्रह्मविज्ञानमभेदमेकम् ।
पश्यन्त्यनेकं भवतः स्वरूपं तद्ब्रह्मपारं [5]प्रणमामि नित्यम् ॥४३

जिन्हें वैदिकज्ञाननिरत पुरुष देहरहित, अभेदस्वरूप एकमात्र और ब्रह्मविज्ञान युक्त देखते हैं, ऐसे आपके ब्रह्मपारस्वरूप को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ ।४३

यतः प्रधानं पुरुषः पुराणो विवर्त्तते यं प्रणमन्ति देवाः[6] ।
नमामि तं ज्योतिषि संनिविष्टं कालं बृहन्तं भवतः स्वरूपम् ॥४४

जिनसे प्रकृति और पुराण पुरुष उत्पन्न होते हैं, देवता लोग जिन्हें प्रणाम करते हैं, उन ज्योतिर्निविष्ट, बृहत् एवं कालात्मक आपके स्वरूप को मैं प्रणाम करता हूँ ।४४

व्रजामि नित्यं शरणं महेशं [7]स्थाणुं प्रपद्ये गिरिशं पुराणम् ।
शिवं प्रपद्ये हरमिन्दुमौलिं पिनाकिनं त्वां शरणं व्रजामि[8] ॥४५

हे देव ! नित्य, रक्षक, महेश, स्थाणु, पुराण, शिव, हर, चन्द्रमौलि और पिनाकी आपकी शरण में प्राप्त हूँ ।४५

स्तुत्वैवं शंकुकर्णोऽसौ भगवन्तं कपर्द्दिनम् ।
पपात दण्डवद्भूमौ प्रोच्चरन्प्रणवं शिवम्[9] ॥४६

इस प्रकार वह शंकुकर्ण भगवान् कपर्दी की स्तुति करके शिव-प्रणव उच्चारण करते हुए भूमि पर दण्डवत् गिर पड़े ।४६

---

१. रुद्रमिति पा० । २. मानादीति, नामादीति पा० । ३. यस्य रूपमिति पा० । ४. वेदवेदाभिरताः—वेदानां वेदः ज्ञानं तस्मिन् रताः । ब्रह्मवादाभिरताः इति, यद्वेदवाक्यादिभिरादिदेवमिति पा० । ५. प्रणतोऽस्मीति पा० । ६. वेदाः इति पा० । ७. गृहेशमिति, गुहेशमिति पा० । ८. नमामीति पा० । ९. परमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्क्षणात्परमं लिङ्गं प्रादुर्भूतं शिवात्मकम् ।
ज्ञानमानन्दमद्वैतं कोटिकालाग्निसन्निभम् ॥४७

उसी क्षण एकज्ञानमय, आनन्दस्वरूप, कोटिकालाग्निसदृश, शिवस्वरूप परम लिंग प्रादुर्भूत हुआ ।४७

शंकुकर्णोऽथ स[1] तदा मुनिः सर्वात्मकोऽमलः ।
निलिम्पे[2] विमले लिंगे तदद्भुतमिवाभवत् ॥४८

तब सर्वात्मा, निर्मल, मुनि शंकुकर्ण प्राणत्याग करके उस विमल लिंग में विलीन हो गये । यह अद्भुत बात हुई ।४८

एतद्रहस्यमाख्यातं माहात्म्यं च कपर्दिनः ॥
न कश्चिद्वेत्ति तमसा विद्वानप्यत्र मुह्यति ॥४९

कपर्दी लिंग का यह रहस्य और माहात्म्य मैंने बता दिया । तमोगुण के बल से इसे कोई नहीं जान पाता है। विद्वान् को भी इस विषय में मोह उपस्थित हो जाता है ।४९

य इमां शृणुयान्नित्यं कथां पापप्रणाशिनीम् ॥
भक्तः[3] पापविमुक्तात्मा रुद्रसामीप्यमाप्नुयात् ॥५०

जो व्यक्ति इस पापनाशिनी कथा का नित्य श्रवण करेगा, वह भक्त, निष्पाप होकर रुद्र का सामीप्य प्राप्त करेगा ।५०

पठेच्च सततं शुद्धो ब्रह्मपारं महास्तवम् ॥
प्रातर्मध्याह्नसमये स योगं प्राप्नुयान्नरः[4] ॥५१

जो मनुष्य पवित्र होकर नित्य प्रातःकाल और मध्याह्नकाल में इस ब्रह्मपार नामक महास्तव का पाठ करेगा, उसे योग की प्राप्ति होगी ।५१

इहैव नित्यं वत्स्यामो देवदेवं कपर्दिनम् ॥
द्रक्ष्यामः सततं देवं पूजयामस्त्रिलोचनम्[5] ॥५२

हम यहीं रहेंगे, देवाधिदेव कपर्दी का सतत दर्शन करेंगे और त्रिलोचन देव की पूजा करेंगे ।५२

इत्युक्त्वा भगवान्व्यासः शिष्यैः सह महाद्युतिः[6] ॥
उवास तत्र युक्तात्मा पूजयन्वै कपर्दिनम् ॥५३

१. मुक्तात्मा—धर्मात्मा सर्वगोऽमलः इति पा० । २. निनिन्ये इति पा० । ३. त्यक्तपापविमुक्तात्मा इति पा० । ४. परमिति पा० । ५. पूजयामोऽथ शूलिनमिति पा० । ६. महामुनिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कहकर योगी, महाकान्तिमान्, भगवान् व्यासदेव शिष्यों के साथ कपर्दी की पूजा करते हुए वहीं रहने लगे ।५३

इति श्रीकूर्मपुराणे वाराणसीमाहात्म्यं नाम × त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

श्री कूर्मपुराण में वाराणसीमाहात्म्य नामक तैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ।३३॥

●

चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

उषित्वा तत्र भगवान् कपर्दीशान्तिके पुनः ॥
ययौ द्रष्टुं मध्यमेशं[1] बहुवर्षगणान्प्रभुः ॥१

सूत बोले—कपर्दीशमहादेव के समीप बहुत वर्षों तक निवास करने के उपरान्त भगवान् प्रभु व्यास मध्यमेश्वर लिंग का दर्शन करने के लिए गये ।१

तत्र मन्दाकिनीं पुण्यामृषिसंघनिषेविताम् ॥
नदीं विमलपानीयां दृष्ट्वा हृष्टोऽभवन्मुनिः ॥२

वहाँ ऋषिवृन्द से सेवित एवं निर्मल जल वाली पवित्र मन्दाकिनी नदी को देखकर मुनि (वेदव्यास) हर्षित हुए ।२

स तामन्वीक्ष्य मुनिभिः सह द्वैपायनः प्रभुः ॥
चकार भावपूतात्मा स्नानं स्नानविधानवित् ॥३

मुनियों के साथ उस नदी को देखकर भाव से पवित्रात्मा एवं स्नानविधिवेत्ता प्रभु द्वैपायन व्यास ने उसमें स्नान किया ।३

(पूजयामास लोकादिं पुष्पैर्नानाविधैर्भवम् ॥
प्रविश्य शिष्यप्रवरैः सार्द्धं सत्यवतीसुतः ॥)

(श्रेष्ठ शिष्यों के साथ उसमें प्रवेश करके सत्यवतीपुत्र व्यास ने अनेक प्रकार के पुष्पों से लोकादि शंकर की पूजा की ।)

× द्वात्रिंशोऽध्यायः लि० पु० । १. मध्यदेशमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तर्प्य विधिवद्देवानृषीन् पितृगणांस्तथा ।
मध्यमेश्वरमीशानमर्चयामास शूलिनम् ॥४

देवों, ऋषियों और पितृगणों का विधिवत् तर्पण करके मध्यमेश्वर ईशान शम्भु का पूजन किया ।४

ततः पाशुपताः शांता भस्मोद्धूलितविग्रहाः ।
द्रष्टुं समागता रुद्रं मध्यमेश्वरमीश्वरम् ॥५

तदनन्तर भस्म रमाये शरीर वाले, शान्त, शिवभक्तगण मध्यमेश्वर ईश्वर रुद्र को देखने के लिए आये ।५

ओंकारासक्तमनसो वेदाध्ययनतत्पराः ।
जटिला मुण्डिताश्चापि शुद्धयज्ञोपवीतिनः[1] ॥६

उन लोगों का मन ओंकार में आसक्त था । वे वेदों के अध्ययन में तत्पर, जटाधारी, मुण्डित शिर वाले, एवं शुद्ध यज्ञोपवीतधारी थे ।६

कौपीनवसनाः केचिदपरे चाप्यवाससः[2] ।
ब्रह्मचर्यरताः शांता दांता[3] वै ज्ञानतत्पराः ॥७

उनमें कोई कौपीनवस्त्रधारी और कोई निवस्त्र थे । वे ब्रह्मचर्य में निरत, शान्त, दान्त, तथा ज्ञान में तत्पर थे ।७

दृष्ट्वा द्वैपायनं विप्राः शिष्यैः परिवृतं मुनिम् ।
पूजयित्वा यथान्यायमिदं वचनमब्रुवन् ॥८

विप्रवृन्द ! उन लोगों ने शिष्यों से घिरे हुए व्यास मुनि को देखकर न्यायपूर्वक उनकी पूजा करके यह वचन कहा ।८

को भवान् कुत आयातः सह शिष्यैर्महामुने ।
प्रोचुः पैलादयः[4] शिष्यास्तानृषीन्धर्मभावितान् ॥९

महामुनि ! आप कौन हैं ? शिष्यों के साथ आप कहाँ से आये । हैं ? तब पैल आदि शिष्यों ने धर्म भावना से ओत-प्रोत उन ऋषियों से कहा ।९

अयं सत्यवतीसूनुः कृष्णद्वैपायनः प्रभुः[5] ।
व्यासः स्वयं हृषीकेशो येन वेदाः पृथक्कृताः ॥१०

ये साक्षात् सत्यवती पुत्र, जितेन्द्रिय, प्रभु, कृष्णद्वैपायन व्यास हैं, जिन्होंने वेदों का पृथक्करण किया है ।१०

---

१. शुक्लेति पा० । २. चान्यवाससः इति पा० । ३. वेदान्तध्यानतत्पराः इति, वेदान्तज्ञानतत्परा इति पा० । ४. शैलादयः इति पा० । ५. मुनिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यस्य देवो महादेवः साक्षाद्देवः पिनाकधृक् ॥
अंशांशेनाभवत्पुत्रो नाम्ना शुक इति प्रभुः ॥११

जिनके शुक नामक पुत्र के रूप में पिनाकधनुषधारी साक्षात् महादेव अपने अंशों से उत्पन्न हुए हैं ।११

यो वै साक्षान्महा[1]देवं सर्वभावेन शं[2]करम् ॥
प्रपन्नः परया भक्त्या यस्य तज्ज्ञानमैश्वरम् ॥१२

जो सर्वभावेन साक्षात् महादेव शंकर के परमभक्ति पूर्वक शरणागत हैं। जिन्हें ऐश्वर (शैव) ज्ञान प्राप्त है ।१२

ततः पाशुपताः सर्वे ते[3] च हृष्टतनूरुहाः ॥
ऊचुरव्यग्रमनसो[4] व्यासं[5] सत्यवतीसुतम् ॥१३

तदनन्तर सभी शैव मुनि हर्ष से रोमाञ्चित तथा शान्तचित्त होकर सत्यवती पुत्र व्यास से बोले ।१३

भगवन् भवता ज्ञातं विज्ञानं परमेष्ठिनः ॥
प्रसादाद्देवदेवस्य यत्तन्माहेश्वरं परम्[6] ॥१४

भगवन् ! आप देवाधिदेव की कृपा से परमेष्ठी का विज्ञान, जिसे परममाहेश्वर ज्ञान कहते हैं, प्राप्त कर चुके हैं ।१४

तद्वदास्माकमव्यग्रं[7] रहस्यं गुह्यमुत्तमम् ॥
क्षिप्रं पश्येम तं देवं श्रुत्वा भगवतो मुखात् ॥१५

हमें आप वह उत्तम, गुह्य, रहस्य एवं शान्त ज्ञान बता दें। आपके मुख से सुनकर हम शीघ्र महादेव को देख सकेंगे ।१५

विसर्जयित्वा[8] ताञ्छिष्यान् सुमन्तुप्रमुखांस्तदा[9] ॥
प्रोवाच तत्परं ज्ञानं योगिभ्यो[10] योगवित्तमः ॥१६

तब सुमन्त आदि शिष्यों को वहाँ से हटाकर योगवेत्ताओं में श्रेष्ठ व्यास जी ने योगियों को परम ज्ञान बताया ।१६

---

१. स इति पा०। २. हृष्टसर्वतनूरुहाः इति पा०। ३. नेमुरिति पा०। ४. प्रोचुरिति पा०। ५. पदमिति पा०। ६. मव्यक्तमिति पा०। ७. समाभाष्य च इति पा०। विसर्जयित्वा इत्यार्षम्। ८. स्वयम्भूप्रमुखांस्ततः इति पा०। ९. योगिन इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्क्षणादेव विमलं सम्भूतं ज्योतिरुत्तमम् ॥
लीनास्तत्रैव ते विप्राः क्षणादन्तरधीयत ॥१७

उसी क्षण वहाँ उत्तम निर्मल ज्योति प्रकट हुई। उसी में वे विप्रगण लीन हो गये और क्षणभर में अन्तर्हित हो गये।१७

ततः शिष्यान् समाहृत्य[1] भगवान् ब्रह्मवित्तमः ॥
प्रोवाच मध्यमेशस्य माहात्म्यं पैलपूर्वकान्[2] ॥१८

तब पैल आदि शिष्यों को बुलाकर ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् व्यास ने उनसे मध्यमेश्वर शिव का माहात्म्य वर्णन किया।१८

अस्मिन् स्थाने स्वयं देवो देव्या सह महेश्वरः ॥
रमते भगवान्नित्यं रुद्रैश्च परिवारितः ॥१९

इस स्थान में रुद्रों से घिरे हुए स्वयं भगवान् महेश्वर देव देवी पार्वती के साथ नित्य क्रीड़ा करते हैं १९

अत्र पूर्वं हृषीकेशो विश्वात्मा देवकीसुतः ॥
उवास वत्सरं कृष्णः सदा पाशुपतैर्वृतः ॥२०

यहाँ पूर्वकाल में विश्वात्मा देवकी पुत्र श्री कृष्ण एक वर्ष तक शैव-मंडली के साथ रहे हैं।२०

भस्मोद्धूलितसर्वांगो रुद्राराधनतत्परः[3] ॥
आराधयन् हरिः शंभुं कृत्वा पाशुपतं व्रतम् ॥२१

पाशुपत व्रत करके शिव की आराधना करते हुए वासुदेव अपने सम्पूर्ण शरीर में भस्म रमाते थे।२१

तस्य वै बहवः शिष्या ब्रह्मचर्यपरायणाः ॥
लब्ध्वा तद्वचनाज्ज्ञानं[4] दृष्टवन्तो महेश्वरम् ॥२२

उनके ब्रह्मचर्यपरायण बहुत से शिष्य थे। उनके वचन से उन लोगों ने ज्ञान पाकर महेश्वर का दर्शन किया।२२

तस्य देवो महादेवः प्रत्यक्षं नीललोहितः ॥
ददौ कृष्णस्य भगवान्वरदो वरमुत्तमम् ॥२३

---

१. समाहूयेति पा०। २. शैलपूर्वकानिति पा०। ३. रुद्राध्यनतत्पर इति, रुद्रजाप्यमरायणः इति पा०। ४. तद्वदनादिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरदाता भगवान् नीललोहित महादेव ने प्रत्यक्ष होकर श्री कृष्ण को उत्तम वर दिया ।२३

येऽर्च्चयिष्यन्ति गोविन्दं मद्भक्ता विधिपूर्वकम् ॥
तेषां तदैश्वरं ज्ञानमुत्पत्स्यति[1] जगन्मय ॥२४

शिव ने कहा—हे जगन्मय ! जो मेरे भक्तगण विधिपूर्वक गोविन्द की अर्चना करेंगे, उन्हें वह ऐश्वर ज्ञान उत्पन्न होगा ।२४

त्वमीशोऽर्चयितव्यश्च[2] ध्यातव्यो मत्परैर्जनैः ॥
भविष्यसि[3] न सन्देहो मत्प्रसादाद्द्विजातिभिः[4] ॥२५

मेरे भक्तजनों तथा द्विजातियों के लिए आप प्रभु अर्चना और ध्यान करने योग्य होंगे, इसमें सन्देह नहीं है ।२५

ये च[5] द्रक्ष्यन्ति देवेशं ध्यात्वा[6] देवं पिनाकिनम् ॥
ब्रह्महत्यादिकं पापं तेषामाशु विनश्यति ॥२६

जो मनुष्य पिनाकधनुषधारी महादेव का ध्यान करके देवेश श्री कृष्ण का दर्शन करेंगे, उनका ब्रह्महत्या आदि जनित पाप शीघ्र नष्ट हो जायेगा ।२६

प्राणांस्त्यजन्ति ये विप्राः[7] पापकर्मरता अपि ॥
ते यान्ति परमं[8] स्थानं नात्र कार्या[9] विचारणा ॥२७

जो विप्र पापकर्मनिरत होने पर भी यहाँ प्राण त्याग करेंगे, वे परम स्थान को प्राप्त करेंगे, इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है ।२७

धन्यास्तथ्यन्तु[10] ते विप्रा मन्दाकिन्यां कृतोदकाः ॥
अर्चयन्ति महादेवं मध्यमेश्वरमुत्तमम् ॥२८

वे विप्र धन्य हैं जो मन्दाकिनी में स्नान करके उत्तम मध्यमेश्वर महादेव की अर्चना करते हैं ।२८

स्नानं दानं तपः श्राद्धं पिण्डनिर्वपणं त्विह ॥
एकैकशः कृतं विप्राः पुनात्यासप्तमं कुलम् ॥२९

विप्रवृन्द ! यहाँ स्नान, दान, तप, और पिण्डदान श्राद्ध इनमें से क्रमशः एक एक करने वाला व्यक्ति अपने सात कुलों को पवित्र कर लेता है ।२९

---

१. परस्मैपदमार्षम् । २. नमस्कार्योचितव्य इति पा० । ३. भविष्यन्तीति पा० । ४. द्विजातयः इति पा० । ५. येऽत्र इति पा० । ६. स्नात्वा रुद्रमिति ज्ञात्वा रुद्रमिति पा० । ७. मर्त्या इति पा० । ८. तत्परमिति पा० । ९. कार्यविचारणा इति पा० । १०. धन्यास्तु खलु मे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्निहत्यामुपस्पृश्य राहुग्रस्ते दिवाकरे ॥
यत्फलं लभते मर्त्यस्तस्माद्दशगुणं त्विह ॥३०

सूर्य ग्रहण में सन्निहिती नदी (कुरुक्षेत्र ?) में स्नान करने से जो फल मिलता है, उससे दश गुण अधिक फल यहाँ प्राप्त होता है ।३०

एवमुक्त्वा महायोगी मध्यमेशान्तिके प्रभुः ॥
उवास सुचिरङ्कालं पूजयन्वै महेश्वरम् ॥३१

प्रभु महायोगी व्यास ने इस प्रकार कहकर महेश्वर की पूजा करते हुए मध्यमेश के निकट दीर्घकाल तक निवास किया ३१

इति श्रीकूर्मपुराणे वाराणसीमाहात्म्यं नाम × चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४

श्री कूर्मपुराण में वाराणसी माहात्म्य वर्णन नामक चौंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३४॥

●

पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

ततः सर्वाणि गुह्यानि तीर्थान्यायतनानि च ।
जगाम[1] भगवान्व्यासो जैमिनिप्रमुखैर्वृतः ॥१

सूत बोले—तदनन्तर जैमिनि आदि शिष्यों से युक्त भगवान् व्यास सभी गुह्य तीर्थों और देवालयों में गये ।१

प्रयागं परमं तीर्थं प्रयागादधिकं शुभम् ।
विश्वरूपं तथा तीर्थं कालतीर्थमनुत्तमम् ॥२

प्रयाग परम तीर्थ है और प्रयाग से भी अधिक शुभ विश्वरूपतीर्थ है । वहाँ तथा परमोत्तम कालतीर्थ में गये ।२

आकाशाख्यं महातीर्थं तीर्थञ्चैवानुषं[2] परम् ।
स्वल्लीनञ्च महातीर्थं गौरीतीर्थमनुत्तमम्[3] ॥३

आकाश नामक महातीर्थ, श्रेष्ठ आनुषतीर्थ, स्वर्लीन नामक महातीर्थ तथा परमोत्तमगौरीतीर्थ में गये ।३

× त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः लि० पु० । १. स श्रुत्वा इति पा० । २. चैवार्षभमिति पा० । ३. केदारं तीर्थमुत्तममिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राजापत्यं परं तीर्थं स्वर्गद्वारं[1] तथैव च ।
जम्बुकेश्वरमित्युक्तं चर्माख्यं तीर्थमुत्तमम् ॥४

श्रेष्ठतीर्थ प्राजापत्य, स्वर्गद्वार, जम्बुकेश्वर तथा उत्तम चर्म नामक तीर्थ में गये ।४

गयातीर्थं महातीर्थं तीर्थञ्चैव महानदी ।
नारायणं परं तीर्थं वायुतीर्थमनुत्तमम् ॥५

गयातीर्थ, महातीर्थ, महानदीतीर्थ, श्रेष्ठ नारायणतीर्थ और परमोत्तम वायुतीर्थ में गये ।५

ज्ञानतीर्थं परं गुह्यं वाराहं तीर्थमुत्तमम् ।
यमतीर्थं महापुण्यं तीर्थं संवर्त्तकं परम्[2] ॥६

परमगुह्य ज्ञानतीर्थ, उत्तम वाराहतीर्थ, महापुण्यदायक यमतीर्थ तथा श्रेष्ठ संवर्तक तीर्थ में गये ।६

अग्नितीर्थं द्विजश्रेष्ठाः कालकेश्वरमुत्तमम्[3] ।
नागतीर्थं सोमतीर्थं सूर्यतीर्थं तथैव च ॥७

द्विजश्रेष्ठो ! अग्नितीर्थ, उत्तम कालकेश्वर तीर्थ, नागतीर्थ, सोमतीर्थ तथा सूर्यतीर्थ में गये ।७

पर्वताख्यं महापुण्यं[4] मणिकर्णमनुत्तमम् ।
घटोत्कचं तीर्थवरं श्रीतीर्थञ्च पितामहम् ॥८

पर्वत नामक महापवित्रतीर्थ, परमोत्तम मणिकर्णतीर्थ, तीर्थश्रेष्ठ घटोत्कच, श्रीतीर्थ तथा पितामहतीर्थ में गये ।८

गङ्गातीर्थन्तु देवेशं[5] तथा तत्तीर्थमुत्तमम् ।
कापिलञ्चैव सोमेशं[6] ब्रह्मतीर्थमनुत्तमम्[7] ॥९

फिर गंगातीर्थ, उत्तम देवेशतीर्थ कापिलतीर्थ, सोमेशतीर्थ और परमोत्तम ब्रह्मतीर्थ गये ।९

(यत्र लिंगं पूजनीयं स्नातुं ब्रह्मा यदागतः ॥
तदानीं स्थापयामास विष्णुस्तल्लिंगमैश्वरम् ॥

---

१. स्वर्गतीर्थमिति पा० । २. शुभमिति पा० । ३. कलशेश्वरमुत्तममिति पा० । ४. महागुह्यमिति पा० । ५. देवीशमिति पा० ६. यथातेस्तीर्थमुत्तममिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः स्नात्वा समागत्य ब्रह्मा प्रोवाच तं हरिम् ।
मयानीतमिदं लिंगं कस्मात्स्थापितवानसि ॥
तमाह विष्णुस्त्वत्तोऽपि रुद्रे भक्तिर्दृढा यतः ।
तस्मात्प्रतिष्ठितं लिंगं नाम्ना तव भविष्यति ॥)

(जहाँ पूर्वकाल में ब्रह्मा शिवलिंग को ले आये। जब वे स्नान करने को गये; उसी समय विष्णु ने शिवलिंग को स्थापित कर दिया। तदनन्तर स्नान करके आने पर ब्रह्मा ने विष्णु से कहा—मैं इस लिंग को लाया हूँ। आपने क्यों स्थापना की? उनसे विष्णु ने कहा—जिसलिए शंकर के प्रति मुझ में आपसे बढ़कर दृढ़ भक्ति है इसलिए मैंने स्थापना कर दी, किन्तु यह आपके नाम से प्रसिद्ध होगा।)

भूतेश्वरं तथा तीर्थं तीर्थं धर्मसमुद्भवम् ।
गन्धर्वतीर्थं सुशुभं वाह्नेयं तीर्थमुत्तमम् ॥१०

उसके बाद भूतेश्वरतीर्थं, धर्मसमुद्भवतीर्थं, सुन्दर गन्धर्वतीर्थं तथा उत्तम वाह्नेयतीर्थं गये।१०

दौर्वासिकं [1]होमतीर्थं चन्द्रतीर्थं द्विजोत्तमाः ।
चित्रांगदेश्वरं पुण्यं पुण्यं विद्याधरेश्वरम् ॥११

द्विजश्रेष्ठो! तत्पश्चात् दौर्वासिकतीर्थं, होमतीर्थं, चन्द्रतीर्थं, पुण्य चित्रांगदेश्वरतीर्थं, पुण्य विद्याधरेश्वरतीर्थं गये।११

केदारं तीर्थमुख्याख्यं कालञ्जरमनुत्तमम्[2] ।
सारस्वतं प्रभासञ्च खेटकर्ण[3] हरं शुभम् ॥१२

फिर केदारतीर्थं, मुख्य नामक तीर्थं, अत्युत्तम कालञ्जरतीर्थं, सारस्वततीर्थं, प्रभासतीर्थं, खेटकर्णं और पवित्र हरतीर्थं गये।१२

लौकिकाख्यं महातीर्थं तीर्थञ्चैव हिमालयम् ।
हिरण्यगर्भं गोप्रख्यं तीर्थञ्चैव वृषध्वजम् ॥१३

लौकिक नामक महातीर्थं, हिमालयतीर्थं, हिरण्यगर्भतीर्थं, गोप्रख्यतीर्थं और वृषध्वजतीर्थं गये।१३

उपशान्तं शिवञ्चैव व्याघ्रेश्वरमनुत्तमम् ।
त्रिलोचनं महातीर्थं लोलार्कञ्चोत्तराह्वयम् ॥१४

---

१. व्योमतीर्थमिति पा०। २. कालिञ्जरमिति पा०। ३. भद्रकर्णं फलमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपशान्त, शिव, परमोत्तम व्याघ्रेश्वर, त्रिलोचन नामक महातीर्थ, लोलार्क और उत्तराह्वय नामक तीर्थ गये ।१४

कपालमोचनं तीर्थं ब्रह्महत्याविनाशनम् ।
शुक्रेश्वरं[1] महापुण्यमानन्दपुरमुत्तमम्[2] ॥१५

उसके बाद ब्रह्महत्याविनाशक कपालमोचनतीर्थ, महापुण्यदायक शुक्रेश्वरतीर्थ तथा उत्तम आनन्दपुर तीर्थ गये ।१५

एवमादीनि तीर्थानि प्राधान्यात्कथितानि तु ।
न शक्या विस्तराद्वक्तुं तीर्थसंख्या द्विजोत्तमाः ॥१६

इस प्रकार के तीर्थ प्रधान होने के कारण बता दिये (परन्तु द्विजश्रेष्ठो ! तीर्थों की संख्या विस्तार से नहीं कही जा सकती ।१६

तेषु सर्वेषु तीर्थेषु स्नात्वाभ्यर्च्य सनातनम्[3] ।
उपोष्य तत्र तत्रासौ पाराशर्यो महामुनिः ॥१७

महामुनि व्यास ने उन सभी तीर्थों में स्नान तथा सनातन देव की अर्चना करके उपवास किया ।१७

तर्पयित्वा पितॄन्देवान् कृत्वा पिण्डप्रदानकम् ।
जगाम पुनरेवापि यत्र विश्वेश्वरः शिवः ॥१८

वहाँ देव-पितरों का तर्पण तथा पिण्डदान करके पुनः उस स्थान में गये, जहाँ विश्वेश्वर शिव थे ।१८

स्नात्वाभ्यर्च्य महालिंगं[4] शिष्यैः सह महामुनिः ।
उवाच शिष्यान्धर्मात्मा यथेष्टं गन्तुमर्हथ ॥१९

वहाँ शिष्यों के साथ स्नान एवं महालिंग की अर्चना करके धर्मात्मा महामुनि ने शिष्यों से कहा—'तुम लोग यथेष्ट स्थान को जा सकते हो' ।१९

ते प्रणम्य महात्मानं जग्मुः पैलादयो द्विजाः ।
वासञ्च तत्र नियतो वाराणस्यां चकार सः ॥२०

वे पैल आदि द्विजगण महात्मा व्यास को प्रणाम करके चले गये और व्यास जी निश्चित रूप से वाराणसी में निवास करने लगे ।२०

---

१. शक्रेश्वरमिति पा० । २. महातीर्थमिति पा० । ३. पिनाकिनमिति पा० । ४. परं लिङ्गमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्तो दान्तस्त्रिषवणं स्नात्वाभ्यर्च्य पिनाकिनम् ।
भैक्षाहारो विशुद्धात्मा ब्रह्मचर्यपरायणः ॥२१

वे शान्त और दान्त रहकर त्रिकाल स्नान करके शंकर की अर्चना करते थे। भिक्षा से आहार लेते थे, पवित्रात्मा थे और ब्रह्मचर्यपरायण थे।२१

[1]कदाचित्तत्र वसता व्यासेनामिततेजसा ।
भ्रममाणेन भिक्षा वै नैव लब्धा द्विजोत्तमाः ॥२२

द्विजश्रेष्ठो ! किसी समय वहाँ निवास करते हुए अत्यन्त तेजस्वी व्यास जी को भिक्षाटन करने पर भिक्षा बिलकुल ही नहीं मिली।२२

ततः क्रोधावृततनुर्नराणामिह वासिनाम् ।
विघ्नं सृजामि सर्वेषां येन सिद्धिर्हि हीयते ॥२३

तब क्रोध से भरे हुए शरीर वाले व्यास ने वहाँ निवास करने वाले मनुष्यों को लक्ष्य करके कहा—मैं विघ्न की सृष्टि करता हूँ, जिससे सबकी सिद्धि क्षीण हो जाएगी।२३

तत्क्षणात्सा महादेवी शंकरार्द्धशरीरिणी ।
प्रादुरासीत्स्वयं प्रीत्या वेषं कृत्वा तु मानुषम् ॥२४

उसी क्षण शंकर की अर्धाङ्गिनी महादेवी (उमा) स्वयं प्रेम से मनुष्य के वेश में प्रकट हुईं।२४

भो भो व्यास महाबुद्धे शप्तव्या न[2] त्वया पुरी ।
गृहाण भिक्षां मत्तस्त्वमुक्त्वैवं प्रददौ शिवा ॥२५

शिवा ने कहा—हे व्यास ! आप पुरी (के निवासियों) को शाप न दें। मुझसे भिक्षा लीजिए। ऐसा कहकर गौरी ने उन्हें भिक्षा दी।२५

उवाच च महादेवी क्रोधनस्त्वं यतो[3] मुने ।
इह क्षेत्रे न वस्तव्यं कृतघ्नोऽसि यतः सदा ॥२६

महादेवी बोलीं—मुने ! जिस लिए तुम क्रोधी हो, इसलिए इस क्षेत्र में वास न करो। तुम कृतघ्न हो।२६

एवमुक्तः स भगवान्ध्यानाज्ज्ञात्वा परां शिवाम् ।
उवाच प्रणतो भूत्वा स्तुत्वा च प्रवरैः स्तवैः ॥२७

---

१. कदाचिद्वसता तत्रेति पा०। २. भवता न हीति पा०। ३. भवान्यत इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार कहे जाने पर भगवान् व्यास ने पराम्बा (शिव) को ध्यान से जानकर प्रणाम करके उत्तम स्तोत्रों से उनकी स्तुति करके कहा ।२७

चतुर्दश्यामथाष्टम्यां प्रवेशं देहि शाङ्करि।
एवमस्त्वत्यनुज्ञाय देवी चान्तरधीयत ॥२८

हे शांकरि ! चतुर्दशी और अष्टमी को मुझे वाराणसी में प्रवेश दें । देवी ने कहा—ऐसा ही हो—यह अनुज्ञा देकर अन्तर्धान हो गईं ।२८

एवं स भगवान्व्यासो महायोगी पुरातनः।
ज्ञात्वा क्षेत्रगुणान् सर्वान् स्थितस्तस्याथ पार्श्वतः[1] ॥२९

इस प्रकार पुरातन महायोगी भगवान् व्यास काशी क्षेत्र के सब गुणों को जानकर उसके निकट रहने लगे ।२९

एवं व्यासं स्थितं ज्ञात्वा क्षेत्रं सेवन्ति[2] पण्डिताः।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वाराणस्यां वसेन्नरः ॥३०

इस प्रकार व्यास को अवस्थित जानकर पण्डित लोग काशी का सेवन करने लगे । इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से मनुष्य वाराणसी में निवास करे ।३०

सूत उवाच

यः पठेदविमुक्तस्य माहात्म्यं शृणुयादथ[3]।
श्रावयेद्वा द्विजाञ्छान्तान् स[4] याति परमां गतिम् ॥३१

सूत बोले—जो अविमुक्त क्षेत्र का माहात्म्य सुनेगा अथवा शान्त द्विजों को सुनायेगा, वह परम गति को प्राप्त करेगा ।३१

श्राद्धे वा दैविके कार्ये रात्रावहनि[5] वा द्विजाः।
नदीनां चैव तीरेषु देवतायतनेषु च ॥३२
ज्ञात्वा[6] समाहितमनाः कामक्रोधविवर्जितः।
जपेदीशं नमस्कृत्य स याति परमां गतिम् ॥३३

श्राद्ध में या देवकार्य में, रात्रि में, या दिन में, नदियों के तट पर या देवालय में काम-क्रोध से रहित तथा समाहितचित्त होकर (काशी का माहात्म्य) जानकर शंकर

---

१. अपार्श्वंत इति पा० । पार्श्वंभिन्ने देशे इत्यर्थः, अतिपार्श्वंत इति पा० । २. सेवन्तीति परस्मैपदमार्षम् । ३. शृणुयान्नरः इति, शृणुयादपीति पा० । ४. सोऽपि याति परं पदमिति पा० । ५. यात्रायां वा द्विजोत्तमा इति पा० । ६. स्नात्वा समाहितमना दम्भमात्सर्यवर्जित इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को नमस्कार करके जो काशी-माहात्म्य का जप (पाठ) करेगा, वह परम गति को प्राप्त करेगा ।३२-३३।

इति श्रीकूर्मपुराणे वाराणसीमाहात्म्ये × पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५
वाराणसीमाहात्म्यं समाप्तम् ॥

श्री कूर्मपुराण में वाराणसी-माहात्म्य-वर्णन में पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३५॥

●

षट्त्रिंशोऽध्यायः

अथ प्रयागमाहात्म्यम्

ऋषय ऊचुः

माहात्म्यमविमुक्तस्य यथावत्समुदीरितम् ।
इदानीञ्च[1] प्रयागस्य माहात्म्यं ब्रूहि सुव्रत[2] ॥१

ऋषियों ने कहा—हे उत्तम व्रती ! अविमुक्त का माहात्म्य आपने ठीक-ठीक बता दिया । अब प्रयाग का माहात्म्य बतायें ।१

यानि तीर्थानि तत्रैव विश्रुतानि महान्ति वै ।
इदानीं कथयास्माकं सूत सर्वार्थविद्भवान् ॥२

वहाँ जो प्रसिद्ध महान् तीर्थ हैं, वह हमें इस समय बता दें । आप सभी अर्थों के ज्ञाता हैं ।२

सूत उवाच

[3]शृणुध्वमृषयः सर्वे विस्तरेण ब्रवीमि वः ।
प्रगागस्य च माहात्म्यं यत्र देवः पितामहः ॥३

सूत बोले—आप सब ऋषिगण सुनें । मैं विस्तृत रूप से प्रयाग का माहात्म्य बता रहा हूँ, जहाँ पितामह ब्रह्मा विराजमान हैं ।२

मार्कण्डेयेन कथितं कौन्तेयाय महात्मने ।
यथा युधिष्ठिरायैतत्तद्वक्ष्ये भवतामहम् ॥४

महात्मा कुन्ती पुत्र युधिष्ठिर से मार्कण्डेय मुनि ने जो कहा था, वह मैं आप लोगों से बताऊँगा ।३

× चतुस्त्रिंशः लि० पु० । १. इदानीन्तु इति पा० । २. सत्तम इति पा० । ३. शृणुध्वं मुनय इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निहत्य कौरवान् सर्वान्भ्रातृभिः सह पार्थिवः।
शोकेन महताविष्टो मुमोह स युधिष्ठिरः ॥५

भाइयों के साथ सभी कौरवों को मारकर राजा युधिष्ठिर महान् शोक से आविष्ट होकर मोह में पड़ गये ।५

अचिरेणाथ कालेन मार्कण्डेयो महातपः।
सम्प्राप्तो हास्तिनपुरं राजद्वारे स तिष्ठति ॥६

अनन्तर थोड़े ही समय में महातपस्वी मार्कण्डेय मुनि हस्तिनापुर आये। राजद्वार पर वे खड़े थे ।६

द्वारपालोऽपि तं दृष्ट्वा राज्ञे कथितवान्द्रुतम्।
मार्कण्डेयो द्रष्टुमिच्छंस्त्वामास्ते द्वार्यसौ मुनिः ॥७

द्वारपाल ने उन्हें देखकर तुरन्त राजा से कहा—मार्कण्डेय मुनि आपसे मिलना चाहते हैं—द्वार पर विराजमान हैं ।७

त्वरितो धर्मपुत्रस्तु द्वारमभ्येत्य[2] सत्वरम्।
द्वारमभ्यागतस्येह स्वागतं ते महामुने ॥८

धर्मपुत्र युधिष्ठिर शीघ्र द्रुतगति से द्वार पर आकर वहाँ खड़े मुनि से कहा—महामुने! आपका स्वागत है ।८

अद्य मे सफलं जन्म अद्य मे तारितं कुलम्।
अद्य मे पितरस्तुष्टास्त्वयि तुष्टे सदा[3] मुने ॥९

आज मेरा जन्म सफल हो गया। आज मेरे कुल को आपने तार दिया। मुने! आपके सदा संतुष्ट रहने पर आज मेरे पिता सन्तुष्ट हो गये ।९

सिंहासनमुपस्थाप्य पादशौचार्चनादिभिः।
युधिष्ठिरो महात्मेति पूजयामास तं मुनिम् ॥१०

मुनि को सिंहासन पर बैठाकर महात्मा युधिष्ठिर ने पादप्रक्षालन तथा अर्चना आदि के द्वारा मुनि की पूजा की ।१०

[4]मार्कण्डेयस्तु संपृष्टः प्रोवाच स युधिष्ठिरम्।
किमर्थं मुह्यसे[5] विद्वन् सर्वं ज्ञात्वा समागतः ॥११

---

१. द्रष्टुमिच्छुरिति पा०। २. द्वारमित्यहा तत्पर इति, गत्वा नत्वाह तं मुनीम्। स्वागतं ते महाप्राज्ञ इति पा०। ३. महामुने इति पा०। ४. ततस्तुष्ट इति पा०। ५. मुह्यसे राजन् सर्वं ज्ञात्वाहमागत इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा द्वारा कुशल प्रश्न की जिज्ञासा करने पर मार्कण्डेय मुनि ने युधिष्ठिर से कहा—'विद्वन्' ! आप क्यों मोह कर रहे हैं ? मैं सब जानकर आया हूँ ।११

ततो युधिष्ठिरो राजा प्रणम्य[1] शिरसाब्रवीत् ।
कथयस्व[2] समासेन येन मुञ्चामि[3] किल्बिषम् ॥१२

तब राजा युधिष्ठिर शिर से प्रणाम करके बोले—मुझे संक्षेप में बतायें, जिससे मैं पाप से मुक्त हो जाऊँ ।१२

निहता बहवो युद्धे पुमांसोऽनपराधिनः ।
अस्माभिः कौरवैः सार्द्धं प्रसङ्गान्मुनिसत्तम[4] ॥१३

मुनिश्रेष्ठ ! कौरवों के साथ युद्ध के प्रसंग में मैंने बहुत से निरपराध मनुष्यों को मार दिया है ।१३

येन हिंसासमुद्भूताज्जन्मान्तरकृतादपि ।
मुच्येय[5] पातकादद्य तद्भवान्वक्तुमर्हति ॥१४

जिस कारण हिंसा से उत्पन्न तथा जन्मान्तर-कृत पाप से भी आज मैं मुक्त हो जाऊँ, वह आप बतायें ।१४

मार्कण्डेय उवाच

शृणु राजन्महाभाग यन्मां पृच्छसि भारत ।
प्रयागगमनं श्रेष्ठं नराणां पापनाशनम् ॥१५

मार्कण्डेय बोले—हे महाभाग ! भरतवंशी राजन् ! जो आपने मुझसे पूछा है, वह सुनिए । प्रयाग जाना श्रेष्ठ है, जो मनुष्यों के पापों का नाशक है ।१५

तत्र देवो महादेवो रुद्रोऽवात्सीन्नरेश्वर ।
समास्ते भगवान् ब्रह्मा स्वयम्भूः सह दैवतैः ॥१६

महाराज ! वहाँ महादेव रुद्र निवास करते हैं और देवताओं के साथ भगवान् स्वयंभू ब्रह्मा भी वहाँ रहते हैं ।१६

युधिष्ठिर उवाच

भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि प्रयागमने फलम् ।
मृतानां का गतिस्तत्र स्नातानाञ्चैव किम्फलम् ॥१७

युधिष्ठिर बोले—भगवन् ! मैं प्रयाग यात्रा का फल सुनना चाहता हूँ । वहाँ मरने वालों की कौन-सी गति होती है ? तथा स्नान करने वालों को क्या फल मिलता है ?१७

१. प्रणम्याह महामुनिमिति पा० । २. कथय त्वमिति पा० । ३. मुच्येय किल्बिषैरिति पा० । ४. पुङ्गव इति पा० । ५. मुच्यते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये वसन्ति प्रयागे तु ब्रूहि तेषान्तु किम्फलम् ।
भवतो विदितं ह्येतत्तन्मे ब्रूहि नमोऽस्तु ते ॥१८

जो लोग प्रयाग में वास करते हैं, उन्हें क्या फल मिलता है ? आपको यह सब मालूम है, हमें बता दें । आपको नमस्कार है ।१८

मार्कण्डेय उवाच

कथयिष्यामि ते वत्स प्रयाग[1]स्नानजं फलम् ।
पुरा महर्षिभिः सम्यक्कथ्यमानं मया श्रुतम् ॥१९

मार्कण्डेय बोले—वत्स ! मैं तुम्हें प्रयाग में स्नान करने का फल बताऊँगा । पूर्वकाल में महर्षियों ने जो कहा था, उसे मैंने भली-भाँति सुना था ।१९

एतत्प्रजापतेः क्षेत्रं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ।
अत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः ॥२०

यह ब्रह्मा का क्षेत्र तीनों लोक में प्रसिद्ध है । यहाँ स्नान करने वाले स्वर्ग जाते हैं और जो मरते हैं उनका पुनर्जन्म नहीं होता है ।२०

तत्र ब्रह्मादयो देवा रक्षां कुर्वन्ति संगताः ।
बहून्यन्यानि तीर्थानि सर्वपापापहानि तु ॥२१

वहाँ ब्रह्मा आदि देवता मिलकर रक्षा करते हैं । वहाँ सकल पापनाशक बहुत से अन्य तीर्थ हैं ।२१

कथितुं नेह शक्नोमि बहुवर्षशतैरपि ।
संक्षेपेण प्रवक्ष्यामि प्रयागस्येह कीर्त्तनम् ॥२२

सैकड़ों वर्षों में उन्हें नहीं बता सकता हूँ । यहाँ संक्षेप में प्रयाग का कीर्तन करूँगा ।२२

षष्टिर्धनुःसहस्राणि तानि रक्षन्ति जाह्नवीम् ।
यमुनां रक्षति सदा सविता सप्तवाहनः ॥२३

साठ हजार धनुष के प्रमाण में वे तीर्थ गंगा की रक्षा करते हैं । यमुना की रक्षा सदा सूर्य करते हैं ।२३

प्रयागे तु विशेषेण स्वयं वसति[2] वासवः ।
मण्डलं रक्षति हरिः सर्वदेवैश्च सम्मितम् ॥२४

---

१. या चेष्टा यच्च तत्फलमिति, यच्च ते फलमिति पा० । २. सस्मित इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयाग में विशेष करके स्वयं इन्द्र निवास करते हैं। सभी देवताओं के साथ हरि प्रयाग मण्डल की रक्षा करते हैं।२४

न्यग्रोधं रक्षते नित्यं शूलपाणिर्महेश्वरः।
स्थानं रक्षन्ति वै देवाः सर्वपापहरं शुभम् ॥२५

वहाँ अक्षयवट की रक्षा शूलपाणि महेश्वर नित्य करते हैं। सकलपापहारी उस शुभ स्थान की रक्षा देववृन्द करते हैं।२५

स्वकर्मणा वृता लोका नैव गच्छन्ति तत्पदम्।
स्वल्पमल्पतरं पापं यस्य[1] चास्ति नराधिप ॥२६

अपने कर्म से घिरे हुए लोग उस स्थान पर नहीं जा पाते हैं। राजन्! जिसका स्वल्प या बहुत थोड़ा भी पाप है, वह भी वहाँ नहीं जाता है।२६

प्रयागं स्मरमाणस्य सर्वमायाति संक्षयम्।
दर्शनात्तस्य तीर्थस्य नामसंकीर्त्तनादपि ॥२७

प्रयाग का स्मरण करने से सभी पापों का क्षय हो जाता है। उस तीर्थ के दर्शन तथा नाम कीर्तन करने से भी पापों का क्षय होता है।२७

मृत्तिकालम्भनाद्वापि नरः पापात्प्रमुच्यते।
पञ्चकुण्डानि राजेन्द्र येषां मध्ये तु जाह्नवी ॥२८

वहाँ की मिट्टी लगाने से भी पाप क्षय होता है। राजेन्द्र! वहाँ पाँच कुण्ड हैं, जिनके बीच में गंगा विराजमान हैं।२८

प्रयागं विशतः पुंसः पापं नश्यति तत्क्षणात्।
योजनानां सहस्रेषु गंगां स्मरति[2] यो नरः ॥२९

अपि दुष्कृतकर्मासौ लभते परमां गतिम्।
कीर्त्तनान्मुच्यते पापाद्दृष्टया भद्राणि पश्यति ॥३०

प्रयाग में प्रवेश करते ही मनुष्य का पाप उसी क्षण नष्ट हो जाता है। हजारों योजन दूर से जो मनुष्य गंगा का स्मरण करता है, वह पापकर्मा होने पर भी परम गति को प्राप्त करता है, गंगा का कीर्तन करने से पाप से मुक्ति मिलती है और दर्शन से कल्याण प्राप्त होता है।२९-३०।

तथोपस्पृश्य राजेन्द्र सुरलोके महीयते।
व्याधितो यदि वा दीनः क्रुद्धो वापि भवेन्नरः ॥३१

१. यदा तस्येति पा०। २. यः स्मरते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजेन्द्र ! रोगी या दीन या क्रोधी मनुष्य भी गंगाजल से आचमन करके देवलोक में पूजित होता है। ३१

पितॄणां तारकञ्चैव सर्वपापप्रणाशनम्।
यैः प्रयागे कृतो वास उत्तीर्णो भवसागरः ॥३२

प्रयाग तीर्थ सभी पापों का नाश करने वाला तथा पितरों को तारने वाला है। प्रयाग में जिसने निवास किया, वह भवसागर को पार कर गया।३२

[1]गंगायमुनमासाद्य त्यजेत्प्राणान्प्रयत्नतः।
ईप्सिताँल्लभते कामान्वदन्ति मुनिपुंगवाः ॥३३

जो व्यक्ति गंगा और यमुना में पहुँचकर प्रयत्नपूर्वक प्राणत्याग करता है, वह मनोवांछित फल प्राप्त करता है, ऐसा मुनिवरों ने कहा है।३३

दीप्तकाञ्चनवर्णाभैर्विमानैर्भानुवर्तिभिः[2]।
सर्वरत्नमयैर्दिव्यैर्नानाध्वजसमाकुलैः ॥३४

वरांगनासमाकीर्णैर्मोदते शुभलक्षणः।
गीतवादित्रनिर्घोषैः प्रसुप्तः प्रतिबुध्यते ॥३५

वह तपे हुए सोने की कान्ति जैसे, सूर्य के समान चमकने वाले, सर्वरत्नमय, अनेक ध्वजों से युक्त, वारांगनाओं से भरे एवं शुभलक्षण विमानों में चढ़कर सुख भोगता है। शयन के पश्चात् गाने बजाने के शब्द से जागता है।३४-३५.

यावन्न[3] स्मरते जन्म तावत्स्वर्गे महीयते।
तस्मात्स्वर्गात्परिभ्रष्टः क्षीणकर्मा नरोत्तमः ॥३६

वह जब तक जन्म का स्मरण नहीं करता तब तक स्वर्ग में पूजित होता है। वह श्रेष्ठ मानव कर्म के क्षीण हो जाने पर स्वर्ग से च्युत हो जाता है।३६

हिरण्यरत्नसम्पूर्णे समृद्धे जायते कुले।
तदेव स्मरते तीर्थं स्मरणात्तत्र गच्छति ॥३७

सोने और रत्नों से परिपूरित धनाढ्य कुल में जन्म लेता है। उसी प्रयागतीर्थ का स्मरण करता है और स्मरणवश वहाँ जाता है।३७

देशे वा यदि वारण्ये विदेशे यदि वा गृहे।
प्रयागं स्मरमाणस्तु यस्तु प्राणान् परित्यजेत् ॥३८

---

१. गङ्गायमुनमित्यत्र समाहारद्वन्द्वः। २. वर्णिभिरिति, वन्निभैरिति पा०।
३. यावन्नागमते इति, यावन्न लभते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[1]ब्रह्मलोकमवाप्नोति वदन्ति मुनिपुंगवाः ।
सर्वकामफला वृक्षा मही यत्र हिरण्मयी ॥३८

देश में या विदेश में घर में या जंगल में प्रयाग का स्मरण करते हुए जो प्राण त्यागता है, वह ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है, ऐसा मुनिश्रेष्ठों का कहना है। वहाँ की पृथ्वी सुवर्णमयी है और वृक्ष सकलकामनाओं के फलों के दाता हैं।३८-३९।

ऋषयो मुनयः सिद्धा[2]स्तत्र लोके स गच्छति ।
स्त्रीसहस्राकुले रम्ये मंदाकिन्यास्तटे शुभे ॥४०
मोदते मुनिभिः सार्द्धं [3]स्वकृतेनेह कर्मणा ।
सिद्धचारणगन्धर्वैः पूज्यते देवदानवैः[4] ॥४१

ऋषि, मुनि और सिद्धगण जहाँ रहते हैं, उस लोक में वह जाता है। वहाँ सहस्रों स्त्रियों से व्याप्त मन्दाकिनी के रमणीय और पवित्र तट पर अपने किये हुए कर्म के कारण मुनियों के साथ प्रमुदित होता है। सिद्ध, चारण, गन्धर्व, देव और दानव उसकी पूजा करते हैं।४०-४१।

ततः स्वर्गात्परिभ्रष्टो जम्बुद्वीपपतिर्भवेत् ।
ततः शुभानि कर्माणि चिन्तयानः पुनः पुनः ॥४२
गुणवान्वृत्तसम्पन्नो भवतीत्यनुशुश्रुम[5] ।
कर्मणा मनसा वाचा सत्ये[6] धर्मे प्रतिष्ठितः ॥४३

तदनन्तर स्वर्ग से च्युत होने पर वह जम्बूद्वीप का स्वामी होता है। पश्चात् बार-बार शुभ कर्मों का चिंतन करते हुए वह गुणवान् तथा चरित्रवान् होता है और मनसा, वाचा, कर्मणा सत्य धर्म में प्रतिष्ठित रहता है।४२-४३।

गंगायमुनयोर्मध्ये यस्तु [7]ग्रासं प्रयच्छति ।
सुवर्णमथ मुक्तां वा तथैवान्यत्परिग्रहम्[8] ॥४४
स्वकार्ये पितृकार्ये वा तीर्थे[9] योऽभ्यर्चयेन्नरः ।
निष्फलं तस्य तत्तीर्थं यावत्तत्फलमश्नुते ॥४५

अपने कार्य या पितृ कार्य या देवपूजन के समय गंगा और यमुना के मध्य

---

१. शिवलोकमिति पा०। २. सिद्धाः शिवलोके इति पा०। ३. सुकृतेनेहेति पा०। ४. दिवि दैवतैरिति पा० ५. भवतीह न संशय इति पा०। ६. सत्यधर्मप्रतिष्ठित इति पा०। ७. याममिति, ग्राममिति पा०। ८. तस्मै वान्यत्प्रतिग्रहमिति सर्वं तत्राक्षयं भवेत्। तीर्थे न प्रतिगृह्णीयात्तथैवान्यत्प्रतिग्रहमिति पा०। प्रतिग्रहमिति क्लीवत्वमार्षम्। ९. देवताभ्यर्चनेऽपि वा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(संगम) में जो मनुष्य भोजन, सुवर्ण वा मोती या दूसरा भोगपदार्थ दान लेता है, उसका वह तीर्थवास निष्फल होता है, जब तक कि वह उसका फल भोग न ले ।४४-४५।

अतस्तीर्थे न गृह्णीयात्पुण्येष्वायतनेषु च ।
निमित्तेषु च सर्वेषु अप्रमत्तो द्विजो भवेत् ॥४६

इसलिए तीर्थों और पवित्र स्थानों और सभी निमित्तों (ग्रहण आदि) में ब्राह्मण को सावधान रहना चाहिए ।४६

कपिलां पाटलां धेनुं यस्तु कृष्णां प्रयच्छति ।
स्वर्णशृङ्गीं[1] रौप्यखुरां चैलकर्णीं पयस्विनीम् ॥४७
तस्य यावन्ति लोमानि सन्ति गात्रेषु सत्तम ।
तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ॥४८

हे अत्यन्त सज्जन ! जो वहाँ दूधवाली कपिला (कैली), पाटला (लाल) तथा काली गौ के सींगों में सोना तथा खुरों में चाँदी जड़ाकर और कर्ण पर्यन्त वस्त्राच्छादित करके दान करता है, वह उस गौ के अंगों में जितने रोयें होंगे, उतने हजार वर्षों तक शिवलोक में पूजित होता है ।४०-४८

इति श्रीकूर्मपुराणे प्रयागमाहात्म्ये × षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६

श्री कूर्मपुराण में प्रयाग-माहात्म्य-वर्णन-प्रसंग में छत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४७॥

सप्तत्रिंशोऽध्यायः

॥ तदेव ॥

मार्कण्डेय उवाच

कथयिष्यामि ते वत्स तीर्थयात्राविधिक्रमम् ।
आर्षेण तु विधानेन यथादृष्टं यथाश्रुतम् ॥

मार्कण्डेय बोले—वत्स ! मैंने तीर्थयात्रा विधि का क्रम ऋषि-प्रणीत विधान के अनुसार जैसा देखा और जैसा सुना वह तुमसे बताऊँगा ।१

---

१. स्वर्णसृङ्गामिति पा० । × पंचत्रिंशः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयाग[1] तीर्थयात्रार्थी यः प्रयाति नरः क्वचित् ।
[2]बलीवर्दं समारुढः शृणु तस्यापि यत्फलम् ॥२

प्रयाग तीर्थ की यात्रा करने वाला जो कोई मनुष्य कहीं बैल पर चढ़कर जाता है उसका फल सुनो ।२

नरके वसते घोरे समाः कल्पशतायुतम् ।
[3]ततो निर्वर्त्तितो घोरो गवां क्रोधः[4] सुदारुणः ॥३

वह व्यक्ति सौ कल्प दस हजार वर्षों तक घोर नरक में वास करता है। वहाँ से लौटने पर गौओं का भयंकर क्रोध उस पर रहता है ।३

सलिलञ्च न गृह्णन्ति पितरस्तस्य देहिनः ।
यस्तु पुत्रांस्तथा बालानन्नहीनान्प्रमुञ्चति ॥४
यथात्मानं तदा सर्वं दानं विप्रेषु दापयेत् ।

पितर उस मनुष्य का जल ग्रहण नहीं करते हैं। वह पुत्रों तथा बालकों को अन्नहीन छोड़ देता है। तब वह अपना सब कुछ ब्राह्मणों को दान कर दे ।४½

ऐश्वर्याल्लोभमोहाद्वा गच्छेद्यानेन यो नरः ॥५
निष्फलं तस्य तत्तीर्थं तस्माद्यानं विवर्जयेत् ।
गंगायमुनयोर्मध्ये यस्तु कन्यां प्रयच्छति ॥६
आर्षेण तु विधानेन यथाविभवविस्तरम् ।
न स पश्यति तं घोरं नरकं तेन कर्मणा ॥७

ऐश्वर्य के कारण अथवा लोभ-मोह के कारण जो मनुष्य सवारी से तीर्थयात्रा करता है, उसका वह तीर्थ निष्फल हो जाता है, इसलिए (तीर्थयात्रा में) सवारी नहीं करनी चाहिए। गंगा-यमुना के बीच में जो कन्यादान करता है आर्ष विधान से अपने वैभव-विस्तार के साथ, वह उस कर्म के प्रभाव से उस नरक को नहीं देखता है ।५-७।

उत्तरान् स कुरून् गत्वा मोदते कालमव्ययम् ।
वटमूलं समाश्रित्य यस्तु प्राणान् परित्यजेत् ॥८
स्वर्गलोकानतिक्रम्य रुद्रलोकं स गच्छति ।
यत्र ब्रह्मादयो देवा दिशश्च सदिगीश्वराः ॥९
लोकपालाश्च पितरः सर्वे ते लोकसंस्थिताः[5] ।
सनत्कुमारप्रमुखास्तथा ब्रह्मर्षयोऽपरे ॥१०

१. प्रयागतीर्थं यात्रार्थीति पा० । २. बलीवर्दसमारूढ इति पा० । ३. यत इति पा० । ४. क्रोधो हि दारुण इति पा० । ५. पितरो लोकसंश्रिताः इति लोकसम्मता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागाः सुपर्णाः सिद्धाश्च तथा नित्यं समासते ।
हरिश्च भगवानास्ते प्रजापतिपुरस्कृतः ॥११

फिर वह उत्तर कुरुक्षेत्र में जाकर बहुत समय तक आनन्द करता है। अक्षयवट के मूल में जाकर जो प्राणों को छोड़ता है, वह स्वर्गलोकों का अतिक्रमण करके रुद्रलोक को जाता है । जहाँ ब्रह्मा आदि देवगण, दिक्पाल सहित दिशायें, लोकपाल समूह, पितृलोकवासी पितृगण, सनत्कुमार आदि ऋषिवृन्द एवं अन्यान्य ब्रह्मर्षि, नाग, सुपर्ण तथा सिद्धगण नित्य रहते हैं । प्रजापति को आगे करके भगवान् विष्णु अवस्थान करते हैं ।८–११ ।

गंगायमुनयोर्मध्ये पृथिव्या जघनं स्मृतम् ।
प्रयागं राजशार्दूल त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥१२

नृपश्रेष्ठ ! गंगा और यमुना के संगम स्थल में अवस्थित, त्रैलोक्य-विख्यात प्रयाग पृथिवी का जघन-स्थल माना गया है ।१२

तत्राभिषेकं यः कुर्यात्सङ्गमे शंसितव्रतः ।
तुल्यं फलमवाप्नोति राजसूयाश्वमेधयोः ॥१३

वहाँ संगम में नियमपूर्वक जो स्नान करता है, उसे राजसूय और अश्वमेध यज्ञतुल्य फल मिलता है ।१३

न मातृवचनात्तात न लोकवचनादपि ।
मतिरुत्क्रमणीया ते प्रयागगमनं प्रति ॥१४

हे तात ! माता के कहने से या अन्य लोगों के कहने से प्रयाग-यात्रा के प्रति मति को न बदलना ।१४

[1]षष्टितीर्थसहस्राणि षष्टिकोट्यस्तथापराः ।
तेषां सान्निध्यमत्रैव तीर्थानां कुरुनन्दन ॥१५

हे कुरुनन्दन ! इस प्रयाग में साठ हजार तथा साठ करोड़ तीर्थों का सान्निध्य प्राप्त होता है ।१५

या गतिर्योगयुक्तस्य [2]संन्यस्तस्य मनीषिणः ।
सा गतिस्त्यजतः प्राणान् गङ्गायमुनसङ्गमे ॥१६

विद्वान् योगी संन्यासी को जो गति प्राप्त होती है, वही गति गंगा-यमुना के संगम में प्राण त्यागने वाले (साधारण व्यक्ति) को मिलती है ।१६

---

१. दशेति पा० । २. सत्वस्थस्येति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न ते जीवन्ति लोकेऽस्मिन्यत्र तत्र युधिष्ठिर ।
ये प्रयागं न सम्प्राप्तास्त्रिषु लोकेषु वञ्चि[1]ताः ॥१७

युधिष्ठिर ! जहाँ-तहाँ वे लोग जीवित नहीं हैं जो प्रयाग (कभी) नहीं गये हैं। ऐसे लोग तीनों लोक में वञ्चित हैं ।१७

एवं दृष्ट्वा तु तत्तोर्थं प्रयागं परमं पदम् ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः शशाङ्क इव राहुणा ॥१८

इस प्रकार के तीर्थ परम पद प्रयाग का दर्शन करके मनुष्य सभी पापों से वैसे मुक्त हो जाता है जैसे राहु से चन्द्रमा (ग्रहणोपरान्त मुक्त हो जाता है) ।१८

कम्बलाश्वतरौ नागौ यमुनादक्षिणे तटे ।
तत्र स्नात्वा च पीत्वा च मुच्यते सर्वपातकैः ॥१९

यमुना नदी के दक्षिण तट पर कम्बल और अश्वतर नामक दो नाग रहते हैं। वहाँ यमुना में स्नान करके जल पीने से मनुष्य सभी पातकों से मुक्त हो जाता है ।१९

तत्र गत्वा नरः[2] स्नानं महादेवस्य धीमतः ।
स[3]मस्तांस्तारयेत् पूर्वान्दशातीतान्[4] दशावरान् ॥२०

वहाँ स्नान करके ज्ञानाधार महादेव की कृपा से मनुष्य अपनी अतीत दस पीढ़ियों को और भावी दस पीढ़ियों को तार लेता है ।२०

कृत्वाभिषेकं तु नरः सोऽश्वमेधफलं [5]लभेत् ।
स्वर्गलोकमवाप्नोति यावदाभूतसं[6]प्लवम् ॥२१

उस स्थान में स्नान करके वह अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है। पश्चात् स्वर्गलोक में प्रलय काल पर्यन्त निवास करता है ।२१

पूर्वपार्श्वे तु गंगायास्त्रैलोक्ये या[7]ति मानवः ।
अवटः सर्वसामुद्रः प्रतिष्ठानश्च विश्रुतम् ॥२२

गंगा के पूर्व तट पर सर्वसामुद्र नामक कूप एवं प्रतिष्ठान नामक त्रैलोक्य विख्यात नगर हैं ।२२

ब्रह्मचारी जितक्रोधस्त्रिरात्रं यदि तिष्ठति ।
सर्वपापविशुद्धात्मा सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥२३

---

१. विश्रुतमिति पा० । २. नवस्थानमिति, नरः स्थानमिति पा० । ३. आत्मना तारयेदिति पा० । ४. अतीतानूर्ध्वतमान्–अवरानधस्तनान् । ५. परमेपदमार्षम् । ६. आभूतसंप्लवं यावत्प्रलयपर्यन्तमित्यर्थः । ७. ख्यातिमान्प इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ ब्रह्मचारी और क्रोधजयी होकर मनुष्य यदि तीन रात वास करता है तो सभी पापों से मुक्त होकर अश्वमेध का फल प्राप्त करता है ।२३

उत्तरेण प्रतिष्ठानं भागीरथ्यास्तु [1]सव्यतः ।
हंसप्रपतनं नाम तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ॥२४

प्रतिष्ठान से उत्तर और गंगा से दक्षिण त्रैलोक्य प्रसिद्ध हंसप्रपतन नामक तीर्थ है ।२४

अश्वमेधफलं तत्र स्मृतमात्रे[2] तु जायते ।
यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च तावत्स्वर्गे महीयते ॥२५

उसके स्मरणमात्र से अश्वमेध का फल मिलता है। उसका स्मरण करने वाला व्यक्ति स्वर्ग में तब तक पूजित होता है जब तक सूर्य और चन्द्रमा रहते हैं ।२५

उर्वशीपुलिने रम्ये विपुले हंसपाण्डुरे ।
परित्यजति यः प्राणाञ्छृणु तस्यापि यत्फलम् ॥२६

वहाँ रमणीय उर्वशीपुलिन विशाल हंसपाण्डुर क्षेत्र में जो प्राणत्याग करता है। उसे जो फल मिलता है, वह सुनिए ।२६

षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च ।
आस्ते स पितृभिः सार्द्धं स्वर्गलोके नराधिप ॥२७

राजन् ! साठ हजार और साठ सौ वर्षों तक वह पितरों के साथ स्वर्ग में रहता है ।२७

अथ सन्ध्यावटे रम्ये ब्रह्मचारी समाहितः ।
नरः शुचिरुपासीत ब्रह्मलोकमवाप्नुयात् ॥२८

अनन्तर रमणीय सन्ध्यावट के नीचे ब्रह्मचारी, एकाग्र एवं पवित्र होकर जो मनुष्य उपासना करता है, उसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है ।२८

कोटितीर्थं समासाद्य[3] यस्तु प्राणान् परित्यजेत् ।
कोटिवर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥२९

जो कोटि तीर्थ में पहुँचकर प्राणत्याग करता है, वह हजारों करोड़ों वर्ष स्वर्ग में पूजित होता है ।२९

यत्र गङ्गा महाभागा [4]बहुतीर्थतपोवना ।
सिद्धं क्षेत्रं हि तज्ज्ञेयं नात्र कार्या विचारणा ॥३०

---

१. मध्यत इति पा० । २. स्मृतमात्रात्तु इति पा० । ३. समाश्रित्य इति पा० ।
४. बहुतीर्थतपोवना-बहूनि तीर्थानि तपोवनानि च यत्र सा ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत से तीर्थों और तपोवनों वाली महाभाग गंगा जहाँ बहती है, वह सिद्ध क्षेत्र है, इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है ।३०

क्षितौ तारयते मर्त्यान्नागांस्तारयतेऽप्यधः ।
दिवि तारयते देवांस्तेन सा त्रिपथा स्मृता ॥३१

गंगा पृथ्वी पर मनुष्यों को, पाताल में नागों को और स्वर्ग में देवताओं को तारती है, अतः वह त्रिपथा कहलाती है ।३१

यावदस्थीनि गङ्गायां तिष्ठन्ति पुरुषस्य तु ।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥३२

मनुष्य की अस्थि (हड्डी) जब तक गंगा में रहती है, उतने हजार वर्ष तक वह स्वर्गलोक में पूजित होता है ।३२

तीर्थानां परमं तीर्थं नदीनां परमा नदी ।
मोक्षदा सर्वभूतानां महापातकिनामपि ॥३३

गंगा तीर्थों में परम तीर्थ है, नदियों में परम नदी है और सभी प्राणियों महापातकियों को भी मोक्ष देने वाली है ।३३

सर्वत्र सुलभा गंगा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा ।
गंगाद्वारे प्रयागे च गंगासागरसंगमे ॥३४

गंगा तीर्थों में परम तीर्थ है, किन्तु तीन स्थानों में दुर्लभ है—गंगाद्वार, (हरिद्वार), प्रयाग और गंगासागर के संगम में ।३४

सर्वेषामेव भूतानां पापोपहतचेतसाम् ।
गतिमन्वेषमाणानां नास्ति गंगासमा गतिः ॥३५

पाप से विनष्ट चित्त वाले और संगति ढूंढ़ने वाले सभी प्राणियों के लिए गंगा के समान गति (दायिनी) कोई नहीं है ।३५

पवित्राणां पवित्रं यन्मंगलानाञ्च मंगलम् ।
महेश्वरात्परिभ्रष्टा सर्वपापहरा शुभा ॥३६

गंगा पवित्रों में पवित्र तथा मंगलों में मंगल स्वरूप हैं। (शिव की जटा) से निकली हुई शुभदायिनी गंगा सभी प्रकार के पापों को हरने वाली है ।३६

कृते तु नैमिषं तीर्थं त्रेतायां पुष्करं वरम् ।
द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलौ गंगा विशिष्यते ॥३७

सत्ययुग में नैमिषारण्य तीर्थ, त्रेता में पुष्कर, और द्वापर में कुरु क्षेत्र श्रेष्ठ हैं, किन्तु कलियुग में गंगा सबसे विशेष हैं ।३७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगामेव निषेवन्ते प्रयागे तु विशेषतः ।
[1]नान्यत्कलियुगे रौद्रे भेषजं नृप विद्यते ॥३८

विद्वान् लोग गंगा का ही सेवन करते हैं, विशेष रूप से प्रयाग-गंगा का। राजन्! भयंकर कलियुग में (भवरोग की) गंगा को छोड़कर अन्य ओषधि नहीं है।३८

अकामो वा सकामो वा गंगायां यो विपद्यते ।
स मृतो जायते स्वर्गे नरकं च न पश्यति ॥३९

बिना इच्छा के या इच्छापूर्वक गंगा में जिसका शरीरत्याग होता है, वह मरने पर स्वर्ग जाता है, नरक को नहीं देखता है ।३९

इति श्रीकूर्मपुराणे प्रयागमाहात्म्ये × सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७

श्री कूर्मपुराण में प्रयागमहात्म्य-वर्णन में सैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३७॥

अष्टत्रिंशोऽध्यायः

तदेव

मार्कण्डेय उवाच

षष्टिस्तीर्थं[2] सहस्राणि षष्टिस्तीर्थंशतानि[3] च ।
माघमासे गमिष्यन्ति[4] गंगायमुनसंगमे[5] ॥१

मार्कण्डेय बोले—साठ हजार और साठ सौ तीर्थ माघ मास में गंगा और यमुना के संगम में जाते हैं ।१

गवां शतसहस्रस्य सम्यग्दत्तस्य यत्फलम् ।
प्रयागे माघमासे तु त्र्यहं स्नातस्य यत्फलम् ॥२

सौ हजार गौ विधिपूर्वक दान करने से जो फल मिलता है, वह फल माघ मास में गंगा में तीन दिन स्नान करने से प्राप्त हो जाता है ।२

गंगायमुनयोर्मध्ये करीषाग्निञ्च[6] साधयेत् ।
अहीनांगो ह्यरोगश्च पञ्चेन्द्रियसमन्वितः ॥३

---

१. नान्यत्कलियुगोद्भूतं मलं हन्तुं सुदुष्करमिति पा० । × षट्त्रिंशोऽध्यायः लि० पु० । २. षष्टितीर्थेति पा० । ३. षष्टितीर्थेति पा० । ४. समायान्तीति पा० । ५. सङ्गममिति पा० । ६. काष्ठाग्निं यस्तु धारयेदिति पा०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गंगा और यमुना के संगम स्थान में जो करसी की आग जलाकर साधना करता है, वह सभी अंगों से पुष्ट, नीरोग तथा पाँचों (स्थूल) इन्द्रियों से युक्त होता है ।३

यावंति रोमकूपाणि तस्य गात्रेषु भूमिप[1] ।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥४

राजन् ! उसके अंगों में जितने रोम होंगे, उतने हजार वर्षों तक वह स्वर्गलोक में पूजित होता है ।४

ततः स्वर्गात्परिभ्रष्टो जंबूद्वीपपतिर्भवेत् ।
भुक्त्वा स विपुलान्भोगांस्ततीर्थं [2]लभते पुनः ॥५

तदनन्तर स्वर्ग से च्युत होने पर वह जंबूद्वीप का स्वामी होता है । यहाँ विविध प्रकार के भोगों को भोगकर उस तीर्थ को पुनः प्राप्त करता है ।५

जलप्रवेशं यः कुर्यात्संगमे लोकविश्रुते ।
राहुग्रस्तो यथा सोमो विमुक्तः सर्वपातकैः ॥६

लोक प्रसिद्ध संगम के जल में प्रवेश करते ही मनुष्य पापों से उसी तरह छूट जाता है जैसे राहु से ग्रस्त होने पर चन्द्रमा छूट जाता है ।६

सोमलोकमवाप्नोति सोमेन सह मोदते ।
षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च ॥७

फिर वह चन्द्रलोक को प्राप्त करके चन्द्रमा के साथ साठ हजार और साठ सौ वर्षों तक आनन्दित होता है ।७

स्वर्गतः शक्रलोकेऽसौ मुनिगन्धर्वसेविते ।
ततो भ्रष्टस्तु राजेन्द्र समृद्धे[3] जायते कुले ॥८

स्वर्ग भोग करने के उपरान्त वह मुनियों तथा गन्धर्वों से सेवित इन्द्रलोक को प्राप्त करता है । राजेन्द्र ! वहाँ से च्युत होने पर वह समृद्धिशाली कुल में जन्म लेता है ।८

अधःशिरास्तु यो [4]धारामूर्ध्वपादः पिबेन्नरः ।
सप्तवर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥९

जो मनुष्य संगम में सिर नीचे और पैर ऊपर करके जलधारा का पान करता है, वह सात हजार वर्षों तक स्वर्गलोक में पूजित होता है ।९

---

१. मानवः इति पा० । २. व्रजते इति, भजते इति पा० । ३. पुनरिति पा० । ४. धूममिति पा० ।

 CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्माद्भ्रष्टस्तु राजेन्द्र अग्निहोत्री भवेन्नरः ।
[1]भुक्त्वाथ विपुलान्भोगांस्तत्तीर्थं भजते पुनः ॥१०

राजेन्द्र ! वहाँ से च्युत होने पर वह अग्निहोत्री मनुष्य होता है। अनन्तर नाना प्रकार के भोगों को भोगकर पुनः उस तीर्थ को प्राप्त करता है।१०

यः शरीरं विकर्त्तित्वा[2] शकुनिभ्यः प्रयच्छति ॥११
विहंगैरुपभुक्तस्य शृणु तस्यापि यत्फलम् ।
शतं वर्षसहस्राणां सोमलोके महीयते ॥१२

जो व्यक्ति वहाँ अपना शरीर काटकर पक्षियों को दे देता है, तब पक्षियों द्वारा उपभुक्त उसके शरीर का भी फल सुन लीजिए। सौ हजार वर्षों तक वह व्यक्ति चन्द्रलोक में पूजित होता है ।११-१२।

ततस्तस्मात्परिभ्रष्टो राजा भवति धार्मिकः ।
गुणवान्रूपसंपन्नो विद्वांस्तु[3] प्रियवाक्यवान् ॥१३

तदनन्तर वहाँ से च्युत होने पर वह धार्मिक, गुणवान्, रूपवान्, विद्वान् और प्रियभाषी होता है।१३

[4]भोगान् भुक्त्वाथ दत्त्वा च तत्तीर्थं भजते पुनः ।
उत्तरे यमुनातीरे प्रयागस्य च दक्षिणे ॥१४
ऋणप्रमोचनं नाम तीर्थन्तु परमं स्मृतम् ।
एकरात्रोषितः स्नात्वा ऋणात्तत्र[5] प्रमुच्यते ॥१५
[6]स्वर्गलोकमवाप्नोति अनृणश्च सदा भवेत् ॥१६

भोगों को भोगकर और दान देकर पुनः उस तीर्थ की सेवा करता है। यमुना के उत्तरी किनारे और प्रयाग से दक्षिण ऋणप्रमोचन नामक श्रेष्ठ तीर्थ है। वहाँ एक रात उपवास करके स्नान करने से ऋण से मुक्ति मिल जाती है। वह व्यक्ति स्वर्गलोक को प्राप्त करता है और सदा ऋण से रहित रहता है।१४-१६।

इति श्रीकूर्मपुराणे प्रयागमाहात्म्यं नाम×
अष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥३८

श्री कूर्मपुराण में प्रयागमाहात्म्य नामक अड़तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३८॥

---

१. भुक्त्वा तु इति पा०। २. विकर्त्तित्वा इति आर्षम् विकृत्य इति साधु। ३. विद्वान् सुप्रियवाक्यवानिति पा०। ४. भुक्त्वा तु विपुलान् भोगानिति पा०। ५. ऋणं स्तत्रेति पा०। ऋषिदेवपित्रृणेरित्यर्थः। ६. सूर्यलोक इति पा०। × सप्तत्रिंश: लि० पु०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

तदेव

मार्कण्डेय उवाच

तपनस्य सुता देवी त्रिषु लोकेषु विश्रुता ।
समागता महाभागा यमुना यत्र निम्नगा ॥१

मार्कण्डेय बोले—तीनों लोक में प्रसिद्ध सूर्य-पुत्री यमुना नदी के रूप में यहाँ आयी ।१

येनैव निःसृता गंगा तेनैव यमुना गता ।
योजनानां सहस्रेषु कीर्त्तनात्पापनाशिनी ॥२

जिधर से गंगा निकली, उधर ही से यमुना गई । सहस्र योजन दूर से भी यमुना का नाम लेने से पापों का नाश होता है ।२

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च [1]यमुना यत्र निम्नगा ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः पुनात्यासप्तमं कुलम् ॥३

यमुना में स्नान और पान करके मनुष्य सभी पापों से मुक्त होकर सात पीढ़ियों को पवित्र कर लेता है ।३

प्राणांस्त्यजति यस्तत्र स याति परमां गतिम् ।
अग्नितीर्थमिति ख्यातं यमुनादक्षिणे तटे ॥४

यमुना के दक्षिण तट पर अग्नितीर्थ प्रसिद्ध है । जो वहाँ प्राणत्याग करता है, वह परम गति को प्राप्त करता है ।४

पश्चिमे धर्मराजस्य तीर्थं त्वनरकं स्मृतम् ।
तत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः ॥५

यमुना के पश्चिम भाग में धर्मराज का अनरक नामक तीर्थ है । उसमें स्नान करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है । जो वहाँ मरते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता ।५

---

१. यमुनायां युधिष्ठिर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां स्नात्वा सन्तर्प्य वै शुचिः ।
धर्मराजं महापापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥६

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी में जो वहाँ स्नान करके पवित्र हो धर्मराज का तर्पण करता है, वह महापापों मे मुक्त हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं ।६

दशतीर्थसहस्राणि दशकोट्यस्तथापराः ।
प्रयागसंस्थितानि स्युरेवमाहुर्मनीषिणः ॥७

दस हजार और दस करोड़ तीर्थ प्रयाग में अवस्थित हैं, ऐसा मनिषियों ने कहा है ।७

तिस्रः कोट्योऽर्द्धकोटिश्च तीर्थानां वायुरब्रवीत् ।
दिवि भूम्यन्तरिक्षे च तत्सर्वं जाह्नवी स्मृता ॥८

स्वर्ग, पृथ्वी और अन्तरिक्ष में साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हैं, किन्तु गंगा ही सर्व-तीर्थमयी है, ऐसा वायुदेव ने कहा है ।८

यत्र गंगा महाभागा स देशस्तत्तपोवनम् ।
सिद्धक्षेत्रं तु तज्ज्ञेयं गङ्गा[1]तीरं समाश्रितम् ॥९

जहाँ भगवती गंगा है, वह देश तपोवन है, गंगा तट पर आश्रित उसी को सिद्ध-क्षेत्र समझना चाहिए ।९

यत्र देवो महादेवो [2]माधवेन महेश्वरः ।
आस्ते देवेश्वरो[3] नित्यं ततीर्थं तत्तपोवनम् ॥१०

जहाँ विष्णु के साथ देवेश्वर महादेव रहते हैं, वह नित्य तीर्थ एवं तपोवन है ।१०

इदं सत्यं द्विजातीनां साधूनामात्मजस्य च ।
सुहृदांश्च जपेत्कर्णे शिष्यस्यानुगतस्य च ॥११

यह सत्य बात द्विजातियों, साधुओं, पुत्र, मित्र, शिष्य तथा अनुयायियों के कान में कहनी चाहिए ।११

इदं धन्यमिदं स्वर्ग्यमिदं मेध्यमिदं शुभम् ।
इदं पुण्यमिदं रम्यं पावनं धर्म्यमुत्तमम् ॥१२

यह तीर्थ धन्य है, यह स्वर्गजनक है, यह पवित्र है, यह शुभ है, यह पुण्य है, यह रमणीय है, यह पावन है और यह उत्तम धर्मयुक्त है ।१२

---

१. त्रिंशदिति पा० । २. गङ्गातीरसमाश्रितमिति पा० । ३. देव्या सहेति पा० । ४. वटेश्वर इति पा० ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षीणामिदं गुह्यं सर्वपापप्रमोचनम् ।
अत्राधीत्य द्विजोऽध्याय निर्मलत्वमवाप्नुयात् ॥१३

महर्षियों का गोपनीय तथा सकलपापनाशन है। इस अध्याय को पढ़कर द्विज निर्मलता प्राप्त करे ।१३

यश्चेदं शृणुयान्नित्यं तीर्थं पुण्यं सदा शुचिः ।
जातिस्मरत्वं लभते नाकपृष्ठे च मोदते ॥१४

जो सर्वदा पवित्र रहकर नित्य इस तीर्थ के विषय में श्रवण करेगा, वह जाति-स्मरत्व (पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण रखने की क्षमता) प्राप्त करेगा और स्वर्ग में आनन्द में कालयापन करेगा ।१४

प्राप्यन्ते तानि तीर्थानि सद्भिः शिष्टानुदर्शिभिः ।
स्नाहि तीर्थेषु कौरव्य मा च वक्रमतिर्भव ॥१५

शिष्टमार्गप्रदर्शक सज्जन सभी तीर्थों में जाते हैं। हे कुरुनन्दन ! आप तीर्थों में स्नान करें, विपरीत बुद्धि वाले न हों ।१५

एवमुक्त्वा स भगवान्मार्कण्डेयो महामुनिः ।
तीर्थानि कथयामास पृथिव्यां यानि [1]कानिचित् ॥१६

इस प्रकार कहकर महामुनि भगवान् मार्कण्डेय ने पृथ्वी पर जितने तीर्थ हैं, सबके बारे में बता दिया ।१६

भूसमुद्रादिसंस्थानं गृहाणां[2] ज्योतिषां स्थितिम् ।
पृष्टः प्रोवाच सकलमुक्त्वाथ प्रययौ मुनिः ॥१७

पुनः राजा के पूछने पर मुनि पृथ्वी, समुद्र, ग्रह, नक्षत्र आदि की स्थिति बताकर रुद्रलोक को चले गये ।१७

सूत उवाच

य इदं कल्यमुत्थाय शृणोति पठतेऽथवा ।
मुच्यते [3]सर्वपापैस्तु रुद्रलोकं स गच्छति ॥१८

सूत बोले—जो व्यक्ति प्रातः काल उठकर इस अध्याय का श्रवण या पाठ करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर रुद्रलोक को जाता है ।१८

इति श्रीकूर्मपुराणे प्रयागमाहात्म्यं नाम × एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९

श्री कूर्मपुराण में प्रयागमाहात्म्यकथन नामक उनतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३९॥

---

१. कानि चेति पा०। २. प्रमाणं ज्योतिषां स्मृतमिति, प्रमाणं ज्योतिषां स्थितमिति पा०। ३. सर्वपापेभ्य इति पा०। × अष्टत्रिंशत् लि० पु०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ भुवनविन्यासप्रकरणम्

× मुनय ऊचुः

एवमुक्तास्तु मुनयो नैमिषीया महामुनिम्[1] ।
पप्रच्छुरुत्तरं[2] सूतं पृथिव्यादिविनिर्णयम् ॥१

मुनिगण बोले—इस प्रकार कहे जाने पर नैमिषारण्यवासी मुनियों ने महामुनि सूत से प्रतिसर्ग के अन्तर्गत पृथ्वी आदि के निर्णय के बारे में पूछा ।१

॥ ऋषय ऊचुः ॥

कथितो भवता [3]सर्गः मनुः स्वायंभुवः शुभः ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामस्त्रिलोकस्यास्य मण्डलम् ॥२

ऋषियों ने कहा—आपने स्वायंभुव मनु की सृष्टि का वर्णन सुना दिया, अब इस त्रिलोकी का मण्डल हम सुनना चाहते हैं ।२

यावन्तः सागरद्वीपास्तथा वर्षाणि पर्वताः ।
वनानि सरितः सूर्यो ग्रहाणां स्थितिरेव च ॥३
यदाधारमिदं सर्वं येषां पृथ्वी पुरान्वियम् ।
नृपाणां तत्समासेन [4]तत्तद्वक्तुमिहार्हसि ॥४

जितने समुद्र, द्वीप, वर्ष, पर्वत, वन, नदियाँ, सूर्य, ग्रहों की स्थिति ये सब जिसके आधार पर हैं और पूर्वकाल में यह पृथ्वी जिन राजाओं के अधिकार में थी, उन सबको संक्षेप में आप हमें बता दें ।३-४।

सूत उवाच

वक्ष्ये देवाधिदेवाय विष्णवे प्रभविष्णवे ।
नमस्कृत्याप्रमेयाय यदुक्तं तेन धीमता ॥५

× सूत उवाच लि० पु० । १. महामतिमिति पा० । २. पप्रच्छुः पुरुषं कूर्मं इति पा० । उत्तरं सर्गात्परवर्तिनम्, प्रतिसर्गान्तर्गतं पृथिव्यादिविनिर्णयं सूतं पप्रच्छुरित्यर्थः । ३. सूत सर्गः स्वायंभुवस्तु यः इति पा० । ४. सूत वक्तु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूत बोले—देवाधिदेव, सर्वसमर्थ, अज्ञेय विष्णु को नमस्कार करके उन धीमान् ने जो कहा था, उसे मैं बताऊँगा ।५

[1]स्वायम्भुवस्यास्य मनोः प्रागुक्तो यः प्रियव्रतः ।
पुत्रस्तस्याभवन्पुत्राः प्रजापतिसमा दश ॥६

इस स्वायम्भुवमनु का प्रियव्रत नामक जो पुत्र पहले बताया जा चुका है, उसके प्रजापति के समान दस पुत्र हुए ।६

आग्नीध्रश्चाग्निबाहुश्च वपुष्मान्द्युतिमांस्तथा ।
मेधा मेधातिथिर्हव्यः सवनः पुत्र एव च ॥७
ज्योतिष्मान्दशमस्तेषां महाबलपराक्रमः ।
धार्मिको दाननिरतः सर्वभूतानुकम्पकः[2] ॥८

आग्नीध्र, अग्निबाहु, वपुष्मान्, द्युतिमान्, मेधा, मेधातिथि, हव्य, सवन, पुत्र और दशम ज्योतिष्मान् पुत्र था । वह उनमें महाबली, पराक्रमी, धार्मिक, दानपरायण एवं सभी प्राणियों के प्रति दयालु था ।७-८।

मेधाग्निबाहुपुत्रास्तु त्रयो योगपरायणाः ।
जातिस्मरा महाभागा न राज्ये दधिरे मतिम् ॥९

मेधा, अग्निबाहु और पुत्र ये तीनों योगपरायण थे । ये महाभाग जातिस्मर थे, राज्य में इनका मन नहीं लगता था ।९

प्रियव्रतोऽभ्यषिञ्चद्वै सप्तद्वीपेषु सप्त तान् ।
जम्बुद्वीपेश्वरं पुत्रमाग्नीध्रमकरोन्नृपः ॥१०

प्रियव्रत ने सात द्वीपों में सात पुत्रों का अभिषेक किया । राजा ने पुत्र आग्नीध्र को जम्बुद्वीप का स्वामी बनाया ।१०

प्लक्षद्वीपेश्वरश्चैव तेन मेधातिथिः कृतः ।
शाल्मलीशं वपुष्मन्तं नरेन्द्रमभिषिक्तवान् ॥११

उसने मेधातिथि को प्लक्षद्वीप का अधिपति बनाया । वपुष्मान् को शाल्मलिद्वीप के राजपद पर नियुक्त किया ।११

ज्योतिष्मन्तं कुशद्वीपे राजानं कृतवान् प्रभुः ।
द्युतिमन्तश्च राजानं क्रौञ्चद्वीपे समादिशत् ॥१२

---

१. स्वायम्भुवस्य तु इति पा० । २. कम्पन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभु ने ज्योतिष्मान् को कुशद्वीप का राजा बनाया। क्रौञ्चद्वीप में द्युतिमान् को नियुक्त किया।१२

शाकद्वीपेश्वरञ्चापि [1]हव्यञ्चक्रे प्रियव्रतः।
पुष्कराधिपतिञ्चक्रे सवनञ्च प्रजापतिः ॥१३

प्रियव्रत ने हव्य को शाकद्वीपपति बनाया। प्रजापति ने सवन को पुष्कर का अधिपति बनाया।१३

पुष्करेश्वरतश्चापि महीवीतसुतोऽभवत्।
धातकिश्चैव द्वावेतौ पुत्रौ पुत्रवतां वरौ ॥१४

पुष्करेश्वर से महीवीत और धातकि नामक दो पुत्र हुए। दोनों पुत्रवानों में श्रेष्ठ थे।१४

महावीतं स्मृतं वर्ष तस्य स्यात्तु महात्मनः।
नाम्ना वैधातकेश्चापि धातकीखण्डमुच्यते ॥१५

महात्मा महावीत के नाम से महावीत नामक वर्ष चला। वैधातकि के नाम से धातकी खण्ड कहा जाता है।१५

शाकद्वीपेश्वरस्यापि [2]हव्यस्याप्यभवन् सुताः।
जलदश्च कुमारश्च सुकुमारो मणीचकः ॥१६

कुशोत्तरोऽथ मोदाकिः सप्तमः स्यान्महाद्रुमः।
जलदं जलदस्याथ वर्ष प्रथममुच्यते ॥१७

शाकद्वीपेश्वर हव्य के पुत्र हुए—जलद, कुमार, सुकुमार, मणीचक, कुशोत्तर, मोदाकि और सातवां पुत्र महाद्रुम। जलद का जलद नामक वर्ष पहला कहा जाता है।१६-१७।

कुमारस्य तु कौमारं तृतीयं सुकुमारकम्।
मणीचकञ्चतुर्थञ्च पञ्चमञ्च[3] कुशोत्तरम् ॥१८

कुमार का कौमार वर्ष और तीसरा सुकुमारक चौथा मणीचक और पांचवां कुशोत्तर वर्ष हुआ।१८

[4]मोदाकं षष्ठमित्युक्तं सप्तमन्तु महाद्रुमम्।
क्रौञ्चद्वीपेश्वरस्यापि सुता द्युतिमतोऽभवन् ॥१९

---

१. भव्यमिति पा०। २. भव्यस्या इति पा०। ३. पञ्चमं कुसुमोत्तरमिति पा०। ४. मोदकं षण्डमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोदाक छठा वर्ष और सातवाँ वर्ष महाद्रुम हुआ। क्रौञ्चद्वीप के राजा द्युतिमान् के भी पुत्र हुए।१९

कुशलः प्रथमस्तेषां द्वितीयस्तु मनोहरः।
उष्णस्तृतीयः सम्प्रोक्तश्चतुर्थः पीवरः[1] स्मृतः॥२०

उनमें कुशल पहला था, दूसरा मनोहर, तीसरा उष्ण और चौथा पीवर कहा गया है।२०

अन्धकारो मुनिश्चैव [2]दुन्दुभिश्चैव सप्त वै।
तेषां स्वनामभिर्देशाः क्रौञ्चद्वीपाश्रयाः शुभाः॥२१

अन्धकार, मुनि और सातवाँ दुन्दुभि था। उनके अपने नामों से शुभ देश हुए जो क्रौञ्चद्वीप के आश्रित थे।२१

ज्योतिष्मतः कुशद्वीपे सप्तैवासन्महौजसः।
उद्भेदो वेणुमांश्चैवाश्वरथो लम्बनो धृतिः॥२२

कुशद्वीप में महातेजस्वी ज्योतिष्मान् के सात ही पुत्र थे—उद्भेद, वेणुमान्, अश्वरथ, लम्बन, धृति।२२

षष्ठः प्रभाकरश्चापि सप्तमः कपिलः स्मृतः।
[3]स्वनामचिह्नितश्चात्र तथा वर्षाणि सुव्रताः॥२३

छठा प्रभाकर और सातवाँ कपिल कहा गया है। हे उत्तमव्रतधारियो! अपने नाम से चिह्नित उनके सात वर्ष भी हैं।२३

ज्ञेयानि च तथान्येषु द्वीपेष्वेवन्नयो[4] मतः।
शाल्मलिद्वीपनाथस्य सुताश्चासन्वपुष्मतः॥२४
श्वेतश्च हरितश्चैव जीमूतो रोहितस्तथा।
वैद्युतो मानसश्चैव सप्तमः सुप्रभो मतः॥२५

इसी प्रकार अन्य द्वीपों में भी वर्ष समझने चाहिए। शाल्मलिद्वीप के स्वामी वपुष्मान् के भी सात पुत्र थे—श्वेत, हरित, जीमूत, रोहित, वैद्युत, मानस और सातवाँ सुप्रभ।२४-२५।

[5]प्लक्षद्वीपेश्वरस्यापि सप्त मेधातिथेः सुतः।
ज्येष्ठः शान्तमयस्तेषां शिशिरस्तु सुखोदयः॥२६

---

१. प्रवर इति पा०। २. दुन्दुभिश्चेति सप्तम इति पा०। ३. स्वनाम चिह्नितानि यत्र इति पा०। ४. द्वीपेषु पतयो मताः, द्वीपेष्वेतानि नामत इति पा०। ५. कुशद्वीपेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[1]आनन्दश्च शिवश्चैव क्षेमकश्च ध्रुवस्तथा ।
[2]प्लक्षद्वीपादिके ज्ञेयाः शाकद्वीपान्तिकेषु च ॥२७

प्लक्षद्वीप के अधिपति मेधातिथि के भी सात पुत्र थे—उनमें ज्येष्ठ शान्तमय था और पुत्र—शिशिर, सुखोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक और। प्लक्षद्वीप और शाकद्वीप आदि में भी ऐसा समझना चाहिए।२६-२७।

[3]वर्णानाञ्च विभागेन स्वधर्मो मुक्तये मतः[4] ।
जम्बुद्वीपेश्वरस्यापि पुत्राश्चासन्महाबलाः ॥२८

वर्णों के विभाग से स्वधर्म (वर्णों का अपना धर्म) मोक्षदायक माना गया है। जम्बू द्वीप के अधिपति के भी महाबली पुत्र थे।२८

आग्नीध्रस्य द्विजश्रेष्ठास्तन्नामानि निबोधत ।
नाभिः किम्पुरुषश्चैव तथा हरिरिलावृतः ॥२९
रम्यो हिरण्वांश्च कुरुर्भद्राश्वः केतुमालकः ।
जम्बुद्वीपेश्वरो राजा स चाग्नीध्रो महामतिः[5] ॥३०

द्विजश्रेष्ठो ! जम्बू द्वीपपति आग्नीध्र के पुत्रों के नाम सुनिये—नाभि, किम्पुरुष, हरि, इलावृत, रम्य, हिरण्वान्, कुरु, भद्राश्व और केतुमालक। जम्बूद्वीप के समर्थ राजा महाबुद्धिमान् आग्नीध्र थे।२९-३०।

विभज्य नवधा तेभ्यो यथान्यायं ददौ पुनः ।
नाभेस्तु दक्षिणं वर्षं हिमाह्वं प्रददौ पिता ॥३१

जम्बूद्वीप को नौ भागों में न्याय पूर्वक बाँट कर उक्त नौ पुत्रों को दे दिया। पिता ने नाभि को दक्षिणदिशावर्ती हिमवर्ष दे दिया।३१

हेमकूटं ततो वर्षं ददौ किम्पुरुषाय सः ।
तृतीयं नैषधं वर्षं हरये दत्तवान् पिता ॥३२

तदनन्तर उसने किम्पुरुष को हेमकूट नामक वर्ष दे दिया। फिर तीसरा नैषध वर्ष पिता ने हरि को दिया।३२

इलावृताय प्रददौ मेरुमध्यमिलावृतम् ।
[6]नीलाद्रेराभ्रुतं वर्षं रम्याय प्रददौ पिता ॥३३

---

१. आनन्दश्चामरश्चैव इति पा०। २. प्लक्षद्वीपादिषु ज्ञेयाः इति पा०। ३. वर्णाश्रम इति पा०। ४. द्विजा इति पा०। ५. महामुनिरिति पा०। ६. नीलाचला-श्रयमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इलावृत को मेरुमध्य में स्थित इलावृत वर्ष दिया। नीलाद्रि के आश्रित वर्ष पिता ने रम्य को दिया।३३

श्वेतं यदुत्तरं वर्षं पित्रा दत्तं हिरण्वते।
यदुत्तरं शृङ्गवतो वर्षं तत्कुरवे ददौ ॥३४

पिता ने हिरण्वान् को उत्तर दिशा में अवस्थित श्वेत वर्ष दिया और कुछ को शृंगवान् पर्वत के उत्तर भागस्थ उत्तर कुरु वर्ष प्रदान किया।३४

मेरोः पूर्वेण यद्वर्षं भद्राश्वाय न्यवेदयत्।
गन्धमादनवर्षं तु केतुमालाय दत्तवान् ॥३५

सुमेरु के पूर्व भागस्थ वर्ष भद्राश्व को दिया। गन्धमादन वर्ष केतुमाल को दिया।३५

वर्षेष्वेतेषु [1]तान्पुत्रानभ्यषिञ्चन्नराधिपः।
संसारासारतां[2] ज्ञात्वा तपस्तप्तुं वनं गतः ॥३६

राजा ने इन वर्षों में उन पुत्रों को अभिषिक्त किया और स्वयं संसार को सारहीन समझकर तप करने के लिए वन में चला गया।३६

हिमाह्वयं तु [3]यद्वर्षं नाभेरासीन्महात्मनः।
तस्यर्षभोऽभवत्पुत्रो मेरुदेव्यां महाद्युतिः ॥३७

हिम नामक जो वर्ष महात्मा नाभि का था, उसके ऋषभ नामक महाकान्तिमान् पुत्र मेरुदेवी में हुआ।३७

ऋषभाद्भरतो जज्ञे [4]वीरः पुत्रशताग्रजः।
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं भरतं पृथिवीपतिः ॥३८

वानप्रस्थाश्रमं गत्वा तपस्तेपे यथाविधि।
तपसा कर्षितोऽत्यर्थं कृशोऽयम[5]निशं ततः ॥३९

ऋषभ से भरत उत्पन्न हुआ, जो वीर एवं सौ पुत्रों का अग्रज था। वह राजा ऋषभ भी पुत्र भरत को अभिषिक्त करके वानप्रस्थाश्रम में जाकर विधिपूर्वक तप करने लगा। दिनरात तप करने से वह अत्यन्त क्षीण हो गया।३८-३९।

ज्ञानयोगरतो भूत्वा महापाशुपतोऽभवत्।
सुमतिर्भरत[6]स्यापि पुत्रः परमधार्मिकः ॥४०

---

१. अभिषिच्य नराधिप इति पा०। २. संसारकष्टतामिति पा०। ३. यस्यैतदिति पा०। ४. धीर इति पा०। ५. धमनिसन्तत इति पा०। ६. भरतस्याभूदिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह ज्ञानयोग में निरत होकर महान् पाशुपत (शिवभक्त) हो गया। भरत का भी परम धार्मिक पुत्र सुमति हुआ ।४०

सुमतेस्तैजसस्तस्मादिन्द्रद्युम्नो महाद्युतिः ।
परमेष्ठी सुतस्मात्प्रतीहारस्तदन्वयः ॥४१

सुमति से तैजस और उससे इन्द्रद्युम्न नामक महाकान्तिमान् पुत्र उत्पन्न हुआ। उससे परमेष्ठी नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई और उसका पुत्र प्रतीहार हुआ ।४१

प्रतिहर्त्तेति विख्यात उत्पन्नस्तस्य चात्मजः ।
भवस्तस्मादथोद्गीथः प्रस्ताविस्तत्सुतोऽभवत् ॥४२

प्रतीहार का पुत्र प्रतिहर्ता नाम से विख्यात हुआ । प्रतिहर्ता का पुत्र भव और भव से उद्गीथ उत्पन्न हुआ। उद्गीथ का पुत्र प्रस्तावि हुआ ।४२

पृथुस्ततस्ततो नक्तो नक्तस्यापि गयः स्मृतः ।
नरो गयस्य तनयस्तस्य भूयो विराडभूत् ॥४३

पृथु का पुत्र नक्त और नक्त का पुत्र गय हुआ। गय का पुत्र नर और नर का पुत्र विराट् हुआ ।४३

तस्य पुत्रो महावीर्यो धीमांस्तस्मादजायत ।
धीमतोऽपि ततश्चाभूद्रौव[1]णस्तत्सुतोऽभवत् ॥४४

विराट् का पुत्र महावीर्य और उससे धीमान् की उत्पत्ति हुई। धीमान् का पुत्र रौवण हुआ।४४

त्वष्टा त्वष्टुश्च विरजो रजस्तस्मादभूत्सुतः ।
शतजिद्रथजित्तस्य जज्ञे पुत्रशतं द्विजाः ॥४५

रौवण का पुत्र त्वष्टा, त्वष्टा का विरज, विरज का रज, रज का पुत्र शतजित् और उसका पुत्र रथजित् हुआ। द्विजगण ! रथजित् के सौ पुत्र हुए ।४५

तेषां प्रधानो बलवान्विश्वज्योतिरिति स्मृतः ।
आराध्य देवं ब्रह्माणं क्षेमकं नाम पार्थिवम् ॥४६

असूत पुत्रं धर्मज्ञं महाबाहुमरिन्दमम् ।
एते पुरस्ताद्राजानो महासत्वा महौजसः ॥४७

एषां [2]वंशप्रसूतैस्तु भुक्तेयं पृथिवी पुरा ॥४८

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनविन्यासे × चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०

---

१. शोचन इति पा०। २. प्रसूतैश्च इति पा०। × एकोनचत्वारिंशः लि० पु०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें प्रधान और बलवान् विश्वज्योति नाम से स्मरण किया गया है। उसने ब्रह्मदेव की आराधना करके क्षेमक नामक राजा को जन्म दिया, जो धर्मज्ञ, महाबली और शत्रुओं का दमन करने वाला था। ये पूर्वकाल में महाशक्तिशाली एवं महातेजस्व राजा हुए हैं। इनके वंशजों ने पूर्वकाल में पृथ्वी का उपभोग किया है।४६-४८।

श्रीकूर्मपुराण में भुवनविन्यास-प्रसंग में चालीसवाँ अध्याय समाप्त।४०।

एकचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ ज्योतिःसन्निवेशवर्णनम्

सूत उवाच

अतः परं प्रवक्ष्यामि संक्षेपेण द्विजोत्तमाः।
त्रैलोक्यस्यास्य मानं वो न शक्यं विस्तरेण तु ॥१

सूत-बोले—हे द्विजश्रेष्ठो! इसके बाद मैं आप लोगों को उस त्रिलोकी का मान संक्षेप में बताऊँगा, विस्तार से तो यह बताया ही नहीं जा सकता।१

भूर्लोकोऽथभुवर्लोकः स्वर्लोकोऽथ महस्तथा।
जनस्तपश्च सत्यश्च लोकास्त्वण्डोद्भवास्तथा[1] ॥२

(प्रकृत-प्रसृत) अण्ड से भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनोलोक, तपोलोक तथा सत्यलोक उत्पन्न हुए हैं।२

सूर्याचन्द्रमसौ यावत्किरणैरेव भासतः।
तावद्भूर्लोक आख्यातः पुराणे द्विजपुंगवाः ॥३

द्विजवरो! पुराण में कहा गया है कि सूर्य और चन्द्रमा जहाँ तक किरणों से प्रकाशित होते हैं वहाँ तक भूर्लोक कहा गया है।३

यावत्प्रमाणो भूर्लोको विस्तरात्परिमण्डलात्।
भुवर्लोकोऽपि तावत्स्यान्मण्डलाद्भास्करस्य तु ॥४

सूर्य के विस्तृत परिमण्डल से भूर्लोक जितने परिमाण में हैं, सूर्यमण्डल से भुवर्लोक भी उतने परिमाण की दूरी पर अवस्थित है।४

१. मता इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊर्द्ध्वं यन्मण्डलं व्योम्नि ध्रुवो यावद्व्यवस्थितः ।
स्वर्गलोकः समाख्यातस्तत्र वायोस्तु नेमयः ॥५

आवहः प्रवहश्चैव तत्रैवानुवहः पुनः ।
संवहो विवहश्चैव[1] तदूर्द्ध्वं स्यात्परावहः ॥६

तथा परिव[2]हश्चैव वायोर्वै सप्त नेमयः ॥
भूमेर्योजनलक्षे तु भानोर्वै मण्डलं स्थितम् ॥७

आकाशामार्ग में ऊपर ध्रुव जहाँ तक विद्यमान है, वहाँ तक स्वर्गलोक की सीमा है। वहाँ सात वायुचक्र हैं—आवह, प्रवह, अनुवह, संवह, विवह, परावह तथा परिवह। भूमि से एक लाख योजन ऊपर सौर मण्डल अवस्थित है।५-७।

लक्षे दिवाकरस्यापि मण्डलं शशिनः स्मृतम् ।
नक्षत्रमण्डलं कृत्स्नं तल्लक्षेण प्रकाशते ॥८

सूर्यमण्डल से एक लाख योजन ऊपर चन्द्रमण्डल है। वहाँ से एक लाख योजन ऊपर सम्पूर्ण नक्षत्रमण्डल प्रकाशित होता है।८

द्विलक्षे[3] ह्यन्तरे विप्रा बुधो नक्षत्रमण्डलात् ।
तावत्प्रमाणभागे तु बुधस्याप्युशनाः स्थितः ॥९

विप्रवृन्द! नक्षत्रमण्डल से दो लाख योजन की दूरी पर बुधमण्डल अवस्थित है। बुध से उतने ही प्रमाण की दूरी पर शुक्रमण्डल अवस्थित है।९

अंगारकोऽपि शुक्रस्य तत्प्रमाणे व्यवस्थितः ।
लक्षद्वयेन भौमस्य स्थितो देवपुरोहितः ॥१०

शुक्र से उतने ही प्रमाण की दूरी पर भौममण्डल विद्यमान है। भौममण्डल से दो लाख योजन की दूरी पर बृहस्पतिमण्डल स्थित है।१०

सौरिर्द्विलक्षेण गुरोर्ग्रहाणामथ मण्डलात् ।
सप्तर्षिमण्डलं तस्माल्लक्षमात्रे प्रकाशते ॥११

गुरुमण्डल से दो लाख योजन की दूरी पर शनिमण्डल अवस्थित है। वहाँ से केवल एक लाख योजन की दूरी पर सप्तर्षिमण्डल चमकता है।११

[4]ऋषीणां मण्डलादूर्द्ध्वं लक्षमात्रे स्थितो ध्रुवः ।
तत्र धर्मः स भगवान्विष्णुर्नारायणः स्थितः ॥१२

---

१. विवाहश्चाथ इति पा०। २. परिवहश्चोर्द्ध्वमिति पा०। ३. द्वे लक्षेऽप्युत्तरे इति पा०। ४. ऋषीणां मण्डलादूर्ध्वं लक्षमात्रे व्यवस्थितः। मेढीभूतः समस्तस्य ज्योतिश्चक्रस्य वै ध्रुवः। इ० पा०। मेढीभूत मेधीभूतो वा केन्द्रीभूत इत्यर्थः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषियों के मण्डल से ऊपर एक लाख योजन की दूरी पर ध्रुवतारा स्थित है। वहाँ विश्वव्यापी भगवान् नारायण धर्म अवस्थित हैं।१२

नवयोजनसाहस्रो विष्कम्भः सवितुः स्मृतः।
त्रिगुणस्तस्य विस्तारो मण्डलस्य प्रमाणतः ॥१३

नौ हज़ार योजन सूर्य का व्यास है। व्यास से तिगुना विस्तार मण्डल का प्रमाण है।१३

द्विगुणः सूर्यविस्ताराद्विस्तारः शशिनः स्मृतः।
तुल्यस्तयोस्तु स्वर्भानुर्भूत्वा तानुपसर्पति ॥१४

सूर्य के विस्तार से चन्द्रमा का विस्तार दुगुना है। सूर्य और चन्द्रमण्डल तुल्य राहुमण्डल उनके पास सरकता है।१४

उद्धृत्य पृथिवीच्छायां निर्मितो मण्डलाकृतिः।
स्वर्भानोस्तु बृहत्स्थानं तृतीयं यत्तमोमयम् ॥१५

पृथिवी की छाया का सहारा लेकर मण्डलाकार में निर्मित राहु का तीसरा जो बृहत् स्थान है, वह अन्धकारमय है।१५

चन्द्रस्य षोडशो भागो भार्गवस्य विधीयते।
भार्गवात्पादहीनस्तु विज्ञेयो वै बृहस्पतिः ॥१६

चन्द्रमा के विस्तार के सोलहवाँ भाग शुक्र का विस्तार है। शुक्र से चतुर्थांश विस्तार बृहस्पति का समझना चाहिए।१६

बृहस्पतेः पादहीनौ भौमसौरावुभौ स्मृतौ।
विस्तारान्मण्डलाच्चैव पादहीनस्तयोर्बुधः ॥१७

बृहस्पति से चतुर्थांश विस्तार मंगल और शनिका समझना चाहिए। विस्तार और मण्डल में उन दोनों से चतुर्थांश कम बुध को समझना चाहिए।१७

तारानक्षत्ररूपाणि वपुष्मन्तीह यानि वै।
बुधेन तानि तुल्यानि विस्तारान्मण्डलात्तथा ॥१८

तारा और नक्षत्ररूप में जो शरीरधारी हैं, वे विस्तार और मण्डल में बुधग्रह के तुल्य हैं।१८

तारानक्षत्ररूपाणि हीनानि तु परस्परम्।
शतानि पञ्चचत्वारि त्रीणि द्वे चैव योजने ॥१९

तारा और नक्षत्ररूप में जो परस्पर हीन हैं, उनमें कोई पाँच सौ, कोई चार सौ, कोई तीन सौ और कोई दो सौ योजन की दूरी पर अवस्थित हैं।१९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वापरानुकृष्टानि तारकामण्डलानि तु ।
योजनाद्यर्द्धमात्राणि तेभ्यो ह्रस्वं न विद्यते ॥२०

तारका मण्डल में सभी एक दूसरे से निकृष्ट हैं। उनका मण्डल और विस्तार योजनार्धपरिमित हैं। उनसे छोटा दूसरा ज्योतिष्क पिंड नहीं है।२०

[1]उपरिष्टात्त्रयस्तेषां ग्रहा वै दूरसर्पिणः ।
सौरोऽङ्गिराश्च वक्रश्च ज्ञेयो मन्दविचारणः ॥२१

इनसे ऊपर दूर भ्रमणकारी शनि, बृहस्पति एवं मंगल---ये तीन ग्रह अवस्थित हैं। ये मन्दगति वाले ग्रह हैं।२१

तेभ्योऽधस्ताच्च चत्वारः पुनरन्ये महाग्रहाः ।
सूर्यः सोमो बुधश्चैव[2] भार्गवश्चैव शीघ्रगाः ॥२२

उनसे नीचे दूसरे चार महाग्रह हैं---सूर्य, चन्द्रमा, बुध और शुक्र। ये शीघ्रगामी ग्रह हैं।२२

दक्षिणायनमार्गस्थो यदा चरति रश्मिमान् ।
तदा पूर्वग्रहाणां वै सूर्योऽधस्तात्प्रसर्पति ॥२३

जिस समय सूर्य दक्षिणायनमार्ग में स्थित होते हैं, उस समय पूर्वग्रहों के बीच सूर्य निम्न देश में भ्रमण करते हैं।२३

विस्तीर्णं मण्डलं कृत्वा तस्योर्द्ध्वं चरते शशी ।
नक्षत्रमण्डलं कृत्स्नं सोमादूर्द्ध्वं प्रसर्पति ॥२४

उसके ऊपर चन्द्रमा विस्तृत मण्डलाकार में विचरण करता है और सम्पूर्ण नक्षत्र-मण्डल चन्द्रमा के ऊपर पर्यटन करता है।२४

नक्षत्रेभ्यो बुधश्चोर्द्ध्वं बुधादूर्द्ध्वं तु भार्गवः ।
वक्रस्तु[3] भार्गवादूर्द्ध्वं वक्रादूर्द्ध्वं बृहस्पतिः ॥२५

नक्षत्रों से ऊपर बुध और बुध से ऊपर शुक्र, शुक्र से ऊपर मंगल और मंगल से ऊपर बृहस्पति भ्रमण करते हैं।२५

तस्माच्छनैश्चरोऽप्यूर्द्ध्वं तस्मात्सप्तर्षिमण्डलम् ।
ऋषीणाञ्चैव सप्तानां ध्रुवश्चोर्द्ध्वं व्यवस्थितः ॥२६

---

१. उपरिष्टाच्च तेषां ये इति पा०। २. शुक्रः शीघ्रगा दक्षिणायने इति पा०। ३. शनिस्तु इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बृहस्पति से ऊपर शनैश्चर, उससे ऊपर संप्तर्षिमण्डल और सातों ऋषियों के ऊपर ध्रुव व्यवस्थित है।२६

योजनानां सहस्राणि भास्करस्य रथो नव।
ईषादण्डस्तथा तस्य द्विगुणो द्विजसत्तमाः ॥२७

द्विजश्रेष्ठो! सूर्य का रथ नौ हजार योजन है और उसका ईषादण्ड (जिसमें घोड़े जुतते हैं) उससे द्विगुण होता है।२७

साद्धं कोटिस्तथासप्त नियुतान्यधिकानि तु।
योजनानान्तु तस्याक्षस्तत्र चक्रं प्रतिष्ठितम् ॥२८

डेढ़ करोड़ तथा सात लाख योजन उस रथ का अक्ष (धुरा) है, जिसमें चक्र (पहिया) प्रतिष्ठित है।२८

[1]त्रिनाभिसप्ते पञ्चारे षण्णेमिन्यक्षयात्मके।
संवत्सरमयं कृत्स्नं कालचक्रं प्रतिष्ठितम् ॥२९

उस चक्र में तीन नाभि, पाँच अरे एवं छह नेमि हैं। इसमें सम्पूर्ण संवत्सरमय कालचक्र प्रतिष्ठित है।२९

चत्वारिंशत्सहस्राणि द्वितीयाक्षो[2] व्यवस्थितः।
[3]पञ्चाशयानि साद्धानि योजनानि द्विजोत्तमाः ॥३०

द्विजोत्तमगण! साढ़े पचास योजन अधिक चालीस हजार योजन दूसरे अक्ष का परिमाण है।३०

अक्षप्रमाणमुभयोः प्रमाणं तद्युगार्द्धयोः।
[4]ह्रस्वोक्षस्तद्युगार्द्धेन ध्रुवाधारो रथस्य तु ॥३१

जो अक्ष का परिमाण है, वही दोनों युगार्धों का है। क्षुद्र अक्ष का परिमाण युगार्ध के तुल्य है। रथ का आधार ध्रुव है।३१

द्वितीयेऽक्षे तु तच्चक्रं संस्थितं मानसाचले।
हयाश्च सप्त च्छन्दांसि तन्नामानि निबोधत ॥३२

द्वितीय अक्ष में वह चक्र मानसाचल में अवस्थित है। उस रथ के सात घोड़े सात छन्द हैं। उनके नाम सुनिये।३२

---

१. त्रिनाभिमति इति पा०। २. द्वितीयोऽपि विवस्वत इति पा० ३. पञ्चान्यानि तु साद्धानि स्यन्दनस्य द्विजोत्तमाः। लक्षप्रमाणमुभयोः प्रमाणं तद्युगार्धयोरिति पा०। ४. तत्परार्द्धयोरिति पा०। ५. भूयोऽक्षस्तद्युगार्द्धे तु इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गायत्री च बृहत्युष्णिक् जगती पंक्तिरेव च ।
अनुष्टुब् त्रिष्टुबप्युक्ता च्छन्दांसि हरयो हरेः ॥३३

गायत्री, बृहती, उष्णिक्, जगती पंक्ति अनुष्टुप् और त्रिष्टुप्—ये छन्द सूर्य के घोड़े माने जाते हैं ।३३

मानसोपरि माहेन्द्री प्राच्यां दिशि महापुरी ।
दक्षिणायां यमस्याथ वरुणस्य तु पश्चिमे ॥३४

मानसपर्वत के ऊपरी भाग में पूर्व दिशा में इन्द्र की महापुरी हैं । दक्षिण दिशा में यम की और पश्चिम दिशा में वरुण की पुरी है ।३४

उत्तरेषु च सोमस्य तन्नामानि निबोधत ।
अमरावती संयमनी सुखा चैव विभावरी ॥३५

उत्तर दिशा में सोम (कुवेर) की पुरी है । इन सब पुरियों के नाम सुनिए—अमरावती, संयमनी, सुखा और विभावरी ।३५

काष्ठागतो दक्षिणतः क्षिप्तेषुरिव सर्पति ।
ज्योतिषां चक्रमादाय देवदेवः पितामहः ॥३६

देवों के देव पितामह (ब्रह्मा) ज्योतिश्चक्र लेकर दक्षिण दिशा में होकर फेंके गये बाण की तरह परिभ्रमण करते हैं ।३६

दिवसस्य रविर्मध्ये सर्वकालं व्यवस्थितः ।
सप्तद्वीपेषु विप्रेन्द्रा निशार्द्धस्य च सम्मुखः ॥३७

विप्रवरो ! इस जम्बूद्वीप में मध्याह्नादिकाल में सूर्य जिस भाव में रहते हैं, सकल द्वीपों में उसी रूप में मध्याह्नादिकाल में अवस्थान करते हैं । अर्थात् प्रातःकाल सम्मुख, मध्याह्न में मस्तक के ऊपर, सायंकाल पश्चात् एवं रात्र्यर्ध काल में निम्न में अवस्थान करते हैं ।३७

उदयास्तमने चैव सर्वकालं तु संमुखे ।
दिशास्वशेषासु तथा विप्रेन्द्रा विदिशासु च ॥३८

विप्रेन्द्रगण ! सभी समय समस्त दिशाओं और विदिशाओं में उदय और अस्त-काल में सूर्य सम्मुख रहते हैं ।३८

कुलालचक्रपर्यन्तं भ्रमत्येष यथेश्वरः[1] ।
करोत्येष यथा रात्रिं विमुञ्चन्मेदिनीं द्विजाः ॥३९

---

१. दिवाकरः । करोत्यहस्तथा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्विजगण ! ये भगवान् सूर्य कुम्हार के चक्र की भाँति घूमते हुए पृथिवी का त्याग करके दिन और रात्रि का सम्पादन करते हैं ।३९

दिवाकरः करैरेतत्पूरितं भुवनत्रयम् ।
त्रैलोक्यं कथितं सद्भिर्लोकानां मुनिपुंगवाः ॥४०

हे मुनिश्रेष्ठगण ! सूर्य के किरणों से ये तीनों लोक परिपूरित हैं, ऐसा सज्जनों का कथन है ।४०

आदित्यमूलमखिलं त्रैलोक्यं नात्र संशयः ।
भवत्यस्माज्जगत्सर्वं[1] सदेवासुरमानुषम् ॥४१

इन तीनों लोकों का मूल सूर्य है, इसमें सन्देह नहीं, सूर्य से ही देवता, असुर और मनुष्य सहित यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है ।४१

रुद्रेन्द्रोपेन्द्रचन्द्राणां विप्रेन्द्राणां दिवौकसाम् ।
द्युतिमान्द्युतिमत्कृत्स्नमजयत्सार्वलौकिकम् ॥४२

रुद्र, इन्द्र, विष्णु, चन्द्र, विप्रेन्द्र और देवताओं में सूर्य ही सबसे अधिक कान्तिमान् है । सूर्य समस्त लोक के कान्तिमान् पदार्थ-समूह से बढ़कर है ।४२

सर्वात्मा सर्वलोकेशो महादेवः प्रजापतिः ।
सूर्य एष तु[2] लोकस्य मूलं परमदैवतम् ॥४३

ये सूर्य सबके आत्मा, सम्पूर्ण लोक के ईश्वर, महादेव, प्रजापति, त्रिलोकी के मूल और परम देवता हैं ।४३

द्वादशान्ये तथादित्या देवास्ते येऽधिकारिणः ।
निर्वहन्ति वदन्त्यस्य तदंशा विष्णुमूर्त्तयः ॥४४

अन्य जो बारह आदित्य हैं, वे उपासकों की मुक्ति देते हैं । उन्हें ही मनीषीगण विष्णु की मूर्ति कहते हैं ।४४

सर्वे नमस्यन्ति सहस्रबाहुं गन्धर्वयक्षोरगकिन्नराद्याः ।
यजन्ति यज्ञैर्विविधैर्मुनीन्द्राश्छन्दोमयं ब्रह्ममयं पुराणम् ॥४५

गन्धर्व, यक्ष, सर्प, किन्नर आदि सभी सहस्रकिरण (सूर्य) को नमस्कार करते हैं । मुनीन्द्रगण अनेक प्रकार के यज्ञों द्वारा छन्दोमय, ब्रह्ममय एवं पुरातन पुरुष (सूर्य) की आराधना करते हैं ।४५

१. कृत्स्नमिति पा० । २. द्युतिर्द्युतिमतां कृत्स्नं यत्तेजः सार्वकालिकम् इति पा० । ३. त्रिलोकस्य इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे ज्योतिषां सन्निवेशे × एकचत्वारिंशोऽध्याय ॥४१

श्री कूर्मपुराण में ज्योतिर्गणों के वर्णन-प्रसंग में एकतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४१॥

द्वाचत्वारिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

सरथोऽधिष्ठितो देवैरादित्यैर्मुनिभिस्तथा ।
गन्धर्वैरप्सरोभिश्च ग्रामणीसर्पराक्षसैः ॥१

सूत बोले—भगवान् सूर्य का वह रथ देवता, आदित्य, मुनि, गन्धर्व अप्सरा एवं श्रेष्ठ सर्पों तथा राक्षसों से अधिष्ठित है ।१

[1]धातार्यमा च मित्रश्च वरुणः शक्र एव च ।
विवस्वानथ पूषा च पर्ज्जन्यश्चांशुरेव च ॥२
भगस्त्वष्टा च विष्णुश्च द्वादशैते दिवामराः ।
आप्याययन्ति वै भानुर्वसन्तादिषु वै क्रमात् ॥३

धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, इन्द्र, विवस्वान्, पूषा, पर्जन्य, अंशु, भग, त्वष्टा और विष्णु—ये बारह आदित्य कहलाते हैं । सूर्य क्रमशः वसन्त आदि ऋतुओं में इन्हें आप्यायित करते हैं ।२-३।

पुलस्त्यः पुलहश्चात्रिर्वसिष्ठश्चाङ्गिरा भृगुः ।
भरद्वाजो गौतमश्च कश्यपः क्रतुरेव च ॥४
जमदग्निः कौशिकश्च मुनयो ब्रह्मवादिनः ।
स्तुवन्ति देवं विविधैश्छन्दोभिस्ते यथाक्रमम् ॥५

पुलस्त्य, पुलह, अत्रि, वसिष्ठ, अंगिरा, भृगु, भरद्वाज, गौतम, कश्यप, क्रतु, जमदग्नि, कौशिक—ये ब्रह्मवादी मुनि विविध छन्दों (मन्त्रों) से क्रमशः सूर्यदेव (बारहों आदित्यों) की स्तुति करते हैं ।४-५।

× चत्वारिंशः लि० पु० । १. वसुभिरिति पा० । २. धातार्यमाथ इति पा० । ३. पर्यन्यश्चांश एव चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रथकृच्च रथौजाश्च रथचित्रः सुबाहुकः ।
रथस्वनोऽथ वरुणः सुषेणः सेनजित्तथा ॥६
तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च कृतजि[1]त् सत्यजित्तथा ।
ग्रामण्यो देवदेवस्य कुर्वतेऽभीषुसंग्रहम् ॥७

रथकृत्, रथौजा, रथचित्र, सुबाहुक, रथस्वन, वरुण, सुषेण, सेनजित्, तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, कृतजित्, सत्यजित् और ग्रामणी सूर्यदेव की रश्मियों का संग्रह करते हैं।६-७।

अथ हेतिः प्रहेतिश्च पौरुषेयो वधस्तथा ।
सर्पो व्याघ्रस्तथापश्च वातो विद्युद्दिवाकरः ॥८
ब्रह्मोपेतश्च विप्रेन्द्रा यज्ञोपेतस्तथैव च ।
राक्षसप्रवरा ह्येते प्रयान्ति पुरतः क्रमात् ॥९

हे विप्रेन्द्रगण ! हेति, प्रहेति, पौरुषेय, वध, सर्प, व्याघ्र, आप वात, विद्युत्, दिवाकर, ब्रह्मोपेत, यज्ञोपेत—ये राक्षसश्रेष्ठ बारह आदित्यों के आगे-आगे क्रमशः चलते हैं।८-९।

वासुकिः क[2]ङ्कनीलश्च तक्षकः सर्पपुङ्गवः ।
एलापत्रः शङ्खपालस्तथैरावतसंज्ञितः ॥१०
धनञ्जयो महापद्मस्तथा कर्कोटको द्विजाः ।
कम्बलोश्वतरश्चैव वहन्त्येनं यथाक्रमम् ॥११

द्विजवृन्द ! वासुकि, कङ्कनील, तक्षक, सर्पपुंगव, एलापत्र, शंखपाल, ऐरावत, धनञ्जय, महापद्म, कर्कोटक तथा कम्बलोश्वतर—ये नागगण क्रमशः बारह सूर्यों का वहन करते हैं।१०-११।

तुम्बुरुर्नारदो हाहाहूहूर्विश्वावसुस्तथा ।
उग्रसेनोऽथ सुरुचिरर्वावसुस्तथापरः ॥१२
चित्रसेनस्तथोर्णायुर्धृतराष्ट्रो द्विजोत्तमाः ।
सूर्यवर्चा द्वादशैते गन्धर्वा गायनावराः ॥१३

द्विजश्रेष्ठो ! तुम्बुरु, नारद, हाहा, हूहू, विश्वावसु, उग्रसेन, सुरुचि, अर्वावसु, चित्रसेन, ऊर्णायु, धृतराष्ट्र और सूर्यवर्चा—ये बारह गन्धर्व द्वादशादित्य के श्रेष्ठ गायक हैं।१२-१३।

---

१. रथजिदिति पा० । २. कङ्कनीरश्चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गायन्ति गानैर्विविधैर्भानुं षड्जादिभिः क्रमात् ।
[1]ऋतुस्थलाप्सरोवर्या तथान्या पुञ्जिकस्थला ॥१५
मेनका सहजन्या च प्रम्लोचा च द्विजोत्तमाः ।
अनुम्लोचा च विश्वाची घृताची[2] चोर्वशी तथा ॥१५
अन्या च पूर्वचित्तिः स्याद्रम्भा चैव तिलोत्तमा ।
ताण्डवैर्विविधैरेनं वसन्तादिषु वै क्रमात् ॥१६

ये क्रमशः षड्ज आदि स्वरों में विविध प्रकार के गाने सूर्य के निकट गाते हैं। द्विजश्रेष्ठो ! ऋतुस्थला, पुञ्जिकस्थला, मेनका, सहजन्या, प्रम्लोचा, अनुम्लोचा, विश्वाची, घृताची, उर्वशी, पूर्वचित्ति, रम्भा, तिलोत्तमा—ये श्रेष्ठ अप्सरायें वसन्त आदि ऋतुओं में क्रमशः द्वादशादित्य के पास अनेक प्रकार केनृत्य करती हैं।१४-१६।

तोषयन्ति महादेवं भानुमात्मानमव्ययम् ।
एवं देवा वसन्त्यर्के द्वौ द्वौ मासौ क्रमेण तु ॥१७

ये महान् देव, आत्मस्वरूप, अविनाशी सूर्य को नृत्यों से सन्तुष्ट करती हैं। इस प्रकार वसन्तादि दो-दो मास क्रम से, देवगण सूर्य में वास करते हैं।१७

सूर्यमाप्याययन्त्येते तेजसा तेजसां निधिम् ।
ग्रथितैस्तैर्वचोभिस्तु स्तुवन्ति मुनयो रविम् ॥१८

ये अपने तेज से तेजोनिधि सूर्य को आप्यायित करते हैं। सूर्यरथस्थित मुनिगण अपने-अपने रचित वाक्यों से सूर्य की स्तुति करते हैं।१८

गन्धर्वाप्सरसश्चैनं नृत्यगेयैरुपासते ।
ग्रामणीयक्षभूतानि कुर्वतेऽभीषु संग्रहम् ॥१९

गन्धर्व और अप्सरायें नृत्य और गीतों से उनकी उपासना करते हैं। ग्रामणी और यक्ष प्रभृति भूतगण सूर्य की रश्मि संग्रह करते हैं।१९

सर्पा वहन्ति देवेशं यातुधानाः प्रयान्ति च ।
वालखिल्या नयन्त्यस्तं परिवार्योदयाद्रविम् ॥२०

सर्पगण सूर्यदेव का वहन करते हैं। राक्षसगण आगे-आगे चलते हैं। वालखिल्य मुनिगण सूर्य को वेष्टित करके उदय से अस्त तक पहुँचाते हैं।२०

---

१. विधिधैर्नागैर्भानुं षड्जर्षभैरिति, षड्धातुषु क्रमादिति पा०। २. कृतस्थला इति ऋतुस्थला इति पा०। ३. घृताची च विश्वाचीति पा०।

CC-0.Panjni Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एते तपन्ति वर्षन्ति भान्ति वान्ति सृजन्ति तु ।
भूतानामशुभं कर्म व्यपोहन्तीति कीर्तिताः ॥२१

ये द्वादशादित्य ताप, वर्षा, प्रकाश, वहन तथा सृजन करते हैं । प्राणियों के अशुभ कर्म को नष्ट करते हैं ऐसे कीर्तित हुए हैं ।२१

एते सहैव सूर्येण भ्रमन्ति दिवि भानुगाः[1] ।
विमाने च स्थिता नित्यं कामगे वातरंहसि ॥२२

ये सूर्य के साथ ही आकाश में भ्रमण करते हैं । इच्छानुसार चलने वाले तथा वायु के समान वेगवाली विमान में ये नित्य स्थित रहते हैं ।२२

वर्षन्तश्च तपन्तश्च ह्लादयन्तश्च वै क्रमात्[2] ॥
गोपायन्तीह भूतानि सर्वाणीह युगक्रमात् ॥२३

ये वर्षा, ताप और आह्लादित करते हुए यहाँ युगानुसार सभी प्राणियों की रक्षा करते हैं ।२३

एतेषामेव देवानां यथावीर्यं यथातपः ।
यथायोगं यथासत्त्वं स एष तपति प्रभुः ॥२४

इन्हीं देवों के पराक्रम, तपस्या, योग और बल के अनुसार ये प्रभु सूर्य ताप दान करते हैं ।२४

अहोरात्रव्यवस्थानकारणं स प्रजापतिः ।
पितृदेवमनुष्यादीन्स सदाप्यायथद्रविः[1] ॥२६

दिन रात की व्यवस्था के कारण वे प्रजापति रवि पितृगण, देवगण, और मनुष्यगण को सदा परितृप्त करते हैं ।२५

तत्र देवो महादेवो भास्वान्साक्षान्महेश्वरः ।
भासते वेदविदुषां नीलग्रीवः सनातनः ॥२६

वेदवेत्ताओं के मत में वे देव, महादेव, साक्षात् महेश्वर, नीलग्रीव, सनातन सूर्य भासित हो रहे हैं ।२६

स एष देवो भगवान्परमेष्ठी प्रजापतिः ।
स्थानं तद्विदुरादित्ये वेदज्ञा वेदविग्रहाः ॥२७

वही देव भगवान् परमेष्ठी प्रजापति हैं । प्रजापति का अवस्थान सूर्य में है— ऐसा वेदशरीरी वेदज्ञ पुरुष कहते हैं ।२७

---

१. सानुषु, सानुगा इति पा० । २. प्रजाः इति पा० । ३. प्यायते रविरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे × द्वाचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४२

श्रीकूर्मपुराण में बयालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४२॥

●

त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ भुवनकोशवर्णनम्

सूत उवाच

एवमेष महादेवो देवदेवः पितामहः ।
करोति नियतं कालं कालात्मा ह्यैश्वरीं तनुं ॥१

सूत बोले—इस प्रकार ये देवदेव, महादेव, कालात्मा, पितामह सूर्य ही नियत समय पर ईश्वरीय शरीर की सृष्टि करते हैं ।१

तस्य ये रश्मयो विप्राः सर्वलोकप्रदीपकाः ।
तेषां श्रेष्ठाः पुनः[1] सप्तरश्मयो [2]गृहमेधिनः ॥२

विप्रवृन्द ! सात लोक को प्रदीप्त करने वाले उनके जो किरण हैं, उनमें पुनः सात श्रेष्ठ किरण ग्रहोत्पादक हैं ।२

सुषुम्लो हरिकेशश्च विश्वकर्मा तथैव च ।
विश्वश्रवाः पुनश्चान्यः संयद्वसुरतः परः ॥३

अर्वावसुरिति ख्यातः स्वरकः सप्त कीर्त्तिताः ।
सुषुम्नः सूर्यरश्मिस्तु पुष्णाति शिशरद्युतिम् ॥४

उनके नाम हैं—सुषुम्ल, हरिकेश, विश्वकर्मा, विश्वश्रवा, संयद्वसु, अर्वावसु और सप्तम स्वरक हैं । सुषुम्न नामक सूर्यकिरण चन्द्रमा को परिपुष्ट करता है ।३-४।

तिर्यगूर्द्ध्वप्रचारोऽसौ सुषुम्नः परिपठ्यते[3] ।
हरिकेशस्तु यः प्रोक्तो रश्मिर्नक्षत्रपोषकः ॥५

सुषुम्न तिरछा और ऊर्ध्वगामी कहा जाता है । हरिकेश नामक किरण नक्षत्रों का पोषण करता है ।५

× एकचत्वारिंशः लि० पु० । १. पुनश्चण्ड इति पा० । २. ग्रहयोनयः इति पा० । ३. परिवर्णितः इति, परिगीयते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वकर्मा तथा रश्मिर्बुधं पुष्णाति सर्वदा ।
विश्वश्रवास्तु यो रश्मिः शुक्रं पुष्णाति नित्यदा ॥६

विश्वकर्मा नामक किरण बुध का पोषण करता है, विश्वश्रवा नामक किरण शुक्र को नित्य पुष्ट करता है ।६

संयद्वसुरिति ख्यातो यः पुष्णाति स लोहितम् ।
बृहस्पतिं सुपुष्णाति रश्मिरर्वावसुः प्रभुः ॥७

संयद्वसु नामक जो किरण है वह मंगल को पुष्ट करता है । प्रभु अर्वावसु किरण बृहस्पति को सुपुष्ट करता है ।७

शनैश्चरं प्रपुष्णाति सप्तमस्तु स्व[1]रस्तथा ।
एवं सूर्यप्रभावेण सर्वा नक्षत्रतारकाः ॥८
वर्द्धन्ते वर्द्धिता नित्यं नित्यमाप्याययन्ति च ।

सप्तम स्वर नामक किरण शनैश्चर को आप्यायित करता है । इस प्रकार सूर्य के प्रभाव से सभी नक्षत्र और तारे वृद्धि को प्राप्त करते हैं और वृद्धि को प्राप्त करके नित्य (उद्भिज्ज आदि को) आप्यायित करते हैं ।८½

दिव्यानां पार्थिवानाञ्च नैशानाञ्चैव नित्यशः ॥९
आदानान्नित्यमादित्यस्तेजसां तमसामपि ।

दिव्य, पार्थिव और रात्रि के अंधकार एवं तेज का आदान करने के कारण सूर्य आदित्य नाम से अभिहित होते हैं ।९½

आदत्ते स तु नाडीनां सहस्रेण समन्ततः ॥१०
[2]नादेयं चैव सामुद्रं कौप्यं चैव सहस्रदृक् ।
स्थावरं जङ्गमञ्चैव यच्च कुल्यादिकं पयः ॥११

सूर्य सहस्र नाडियों द्वारा चारों ओर से नदी, समुद्र, कूप, स्थावर, जंगम, नहर आदि का जल खींचते हैं ।१०-११।

तस्य रश्मिसहस्रन्तु शीतवर्षोष्णनिस्रवम् ।
तासाञ्चतुःशता नाड्यो वर्षन्ते चित्रमूर्त्तयः ॥१२

उनकी सहस्र रश्मियाँ शीत, वर्षा और गर्मी क्षरित करती हैं एवं (पूर्वोक्त) नाडी समूह के बीच विचित्र मूर्ति चार सौ नाडियों का वर्षण करती हैं ।१२

१. सुराट् तत: इति पा० । २. नादेयांश्चैव सामुद्रान् कूप्यांश्चैव सहस्रधूगिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्र[1]गाश्चैव गाहाश्च काञ्चनाः शातनास्तथा ।
अमृता नामतः सर्वा रश्मयो वृष्टिसर्जनाः ॥१३

चन्द्रमा, गाह, काञ्चन तथा शातन—ये अमृत नाम की सभी रश्मियाँ वृष्टि करने वाली हैं ।१३

हिमोद्धताश्च ता नाड्यो रश्मयो निःसृताः पुनः ।
रेष्यो[2] मेष्यश्च वास्यश्च ह्लादिन्यः सर्जनास्तथा ॥१४

हिम द्वारा उत्क्षिप्त वे नाडियाँ रश्मिरूप में निःसृत होकर रेषी, मेषी, वासी, ह्लादिनी तथा सर्जना नाम से ख्यात हैं ।१४

चन्द्रास्ता नामतः सर्वाः पीतास्ताः स्युर्गभस्तयः ।
शुक्लाश्च कु[3]कुमा[3]श्चैव गावो विश्वभृतस्तथा ॥१५
शुक्लास्ता नामतः सर्वास्त्रिविधा धर्मसर्जनाः ।
समं बिभर्त्ति ताभिः स मनुष्यपितृदेवताः ॥१६

चन्द्रा नाम की ये सब नाडियाँ पीतवर्णा हैं । शुक्ला, कुंकुमा और विश्वभृत् नामक नाडियाँ—ये सब शुक्लवर्णा हैं । उक्त विविध नाडियाँ घाम की सृष्टि करने वाली हैं । उनसे सूर्यदेवता मनुष्य, पितर, और देवताओं का समान रूप से पोषण करते हैं ।१५-१६

मनुष्यानौषधेनेह स्वधया च पितॄनपि ।
अमृतेन सुरान्सर्वांस्त्रींस्त्रिभिस्तर्पयत्यसौ ॥१७

औषध द्वारा मनुष्यों को, स्वधा द्वारा पितृगण को एवं अमृत द्वारा देवसमूह को तृप्त करते हैं । इन विविध पदार्थों से सूर्यदेव तीनों लोक की रक्षा करते हैं ।१७

वसन्ते ग्रीष्मके चैव षड्भिः स तपति प्रभुः ।
शरद्यपि च वर्षास्तु चतुर्भिः संप्रवर्षति ॥१८

वे प्रभु वसन्त एवं ग्रीष्म ऋतु में छह रश्मियों द्वारा ताप दान करते हैं । शरद् ऋतु और वर्षा ऋतु में चार रश्मियों से वृष्टि करते हैं ।१८

हेमन्ते शिशिरे चैव हिममुत्सृजति त्रिभिः ।
वरुणो माधमासे तु सूर्यः पूषा तु फाल्गुने ॥१९

हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में तीन रश्मियों से प्रभु हिम का त्याग करते हैं ।

---

१. चन्द्रगाश्चैव याम्याश्च केतगाः पूतनास्तथा इति, चन्दनाश्चैव जाक्षाश्च कोतला भूतलास्तथा इति पा० । २. रम्यो मेघ्यश्च पोष्णश्च इति, रश्यो मेघ्यश्च पौष्यश्च इति पा० । ३. ककुभश्चैव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरुण नामक सूर्य माघ मास में और पूषा नामक सूर्य फाल्गुन में ताप दान करते हैं।१९

चैत्रे मासे स देवेशो धाता वैशाखतापनः।
[1]ज्यष्ठे मासे भवेदिन्द्रः आषाढे तपते रविः ॥२०

चैत्र मास में देवेश तथा वैशाखमास में धाता ताप देते हैं। ज्येष्ठमास में इन्द्र और आषाढ़ में रवि ताप देते हैं।२०

विवस्वान् श्रावणे मासि प्रौष्ठपद्यां भगः स्मृतः।
[2]पर्जन्यश्चाश्विने मासि कार्तिके मासि भास्करः[3] ॥२१

श्रावण मास में विवस्वान् और भाद्रपद में भगादित्य ताप देते हैं। आश्विनमास में पर्जन्य और कार्तिकमास में भास्कर ताप देते हैं।२१

मार्गशीर्षे भवेन्मित्रः पौषे विष्णुः सनातनः।
पञ्चरश्मिसहस्राणि वरुणस्यार्ककर्मणि ॥२२

आग्रहायण में मित्र तथा पौष में सनातन विष्णु ताप प्रदान करते हैं। सूर्य के कार्य में वरुण सूर्य पाँच हजार रश्मि प्रदान करते हैं।२२

षड्भिः सहस्रैः पूषा तु देवेशः सप्तभिस्तथा।
धाताष्टभिः सहस्रैस्तु नवभिश्च शतक्रतुः ॥२३

पूषा छह सहस्रों द्वारा, देवेश सात सहस्रों द्वारा, धाता आठ सहस्रों द्वारा और शतक्रतु नौ सहस्रों द्वारा ताप दान करते हैं।२३

विवस्वान्दशभिः पाति पात्येकादशभिर्भगः।
सप्तभिस्तपते मित्रस्त्वष्टा चैवाष्टभिस्तपेत् ॥२४

विवस्वान् दस सहस्रों द्वारा, भग ग्यारह सहस्रों द्वारा, मित्र सात सहस्रों द्वारा और त्वष्टा आठ सहस्रों द्वारा ताप देते हैं।२४

अर्यमा दशभिः पाति पर्जन्यो नवभिस्तथा।
षड्भो रश्मिसहस्रस्तु विष्णुस्तपति विश्वधृक् ॥२५

अर्यमा दस सहस्रों द्वारा, पर्जन्य नौ सहस्रों द्वारा और विश्वधर्ता विष्णु छह सहस्र रश्मियों द्वारा ताप देते हैं।२५

---

१. ज्येष्ठामूले पतेदिन्द्रः इति। २. पर्जन्योश्वयुजि त्वष्टा इति पा०। ३. भार्गवः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसन्ते कपिलः सूर्यो ग्रीष्मे काञ्चनसप्रभः ।
श्वेतो वर्षासु विज्ञेयः[1] पाण्डुरः शरदि प्रभुः ॥२६

प्रभु सूर्य वसन्त में कपिलवर्ण, ग्रीष्म में सुवर्णवर्ण, वर्षा में श्वेतवर्ण और शरद् में पाण्डुर वर्ण होते हैं ।२६

हेमन्ते ताम्रवर्णः स्याच्छिशिरे लोहितो रविः ।
ओषधीषु [2]कलां धत्ते स्वधामपि पितृष्वथ ॥२७
सूर्योऽमरेष्वमृतं तु त्रयं त्रिषु नियच्छति ।
अन्ये चाष्टौ ग्रहा ज्ञेयाः [3]सूर्येणाधिष्ठिता द्विजाः ॥२८

वे हेमन्त में ताम्रवर्ण और शिशिर में रक्तवर्ण होते हैं । वे ओषधियों में रश्मि-दान करते है, पितृलोक में स्वधा और देवलोक में अमृत वितरण करते हैं । अतएव सूर्य तीन लोक में तीन पदार्थ प्रदान करते हैं । द्विजगण ! अन्य आठ ग्रह सूर्य में अधिष्ठान करते हैं ।२७-२८।

चन्द्रमाः सोमपुत्रश्च शुक्रश्चैव बृहस्पतिः ।
भौमो मन्दस्तथा राहुः केतुमानपि चाष्टमः ॥२९

चन्द्रमा, बुध, शुक्र, बृहस्पति, मंगल शनि, राहु तथा अष्टम केतु ग्रह हैं ।२९

सर्वे ध्रुवे निबद्धा वै ग्रहास्ते वातरश्मिभिः ।
भ्राम्यमाणा यथायोगं भ्रमन्त्यनु दिवाकरम् ॥३०

ये सब ग्रह ध्रुवतारा में निबद्ध होकर वात रश्मियों द्वारा भ्रमण करते-करते क्रमशः सूर्य का अनुसरण करते हैं ।३०

अलातचक्रवद्यान्ति वातचक्रेरितास्तथा ।
यस्माद्वहति तान्वायुः प्रवहस्तेन स स्मृतः ॥३१

वायुचक्र द्वारा प्रेरित ग्रहगण चक्राकार अंगारचक्र के समान गमन करते हैं। जिस लिए वायु उनका वहन करता है, इसलिए वह प्रवह कहा गया है ।३१

रथस्त्रिचक्रः सोमस्य कुन्दाभास्तस्य वाजिनः ।
वामदक्षिणतो युक्ता दश तेन [4]क्षपाकरः ॥३२

चन्द्रमा के रथ में तीन चक्र होते हैं और कुन्द फूल के समान धवल दस अश्व उसके रथ में बायें-दायें जुतते हैं । इससे वह निशाकर है ।३२

---

१. वर्णेन इति पा० । २. बलं धत्ते इति पा० । ३. सूर्येणाधिकृता इति, सूर्येणाधिगता इति पा० । ४. निशाकर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीथ्याश्रयाणि चरति नक्षत्राणि रविर्यथा ।
ह्रासवृद्धी तु विप्रेन्द्रा [1]ध्रुवाधाराणि सर्वदा ॥३३

हे द्विजवरो ! जिस प्रकार सूर्य नक्षत्र-समूह में भ्रमण करते हैं उसी प्रकार चन्द्रमा भी बाकी (नक्षत्रों के अवस्थान का एक भाग) के आश्रित नक्षत्र-समूह में परिभ्रमण करते हैं। चन्द्रमा में ह्रास और वृद्धि तो ध्रुव के आधार पर सर्वदा होती है ।३३

स सोमः शुक्लपक्षे तु भास्करे परतः स्थिते ।
आपूर्यते परस्यान्ते [2]सततञ्चैव ताः प्रभाः ॥३४

शुक्लपक्ष में सूर्य के पर भाग में स्थित होने पर उसकी प्रभा-राशि के द्वारा चन्द्रमा का ऊपर भाग परिपूर्ण होता है। वही चन्द्रमा की प्रभा है ।३४

क्षीणं[3] पीतं सुरैः सोममाप्याययति नित्यदा ।
एकेन रश्मिना विप्राः सुषुम्लाख्येन भास्करः ॥३५

देवताओं द्वारा पिये जाने पर सोम नित्य क्षीण होते रहते हैं, किन्तु विप्रवृन्द ! सूर्य अपनी एक ही सुषुम्ला नामक रश्मि से उन्हें आप्यायित कर देते हैं ।३५

एषा सूर्यस्य वीर्येण सोमस्याप्यायिता तनुः ।
पौर्णमास्यां स दृश्येत संपूर्णो दिवसक्रमात् ॥३६

सूर्य के तेज से अभिवर्धित चन्द्रमा का शरीर पूर्णिमा को दिवस क्रम से सम्पूर्ण परिलक्षित होता है ।३६

संपूर्णमर्द्धमासेन तं सोममृतात्मकम् ।
पिबन्ति देवता विप्रा यतस्तेऽमृतभोजनाः ॥३७

विप्रवृन्द ! आधे मास में देवता लोग उस अमृत स्वरूप सम्पूर्ण चन्द्र को पी जाते हैं, क्योंकि उनका अमृत ही भोजन है ।३७

ततः पञ्चदशे भागे किञ्चिच्छिष्टे कलात्मके ।
अपराह्णे पितृगणा जघन्यं पर्युपासते ॥३८

अनन्तर चन्द्रमा के पन्द्रह भागों का क्षय हो जाता है और एक कला बच जाती है। अपराह्ण में पितृगण चन्द्रमा की शेष कला का भोग करते हैं ।३८

पिबन्ति द्विलवं[4] कालं शिष्टा तस्य कला तु या ।
सुधामृतमयीं पुण्यां तामिन्दोरमृतात्मिकाम् ॥३९

---

१. रश्मीनां सूर्यवत्स्मृत इति पा० । २. सततं दिवसक्रमादिति पा० । ३. क्षीणायितमिति पा० । ४. विकलमिति, द्विकलमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रमा की जो अमृतमयी पवित्र कला शेष रहती है, उसे दो लव (३६ निमेष) काल तक पितृगण पीते हैं ।३९

निःसृतं तदमावास्यां गभस्तिभ्यः स्वधामृतम् ।
मासतृप्तिमवाश्यन्ति[1] पितरः सन्ति निर्वृताः ॥४०

अमावस्या को पितृगण उस रश्मि-निःसृत स्वधारूपिणी अमृतमयी कला के अग्रभाग को मासान्त में लाभ करके सुखी होते हैं ।४०

न सोमस्य विनाशः स्यात्सुधा चैव[2] सुपीयते ।
एवं सूर्यनिमित्तोऽस्य क्षयो वृद्धिश्च सत्तमाः ॥४१

अमृत के पी लेने पर भी चन्द्रमा का विनाश नहीं होता है। हे सज्जनगण ! सूर्य के कारण चन्द्रमा का क्षय और वृद्धि होती रहती है ।४१

सोमपुत्रस्य चाष्टाभिर्वाजिभिर्वायुवेगिभिः ।
[3]वारिजैः स्यन्दनो युक्तस्तेनासौ याति सर्वतः ॥४२

चन्द्र पुत्र (बुध) के रथ में वायु के समान वेगशाली, जलोत्पन्न आठ घोड़े जुतते हैं, उससे बुध सर्वत्र गमन करते हैं ।४२

शुक्रस्य भूमिजैरश्वैः स्यन्दनो दशभिर्वृतः ।
अष्टभिश्चापि भौमस्य रथो हैमः सुशोभनः ॥४३

शुक्र का रथ भूमि से उत्पन्न दस घोड़ों से युक्त है। मंगल का स्वर्णमय एवं अति सुन्दर रथ आठ घोड़ों से युक्त है ।४३

बृहस्पते रथोऽष्टाश्वः स्यन्दनो हेमनिर्मितः ।
रथो रूप्यमयोऽष्टाश्वो मन्दस्यायसनिर्मितः ॥४४

बृहस्पति का रथ सुवर्णनिर्मित तथा आठ अश्वों से युक्त है। शनि का रथ लौहनिर्मित, रूप्यमय तथा आठ अश्वों से युक्त है ।४४

स्वर्भानोर्भास्कराराश्च तथाष्टाभिर्हयैर्वृतः ।
एते महाग्रहाणां वै समाख्याता रथाश्च वै ॥४५

सूर्य शत्रु राहु का भी रथ आठ अश्वों से युक्त है। महाग्रहों के ये रथ बता दिये ।४५

---

१. मवाप्यास्यामिति, ममावस्यामिति पा० । २. देवैस्तु पीयते इति पा० । ३. वाजिभिरिति, वायुभिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वे ध्रुवे महाभागा [1]निबद्धा वायुरश्मिभिः ।
ग्रहर्क्षताराधिष्ण्यानि ध्रुवे बद्धान्यशेषतः ।
भ्रमन्ति भ्रामयन्त्येनं सर्वाण्यनिलरश्मिभिः ॥४६

हे महाभागो ! सभी रथ वायुरश्मि से ध्रुवतारा में बँधे हुए हैं। ग्रह, नक्षत्र, तारा—ये सब ध्रुवतारा में निबद्ध होकर वायुरश्मि के द्वारा भ्रमण करते हैं और भ्रमण कराते हैं ।४६

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनकोशे × त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३

श्रीकूर्मपुराण में भुवनकोश-वर्णन-प्रसंग में तैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४३॥

●

चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

ध्रुवादूर्ध्वं महर्लोकः कोटियोजनविस्तृतः ।
कल्पाधिकारिणस्तत्र संस्थिता द्विजपुङ्गवाः ॥१

सूत बोले—ध्रुवतारा से ऊपर एक करोड़ योजन विस्तृत महर्लोक है। द्विज-श्रेष्ठों ! जो मोक्ष के अधिकारी हैं, वे ही वहाँ वास करते हैं ।१

जनलोको महर्लोकात्तथा कोटिद्वयात्मकः ।
सनकाद्यास्तथा तत्र संस्थिता ब्रह्मणः[2] सुताः ॥२

महर्लोक से ऊपर दो करोड़ योजन में फैला हुआ जनलोक है। वहाँ सनक, सनन्दन आदि ब्रह्मपुत्र निवास करते हैं ।२

जनलोकात्तपोलोकः कोटित्रयसमन्वितः ।
वैराजास्तत्र वै देवाः स्थिता दाहविवर्जिताः ॥३

जनलोक से ऊपर तपोलोक तीन करोड़ योजन विस्तृत है। वहाँ वैराज नामक देवगण सन्तापरहित होकर वास करते हैं ।३

---

१. वातरश्मिरिति, निबाद्धाम्बुदरश्मिभिरिति पा० । निबद्धा अम्बुदरश्मिभिरत्र सन्धिः सोढव्य आर्षत्वात् । × द्विचत्वारिंशः लि० पु० । २. देहवर्जिताः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राजापत्यात्सत्यलोकः कोटिषट्केन संयुतः ।
[1]अपुनर्मारको नाम ब्रह्मलोकस्तु स स्मृतः ॥४

प्राजापत्यलोक से ऊपर सत्यलोक छह करोड़ योजन विस्तृत है। उसे अपुनर्मारक तथा ब्रह्मलोक भी कहते हैं ।४

अत्र लोकगुरुर्ब्रह्मा विश्वात्मा विश्वभावनः[2] ।
आस्ते स योगिभिर्नित्यं पीत्वा योगामृतं परम् ॥५

यहाँ लोकगुरु, विश्वात्मा, विश्वभावन, ब्रह्मा नित्य परम योगामृत पान करके योगियों के साथ रहते हैं ।५

[3]वसन्ति यतयः शान्ता नैष्ठिका ब्रह्मचारिणः ।
योगिनस्तापसाः सिद्धा जापकाः परमेष्ठिनः ॥६

वहाँ शान्त, नैष्ठिक, ब्रह्मचारी, योगी, तपस्वी, सिद्ध, जापक, परमेष्ठी निवास करते हैं ।६

[4]द्वारं तद्योगिनामेकं गच्छतां परमं पदम् ।
तत्र गत्वा न शोचन्ति स विष्णुः स च शंकरः ॥७

परम पद के लाभार्थी योगियों का वह एक मात्र द्वार है। वहाँ जाकर कोई शोक नहीं करता है, क्योंकि वही विष्णु है और वही शंकर स्वरूप है ।७

सूर्यकोटिप्रतीकाशं पुरं तस्य दुरासदम् ।
न मे वर्णयितुं शक्यं ज्वालामालासमाकुलम् ॥८

उसका दुष्प्राप्य पुर करोड़ों सूर्य के समान है। ज्वाला-माला से व्याप्त उस पुर का वर्णन करना मेरे वश की बात नहीं है ।८

तत्र नारायणस्यापि भवनं ब्रह्मणः पुरे ।
शेते तत्र हरिः श्रीमान्योगी मायामयः परः ॥९

वहाँ ब्रह्मपुर में नारायण का भी भवन है। उसमें मायामय, परम योगी श्रीमान् हरि शयन करते हैं ।९

स विष्णुलोकः कथितः पुनरावृत्तिवर्जितः ।
यान्ति तत्र महात्मानो ये प्रपन्ना जनार्दनम् ॥१०

---

१. अपुनर्नरकास्तत्र इति पा० । २. विश्वतोमुखः इति पा० । ३. विशन्तीति पा० । ४. ज्ञानमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह पुनर्जन्म निवारक विष्णुलोक कहा गया है। वहाँ वे लोग जाते हैं जो जनार्दन (विष्णु) के शरणागत हैं।१०

ऊर्द्ध्वं तद्ब्रह्मसदनात्पुरं ज्योतिर्मयं शुभम्।
वह्निना च परिक्षिप्तं तत्रास्ते भगवान् हरः ॥११

उस ब्रह्मसदन से ऊपर एक पवित्र ज्योतिर्मय पुर है, जो अग्नि से व्याप्त है। वहाँ भगवान् शंकर रहते हैं।११

देव्या सह महादेवश्चिन्त्यमानो मनीषिभिः।
योगिभिः शतसाहस्रैर्भूतैः रुद्रैश्च संवृतः ॥१२

मनीषियों एवं सौ हजार योगियों द्वारा चिन्तन किये जाते हुए महादेव भूतों और रुद्रों से घिरकर (पार्वती के साथ) निवास करते हैं।१२

तत्र ते यान्ति निरता भक्ता वै ब्रह्मचारिणः।
महादेवपराः शान्तास्तापसाः सत्यवादिनः ॥१३
निर्ममा निरहङ्काराः कामक्रोधविवर्ज्जिताः।
द्रक्ष्यन्ति ब्राह्मणा युक्ता रुद्रलोकः स वै स्मृतः ॥१४

योगनिरत, भक्त, ब्रह्मचारी, महादेवपरायण, शान्त, सत्यवादी तपस्वी, ममता-शून्य, अहंकाररहित, काम-क्रोध से वर्जित ब्राह्मण उस स्थान का दर्शन करते हैं। उसे रुद्रलोक कहा गया है।१३-१४।

एते सप्त महालोकाः पृथिव्याः परिकीर्त्तिताः।
महातलादयश्चाधः पातालाः सन्ति वै द्विजाः ॥१५

पृथिवी से लेकर ये सात महालोक बताये गये हैं। द्विजगण! महातल आदि पाताल नीचे विद्यमान हैं।१५

महातलं[1] च पातालं सर्वरत्नोपशोभितम्।
प्रासादैर्विविधैः शुभ्रैर्देवतायतनैर्युतम् ॥१६

महातल पाताल समस्त रत्नों से शोभित है। अनेक प्रकार के शुभ्र प्रासादों और देवालयों से वह युक्त है।१६

अनन्तेन च संयुक्तं मुचुकुन्देन धीमता।
नृपेण बलिना चैव पातालं स्वर्गवासिना[2] ॥१७

---

१. महातलं हेमतलमिति पा०। २. स्वर्गवासिनामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ अनन्तदेव, धीमान् मुचुकुन्द और पातालरूप स्वर्ग निवासी राजा बलि निवास करते हैं।१७

शैलं रसातलं विप्राः शार्करं हि तलातलम् ।
पीतं सुतलमित्युक्तं वितलं विद्रुमप्रभम् ॥१८

विप्रवृन्द ! रसातल पर्वतमय, तलातल कंकड़ युक्त, सुतल पीतवर्ण और नितल मूँगे की कान्ति से युक्त है ।१८

सितं च वितलं प्रोक्तं तलञ्चैव सितेतरम् ।
सुपर्णेन मुनिश्रेष्ठास्तथा वासुकिना शुभम् ॥१९
रसातलमिति ख्यातं तथान्यैश्च निषेवितम् ।
विरोचन हिरण्याक्षतारकाद्यैश्च[1] सेवितम् ॥२०
तलातलमिति ख्यातं सर्वशोभासमन्वितम् ।

वितल श्वेतवर्ण कहा गया है और तल कृष्णवर्ण । मुनिश्रेष्ठो! रसातल गरुड, वासुकि तथा अन्यान्य महात्माओं से सेवित है । विरोचन, हिरण्याक्ष, तारक आदि से सेवित तलातल समस्त शोभाओं से समन्वित है ।१९-२०½।

वैनतेयादिभिश्चैव कालनेमिपुरोगमैः ॥२१
पूर्वदेवैः समाकीर्णं सुतलञ्च तथा परैः ।
वितलं यवनाद्यैश्च तारकाग्निमुखैस्तथा ॥२२

गरुड आदि पक्षी, कालनेमि आदि असुरगण पूर्वदेवों तथा अन्य देवों से व्याप्त सुतल में वास करते हैं । तारक और अग्निमुख आदि यवनादि द्वारा नितल व्याप्त है ।२१-२२।

[2]जम्भकाद्यैस्तथा नागैः प्रह्लादेनासुरेण च ।
वितलं चैव विख्यातं कम्बलाहीन्द्रसेवितम् ॥२३

जम्भक आदि नागों, असुर प्रह्लाद, कम्बल तथा अहीन्द्र से सेवित वितल नामक पाताल विख्यात है ।२३

महाजम्भेन वीरेण हयग्रीवेण धीमता ।
शंकुकर्णेन सम्भिन्नं तथा नमुचिपूर्वकैः ॥२४
तथान्यैर्विविधैर्नागैस्तलञ्चैव सुशोभनम् ।
तेषामधस्तान्नरकाः कूर्माद्याः[3] परिकीर्त्तिताः ॥२५

---

१. तक्षकाद्यैश्च इति पा० । २. महान्तकाद्यैर्नागैश्च इति पा० । ३. मायाद्या इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुशोभन तल नामक पाताल वीर महाजम्भ, धीमान् हयग्रीव, शंकुकर्ण और नमुचि असुरगण तथा अन्य विविध नागों से अधिष्ठित है। उनके नीचे कूर्म आदि नरकों का अवस्थान कहा गया है।२४-२५।

पापिनस्तेषु पच्यन्ते न ते वर्णयितुं क्षमाः।
पातालानामधश्चास्ते शेषाख्या वैष्णवी तनुः ॥२६

उन नरकों में पापी लोग यातना भोग करते हैं। उनका विषय वर्णन करने योग्य नहीं है। पातालों के नीचे 'शेष' नामक विष्णुमूर्ति अवस्थित है।२६

कालाग्निरुद्रो योगात्मा नारसिंहोऽपि माधवः।
योऽनन्तः पठ्यते देवो नागरूपी जनार्दनः।
तदाधारमिदं सर्वं स कालाग्निं समाश्रितः ॥२७

जिसे कालाग्निरुद्र, योगात्मा, नरसिंह, माधव, अनन्तदेव और नागरूपी जनार्दन कहते हैं, उसी के आधार पर यह सम्पूर्ण जगत् है। वह कालाग्नि का आश्रय लिए हुए है।२७

तमाविश्य महायोगी [1]कालस्तद्वदनोषितः।
विषज्वालामयश्चेशो जगत् संहरति स्वयम् ॥२८

उसके वदन से उत्पन्न महायोगी काल उसमें आविष्ट होकर अवस्थित है। विष की ज्वालामय वह ईश स्वयं जगत् का संहार करता है।२८

[2]सहस्रमारिप्रतिमः संहर्त्ता शंकरो भवः।
तामसी शाम्भवी मूर्तिः कालो लोकप्रकालनः ॥२९

सहस्रमारक के समान संहर्ता शंकर भव ही वह है। शंकर की तामसी मूर्ति काल तथा लोकसंहारकारक है।२९

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनविन्यासे × चतुश्चत्वारिं—
शोऽध्यायः ॥४४

श्रीकूर्मपुराण में भुवन विन्यास प्रसंग में चौवालीसवां अध्याय समाप्त ॥४४

---

१. कालतत्त्वे व्यवस्थितः इति, वदनोत्थित इति पा०। २. सहस्रमायोऽप्रतिमं इति पा०। ×त्रिचत्वारिंशः लि० पु०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ भुवनकोशे पर्वतादिसंख्या

सूत उवाच

एतद्ब्रह्माण्डमाख्यातं चतुर्दशविधं महत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि भूर्लोकस्यास्य निर्णयम् ॥१

सूत बोले—यह महान् ब्रह्माण्ड चौदह प्रकार का कहा गया है। इसके बाद इस भूर्लोक का निर्णय करूँगा ।१

जम्बूद्वीपः प्रधानोऽयं प्लक्षः शाल्मलिरेव च ।
कुशः क्रौञ्चश्च शाकश्च पुष्करश्चैव[1] सप्तमः ॥२
एते सप्त महाद्वीपाः समुद्रैः सप्तभिर्वृताः ।
द्वीपाद्द्वीपो महानुक्तः सागराच्चापि सागरः ॥३

भूर्लोक में यह जम्बूद्वीप प्रधान है। अनन्तर प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौञ्च, शाक और सातवाँ पुष्कर द्वीप हैं। ये सातों महाद्वीप सात समुद्रों से घिरे हुए हैं। एक द्वीप से दूसरा द्वीप महान् है एवं एक सागर से दूसरा सागर महान् है ।२-३।

क्षारोदेक्षुरसोदश्च सुरोदश्च घृतोदकः ।
दध्योदः क्षीरसलिलः स्वादूदश्चेति सागराः ॥४

क्षारोद, इक्षुरसोद, सुरोद, घृतोदक, दध्योद, क्षीरसलिल और स्वादूद ये सात समुद्र हैं ।४

पञ्चाशत्कोटिविस्तीर्णा ससमुद्रा धरा स्मृता ।
द्वीपैश्च सप्तभिर्युक्ता योजनानां [2]समन्ततः ॥५

समुद्र वेष्टित पृथ्वी पचास करोड़ योजन विस्तृत और चारों ओर सात द्वीपों से युक्त है ।५

जंबूद्वीपः समस्तानां मध्ये[3] चैव व्यवस्थितः ।
तस्य मध्ये महामेरुर्विश्रुतः कनकप्रभः ॥६

---

१. पुष्कलश्चेवेति पा० । २. समासत इति पा० । ३. द्वीपानां मध्यमः शुभ इति, मध्यतः शुभ इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी द्वीपों के मध्य में जम्बू द्वीप व्यवस्थित है। उसके बीच में स्वर्णप्रभा वाला महामेरु प्रसिद्ध है ।६

चतुरशीतिसाहस्रो योजनैस्तस्य चोच्छ्रयः ।
प्रविष्टः षोडशाधस्ताद्द्वात्रिंशन्मूर्ध्नि विस्तृतः ॥७

उसकी ऊँचाई चौरासी हजार योजन है। नीचे वह सोलह योजन गहरा है और ऊपर बत्तीस योजन विस्तृत है ।७

मूले षोडशसाहस्रो विस्तारस्तस्य सर्वतः ।
भूपद्मस्यास्य शैलोऽसौ कर्णिकात्वेन संस्थितः ॥८

मूल में उसके चारों तरफ सोलह हजार योजन विस्तार है। यह पर्वत भूपद्म की कर्णिका के रूप में अवस्थित है ।८

हिमवान् हेमकूटश्च निषधश्चास्य दक्षिणे ।
नीलः श्वेतश्च शृङ्गी च उत्तरे वर्षपर्वताः ॥९

हिमालय, हेमकूट और निषध पर्वत इसके दक्षिण भाग में स्थित है। उत्तर भाग में नील, श्वेत और शृंगी नामक वर्ष पर्वत विद्यमान हैं ।९

लक्षप्रमाणौ द्वौ मध्ये दशहीनास्तथापरे ।
सहस्रद्वितयोच्छ्रायास्तावद्विस्तारिणश्च ते ॥१०

इनमें दो पर्वत (हिमालय और हेमकूट) लक्ष योजन परिमित हैं और अन्य पर्वत उनकी अपेक्षा दश योजन न्यून हैं। इनकी ऊँचाई दो सहस्र योजन और उतनी ही चौड़ाई भी है ।१०

भारतं प्रथमं वर्षं ततः किम्पुरुषं स्मृतम् ।
हरिवर्षं तथैवान्यन्मेरोर्दक्षिणतो द्विजाः ॥११

हे विप्रगण! प्रथम भारतवर्ष, अनन्तर किम्पुरुष वर्ष और तदनन्तर हरिवर्ष सुमेरु के दक्षिण में अवस्थित हैं ।११

रम्यकञ्चोत्तरं वर्षं तस्यैवानु हिरण्मयम् ।
उत्तरे कुरवश्चैव यथैते भारतास्तथा ॥१२

मेरु के ऊपर भाग में रम्यक और हिरण्मय वर्ष तत्पश्चात् उत्तर कुरु वर्ष हैं। ये सब भारतवर्ष के समान हैं ।१२

नवसाहस्रमेकैकमेतेषां द्विजसत्तमाः ।
इलावृतञ्च तन्मध्ये तन्मध्ये मेरुरुच्छ्रितः ॥१३

१. दक्षिणमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे द्विजश्रेष्ठगण ! इनमें एक-एक वर्ष नौ हजार योजन विस्तृत हैं। उनके मध्य स्थल में इलावृत वर्ष और उसके मध्य में सुमेरु उन्नतभाव से अवस्थित है।१३

मेरोश्चतुर्दशं तत्र नवसाहस्रविस्तरम् ।
इलावृतं महाभागाश्चत्वारस्तत्र पर्वताः ॥१४

वहाँ सुमेरु पर्वत का विस्तार चौदह सहस्र परिमित है और इलावृतवर्ष का विस्तार नौ सहस्र योजन है। महाभागो ! वहाँ चार वर्ष पर्वत हैं।१४

विष्कम्भा रचिता मेरोर्योजनायुतमुच्छ्रिताः ।
पूर्वेण मन्दरो नाम दक्षिणे गन्धमादनः ॥१५

वे पर्वत सुमेरु के वृत्तव्यास के रूप में विराजमान हैं। उनकी ऊँचाई दस हजार योजन है। पूर्व दिशा में मन्दराचल और दक्षिण में गन्धमादन पर्वत हैं।१५

विपुलः पश्चिमे पार्श्वे[1] सुपार्श्वश्चोत्तरः स्मृतः ।
कदम्बस्तेषु जम्बूश्च पिप्पलो वट एव च ॥१६

पश्चिम पार्श्व में विपुलपर्वत और उत्तर में सुपार्श्वपर्वत अवस्थित हैं। उनके मध्य में कदम्ब, जामुन, पीपल और वट के वृक्ष यथाक्रम विद्यमान हैं।१६

जम्बूद्वीपस्य सा जम्बूर्नामहेतुर्महर्षयः ।
महागजप्रमाणानि जंब्वास्तस्याः फलानि च ॥१७

हे महर्षिगण ! जम्बूद्वीप के नाम का कारण जम्बूवृक्ष है। उस जम्बूवृक्ष के फल महान् हस्ती के बराबर के परिमाण के होते हैं।१७

पतन्ति भूभृतः पृष्ठे शीर्यमाणानि सर्वतः ।
रसेन तस्याः प्रख्याता तत्र जम्बूनदी गिरौ ॥१८

वे फल पर्वत के पृष्ठ भाग पर सब ओर गिरकर फट जाते हैं। उसके रस से पर्वत पर प्रख्यात जम्बूनदी बहती है।१८

सरित्प्रवर्त्तते चापि पीयते तत्र वासिभिः ।
न स्वेदो न च दौर्गन्ध्यं न जरा नेन्द्रियक्षयः ॥१९

उस नदी का रस वहाँ के निवासी लोग पीते हैं। उस रस का पान करने वाले के शरीर में न तो पसीना होता है, न दुर्गन्ध और न इन्द्रियों का क्षय।१९

न[2] तापः स्वच्छमनसां नासौख्यं तत्र जायते ।
तत्तोरमृद्रसं प्राप्य वायुना सुविशोषितम् ॥२०

---

१. भागे इति पा०। २. तत्पानात्सुस्थमनसां नराणामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाम्बूनदाख्यं भवति सुवर्णं सिद्धभूषणम् ।
भद्राश्वः पूर्वतो मेरोः केतुमालश्च पश्चिमे ॥२१

उसका मन शुद्ध होता है। उसे ताप और दुःख नहीं होते। उस नदी के तीरस्थ मृत्तिका-रस वायु से सूख जाने पर जाम्बूनद नामक सुवर्ण हो जाता है, जो सिद्धगणों का भूषण बनता है। मेरु से पूर्व में भद्राश्ववर्ष और पश्चिम में केतुमाल वर्ष विद्यमान हैं ।२०-२१।

वर्षे द्वे तु मुनिश्रेष्ठास्तयोर्मध्ये इलावृतम् ।
वनं चैत्ररथं पूर्वं दक्षिणं गन्धमादनम् ॥२२
वैभ्राजं पश्चिमं विद्यादुत्तरं[1] सवितुर्वनम् ।

हे मुनिश्रेष्ठगण ! उन दोनों वर्षों के बीच इलावृत वर्ष है। पूर्व में चैत्ररथ वन, दक्षिण में गन्धमादन वन, पश्चिम में वैभ्राजवन और उत्तर में सवितृवन समझना चाहिए ।२२½

अरुणोदं महाभद्रमसितोदश्च मानसम् ॥२३
सरांस्येतानि चत्वारि देवभोग्यानि सर्वदा ।

वहाँ अरुणोद, महाभद्र, असितोद, और मानस नामक चार सरोवर हैं, जिनका उपभोग सर्वदा देवगण करते हैं ।२३½

सितान्तश्च कुमुद्वांश्च कुररी माल्यवांस्तथा ॥२४
वैकङ्को मणिशैलश्च वृक्षवांश्चाचलोत्तमः ।
महानीलोऽथ रुचकः सबिन्दुर्मन्दरस्तथा ॥२५
वेणुमांश्चैव मेघश्च निषधो देवपर्वतः ।
इत्येते देवरचिताः[2] सिद्धावासाः प्रकीर्तिताः ॥२६

सितान्त, कुमुद्वान्, कुररी, माल्यवान्, वैकंक, मणिशैल एवं पर्वतश्रेष्ठ वृक्षवान्, महानील, रुचक, बिन्दु, मन्दर, वेणुमान्, मेघ, निषध और देवपर्वत—ये देवों के बनाये हुए हैं तथा सिद्धों के वासस्थल कहे जाते हैं ।२४-२६।

अरुणोदस्य सरसः पूर्वतः केसराचलः[3] ।
त्रिकूटः[4] सशिरश्चैव पतङ्गो रुचकस्तथा ॥२७
निषधो [6]वसुधारश्च कलिङ्गस्त्रिशिखः स्मृतः ।
समूलो वसुवेदिश्च[5] कुरुरुश्चैव सानुमान् ॥२८

१. विन्ध्यादुत्तरे इति पा०। २. देवचरिता इति पा०। ३. केशवाचल इति पा०। ४. त्रिकूटः शिखरश्चैव इति शशिवांश्चैव इति, पा०। ५. वसुमारश्चेति पा०। ६. वसुधारश्चेति, वसुधीरश्चेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताम्रातश्च विशालश्च कुमुदो वेणुपर्वतः ।
एकशृङ्गो महाशैलो [1]गजशैलश्चपिञ्जकः ॥२९
पञ्चशैलोऽथ कैलासो हिमवांश्चाचलोत्तमः ।
इत्येते देव चरिता उत्कटाः पर्वतोत्तमाः ॥३०

अरुणोद सरोवर के पूर्व भाग में केसराचल[1]–त्रिकूट, सशिर, पतंग, रुचक, निषध वसुधार, कलिंग, त्रिशिख, समूल, वसुवेदि, कुरुरुपर्वत, ताम्रात, विशाल, कुमुद, वेणु-पर्वत, एकशृंग, महाशैल, गजशैल, पिञ्जक तथा पर्वतश्रेष्ठ हिमालय,–देवनिर्मित ये सभी पर्वत सर्वाधिक श्रेष्ठ हैं ।२७-३०।

महाभद्रस्य सरसो दक्षिणे केसराचलः ।
शिखिवासाश्च वैदूर्यः कपिलो गन्धमादनः ॥३१
[2]जारुधिश्च सुराम्बुश्च सर्वगन्धाचलोत्तमः ।
सुपार्श्वश्च सुपक्षश्च कंकः कपिल एव च ॥३२
[3]विरजो भद्रजालश्च सुसकश्च महाबलः ।
अञ्जनो मधुमांस्तद्वच्चित्रशृङ्गो महालयः ॥३३
कुमुदो[4] मुकुटश्चैव पाण्डुरः कृष्ण एव च ।
पारिजातो महाशैलस्तथैव कपिलाचलः[5] ॥३४
सुषेणः पुण्डरीकश्च महामेघस्तथैव च ।
एते पर्वतराजाश्च सिद्धगन्धर्वसेविताः ॥३५

महाभद्र सरोवर के दक्षिण भाग में केसराचल–, शिखिवास, वैदूर्य, कपिल, गन्धमादन, जारुधि, सुराम्बु, पर्वतश्रेष्ठ सर्वगन्ध, सुपार्श्व, सुपक्ष. कंक, कपिल, विरज, भद्रजाल, सुसक, महाबल, अञ्जन, मधुमान्, चित्रशृंग, महालय, कुमुद, मुकुट, पाण्डुर, कृष्ण, पारिजात, महाशैल, कपिलाचल, सुषेण, पुण्डरीक और महामेघ—ये पर्वतराज हैं । इनका सेवन सिद्धगण और गन्धर्वगण करते हैं ।३१-३५ ।

असितोदस्य सरसः[1] पश्चिमे केसराचलः ।
शङ्खकूटोऽथ वृषभो हंसो नागस्तथैव च ॥३६
कालाञ्जनः[2] शुक्रशैलो नीलः कमल एव च ।
पारिजातो महाशैलः शैलः कनक एव च ॥३७

---

१. गजशैलः पिशाचक इति पा० । २. जारुधितः सुगन्धश्चेति, सुगन्धश्च श्रीशृङ्गश्चाचलोत्तम इति पा० । ३. पिंजलो भद्रशैलश्च सुरश्चेति पा० । ४. सहस्रशिखर इत्येव इति पा० । ५. कमलोदकः इति, कमिलोदर इति पा० । ६. पारेण इति पा० । ७. कलिञ्जरः शक्रेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai

पुष्पकश्च सुमेघश्च वाराहो विरजास्तथा ।
मयूरः कपिलश्चैव महाकपिल एव च ॥३८

असितोद सरोवर के पश्चिम भाग में केसराचल–, शंखकूट, वृषभ, हंस, नाग, कालाञ्जन, शुक्रशैल, नील, कमल, पारिजात, महाशैल, शैल, कनक, पुष्पक, सुमेघ, वाराह, विरजा, मयूर, कपिल और महाकपिल पर्वत हैं ।३६-३८।

इत्येते देवगन्धर्वासिद्धयक्षैश्च[1] सेविताः ।
सरसो मानसस्येह उत्तरे केसराचलः ॥३९

एतेषां शैलमुख्यानामन्तरेषु यथाक्रमम् ।
सन्ति चैवान्तरद्रोण्यः सरांसि च वनानि च ॥४०

वसन्ति तत्र मुनयः सिद्धा व ब्रह्मभावितः ।
प्रसन्नः शान्तरजसः सर्वदुःखविवर्ज्जिताः ॥४१

ये पर्वत देवों, गन्धर्वों, सिद्धों और यक्षों से सेवित हैं। मानस सरोवर के उत्तर भाग में इन समस्त केसराचल पर्वतश्रेष्ठों के बीच क्रमानुसार अन्तरद्रोणियाँ, सरोवर और वन विद्यमान है। वहाँ प्रसन्न, रजोगुणादिविहीन, सर्वदुःख शून्य, ब्रह्मचिन्तानिरत सिद्ध एवं मुनिगण वास करते हैं ।३९-४१।

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनकोशे पर्वतसंख्याने×
पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५

श्रीकूर्मपुराण में भुवनकोश-वर्णन-प्रसंग में पर्वत-संख्यान नामक नामक पैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४५॥

●

१. सिद्धसंघनिषेविता इति पा० । × चतुश्चत्वारिंशः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षट्चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ भुवनन्यासवर्णनम्

सूत उवाच

चतुर्दशसहस्राणि योजनानां महापुरी ।
मेरोरुपरि विख्याता देवदेवस्य वेधसः ॥१

सूत बोले—सुमेरु पर्वत पर देवाधिदेव ब्रह्मा की चौदह हजार योजन की महापुरी प्रसिद्ध है ।१

तत्रास्ते भगवान् ब्रह्मा विश्वात्मा विश्वभावनः ।
उपास्यमानो योगीन्द्रैर्मुनीन्द्रोपेन्द्रशंकरैः ॥२

वहाँ विश्वात्मा, विश्वरचयिता भगवान् ब्रह्मा निवास करते हैं। योगीन्द्र, मुनीन्द्र, विष्णु तथा शंकर उनकी उपासना करते हैं ।२

तत्र देवेश्वरेशानं विश्वात्मानं प्रजापतिम् ।
सनत्कुमारो भगवानुपास्ते नित्यमेव हि ॥३

वहाँ देवेश्वर, ईशान, विश्वात्मा, ब्रह्मा की भगवान् सनत्कुमार नित्य उपासना करते हैं ।३

स सिद्धऋषिगंधर्वैः पूज्यमानः सुरैरपि ।
समास्ते योगयुक्तात्मा पीत्वा तत्परमामृतम् ॥४

सिद्धों, गन्धर्वों, ऋषियों एवं देवों से पूजित होते हुए योगी ब्रह्मा परम योगामृत पान करते रहते हैं ।४

तत्र देवाधिदेवस्य[1] शम्भोरमिततेजसः ।
दीप्तमायतनं शुभ्रं पुरस्ताद्ब्रह्मणः स्थितम् ॥५

वहाँ ब्रह्मपुरी के सम्मुख देवाधिदेव, अमिततेजस्वी शंकर का शुभ्र निवासस्थान विराजमान है ।५

---

१. देवादिदेवस्येति, देवातिदेवस्य इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिव्यकान्तिसमायुक्तं चतुर्द्वारं सुशोभनम् ।
महर्षिगणसंकीर्णं ब्रह्मविद्भिर्निषेवितम् ॥६

उस भवन की कान्ति दिव्य है। उसमें चार द्वार हैं। वह बहुत सुन्दर है। महर्षियों से व्याप्त है और ब्रह्मवेत्ताओं से सेवित है।६

देव्या सह महादेवः शशाङ्कार्काग्निलोचनः ।
रमते तत्र विश्वेशः प्रमथैः प्रमथेश्वरः ॥७

वहाँ विश्वेश, प्रमथगणेश्वर, चन्द्र-सूर्य-अग्नि-नेत्र महादेव प्रमथगण और देवी सहित विहार करते हैं।७

तत्र वेदविदः शान्ता मुनयो ब्रह्मचारिणः ।
पूजयन्ति महादेवं तपसा सत्यवादिनः ॥८

वहाँ सत्यवादी, शान्त, वेदवेत्ता मुनि एवं ब्रह्मचारी तपस्या द्वारा महादेव की पूजा करते हैं।८

तेषां साक्षान्महादेवो मुनीनां भावितात्मनाम्[1] ।
गृह्णाति पूजां शिरसा पार्वत्या परमेश्वरः ॥९

उन संयमी मुनियों की पूजा साक्षात् परमेश्वर महादेव पार्वती के साथ शिर से ग्रहण करते हैं।९

तत्रैव पर्वतवरे शक्रस्य परमा पुरी ।
नाम्नामरावती पूर्वे सर्वशोभासमन्विताः ॥१०

उसी श्रेष्ठ पर्वत पर इन्द्र की परमा पुरी है। उसका नाम है अमरावती। जो सभी प्रकार की शोभाओं से समन्वित है।१०

तत्र चाप्सरसः सर्वा गन्धर्वाः सिद्धचारणाः[2] ।
उपासते सहस्राक्षं देवास्तत्र सहस्रशः ॥११

वहाँ सभी अप्सरायें, गन्धर्व, सिद्ध, चारण तथा हजारों देवता इन्द्र की उपासना करते हैं।११

ये धार्मिका वेदविदो यागहोमपरायणाः ।
तेषां तत्परमं स्थानं देवानामपि दुर्लभम् ॥१२

जो धार्मिक, वेदवेत्ता एवं यज्ञ-होम-परायण व्यक्ति हैं, उनका वह परम स्थान है, जो देवताओं के लिए भी दुर्लभ है।१२

---

१. ब्रह्मवादिनामिति पा० २. गीततत्परा इति, गीततत्परमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्मा[1]द्दक्षिणदिग्भागे वह्नेरमिततेजसः ।
तेजोवती नाम पुरी दिव्याश्चर्यसमन्विता ॥१३

उससे दक्षिणभाग में अमिततेजस्वी अग्नि की तेजोवती नाम की पुरी है, जो दिव्य आश्चर्यों से युक्त है ।१३

तत्रास्ते भगवान्वह्निर्भ्राजमानः स्वतेजसा ।
जपिनां होमिनां स्थानं दानवानां दुरासदम् ॥१४

वहाँ भगवान् अग्नि अपने तेज से देदीप्यमान हैं। वह जप करने तथा होम करने वालों का स्थान है, किन्तु दानवों के लिए दुष्प्राप्य है ।१४

दक्षिणे पर्वतवरे यमस्यापि महापुरी ।
नाम्ना संयमनी दिव्या [2]सर्वशोभासमन्विता ॥१५

पर्वत श्रेष्ठ सुमेरु के दक्षिण भाग में यमराज की दिव्य एवं सकलशोभासमन्वित संयमनी नामक महापुरी है ।१५

तत्र वैवस्वतं देवं देवाद्याः पर्युपासते ।
स्थानं तत्सत्यसन्धानां लोके पुण्यकृतां नृणाम् ॥१६

वहाँ देवगण सूर्यपुत्र यमदेव की उपासना करते हैं। वह स्थान लोक में सत्य प्रतिज्ञ एवं पुण्यात्मा मनुष्यों को मिलता है ।१६

तस्यास्तु पश्चिमे भागे निर्ऋ[3]तेस्तु महात्मनः ।
रक्षोवती नामपुरी राक्षसैः [4]संवृता तु या ॥१७

संयमनी के पश्चिम भाग में महात्मा निर्ऋति की रक्षोवती नाम की पुरी है, जिसे राक्षसगण घेरे रहते हैं ।१७

तत्र ते नैर्ऋ[5]तं देवं राक्षसाः पर्युपासते ।
गच्छंति तां धर्मरता[6] ये तु तामसवृत्तयः ॥१८

वहाँ राक्षसगण नैर्ऋत देव की उपासना करते हैं। तामसी वृत्ति वाले जो धर्म-निरत पुरुष हैं, वे उस पुरी में जाते हैं ।१८

पश्चिमे पर्वतवरे वरुणस्य महापुरी ।
नाम्ना शुद्धवती पुण्या सर्वकामर्द्धिसंयुता ॥१९

पर्वतश्रेष्ठ के पश्चिम भाग में वरुण की पुण्यदायिका एवं सकल कामनाओं की सिद्धि से युक्त शुद्धवती नामक महापुरी है ।१९

---

१. तस्य दक्षिणेति पा० । २. सिद्धगन्धर्वसेविता इति पा० । ३. सर्वतो वृता इति पा० । ४. धर्मवतां ये वै इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्राप्सरो गणैः सिद्धैः सेव्यमानोऽमराधिपैः[1] ।
आस्ते स वरुणो राजा तत्र गच्छंति येऽम्बुदाः ॥२०

उसमें अप्सराओं, सिद्धों तथा देवश्रेष्ठों से सेवित होते हुए राजा वरुण रहते हैं। वहाँ वे लोग जाते हैं, जो जलदान करते हैं।२०

तस्या उत्तरदिग्भागे वायोरपि महापुरी ।
नाम्ना गन्धवती पुण्या तत्रास्तेऽसौ प्रभञ्जनः ॥२१

उस पुरी के उत्तर दिशा भाग में वायु की भी पवित्र महापुरी है, जिसका नाम है गन्धवती। उसमें वायुदेव रहते हैं।२१

अप्सरोगणगन्धर्वैः [2]सेव्यमानो महान् प्रभुः ।
[3]प्राणायामपरा विप्राः स्थानं तद्यान्ति शाश्वतम्[4] ॥२२

उस महाप्रभु की सेवा अप्सरा गण और गन्धर्वगण करते हैं। जो ब्राह्मण प्राणायाम करने में तत्पर रहते हैं, वे उस शाश्वत स्थान को प्राप्त करते हैं।२२

तस्याः पूर्वे तु दिग्भागे सोमस्य परमा पुरी ।
नाम्ना कान्तिमती[5] शुभ्रा तस्यां सोमो विराजते ॥२३

उसके पूर्व भाग में सोम [कुबेर] की श्रेष्ठ एवं शुभ्रवर्णा पुरी है, जिसका नाम है कान्तिमती। उसमें सोम विराजते हैं।२३

तत्र ये धर्मनिरताः[6] स्वधर्मं पर्युपासते ।
तेषां तदुचितं स्थानं नानाभोगसमन्वितम् ॥२४

जो व्यक्ति धर्मपरायण है, अपने धर्म की उपासना करते हैं, वे नाना प्रकार के भोगों से समन्वित उस स्थान को प्राप्त करते हैं।२४

तस्यास्तु पूर्वदिग्भागे शंकरस्य महापुरी ।
नाम्ना यशोवती पुण्या सर्वेषां सा दुरासदा ॥२५

उसके पूर्वभाग में शंकर की यशोवती नामक पवित्र पुरी है, जो सबके लिए दुष्प्राप्य है।२५

तत्रेशानस्य भवनं रुद्रेणाधिष्ठितं शुभम् ।
गणेश्वरस्य विपुलं तत्रास्ते स गणावृतम् ॥२६

---

१. नराधिपैरिति पा०। २. सेव्यमानोऽमरः प्रभुरिति पा०। ३. मर्त्याः इति, प्राणायामरता मर्त्याः इति पा०। ४. शोभनामिति पा०। ५. शान्तिमती शुद्धा इति पा०। ६. भोगनिरता इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ ईशान के पवित्र भवन में रुद्र निवास करते हैं। वहीं गणपति का विशाल भवन है, जिसमें वे गणों के साथ रहते हैं ।२६

तत्र भोगादिलिप्सूनां भक्तानां परमेष्ठिनः ।
निवासः कल्पितः पूर्वं देवदेवेन शूलिना ॥२७

वहाँ पहले देवाधिदेव शंकर ने परमेष्ठी के भोगेच्छुक भक्तों के निवास की व्यवस्था की थी ।२७

विष्णुपादाद्विनिष्क्रान्ता प्लावयित्वेन्दुमण्डलम् ।
समन्ताद्ब्रह्मणः पुर्यां गंगा पतति वै ततः ॥२८

विष्णु के चरण से निकली हुई गंगा चन्द्रमण्डल को प्लावित करके ब्रह्मपुरी के चारों तरफ गिरती हैं ।२८

सा तत्र पतिता दिक्षु चतुर्द्धा ह्यभवद्द्विजाः ।
सीता चालकनन्दा च सुचक्षुर्भद्रनामिका ॥२९

द्विजगण ! वहाँ चारों दिशाओं में गिरी हुई गंगा चार भागों में विभक्त हो गई हैं। उन चारों के नाम हैं—सीता, अलकनन्दा, सुचक्षु और भद्रनामिका ।२९

पूर्वेण शैलाच्छैलं[1] तु सीता[2] यात्यन्तरिक्षगा ।
ततश्च पूर्ववर्षेण भद्राश्वाद्याति चार्णवम् ॥३०

आकाशचारिणी सीता गंगा एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर होती हुई पूर्व दिशा में भद्राश्ववर्ष होकर समुद्र में गिरती है ।३०

तथैवालकनन्दा च दक्षिणादेत्य भारतम् ।
प्रयाति सागरं भित्त्वा सप्तभेदा द्विजोत्तमाः ॥३१

द्विजोत्तमगण ! उसी प्रकार अलकनन्दा गंगा दक्षिण दिशा से भारत में आकर सात भागों में विभक्त होकर समुद्र में गिरती है ।३१

सुचक्षुः पश्चिमगिरीनतीत्य सकलांस्तथा ।
पश्चिमं केतुमालाख्यं वर्षं गत्वैति चार्णवम् ॥३२

सुचक्षु गंगा पश्चिम दिशा के सभी पर्वतों का अतिक्रमण करके केतुमालवर्ष जाकर सागर में गिरती है ।३२

भद्रा तथोत्तरगिरीनुत्तरांश्च तथा कुरून् ।
अतीत्य चोत्तराम्भोधिं समभ्येति महर्षयः ॥३३

---

१. सीता शैलात्तु इति पा० । शैले यात्यन्तरिक्षतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे महर्षिगण ! भद्रा गंगा उत्तर दिशा के पर्वतों तथा उत्तरकुरुवर्ष का अतिक्रमण करके उत्तरसमुद्र में गिरती है ।३३

आनीलनिषधायामौ माल्यवद्गन्धमादनौ ।
[1]तयोर्मध्यं गतो मेरुः कर्णिकाकारसंस्थितः ॥३४

माल्यवान् और गन्धमादन पर्वत नील एवं निषध पर्वत पर्यन्त लंबे हैं । उन दोनों के बीच में सुमेरु पर्वत कर्णिका के आकार में अवस्थित है ।३४

भारताः[2] केतुमालाश्च भद्राश्वाः कुरवस्तथा ।
पत्राणि लोकपद्मस्य मर्यादाशैलबाह्यतः ॥३५

भारतवर्ष, केतुमालवर्ष, भद्राश्ववर्ष और कुरुवर्ष (मर्यादापर्वत) के बाहर भुवन-पद्म के पत्र-समूह के समान हैं ।३५

जठरो देवकूटश्च मर्यादापर्वतावुभौ ।
दक्षिणोत्तरमायातावानीलनिषधायतौ ॥३६

जठर और देवकूट—ये दोनों मर्यादा पर्वत हैं । ये दक्षिण और उत्तर में नील पर्वत से लेकर निषध पर्वत तक विस्तृत हैं ।३६

गन्धमादनकैलाशौ पूर्वपश्चायतावुभौ[3] ।
अशीतियोजनायामावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ ॥३७

गन्धमादन और कैलास ये दोनों पर्वत पूर्व और पश्चिम में आयताकार हैं । अस्सी योजन लंबे ये दोनों पर्वत समुद्र पर्यन्त अवस्थित हैं ।

निषधः पारियात्रश्च मर्यादापर्वताविमौ ।
मेरोः पश्चिमदिग्भागे यथापूर्वं व्यवस्थितौ ॥३८

निषध और पारियात्र—ये दोनों मर्यादा पर्वत हैं । ये सुमेरु के पश्चिमभाग में पूर्ववत् अवस्थित हैं ।३८

त्रिशृङ्गो जारुधिस्तद्वदुत्तरे वर्षपर्वतौ ।
तावदायामविस्तारावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ ॥३९

त्रिशृंग और जारुधि ये दोनों उत्तरस्थ वर्षपर्वत पूर्व और पश्चिम दिशा में विस्तृत होकर समुद्र पर्यन्त अवस्थित हैं ।३९

---

१. तयोर्मध्यगतः इति पा० । २. तारका इति पा० । ३. पूर्वपश्चायतावेतौ इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादापर्वताः प्रोक्ता अष्टाविह मया द्विजाः ।
जठराद्याः स्थिता मेरोश्चतुर्दिक्षु महर्षयः ॥४०

हे द्विजगण ! मैंने आपको यहाँ आठ मर्यादा पर्वत बताये हैं । महर्षिगण ! जठर आदि पर्वतगण सुमेरु के चारो तरफ विद्यमान हैं ।४०

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनविन्यासे × षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥४६

श्री कूर्मपुराण में भुवनविन्यास के प्रसंग में छियालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४६॥

●

सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ भुवनकोशवर्णनम्

सूत उवाच

केतुमाले नराः काकाः[1] सर्वे पनसभोजनाः ।
स्त्रियश्चोत्पलपत्राभास्ते[2] जीवन्ति वर्षायुतम् ॥१

सूत बोले—केतुमाल वर्ष के अधिवासी काक जैसे वर्ण वाले (कृष्णवर्ण) होते हैं और वहाँ की स्त्रियाँ कमलपात्र की-सी कान्ति वाली होती हैं । उनकी आयु अयुत (दस हजार वर्ष) की होती है ।१

भद्राश्वे पुरुषाः शुक्लाः स्त्रियश्चन्द्रांशुसन्निभाः ।
दशवर्षसहस्राणि [3]जीवन्ते [4]चान्नभोजनाः ॥२

भद्राश्ववर्ष में पुरुष श्वेत वर्ण के होते हैं और स्त्रियाँ चन्द्रकिरणों के समान आभा वाली होती हैं । वे लोग अन्न भोजन करते हैं और दस हजार वर्ष जीते हैं ।२

रम्यके पुरुषा नार्यो [5]रमन्ति रजतप्रभाः ।
दशवर्षसहस्राणि शतानि दश पञ्च च ॥३
जीवन्ति चैव सत्त्वस्था न्यग्रोधफलभोजनाः ।
हिरण्मये हिरण्याभाः सर्वे [6]श्रीफलभोजनाः ॥४

---

१. पंचचत्वारिंशः लि० पु० । २. कालाः इति पा० । ३. पत्राक्ष्यः इति पा० । ४. जीवन्ते इत्यार्षमात्मनेपदम् । वायुभोजनाः इति पा० । ५. रमन्तीति परस्मैपदमार्षम् । ६. च लकुचासनाः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकादशसहस्राणि शतानि दशपञ्च च ।
जीवन्ति पुरुषा नार्यो देवलोकस्थिता इव ॥५

रम्यक वर्ष में चाँदी जैसी कान्तिवाले स्त्री पुरुष रमण करते हैं। दस हजार पन्द्रह सौ वर्ष तक वे लोग जीवित रहते हैं। वे सत्त्वगुणी एवं न्यग्रोध-फल का भोजन करने वाले होते हैं। हिरण्मय वर्ष में सभी नर-नारीगण का उच्चतम वर्ण, श्रीफल भोजी एवं देवलोकवासी के समान ग्यारह हजार पन्द्रह सौ वर्षों तक जीवन धारण करते हैं।३-५।

त्रयोदशसहस्राणि शतानि दश पञ्च च ।
जीवन्ति कुरुवर्षे तु श्यामांगाः क्षीरभोजनाः ॥६

कुरुवर्ष में प्राणी श्यामवर्ण, दुग्धभोजी तथा तेरह हजार पन्द्रह सौ वर्षों तक जीवन धारण करने वाले होते हैं।६

सर्वे मिथुनजाताश्च नित्यं सुखनिषेविताः ।
चन्द्रद्वीपे महादेवं यजन्ति सततं शिवम् ॥७

सभी नित्य सुखसेवी तथा दम्पती के रूप में जन्म ग्रहण करने वाले होते हैं। चन्द्रद्वीप में लोग महादेव शिव की उपासना करते हैं।७

तथा किंपुरुषे विप्रा मानवा हेमसन्निभाः ।
दशवर्षसहस्राणि जीवन्ति प्लक्षभोजनाः ॥८

विप्रगण ! उसी प्रकार किम्पुरुष वर्ष में स्वर्णकान्ति मानव न्यग्रोध-फल खाकर दश हजार वर्ष तक जीवित रहते हैं।८

यजन्ति सततं देवं [1]चतुःशीर्षं चतुर्भुजम् ।
ध्याने मनः समाधाय सादरं भक्तिसंयुताः ॥९

वे ध्यान में मनको समाहित करके भक्ति युक्त होकर आदर के साथ चार शिर और चार भुजा वाले देव की सतत उपासना करते हैं।९

तथा च हरिवर्षे तु महारजतसन्निभाः ।
दशवर्षसहस्राणि जीवन्तीक्षुरसाशिनः ॥१०

उसी प्रकार हरि वर्ष में महारजत (विशेष प्रकार की चाँदी) के समान कान्ति वाले नरनारी गण गन्ने का रस पीकर दस हजार वर्षों तक जीवन धारण करते हैं।१०

तत्र नारायणं देवं विश्वयोनिं सनातनम् ।
उपासते सदा विष्णुं मानवा विष्णुभाविताः ॥११

१. चतुर्मूर्तिं चतुर्मुखमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ विष्णुभक्त मानव, विश्व के मूल, सनातन, नारायण देव, विष्णु की सदा उपासना करते हैं।११

तत्र चन्द्रप्रभं शुभ्रं शुद्धस्फटिकसन्निभम् ।
विमानं वासुदेवस्य पारिजातवनाश्रितम् ॥१२

वहाँ चन्द्रमा के समान प्रभा वाले, शुभ्र, शुद्ध स्फटिक के तुल्य वासुदेव भगवान् का विमान पारिजात वन में विद्यमान है।१२

चतुर्द्वारमनौपम्यं चतुस्तोरणसंयुतम् ।
प्राकारैर्दशभिर्युक्तं दुराधर्षं सुदुर्गमम् ॥१३

उस विमान में चार द्वार हैं। वह अनुपम, चार बन्दनवारों से संयुक्त, दस चहार-दीवारों से युक्त, दुराक्रम्य एवं अत्यन्त दुर्गम हैं।१३

स्फाटिकैर्मण्डपैर्युक्तं देवराजगृहोपमम् ।
सुवर्णस्तम्भसाहस्रैः सर्वतः समलंकृतम् ॥१४

वह स्फटिक मणिनिर्मित मण्डपों से युक्त, इन्द्र भवन के तुल्य तथा सहस्रों सुवर्णस्तम्भों से अलंकृत है।१४

हेमसोपानसंयुक्तं नानारत्नोपशोभितम् ।
दिव्यसिंहासनोपेतं सर्वशोभासमन्वितम् ॥१५

सोने की सीढ़ियों से युक्त, अनेक प्रकार के रत्नों से शोभित, दिव्य सिंहासन से संवलित और सभी प्रकार की शोभाओं से समन्वित है।१५

सरोभिः स्वादुपानीयैर्नदीभिश्चोपशोभितम् ।
नारायणपरैः शुद्धैर्वेदाध्ययनतत्परैः ॥१६

योगिभिश्च समाकीर्णं ध्यायद्भिः पुरुषं हरिम् ।
स्तुवद्भिः सततं मन्त्रैर्नमस्यद्भिश्च माधवम् ॥१७

स्वादिष्ठ जल वाले सरोवरों तथा नदियों से शोभित है। नारायणपरायण, पवित्र, वेदों के अध्ययन में तत्पर हरि का ध्यान करते हुए और मन्त्रों द्वारा माधव की सतत स्तुति एवं नमस्कार करते हुए योगियों से व्याप्त है।१६-१७।

तत्र देवाधिदेवस्य विष्णोरमिततेजसः ।
राजानः सर्वकालं तु महिमानं प्रकुर्वते ॥१८

वहाँ राजा लोग अमित तेजस्वी देवाधिदेव विष्णु की महिमा का सर्वदा कीर्तन करते हैं।१८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गायन्ति चैव नृत्यन्ति विलासिन्यो मनोहराः ।
स्त्रियो यौवनशालिन्यः सदा मण्डनतत्पराः ॥१९

सुन्दर, विलासिनी, यौवनशालिनी, सदा साज-सज्जा में तत्पर रमणियाँ गाती है और नाचती हैं ।१९

इलावृते पद्मवर्णा जम्बूरसफलाशिनः ।
त्रयोदशसहस्राणि वर्षाणां च स्थिरायुषः ॥२०

इलावृत वर्ष में कमल के समान वर्ण वाले, जम्बू का रस पीने वाले लोग तेरह हजार वर्षों की स्थिर आयु वाले होते हैं ।२०

भारतेषु स्त्रियः पुंसो[1] नानावर्णाः प्रकीर्त्तिताः ।
नानादेवार्च्चने युक्ता नानाकर्माणि कुर्वते ॥२१

भारत वर्ष के निवासी स्त्री-पुरुष अनेक वर्ण के होते हैं, अनेक देवताओं की अर्चना में जुटे रहते हैं तथा नाना प्रकार के कर्म करते हैं ।२१

परमायुः स्मृतं तेषां शतं वर्षाणि सुव्रताः ।
नव योजनसाहस्रं वर्षमेतत्प्रकीर्त्तितम् ॥२२

हे सुव्रतियो ! उनकी परम आयु सौ वर्षों की होती है । नौ हजार योजन का यह वर्ष कहा गया है ।२२

कर्मभूमिरियं विप्रा नराणामधिकारिणाम् ।
महेन्द्रो मलयः सह्यः शक्तिमानृक्षपर्वतः ॥२३

विन्ध्यश्च पारियात्रश्च[2] सप्तात्र कुलपर्वताः ।
इन्द्रद्वीपः कसेरुक्मान् ताम्रपर्णो गभस्तिमान् ॥२४

नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारुणः ।
अयं तु नवमस्तेषां द्वीपः सागरसंस्थितः ॥२५

विप्रगण ! यह भारत वर्ष अधिकारी मनुष्यों की कर्मभूमि है । यहाँ महेन्द्र, मलय, सह्य, शक्तिमान्, ऋक्ष पर्वत, विन्ध्य और पारियात्र—ये सात कुल पर्वत हैं । और नौ द्वीप हैं—इन्द्रद्वीप, कसेरुक्मान्, ताम्रपर्ण, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वारुण और नवम यह समुद्र मध्य संस्थित भारतद्वीप है । २३-२५ ।

योजनानां सहस्रं तु द्वीपोऽयं दक्षिणोत्तरः ।
पूर्वे किरातास्तस्यान्ते पश्चिमे यवनास्तथा ॥२६

१. पुंस इति आर्षं पुमांस इति साधु । २. पारिपात्रश्च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह द्वीप दक्षिणोत्तर में एक हजार योजन विस्तृत है। इसके पूर्व भाग में किरात गणों का वास है और पश्चिमान्त में यवनों का वास है।२६

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या मध्ये शूद्रास्तथैव च।
इज्यायुद्धवणिज्याभिर्वर्तयन्त्यत्र मानवाः ॥२७

इसके मध्य में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र रहते हैं। यहाँ के मानव यज्ञ, युद्ध और व्यापार के द्वारा जीविका चलाते हैं।२७

स्रवन्ते पावनाः नद्यः पर्वतेभ्यो विनिःसृताः।
शतद्रुश्चन्द्रभागा च सरयूर्यमुना तथा ॥२८

वहाँ पर्वतों से निकली हुई पावन नदियाँ बहती हैं। जैसे, शतद्रु, चन्द्रभागा, सरयू तथा यमुना।२८

इरावती वितस्ता च विपाशा देविका कुहूः।
गोमती धूतपापा च बाहुदा च दृषद्वती ॥२९

इरावती, वितस्ता, विपाशा, देविका, कुहू, गोमती, धूतपापा, बाहुदा, दृषद्वती।२९

कौशिकी लोहिनी[1] चेति हिमवत्पादनिःसृताः।
वेदस्मृतिर्वेदवती[2] व्रतघ्नी त्रिदिवा तथा ॥३०

कौशिकी, लोहिनी—ये नदियाँ हिमालय से निकली हैं। वेदस्मृति, वेदवती, व्रतघ्नी, त्रिदिवा।३०

वर्णाशा चन्दना[3] चैव सचर्मण्यवती सुरा।
विदिशा वेत्रवत्यापि पारियात्राश्रयाः स्मृता ॥३१

वर्णाशा, चन्दना, चर्मण्यवती, सुरा, विदिशा और वेत्रवती—ये पारियात्र पर्वत से निकली हैं।३१

नर्मदा सुरसा शोणो दशार्णा च महानदी।
मन्दाकिनी चित्रकूटा तामसी च पिशाचिका ॥३२

नर्मदा, सुरसा, शोण, दशार्णा, महानदी, मन्दाकिनी, चित्रकूटा, तामसी, पिशाचिका।३२

चित्रोत्पला विशाला[4] च मंजुला वालुवाहिनी[5]।
ऋक्षवत्पादजा नद्यः सर्वपापहरा नृणाम् ॥३३

---

१. लोहिता इति पा०। २. वेदरता इति। ३. पर्णा साबन्धना इति, पर्णाशा चन्दना चैवेति पा०। ४. विपाशा च इति पा०। ५. रत्नवाहिनीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रोत्पला, विशाला, मंजुला, वालुवाहिनी ये ऋक्षवान् पर्वत से निकली नदियाँ मनुष्यों के समस्त पापों को हरने वाली हैं ।३३

तापी पयोष्णी निर्विन्ध्या शोघ्रोदा च महानदी ।
विन्ना[1] वैतरणी चैव बलाका च कुमुद्वती ॥३४

तापी, पयोष्णी, निर्विन्ध्या, शीघ्रोदा, महानदी, विन्ना, वैतरणी, बलाका, कुमुद्वती ।३४

तथा चैव महागौरी दुर्गा चान्तःशिला तथा ।
विन्ध्यपादप्रसूतास्तु सद्यः पापहरा[2] नृणाम् ॥३५

महागौरी, दुर्गा, तथा अन्तः शिला । विन्ध्याचल से उत्पन्न हुई ये नदियाँ मनुष्यों के पापों का सद्यः हरण करने वाली हैं ।३५

गोदावरी भीमरथी कृष्णा वेणा च वश्यता ।
तुंगभद्रा सुप्रयोगा कावेरी च द्विजोत्तमाः ॥३६
दक्षिणापथनद्यस्तु सह्यपादाद्विनिःसृताः ।

द्विजश्रेष्ठ ! गोदावरी, भीमरथी, कृष्णा, वेणा, वश्यता, तुंगभद्रा, सुप्रयोगा और कावेरी—ये दक्षिणापथ की नदियाँ हैं, जो सह्य पर्वत से निकली हैं ।३६½।

ऋतुमाला ताम्रपर्णी पुण्यवत्युत्पलावती ॥३७
मलयान्निःसृता नद्यः सर्वाः शीतजलाः स्मृताः ।
ऋषिकुल्या त्रिसामा च गन्धमादनगामिनी ॥३८

ऋतुमाला, ताम्रपर्णी, पुण्यवती, उत्पलावती—ये मलय पर्वत से निकली हुई सभी नदियाँ शीतल जल वाली हैं। ऋषिकुल्या, त्रिसामा गन्धमादन पर्वत से उत्पन्न ।३७-३८।

क्षिप्रा पलाशिनी चैव ऋषीका वंशधारिणी[3] ।
शुक्तिमत्पादसञ्जाता सर्वपापहरा नृणाम् ॥३९

क्षिप्रा, पलाशिनी, ऋषीका, वंशधारिणी—ये नदियाँ शुक्तिमान् पर्वत से निकली हैं और मनुष्यों के समस्त पापों का नाश करने वाली हैं ।३९

आसां नद्युपनद्यश्च शतशो द्विजपुङ्गवाः ।
सर्वपापहराः पुण्याः स्नानदानादिकर्मसु ॥४०

१. वेण्या, चिन्ता इति पा० । २. पुण्यजनाः शुभा इति पा० । ३. बलकारिणीति, रसकारिणी इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्विजश्रेष्ठो ! इनसे निकली सैकड़ों नदियाँ और उपनदियाँ हैं, जो सकल पापों का हरण करने वाली तथा स्नान, दान आदि कर्मों में पुण्य देनेवाली हैं ।४०

तास्विमे कुरुपाञ्चाला मध्यदेशादयो जनाः ।
पूर्वदेशादिकाश्चैव कामरूपनिवासिनः ॥४१

इन्हीं नदियों के इर्द-गिर्द कुरु, पाञ्चाल, मध्यदेश आदि के लोग रहते हैं। पूर्व देश आदि के लोग तथा कामरूप निवासी अवस्थित हैं ।४१

पुण्ड्राः कलिङ्गा मगधा दाक्षिणात्याश्च कृत्स्नशः ।
तथापरान्ताः सौराष्ट्रशूद्रा हीनास्तथाबुंदाः ॥४२

मालका मलपाश्चैव पारियात्रनिवासिनः ।
सौवीराः सैन्धवा हूणा[1] माल्या बाल्यानिवासिनः ॥४३

माद्रा रामास्तथैवान्ध्राः पारसीकास्तथैव च ।
आसां पिबन्ति सलिलं वसन्ति सरितां सदा ॥४४

पुण्ड्र, कलिङ्ग, मगध, सम्पूर्ण दक्षिण देश वासी पश्चिम देशीय, सौराष्ट्र, शूद्र, आभीर, अबुंद, मालक, मलपा, पारियात्रनिवासी, सौवीर, सैन्धव, हूण; माल्य, बाल्य-निवासी, माद्र, राम, आन्ध्र और पारसीक लोग इन नदियों का सदा जल पीते हैं और यहाँ रहते हैं ।४२-४४।

चत्वारि भारते वर्षे युगानि कवयोऽब्रुवन् ।
कृतं त्रेता द्वापरञ्च कलिश्चान्यत्र न क्वचित् ॥४५

विद्वानों ने भारतवर्ष में चार युग बताये हैं—कृतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग ये अन्यत्र नहीं हैं ।४५

यानि किम्पुरुषाद्यानि वर्षाण्यष्टौ महर्षयः ।
न तेषु शोको नायासो नोद्वेगः क्षुद्भयं न च ॥४६

हे महर्षिगण ! किम्पुरुष आदि जो आठ वर्ष बताये गये हैं, उनमें शोक, आयास, उद्वेग, भूख और प्यास का अभाव है ।४६

स्वस्थाः प्रजाः निरातङ्काः सर्वदुःखविवर्जिताः ।
रमन्ते विविधैर्भावैः सर्वाश्च स्थिरयौवनाः ॥४७

वहाँ के निवासी स्वस्थ, आतंकरहित, समस्त दुःखों से शून्य होकर अनेक प्रकार के भावों से रमण करते हैं। सभी स्थिर यौवन वाले होते हैं ।४७

---

१. कृष्णाः शाल्वाः कल्पनिवासिन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनकोशवर्णनं नाम×
सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४७

श्री कूर्मपुराण में भुवनकोशवर्णन नामक सैंतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४७॥

●

अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ जम्बूद्वीपवर्णनम्

सूत उवाच

हेमकूटगिरेः शृङ्गे महाकूटं सुशोभनम् ।
स्फाटिकं देवदेवस्य विमानं परमेष्ठिनः ॥१

सूत बोले—हेमकूटपर्वत के शिखर पर देवाधिदेव ब्रह्मा का स्फटिक निर्मित एक सुन्दर महाकूट नामक विमान है ।१

तत्र देवाधिदेवस्य भूतेशस्य त्रिशूलिनः ।
देवाः सर्षिगणाः[1] सिद्धाः पूजां नित्यं प्रकुर्वते ॥२

वहाँ देवता, ऋषिगण तथा सिद्धगण भूतनाथ, त्रिशूली शंकर की नित्य पूजा करते हैं ।२

स [2]देव्या गिरिशः सार्द्धं [3]महादेवो महेश्वरः ।
भूतैः परिवृतो नित्यं भाति तत्र पिनाकधृक् ॥३

वे पिनाकधनुषधारी महादेव महेश्वर भूतगणों से युक्त होकर देवी उमा के साथ सुशोभित होते हैं ।३

विभक्तचारुशिखरः कैलासो यत्र पर्वतः ।
निवासः कोटियक्षाणां कुबेरस्य च धीमतः ॥४

जहां सुन्दर शिखर वाला कैलास नामक पर्वत है । वह करोड़ों यक्षों तथा धीमान् कुबेर का निवासस्थान है ।४

तत्रापि देवदेवस्य भवस्यायतनं महत् ।
मन्दाकिनी तत्र पुण्या[4] रम्या सुविमलोदका ॥५

× षट्चत्वारिंशः लि०.पु० । १. सिद्धगणा यक्षाः इति पा० । २. देवः इति पा० ३. महादेव्या इति पा० । ४. दिव्या इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ भी देवाधिदेव शंकर का महान् मन्दिर है। वहाँ पवित्र, रमणीय तथा निर्मल जल वाली मन्दाकिनी नदी है।५

नदी नानाविधैः पद्मैरनेकैः समलंकृता।
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसकिन्नरैः ॥६
उपस्पृष्टजला नित्यं सुपुण्या सुमनोरमा।
अन्याश्च नद्यः शतशः स्वर्णपद्मैरलंकृताः ॥७

वह नदी अनेक स्वर्ण कमलों से अलंकृत है। देव, दानव, गन्धर्वों, यक्ष, राक्षस तथा किन्नर उसका जल पीते हैं। वह नित्य पुण्य देने वाली तथा अत्यन्त मनोरम है। वहाँ अन्य सैकड़ों नदियाँ भी स्वर्णपद्मों से अलंकृत हैं।६-७।

तासां कूले तु देवस्य स्थानानि परमेष्ठिनः।
देर्वाषिगणजुष्टानि तथा नारायणस्य तु ॥८

उन नदियों के तट पर ब्रह्मदेव तथा नारायण के स्थान हैं, जिनका सेवन देवता और ऋषिगण करते हैं।८

[1]तस्यापि शिखरे शुभ्रं पारिजातवनं शुभम्।
तत्र शक्रस्य विपुलं भवनं रत्नमण्डितम् ॥९

उसके शिखर पर मंगलदायी शुभ्र पारिजातवन है। वहाँ इन्द्र का रत्नमण्डित विशाल भवन है।९

स्फाटिकस्तम्भसंयुक्तं[2] हेमगोपुरशोभितम्।
तत्राथ देवदेवस्य विष्णोर्विश्वात्मनः प्रभोः ॥१०
पुण्यञ्च भवनं रम्यं सर्वरत्नोपशोभितम्।
तत्र नारायणः श्रीमान् लक्ष्म्या सह जगत्पतिः ॥११
आस्ते सर्वेश्वरः श्रेष्ठः पूज्यमानः सनातनः।

जिसमें स्फटिकमणि के खंभे हैं। वह सोने के गोपुर से शोभित है। वहाँ देवाधिदेव, विश्वात्मा, प्रभु विष्णु का रमणीय, समस्त रत्नों से उपशोभित, पुण्यदायक भवन है। जिसमें जगत्पति, श्रीमान् साथ रहते हैं। सर्वेश्वर, श्रेष्ठ, पूजनीय, सनातन, नारायण लक्ष्मी के साथ रहते हैं।१०-११½

---

१. सिताभ्रशिखरे चापि इति, सितान्तशिखरे चापि इति पा०। २. संयुतमिति प०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा च वसुधारे तु वसूनां रत्नमण्डितम् ॥१२
स्थानानामुत्तमं पुण्यं दुराधर्षं सुरद्विषाम् ।
रत्नधारे गिरिवरे सप्तर्षीणां महात्मनाम् ॥१३
सप्ताश्रमाणि पुण्यानि सिद्धावासैर्युतानि च ।
तत्र हैमं चतुर्द्वारं वज्रनीलादिमण्डितम् ॥१४

उसी प्रकार वसुधार पर्वत पर रत्नमण्डित, असुरों द्वारा अनाक्रम्य, पवित्र और स्थानों में उत्तम वसुओं का निवासस्थान है। रत्नधार नामक पर्वतश्रेष्ठ पर महात्मा सप्तर्षिगण के सात पवित्र आश्रम हैं जो सिद्धों के आवास से युक्त है। वहाँ स्वर्णनिर्मित चार द्वारों से युक्त, वज्र, नील आदि मणियों से मण्डित एक स्थान है।१२-१४।

सुपुण्यं सदवस्थानं[1] ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
तत्र देवर्षयो विप्राः सिद्धा ब्रह्मर्षयोऽपरे ॥१५
उपासते देवदेवं पितामहमजं परम् ।

वह अत्यन्त पुण्यदायक उत्तम स्थान अव्यक्तजन्मा ब्रह्मा का है। वहाँ देवर्षि, विप्र, सिद्ध, ब्रह्मर्षि तथा अन्यान्य उपासक देवाधिदेव, अजन्मा, पितामह की उपासना करते हैं।१५½

सर्वैः सम्पूजितो नित्यं देव्या सह चतुर्मुखः ॥१६
आस्ते हिताय लोकानां शान्तानां परमा गतिः ।

शान्त पुरुषों के परम आश्रय ब्रह्मा लोक कल्याण के लिए वहाँ देवी के साथ सबसे पूजित होकर निवास करते हैं।१६½

[2]तस्यैकश्रृङ्गशिखरे महापद्मैरलंकृते ॥१७
स्वच्छामृतजलं पुण्यं सुगन्धं[3] सुमहत्सरः ।
जैगीषव्याश्रमं पुण्यं योगीन्द्रैरुपसेवितम्[4] ॥१८
तत्रास्ते भगवान्नित्यं सर्वशिष्यैः समावृतः ।

उसी के एक शिखर पर महापद्मों से सुशोभित, स्वच्छ एवं अमृततुल्यजल से पूर्ण, पवित्र और सुगन्धित एक विशाल सरोवर है। वहाँ योगीन्द्रों से सेवित जैगीषव्य का पुण्याश्रम विद्यमान है।१७-१८।

---

१. सुमहत्स्थानमिति पा०। २. सरस्तत्र सुविस्तीर्णं महापद्मैरलंकृतम् इति पा०। ३. सुगन्धं सुमहत्परम् इति, सुगन्धमार्षं, सुगन्धि। ४. शोभितमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशान्तदोषै रक्षुद्रैर्ब्रह्मविद्भिर्महात्मभिः ।।१९

उसमें सभी निष्पाप, महान्, ब्रह्मवेत्ता, महानुभाव शिष्यों से समन्वित भगवान् जैगीषव्य रहते है ।१९

शंखो मनोहरश्चैव कौशिकः कृष्ण एव च ।
सुमना[1] वेदवादश्च शिष्यास्तस्य प्रसादतः[1] ।।२०

शंख, मनोहर, कौशिक, कृष्ण, सुमना और वेदवाद उनके शिष्य हैं ।२०

सर्वयोगरताः शान्ता भस्मोद्धूलितविग्रहाः ।
उपासते महाचार्या[2] ब्रह्मविद्यापरायणाः ।।२१

सर्वयोगनिरत, शान्त, भस्म रमाये शरीर वाले, ब्रह्मविद्यापरायण वे महाचार्य उनकी उपासना करते हैं ।२१

तेषामनुग्रहार्थाय यतीनां शान्तचेतसाम् ।
सान्निध्यं कुरुते भूयो देव्या सह महेश्वरः ।।२२

उन शान्तचित्त यतियों पर कृपा करने के लिए गौरी सहित शंकर वहाँ समीप ही रहते हैं ।२२

अनेकान्याश्रमाणि स्युस्तस्मिन् गिरिवरोत्तमे ।
मुनीनां [3]युक्तमनसा सरांसि सरितस्तथा ।।२३

उस उत्तम गिरिराज पर योगयुक्तमन वाले मुनियों के अनेक आश्रम सरोवर तथा सरितायें हैं ।२३

तेषु योगरता विप्रा जापकाः संयतेन्द्रियाः ।
ब्रह्मण्यासक्तमनसो रमन्ते ज्ञानतत्पराः ।।२४

उन आश्रमों में योगपरायण विप्रगण, जापक, संयतेन्द्रिय, ब्रह्म में आसक्त मनवाले तथा ज्ञानपरायण जन निवास करते हैं ।२४

आत्मन्यात्मानमाधाय शिखान्ते[4] पर्यवस्थितम् ।
ध्यायन्ति देवमीशानं येन सर्वमिदं ततम् ।।२५

वे आत्मा में मन को लगाकर शिखर के अग्रभाग पर अवस्थित ईशान देव का, जिन्होंने इस सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि की है, ध्यान करते हैं ।२५

[5]सुमेघं वासवस्थानं सहस्रादित्यसन्निभम् ।
तत्रास्ते भगवानिन्द्रः शच्या सह सुरेश्वरः ।।२५

---

१. प्रधानत इति पा० । २. महावीर्या इति पा० । ३. योगनिरतचित्तानामित्यर्थः । ४. शिखान्तान्तरसंस्थितम् इति पा० । ५. सुमेधे इति, अमोघमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(वहीं) सुन्दर मेघों से युक्त एवं सहस्र सूर्यों के समान भास्वर इन्द्र का स्थान है। उसमें देवराज भगवान् इन्द्र शची के साथ निवास करते हैं ।२६

गजशैले तु दुर्गाया भवनं मणितोरणम् ।
आस्ते भगवती दुर्गा तत्र साक्षान्महेश्वरी ॥२७

गजपर्वत पर दुर्गा का मन्दिर है, जिसमें मणियों का तोरण (बन्दनवार) है। वहाँ साक्षात् महेश्वरी भगवती निवास करती हैं।२७

उपास्यमाना विविधैः शक्तिभेदैरितस्ततः ।
पीत्वा योगामृतं लब्ध्वा साक्षादमृतमैश्वरम्[1] ॥२८

अनेक प्रकार की शक्तियाँ योगामृत पीकर साक्षात् ईश्वरीय अमृत पाकर इधर-उधर से महेश्वरी की उपासना करती हैं ।२८

सुनीलस्य गिरेः शृङ्गे नानाधातुसमुज्ज्वले ।
राक्षसानां पुराणि स्युः सरांसि शतशो द्विजाः ॥२९

द्विजगण ! सुनील नामक पर्वत के, विविध धातुओं से समुज्ज्वल शिखर पर राक्षसों की अनेक नगरियाँ तथा सैकड़ों सरोवर हैं ।२९

तथा पुरशतं विप्राः शतशृङ्गे महाचले ।
स्फाटिकस्तम्भसंयुक्तं यक्षाणाममितौजसाम् ॥३०

विप्रगण ! उसी प्रकार श्वेतशृंग नामक महापर्वत पर अमित तेजस्वी यक्षों के स्फटिकमणि के खंभों से युक्त सैकड़ों नगर हैं ।३०

श्वेतोदरगिरेः शृंगे सुपर्णस्य महात्मनः ।
प्राकारगोपुरोपेतं मणितोरणमण्डितम् ॥३१

स तत्र गरुडः श्रीमान् साक्षाद्विष्णुरिवापरः ।
[2]ध्यात्वा तत्परमं ज्योतिरात्मन्येवमथाव्ययम् ॥३२

वहाँ श्रीमान् गरुड़, मानो साक्षात् दूसरे विष्णु हों, निवास करते हैं और अपने में उस अविनाशी परम तत्त्व का ध्यान करते हैं ।३२

अन्यच्च भवनं पुण्यं श्रीशृंगे मुनिपुंगवाः ।
श्रीदेव्याः सर्वरत्नाढ्यं हैमं समणितोरणम् ॥३३

मुनिश्रेष्ठो ! श्रीशृंग पर श्रीदेवी का एक दूसरा भी पुण्य भवन है, जो समस्त रत्नों से परिपूर्ण, स्वर्णनिर्मित एवं मणियों के तोरण (बन्दनवार) से युक्त है ।३३

१. साक्षादानन्दमैश्वरमिति पा० । २. ध्यात्वास्ते तत्परं ज्योतिरात्मानं विष्णुमव्ययमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्र सा परमा शक्तिर्विष्णोरतिमनोरमा ।
अनन्तविभवा लक्ष्मीर्जगत्संमोहनोत्सुका ॥३४

वहाँ अत्यन्त मनोरम, अनन्तवैभवशालिनी तथा जगत् को सम्मोहित करने के लिए उत्सुक वह विष्णु की परमा शक्ति लक्ष्मी विराजमान रहती हैं।३४

अध्यास्ते देवगन्धर्वसिद्धचारणवन्दिता ।
विचिन्त्या जगतो योनिः स्वशक्तिकिरणोज्ज्वला ॥३५

देवता, गन्धर्व, सिद्ध तथा चारण उनकी वन्दना करते रहते हैं। वह संसार की मूल है एवं अपनी शक्ति के प्रभाव से प्रकाशमान है।३५

तत्रैव देवदेवस्य विष्णोरायतनं महत् ।
सरांसि तत्र चत्वारि विचित्रकमलाशयाः ॥३६

वहीं देवाधिदेव विष्णु का महान् मन्दिर तथा विचित्र कमलविशोभित चार सरोवर हैं।३६

तथा सहस्रशिखरे विद्याधरपुराष्टकम् ।
रत्नसोपानसंयुक्तं सरोभिश्चोपशोभितम् ॥३७

सहस्रशिखर पर्वत पर विद्याधरों की आठ पुरियाँ हैं। जिनमें रत्नों की सीढ़ियाँ बनी हैं और जो रत्नों से शोभित हैं।३७

नद्यो विमलपानीयाश्चित्रनीलोत्पलाकराः ।
कर्णिकारवनं दिव्यं तत्रास्ते [1]शंकरः स्वयम् ॥३८

वहाँ निर्मल जल वाली नदियाँ बहती हैं जो विचित्र नीलकमलों की खानें हैं। वहाँ दिव्य कर्णिकार वन है, जिसमें स्वयं शंकर विराजते हैं।३८

[2]पारिजाते महालक्ष्म्याः पर्वते तु पुरं शुभम् ।
रम्यप्रासादसंयुक्तं घण्टाचामरभूषितम् ॥३९

पारिजात पर्वत पर महालक्ष्मी का पवित्र नगर है, जिसमें घंटा और चामरों से युक्त रमणीय प्रासाद बने हुए हैं।३९

नृत्यद्भिरप्सरःसंघैरितश्चेतश्च शोभितम् ।
मृदंगपणवोद्घुष्टं वेणुवीणानिनादितम् ॥४०

वह नगर इधर-उधर नाचती हुई अप्सराओं से शोभित तथा मृदंग, ढोल, वंशी और वीणा से निनादित है।४०

---

१. शंकरोऽम्बया इति पा०। २. परिपात्रे महाशैलेमहालक्ष्म्याः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गन्धर्वकिन्नराकीर्णं संवृतंसिद्धपुंगवैः ।
[1]भास्वद्विभूशमायुक्तं महाप्रासादसङ्कुलम् ॥४१

वह गन्धर्वों और किन्नरों से व्याप्त, तेजस्वी सिद्धश्रेष्ठों से युक्त तथा महान् प्रासादों (महलों) से प्रपूर्ण है ।४१

[2]महागणेश्वरैर्जुष्टं धार्मिकाणां सुदर्शनम् ।
तत्र सा वसते देवी नित्यं योगपरायणा ॥४२

महान् गणेश्वरों से सेवित तथा धार्मिक जनों के दृष्टिरम्य उस नगर में नित्य योगपरायण देवी महालक्ष्मी निवास करती हैं ।४२

महालक्ष्मीर्महादेवी त्रिशूलवरधारिणी ।
त्रिनेत्रा सर्वशक्त्यौघसंवृता सा[3] च तन्मयी ॥४३

महालक्ष्मी महादेवी, उत्तम त्रिशूल धारण करनेवाली, तीन नेत्रों वाली, सकल-शक्तिसमूहों से घिरी हुई तथा तन्मयी है ।४३

पश्यन्ति तत्र मुनयः सिद्धा ये ब्रह्मवादिनः ।
सुपार्श्वस्योत्तरे भागे सरस्वत्याः पुरोत्तमम् ॥४४

वहाँ जो ब्रह्मवादी सिद्ध मुनिगण हैं, वे उनका दर्शन करते हैं । सुपार्श्वपर्वत के उत्तर भाग में सरस्वती का उत्तम नगर है ।४४

सरांसि सिद्धजुष्टानि देवभोग्यानि सत्तमाः ।
पाण्डुरस्य गिरेः शृंगे विचित्रद्रुमसङ्कुलम्[4] ॥४५

गन्धर्वाणां पुरशतं दिव्यस्त्रीभिः समावृतम् ।
तत्र नित्यं मदोत्सिक्ता नरा नार्यस्तथैव च ॥४६

क्रीडन्ति मुदिता नित्यं विलासैर्भोगतत्पराः ।
अञ्जनस्य गिरेः शृंगे नारीपुरमनुत्तमम् ॥४७

हे साधुगण ! वहाँ सिद्धों से सेवित, देवभोग्य बहुत-से सरोवर हैं । पाण्डुरपर्वत के शिखर पर विविध प्रकार के वृक्षों से व्याप्त गन्धर्वों के सैकड़ों नगर हैं । उनमें दिव्य स्त्रियाँ रहती हैं । उसी प्रकार मद्यपाननिरत नर-नारीगण नित्य भोग-विलास परायण होकर आनन्द से क्रीड़ा करते हैं । अञ्जनपर्वत की चोटी पर अति उत्तम नारीपुर है ।४५-४७।

---

१. रत्नभित्तिसमायुक्तमिति, भास्वद्भित्तिसमाकीर्णमिति पा० । २. गणेश्वरादिना युक्तमिति, गणेश्वराज्ञनाजुष्टमिति पा० । ३. सदमन्मया इति पा० । ४. संकुले इति ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसन्ति तत्राप्सरसो रम्भाद्या रतिलालसाः ।
चित्रसेनादयो यत्र समायान्त्यर्थिनः सदा ॥४८

उसमें रति की लालसा वाली रम्भा आदि अप्सरायें निवास करती हैं। जहाँ चित्रसेन आदि गन्धर्वगण सदा याचक बनकर आते हैं।४८

सा पुरी सर्वरत्नाढ्या नैकप्रस्रवणैर्युता ।
अनेकानि पुराणि स्युः कौमुदे चापि सत्तमाः[1] ॥४९

वह पुरी सब प्रकार के रत्नों से सम्पन्न तथा अनेक झरनों से युक्त है। साधुवृन्द! कौमुदगिरि पर अनेक नगर हैं।४९

रुद्राणां शान्तरजसामीश्वरासक्तचेतसाम् ।
तेषु रुद्रा महायोगा महेशान्तरचारिणः ॥५०
समासते पुरं ज्योतिरारूढः स्थानमैश्वरम्[2] ।
पिञ्जरस्य गिरेः शृङ्गे गणेशानां पुरत्रयम् ॥५१

वहाँ रजोगुणविहीन, ईश्वरानुरक्त चित्त वाले रुद्रगण के वे नगर हैं। उनमें महायोगपरायण तथा महेश के अन्तरविहारी रुद्रगण ईश्वरीय परम ज्योति का अवलम्बन लेकर समाधिस्थ रहते हैं। पिञ्जरगिरि के शिखर पर गणेश्वरों के तीन नगर हैं।५०-५१।

नदीश्वरस्य कपिला तत्रास्ते स महामतिः ।
तथा च जारुधेः शृङ्गे देवदेवस्य धीमतः ॥५२
दीप्तमायतनं पुण्यं भास्करस्यामितौजसः ।
तस्यैवोत्तरदिग्भागे चन्द्रस्थानमनुत्तमम् ॥५३

वहाँ नन्दीश्वर की कपिला नगरी विद्यमान है। उसमें वे महामति निवास करते हैं। उसी प्रकार जारुधि के शिखर पर देवाधिदेव, धीमान्, अमिततेजस्वी सूर्य का पवित्र एवं प्रदीप्त नगर है। उसी के उत्तर भाग में चन्द्रमा का अत्युत्तम स्थान है।५२-५३।

वसते तत्र रम्यात्मा भगवान् शान्तदीधितिः ।
अन्यत्र भवनं दिव्यं हंसशैले महर्षयः ॥५४
सहस्रयोजनायामं सुवर्णमणितोरणम् ।
तत्रास्ते भगवान् ब्रह्मा सिद्धसङ्घैरभिष्टुतः ॥५५

---

१. सुव्रताः इति पा०। २. स्थानमुत्तममिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ रमणीयात्मा भगवान् चन्द्रमा निवास करते हैं। महर्षिगण! फिर दूसरी जगह हंसपर्वत पर एक हजार योजन विस्तृत, सुवर्ण और मणि के बन्दनवार से युक्त एक दिव्य भवन है। वहाँ सिद्धसंघों से स्तुत भगवान् ब्रह्मा निवास करते हैं।५४-५५।

सावित्र्या सह विश्वात्मा वासुदेवादिभिर्युतः।
तस्य दक्षिणदिग्भागे सिद्धानां पुरमुत्तमम्[1] ।५६

वहाँ विश्वात्मा ब्रह्मा वासुदेव आदि से युक्त होकर सावित्री के साथ रहते हैं। उस पर्वत के दक्षिण भाग में सिद्धों की उत्तम पुरी है।५६

सनन्दनादयो यत्र वसन्ति मुनिपुंगवाः।
पञ्चशैलस्य शिखरे दानवानां पुरत्रयम् ।।५७

मुनिश्रेष्ठो! सिद्धपुरी में सनन्दन आदि सिद्धगण निवास करते हैं। पञ्चशैल की चोटी पर दानवों के तीन नगर हैं।५७

नातिदूरेण तस्माच्च दैत्याचार्यस्य धीमतः।
सुगन्धशैलशिखरे सरिद्भिरुपशोभितम् ।।५८
कर्दमस्याश्रमं पुण्यं तत्रास्ते भगवानृषिः।

उससे कुछ ही दूर पर धीमान् दैत्याचार्य (शुक्र) का नगर है। सुगन्धपर्वत के शिखर पर नदियों से उपशोभित कर्दम ऋषि का पुण्याश्रम है। वहाँ भगवान् कर्दम ऋषि निवास करते हैं।५८½

तस्यैव पूर्वदिग्भागे किञ्चिद्वै दक्षिणाश्रिते ।।५९
सनत्कुमारो भगवांस्तत्रास्ते ब्रह्मवित्तमः।
सर्वेष्वेतेषु शैलेषु तथान्येषु मुनीश्वराः ।।६०
सरांसि विमला नद्यो देवानामालयानि[2] च।
सिद्धलिंगानि पुण्यानि मुनिभिः स्थापितानि च ।।६१

उसी के पूर्वदिशाभाग में कुछ दक्षिण कोण में ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ भगवान् सनत्कुमार रहते हैं। मुनीश्वरवृन्द! इन सभी पर्वतों पर तथा अन्य पर्वतों पर सरोवर, निर्मल जल वाली नदियाँ, देवालय और मुनियों द्वारा स्थापित पवित्र सिद्धलिंग विद्यमान हैं।५९-६१।

---

१. वामदेवादिभिरिति पा०। २. पुरसत्तममिति पा०। ३. अत्र क्लीवत्वमार्षम्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तानि[2] चायतनान्याशु संख्यातुं नैव शक्यते ।
एष संक्षेपतः प्रोक्तो जम्बूद्वीपस्य विस्तरः ।
न शक्यो विस्तराद्वक्तुं मया वर्षशतैरपि ॥६२

उन स्थानों में जो मन्दिर हैं, उनकी संख्या शीघ्र नहीं बतायी जा सकती। जम्बूद्वीप का यह विस्तार संक्षेप में बताया है। विस्तार से तो मैं सैकड़ों वर्षों में भी नहीं बता सकता ।६२

इति श्रीकूर्मपुराणे जम्बूद्वीपवर्णनं नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४८

श्रीकूर्मपुराण में जम्बूद्वीपवर्णन नामक अड़तालीसवाँ अध्याय समाप्त ।४८।

●

एकोनपञ्चाशोऽध्यायः

सूत उवाच

जम्बूद्वीपस्य विस्तारादि्द्विगुणेन समन्ततः ।
संवेष्टयित्वा[3] क्षीरोदं प्लक्षद्वीपो व्यवस्थितः ॥१

सूत बोले—जम्बूद्वीप से दूने विस्तार में प्लक्षद्वीप चारों ओर से क्षीरसागर को वेष्टित करके व्यवस्थित है ।१

प्लक्षद्वीपे च विप्रेन्द्रः सप्तासन्कुलपर्वताः ।
सिद्धायुताः सुपर्वाणः सिद्धसङ्घनिषेविताः ॥२

विप्रेन्द्रो ! प्लक्षद्वीप में सात कुलपर्वत हैं, जो सुन्दर पर्वों से युक्त तथा सिद्ध-संघों से सेवित हैं। हजारों सिद्ध उन पर निवास करते हैं ।२

गोमेदः प्रथमस्तेषां द्वितीयश्चन्द्र उच्यते ।
नारदो दुन्दुभिश्चैव [4]मणिमान्मेघनिस्वनः ॥३
वैभ्राजः सप्तमस्तेषां ब्रह्मणोऽत्यन्तवल्लभः ।
तत्र देर्वषिगन्धर्वैः सिद्धैश्च भगवानजः ॥४

---

२. वन्यान्याश्रमवर्याणीति पा० । × सप्तचत्वारिंश: लि० पु० । ३. संवेष्टयित्वा इत्यार्षम् संवेष्ट्य इति साधु । ४. सोमस्य ऋषभस्तथेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें पहला (कुलपर्वत) गोमेद है, दूसरा चन्द्र, तीसरा नारद, चौथा दुन्दुभि, पाँचवाँ मणिमान्, छठा मेघनिस्वन और सातवाँ वैभ्राज नामक कुलपर्वत है जो ब्रह्मा को अत्यन्त प्रिय है। वहाँ देव, ऋषि, गन्धर्व तथा सिद्धगण भगवान् ब्रह्मा की उपासना करते हैं ।३-४।

उपास्यते स विश्वात्मा साक्षी सर्वस्य विश्वदृक् ।
तेषु पुण्या जनपदा आधयो व्याधयो न च ॥५

वे विश्वात्मा ब्रह्मा सबके साक्षी और विश्वद्रष्टा हैं। उन पर्वतों पर पवित्र जनपद हैं। वहाँ आधि-व्याधि (शारीरिक तथा मानसिक रोग) नहीं होते ।५

न तत्र पापकर्त्तारः पुरुषा वै कथञ्चन ।
तेषां नद्यश्च सप्तैव वर्षाणां तु समुद्रगाः ॥६

वहाँ पाप करने वाले पुरुष बिलकुल नहीं होते। उन वर्षपर्वतों पर समुद्रगामिनी नदियाँ सात ही हैं ।६

तासु ब्रह्मर्षयो नित्यं पितामहमुपासते ।
अनुतप्ताशिखे चैव विपापा त्रिदिवा कृता ॥७

उन नदियों में ब्रह्मर्षिगण नित्य पितामह की उपासना करते थे। उनके नाम हैं—अनुतप्ता, शिखा, विपापा, त्रिदिवा, कृता ।७

अमृता सुकृता चैव नामतः परिकीर्त्तिताः ।
क्षुद्रनद्यस्तु विख्याताः सरांसि च बहून्यपि ॥८

अमृता, सुकृता—इन नामों से वे नदियाँ विख्यात हैं। क्षुद्र नदियाँ और सरोवर भी वहाँ बहुत से हैं ।८

न चैतेषु युगावस्था पुरुषा वै चिरायुषः ।
आर्यकाः कुररश्चैव विदेहा भाविनस्तथा ॥९

ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रास्तस्मिन्द्वीपे प्रकीर्त्तिताः ।
इज्यते भगवानीशो[1] वर्णैस्तत्र निवासिभिः ॥१०

तेषाञ्च सोमसाम्राज्यं[2] सारूप्यं मुनिपुङ्गवाः ।
सर्वे धर्मरता नित्यं सर्वे मुदितमानसाः ॥११

उन स्थानों में युगधर्म नहीं है और नर-नारीगण चिरञ्जीवी होते हैं उस द्वीप में आर्यक, कुरर, विदेह, भाविन्, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वास करते हैं। वहाँ के

१. भगवान् सोमः इति पा० । २. सोमसायुज्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवासी गण भगवान् ईश की उपासना करते हैं। हे मुनिश्रेष्ठों! वहाँ के लोग सोम साम्राज्य तथा सोमसारूप्य मुक्ति लाभ करते हैं। सब लोग धर्मपरायण एवं प्रसन्नचित्त रहते हैं।९-११।

पञ्चवर्षसहस्राणि जीवन्ति च निरामयाः।
प्लक्षद्वीपप्रमाणं तु द्विगुणेन समन्ततः ॥१२
संवेष्टयैक्षुरसाम्भोधिं शाल्मलिः संव्यवस्थितः।
सप्त वर्षाणि तत्रापि सप्तैव कुलपर्वताः ॥१३

वे नीरोग रहकर पाँच हजार वर्ष जीते हैं। प्लक्षद्वीप की अपेक्षा द्विगुण शाल्मलिद्वीप चारों ओर से ईख के रस वाले समुद्र को वेष्टित करके अवस्थित है। वहाँ भी सात वर्ष और सात ही कुलपर्वत हैं।१२-१३।

ऋज्वायताः सुपर्वाणः सप्त नद्यश्च सुव्रताः।
कुमुदश्चान्नदश्चैव तृतीयश्च बलाहकः ॥१४
द्रोणः कंसस्तु महिषः ककुद्मान् सप्तमस्तथा[1]।
[2]योनी तोया वितृष्णा च चन्द्रा शुक्ला विमोचनी ॥१५
निवृत्तिश्चेति ता नद्यः स्मृताः पापहरा नृणाम्।
न तेषु विद्यते लोभः क्रोधो वा द्विजसत्तमाः ॥१६

वे पर्वत सीधे, लम्बे तथा सुन्दर पर्व वाले हैं। वहाँ सुन्दर धारा वाली सात नदियाँ बहती हैं। सात पर्वतों के नाम ये हैं—कुमुद, अन्नद, तीसरा बलाहक, द्रोण, कंस, महिष सातवाँ ककुद्मान् है। सात नदियों के नाम—योनी, तोया, वितृष्णा, चन्द्रा, शुक्ला, विमोचना और निवृत्ति। ये नदियाँ स्मरण करने से पापों का हरण करती हैं। द्विजश्रेष्ठो! उन वर्षों में लोभ या क्रोध नहीं होता।१४-१६।

न चैवास्ति युगावस्था जना जीवन्त्यनामयाः।
यजन्ति सततं तत्र वर्णा वायुं सनातनम् ॥१७

वहाँ युगधर्म भी नहीं है। लोग नीरोग होकर जीते हैं। वहाँ की सभी जातियाँ सनातन वायुदेव की सतत आराधना करते हैं।१७

तेषां[3] तत्साधनं युक्तं सारूप्यञ्च सलोकता।
कपिला ब्राह्मणाः प्रोक्ता राजानश्चारुणास्तथा ॥१८

---

१. सप्त पर्वता इति पा०। २. यान्ति तेभ्यो वितृष्णा इति पा०। ३. तेषां तस्याथ सायुज्यमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए वहाँ के निवासियों को वायुसायुज्य, वायुसारूप्य और वायुसालोक्य मोक्ष की प्राप्ति होती है। उस द्वीप में ब्राह्मण का वर्ण कपिल और क्षत्रिय का लाल होता है।१८

पीता वैश्याः स्मृताः कृष्णा द्वीपेऽस्मिन् वृषला द्विजाः।
शाल्मलस्य तु विस्तारादिद्विगुणेन समन्ततः ॥१९
संवेष्टच तु सुरोदाब्धिं कुशद्वीपो व्यवस्थितः।

द्विजगण! वहाँ वैश्य का वर्ण पीत एवं शूद्र का वर्ण कृष्ण होता है। शाल्मलिद्वीप से द्विगुण विस्तृत कुशद्वीप है जो चारों ओर से सुरासमुद्र को वेष्टित करके अवस्थित है।१९½

विद्रुमश्चैव होमश्च[1] द्युतिमान् पुष्पवांस्तथा ॥२०
कुशेशयो हरिश्चैव मन्दरः सप्त पर्वताः।
धूतपापा शिवा चैव पवित्रा संमिता तथा ॥२१
तथा[2] विद्युत्प्रभा रामा महानद्यश्च सप्त वै।
अन्याश्च शतशो विप्रा नद्यो मणिजलाः शुभाः ॥२२

कुशद्वीप में सात कुलपर्वत हैं—विद्रुम, होम, द्युतिमान्, पुष्पवान्, कुशेशय, हरि और मन्दर। वहाँ धूतपापा, शिवा, पवित्रा, संमिता, विद्युत्प्रभा, रामा और मही—ये नदियाँ विद्यमान हैं। विप्रवृन्द! इनके अतिरिक्त अन्य सैकड़ों मणिवत् स्वच्छ जलवाली पवित्र नदियाँ हैं।२०-२२।

तास्तु ब्रह्माणमीशानं देवाद्याः पर्युपासते।
ब्राह्मणा द्रविणो विप्राः क्षत्रियाः शुष्मिणस्तथा ॥२३
वैश्यास्तोभास्तु[3] मन्देहाः शूद्रास्तत्र प्रकीर्त्तिताः।

देवगण उन नदियों से ब्रह्मा और ईशान की उपासना करते हैं। उस द्वीप में ब्राह्मण धनी, क्षत्रिय पराक्रमी, वैश्य धनधान्यसम्पन्न तथा शूद्र निरीह होते हैं।२३½

नरोऽपि[4] ज्ञानसम्पन्ना मैत्र्यादिगुणसंयुताः ॥२४
यथोक्तकारिणः सर्वे सर्वे भूतहिते रताः।
यजन्ति यज्ञैर्विविधैर्ब्राह्मणं परमेष्ठिनम् ॥२५

१. हेमश्च इति पा०। २. विद्युदन्ता मही चेति नद्यस्तत्र जलावहाः इति पा०। ३. वैश्याः स्नेहास्तु इति पा०। ४. सर्वविज्ञानसंपन्ना इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ के मनुष्य ज्ञानसम्पन्न, मैत्री आदि गुणों से युक्त, विधिपूर्वक कर्म करने वाले, सभी प्राणियों के हित में निरत रहने वाले और विविध यज्ञों से परमेष्ठी ब्रह्मा की उपासना करने वाले हैं ।२४-२५।

तेषाञ्च ब्रह्मसायुज्यं सारूप्यञ्च सलोकता ।
कुशद्वीपस्य विस्तारादद्विगुणेन समन्ततः ॥२६
क्रौञ्चद्वीपः स्थितो विप्रा वेष्टयित्वा घृतोदधिम् ।

उन्हें ब्रह्मसायुज्य, ब्रह्मसारूप्य तथा ब्रह्मसालोक्य मोक्ष की प्राप्ति होती है। विस्तार में कुशद्वीप से द्विगुण क्रौञ्चद्वीप चारों ओर से घृतसागर को वेष्टित करके अवस्थित है ।२६½।

क्रौंचो वामनकश्चैव तृतीयश्चाधिकारिकः ॥२७
देवाब्दश्च[1] विवेदश्च पुण्डरीकस्तथैव च ।
नाम्ना च सप्तमः प्रोक्तः पर्वतो दुन्दुभिस्वनः ॥२८

क्रौञ्चद्वीप में क्रौञ्च, वामनक, आधिकारिक, देवाब्द, विवेद, पुण्डरीक और सातवाँ दुन्दुभिस्वन नामक कुलपर्वत हैं ।२७-२८।

गौरी कुमुद्वती चैव सन्ध्या रात्रिर्मनोजवा ।
कोभिश्च पुण्डरीकाक्षा नद्यः प्राधान्यतः स्मृताः ॥२९

गौरी, कुमुद्वती, सन्ध्या, रात्रि, मनोजवा, कोभि और पुण्डरीकाक्षा—ये सात प्रधान नदियाँ हैं ।२९

पुष्कलाः पुष्करा धन्यास्तिष्या[2] वर्णाः क्रमेण वै ।
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव द्विजोत्तमाः ॥३०

द्विजश्रेष्ठो ! पुष्कल, पुष्कर धन्य और तिष्य—इन नामों से वहाँ क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वास करते हैं ।३०

अर्च्चयन्ति महादेवं यज्ञदानशमादिभिः ।
व्रतोपवासैर्विविधैर्होमैश्च[3] पितृतर्पणैः ॥३१

वे यज्ञ, दान, शान्ति, व्रत, उपवास, विविध होम तथा पितृतर्पणों के द्वारा महादेव की अर्चना करते हैं ।३१

तेषां वै रुद्रसायुज्यं सारूप्यं चातिदुर्लभम् ।
सलोकता च सामीप्यं जायते तत्प्रसादतः ॥३२

---

१. दिवावृत्तगिरीन्द्रश्च इति, देवपूर्वांगिरिन्द्रश्च इति पा० । २. तिष्यान्तस्य इति, तिष्यास्तत्र इति पा० । ३. होमैः स्वाध्यायतर्पणैरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें रुद्र की कृपा से रुद्रसायुज्य, अतिदुर्लभ रुद्रसारूप्य, रुद्रसालोक्य तथा रुद्रसामीप्य की प्राप्ति होती है ।३२

क्रौंचद्वीपस्य विस्तारादि्द्विगुणेन समन्ततः ।
शाकद्वीपः स्थितो विप्रा आवेष्टच दधिसागरम् ॥३३

क्रौञ्चद्वीप से द्विगुण विस्तृत शाकद्वीप है, जो चारों ओर से दधिसागर को आवेष्टित करके स्थित है ।३३

उदयो रैवतश्चैव श्यामकाष्ठगिरिस्तथा[1] ।
आम्बिकेयस्तथा रम्यः केसरी चेति पर्वताः ॥३४

वहाँ उदय, रैवत, श्यामक, अष्ठगिरि, आम्बिकेय, रम्य तथा केसरी नामक, (सात) कुलपर्वत हैं ।३४

सुकुमारी कुमारी च नलिनी वेणुका तथा ।
इक्षुका धेनुका चैव गभस्तिश्चेति निम्नगाः ॥३५

फिर सुकुमारी, कुमारी, नलिनो, वेणुका, इक्षुका, धेनुका तथा गभस्ति नामक सात नदियाँ हैं ।३५

आसां पिबन्तः सलिलं जीवन्ति तत्र मानवाः ।
अनामयाश्चाशोकाश्च रागद्वेषविवर्ज्जिताः ॥३६

वहाँ के मनुष्य इन नदियों का जल पीकर जीवित रहते हैं वे नीरोग, शोकरहित तथा रागद्वेष से वर्जित हैं ।३६

मृगाश्च मगधाश्चैव मानसा मन्दगास्तथा ।
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चात्र क्रमेण तु ॥३७

मृग, मगध, मानस तथा मन्दक नाम से वहाँ क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र पुकारे जाते हैं ।३७

यजन्ति सततं देवं सर्वलोकैकसाक्षिणम् ।
व्रतोपवासैर्विविधैर्देवदेवं दिवाकरम् ॥३८

वे सब समस्त लोंको के एक मात्र साक्षी, देवाधिदेव सूर्य की विविध प्रकार के व्रतों और उपवासों से आराधना करते हैं ।३८

तेषां वै सूर्यसायुज्यं सामीप्यञ्च सरूपता ।
सलोकता च विप्रेन्द्रा जायते तत्प्रसादतः ॥३९

१. श्यामाकास्त इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विप्रेन्द्रो ! सूर्यदेव की कृपा से उन लोगों को सूर्यसायुज्य, सूर्य सामीप्य, सूर्यसारूप्य, और सूर्यसालोक्य मोक्ष की प्राप्ति होती है ।३९

शाकद्वीपं समावृत्य क्षीरोदः सागरः स्थितः ।
श्वेतद्वीपश्च तन्मध्ये नारायणपरायणाः ॥४०

शाकद्वीप को घेरकर क्षीरसागर अवस्थित है। उसके मध्य में श्वेतद्वीप है। जहाँ के निवासी नारायण के महान् भक्त होते हैं ।४०

तत्र पुण्या जनपदा नानाश्चर्यसमन्विताः ।
श्वेतास्तत्र नरा नित्यं जायन्ते विष्णुतत्पराः ॥४१

वहाँ अनेक प्रकार की आश्चर्य जनक वस्तुओं से समन्वित पवित्र जनपद हैं। वहाँ के मनुष्य श्वेतकर्म वाले एवं विष्णु में निरत रहते हैं ।४१

नाधयो व्याधयस्तत्र जरामृत्युभयं न च ।
क्रोधलोभविनिर्मुक्ता मायामात्सर्यवर्जिताः ॥४२

वहाँ न तो मानसिक व्यथायें होती हैं और न शारीरिक। वृद्धावस्था और मृत्यु का भय भी नहीं होता। वहाँ के लोग क्रोध तथा लोभ से रहित होते हैं। माया और मात्सर्य उनका स्पर्श भी नहीं करते ।४२

नित्यपुष्टा निरातङ्का नित्यानन्दाश्च भोगिनः ।
नारायणसमाः सर्वे नारायणपरायणाः ॥४३

वे नित्यपुष्ट, भयरहित, नित्य आनन्दी तथा भोगी होते हैं। सभी नारायण के तुल्य एवं नारायण परायण होते हैं ।४३

केचिद्ध्यानपरा नित्यं योगिनः संयतेन्द्रियाः ।
केचिज्जपन्ति तप्यन्ति केचिद्विज्ञानिनोऽपरे ॥४४

कोई ध्यानपरायण, नित्य योगी तथा वशेन्द्रिय होते हैं। कोई जप-तप में लगे रहते हैं और कोई विज्ञानी होते हैं ।४४

अन्ये निर्बीजयोगेन ब्रह्मभावेन भाविताः ।
ध्यायन्ति तत्परं ब्रह्म वासुदेवं सनातनम्[1] ॥४५

दूसरे लोग निर्विकल्प समाधि के द्वारा ब्रह्म भाव से भावित होकर सनातन, वासुदेव, परब्रह्म का ध्यान करते हैं ।४५

---

१. परं पदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकान्तिनो निरालम्बा महाभागवताः परे ।
पश्यन्ति[1] तत्परे ब्रह्म विष्ण्वाख्यं तमसः परम् ॥४६

कोई एकान्तप्रिय, निरालम्ब, महान् भगवद् भक्त तमोगुण से परे विष्णु नामक ब्रह्म को देखते हैं ।४६

सर्वे चतुर्भुजाकाराः शंखचक्रगदाधराः ।
सुपीतवाससः सर्वे श्रीवत्साङ्कितवक्षसः ॥४७

सब चतुर्भुज शंख-चक्र-गदाम् पद्मधारी, पीताम्बर, वक्षःस्थल पर श्रीवत्स चिह्न से युक्त होते हैं ।४७

अन्ये महेश्वरपरास्त्रिपुण्ड्राङ्कितमस्तकाः ।
सुयोगाद्भूतिकरणा महागरुडवाहनाः ॥४८

दूसरे लोग शिवपरायण, त्रिपुण्ड्र से अंकित मस्तक वाले, योगावलम्बन वश ऐश्वर्ययुक्त शरीर वाले तथा गरुड़ पर आरूढ़ होते हैं ।४८

सर्वे शक्तिसमायुक्ता नित्यानन्दाश्च निर्मलाः ।
वसन्ति तत्र पुरुषा विष्णोरन्तरचारिणः ॥४९

सभी शक्तिसम्पन्न, नित्यानन्द, निर्मल, तथा विष्णु के हृदय विहारी पुरुष वहाँ निवास करते हैं ।४९

तत्र नारायणस्यान्यद्दुर्गमं दुरतिक्रमम् ।
नारायणं नाम पुरं प्रासादैरुपशोभितम्[2] ॥५०

वहाँ नारायण का दूसरा दुर्गम, अतिक्रमण करने के अयोग्य, नारायण नामक नगर प्रासादों से शोभित है ।५०

हेमप्राकारसंयुक्तं स्फाटिकैर्मण्डपैर्युतम् ।
प्रभासहस्रकलिलं दुराधर्षं सुशोभनम् ॥५१

उसमें सोने की चहारदीवारी है और स्फटिकमणि के मण्डप हैं। वह सहस्र प्रभाओं से अन्वित, अनाक्रमणीय एवं अत्यन्त सुन्दर है ।५१

हर्म्यप्रासादसंयुक्तं[3] महाट्टालसमाकुलम् ।
हेमगोपुरसाहस्रैर्नानारत्नोपशोभितैः ॥५२

शुभ्रास्तरणसंयुक्तैर्विचित्रैः समलंकृतम् ।
नन्दनैर्विविधाकारैः स्रवन्तीभिश्च शोभितम् ॥५३

---

१. परममिति पा० । २. व्यासाद्यैरिति पा० । ३. प्राकार इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ बहुत-से महल तथा प्रासाद हैं। बड़ी-बड़ी अट्टालिकायें हैं। नाना प्रकार के रत्नों से शोभित, धवल आस्तरणों से युक्त, विचित्र आनन्द जनक तथा विविध आकारों के बने सहस्रों सोने के गोपुरों (नगरद्वारों) से वह अलंकृत था। वह नदियों से भी शोभित था।५२-५३।

सरोभिः सर्वतो युक्तं वीणावेणुनिनादितम्।
पताकाभिर्विचित्राभिरनेकाभिश्च शोभितम् ॥५४

सब ओर सरोवर भी उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। वीणा और वंशी की ध्वनि गूंजती रहती थी। चित्र-विचित्र अनेक पताकाओं से वह शोभित था।५४

वीथिभिः सर्वतो युक्तं सोपानैः रत्नभूषितैः।
[1]नदीशतसहस्राढ्यं दिव्यगाननिनादितम्[2] ॥५५

वहाँ सब ओर गलियाँ तथा रत्नभूषित सीढ़ियाँ थीं। सहस्रों नदियाँ बहती थीं तथा दिव्य संगीत होता रहता था।५५

हंसकारण्डवाकीर्णं चक्रवाकोपशोभितम्।
चातुर्द्वारमनौपम्यमगम्यं देवविद्विषाम् ॥५६

हंस, कारण्डव (बत्तख) चक्रवाक आदि पक्षियों से वहाँ के सरोवर व्याप्त रहते थे। उस नगर के अनुपम चारों द्वार देवद्रोहियों से अप्राप्य थे।५६

तत्र तत्राप्सरःसंघैर्नृत्यद्भिरुपशोभितम्।
नानागीतविधानज्ञैर्देवानामपि दुर्लभैः ॥५७

उस नगर में जहाँ-तहाँ अप्सरायें नाचती रहती थीं। देवताओं के लिए भी दुर्लभ वे नाना प्रकार के गीत-विधानों की विशेषज्ञ थीं।५७

नानाविलाससम्पन्नैः कामुकैरतिकोमलैः।
प्रभूतचन्द्रवदनैर्नूपुरारावसंयुतैः ॥५८

वे विविध विलासों से सम्पन्न, कामुक, अत्यन्त कोमल, पूर्णचन्द्रमुखी एवं नूपुरों की ध्वनि से युक्त थीं।५८

ईषत्स्मितैः सुबिम्बोष्ठैर्बालमुग्धमृगेक्षणैः।
अशेषविभवोपेतैस्तनुमध्यविभूषितैः ॥५९

वे मुसकरा कर बोलती थीं। बिम्बाफल के समान उनके ओठ थे। बच्चे एवं मुग्ध मृगों की आँखों के समान उनकी आँखें थीं। सम्पूर्ण ऐश्वर्यों से सम्पन्न थीं। शरीर का मध्य भाग पतला था।५९

---

१. नारीति पा०। २. दिव्यगेयसमन्वितमिति, दिव्यपेयसमन्वितमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुराजहंसचलनैः सुवेषैर्मधुरस्वनैः ।
संलापालापकुशलैर्दिव्याभरणभूषितैः[1] ॥६०

राजहंस के समान उनकी चाल थी। वेश-भूषा सुन्दर और शब्द मधुर था। बात-चीत और आलाप करने में वे कुशल थीं। दिव्य आभूषणों से विभूषित रहती थीं।६०

स्तनभारविनम्रैश्च मधुघूर्णितलोचनैः ।
नानावर्णविचित्राङ्गैर्नानाभोगरतिप्रियैः ॥६१

स्तनों के भार से झुकी रहती थीं, नेत्र मद-विह्वल रहते थे। उनके अंग नाना वर्णों से विचित्र थे। वे विविधभोग एवं रति क्रीड़ा प्रिय थीं।६१

उत्फुल्लकुसुमोद्यानैस्तद्भूतशतशोभितम् ।
असंख्येयगुणं शुद्धमसंख्यैस्त्रिदशैरपि ॥६२

उस नगर में खिले हुए फूलों के बगीचे हैं। वह सैकड़ों प्राणियों से शोभित है। वह असंख्य गुणों से युक्त तथा असंख्य देवों से भी पवित्र है।६२

श्रीमत्पवित्रं देवस्य श्रीपतेरमितौजसः ।
तस्य मध्येऽतितेजस्कमुद्यत्प्राकारतोरणम् ॥६३
स्थानं तद्वैष्णवं दिव्यं योगिनां सिद्धिदायकम् ।
तन्मध्ये भगवानेकः पुण्डरीकदलद्युतिः ॥६४
शेतेऽशेषजगत्सूतिः शेषाहिशयने हरिः ।
विचिन्त्यमानो योगीन्द्रैः सनन्दनपुरोगमैः ॥६५

अमित तेजस्वी लक्ष्मीपति विष्णुदेव का वह नगर शोभायमान एवं पवित्र है। उसके मध्य में अत्यन्त तेजस्वी कुछ ऊँची चहारदीवारी एवं तोरण सहित एक दिव्य स्थान है। वह योगियों के लिए सिद्धिदायक है। उसके मध्य में कमलदल के समान कान्ति वाले, अशेष जगत् के मूल स्थान भगवान् विष्णु शेषनाग की शय्या पर अकेले शयन करते हैं और सनन्दन आदि योगीन्द्र उनका चिन्तन करते रहते हैं।६३-६५।

स्वात्मानन्दामृतं पीत्वा पुरस्तात्तमसः परः ।
पीतवासा[2] विशालाक्षो महामायो महाभुजः ॥६६

वे हरि आत्मानन्द रूप अमृत पान करके तमसे परे अवस्थित हैं। उनके वस्त्र पीले हैं। नेत्र विशाल हैं। माया और भुजायें महान् हैं।६६

---

१. संलापोल्लाप इति पा०। २. सुपीतवसनोऽनन्तः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षीरोदकन्यया नित्यं गृहीतचरणद्वयः ।
सा च देवी जगद्वन्द्या पादमूले हरिप्रिया ॥६७

क्षीरसागर की पुत्री लक्ष्मी उनके दोनों चरणों की सेवा करती हैं। वह विष्णु-प्रिया देवी जगद्वंद्य है तथा भगवान् के चरणमूल में रहती है ।६७

समास्ते तन्मना नित्यं पीत्वा नारायणामृतम् ।
न तत्राधार्मिका यान्ति न च देवान्तरालयाः[1] ॥६८

वैकुण्ठं नाम तत्स्थानं त्रिदशैरपि वन्दितम् ।
न मे प्रभवति प्रज्ञा कृत्स्नशास्त्रनिरूपणे[2] ॥६९

वे देवी नित्य नारायण रूपी अमृत पीकर उनमें मन को लगाये रहती हैं। उस स्थान में अधार्मिक लोग नहीं जाते हैं और अन्य देव के मन्दिर भी वहाँ नहीं है। उस स्थान का नाम वैकुण्ठ है। देवगण भी उसकी वन्दना करते हैं। सम्पूर्ण शास्त्र के निरूपण में मेरी बुद्धि समर्थ नहीं है ।६८-६९।

एतावच्छक्यते वक्तुं नारायणपुरं हि तत् ।
स एव परमं ब्रह्म वासुदेवः सनातनः ॥७०
शेते नारायणः श्रीमान्मायया मोहयञ्जगत् ॥७१

हम इतना ही कह सकते हैं कि वह नारायणपुर है। वही परब्रह्म, सनातन, वासु-देव, श्रीमान् नारायण माया से जगत् को मोहित करके सोते हैं ।७०-७१।

नारायणादिदं जातं तस्मिन्नेव व्यवस्थितम् ।
तमाश्रयति[1] कालान्ते स एव परमा गतिः ॥७२

यह जगत् नारायण से उत्पन्न है और उन्हीं में अवस्थित है। महाप्रलयकाल में जगत् उन्हीं में प्रविष्ट हो जाता है। सुतराम् वे ही परम गति हैं।

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनविन्यास० × एकोनपञ्चाशोऽध्यायः ॥४९

श्रीकूर्मपुराण में भुवनविन्यास प्रकरण में उनचासवाँ अध्याय समाप्त ॥४९॥

●

---

१. देवान्तराश्रयाः इति पा० । २. कृष्णशास्त्र इति पा० । ३. तमेवाभ्येति इति, तं समभ्येति कल्पान्ते इति पा० । × अष्टचत्वारिंशः लि० पु० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चाशोऽध्यायः

सूत उवाच

शाकद्वीपस्य विस्तारादिद्विगुणेन व्यवस्थितः ।
क्षीरार्णवं 'समाश्रित्य द्वीपं पुष्करसंज्ञितम् ॥१

सूत बोले—पुष्कर नामक द्वीप शाक द्वीप की अपेक्षा विस्तार में द्विगुण है। वह क्षीरसमुद्र को आश्रित करके अवस्थित है।१

एक एवात्र विप्रेन्द्राः पर्वतो मानसोत्तरः ।
योजनानां सहस्राणि चोद्दवं पञ्चाशदुच्छ्रितः ॥२

तावदेव च विस्तीर्णः सर्वतः पारिमण्डलः ।
स एव द्वीपश्चार्द्धेन मानसोत्तरसंस्थितः[2] ॥३

विप्रश्रेष्ठो ! पुष्कर द्वीप में मानसोत्तर नामक एक ही कुलपर्वत है। इसका विस्तार हजार योजन, ऊँचाई पचास योजन और चारो दिशाओं में उसका परिमण्डल भी पचास योजन ही है। उसी द्वीप का आधा भाग मानसोत्तर नाम से कहा जाता है।२-३।

एक एव महाभागः सन्निवेशो द्विधा कृतः ।
तस्मिन्द्वीपे स्मृतौ द्वौ तु पुण्यौ जनपदौ शुभौ ॥४

एक ही महाभाग का संस्थान दो भागों में विभक्त है। उस द्वीप में दो पवित्र एवं शुभ जनपद हैं।४

अपरौ मानसस्याथ पर्वतस्यानुमण्डलौ ।
महावीतं[1] स्मृतं वर्षं धातकीखण्डमेव च ॥५

वे दोनों मानस पर्वत के समान मण्डलाकार हैं। वहां दो वर्ष हैं—महावीत तथा धातकीखण्ड।५

स्वादूदकेनोदधिना पुष्करः परिवारितः ।
तस्मिन्द्वीपे महावृक्षो न्यग्रोधोऽमरपूजितः ॥६

---

१. समावृत्य इति पा०। २. संज्ञितः इति पा०। ३. महाबीजमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुष्कर द्वीप स्वादिष्ठ जल वाले समुद्र से परिवेष्टित है। उस द्वीप में देवों से पूजित एक महान् वटवृक्ष है।६

तस्मिन्निवसति ब्रह्मा विश्वात्मा विश्वभावनः।
तत्रैव मुनिशार्दूल शिवनारायणालयः ॥७

वहाँ विश्वजनक, विश्वात्मा ब्रह्मा निवास करते हैं। मुनिश्रेष्ठ! वहीं शिवनारायण का मन्दिर है।७

वसत्यत्र महादेवो हरोऽर्द्धं हरिरव्ययः।
सम्पूज्यमानो ब्रह्माद्यैः कुमाराद्यैश्च योगिभिः ॥८

वहाँ आधी मूर्ति में महादेव हर और आधी में अविनाशी हरि निवास करते हैं (अर्थात् उस मन्दिर में हरिहर की मूर्ति है)। उनकी पूजा ब्रह्मा आदि देवगण तथा कुमार आदि योगिगण करते हैं।८

गन्धर्वैः किन्नरैर्यक्षैरीश्वरः कृष्णपिङ्गलः।
स्वस्थास्तत्र प्रजाः सर्वा ब्राह्मणाः[1] शतशस्त्विषः ॥९

निरामया विशोकाश्च रागद्वेषविवर्जिताः।
सत्यानृते न तत्रास्तां नोत्तमाधममध्यमाः ॥१०

गन्धर्व, किन्नर, तथा यक्ष भी उनकी पूजा करते हैं। उन ईश्वर का वर्ण कृष्ण-पिंगल है। वहाँ सभी प्रजायें स्वस्थ हैं। ब्राह्मण शतशः कान्तिविशिष्ट हैं, नीरोग, शोकरहित तथा राग-द्वेष से वर्जित हैं। वहाँ सत्य, मिथ्या, उत्तम, अधम और मध्यम नहीं है।९-१०।

न वर्णाश्रमधर्माश्च न नद्यो न च पर्वताः।
परेण पुष्करेणाथ समावृत्य स्थितो महान् ॥११

स्वादूदकसमुद्रस्तु समन्ताद्द्विजसत्तमः।
परेण तस्य महती दृश्यते लोकसंस्थितिः ॥१२

वहाँ न वर्णाश्रम धर्म हैं, न नदियाँ और न पर्वत ही हैं। द्विजश्रेष्ठो! महान् स्वादिष्ठ जल वाला समुद्र पुष्करद्वीप को घेरकर स्थित है। वहाँ महती लोक-स्थिति दिखाई देती है।११-१२।

काञ्चनी द्विगुणा भूमिः सर्वत्रैकशिलोपमा।
तस्याः परेण शैलस्तु मर्यादा भानुमण्डलः[2] ॥१३

---

१. ब्राह्मणाः सदृशत्विषः इति, सदृशायुषः इति पा०। २. स्थाणुमण्डल इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे द्विगुण भूमि सुवर्णमयी है, जो एक शिलाखण्ड के समान विद्यमान है। उससे परे भानुमण्डल नामक मर्यादापर्वत है ।१३

प्रकाशश्चाप्रकाशश्च लोकालोकः स उच्यते ।
योजनानां सहस्राणि दश तस्योच्छ्रयः स्मृतः ॥१४

उसका अर्धांश प्रकाशित है और आधा अप्रकाशित है। इसलिए वह लोकालोक नाम से विख्यात है। वह दश हजार योजन ऊँचा है ।१४

तावानेव च विस्तारो लोकालोकमहागिरेः ।
समावृत्य तु तं शैलं सर्वतो वै समस्थितम् ॥१५
तमश्चाण्डकटाहेन समन्तात्परिवेष्टितम् ।
एते सप्त महालोकाः पातालाः सम्प्रकीर्त्तिताः[1] ॥१६

लोकालोक पर्वत का विस्तार भी उतना ही है। अण्डकटाह से वेष्टित अन्धकार इस पर्वत को चारों ओर से आवृत किये हुए है। ये सात महालोक और पाताल वर्णित कर दिये हैं ।१५-१६।

ब्रह्माण्डाशेषविस्तारः[2] संक्षेपेण मयोदितः ।
अण्डानामीदृशानां तु कोटयो ज्ञेयाः सहस्रशः ॥१७

ब्रह्माण्ड का अशेष विस्तार संक्षेप में मैंने बता दिया। ऐसे ब्रह्माण्डों की संख्या हजारों करोड़ है ।१७

सर्वगत्वात्प्रधानस्य कारणस्याव्ययात्मनः ।
अण्डेष्वेतेषु सर्वेषु भुवनानि चतुर्दश ॥१८

क्योंकि कारणरूपी अव्ययात्मा भगवान् की मूल प्रकृति सर्वगामिनी है। इन ब्रह्माण्डों में चौदह भुवन विद्यमान हैं ।१८

तत्र तत्र चतुर्वक्त्रा रुद्रा नारायणादयः ।
दशोत्तरमथैकैकमण्डावरणसप्तकम्[3] ॥१९
समन्तात्संस्थितं विप्रास्तत्र यान्ति मनीषिणः ।

प्रत्येक ब्रह्माण्ड में चतुर्मुख ब्रह्मा, रुद्र और नारायण आदि देव हैं। हे विप्रगण! पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, भूतादि तथा महत्तत्व—ये जो सात आवरण ब्रह्माण्ड को सब दिशाओं में आवृत किए हुए हैं, इनमें एक-एक आवरण पूर्वापेक्षया दश

---

१. सप्त कीर्त्तिता इति पा०। २. ब्रह्माण्डस्यैव इति पा०। ३. वरक इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दश गुण अधिक प्रमाण का है (जैसे पृथिव्यावरण कोटियोजन प्रमाण है तो जलावरण उससे दशगुण अधिक है, इत्यादि)। उस स्थान में ज्ञानी लोग जाते हैं ।१९½

अनन्तमेवमव्यक्तमनादिनिधनं महत् ॥२०
अतीत्य वर्त्तते सर्वं जगत्प्रकृतिरक्षरम् ।
अनन्तत्वमनन्तस्य यतः संख्या न विद्यते ॥२१

अनन्त, अद्वितीय, अव्यक्त, अनादिनिधन, महत्, जगत् की प्रकृतिस्वरूप, अक्षर ब्रह्म का अतिक्रमण करके वह स्थान विराजमान है। अनन्त होने के कारण अनन्त की संख्या नहीं है ।२०-२१।

[1]तदव्यक्तमिदं क्षेयं तन्ब्रह्म परमं ध्रुवम् ।
अनन्त एव सर्वत्र सर्वस्थानेषु पठ्यते ॥२२

उस परम ध्रुव ब्रह्म को अव्यक्त समझना चाहिए। यह ब्रह्म सर्वत्र सब स्थानों में अनन्त नाम से अभिहित किया जाता है ।२२

तस्य पूर्वं मयाप्युक्तं यत्तन्माहात्म्यमुत्तमम् ।
गतः स एष सर्वत्र सर्वस्थानेषु पूज्यते ॥२३

उसका उत्तम माहात्म्य मैंने भी पहले वर्णित किया है। वही सर्वत्र सब स्थानों में पूजित होता है ।२३

भूमौ रसातले चैव आकाशे पवनेऽनले ।
अर्णवेषु च सर्वेषु दिवि चैव न संशयः ॥२४

वह भूमि, पाताल, आकाश, वायु, अग्नि, स्वर्ग तथा सभी समुद्रों में विद्यमान है। इसमें सन्देह नहीं ।२४

तथा तमसि तत्त्वे वाप्येषु एव महाद्युतिः ।
अनेकधा [2]विभक्ताङ्गः क्रीडते पुरुषोत्तमः ॥२५

उसी प्रकार वह महाकान्तिमान् ब्रह्म अन्धकार एवं तत्त्व (प्राणिसमूह) में विद्यमान है। वह पुरुषोत्तम अनेक प्रकार से विभक्त होकर क्रीड़ा करता है ।२५

महेश्वरः परोऽव्यक्तादण्डमव्यक्तसम्भवम् ।
अण्डाद्ब्रह्मा समुत्पन्नस्तेन सृष्टमिदं जगत् ॥२६

वे महेश्वर अव्यक्त से श्रेष्ठ हैं। अव्यक्त से अण्ड की उत्पत्ति हुई। अण्ड से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। उन्होंने इस जगत् की सृष्टि की ।२६

१, तदव्यक्तमिति प्रोक्तं ज्ञेयं तत्परमं पदमिति पा०। २. विभक्तश्च इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे भुवनकोशवर्णनं नाम × पञ्चाशोऽध्यायः ॥५०

श्रीकूर्मपुराण में भुवनकोशवर्णन नामक पचासवाँ अध्याय समाप्त ॥५०॥

●

एकपञ्चाशोऽध्यायः

अथ मन्वन्तरकीर्तने विष्णुमाहात्म्यम्

ऋषय ऊचुः

अतीतानागतानीह यानि मन्वन्तराणि वै ।
तानि त्वं कथयास्मभ्यं व्यासञ्च द्वापरे युगे ॥१

ऋषिवृन्द बोले—जो मन्वन्तर बीत गये हैं और जो आने वाले हैं, उन्हें हमें बताइए। द्वापर युग में होने वाले व्यास के विषय में भी कहिए।१

वेदशाखाप्रणयिनो देवदेवस्य धीमतः ।
[1]धर्मार्थानां प्रवक्तारो हीशानस्य कलौ युगे ॥२

देवाधिदेव, धीमान्, ईशान के धर्म, अर्थों के प्रवक्ता एवं वेदशाखा के प्रणेता कलियुग में हुए हैं।२

कियन्तो देवदेवस्य शिष्याः कलियुगेऽपि वै ।
एतत्सर्वं समासेन सूत वक्तुमिहार्हसि ॥३

हे सूत! कलियुग में देवाधिदेव के कितने शिष्य हुए हैं? यह सब संक्षेप में यहाँ आप के बताने योग्य हैं।३

सूत उवाच

मनुः स्वायम्भुवः पूर्वं ततः [2]स्वारोचिषो मतः ।
उत्तमस्तामसश्चैव रैवतश्चक्षुषस्तथा ॥४

सूत बोले—पहले स्वायम्भुव मनु हुए। उनके पश्चात् स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत तथा चाक्षुष हुए।४

× एकोनपंचाशः लि० पु०। १. तथावतारान्धर्मार्थंमीशानस्य इति पा०। २. स्वारोचिषस्ततः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षडेते मनवोऽतीताः साम्प्रतं तु रवेः सुतः ।
वैवस्वतोऽयं सप्तैतत्सप्तमं वर्त्तते परम् ॥५

ये छह मनु बीत चुके, इस समय सूर्यपुत्र सप्तम वैवस्वत मनु का काल चल रहा है ।५

स्वायम्भुवं तु कथितं कल्पादावन्तरं मया ।
अत ऊर्द्ध्वं निबोधध्वं मनोः स्वारोचिषस्य तु ॥६

कल्प के प्रारंभ में स्वायम्भुव मनु का अधिकार काल (मन्वन्तर) मैं बता चुका हूँ। अब इसके बाद स्वारोचिष मनु का मन्वन्तर सुनो ।६

पारावताश्च तुषिता देवाः स्वारोचिषेऽन्तरे ।
विपश्चिन्नाम देवेन्द्रो [1]बभूवासुरमर्दनः ॥७

स्वारोचिष मन्वन्तर में पारावत तथा तुषित नामक देवता हुए तथा विपश्चित् नामक देवराज ने असुरों का मर्दन किया ।७

ऊर्ज्जस्तम्भस्तथा प्राणो दान्तोऽथ ऋषभस्तथा ।
तिमिरश्चार्वरीवांश्च सप्त सप्तर्षयोऽभवन् ॥८

उसमें ऊर्ज, स्तम्भ, प्राण, दान्त ऋषभ, तिमिर तथा अर्वरीवान् नामक सात सप्तर्षि हुए ।८

चैत्रकिम्पुरुषाद्यास्तु सुताः स्वारोचिषस्य तु ।
द्वितीयमेतदाख्यातमन्तरं शृणु चोत्तमम् ॥९

स्वारोचिष के चैत्र और किम्पुरुष आदि पुत्र हुए। यह द्वितीय मन्वन्तर वर्णित हुआ। अब उत्तम मनु के बारे में सुनो ।९

तृतीयेऽप्यन्तरे चैव उत्तमो नाम वै मनुः ।
सुशान्तिस्तत्र देवेन्द्रो बभूवामित्रकर्षणः ॥१०

तृतीय मन्वन्तर में उत्तम नामक मनु हुए। उस मन्वन्तर में सुशान्ति नामक देवेन्द्र शत्रुविनाशक हुए ।१०

सुधामानस्तथा सत्यः शिवश्चाथ प्रतर्द्दनः ।
वशवर्तिनः पञ्चैते गणा द्वादशकाः स्मृताः ॥११

सुधामा, सत्य, शिव, प्रतर्दन तथा वशवर्ती—ये पाँच द्वादशक गण कहलाये ।११

---

१. यस्यैतत्सप्तमो वर्त्ततेऽन्तरः इति पा० । ६. सूदन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजोगात्रोर्ध्वबाहुश्च सवनश्चानघस्तथा ।
सुतपाः शक्र इत्येते सप्त सप्तर्षयोऽभवन् ॥१२

रजस्, गात्र, ऊर्ध्वबाहु, सवन, अनघ, सुतपस् और शक्र—ये सात सप्तर्षि हुए ।१२

तामसस्यान्तरे देवाः [1]सुरायासहरास्तथा ।
सत्याश्च सुधियश्चैव सप्तविंशतिका गणाः ॥१३

तामस मन्वन्तर में सुरायासहर, सत्य और सुधी—इन नामों से सत्ताईस गण-देवता हुए ।१३

शिबिरिन्द्रस्तथैवासीच्छतयज्ञोपलक्षणः ।
बभूव शंकरे भक्तो महादेवार्च्चने रतः ॥१४

सौ यज्ञ करने वाले, शंकर के भक्त तथा महादेव की पूजा में निरत रहने वाले शिबि इन्द्र हुए ।१४

[2]ज्योतिर्द्धाम पृथक्कल्पश्चैत्रोऽग्निवसनस्तथा ।
पीवरस्त्वृषयो ह्येते सप्त तत्रापि चान्तरे ॥१५

उस मन्वन्तर में भी सप्तर्षि हुए, जिनके नाम हैं—ज्योतिर्धाम, पृथक्, कल्प, चैत्र, अग्नि, वसन तथा पीवर ।१५

पञ्चमे चापि विप्रेन्द्रा रैवतो नाम नामतः ।
मनुर्विभुश्च[3] तत्रेन्द्रो बभूवासुरमर्द्दनः ॥१६

विप्रश्रेष्ठो ! पञ्चम मन्वन्तर में रैवत नामक मनु तथा असुरमर्दनकारी विभु इन्द्र हुए ।१६

अमिता भूतयस्तत्र वैकुण्ठाश्च सुरोत्तमाः ।
एते देवगणास्तत्र चतुर्दश चतुर्दश ॥१७

अमित, भूति और वैकुण्ठ नामक चौदह सुरश्रेष्ठ गणदेवता हुए ।१७

हिरण्यरोमा वेदश्रीरूर्ध्वबाहुस्तथैव च ।
[4]वेदबाहुः सुबाहुश्च सपर्ज्जन्यो महामुनिः ॥१८
एते सप्तर्षयो विप्रास्तत्रासन् रैवतेऽन्तरे ।

विप्रवृन्द ! हिरण्यरोमा, वेदश्री, ऊर्ध्वबाहु, वेदबाहु, सुबाहु, सपर्जन्य और महामुनि—ये सप्तर्षि रैवतमन्वन्तर में हुए ।१८½।

---

१. मृगबाहुवयस्तथा इति पा० । २. ज्योतिर्धर्मा पृथुः काव्यश्चैत्रोऽग्निर्वरुणस्तथा इति पा० । ३. वसुश्च इति पा० । ४. देवबाहुः सुधामा च पर्जन्यश्च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वारोचिषश्चोत्तमश्च तामसो रैवतस्तथा ॥१९
प्रियव्रतान्विता ह्येते चत्वारो मनवः स्मृताः ।
षष्ठे मन्वन्तरे चापि चाक्षुषस्तु मनुर्द्विजाः ॥२०

स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत—ये चार मनु प्रियव्रत के वंशज हैं। द्विजगण! चाक्षुष नामक मनु छठें मन्वन्तर में हुए।२०

मनोजवस्तथैवेन्द्रो देवांश्चैव निबोधत ।
आद्याः [1]प्रभूतभाव्याश्च प्रथनाश्च दिवौकसः ॥२१
महानुभावा लेख्याश्च पञ्च[2] देवगणाः स्मृताः ।
विरजाश्च[3] हविष्मांश्च सोमो मनुसमः स्मृतः ॥२२
अविनामा सविष्णुश्च सप्तासन्नृषयः शुभाः ।
विवस्वतः सुतो विप्राः श्राद्धदेवो महाद्युतिः ॥२३

उसी मन्वन्तर में हुए मनोजव नामक इन्द्र तथा देवगण को सुन लीजिए। आद्य प्रभूत, भाव्य, प्रथन और लेख्य—ये पाँच महानुभाव देवगण स्मरण किये गये हैं। विरज, हविष्मान् सोम, मनु, सम, अविनामा और सविष्णु—ये सात पवित्र ऋषि (सप्तर्षि) हुए हैं। विप्रवृन्द! विवस्वान् के पुत्र महाकान्तिमान् श्राद्धदेव हुए।२१-२३।

मनुः संवर्त्तनो विप्राः साम्प्रतं सप्तमेऽन्तरे ।
आदित्या वसवो रुद्रा देवास्तत्र मरुद्गणाः ॥२४

विप्रवृन्द! सम्प्रति सातवें मन्वन्तर में वही मनु हैं। इस मन्वन्तर में आदित्य, वसु, रुद्र तथा मरुद्गण देवता हैं।२४

पुरन्दरस्तथैवेन्द्रो बभूव परवीरहा ।
वसिष्ठः कश्यपश्चात्रिर्जमदग्निश्च गौतमः ॥२५
विश्वामित्रो भरद्वाजः सप्त सप्तर्षयोऽभवन् ।

उसमें शत्रुसंहारकारी पुरन्दर इन्द्र हैं। वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, जमदग्नि, गौतम, विश्वामित्र तथा भारद्वाज—ये सातों सप्तर्षि हैं।२५½।

विष्णुशक्तिरनौपम्या सत्त्वोद्रिक्ता स्थिता स्थितौ ॥२६

---

१. प्रसूता भव्याश्च पृथुगाश्च इति पा०। २. पञ्चैते हृष्टका गणा इति, पञ्चैतेऽप्यष्टका गणा इति पा०। ३. सुमेधा विरजाश्चैव हविष्मांश्च तमोमधुरिति, हविष्मानुत्तमो मधुरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तदंशभूता राजानः सर्वे च त्रिदिवौकसः ।
स्वायम्भुवेऽन्तरे पूर्वं प्रकृत्यां मानसः सुतः ॥२७
रुचेः प्रजापतेर्जज्ञे तदंशेनाभवद्द्विजाः ।
ततः पुनरसौ देवः प्राप्ते स्वारोचिषेऽन्तरे ॥२८

इस मन्वन्तर में अनुपमा, सत्त्वगुणावलम्बिनी विष्णुशक्ति रक्षा के लिए अवस्थित है। सभी देववर्ग और नृपगण उसी के अंश से सम्भूत हैं। द्विजगण! स्वायम्भुव मन्वन्तर में पूर्व काल में प्रकृति के गर्भ से रुचि प्रजापति को एक मानस पुत्र हुआ। उसके अंश से रौच्यमनु का जन्म हुआ। अनन्तर पुनः स्वारोचिष मन्वन्तर उपस्थित हुआ।२६-२८।

तुषितायां समुत्पन्नस्तुषितैः सह दैवतैः ।
उत्तमे त्वन्तरे विष्णुः सत्यैः सह सुरोत्तमः ॥२९
सत्यायामभवत्सत्यः सत्यरूपो जनार्दनः ।

यह देव तुषित देवताओं के साथ तुषिता में उत्पन्न हुआ। उत्तम मन्वन्तर में देवश्रेष्ठ सत्यरूप विष्णु सत्या के गर्भ से सत्य नाम से उत्पन्न हुए।२९½।

तामसस्यान्तरे चैव सम्प्राप्ते पुनरेव हि ॥३०
हर्यायां हरिभिर्देवैर्हरिरेवाभवद्धरिः[1] ।

तामस मन्वन्तर के उपस्थित होने पर पुनः हरि (विष्णु) ने हर्या के गर्भ से हरि नाम से जन्म ग्रहण किया।३०½।

रैवतेऽप्यन्तरे चैव [2]सङ्कल्पान्मानसो हरिः ॥३१
सम्भूतो मानसैः साद्धं देवैः सह महाद्युतिः ।

रैवत मन्वन्तर में भी महाकान्तिमान् हरि संकल्प से मानसदेवों के मानसपुत्र रूप में उत्पन्न हुए।३१½।

चाक्षुषेऽप्यन्तरे चैव वैकुण्ठः पुरुषोत्तमः ॥३२
विकुण्ठायामसौ जज्ञे वैकुण्ठैर्दैवतैः सह ।
मन्वन्तरे च सम्प्राप्ते तथा वैवस्वतेऽन्तरे ॥३३

चाक्षुष मन्वन्तर में भी पुरुषोत्तम वैकुण्ठ देवताओं के साथ विकुण्ठा से उत्पन्न हुए। वैवस्वत मन्वन्तर के आ जाने पर विष्णु कश्यप से अदिति में वामन रूप में अवतीर्ण हुए।३३½।

---

१. हरिरेषोऽभवदिति पा०। २. संभूत्यां मानसोऽभवदिति, सम्भूत्यां मानसो हरिरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वामनः कश्यपाद्विष्णुरदित्यां सम्बभूव ह ।
[1]त्रिभिः क्रमैरिमाँल्लोकाञ्जित्वा येन महात्मना ॥३४

पुरन्दराय त्रैलोक्यं दत्तं निहतकण्टकम् ।
इत्येतास्तनवस्तस्य सप्तमन्वन्तरेषु वै ॥३५

उन महात्मा ने तीन पगों में इन तीन लोकों को जीतकर इन्द्र को निष्कण्टक त्रिलोकी-राज्य दे दिया। इस प्रकार सात मन्वन्तरों में भगवान् का शरीर सात रूपों में प्रकट हुआ।३४-३५।

सप्त चैवाभवन्विप्रा याभिः संकर्षिताः प्रजाः ।
यस्माद्विश्वमिदं कृत्स्नं वामनेन महात्मना ॥३६

हे विप्रगण ! उन्हीं के द्वारा प्रजायें संरक्षित हुईं। महात्मा वामन ने इस सम्पूर्ण विश्व को आक्रान्त कर लिया था।३६

तस्मात्सर्वैः स्मृतो [2]नूनं देवैः सर्वेषु दैत्यहा ।
एष सर्वं सृजत्यादौ पाति हन्ति च केशवः ॥३७

इसलिए सभी देवता सब समय उन दैत्यनाशक का निश्चित रूप से स्मरण करते हैं। ये केशव आदि में सबकी सृष्टि, पालन और संहार करते हैं।३७

भूतान्तरात्मा भगवान्नारायण इति श्रुतिः ।
एकांशेन जगत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः ॥३८

भगवान् नारायण सभी प्राणियों के अन्तरात्मा हैं। अपने एक अंश से सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करके नारायण अवस्थित हैं।३८

[3]चतुर्द्धा संस्थितो व्यापी सगुणो निर्गुणोऽपि च ।
एका भगवतो मूर्तिर्ज्ञानरूपा शिवामला ॥३९

ये चार भागों में विभक्त होकर सगुण, निर्गुण तथा व्यापक हैं। भगवान् की एक मूर्ति ज्ञानरूप, कल्याणरूप एवं निर्मल है।३९

वासुदेवाभिधाना सा गुणातीता सुनिष्कला ।
द्वितीया कालसंज्ञान्या तामसी शिवसंज्ञिता ॥४०

वासुदेव नाम की वह मूर्ति गुणों से परे तथा अत्यन्त शुद्ध है। उनकी दूसरी मूर्ति कालसंज्ञा तथा अन्य तामसी मूर्ति शिवसंज्ञक है।४०

---

१. त्रिविक्रमैरिति पा०। २. विष्णुर्विधेर्धातोः प्रवेशनादिति, देवैः सर्वदेवेषु दैत्यहा इति पा०। ३. चतुर्द्धारस्थितः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निहन्त्री सकलस्यान्ते वैष्णवी परमा तनुः ।
सत्त्वोद्रिक्ता तृतीयान्या प्रद्युम्नेति च संज्ञिता ॥४१

वह अन्त में सबका संहार करती हैं। वैष्णवी मूर्ति परम श्रेष्ठ है। सत्त्वगुण-विशिष्ट अन्य जो तीसरी मूर्ति है. वह प्रद्युम्न नाम की है।४१

[1]जगत्संस्थापयेद्विश्वं सा विष्णोः प्रकृतिर्ध्रुवा ।
चतुर्थी [2]वासुदेवस्य मूर्त्तिर्ब्रह्मेति संज्ञिता ॥४२

वह विष्णु की ध्रुव प्रकृति है और वही समस्त विश्व को स्थापित करती है। वासुदेव की चौथी मूर्ति 'ब्रह्मा' नाम से अभिहित की जाती है।४२

राजसी सानिरुद्धस्य पुरुषसृष्टिकारिता ।
यः स्वपित्यखिलं हत्वा प्रद्युम्नेन सह [3]प्रभुः ॥४३
नारायणाख्यो ब्रह्मासौ प्रजासर्गं करोति सः ।
यासौ नारायणतनुः प्रद्युम्नाख्या शुभा स्मृता ॥४४
तया [4]सम्मोहयेद्विश्वं सदेवासुरमानुषम् ।
ततः सैव जगन्मूर्तिः प्रकृतिः परिकीर्त्तिता ॥४५

वह अनिरुद्ध की सृष्टिकारिका राजसी मूर्ति है। जो प्रभु सबका संहार करके प्रद्युम्न के साथ सोते हैं, वे नारायण नामक ब्रह्मा प्रजा की सृष्टि करते हैं। जो वह नारायण की पवित्र मूर्ति प्रद्युम्न नाम से अभिहित हुई है, वह देव, दानव, मनुष्य सहित विश्व को संमोहित करती है। इसलिए वही जगन्मूर्ति प्रकृति कही जाती है।४३-४५।

वासुदेवो ह्यनन्तात्मा केवलो निर्गुणो हरिः ।
प्रधानं पुरुषं कालः सत्त्वत्रयमनुत्तमम् ॥४६
वासुदेवात्मकं नित्यमेतद्विज्ञाय मुच्यते ।
[5]एकञ्चेदं चतुष्पादं चतुर्द्धा पुनरच्युतः ॥४७
बिभेद वासुदेवोऽसौ प्रद्युम्नो भगवान् हरिः ।
कृष्णद्वैपायनो व्यासो विष्णुर्नारायणः स्वयम् ॥४८
अवातरत्स सम्पूर्णं स्वेच्छया भगवान् हरिः ।
अनाद्यन्तं परं ब्रह्म न देवा ऋषयो विदुः ॥४९

वासुदेव ही अनन्त आत्मा, अद्वितीय, निर्गुण, हरि, प्रधान, पुरुष, काल एवं अनु-

---

१. तथा संमोहयेद्विश्वं सदेवासुरमानुषम्, जगत्स्थापयते सर्वमिति च पा०। २. चानिरुद्धाख्या प्रद्युम्नमूर्तिकारिका इति पा०। ३. एकं देवमिति पा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्तम सत्त्वत्रय हैं। जो व्यक्ति वासुदेवात्मक इस नित्य विषय को जान लेता है, वह मुक्त हो जाता है। पुनः अच्युत, वासुदेव, प्रद्युम्न भगवान् हरि ने चतुष्पाद (वेद को) चार भागों में विभक्त कर दिया। विष्णु नारायण स्वयं हरि ही स्वेच्छा से कृष्णद्वैपायन व्यास रूप में अवतीर्ण हुए। ऋषि वा देवता कोई भी अनादि, अनन्त परम ब्रह्म को नहीं जानते हैं।४६-४९।

एकोऽयं वेद भगवान् व्यासो नारायणः प्रभुः।
इत्येतद्विष्णुमाहात्म्यं कथितं मुनिसत्तमाः॥
[1]एतत्सत्यं पुनः सत्यमेवं ज्ञात्वा न मुह्यति॥५०

एकमात्र नारायण, प्रभु भगवान् व्यास ही जानते हैं। मुनिश्रेष्ठो! यह मैंने विष्णु का माहात्म्य बताया है। यह सत्य है, पुनः सत्य है। इस प्रकार जान लेने पर व्यक्ति मोह में नहीं पड़ता।५०

इति श्री कूर्मपुराणे मन्वन्तरकीर्त्तने विष्णुमाहात्म्यं
× नामैकपञ्चाशोऽध्यायः॥५१

श्रीकूर्मपुराण में मन्वतर-वर्णन-प्रसंग में विष्णु-माहात्म्य नामक इक्यावनवाँ अध्याय समाप्त॥५१॥

●

द्विपञ्चाशोऽध्यायः

अथ वेदशाखाप्रणयनम्

सूत उवाच

अस्मिन्मन्वन्तरे पूर्वं वर्त्तमाने महान् [2]प्रभुः।
द्वापरे प्रथमे व्यासो[3] मनुः स्वायम्भुवो मतः॥१

सूत बोले—यह जो वर्तमान मन्वन्तर है, इससे पूर्व प्रथम द्वापर युग में महान् प्रभु स्वायम्भुव मनु व्यास हुये थे।१

बिभेद बहुधा वेदं नियोगाद्ब्रह्मणः प्रभोः।
द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः॥२

---

१. एतत्सर्वमिति पा०। × पंचाशः लि० पु०। २. विभुरिति पा०। ३. काल इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभु ब्रह्मा के आदेश से व्यास ने वेद को अनेक भागों में विभक्त कर दिया। द्वितीय द्वापर युग में प्रजापति वेदव्यास हुए ।२

तृतीये चोशना व्यासश्चतुर्थे स्याद्बृहस्पतिः ।
सविता पञ्चमे व्यासः षष्ठे मृत्युः प्रकीर्तितः ॥३

तीसरे द्वापर में शुक्र व्यास हुये और चौथे में बृहस्पति। पाँचवें में सूर्य व्यास हुये और छठें में मृत्यु व्यास हुए ।३

सप्तमे च तथैवेन्द्रो वसिष्ठश्चाष्टमे मतः ।
सारस्वतश्च[1] नवमे त्रिधामा दशमे मतः ॥४

सातवें द्वापर में इन्द्र व्यास हुए और आठवें में वसिष्ठ। नवम द्वापर में सारस्वत व्यास हुए और दशम में त्रिधामा ।४

एकादशे तु ऋषभः सुतेजा द्वादशे स्मृतः ।
त्रयोदशे तथा धर्मः सुचक्षुस्तु चतुर्दशे ॥५

ग्यारहवें में ऋषभ व्यास हुए और बारहवें में सुतेजा। तेरहवें में धर्म और चौदहवें में सुचक्षु व्यास हुए ।५

त्रय्यारुणिः पञ्चदशे षोडशे तु धनञ्जयः ।
कृतञ्जयः सप्तदशे ह्यष्टादशे ऋतञ्जयः ॥६

पन्द्रहवें में त्रय्यारुणि और सोलहवें में धनञ्जय व्यास हुए। सत्राहवें में कृतञ्जय तथा अठारहवें में ऋतञ्जय व्यास हुए ।६

ततो व्यासो भरद्वाजस्तस्माद्ध्वंतु गौतमः ।
वाचश्रवाश्चैकोविंशे तस्मान्नारायणः[2] परः ॥७

(उसके बाद उन्नीसवें में) भरद्वाज व्यास हुए। उसके पश्चात् (बीसवें में) गौतम व्यास हुए। इक्कीसवें में वाचश्रवा और तत्पश्चात् (बाइसवें में) नारायण ।७

तृणबिन्दुस्त्रयोविंशे वाल्मीकिस्तत्परः स्मृतः ।
पञ्चविंशे तथा प्राप्ते यस्मिन्वै द्वापरे द्विजाः ॥८

(सप्तविंशे तथा व्यासो जातूकर्णो महामुनिः ।)
पराशरसुतो व्यासः कृष्णद्वैपायनोऽभवत् ॥
स एव सर्ववेदानां पुराणानां प्रदर्शकः ॥९

१. वैवस्वतश्च इति पा० । २. तस्मात् शुष्मायण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेइसवें में तृण बिन्दु और तत्पश्चात् (चौबीसवें में) वाल्मीकि व्यास हुए। द्विजगण ! पचीसवें में द्वापर के आने पर शक्ति हुए। छब्बीसवें में पराशर, सत्ताइसवें में महामुनि जातूकर्ण हुए। अट्ठाइसवें में पराशर के पुत्र कृष्णद्वैपायन व्यास हुए। वही समस्त वेदों तथा पुराणों के प्रदर्शक हुए।८-९।

पाराशर्यो महायोगी कृष्णद्वैपायनो हरिः।
आराध्य देवमीशानं दृष्ट्वा स्तुत्वा[1] त्रिलोचनम् ॥१०

नारायण के अंश पराशर-पुत्र कृष्णद्वैपायन ने तीन नेत्र वाले ईशान शंकर की आराधना करके उनके दर्शन और स्तुति की।१०

तत्प्रसादादसौ व्यासं वेदानामकरोत्प्रभुः ॥११

उनकी कृपा से प्रभु व्यास ने वेदों का विभाग किया।११

अथ शिष्यान् स जग्राह चतुरो वेदपारगान्।
जैमिनिञ्च सुमन्तुञ्च वैशम्पायनमेव च ॥१२
पैलं तेषां चतुर्थञ्च पञ्चमं मां महामुनिः।
ऋग्वेदपाठकं पैलं जग्राह स महामुनिः ॥१३

अनन्तर उन्होंने चार शिष्यों को वेद-पारंगत बनाया जैमिनि, सुमन्तु, वैशम्पायन और चतुर्थ पैल को। महामुनि का पञ्चम शिष्य मैं हूँ। उन महामुनि ने पैल को ऋग्वेद का पाठक बनाया।१२-१३।

यजुर्वेदप्रवक्तारं वैशम्पायनमेव च।
जैमिनिं सामवेदस्य पाठकं[2] सोऽन्वपद्यत ॥१४

वैशम्पायन को यजुर्वेद का प्रवक्ता तथा जैमिनि को सामवेद का पाठक बनाया।१४

तथैवाथर्ववेदस्य सुमन्तुमृषिसत्तमम्।
इतिहासपुराणानि प्रवक्तुं मामयोजयत्[3] ॥१५

अथर्ववेद का पाठक ऋषिश्रेष्ठ सुमन्तु को बनाया और इतिहास पुराणों का प्रवचन करने के लिए मुझे नियुक्त किया।१५

एक आसीद्यजुर्वेदस्तं चतुर्द्धा प्रकल्पयत्।
चतुर्होत्रमभूत्तस्मिंस्तेन यज्ञमथाकरोत् ॥१६

---

१. श्रुत्वा इति, साम्बमिति पा०। २. श्रावकमिति पा०। ३. व्यकल्पयदिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यजुर्वेद एक था। उसे चार भागों में विभक्त किया। उसमें चतुर्होत्र प्रकरण है, उससे चातुर्होत्र यज्ञ किया।१६

आध्वर्यवं यजुर्भिः स्यादग्निहोत्रं द्विजोत्तमाः।
औद्गात्रं सामभिश्चक्रे ब्रह्मत्वञ्चाप्यथर्वभिः॥१७

हे द्विजश्रेष्ठो! यजुर्मन्त्रों से आध्वर्यव अग्निहोत्र किया। साममन्त्रों से औद्गात्र तथा अथर्वमन्त्रों से ब्रह्मत्व कल्पित किया।१७

ततः सत्रे च उद्धृत्य ऋग्वेदं कृतवान् प्रभुः।
यजूंषि तु यजुर्वेदं सामवेदं तु सामभिः॥१८

तदनन्तर प्रभु ने ऋचाओं को उद्धृत करके ऋग्वेद का निर्माण किया। यजुर्मन्त्रों को उद्धृत करके यजुर्वेद और साममंत्रों द्वारा सामवेद का प्रणयन किया।१८

एकविंशतिभेदेन ऋग्वेदं कृतवान् पुरा।
शाखानान्तु शतेनैव यजुर्वेदमथाकरोत्॥१९

पूर्वकाल में ऋग्वेद के इक्कीस भेद थे। यजुर्वेद को सौ शाखाओं में विभक्त किया।१९

सामवेदं सहस्रेण शाखानां प्रविभेद सः।
अथर्वाणमथो वेदं बिभेद कुशकेतनः[1]॥२०

फिर व्यास ने सामवेद को एक हजार शाखाओं में विभक्त किया। और अथर्ववेद को नौ शाखाओं में विभक्त किया।२०

भेदैरष्टादशैर्व्यासः पुराणं कृतवान् प्रभुः।
सोऽयमेकश्चतुष्पादो वेदः पूर्वं पुरातनः॥२१

व्यास ने पुराण के अठारह भाग कल्पित किये। सो इस प्रकार पूर्वकाल में एक पुरातन वेद चार पादों में विभक्त हुआ।२१

ओंकारो ब्रह्मणो जातः सर्वदोषविशोधनः।
वेदविद्योऽथ भगवान्वासुदेवः सनातनः॥२२

सकलदोषविशोधक ओंकार ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ। भगवान् वासुदेव सनातन एवं वेदों से जानने योग्य हैं।२२

स गीयते परो वेदैर्यो वेदैनं स वेदवित्।
एतत्परतरं ब्रह्म ज्योतिरानन्दमुत्तमम्॥२३

---

१. नवकेन तु इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हीं पुरुषोत्तम का वेद गायन करते हैं। जो उन्हें जान लेता है, वह वेदवेत्ता है। वे वासुदेव परात्पर ब्रह्म, उत्तम ज्योति और आनन्दस्वरूप हैं।२३

वेदवाक्योदितं तत्त्वं वासुदेवः परम्पदम्।
[1]वेदविद्यामिमं वेत्ति वेदं वेदपरो मुनिः ॥२४

वासुदेव वेदवाक्य प्रतिपादित तत्त्व एवं परम पद हैं। वेदपरायण मुनि इन्हें वेद द्वारा ज्ञेय मानते हैं।२४

अवेदं परमं वेत्ति [2]वेदनिःश्वासकृत्परः।
स वेदवेद्यो भगवान्वेदमूर्त्तिर्महेश्वरः ॥२५

वेद को निःश्वासरूप में छोड़ने वाले ईश्वर परम वेदातीत को जानते हैं। भगवान् वेदमूर्ति महेश्वर वेदों से जानने योग्य हैं।२५

स एव वेद्यो वेदश्च तमेवाश्रित्य मुच्यते।
इत्येतदक्षरं वेदमोंकारं वेदमव्ययम् ॥
अवेदञ्च विजानाति पाराशर्यो महामुनिः ॥२६

वही वेद है और वेद द्वारा जानने योग्य है। उसी का आश्रय लेने से मुक्ति मिलती है। पराशर पुत्र महामुनि व्यास इस अक्षर, वेद्य, ओंकाररूपी, अविनाशी वेद और अवेद को भी जानते हैं।२६

इति श्रीकूर्मपुराणे वेदशाखाप्रणयनं नाम
द्वापञ्चाशोऽध्यायः ॥५२

श्री कूर्मपुराण में वेदशाखाप्रणयन नामक बावनवाँ अध्याय समाप्त ॥५२॥

●

त्रिपञ्चाशोऽध्यायः

सूत उवाच

वेदव्यासावताराणि[3] द्वापरे कथितानि तु।
महादेवावताराणि कलौ शृणुत सुव्रताः ॥१

---

१. वेदविद्यामिमामिति पा०। २. वेदनिष्ठः सदेश्वरः इति, वेदनिष्ठं सदेश्वरमिति पा०। ३. अत्र क्लीबत्वमार्षम्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूत बोले—हे उत्तमव्रतियो ! द्वापरयुग में वेदव्यास के अवतार कह दिये, अब कलियुग में महादेव के अवतारों का वर्णन सुनो ।१

[1]आद्ये कलियुगे श्वेतो देवदेवो महाद्युतिः ।
नाम्ना हिताय विप्राणामभूद्वैवस्वतेऽन्तरे ॥२
हिमवच्छिखरे रम्ये सकले पर्वतोत्तमे ।
तस्य शिष्याः प्रशिष्याश्च[2] बभूवुरमितप्रभाः ॥३

वैवस्वत मन्वन्तर में ब्राह्मणों के हित के लिए प्रथम कलियुग में देवदेव महाकान्ति श्वेत पर्वतश्रेष्ठ हिमालय के रमणीय शिखर पर उद्भूत हुए। उनके अमित प्रभा वाले अनेक शिष्योपशिष्य हुए ।२-३।

श्वेतः श्वेतशिखश्चैव श्वेतास्यः श्वेतलोहितः ।
चत्वारस्ते महात्मानो ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥४

उनमें श्वेत, श्वेतशिख, श्वेतास्य और श्वेतलोहित—ये चार वेद पारंगत ब्राह्मण महात्मा थे ।४

सुतारो[3] मदनश्चैव सुहोत्रः कङ्कणस्तथा ।
लोकाक्षिस्त्वथ योगीन्द्रो जैगीषव्योऽथ सप्तमे ॥५

तदनन्तर द्वितीय कलियुग से लेकर षष्ठ कलियुग पर्यन्त क्रमशः सुतार, मदन, सुहोत्र, कङ्कण, लोकाक्षि तथा योगीन्द्र—ये महादेव के अवतार हुए। सातवें कलियुग में महादेव के अवतार जैगीषव्य हुए ।५

अष्टमे दधिवाहः स्यान्नवमे ऋषभः प्रभुः ।
भृगुस्तु दशमे प्रोक्तास्तस्मादुग्रः पुरः स्मृतः ॥६

आठवें कलियुग में दधिवाह और नवम कलियुग में ऋषभ प्रभु हुए। दशम में भृगु, एकादश में उग्र हुए ।६

द्वादशेऽत्रिसमाख्यातो बाली वाथ त्रयोदशे ।
चतुर्दशे गौतमस्तु वेददर्शी ततः परः ॥७

द्वादश में अत्रि, त्रयोदश में बाली, चतुर्दश में गौतम और पञ्चदश में वेददर्शी हुए ।७

गोकर्णश्चाभवत्तस्माद्गुहावासः शिखण्डधृक् ।
[4]यजमाल्यट्टहासश्च दारुको लाङ्गली तथा ॥८

---

१. आदौ इति पा० । २. शिखायुक्तः इति पा० । ३. सुभावो दमनश्चाथ इति पा० । ४. जटामाल्यश्चण्डहासः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोलहवें कलियुग में गोकर्ण और सत्रहवें में गुहावासी शिखण्डक्, अठारहवें में जटमाली, उन्नीसवें में अट्टहास, बीसवें में दारुक, इक्कीसवें मे लांगली हुए ।८

महायामो मुनिः शूली डिण्डमुण्डीश्वरः स्वयम् ।
सहिष्णुः सोमशर्मा च नकुलीश्वर एव च ॥९

बाईसवें में महायाम, तेईसवें में मुनि चौबीसवें में शूली, पचीसवें में स्वयं डिण्ड-मुण्डीश्वर, छब्बीसवें में सहिष्णु, सत्ताईसवें में सोमशर्मा और अट्ठाइसवें कलियुग में नकुलीश्वर महादेव के अवतार होंगे ।९

(वैवस्वतेऽन्तरे शम्भोरवतारास्त्रिशूलिनः ।
अष्टाविंशतिराख्याता ह्यन्ते कलियुगे प्रभोः ।
तीर्थकार्यावतारे स्याद्देवेशो नकुलीश्वरः ॥)

तत्र देवाधिदेवस्य चत्वारः सुतपोधनाः ।
शिष्या बभूवुश्चान्येषां प्रत्येकं मुनिपुङ्गवाः ॥१०

(वैवस्वत मन्वन्तर में अन्तिम कलियुग में कायावतारतीर्थ में प्रभु, त्रिशूलधारी, देवेश्वर, नकुलीश्वर महादेव के अवतार होंगे ।) वहाँ देवाधिदेव के चार तपस्वी शिष्य होंगे । उनमें से प्रत्येक के मुनिश्रेष्ठ शिष्य होंगे ।१०

प्रसन्नमनसो दान्ता ऐश्वरीं [1]भक्तिमास्थिताः ।
क्रमेण तान्प्रवक्ष्यामि योगिनो योगवित्तमान् ॥११

वे सब प्रसन्नचित्त, दान्त और ईश्वरभक्तिपरायण होंगे । उन योगियों एवं अत्यन्त योगवेत्ताओं को मैं क्रमशः बताऊँगा ।११

(श्वेतःश्वेतशिखश्चैव श्वेतास्यः श्वेतलोहितः ।)
दुन्दुभिः शतरूपश्च ऋचीकः केतुमांस्तथा ।
विशोकश्च[2] विकेशश्च विशाखः[3] शापनाशनः ॥१२

(श्वेत, श्वेतशिख, श्वेतास्य, श्वेतलोहित, दुन्दुभि, शतरूप, ऋचीक, केतुमान्, विशोक, विकेश विशाख, शापनाशन ।१२

सुमुखो दुर्मुखश्चैव दुर्दमो दुरतिक्रमः ।
सनकः सनातनश्चैव तथैव च सनन्दनः ॥१३

सुमुख, दुर्मुख, दुर्दम, दुरतिक्रम, सनक, सनातन तथा सनन्दन ।१३

---

१. भक्तिमाश्रिताः इति पा० । २. विश्वकेशः इति पा० । ३. विपापः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दालभ्यश्च[1] महायोगी धर्मात्मानो महौजसः ।
सुधामा विरजाश्चैव शंखवाण्यज एव च ॥१४

महायोगी, धर्मात्मा एवं अत्यन्त, तेजस्वी दालभ्य, सुधामा विरजा, शंखवाण्यज ।१४

सारस्वतस्तथा मोघो धनवाहः सुवाहनः ।
कपिलश्चासुरिश्चैव वोढुः पञ्चशिखो मुनिः ॥१५

सारस्वत, मोघ, धनवाह, सुवाहन, कपिल, आसुरि, वोढु, मुनि पञ्चशिख ।१५

पराशरश्च गर्भश्च भार्गवश्चाङ्गिरास्तथा ।
चलबन्धुर्निरामित्रः केतुशृङ्गस्तपोधनाः ॥१६

पराशर, गर्ग, भार्गव, अंगिरा, चलबन्धु, निरामित्र तथा केतुशृंग ये सब तपस्या के धनी हैं ।१६

लम्बोदरश्च लम्बश्च विक्रोशो[2] लम्बकः शुकः ।
सर्वज्ञः समबुद्धिश्च साध्यासाध्यस्तथैव च ॥१७

लम्बोदर, लम्ब, विक्रोश, लम्बक, शुक, सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य और असाध्य ।१७

सुधामा काश्यपश्चाथ वसिष्ठो वरिजास्तथा ।
अत्रिरुग्रस्तथा चैव श्रवणोऽथ सुवैद्यकः ॥१८

सुधामा, काश्यप, वसिष्ठ, वरिजा, अत्रि, उग्र, श्रवण, सुवैद्यक ।१८

कुणिश्च कुणिबाहुश्च कुशरीरः कुनेत्रकः ।
कश्यपो ह्यृशना चैव च्यवनोऽथ बृहस्पतिः ॥१९

कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर, कुनेत्रक, कश्यप, उशना, च्यवन और बृहस्पति ।१९

उच्चास्यो वामदेवश्च महाकालो[4] महानिलिः ।
वाजश्रवाः सुकेशश्च श्यावाश्वः सुपथीश्वरः ॥२०

उच्चास्य, वामदेव, महाकाल, महानिलि, वाजश्रवा, सुकेश, श्यावाश्व, सुपथीश्वर ।२०

हिरण्यनाभः कौशिल्योऽकाक्षुः[5] कुथुमिथस्तथा ।
सुमन्तवर्चसो विद्वान् कबन्धः कुषिकन्धरः ॥२१

हिरण्यनाभ, कौशिल्य, अकाक्षु, कुथुमिथ, सुमन्तवर्चस्, विद्वान् कबन्ध, कुषिकन्धर ।२१

---

१. बाष्कलश्च इति पा० । २. लम्बाक्षो लम्बकेशकः इति पा० । ३. उतथ्य इति पा० । ४. महाकायः इति पा० । ५. लोकाक्षिः कुथुमिस्तथा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्लक्षो [1]दर्वायणिश्चैव केतुमान् गौतमस्तथा ।
भल्लाची मधुपिंगश्च श्वेतकेतुस्तपोधनः ॥२२

प्लक्ष, दर्वायणि, केतुमान्, गौतम, भल्लाची, मधुपिंग, तपोधन और श्वेतकेतु ।२२

उषिधा बृहद्रक्षश्च देवलः कविरेव च ।
शालहोत्राग्निवेश्यस्तु युवनाश्वः शरद्वसुः ॥२३

उषिधा, बृहद्रक्ष, देवल, कवि, शालहोत्र, अग्निवेश्य, युवनाश्व और शरद्वसु ।२३

छगलः कुण्डकर्णश्च कुन्तश्चैव प्रवाहकः ।
उलूको विद्युतश्चैव शाद्रको ह्याश्वलायनः ॥२४

छगल, कुण्डकर्ण, कुन्त, प्रवाहक, उलूक, विद्युत, शाद्रक, आश्वलायन ।२४

अक्षपादः कुमारश्च ह्यलूको [2]वसुवाहनः ।
कुणिकश्चैव गर्गश्च मित्रको रुरुरेव च ॥२५

अक्षपाद, कुमार, उलूक, वसुवाहन, कुणिक, गर्ग, मित्रक और रुरु ।२५

शिष्या एते महात्मानः सर्ववर्त्तेषु[3] योगिनाम् ।
विमला ब्रह्मभूयिष्ठा ज्ञानयोगपरायणाः ॥२६

योगियों के समस्त आवर्तों में ये महात्मा शिष्य होंगे । ये निर्मल, ब्रह्मभूत तथा ज्ञानयोगपरायण होंगे ।२६

कुर्वन्ति चावतारणि ब्राह्मणानां हिताय च।
योगेश्वराणामादेशाद्वेदसंस्थापनाय वै ॥२७

ब्राह्मणों के हित के लिये और वेदों की स्थापना के लिए ये योगेश्वरों के आदेश से अवतार ग्रहण करते हैं ।२७

ये ब्राह्मणाः संस्मरन्ति नमस्यन्ति च सर्वदा ।
तर्पयन्त्यर्च्चयन्त्येतान् ब्रह्मविद्यामवाप्नुयुः ॥२८

जो ब्राह्मण सर्वदा इनका स्मरण करते हैं, नमस्कार करते हैं, तृप्त करते हैं और अर्चना करते हैं, वे ब्रह्मविद्या प्राप्त करते हैं ।२८

इदं वैवस्वतं प्रोक्तमन्तरं विस्तरेण तु ।
भविष्यति च सावर्णो दक्षसावर्ण एव च ॥२९

---

१. दर्णायनिरिति, दर्भेप्यणिरिति पा० । २. वत्स एव च इति पा० ।
३. सर्ववर्त्तेन इति, सर्वेऽध्येयाः सुयोगिनामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह वैवस्वत मन्वन्तर मैंने विस्तार से बताया इसके बाद सावर्ण और दक्षसावर्ण मन्वन्तर होंगे ।२९

दशमो ब्रह्मसावर्णो धर्म एकादशः स्मृतः ।
द्वादशो रुद्रसावर्णो [1]रोच्यनामा त्रयोदशः ॥३०

तदनन्तर ब्रह्मसावर्ण दशम और धर्मसावर्ण ग्यारहवाँ मन्वन्तर होगा। बारहवाँ रुद्रसावर्ण और तेरहवाँ रोच्य नामक मन्वन्तर होगा ।३०

भौत्यश्चतुर्दशः प्रोक्तो भविष्या मनवः क्रमात् ।
अयं वः कथितो ह्यंशः पूर्वो नारायणेरितः ॥३१
भूतैर्भव्यैर्वर्त्तमानैराख्यानैरुपबृंहितः ।

चौदहवाँ मन्वन्तर भौत्य होगा। इन सबके क्रम से मनु होंगे। भूत, भविष्य और वर्तमान आख्यानों से वृद्धि को प्राप्त और नारायण द्वारा कथित इस पूर्व भाग का वर्णन मैंने कर दिया ।३१½।

यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्वा द्विजोत्तमान्[2] ॥३२
सर्वपापविनिर्मुक्तो [3]ब्रह्मलोके महीयते ।

जो व्यक्ति इसका पाठ करेगा या सुनेगा या द्विजश्रेष्ठों को सुनायेगा, वह समस्त पापों से मुक्त होकर ब्रह्म लोक में पूजित होगा ।३२½।

पठेद्देवालये स्नात्वा नदीतीरेषु चैव हि ॥३३
नारायणं नमस्कृत्य भावेन पुरुषोत्तमम् ।
नमो [4]देवाधिदेवाय देवानां परमात्मने ।
पुरुषाय पुराणाय विष्णवे प्रभविष्णवे[5] ॥३४
इति श्रीकूर्मपुराणे पूर्वार्द्धे त्रिपञ्चाशोऽध्यायः ॥५३॥

स्नानोपरान्त देवालय में या नदी-तट पर इसका पाठ करे। पाठ से पूर्व 'देवों के देवाधिदेव, परमात्मा, पुराण पुरुष, सर्वसमर्थ विष्णु को नमस्कार है' यह कहकर भाव से पुरुषोत्तम नारायण को नमस्कार करना चाहिए ।३३-३५।

श्री कूर्मपुराण के पूर्वार्ध में तिरपनवाँ अध्याय समाप्त ।५३

॥ इति कूर्मपुराणे पूर्वार्द्धं समाप्तम् ॥

॥कूर्मपुराण में पूर्वार्ध समाप्त॥

---

१. रोचमानः इति पा० । २. द्विजोत्तमाः इति पा० । ३. ब्रह्मणा सह मोदते इति पा० । ४. देवादिदेवाय इति पा० । ५. कूर्मरूपिणे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ अथ कूर्मपुराणे उत्तरार्द्धं प्रारभ्यते ॥ अथेश्वरगीता ॥

कूर्मपुराण में उत्तरार्ध

प्रथमोऽध्यायः

ऋषय ऊचुः

भवता कथितः सम्यक् सर्गः स्वाम्भुवः [1]प्रभो ।
[2]ब्रह्माण्डस्यादिविस्तारो मन्वन्तरविनिश्चयः ॥१

ऋषिवृन्द बोले—प्रभो ! आपने स्वायम्भुव मन्वन्तर की सृष्टि हमें बता दी। ब्रह्माण्ड का आदि विस्तार तथा मन्वन्तरों का वर्णन भी कर दिया ।१

तत्रेश्वरेश्वरो देवो वर्णभिर्धर्मतत्परैः ।
ज्ञानयोगरतैर्नित्यमाराध्यः कथितस्त्वया ॥२

उसमें ईश्वरों के ईश्वर तथा धर्मतत्पर, ज्ञानयोग में निरत ब्रह्मचारियों के नित्य आराध्यदेव का वर्णन भी आपने किया ।२

तत्त्वञ्चाशेषसंसारदुःखनाशमनुत्तमम्[3] ।
ज्ञानं ब्रह्मैकविषयं तेन पश्येम तत्परम् ॥३

सम्पूर्ण संसार के दुःखनाशक परमोत्तम तत्त्व को भी आपने बताया। जिसके द्वारा हम उत्कृष्ट ब्रह्मात्मैक्यज्ञान पा सकते हैं ।३

त्वं हि नारायणः साक्षात् कृष्णद्वैपायनात्प्रभो ।
अवाप्ताखिलविज्ञानस्तत्त्वां [4]पृच्छामहे पुनः ॥४

प्रभो ! आप कृष्णद्वैपायन से समस्त विज्ञान प्राप्त कर चुके हैं, अतः आप साक्षात् नारायण हैं। आपसे हम पुनः पूछना चाहते हैं ।४

श्रुत्वा मुनीनां तद्वाक्यं कृष्णद्वैपायनात्प्रभुः ।
सूतः पौराणिकः श्रुत्वा भाषितुं ह्युपचक्रमे ॥५

---

१. तत इति, शुभ इति पा० । २. ब्रह्माण्डस्यास्य इति पा० । ३. नाशनमुत्तमिति पा० । ४. अत्र आर्षमात्मनेपदम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनियों की बात सुनकर प्रभु पौराणिक सूत कृष्णद्वैपायन से सुने हुए का स्मरण करके बोलने का उपक्रम करने लगे ।५

तथास्मिन्नन्तरे व्यासः कृष्णद्वैपायनः स्वयम् ।
आजगाम मुनिश्रेष्ठा यत्र सत्रं समासते ॥६

मुनिश्रेष्ठो ! इस बीच कृष्णद्वैपायन व्यास स्वयं वहाँ आ गये जहाँ यज्ञ चल रहा था ।६

तं दृष्ट्वा वेदविद्वांसं कालमेघसमद्युतिम् ।
व्यासं कमलपत्राक्षं प्रणेमुर्द्विजपुङ्गवाः ॥७

वेद के विद्वान् तथा बादल के समान कान्ति वाले कमललोचन व्यास को देखकर द्विजवरों ने उन्हें प्रणाम किया ।७

पपात दण्डवद्भूमौ दृष्ट्वासौ लोमहर्षणः ।
[1]प्रणम्य शिरसा भूमौ प्राञ्जलिर्वशगोऽभवत् ॥८

दर्शन करके वे सूत भूमि पर डंडे के समान गिर पड़े। शिर से भूमि पर प्रणाम करके हाथ जोड़कर वशवर्ती हुए ।८

पृष्टास्तेऽनामयं विप्राः शौनकाद्या महामुनिम् ।
समासृत्यासनं[2] तस्मै तद्योग्यं समकल्पयन् ॥९

शौनक आदि विप्रगण महामुनि से कुशल पूछकर समीप आकर उनके योग्य आसन बिछाने लगे ।९

अथैतानब्रवीद्वाक्यं पराशरसुतः प्रभुः ।
कच्चिन्न[3] हानिस्तपसः स्वाध्यायस्य श्रुतस्य च ॥१०

अनन्तर पराशर-पुत्र प्रभु व्यास ने उनसे कहा—आप लोगों की तपस्या, स्वाध्याय और शास्त्रचर्चा में कोई हानि तो नहीं होती ? ।१०

ततश्च सूतः स्वगुरुं प्रणम्याह महामुनिम् ।
ज्ञानं तद्ब्रह्मविषयं मुनीनां वक्तुमर्हसि ॥११

तदनन्तर सूत ने अपने गुरु महामुनि को प्रणाम करके कहा—मुनियों को ब्रह्म-विषयक ज्ञान आप (कृपया) बता दें ।११

इमे हि मुनयः शान्तास्तापसा धर्मतत्पराः ।
शुश्रूषा जायते चैषां वक्तुमर्हसि तत्त्वतः ॥१२

---

१. प्रदक्षिणीकृत्य गुरुं प्राञ्जलिः पार्श्वतोऽभवदिति पा० । २. समाश्वास्यासनमिति पा० । ३. तपसो हानिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये मुनिवृन्द शान्त, तपस्वी तथा धर्मपरायण हैं । इन्हें सुनने की इच्छा है। आप तत्त्वतः बतायें ।१२

ज्ञानं विमुक्तिदं दिव्यं यन्मे साक्षात्त्वयोदितम् ।
मुनीनां व्याहृतं पूर्वं विष्णुना कूर्मरूपिणा ॥१३

मोक्षदायक दिव्य ज्ञान जो आपने मुझसे कहा था, जिसे पूर्वकाल में कूर्मरूपधारी विष्णु ने बताया था, वही कहें ।१३

श्रुत्वा सूतस्य वचनं मुनिः सत्यवतीसुतः ।
प्रणम्य शिरसा रुद्रं वचः प्राह सुखावहम् ॥१४

सूत की बात सुनकर सत्यवतीपुत्र व्यास ने शिव को प्रणाम करके सुखदायक वचन कहा ।१४

व्यास उवाच

वक्ष्ये देवो महादेवः पृष्टो योगीश्वरैः पुरा ।
सनत्कुमारप्रमुखैः स स्वयं समभाषत ॥१५

व्यास बोले—मैं वही कहूँगा, जो पूर्वकाल में सनत्कुमार आदि योगीश्वरों के पूछने पर महादेव ने स्वयं कहा था ।१५

सनत्कुमारः सनकस्तथैव च सनंदनः ।
आङ्गिरा रुद्रसहितो भृगुः परमधर्मवित् ॥१६

कणादः कपिलो [1]गर्गो वामदेवो महामुनिः ।
शुक्रो वसिष्ठो भगवान् सर्वे संयतमानसाः ॥१७

परस्परं विचार्यैते [2]संयमाविष्टचेतसः ।
तप्तवन्तस्तपो घोरं पुण्ये बदरिकाश्रमे ॥१८

सनत्कुमार, सनक,सनन्दन अंगिरा, रुद्र सहित परमधर्मवेत्ता भृगु, कणाद, कपिल, गर्ग, महामुनि वामदेव, शुक्र, भगवान् वसिष्ठ—ये सभी संयत मन वाले मुनि परस्पर विचार करके पवित्र बदरिकाश्रम में घोर तप करने लगे ।१६-१८।

अपश्यंस्ते महायोगमृषिधर्मसुतं मुनिम् [3] ।
नारायणमनाद्यन्तं नरेण सहितं तदा ॥१९

तब उन्होंने महायोगी, ऋषि धर्म के पुत्र, मुनि, आदि और अन्त से रहित नारायण एवं नर को देखा ।१९

---

१. योगीति पा० । २. संशयाविष्टचेतस इति पा० । ३. शुचिमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्तूय विविधैः स्तोत्रैः सर्ववेदसमुद्भवैः ।
प्रणेमुर्भक्तिसंयुक्ता योगिनो योगवित्तमम् ॥२०

भक्तियुक्त उन योगियों ने अत्यन्त योगवेत्ता नारायण की सभी वेदों से उत्पन्न अनेक स्तोत्रों द्वारा स्तुति करके प्रणाम किया ।२०

विज्ञाय वाञ्छितं तेषां भगवानपि सर्ववित् ।
प्राह गम्भीरया वाचा किमर्थं तप्यते तपः ॥२१

उनकी इच्छा जानकर सर्वज्ञ भगवान् ने भी गंभीर वाणी से पूछा—'आप लोग किसलिए तप कर रहे हैं ? ।२१'

अब्रुवन् हृष्टमनसो विश्वात्मानं सनातनम् ।
साक्षान्नारायणं देवमागतं सिद्धिसूचकम् ॥२२

प्रसन्नचित्त मुनियों ने आये हुए सिद्धिसूचक विश्वात्मा, सनातन, साक्षात् नारायण देव से कहा ।२२

वयं संयममापन्नाः[1] सर्वे वै ब्रह्मवादिनः ।
[2]भवन्तमेकं शरणं प्रपन्नाः पुरुषोत्तमम् ॥२३

हम सभी ब्रह्मवादी ऋषि एक सन्देह पाकर आप पुरुषोत्तम की शरण में आये हैं ।२३

त्वं वेत्सि परमं गुह्यं सर्वन्तु भगवानृषिः ।
नारायणः स्वयं साक्षात्पुराणोऽव्यक्तपूरुषः ॥२४

आप परम गुह्य तत्व को जानते हैं । आप स्वयं भगवान् ऋषि नारायण, साक्षात् पुराण एवं अव्यक्त पुरुष हैं ।२४

न ह्यन्यो विद्यते वेत्ता त्वामृते परमेश्वरम् ।
स[3] त्वमस्माकमचलं संशयं छेत्तुर्हसि ॥२५

आप परमेश्वर को छोड़कर दूसरा कोई गुह्यवेत्ता नहीं है । इसलिए आप हमारे अचल संदेह के निवारण करने योग्य हैं ।२५

किं कारणमिदं कृत्स्नं को नु संसरते सदा ।
कश्चिदात्मा च का मुक्तिः संसारः किन्निमित्तकः ॥२६

---

१. संशयमापन्ना इति पा० । २. भवन्तमेव इति पा० । ३. शुश्रूषास्माकम-खिलमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये जो सकल पदार्थ हैं, इनका कारण कौन है ? कौन सदा संसारी है ? आत्मा कौन है ? मुक्ति क्या है ? संसार का निमित्त (हेतु) क्या है ? ।२६

कः संसार[1] इतीशानः को वा सर्वं प्रपश्यति ।
किं तत्परतरं ब्रह्म सर्वं नो वक्तुमर्हसि ॥२७

संसार का पति ईश्वर कौन है ? कौन इस सब को देख रहा है ? परात्पर ब्रह्म कौन है ? यह सब आप बताने योग्य हैं ? ।२७

एवमुक्त्वा तु मुनयः प्रापश्यन् पुरुषोत्तमम् ।
विहाय तापसं वेषं संस्थितं स्वेन तेजसा ॥२८

विभ्राजमानं विमलं प्रभामण्डलमण्डितम् ।
श्रीवत्सवक्षसं देवं तप्तजाम्बूनदप्रभम् ॥२९

इस प्रकार कहकर मुनियों ने पुरुषोत्तम को देखा, जो तपस्वी वेष को त्यागकर अपने तेज से विराजमान थे। वे निर्मल एवं प्रभामण्डल से मण्डित थे। उनके वक्षःस्थल पर श्रीवत्सचिह्न था। तपे हुए सोने के समान उनकी प्रभा थी ।२८-२९।

शङ्खचक्रगदापाणिं शार्ङ्गहस्तं श्रिया वृतम् ।
न दृष्टस्तत्क्षणादेव नरस्तस्यैव तेजसा ॥३०

उनके हाथों में शंख, चक्र, गदा और धनुष थे। वे लक्ष्मी से युक्त थे। उस समय उन्हीं के तेज से नर नहीं दिखाई पड़े ।३०

तदन्तरे महादेवः शशाङ्काङ्कितशेखरः ।
प्रसादाभिमुखो रुद्रः प्रादुरासीन्महेश्वरः ॥३१

इस बीच चन्द्रमा से अंकित ललाट वाले महेश्वर रुद्र प्रसन्नमुख हो प्रादुर्भूत हुए ।३१

निरीक्ष्य ते जगन्नाथं त्रिनेत्रं चन्द्रभूषणम् ।
तुष्टुवुर्हृष्टमनसो भक्त्या तं परमेश्वरम् ॥३२

जगत् के स्वामी, तीन नेत्र वाले, चन्द्रभूषण, परमेश्वर को देखकर हर्षितमना मुनियों ने उनकी स्तुति की ।३२

जयेश्वर महादेव जय भूतपते शिव ।
जयाशेषमुनीशान तपसाऽभिप्रपूजित ॥३३

---

१. संसारपतीशान इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर महादेव की जय हो। भूतपति शिव की जय हो। अशेष मुनि ईशान की जय हो, तप से प्रपूजित की जय हो।३३

सहस्रमूर्त्ते विश्वात्मन् जगद्यन्त्रप्रवर्त्तक।
जयानन्त जगज्जन्मत्राणसंहारकारक ॥३४

सहस्रमूर्ति विश्वात्मा, जगत् रूपी यन्त्र के प्रवर्तक की जय हो। अनन्त तथा संसार की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार करने वाले की जय हो।३४

सहस्रचरणेशान शम्भो योगीन्द्रवन्दित।
जयाम्बिकापते देव नमस्ते परमेश्वर ॥३५

सहस्र चरण वाले, ईशान, शम्भु तथा योगीश्वरों से वन्दित की जय हो। अम्बिकापति देव की जय हो। परमेश्वर! आपको नमस्कार है।३५

संस्तुतो भगवानीशस्त्र्यम्बको भक्तवत्सलः।
समालिङ्ग्य हृषीकेशं प्राह गम्भीरया गिरा ॥३६

भक्तवत्सल, ईश तथा त्रिलोचन भगवान् इस प्रकार स्तुत होने पर नारायण का आलिंगन करके गंभीर वाणी से बोले।३६

किमर्थं पुण्डरीकाक्ष मुनीन्द्रा ब्रह्मवादिनः।
इमं समागता देशं किन्नु कार्यं मयाच्युत[1] ॥३७

हे पुण्डरीकाक्ष! ब्रह्मवादी मुनीन्द्रगण किस लिए इस प्रदेश में आये हैं? अच्युत! मुझसे इनका क्या कार्य है?।३७

आकर्ण्य तस्य तद्वाक्यं देवदेवो जनार्दनः।
प्राह देवो महादेवं प्रसादाभिमुखं स्थितम् ॥३८

उनकी बात सुनकर देवों के देव जनार्दन ने प्रसन्नमुख महादेव से कहा।३८

इमे हि मुनयो देव तापसाः क्षीणकल्मषाः।
अभ्यागतानां शरणं सम्यग्दर्शनकांक्षिणाम् ॥३९

देव! ये तपस्वी लोग निष्पाप हैं। सम्यग् दर्शन (ज्ञान) के अभिलाषी ये लोग शरण में आये हुए हैं।३९

यदि प्रसन्नो भगवान्मुनीनां भावितात्मनाम्।
सन्निधौ मम तज्ज्ञानं दिव्यं वक्तुमिहार्हसि ॥४०

यदि इन संयतात्मा मुनियों पर भगवान् (आप) प्रसन्न हैं तो मेरे सान्निध्य में आप इन्हें दिव्य ज्ञान बतायें।४०

---

१. ममाच्युत इति।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वं हि वेत्सि स्वमात्मानं नह्यन्यो विद्यते शिव ।
वद त्वमात्मनात्मानं मुनीन्द्रेभ्यः प्रदर्शय ॥४१

शिव ! अपने आत्मा को आप ही जानते हैं, दूसरा कोई जानने वाला नहीं है। आप स्वयं मुनीन्द्रों को आत्मा का दर्शन करायें ।४१

एवमुक्त्वा हृषीकेशः प्रोवाच मुनिपुङ्गवान् ।
प्रदर्शयन्योगसिद्धिं निरीक्ष्य वृषभध्वजम् ॥४२

इस प्रकार कहकर विष्णु ने शंकर का दर्शन करके योगसिद्धि दिखाते हुए मुनि-श्रेष्ठों से कहा ।४२

[1]सन्दर्शनान्महेशस्य शंकरस्याथ शूलिनः ।
कृतार्थं स्वयमात्मामानं ज्ञातुमर्[2]थ तत्त्वतः ॥४३

महेश, शंकर, शूली के दर्शन से अपने आत्मा को कृतार्थ कीजिए एवं तत्त्वतः जानने के योग्य होइए ।४३

द्रष्टुमर्[2]थ देवेशं प्रत्यक्षं पुरतः स्थितम् ।
ममैव सन्निधाने[3] स यथावद्वक्तुमीश्वरः[4] ॥४४

आप लोग सामने प्रत्यक्ष अवस्थित देवेश्वर शिव का दर्शन करने योग्य हैं। मेरी उपस्थिति में ही शंकर ठीक-ठीक बताने में समर्थ हैं ।४४

निशम्य विष्णोर्वचनं प्रणम्य वृषभध्वजम् ।
सनत्कुमारप्रमुखाः पृच्छन्ति स्म महेश्वरम् ॥४५

विष्णु का वचन सुनकर शंकर को प्रणाम करके सनत्कुमार आदि ने महेश्वर से पूछा ।४५

अथास्मिन्नन्तरे दिव्यमासनं विमलं शिवम् ।
किमप्यचिन्त्यं गगनादीश्वरार्थे समुद्बभौ ॥४६

इतने में एक दिव्य, निर्मल, कल्याणकारी और अचिन्तनीय आसन शंकर के लिए आकाश से आ गया ।४६

तत्राससाद योगात्मा विष्णुना सह विश्वकृत् ।
तेजसा पूरयन्विश्वं भाति देवो महेश्वरः ॥४७

उस पर योगात्मा, विश्वकर्ता महेश्वर देव विष्णु के साथ तेज से विश्व को भरते हुए विराजमान हुए ।४७

---

१. सन्दर्शनादुमेशस्य इति पा० । द्रष्टुमर्हथ विश्वेशमिति पा० देवेशं पूजयितुमर्हथेत्यर्थः । ३. सन्निधावेव इति पा० । ४. ईश्वरः शक्नोतीत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो देवाधिदेवेशं शंकरं ब्रह्मवादिनः ।
विभ्राजमानं विमले तस्मिन्ददृशुरासने ॥४८

तब ब्रह्मवादियों ने उस निर्मल आसन पर देवाधिदेवेश्वर शंकर को देदीप्यमान देखा ।४८

तमासनस्थं भूतानमीशं ददृशिरे किल ।
यदन्तरा सर्वमेतद्यतोऽभिन्नमिदं जगत् ॥४९

प्राणियों के ईश्वर को आसन पर अवस्थित देखा, जिनके मध्य यह सब है और जिनसे अभिन्न यह जगत् है ।४९

सवासुदेवमीशानमीशं[1] ददृशिरे परम् ।
प्रोवाच पृष्टौ भगवान्मुनीनां परमेश्वरः ॥५०

निरीक्ष्य पुण्डरीकाक्षं स्वात्मयोगमनुत्तमम् ।
तच्छृणुध्वं यथान्यायमुच्यमानं[2] मयानघाः ॥५१
प्रशान्तमनसः सर्वे विशुद्धं[3] ज्ञानमैश्वरम् ।

वासुदेव सहित परमेश्वर को उन लोगों ने देखा । मुनियों द्वारा पूछे जाने पर भगवान् शिव ने विष्णु को देखकर कहा—हे निष्पापो ! तुम लोग प्रशान्तचित्त होकर मेरे द्वारा न्यायपूर्वक कहे जाते हुए परमोत्तम आत्मयोग तथा विशुद्ध ईश्वरीय ज्ञान के बारे में श्रवण करो ।५०-५१।

इति श्री कूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वरगीता और उपनिषदों में ब्रह्मविद्या में योगशास्त्र में ऋषियों और व्यास के संवाद में पहला अध्याय समाप्त ॥१॥

●

१. सवासुदेवमासीनं तमीशं ददृशुः किल इति पा० । २. याच्यमानमिति पा० । ३. ज्ञानमीश्वरभाषितमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीयोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

अवाच्यमेतद्विज्ञानं गम गुह्यं सनातनम् ।
यन्न देवा विजानन्ति यतन्तोऽपि[1] द्विजातयः ॥१

महादेव बोले—हे द्विजातियो ! मेरा यह गुह्य सनातन विज्ञान अवाच्य है। देवता लोग यत्न करने पर भी इसे नहीं जानते हैं ।१

इदं ज्ञानं समाश्रित्य ब्राह्मीभूता द्विजोत्तमाः ।
न संसारं प्रपद्यन्ते पूर्वेऽपि ब्रह्मवादिनः ॥२

पूर्वकाल में भी इस ज्ञान का आश्रय लेकर ब्रह्मत्व को प्राप्त हुए द्विजोत्तमवृन्द इस संसार में नहीं आये ।२

गुह्याद्गुह्यतमं साक्षाद्गोपनीयं प्रयत्नतः ।
वक्ष्ये भक्तिमतामद्य युष्माकं ब्रह्मवादिनाम् ॥३

यह ज्ञान गुह्य से भी अत्यन्त गुह्य है। इसे यत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिए। आज तुम भक्तिमान् ब्रह्मवादियों को बता दूंगा ।३

आत्मायं केवलः स्वच्छः शुद्धः सूक्ष्मः सनातनः ।
अस्ति सर्वान्तरः [2]साक्षाच्चिन्मात्रस्तमसः[3] परः ॥४

यह आत्मा अद्वितीय, निर्मल, शुद्ध, सूक्ष्म, सनातन, सर्वान्तर, साक्षात् चिन्मात्र एवं तम से परे है ।४

सोऽन्तर्यामी स पुरुषः स प्राणः स महेश्वरः ।
स कालोऽत्र तदव्यक्तं स च वेद इति श्रुतिः ॥५

वह अन्तर्यामी, वही पुरुष, वही प्राण, वही महेश्वर, वही काल, वही अव्यक्त और वही वेद है, यह श्रुति का कहना है ।५

---

१. यतन्त इत्यार्षम् यतमानाः इति साधु। २. सुस्थः शान्त इति, शान्तः सूक्ष्म इति पा०। ३. चिन्मयस्तामसः इति, तन्मनाः परः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्माद्विजायते विश्वमत्रैव प्रविलीयते ।
स मायी मायया बद्धः करोति विविधास्तनूः ॥६

उसी से विश्व उत्पन्न होता है और उसी में लीन हो जाता है। वह माया का आधार माया द्वारा बद्ध होने पर अनेक शरीरों की रचना करता है।६

न चाप्ययं संसरति न संसारमयः प्रभुः ।
नायं पृथ्वी न सलिलं न तेजः पवनो नभः ॥७

यह प्रभु संसरण (गमन) नहीं करता है। यह संसारमय भी नहीं है। यह न तो पृथ्वी है, न जल है, न अग्नि है, न वायु है और न आकाश है ।७

न प्राणो न मनोऽव्यक्तं न शब्दः स्पर्श एव च ।
न रूपरसगंधाश्च नाहं कर्त्ता न वागपि ॥८

यह प्राण, मन, अव्यक्त, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, कर्ता और वाणी भी नहीं है।८

न पाणिपादौ नो पायुर्न चोपस्थं द्विजोत्तमाः ।
न[1] च कर्त्ता न भोक्ता वा न च प्रकृतिपूरुषौ ॥९

द्विजश्रेष्ठो ! यह हाथ, पैर, गुदा, लिंग, कर्ता, भोक्ता, प्रकृति और पुरुष भी नहीं है।९

न माया नैव च प्राणा न[2] चैव परमार्थतः ।
यथा प्रकाशतमसोः सम्बन्धो नोपपद्यते ॥१०
तद्वदैक्यं न सम्बन्धः प्रपञ्चपरमात्मनोः ।

वह न तो माया है, न प्राण है और न परमार्थतः है। जैसे प्रकाश और अन्धकार का सम्बन्ध नहीं उत्पन्न होता वैसे प्रपञ्च और परमात्मा का ऐक्य सम्बन्ध नहीं होता है।१०½।

छायातपौ यथा लोके परस्परविलक्षणौ ॥११
तद्वत्प्रपञ्चपुरुषौ विभिन्नौ परमार्थतः ।

जैसे लोक में छाँह और धूप परस्पर विलक्षण होती हैं, उसी प्रकार प्रपञ्च और पुरुष परमार्थतः विभिन्न होते हैं।११½।

तथात्मा मलिनः सृष्टो विकारी स्यात्स्वरूपतः ॥१२

---

१. न कर्त्ता न च भोक्ता वा इति पा०। २. चैतन्यं परमार्थतः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न हि तस्य भवेन्मुक्तिर्जन्मान्तरशतैरपि ।
पश्यन्ति मुनयो मुक्ताः स्वात्मानं परमार्थतः ॥१३
विकारहीनं निर्द्वन्द्वमानन्दात्मानमव्ययम् ।

जो जीव मलिन तथा स्वरूपतः विकारी सृष्ट होता है, उसकी मुक्ति सैकड़ों जन्मान्तरों में भी नहीं होती है। मुक्त मुनि ही परमार्थतः विकारहीन, निर्द्वन्द्व, आनन्द-स्वरूप एवम् अविनाशी अपने आत्मा को देखते हैं।१२-१३½।

अहं कर्त्ता सुखी दुःखी कृशःस्थूलेति या मतिः ॥१४
सा चाहङ्कारकर्तृत्वादात्मन्यारोपिता जनैः ।
वदन्ति वेदविद्वांसः साक्षिणं प्रकृतेः परम् ॥१५
भोक्तारमक्षरं बुद्धं सर्वत्र समवस्थितम् ।
तस्मादज्ञानमूलो हि संसारः सर्वदेहिनाम् ॥१६

मैं कर्ता हूँ, सुखी हूँ, दुःखी हूँ, दुबला हूँ, मोटा हूँ, इस प्रकार की जो मति होती है, वह अहंकार के कारण आत्मा में लोगों द्वारा आरोपित है। वेद के विद्वान् आत्मा को साक्षी, प्रकृति से परे, भोक्ता, अविनाशी, बुद्ध (ज्ञानस्वरूप) और सर्वत्र अवस्थित कहते हैं। इसलिए सभी प्राणियों का संसार अज्ञानमूलक है।१४-१६।

अज्ञानादन्यथाज्ञानात्तत्त्वं प्रकृतिसङ्गतम् ।
नित्योदितं स्वयं ज्योतिः सर्वगः पुरुषः परः ॥१७

अज्ञान से या अन्य प्रकार के ज्ञान से तत्त्व प्रकृति के क्षंग में संगत होता है। ज्योतिर्मय आत्मा स्वयं नित्य उदित सर्वगामी तथा परम पुरुष है।१७

अहंकाराविवेकेन कर्त्ताहमिति मन्यते ।
पश्यन्ति ऋषयोऽव्यक्तं नित्यं सदसदात्मकम् ॥१८
प्रधानं पुरुषं[1] बुद्ध्वा कारणं ब्रह्मवादिनः ।
तेनायं[2] सङ्गतः स्वात्मा कूटस्थोऽपि निरञ्जनः ॥१९

तो भी लोक में यह जो माना जाता हैं कि 'मैं कर्ता हूँ' इसका एकमात्र कारण अहंकारजन्य अविवेक है। इस अव्यक्त, नित्य, सत् और असत् रूप, प्रधान (प्रकृति) एवं बुद्धि के कारण—आत्मा का ब्रह्मवादी ऋषिगण दर्शन करते हैं। इसी कारण स्वकीय आत्मा कूटस्थ और निरञ्जन होने पर भी संगत है।१८-१९।

---

१. प्रकृतिमिति, प्रकृतिं बुद्धेरिति पा०। २. तेनात्र सङ्गतो ह्यात्मा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वात्मानमक्षरं ब्रह्म नावबुद्धयेत तत्त्वतः ।
अनात्मन्यात्मविज्ञानं तस्माद्दुःखं[1] तथेतरत् ॥२०

अपने अविनाशी आत्मा को लोग यथार्थतः ब्रह्मस्वरूप नहीं जानते हैं। अनात्मा में आत्मविज्ञान जानने से दुःख की उत्पत्ति होती है एवं अन्य दोष उत्पन्न होते हैं।२०

रागद्वेषादयो दोषाः सर्वे भ्रान्तिनिबन्धनाः ।
कर्माण्यस्य महान्दोषः पुण्यापुण्यमिति स्थितिः ॥२१

राग, द्वेष आदि सकल दोष भ्रान्तिजन्य हैं। कर्म इसके महान् दोष हैं, पुण्य और पाप रूप में इनकी स्थिति है।२१

तद्वशादेव सर्वेषां सर्वदेहसमुद्भवः ।
नित्यं[2] सर्वत्र गुह्यात्मा कूटस्थो दोषवर्जितः ॥२२
एकः सन्तिष्ठते[3] शक्त्या मायया न स्वभावतः ।
तस्माद्द्वैतमेवाहुर्मुनयः परमार्थतः ॥२३

उसी (कर्म) के वश में होने से सबके शरीरों की उत्पत्ति होती है। नित्य, सर्व-व्यापक, कूटस्थ और दोषरहित गुह्यात्मा अपनी शक्ति से एकाकी रहता है, माया-प्रकृति के साथ नहीं रहता है। इसलिए मुनिवृन्द परमार्थतः अद्वैत का ही कथन करते हैं।२२-२३।

भेदोऽव्यक्तस्वभावेन सा च मायात्मसंश्रया ।
यथा च धूमसम्पर्कान्नाकाशो मलिनो भवेत् ॥२४
अन्तःकरणजैर्भावैरात्मा तद्वन्न लिप्यते ।

अव्यक्त के स्वभाव-बल से यह भेद उत्पन्न होता है। वह माया आत्मा के अधीन है। जैसे धुएँ के सम्पर्क से आकाश मलिन नहीं होता है, उसी तरह अन्तःकरण में उत्पन्न भावों से आत्मा लिप्त नहीं होता।२४½।

यथा स्वप्रभया भाति केवलः स्फटिकोपलैः[4] ॥२५
उपाधिहीनो विमलस्तथैवात्मा प्रकाशते ।
ज्ञानस्वरूपमेवाहुर्जगदेतद्विचक्षणाः ॥२६

---

१. सुखमिति पा०। २. नित्यः सर्वत्रगो ह्यात्मा इति पा०। ३. स भिद्यते इति पा०। ४. स्फोटिकोऽमलः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे स्फटिकमणि केवल अपनी कान्ति से दीप्त होता है, उसी तरह उपाधिहीन निर्मल आत्मा स्वयं प्रकाशित होता है। विद्वान् लोग इस जगत् को ज्ञानस्वरूप ही कहते हैं।२५-२६।

अर्थस्वरूपमेवान्ये[1] पश्यन्त्यन्ये कुदृष्टयः ।
कूटस्थो निर्गुणो व्यापी चैतन्यात्मा स्वभावतः ॥२७
दृश्यते ह्यर्थरूपेण पुरुषैर्ज्ञानदृष्टिभिः ।

दूसरे कुदृष्टि वाले लोग इसे अर्थस्वरूप ही देखते हैं। कूटस्थ, निर्गुण, व्यापक और स्वभावतः चैतन्यात्मा को ज्ञान दृष्टि वाले पुरुष अर्थरूप से देखते हैं।२७½

यथा स लक्ष्यते रक्तः केवलं स्फाटिको जनैः ॥२८
रक्तिकाद्युपधानेन तद्वत्परमपूरुषः ।
तस्मादात्माक्षरः शुद्धो नित्यः सर्वत्रगोऽव्ययः ॥२९

जैसे घुंघची आदि उपाधि के कारण (शुभ्र) स्फटिकमणि लाल दिखाई देता है वैसे ही परम पुरुष अध्यास के कारण रोगादिविशिष्ट दीख पड़ता है। इसलिए आत्मा अक्षर, शुद्ध, नित्य, सर्वत्रकामी और अविनाशी है।२८-२९।

उपासितव्यो मन्तव्यः श्रोतव्यश्च मुमुक्षुभिः ।
यदा मनसि चैतन्यं भाति सत्रत्र[2] सर्वदा ॥३०
योगिनः[3] श्रद्दधानस्य तदा सम्पद्यते स्वयम् ।

मुमुक्षुओं को उस आत्मा की उपासना, मनन तथा श्रवण करना चाहिए। जब सर्वत्र और सर्वदा मन में चेतन्य भासित होता है तब श्रद्धालु योगी स्वयं आत्मज्ञान-विशिष्ट हो जाता है।३०½।

यदा सर्वाणि भूतानि स्वात्मन्येवाभिपश्यति ॥३१
सर्वभूतेषु चात्मानं ब्रह्म सम्पद्यते तदा ।
यदा सर्वाणि भूतानि समाधिस्थो न पश्यति ॥३२
एकीभूतः परेणासौ तदा भवति केवलम् ।

जब साधक सभी प्राणियों को अपने आत्मा में ही देखता है और आत्मा को सभी प्राणियों में देखता है, तब वह ब्रह्मज्ञान-सम्पन्न हो जाता है। जब योगी समाधि में स्थित होकर सभी प्राणियों को नहीं देखता है और परमपुरुष से तादात्म्य स्थापित कर लेता है तब एकमात्र (अद्वितीय) हो जाता है।३१-३२½।

---

१. अर्थस्वरूपं विज्ञानादिति, मेवाज्ञा इति पा०। २. सर्वत्रगं सदेति पा०। ३. योगिनोऽव्यवधानेन इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदिस्थिताः ॥३३
तदासावमृतोभूतः क्षेमं गच्छति पण्डितः ।

जब साधक के हृदय से सभी कामनायें निकल जाती हैं तब वह पण्डित अमृत कल्याण प्राप्त करता है।३३½।

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ॥३४
तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते सदा ।

जब समस्त भूतों के पार्थक्य को एक में स्थित देखता है तब उसे विस्तृत ब्रह्मज्ञान मिलता है।३४½।

यदा पश्यति चात्मानं केवलं परमार्थतः ॥३५
मायामात्रं तदा सर्वं जगद्भवति निर्वृतः ॥३६

जब आत्मा का केवल परमार्थ रूप में दर्शन करता है और सम्पूर्ण जगत् को मायामात्र जनता है तब वह मुक्त होता है।३३-३६।

यदा जन्मजरादुःखव्याधीनामेकभेषजम् ।
केवलं ब्रह्मविज्ञानं जायतेऽसौ तदा शिवः ॥३७

जब जन्म, जरा, दुःख एवं व्याधि का एकमात्र ओषध रूप ब्रह्मज्ञान उत्पन्न हो जाता है तब वह शिव हो जाता है।३७

यथा नदीनदा लोके सागरेणैकतां ययुः ।
तद्वदात्माक्षरेणासौ निष्कलेनैकतां व्रजेत् ॥३८

जैसे लोक में नदी और नद सागर में मिलकर एक हो जाते हैं उसी प्रकार आत्मा भी निष्कल (निर्दोष) अक्षर ब्रह्म से मिलकर एकता को प्राप्त कर लेता है।३८

तस्माद्विज्ञानमेवास्ति न प्रपञ्चो न संस्थितिः ।
अज्ञानेनावृतं लोके विज्ञानं तेन मुह्यति ॥३९

इसलिए विज्ञान ही है, प्रपञ्च या संस्थिति नहीं है। लोक में विज्ञान अज्ञान से ढका हुआ है, इसलिए सब मोह में पड़ा हुआ है। ३९

विज्ञानं निर्मलं सूक्ष्मं निर्विकल्पं तदव्ययम् ।
अज्ञानमितरत्सर्वं[1] विज्ञानमिति तन्मतम् ॥४०

विज्ञान निर्मल, सूक्ष्म, निर्विकल्प और अविनाशी है और उससे अन्य अज्ञान है। अतएव अज्ञान का अभाव ही विज्ञान माना गया है।४०

---

१. अज्ञानमिति तत्सर्वमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतद्वः कथितं साङ्ख्यं भाषितं ज्ञानमुत्तमम् ।
सर्ववेदान्तसारं हि योगस्तत्रैकचित्तता ॥४१

यह मैंने आप लोगों से उत्तम सांख्यज्ञान कह दिया। यह समस्त वेदान्त का सार है और यही एकचित्ततारूप योग है।४१

योगात्सञ्जायते ज्ञानं ज्ञानाद्योगः[1] प्रवर्त्तते ।
योगज्ञानाभियुक्तस्य नावाप्यं विद्यते क्वचित् ॥४२

योग से ज्ञान उत्पन्न होता है और ज्ञान से योग की प्रवृत्ति होती है। योग और ज्ञान से सम्पन्न व्यक्ति के लिए कहीं कुछ अप्राप्य नहीं है।४२

यदेव योगिनो यान्ति साङ्ख्यैस्तदधिगम्यते[2] ।
एकं साङ्ख्यञ्च योगञ्च यः पश्यति स तत्त्ववित् ॥४३

योगी लोग जिसे प्राप्त करते हैं सांख्यज्ञाता भी उसे ही प्राप्त करते हैं। सांख्य और योग को जो एक समझता है, वही तत्त्ववेत्ता है।४३

अन्ये हि योगिनो विप्रा ह्यैश्वर्यासक्तचेतसः ।
मज्जन्ति तत्र तत्रैव ये चान्ये कुण्ठबुद्धयः ॥४४

हे विप्रगण ! अन्य जो योगी लोग ऐश्वर्य में आसक्त चित्त होकर उसी में मग्न रहते हैं, वे कुण्ठित बुद्धि वाले हैं। ४४

यत्तत्सर्वमतं दिव्यमैश्वर्यममलं महत् ।
ज्ञानयोगाभियुक्तस्तु देहान्ते तदवाप्नुयात् ॥४५

निर्मल, महान् और सर्वसम्मत जो दिव्य ऐश्वर्य है, उसे ज्ञानयोग से युक्त व्यक्ति देहान्त होने पर प्राप्त करता है।४५

एष आत्माहमव्यक्तो मायावी परमेश्वरः ।
कीर्तितः सर्ववेदेषु सर्वात्मा सर्वतोमुखः ॥४६

सर्वरूपः[3] सर्वरसः सर्वगन्धोऽजरोऽमरः ।
सर्वतः पाणिपादोऽहमन्तर्यामी सनातनः ॥४७

यह आत्मा मैं हूँ, जो सभी वेदों में अव्यक्त, मायावी, परमेश्वर, सर्वात्मा, सर्वतोमुख, सर्वरूप, सर्वरस, सर्वगन्ध, अजर, अमर, सब ओर हाथ-पैर वाला, अन्तर्यामी और सनातन कहा गया है।४६-४७।

---

१. ज्ञानान्मोक्षः इति पा०। २. तदधिगम्यते इति, अभिगम्यते इति पा०। ३. सर्वकामः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपाणिपादो जवगो[1] ग्रहीता हृदि संस्थितः ।
अचक्षुरपि पश्यामि तथाऽकर्णः शृणोम्यहम् ॥४८

मेरे हाथ-पैर नहीं है, फिर भी मैं वेग से चलता हूँ और (सबको) पकड़ लेता हूँ। नेत्र न होने पर भी मैं देखता हूँ और कान न होने पर भी सुनता हूँ। ४८

वेदाहं सर्वमेवेदं न मां जानाति कश्चन ।
प्राहुर्महान्तं पुरुषं मामेकं तत्त्वदर्शिनः ॥४९

मैं सबको जानता हूँ और मुझे कोई नहीं जानता। तत्त्वदर्शी मुझे एक और महान् पुरुष कहते हैं।४९।

पश्यन्ति ऋषयो हेतुमात्मनः सूक्ष्मदर्शिनः ।
निर्गुणामलरूपस्य यदैश्वर्यमनुत्तमम्[2] ॥५०

निर्गुण और निर्मल रूपी आत्मा के हेतु स्वरूप जो सर्वोत्तम ऐश्वर्य है, उसे सूक्ष्मदर्शी ऋषिगण देखते हैं।५०

यन्न देवा विजानन्ति मोहिता मम मायया ।
वक्ष्ये समाहिता यूयं शृणुध्वं ब्रह्मवादिनः ॥५१

उसे मेरी माया से मोहित होने के कारण देवगण भी नहीं जानते हैं। ब्रह्मवादियों! तुम लोग सावधान होकर सुनो। मैं बताऊँगा ।५१

नाहं प्रशस्तः सर्वस्य मायातीतः स्वभावतः ।
प्रेरयामि तथापीदं कारणं सूरयो विदुः ॥५२

मैं स्वभावतः माया से परे हूँ। सबके लिए प्रशंसनीय नहीं हूँ। तो भी मैं प्रेरणा देता हूँ। इस कारण को पण्डित लोग जानते हैं ।५२

यतो[3] गुह्यतमं देहं सर्वगं तत्त्वदर्शिनः ।
प्रविष्टा मम सायुज्यं लभन्ते योगिनोऽव्ययम् ॥५३

जो तत्त्वदर्शी योगी लोग मेरे सर्वत्रगामी तथा गुह्यतम शरीर में प्रविष्ट होते हैं, वे अविनाशी सायुज्य मोक्ष प्राप्त करते हैं ।५३

ये[4] हि मायामतिक्रान्ता मम या विश्वरूपिणी ।
लभन्ते परमं शुद्धं निर्वाणं ते मया सह ॥५४

जो मेरी विश्वरूपणी माया का अतिक्रमण कर लेते हैं, वे मेरे सहित परम शुद्ध निर्वाण मोक्ष को प्राप्त करते हैं।५४

---

१. जवनः इति पा०। २. यत्तदैश्वर्यमुत्तममिति पा०। ३. यन्मे इति पा०। ४. तेषां हि वशमापन्ना माया मे इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न तेषां परमावृत्तिः[1] कल्पकोटिशतैरपि ।
प्रसादान्मम योगीन्द्रा एतद्वेदानुशासनम् ॥५५

सैकड़ों करोड़ कल्प में उनकी पुनरावृत्ति नहीं होती है। हे योगीन्द्रगण ! ऐसा मेरी कृपा से होता है, यह वेद का अनुशासन (आज्ञा) है ।५५

तत्पुत्रशिष्ययोगिभ्यो दातव्यं ब्रह्मवादिभिः ।
मदुक्तमेतद्विज्ञानं सांख्यं योगसमाश्रयम् ॥५६

ब्रह्मवादी लोग मेरा कहा हुआ यह सांख्य-योग-आश्रित विज्ञान पुत्रों, शिष्यों तथा योगियों को प्रदान करें ।५६

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

श्री कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वरगीतोपनिषद् में ब्रह्मविद्या में ऋषियों और व्यास के संवाद में दूसरा अध्याय समाप्त ।२

●

तृतीयोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

अव्यक्तादभवत्कालः प्रधानं पुरुषः परः ।
तेभ्यः सर्वमिदं जातं तस्माद्ब्रह्ममयं जगत् ॥१

शंकर बोले—अव्यक्त से काल, प्रधान और परम पुरुष उत्पन्न हुए। उनसे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ, इसलिए जगत् ब्रह्ममय है ।१

सर्वतः पाणिपादान्तं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥२

उस ब्रह्म के हाथ-पैर सब ओर हैं। आँखें, शिर और मुख भी सब ओर हैं। सब ओर कानवाला भी वह है। लोक में वह सबको आवृत करके स्थित है ।२

---

१. पुनरावृत्तिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्ज्जितम् ।
सर्वाधारं सदानन्दमव्यक्तं द्वैतवर्जितम् ॥३

उसी से सभी इन्द्रियों और गुणों का आभास होता है। वह सभी इन्द्रियों से रहित है। सबका आधार, सदा आनन्द स्वरूप, अव्यक्त और द्वैत रहित है।३

सर्वोपमानरहितं प्रमाणातीतगोचरम् ।
निर्विकल्पं निराभासं सर्वाभासं परामृतम् ॥४

अभिन्नं भिन्नसंस्थानं शाश्वतं ध्रुवमव्ययम् ।
निर्गुणं परमं ज्योतिस्तज्ज्ञानं सूरयो विदुः ॥५

समस्त उपमानों से रहित, प्रमाणों से परे, अथच गम्य, निर्विकल्प आभास रहित, अथच सर्वाभास, परम अमृत, अभिन्न और भिन्न संस्थान वाला, शाश्वत, ध्रुव; अविनाशी, निर्गुण और परम ज्योतिः स्वरूप, ब्रह्म के ज्ञान को विद्वान् लोग जानते हैं।४-५।

स आत्मा सर्वभूतानां स बाह्याभ्यन्तरः परः ।
सोऽहं सर्वत्रगः शान्तो ज्ञानात्मा परमेश्वरः ॥६

मया ततमिदं [1]विश्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
मत्स्थानि सर्वभूतानि यस्तं वेदविदो विदुः ॥७

वह सभी प्राणियों का आत्मा तथा बाह्य और आभ्यन्तरीण है। वही प्रधान है। वही मैं सर्वत्रगामी, शान्त, ज्ञानात्मा और परमेश्वर हूँ। मैंने ही इस स्थावर-जंगमरूप विश्व का विस्तार किया है। सभी प्राणी मुझमें स्थित हैं, ऐसा वेदवेत्ता लोग जानते हैं।६-७।

प्रधानं पुरुषञ्चैव तद्वस्तु समुदाहृतम् ।
[2]तयोरनादिरुद्दिष्टः कालः संयोगजः परः ॥८

प्रधान और पुरुष यह दो तत्त्व कहे गये हैं। किन्तु जो काल अनादि उद्दिष्ट हुआ है, वह उन दोनों प्रधान और पुरुष के संयोग से उत्पन्न होता है।८

त्रयमेतदनाद्यन्तमव्यक्ते समवस्थितम् ।
तदात्मकं तदन्यत्स्यात्तद्रूपं मामकं विदुः ॥९

अतएव ये तीनों तत्त्व अनादि और अनन्त रूप में अव्यक्त अवस्थित हैं। किन्तु वह मेरा रूप विद्वानों द्वारा तदात्मक और तदन्य समझा जाता है।९

---

१. जगदव्यक्तमूर्त्तिनेति, जगदव्ययमूर्त्तिना इति पा०। २. तयोरनादिर्निर्दिष्टः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महदाद्यं[1] विशेषान्तं सम्प्रसूतेऽखिलं जगत् ।
या सा प्रकृतिरुद्दिष्टा मोहिनी सर्वदेहिनाम् ॥१०

महत् से लेकर विशेष पर्यन्त सम्पूर्ण जगत् को जो उत्पन्न करती है, वह प्रकृति कही गई है। प्रकृति सभी देहधारियों को मोहित करती है।१०

पुरुषः प्रकृतिस्थो वै भुंक्ते यः प्राकृतान् गुणान् ।
अहङ्कारविमुक्तत्वात्प्रोच्यते पञ्चविंशकः ॥११

पुरुष प्रकृति में स्थित होकर प्रकृति से उत्पन्न गुणों का भोग करता है। किन्तु अहंकार से विमुक्त होने के कारण वह पचीसवाँ तत्त्व कहा जाता है।११

आद्यो विकारः प्रकृतेर्महानिति च कथ्यते ।
विज्ञातृशक्तिविज्ञानात् ह्यहङ्कारस्तदुत्थितः ॥१२

प्रकृति का पहला विकार महान् कहा जाता है। किन्तु विज्ञान शक्ति के विज्ञान के कारण उससे अहंकार उत्पन्न हुआ।१२

एक एव महानात्मा सोऽहङ्कारोऽभिधीयते ।
स जीवः सोऽन्तरात्मेति गीयते तत्त्वचिन्तकैः ॥१३

एकमात्र महान् ही आत्मा है, उसी को अहंकार कहा जाता है। तत्त्व-चिन्तकों ने उसी को जीव और उसी को अन्तरात्मा कहा है।१३

तेन वेदयते सर्वं सुखं दुःखञ्च जन्मसु ।
स विज्ञानात्मकस्तस्य मनः स्यादुपकारकम् ॥१४

जीवन में जो सुख-दुःख होता है; उसे अहंकार ही जनाता है, सुतराम् अहंकार विज्ञानात्मक है और मन उसका उपकारक है।१४

तेनापि तन्मयस्तस्मात् संसारः पुरुषस्य तु ।
स चाविवेकः प्रकृतौ संगात्कालेन सोऽभवत् ॥१५

उसी के कारण अविवेकवश पुरुष द्वारा तन्मय संसार का संघटन किया जाता है। प्रकृति और काल के संग से उस अविवेक की उत्पत्ति होती है।१५

कालः सृजति भूतानि कालः संहरते प्रजाः ।
सर्वे कालस्य वशगा न कालः कस्यचिद्वशे ॥१६

---

१. महदाद्यविशेषान्तं—महत्तत्त्वादारभ्य विशेषपदार्थपर्यन्तमित्यर्थः । महत् प्रधानं विशेषिकैरभ्युपेतः पदार्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल भूत-समूह की सृष्टि करता है और काल ही प्रजाओं का संहार करता है। अतएव सब काल के वश में है, किन्तु काल किसी के वश में नहीं है।१६

सोऽन्तरा सर्वमेवेदं नियच्छति सनातनः।
प्रोच्यते भगवान्प्राणः सर्वज्ञः पुरुषोत्तमः ॥१७
सर्वेन्द्रियेभ्यः परमं मन आहुर्मनीषिणः।
मनसश्चाप्यहङ्कारमहङ्कारान्महान्परः ॥१८

वह सनातन काल ही सबके बीच होकर सब पर नियन्त्रण करता है। इसलिए काल ही भगवान्, प्राण, सर्वज्ञ और पुरुषोत्तम कहा जाता है। मनीषियों ने सभी इन्द्रियों से श्रेष्ठ मन को माना है। मन से भी श्रेष्ठ अहंकार और अहंकार से श्रेष्ठ महान् है।१७-१८।

महतः परमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषः परः।
पुरुषाद्भगवान् प्राणस्तस्य सर्वमिदं जगत् ॥१९

महान् से श्रेष्ठ अव्यक्त और अव्यक्त से पुरुष श्रेष्ठ है। पुरुष से भगवान् प्राणात्मक काल श्रेष्ठ है। उसके वश में यह सम्पूर्ण जगत् है।१९

प्राणात्परतरं व्योम व्योमातीतोऽग्निरीश्वरः।
सोऽहं ब्रह्माव्ययः शान्तो मायातीतमिदं[1] जगत् ॥२०

प्राण की अपेक्षा आकाश श्रेष्ठतर हैं, आकाश की अपेक्षा ईश्वर अग्नि श्रेष्ठतर है। किन्तु मैं शान्त, अव्यय, ब्रह्म एवं मायातीत इस जगत् का स्वरूप हूँ।२०

नास्ति मत्तः परं भूतं माञ्च विज्ञाय मुच्यते।
नित्यं नास्तीति जगति भूतं स्थावरजङ्गमम् ॥२१

मुझसे बढ़कर और कुछ नहीं है। सुतरां मुझे जानकर जीव मुक्त हो जाता है। संसार में स्थावर-जंगमात्मक सम्पूर्ण भूत के मध्य कुछ भी नित्य नहीं है।२१

ऋते मामेवमव्यक्तं[2] व्योमरूपं महेश्वरम्।
सोऽहं सृजामि सकलं संहरामि सदा जगत् ॥२२

एकमात्र अव्यक्त, व्योमरूपी महेश्वर मैं ही नित्य हूँ। सो मैं सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि तथा संहार करता रहता हूँ।२२

मायी मायामयो देवः कालेन सह सङ्गतः।
मत्सन्निधावेष कालः करोति सकलं जगत् ॥२३

---

१. ज्ञानात्मा परमेश्वरः इति पा०। २. मामेकमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मायावी और मायात्मक वह मैं काल से संगति करता हूँ। वह काल मेरे सान्निध्य में सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि और संहार करता है। फिर वह अनन्तात्मा होकर सबको नियोजित करता है, यह वेद का अनुशासन है।२३

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वरगीता-उपनिषद् में ब्रह्मविद्या में योगशास्त्र में ऋषियों और व्यास के संवाद-प्रकरण में तीसरा अध्याय समाप्त ॥३

चतुर्थोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

वक्ष्ये समाहिता यूयं शृणुध्वं ब्रह्मवादिनः।
माहात्म्यं देवदेवस्य येन सर्वं प्रवर्त्तते ॥१

महादेव बोले—ब्रह्मवादियों! सावधान होकर देवाधिदेव का माहात्म्य सुनो, जिससे सबकी प्रवृत्ति होती है।१

नाहं तपोभिर्विविधैर्न दानेन न चेज्यया।
शक्यो हि पुरुषैर्ज्ञातुमृते भक्तिमनुत्तमाम् ॥२

विविध प्रकार के तप, दान एवं यज्ञों द्वारा मनुष्य मुझे नहीं जान सकते। मैं एकमात्र परमोत्तम भक्ति द्वारा जाना जा सकता हूँ।२

अहं हि सर्वभूतानामन्तस्तिष्ठामि[1] सर्वतः।
मां सर्वसाक्षिणं लोको न जानाति मुनीश्वराः ॥३

मैं सब ओर से सभी प्राणियों के भीतर रहता हूँ। मुनीश्वरो! सबके साक्षी मुझको संसार नहीं जानता है।३

---

१. भावानामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यस्यान्तरा सर्वमिदं यो हि सर्वान्तकः परः ।
सोऽहं धाता विधाता च 'कालोऽग्निर्विश्वतोमुखः ॥४

यह समस्त संसार जिसके भीतर है और जो सबके भीतर है, वह मैं धाता, विधाता, कालाग्नि एवं विश्वतोमुख हूँ ।४

न मां पश्यन्ति मुनयः सर्वे पितृदिवौकसः ।
ब्रह्मा च मनवः शक्रो ये चान्ये प्रथितौजसः ॥५

सभी मुनिगण, पितर, देवता, ब्रह्म, मनु, इन्द्र और जो अन्य प्रख्यात तेजस्वी हैं, वे भी मुझे नहीं देखते हैं ५

गृणन्ति सततं वेदा मामेकं परमेश्वरम् ।
यजन्ति विविधैर्यज्ञैर्ब्राह्मणा[1] वैदिकैर्मखैः ॥६

वेद एकमात्र मुझ परमेश्वर की सतत स्तुति करते हैं और ब्राह्मणवृन्द विविध प्रकार के वैदिक यज्ञों द्वारा आराधना करते हैं ।६

सर्वे लोका न पश्यन्ति[2] ब्रह्मा लोकपितामहः ।
ध्यायन्ति योगिनो देवं भूताधिपतिमीश्वरम् ॥७

समस्त लोक और लोकपितामह ब्रह्मा भी मुझे नहीं देखते । किन्तु समस्त भूतों के अधिपति, देवनशील मुझ ईश्वर का योगी लोग ध्यान करते हैं ।७

अहं हि सर्वहविषां भोक्ता चैव फलप्रदः ।
सर्वदेवतनुर्भूत्वा सर्वात्मा सर्वसंप्लुतः ॥८

मैं ही समस्त हवि का भोक्ता और फलदाता हूँ । मैं सभी देवों का शरीर होकर सर्वात्मा एवं सर्वत्र अवस्थित हूँ ।८

मां पश्यन्तीह विद्वांसो धार्मिका वेदवादिनः ।
तेषां सन्निहितो नित्यं ये मां नित्यमुपासते ॥९

यहाँ वेदवादी धार्मिक विद्वान् मुझे देखते हैं । जो मेरी नित्य उपासना करते हैं, उनके समीप मैं रहता हूँ ।९

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या धार्म्मिका मामुपासते ।
तेषां ददामि तत्स्थानमानन्दं परमम्पदम् ॥१०

---

१. लोकेऽस्मिन्निति पा० । २. विविधैरग्निमिति विविधैरग्न इति पा० । ३. नमस्यन्तीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य प्रभृति जो धार्मिक लोग मेरी उपासना करते हैं, उन्हें हम आनन्दप्रद परम पद प्रदान करते हैं।१०

अन्येऽपि ये स्वधर्म्मस्था शूद्राद्या नीचजातयः।
भक्तिमन्तः प्रमुच्यन्ते कालेनापि हि सङ्गताः ॥११

अन्य जो शूद्र आदि नीच जाति के लोग अपने धर्म में स्थित रहकर भक्ति करते हैं, वे समय पर सुसंगति पाकर मुक्त हो जाते हैं।११

मद्भक्ता न विनश्यन्ति मद्भक्ता वीतकल्मषाः।
आदावेव प्रतिज्ञातं न मे भक्तः प्रणश्यति ॥१२

मेरे भक्तों का विनाश नहीं होता है। मेरे भक्त निष्पाप होते हैं। पहले ही मैं प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि मेरे भक्त का नाश नहीं होता।१२

यो वै निन्दति तं मूढो देवदेवं स निन्दति।
यो हि पूजयते भक्त्या स पूजयति मां सदा ॥१३

मेरे भक्त की जो निन्दा करता है, वह देवाधिदेव की निन्दा करता हैं। जो उसकी भक्ति पूर्वक पूजा करता है, वह सदा मेरी पूजा करता है।१३

पत्रं पुष्पं फलं तोयं मदाराधनकारणात्।
यो मे ददाति नियतं स मे भक्तः प्रियो मम ॥१४

जो मेरी आराधना के कारण नियमपूर्वक मुझे पत्र, पुष्प, फल और जल समर्पित करता है, वह भक्त मुझे प्रिय है १४

अहं हि जगतामादौ ब्रह्माणं परमेष्ठिनम्।
विदधौ दत्तवान्वेदानशेषानात्मनिःसृतान् ॥१५

मैंने जगत् के आदि में परमेष्ठी ब्रह्मा की सृष्टि की और अपने निकले हुए सकल वेद उन्हें दिये।१५

अहमेव हि सर्वेषां योगिनां गुरुरव्ययः।
धार्मिकाणां च गोप्ताहं निहन्ता वेदविद्विषाम् ॥१६

मैं ही योगियों का अविनाशी गुरु, धार्मिकों का रक्षक और वेदद्रोहियों का विनाशक हूँ।१६

अहं हि सर्वसंसारान्मोचको योगिनामिह।
संसारहेतुरेवाहं सर्वसंसारवर्ज्जितः ॥१७

मैं ही योगियों को संसार से मुक्त करता हूँ। मैं ही संसार का कारण हूँ और

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्त संसार से मुक्त करता हूँ। मैं ही संसार का कारण हूँ और समस्त संसार से वर्जित हूँ।१७

अहमेव हि संहर्त्ता संस्रष्टा परिपालकः।
माया वै मामिका शक्तिर्माया लोकविमोहिनी ॥१८

मैं ही संहार करने वाला, सृष्टि करनेवाला और परिपालन करने वाला हूँ। लोगों को मोहित करने वाली माया मेरी ही शक्ति है।१८

ममैव च परा शक्तिर्या सा विद्येति गीयते।
नाशयामि च तां मायां योगिनां हृदि संस्थितः ॥१९

मेरी ही वह परा शक्ति है, जिसे विद्या कहते हैं। मैं योगियों के हृदय में स्थित होकर उस माया को नष्ट कर देता हूँ।१९

अहं हि सर्वशक्तीनां प्रवर्त्तकनिवर्त्तकः।
आधारभूतः सर्वासां निधानममृतस्य च ॥२०

मैं ही सभी शक्तियों का प्रवर्तक, निवर्तक और आधार हूँ तथा अमृत (मोक्ष) का निधान हूँ।२०

एका सर्वान्तरा शक्तिः करोति विविधं जगत्।
(नाहं प्रेरयिता विप्राः परमं योगमाश्रिताः)।
आस्थाय ब्रह्मणो रूपं मन्मयी मदधिष्ठिता ॥२१

मत्स्वरूपा तथा सबके अन्दर रहने वाली, मुझमें अधिष्ठित तथा मत्स्वरूपा जो एक शक्ति है, वह ब्रह्मा का रूप धारण करके जगत् की सृष्टि करती है। (परम योग का आश्रय लेने वाले हे विप्रगण ! मैं प्रेरणा देने वाला नहीं हूँ)।२१

अन्या च शक्तिर्विपुला संस्थापयति मे जगत्।
भूत्वा नारायणोऽनन्तो जगन्नाथो[1] जगन्मयः ॥२२

मेरी दूसरी विपुला शक्ति अनन्त, नारायण, जगन्नाथ, जगन्मय नारायण का रूप धारण करके संसार की स्थापना (रक्षा) करती है।२२

तृतीया महती शक्तिर्निहन्ति सकलं जगत्।
तामसी मे समाख्याता कालाख्या रुद्ररूपिणी ॥२३

मेरी तीसरी कालरूपा, रुद्ररूपिणी, महती, तामसी शक्ति सम्पूर्ण जगत् का संहार करती है।२३

---

१. अहमेव होति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्यानेन मां प्रपश्यन्ति केचिज्ज्ञानेन चापरे ।
अपरे भक्तियोगेन कर्मयोगेन चापरे ॥२४

कोई तो मुझे ध्यान द्वारा देखते हैं, कोई ज्ञान से, कोई भक्तियोग से और कोई कर्मयोग द्वारा दर्शन करता है ।२४

सर्वेषामेव भक्तानामिष्टः प्रियतमो मम ।
यो हि ज्ञानेन मां नित्यमाराधयति नान्यथा ॥२५

किन्तु सभी प्रकार के भक्तों में जो ज्ञान के द्वारा मेरी नित्य आराधना करता है, वह मुझे इष्ट और प्रियतम है ।२५

अन्ये च हरये भक्ता मदाराधनकारिणः ।
तेऽपि मां प्राप्नुवन्त्येव नावर्त्तन्ते च वै पुनः ॥२६

मेरी आराधना करनेवाले जो व्यक्ति विष्णु के भक्त हैं, वे भी मुझे ही प्राप्त करते हैं और वे लौटते नहीं हैं । २६

मया ततमिदं कृत्स्नं प्रधानपुरुषात्मकम् ।
मय्येव संस्थितं चित्तं मया सम्प्रेर्यते जगत् ॥२७

प्रकृति-पुरुषात्मक सम्पूर्ण जगत् का विस्तार मैंने किया है । चित्त (समस्त विश्व) मुझमें ही स्थित हैं और मेरे द्वारा ही जगत् परिचालित होता है ।२७

नाहं प्रेरयिता विप्राः परमं [1]योगमास्थितः ।
प्रेरयामि जगत्कृत्स्नमेतद्यो वेद सोऽमृतः ॥२८

विप्रवृन्द ! मैं परिचालक नहीं हूँ, मैं परम योग का अवलम्बन लेकर अवस्थित हूँ । मैं सम्पूर्ण विश्व को प्रेरित करता हूँ । जो वह जानता है, वही मुक्त है ।२८

पश्याम्यशेषमेवेदं वर्त्तमानं स्वभावतः ।
करोति कालो भगवान्महायोगेश्वरः स्वयम् ॥२९

स्वभावतः वर्तमान इस सम्पूर्ण जगत् को मैं देखता हूँ । भगवान् महायोगेश्वर काल स्वयं इस जगत् को उत्पन्न करते हैं ।२९

योऽहं सम्प्रोच्यते योगी मायी शास्त्रेषु सूरिभिः ।
योगीश्वरोऽसौ भगवान्महायोगेश्वरः स्वयम् ॥३०

जो मैं शास्त्रों में विद्वानों द्वारा योगी और मायी कहा जाता हूँ सो वह स्वयं भगवान् महायोगेश्वर है ।३०

---

१. योगमाश्रितः इति पा० । २. महादेवो महाप्रभुरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्त्वं [1]सर्वसत्त्वानां वरत्वात् परमेष्ठिनः ।
प्रोच्यते भगवान् ब्रह्मा महाब्रह्ममयोऽमलः ॥३१

परमेष्ठी की श्रेष्ठता के कारण समस्त सत्त्वों (तत्त्वों) का महत्त्व है। भगवान् ब्रह्मा महाब्रह्ममय एवं निर्मल कहे जाते हैं।३१

यो मामेवं विजानाति महायोगेश्वरेश्वरम् ।
सोऽविकल्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥३२॥

जो व्यक्ति इस प्रकार मुझे महायोगेश्वरेश्वर जानता है, वह निर्विकल्प योग से युक्त होता है, उसमें कुछ सन्देह नहीं है।३२

सोऽहं प्रेरयिता देवः परमानन्दमाश्रितः ।
[2]नृत्यामि योगी सततं यस्तद्वेद स योगवित् ॥३३॥

सो मैं प्रेरक देव परमानन्द का आश्रय लेकर योगी होकर नाचता हूँ, जो इस रहस्य को जानता है, वह योगवेत्ता है।३३

इति गुह्यतमं ज्ञानं सर्ववेदेषु निश्चितम् ।
प्रसन्नचेतसे देयं धार्मिकायाहिताग्नये ॥३४॥

यह निश्चित ज्ञान सभी वेदों में अत्यन्त गुप्त है। यह ज्ञान प्रसन्नचित, धार्मिक और अग्न्याधान (होम) करने वाले को देना चाहिए।३४

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

श्री कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वरगीतोपनिषद् में ब्रह्मविद्या में योगशास्त्र में ऋषियों और व्यास के संवाद-प्रकरण में चौथा अध्याय समाप्त।४

---

१. सर्वतत्त्वानां परत्वादिति पा०। २. प्रेरयामि जगत्कृत्स्नं यस्तं वेद स वेदवि-दिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चमोऽध्यायः

व्यास उवाच

एतावदुक्त्वा भगवान्योगिनां परमेश्वरः ।
ननर्त्त परमं भावमैश्वरं सम्प्रदर्शयन् ॥१॥

व्यास बोले—इतना कहकर योगियों के परमेश्वर भगवान् शिव ईश्वरीय भाव का प्रदर्शन करते हुए नाचने लगे ।१

तं ते ददृशुरीशानं तेजसां परमं निधिम् ।
नृत्यमानं[1] महादेवं विष्णुना गगनेऽमले ॥२॥

परम तेजोनिधि उन ईशान महादेव को निर्मल आकाश में विष्णु के साथ नाचते हुए ऋषियों ने देखा ।२

यं विदुर्योगतत्त्वज्ञा योगिनो यतमानसाः ।
तमीशं सर्वभूतानामाकाशे ददृशुः किल ॥३॥

जिनको योगतत्त्वज्ञ एवं संयतचित्त योगी लोग जानते हैं, उन भूतपति महादेव को आकाश में लोगों ने देखा ।३

यस्य मायामयं सर्वं येनेदं प्रेर्यते जगत् ।
नृत्यमानः स्वयं विप्रैर्विश्वेशः खलु दृश्यते ॥४॥

सम्पूर्ण जगत् जिनकी माया से ओतप्रोत है और जिनके द्वारा प्रेरित होता है, उन्हीं साक्षात् विश्वेश्वर को विप्रों ने नाचते हुए देखा ।४

यत्पादपंकजं स्मृत्वा पुरुषोऽज्ञानजं भयम् ।
जहाति नृत्यमानं तं भूतेशं ददृशुः किल ॥५॥

जिनके चरण कमल का स्मरण करके पुरुष अज्ञान जनित भय को त्याग देता है, उन्हीं भूतेश्वर को नाचते हुए देखा ।५

[2]केचिन्निद्राजितश्वासाः शान्ता भक्तिसमन्विताः ।
ज्योतिर्म्मयं प्रपश्यन्ति स योगी दृश्यते किल ॥६॥

---

१. नृत्यमानमित्यार्षं नृत्यन्तमिति साधु । २. विनिद्रा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निद्रा और श्वास को जीतने वाले, शान्त एवं भक्तिमान् पुरुष जिन्हें ज्योतिर्मय रूप में देखते हैं, उन योगी को विप्रों ने देखा ।६

योऽज्ञानान्मोचयेत् क्षिप्रं प्रसन्नो भक्तवत्सलः ।
तमेवं मोचनं[1] रुद्रमाकाशे ददृशुः परम् ॥७॥

जो भक्तवत्सल महादेव प्रसन्न होने पर शीघ्र ही अज्ञान से मुक्त कर देते हैं, उन्हीं श्रेष्ठ मोचक रुद्र को आकाश में देखा ।७

सहस्रशिरसं देवं सहस्रचरणाकृतिम् ।
सहस्रबाहुं जटिलं चन्द्रार्द्धकृतशेखरम् ॥८॥

वसानं चर्म वैयाघ्रं शूलासक्तमहाकरम् ।
दण्डपाणिं त्रयीनेत्रं सूर्यसोमाग्निलोचनम् ॥९॥

ब्रह्माण्डं तेजसा स्वेन सर्वमावृत्य धिष्ठितम्[2] ।
दंष्ट्राकरालं दुर्द्धर्षं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥१०॥

सृजन्तमलनज्वालं दहन्तमखिलं जगत् ।
नृत्यन्तं ददृशुर्देवं विश्वकर्माणमीश्वरम् ॥११॥

जिनके सहस्र मस्तक, सहस्र चरण, सहस्र आकार और सहस्र भुजायें हैं, जिनके भाल पर अर्धचन्द्र विराजमान है, जो जटाधारी हैं, जो व्याघ्रचर्म पहनते हैं, जिनके महान् हस्त में त्रिशूल आसक्त है, जो दण्डपाणि हैं, जिनके तीन नेत्र हैं—सूर्य, चन्द्रमा अग्नि, जिन्होंने अपने तेज से ब्रह्माण्ड को आवृत करके अधिष्ठित किया है, जिनकी दंष्ट्रा भयंकर है, जो दुर्धर्ष एवं करोड़ों सूर्य के समान प्रभा वाले हैं, जो अग्नि को ज्वालाओं की सृष्टि करके सम्पूर्ण जगत् को जला डालते हैं, ऐसे विश्वरचयिता, ईश्वर देव को नाचते हुए देखा ।८-११।

महादेवं महायोगं देवानामपि दैवतम् ।
पशूनां पतिमीशानमानन्दं ज्योतिरव्ययम् ॥१२॥

पिनाकिनं विशालाक्षं भेषजं भवरोगिणाम् ।
कालात्मानं कालकालं देवदेवं महेश्वरम् ॥१३॥

उमापतिं विशालाक्षं योगानन्दमयं परम् ।
ज्ञानवैराग्यनिलयं ज्ञानयोगं सनातनम् ॥१४॥
शाश्वतैश्वर्यविभवं धर्माधारं दुरासदम् ।
महेन्द्रोपेन्द्रनमितं महर्षिगणवन्दितम् ॥१५॥

---

१. मोचयतीति मोचनस्तम्, नन्द्यादेरनः । तमेव मोचकमिति पा० ।
२. अत्राधेरार्षोऽकारलोपः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगिनां हृदि तिष्ठन्तं योगमायासमावृतम् ।
क्षणेन जगतो योनिं नारायणमनामयम् ॥१६॥

ईश्वरेणैक्यमापन्नमपश्यन् ब्रह्मवादिनः ।
दृष्ट्वा तदैश्वरं रूपं रुद्रं नारायणात्मकम् ।
कृतार्थं मेनिरे संतः स्वात्मानं ब्रह्मवादिनः ॥१७॥

वे महादेव, महायोगी, देवताओं के भी देवता, पशुओं के पति, ईशान, आनन्द-स्वरूप, ज्योतिःस्वरूप, अविनाशी, पिनाकधनुषधारी, विशाल नेत्र वाले, संसाररूपी रोग वालों के लिए ओषधि स्वरूप, कालस्वरूप, कालों के भी काल, देवी के भी देव, महेश्वर, उमापति, परम योगानन्दमय ज्ञान और वैराग्य के आश्रय, ज्ञानयोगी, सनातन, नित्य ऐश्वर्य और वैभव से युक्त, धर्म के आधार, दुष्प्राप्य, इन्द्र और विष्णु के प्रणम्य, महर्षि-गण के वन्दनीय, योगियों के हृदय में विराजमान, योगमाया से युक्त, संसार के मूलकारण, नारायण, अनामय और ईश्वर के साथ ऐक्य सम्पन्न हैं। ऐसे महादेव को ब्रह्मवादियों ने देखा। उस ऐश्वर रूप, नारायणस्वरूप रुद्र को देखकर सन्त ब्रह्मवादियों ने अपने को कृतार्थ माना ।१२-१७।

सनत्कुमारः सनको भृगुश्च सनातनश्चैव सनन्दनश्च ।
रैभ्योऽङ्गिरा वामदेवोऽथ शुक्रो महर्षिरत्रिःकपिलो मारीचिः ॥१८॥

दृष्ट्वाथ रुद्रं जगदीशितारं तं पद्मनाभाश्रितवामभागम् ।
ध्यात्वा हृदिस्थं प्रणिपत्य मूर्ध्ना कृताञ्जलिं स्वेषु शिरःसु भूयः ॥१९॥

ओङ्कारमुच्चार्य विलोक्य देवमन्तःशरीरं निहितं गुहायाम्[1] ।
समस्तुवन् ब्रह्ममयैर्वचोभिरानन्दपूर्णाहितमानसा[2] वै ॥२०॥

सनत्कुमार, सनक, भृगु, सनातन, सनन्दन, रैभ्य, अंगिरा, वामदेव, शुक्र, महर्षि अत्रि, कपिल और मरीचि ने विष्णु के दाहिने भाग में अवस्थित उन जगदीश रुद्र को देखकर हृदय में ध्यान करके शिर से प्रणाम किया। और पुनः मस्तक से अंजलि लगाकर ओंकार का उच्चारण करके शरीर के भीतर हृदय-गुहा में स्थित देव को देखकर आनन्द-पूर्ण चित्त वाले मुनिगण ब्रह्ममय वाक्यों से उनकी स्तुति करने लगे ।१८-२०।

मुनय ऊचुः

त्वामेकमीशं पुरुषं पुराणं प्राणेश्वरं रुद्रमनन्तयोगम् ।
नमाम सर्वे हृदि सन्निविष्टं प्रचेतसं ब्रह्ममयं पवित्रम् ॥२१॥

---

१. मनीषायामित्यर्थः। २. मानसास्ते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनिवृन्द बोले—जो ईश्वर, अद्वितीय, पुराण पुरुष, प्राणेश्वर, रुद्र, अनन्तयोग, प्रचेता, ब्रह्ममय और पवित्र हैं उनको हम सब नमस्कार करते हैं।२१

पश्यन्ति त्वां मुनयो ब्रह्मयोनिं दान्ताः शान्ता विमलं रुक्मवर्णम् ।
[1]ध्यात्वात्मस्वप्रचलं स्वे शरीरे कविं परेभ्यः परमं परञ्च ॥२२॥

इन्द्रियों का दमन करने वाले, शान्तचित्त मुनि लोग ब्रह्मयोनि, निर्मल, सुवर्ण के समान वर्ण वाले कवि, परम एवं परात्पर आपको अपने शरीर में ध्यान करके देखते हैं।२२

त्वत्तः प्रसूता जगतः प्रसूतिः सर्वानुभूस्त्वं परमाणुभूतः ।
अणोरणीयान्महतो महीयांस्त्वामेव सर्वं प्रवदन्ति सन्तः ॥२३॥

जगत् की उत्पत्ति आपसे ही होती है। आप परमाणुरूप में सबके अनुभवस्थान हैं। आप अणु से भी बहुत अणु तथा महान् से भी अतिशय महान् हैं। साधुलोग आपही को सब कहते हैं।२३

हिरण्यगर्भो जगदन्तरात्मा त्वत्तोऽस्ति जातः पुरुषः पुराणः ।
सञ्जायमानो भवता निसृष्टो यथाविधानं सकलं स सद्यः ॥२४॥

हिरण्यगर्भ, जगत् के अन्तरात्मा, पुराणपुरुष आप ही से उत्पन्न हुए हैं। वह उत्पन्न होते हुए पुराणपुरुष आपसे सृष्ट होकर तुरन्त सबकी सृष्टि विधिपूर्वक कर देते हैं।२४

त्वत्तो वेदाः सकलाः संप्रसूतास्त्वय्येवान्ते संस्थितिं ते लभन्ते ।
पश्यामस्त्वाञ्जगतो हेतुभूतं नृत्यन्तं स्वे हृदये सन्निविष्टम् ॥२५॥

आपही से समस्त वेद उत्पन्न हुए और अन्त में आप ही में स्थिति लाभ करेंगे। हम जगत् के हेतुभूत आपको अपने हृदय में सन्निविष्ट होकर नृत्य करते हुए देखते हैं।२५

त्वयैवेदं भ्राम्यते ब्रह्मचक्रं मायावी त्वं जगतामेकनाथः ।
नमामस्त्वां शरणं संप्रपन्ना[2] योगात्मनं नृत्यन्तं[3] दिव्यनृत्यम् ॥२६॥

उस ब्रह्मचक्र को आप ही घुमा रहे हैं। आप मायावी, एवं संसार के एकमात्र स्वामी हैं। हम योगात्मा तथा दिव्य नृत्य करते हुए आपकी शरण में आकर नमस्कार करते हैं।२६

---

१. ध्यात्वात्मस्थमचलमिति पा०। स्वप्रचलं-स्वेन आत्मना प्रचलतीति तथोक्तम्। २. प्रपन्नाः इति, प्रकृतेर्गुणाश्च इति पा०। ३. चिन्मयमिति, चित्पतिमिति, रुद्रमनन्तशक्तिमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्यामस्त्वां परमाकाशमध्ये नृत्यन्तं ते महिमानं स्मरामः ।
सर्वात्मानं बहुधा सन्निविष्टं ब्रह्मानन्दं चानुभूयानुभूय ॥२७॥

हम देखते हैं कि आकाशमध्य में आप नाच रहे हैं। आप सभी के आत्मा होते हुए भी बहुधा सन्निविष्ट रहते हैं। हम ब्रह्मानन्द का अनुभव कर-करके आपकी महिमा का स्मरण करते हैं।२७

ओङ्कारस्ते वाचको मुक्तिबीजं त्वमक्षरं प्रकृतौ गूढरूपम् ।
तत्त्वां सत्यं प्रवदन्तीह सन्तः स्वयम्प्रभं भवतो यत्प्रभावम् ॥२८॥

ओंकार आपका वाचक है। आप मुक्ति के बीज, अविनाशी एवं गूढ़ रूप से प्रकृति में अवस्थित हैं। अतएव साधुगण इस जगत् में आपको तथा आपके स्वयंप्रभ प्रभाव को सत्य कहते हैं।२८

स्तुवन्ति त्वां सततं सर्ववेदा नमन्ति त्वामृषयः क्षीणदोषाः ।
शान्तात्मानः सत्यसन्धं वरिष्ठं विशन्ति त्वां यतयो ब्रह्मनिष्ठाः ॥२९॥

सकल वेद सतत आपकी स्तुति करते हैं, निर्दोष ऋषिगण आपको नमस्कार करते हैं और शान्तात्मा एवं ब्रह्मनिष्ठ यतिगण सत्यसन्ध एवं वरिष्ठ आपमें प्रवेश करते हैं।२९

भुवो[1] नाशो नादिमान्विश्वरूपो ब्रह्मा विष्णुः परमेष्ठी वरिष्ठः ।
स्वात्मानन्दमनुभूयविशन्ते स्वयं ज्योतिरचला नित्यमुक्ताः ॥३०॥

आप ही ईश्वर अनादि, विश्वरूप, ब्रह्मा, विष्णु, परमेष्ठी और वरिष्ठ हैं। एकाग्रचित्त एवं नित्यमुक्त ऋषि अपने आत्मानन्दरूप में आपका ही अनुभव करके स्वयंज्योतिः स्वरूप में प्रवेश करते हैं।३०

एको रुद्रस्त्वं करोषीह विश्वं त्वं पालयस्यखिलं विश्वरूपम् ।
त्वामेवान्ते निलयं विन्दतीदं नमामस्त्वां शरणं संप्रपन्नाः ॥३१॥

आप एक ही रुद्र इस विश्व की सृष्टि करते हैं और सम्पूर्ण विश्व का पालन भी करते हैं। अन्त में यह विश्व आप ही में निलीन हो जाता है। हम आपको नमस्कार करते हैं और आपकी शरण में हम आये हैं।३१

एको वेदो बहुशाखो ह्यनन्तस्त्वामेवैकं बोधयत्येकरूपम् ।
वन्द्यं त्वां ये शरणं संप्रपन्ना मायामेतां[2] ते तरन्तीह विप्राः ॥३२॥

एकमात्र वेद बहुत शाखाओं से युक्त एवं अनन्त होकर एकमात्र और एकरूप आप

---

१. भवानीशो नादिमांस्तेजोराशिरिति पा०। २. तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही का बोध कराता है। वन्दनीय आपकी शरण में जो विप्र प्राप्त होते हैं, वही इस माया को पार करते हैं।३२

त्वामेकमाहुः कविमेकरुद्रं ब्रह्मं गृणन्तं हरिमग्निमीशम् ।
रुद्रं नित्यमनिलं[1] चेकितानं धातारमादित्यमनेकरूपम् ॥३३॥

आपको अद्वितीय कवि, एक रुद्र, ब्रह्म, उच्चारयिता, हरि, अग्नि, ईश, नित्य, वायु, चैतन्य, धाता, आदित्य और अनेकरूप कहा जाता है।३३

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषोत्तमोऽसि ॥३४॥

आप अक्षर और परम वेद्य हैं। आप इस विश्व के परम निधान हैं। आप अविनाशी, नित्य धर्म के रक्षक, सनातन तथा पुरुषोत्तम हैं।३४

त्वमेव विष्णुश्चतुराननस्त्वं त्वमेव रुद्रो[2] भगवानपीशः ।
त्वं विश्वनाथः प्रकृतिः प्रतिष्ठा सर्वेश्वरस्त्वं परमेश्वरोऽसि ॥३५॥

आप ही विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र, भगवान्, ईश्वर, विश्वनाथ, प्रकृति, और प्रतिष्ठा हैं। आप सर्वेश्वर और परमेश्वर भी हैं।३५

त्वामेकमाहुः पुरुषं पुराणमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
चिन्मात्रमव्यक्तमनन्तरूपं खं ब्रह्म शून्यं [3]प्रकृतिर्गुणाश्च ॥३६॥

सब कहते हैं कि आप पुराण पुरुष, आदित्यवर्ण, तम से परे, चिन्मात्र, अव्यक्त, अनन्तरूप, आकाश, ब्रह्म, शून्य, प्रकृति और गुण भी है।३६

यदन्तरा सर्वमिदं विभाति यदव्ययं निर्मलमेकरूपम् ।
किमप्यचिन्त्यं तव रूपमेतत्तदन्तरा यत्प्रतिभाति तत्त्वम् ॥३७॥

जिसके मध्य में यह सब शोभित है, जो अव्यय (अविकारी), निर्मल और एकरूप हैं। आपका यह कुछ अचिन्त्यरूप है, जिसमें सम्पूर्ण तत्त्व शोभा पा रहा है।३७

योगेश्वरं भद्रमनन्तशक्तिं परायणं ब्रह्मतनुं पुराणम् ।
नमाम सर्वे शरणार्थिनस्त्वां प्रसीदभूताधिपते महेश ॥३८॥

आप योगेश्वर, कल्याणदायक, अनन्तशक्ति, प्रधानगति, ब्रह्मशरीर और और पुराण हैं। हम सब शरणार्थी आपको नमस्कार करते हैं। हे भूतों के अधिपति! महेश! प्रसन्न होइए।३८

---

३. इन्द्रं मृत्युमनलमिति पा०। ४. विष्णुरिति पा०। ५. प्रकृतिनिर्गुणश्चेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वत्पादपद्मस्मरणादशेसंषसारबीजं विलयं प्रयाति ।
मनो नियम्य प्रणिधाय कायं प्रसादयामो वयमेकमीशम् ॥३९॥

आपके चरणकमल के स्मरण से सम्पूर्ण संसार का बीज विलीन हो जाता है। हम मन को नियमित करके शरीर को झुकाकर एकमात्र ईश्वर आपको प्रसन्न करते हैं।३९

नमो भवायाथ भवोद्भवाय कालाय सर्वाय हराय तुभ्यम् ।
नमोऽस्तु रुद्राय कपर्दिने ते नमोऽग्नये[1] देव नमः शिवाय ॥४०॥

आप भव, उद्भव, काल, सर्व, और हर हैं। आपको नमस्कार है। आप रुद्र और कपर्दी हैं। आपको नमस्कार है। हे देव ! आप अग्नि हैं, आपको नमस्कार है। आप शिव हैं, आपको नमस्कार है।४०

ततः स भगवान्प्रीतः कपर्दी[2] वृषवाहनः ।
संहृत्य परमं रूपं प्रकृतिस्थोऽभवद्भवः ॥४१॥

अनन्तर भगवान् वृषवाहन कपर्दी भव प्रसन्न होकर परम रूप को हटा कर प्रकृतिस्थ हो गये।४१

ते भवं भूतभव्येशं पूर्ववत्समवस्थितम् ।
दृष्ट्वा नारायणं देवं विस्मितं वाक्यमब्रुवन् ॥४२॥

तब मुनिगण भूत और भव्य के स्वामी भव (शिव) को पूर्ववत् अवस्थित और नारायण देव को आश्चर्यित देखकर यह बोले—।४२

भगवन् भूतभव्येश गोवृषाङ्कितशासन ।
दृष्ट्वा ते परमं रूपं निवृत्ताः[3] स्मः सनातन ॥४३॥

भगवन् ! हे भूतभव्यपते ! हे गोवृषचिह्नित शासन वाले ! हे सनातन ! हम आपके परम रूप का दर्शन करके निश्चिन्त हो गये हैं।४३

भवत्प्रसादादमले परस्मिन्परमेश्वरे ।
अस्माकं जायते भक्तिस्त्वय्येवाव्यभिचारिणी ॥४४॥

आपकी कृपा से निर्मल एवं पररूपी आप ही परमेश्वर में हमारी अव्यभिचारिणी भक्ति उत्पन्न हो गई है।४४

इदानीं श्रोतुमिच्छामो माहात्म्यं तव शङ्कर ।
भूयोऽपि चैवं[4] यन्नित्यं याथात्म्यं परमेष्ठिनः ॥४५॥

---

१. नमो महादेव इति पा०। २. निवृ'ताः इति पा०। ३. तारयस्निथमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे शंकर ! अब हम आपका माहात्म्य सुनना चाहते हैं। और पुनः जो नित्य परमेष्ठी की यथात्मता है उसका भी श्रवण करने की इच्छा है ।४५

स तेषां वाक्यमाकर्ण्य योगिनां योगसिद्धिदः ।
प्राह गम्भीरया वाचा समालोक्य च माधवम् ॥४६॥

योगसिद्धि देने वाले शंकर ने उन योगियों का वचन सुनकर विष्णु की ओर देखकर गंभीर वाणी से कहा ।४६

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे पंचमोऽध्यायः ॥५॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में ईश्वरगीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या और योगशास्त्र में ऋषियों और व्यास के संवादप्रकरण में पाँचवाँ अध्याय समाप्त ॥५॥

●

षष्ठोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

शृणुध्वमृषयः सर्वे यथावत्परमेष्ठिनः ।
वक्ष्यामीशस्य माहात्म्यं यत्तद्वेदविदो विदुः ॥१॥

ईश्वर बोले—हे ऋषिगण ! जिसे वेदवेत्ता लोग जानते हैं, वह परमेष्ठी ईश्वर का माहात्म्य तुम लोग ठीक-ठीक सुन लो, मैं बता रहा हूँ ।१

सर्वलोकैकनिर्माता सर्वलोकैकरक्षिता ।
सर्वलोकैकसंहर्त्ता सर्वात्माहं सनातनः ॥२॥

मैं समस्त लोकों का एकमात्र रक्षाकर्ता तथा एकमात्र संहारकर्ता हूँ। मैं सब का आत्मा एवं सनातन हूँ ।२

सर्वेषामेव वस्तूनामन्तर्यामी महेश्वरः ।
मय्ये चान्तः स्थितं सर्वं नाहं सर्वत्र संस्थितः ॥३॥

मैं सभी वस्तुओं का अन्तर्यामी महेश्वर हूँ। सब वस्तुएँ मुझमें स्थित होती हैं, किन्तु मैं सर्वत्र स्थित नहीं होता हूँ ।३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवद्भिरद्भुतं दृष्टं यत्स्वरूपञ्च मामकम् ।
ममैषा ह्युपमा विप्रा माया वै दर्शिता मया ॥४॥

विप्रगण ! आप लोगों ने जो मेरा अद्भुत रूप देखा है, वह मेरी उपमा है। मैंने माया दिखायी है ।४

सर्वेषामेव भावानामन्तरं[1] समवस्थितः ।
प्रेरयामि जगत्कृत्स्नं क्रियाशक्तिरियं मम ॥५॥

मैं सभी भावों (पदार्थों) के अन्तःस्थित होकर सम्पूर्ण जगत् को प्रेरित करता हूँ, यह मेरी क्रियाशक्ति है ।५

मयेदं[2] चेष्टते विश्वं तद्वै भावानुवर्ति मे ।
सोऽहं कालो जगत्कृत्स्नं प्रेरयामि कलात्मकम् ॥६॥

मेरे भावानुवर्ती यह विश्व मेरे द्वारा ही क्रियाशील होता है। सो कालरूपी मैं कलात्मक समस्त जगत् को परिचालित करता हूँ ।६

एकांशेन जगत्कृत्स्नं करोमि मुनिपुंगवाः ।
संहराम्येकरूपेण स्थितावस्था ममैव तु ॥७॥

मुनिश्रेष्ठो ! मैं एक अंश से सम्पूर्ण जगत् को रचना करता हूँ और एक ही रूप से इसका संहार करता हूँ। इसका पालन करने वाला मेरी ही अवस्था (रूप) है ।७

आदिमध्यान्तनिर्मुक्तो मायातत्त्वप्रवर्त्तकः ।
क्षोभयामि च सर्गादौ प्रधानपुरुषावुभौ ॥८॥

मैं आदि, मध्य और अन्त से रहित हूँ एवं मायातत्त्व का प्रवर्तक हूँ। सृष्टि के आदि में मैं प्रकृति और पुरुष दोनों को क्षुब्ध करता हूँ ।८

ताभ्यां सञ्जायते विश्वं संयुक्ताभ्यां परस्परम् ।
महदादिक्रमेणैव मम तेजो विजृम्भते ॥९॥

उन दोनों के परस्पर संयुक्त होने से विश्व की उत्पत्ति होती है। महत् आदि के क्रम से विश्वोत्पत्ति में मेरा तेज ही प्रकाशित होता है ।९

यो हि सर्वजगत्साक्षी कालचक्रप्रवर्त्तकः ।
हिरण्यगर्भो मार्त्तण्डः सोऽपि मद्देहसम्भवः ॥१०॥

जो समस्त जगत् के साक्षी, कालचक्र के प्रवर्तक हिरण्यगर्भ मार्तण्ड हैं, वह भी मेरे ही शरीर से उत्पन्न हुआ है ।१०

---

१. यथेदं चेष्टते विश्वं तत्स्वभावानुवर्तिन इति पा० । २. दत्तावातात्मजानेवेति पा० । ३. सर्वदा वहतीति, सर्वं वा गच्छति स्वयमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्मै दिव्यं स्वमैश्वर्यं ज्ञानयोगं सनातनम् ।
दत्तवानात्मवान्वेदान् कल्पादौ चतुरो द्विजाः ॥११॥

द्विजगण ! मैंने उसे कल्प के प्रारंभ में अपना दिव्य ऐश्वर्य, सनातन ज्ञानयोग और आत्मस्वरूप चार वेद प्रदान किये ।११

स मन्नियोगतो देवो ब्रह्मा मद्भावभावितः ।
दिव्यं तन्मामकैश्वर्यं सर्वदावगतः स्वयम् ॥१२॥

वह ब्रह्मा मेरे आदेशानुसार मेरे भाव से भावित तथा मेरे दिव्य ऐश्वर्य से सर्वदा स्वयं अवगत है ।१२

स सर्वलोकनिर्माता मन्नियोगेन सर्ववित् ।
भूत्वा चतुर्मुखः सर्गं सृजत्येवात्मसंभवः ॥१३॥

वह आत्मसंभव चतुर्मुख ब्रह्मा मेरे आदेश से समस्त लोकों का निर्माता सर्ववेत्ता एवं सृष्टिकर्ता है ।१३

योऽपि नारायणोऽनन्तो लोकानां प्रभवोऽव्ययः ।
ममैव च परा मूर्तिः करोति परिपालनम् ॥१४॥

जो भी लोकों की उत्पत्ति के कारण, अव्यय तथा सबके परिपालक हैं, वे अनन्त नारायण भी मेरी ही परम मूर्ति हैं ।१४

योऽन्तकः सर्वभूतानां रुद्रः कालात्मकः प्रभुः ।
मदाज्ञयासौ सततं संहरिष्यति मे तनुः ॥१५॥

जो सकल भूतों के अन्तकारक, प्रभु, कालात्मक, रुद्र है, तथा मेरी आज्ञा से सतत संहार करता है, वह भी मेरा शरीर है ।१५

हव्यं वहति देवानां कव्यं कव्याशिनामपि ।
पाकञ्च कुरुते वह्निः सोऽपि मच्छक्तिनोदितः ॥१६॥

जो देवताओं के लिए हव्य वहन करता है, पितरों के लिए कव्य वहन करता है और जो पाकक्रिया का निर्वाह करता है, वह वह्नि भी मेरी शक्ति द्वारा चालित होता है ।१६

भुक्तमाहारजातञ्च पचते[1] तदहर्निशम् ।
वैश्वानरोऽग्निर्भगवानीश्वरस्य नियोगतः ॥१७॥

---

१. पचत्येतदहर्निशमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् वैश्वानर अग्नि ईश्वर के आदेश से प्राणियों के द्वारा खाये गये आहार को दिनरात पचाते हैं ।१७

योऽपि सर्वांभसां योनिर्वरुणो देवपुंगवः ।
सोऽपि सञ्जीवयेत्कृत्स्नमीश्वरस्य नियोगतः ॥१८॥

जो समस्त जलराशि के उत्पत्तिस्थान देवश्रेष्ठ वरुण हैं, वे भी ईश्वर की आज्ञा से सम्पूर्ण जगत् को जीवन प्रदान करते हैं ।१८

योऽन्तस्तिष्ठति भूतानां बहिर्देवः प्रभञ्जनः ।
मदाज्ञयासौ भूतानां शरीराणि बिभर्ति हि ॥१९॥

जो वायुदेव प्राणियों के भीतर और बाहर रहते हैं, वे मेरी आज्ञा से प्राणियों के शरीरों का पोषण करते हैं ।१९

योऽपि सञ्जीवनो नृणां देवानाममृताकरः ।
सोमः स मन्नियोगेन नोदितः किल वर्त्तते ॥२०॥

जो मनुष्यों के लिए संजीवन तथा देवताओं के लिए अमृत की खान हैं, वे चन्द्रमा मेरे आदेश से प्रेरित होकर विद्यमान हैं ।२०

यः स्वभासा जगत्कृत्स्नं प्रभासयति[1] सर्वशः ।
सूर्यो वृष्टिं वितनुते स्वोल्लेखैव[2] स्वयंभुवः ॥२१॥

जो अपने तेज से सम्पूर्ण जगत् को सर्वथा प्रकाशित करते हैं वे सूर्यदेव भी मेरी आज्ञा से अपने किरण द्वारा वृष्टि का विस्तार करते हैं ।२१

योऽप्यवशेषजगच्छास्ता शक्रः सर्वामरेश्वरः ।
यज्वनां फलदो देवो वर्त्तते स मदाज्ञया ॥२२॥

जो भी समस्त जगत् के शासक, सकल देवों के अधिपति तथा याज्ञिकों के फल-दाता इन्द्र हैं, वे भी मेरी आज्ञा से वर्तमान हैं ।२२

यः प्रशास्ता ह्यसाधूनां वर्त्तते नियमादिह ।
यमो वैवस्वतो देवो देवदेवनियोगतः ॥२३॥

जो वैवस्वत देव यमराज हैं, वे भी मेरी आज्ञा से असज्जनों पर नियमपूर्वक शासन करते हैं ।२३

योऽपि सर्वधनाध्यक्षो धनानां सम्प्रदायकः ।
सोऽपीश्वरनियोगेन कुबेरो वर्त्तते सदा ॥२४॥

---

१. प्रकाशयति सर्वदा इति पा० । २. शास्त्रेणैव स्वयंप्रभुरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो समस्त धनों के अध्यक्ष एवं सम्यक् प्रदाता हैं, वे कुबेर मेरी आज्ञा से विद्यमान हैं ।२४

यः सर्वरक्षसां नाथस्तामसानां[1] फलप्रदः ।
मन्नियोगादसौ देवो वर्त्तते निर्ऋतिः सदा ॥२५॥

जो सभी राक्षसों के स्वामी तथा तामस कर्मों के फलदाता हैं । वे निर्ऋतिदेव मेरे अधीन विद्यमान हैं ।२५

वेतालगणभूतानां स्वामी भोगफलप्रदः ।
ईशानः किल भक्तानां सोऽपि तिष्ठेन्मदाज्ञया ॥२६॥

वेतालगण और सकल भूतों के स्वामी एवं भक्तों को भोगफल देने वाले ईशान देव मेरे आदेश में सतत रहते हैं ।२६

यो वामदेवोऽङ्गिरसः शिष्यो रुद्रगणाग्रणीः ।
रक्षको योगिनां नित्यं वर्त्ततेऽसौ मदाज्ञया ॥२७॥

रुद्रगण के प्रधान, अंगिरा के शिष्य और योगियों के रक्षक जो वामदेव हैं वे मेरी आज्ञा से चलते हैं ।२७

यश्च सर्वजगत्पूज्यो वर्त्तते विघ्ननायकः ।
विनायको धर्मरतः सोपि मद्वचनात्किल ॥२८॥

जो समस्त जगत् में पूज्य, धर्मपरायण, विघ्ननाशक, विनायक (गणेश) हैं, वे भी मेरे आदेश में रहते हैं ।२८

योऽपि ब्रह्मविदां श्रेष्ठो देवसेनापतिः प्रभुः ।
स्कन्दोऽसौ वर्त्तते नित्यं स्वयम्भूविधिनोदितः ॥२९॥

जो ब्रह्मवेत्ताओं श्रेष्ठ, देवसेनापति, विधि द्वारा कथित स्वयम्भू, प्रभु कार्तिकेय हैं, वे भी नित्य मेरी आज्ञा में रहते हैं ।२९

ये च प्रजानां पतयो मरीच्याद्या महर्षयः ।
सृजन्ति विविधं लोकं परस्यैव नियोगतः ॥३०॥

जो प्रजापति मरीचि आदि महर्षि विविध लोक सृष्टि करते हैं, वे भी मेरी आज्ञा का पालन करते हैं ।३०

या च श्रीः सर्वभूतानां ददाति विपुलां श्रियम् ।
पत्नी नारायणस्यासौ वर्त्तते मदनुग्रहात् ॥३१॥

---

१. तापसानामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो विष्णु-पत्नी लक्ष्मी प्राणियों को विपुल सम्पत्ति प्रदान करती हैं, वे भी मेरी आज्ञानुवर्तिनी हैं ।३१

वाचं ददाति विपुलां या च देवी सरस्वती ।
सापीश्वरस्य नियोगेन नोदिता[1] संप्रवर्त्तते ॥३२॥

जो सरस्वती देवी मेरी आज्ञा से प्रेरित विपुल वाणी प्रदान करती हैं, वे भी मेरी आज्ञा से चलती हैं ।३२

याशेषपुरुषान् घोरान्नरकात्तारयिष्यति ।
सावित्री संस्मृता चापि[2] मदाज्ञानुविधायिनी ॥३३॥

जो सावित्री सम्यक् प्रकार से स्मरण करने पर भी अशेष पुरुषों को घोर नरक से तार देती हैं, वे भी मेरी आज्ञा की पालिका हैं ।३३

पार्वती परमा देवी ब्रह्मविद्याप्रदायिनी ।
यापि ध्याता विशेषेण सापि मद्वचनानुगा ॥३४॥

जो विशेष रूप से ध्यान करने पर भी ब्रह्मविद्या प्रदान करने वाली हैं, वे श्रेष्ठ पार्वती देवी मेरे वचन की अनुगामिनी हैं ।३४

योऽनन्तमहिमानन्तः शेषोऽशेषामरप्रभुः ।
दधाति शिरसा लोकं सोऽपि देवनियोगतः ॥३५॥

जो अनन्त महिमा वाले अनन्त शेष अशेष देवों के प्रभु हैं तथा मस्तक पर भुवन को धारण करते हैं, वे भी आज्ञानुवर्ती हैं ।३५

योऽग्निः संवर्त्तको नित्यं वडवारूपसंस्थितः ।
पिबत्यखिलमम्भोधिमीश्वरस्य नियोगतः ॥३६॥

जो संवर्तक अग्नि वडवारूप में अवस्थित होकर समुद्र को पीता रहता है, वह भी महेश्वर के आदेश से (ऐसा करता है) ।३६

ये चतुर्दश लोकेऽस्मिन्मनवः प्रथितौजसः ।
पालयन्ति प्रजाः सर्वास्तेऽपि तस्य नियोगतः ॥३७॥

जो इस लोक में प्रख्यात तेजस्वी चोदह मनु हैं, वे ईश्वर के आदेश से प्रजाओं का पालन करते हैं ।३७

---

१. पूजितेति पा० । २. देवीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदित्या वसवो रुद्रा मरुतश्च तथाश्विनौ ।
अन्याश्च देवताः सर्वाः शास्त्रेणैव[1] विनिर्मिताः ॥३८॥

आदित्य, वसु, रुद्र, मरुत्, अश्विनीकुमारद्वय तथा अन्य सभी देवता (मेरे) शास्त्र से ही निर्मित हुए हैं ।३८

गन्धर्वा गरुडाद्याश्च[2] सिद्धाः साध्याश्च चारणाः ।
यक्षरक्षःपिशाचाश्च स्थिताः सृष्टाः स्वयंभुवा ॥३९॥

गन्धर्व, गरुड, सिद्ध, सन्ध्या, चारण, यक्ष, राक्षस, पिशाच आदि सभी स्वयंभू (महेश) द्वारा रचित हैं ।३९

कलाकाष्ठानिमेषाश्च मुहूर्त्ता दिवसाः क्षपाः ।
ऋतवः पक्षमासाश्च स्थिताः शास्त्रे प्रजापतेः ॥४०॥

युगमन्वन्तराण्येव मम तिष्ठन्ति शासने ।
पराश्चैव परार्द्धाश्च कालभेदास्तथापरे ॥४१॥

कला (१·६ मिनट), काष्ठा (कला का ३०वां भाग), निमेष, मुहूर्त (दो घड़ी), दिन, रात्रि, ऋतु, पक्ष, मास, युग, मन्वन्तर, पर, परार्ध प्रभृति जो कुछ कालभेद हैं प्रजापति के शास्त्र में विद्यमान हैं मेरे शासन में रहते हैं ।४०-४१।

चतुर्विधानि भूतानि स्थावराणि चराणि च ।
नियोगादेव[3] वर्त्तन्ते देवस्य परमात्मनः ॥४२॥

स्थावर, जंगम प्रभृति चार प्रकार के प्राणी परमात्मा महेश्वर के शासनाधीन हैं ।४२

पातालानि च सर्वाणि भुवनानि च शासनात् ।
ब्रह्माण्डानि[4] च वर्त्तन्ते सर्वाण्येव स्वयंभुवः ॥४३॥

सभी पाताल, भुवन और ब्रह्माण्ड—ये सब के सब स्वयंभू महेश्वर के शासन में स्थित है ।४३

अतीतान्यप्यसंख्यानि ब्रह्माण्डानि ममाज्ञया ।
प्रवृत्तानि पदार्थौघैः सहितानि समन्ततः ॥४४॥

ब्रह्माण्डानि भविष्यन्ति सह चात्मभिरात्मगैः[5] ।
करिष्यन्ति[6] सदैवाज्ञां परस्य परमात्मनः ॥४५॥

---

१. मच्छास्त्रेणैव निष्ठिता इति पा० । २. गरुडा ऋक्षाः इति, गरुडाः पक्षा इति पा० । ३. नियमादेवेति पा० । ४. मयोढानीति, त्वयोढानीति पा० । ५. वस्तुभिरिति पा० । ६. वहिष्यन्तीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असंख्य ब्रह्माण्ड मेरी आज्ञा से अतीत हुए। पदार्थों समेत जो ब्रह्माण्ड वर्तमान हैं और जो ब्रह्माण्ड आत्मगत वस्तुसमूह सहित उत्पन्न होंगे, वे सब सदैव हमारे ही आदेश के अधीन हैं और रहेंगे ।४४-४५।

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
भूतादिरादिप्रकृतिर्नियोगे मम वर्त्तते ॥४६॥

भूमि, जल, वायु, आकाश, मन, बुद्धि एवं आदिप्रकृति सब मेरे नियोग के अधीन हैं ।४६

याशेषजगतां योनिर्मोहिनी सर्वदेहिनाम् ।
माया विवर्त्तते नित्यं सापीश्वरनियोगतः ॥४७॥

जो समस्त जगत् की योनि स्वरूपा (उत्पत्तिस्थान) है तथा सकल देहधारियों को मोह में डालने वाली है, वह माया मेरी आज्ञा से नित्य विवर्तित होती है ।४७

यो वै देहभृतां[1] देवः पुरुषः पठ्यते परः ।
आत्मासौ वर्त्तते नित्यमीश्वरस्य[2] नियोगतः ॥४८॥

जो देव देहधारियों के मध्य परम पुरुष कहकर पठित होता है, वह आत्मा भी मेरी ही आज्ञा से अवस्थित है ।४८

विधूय मोहकलिलं यया पश्यति तत्पदम् ।
सापि बुद्धिर्महेशस्य नियोगवशवर्त्तिनी ॥४९॥

जिसके द्वारा मोहभंग दूर होकर परम पद का दर्शन प्राप्त होता है, वह परमा विद्या भी मेरी आज्ञानुवर्तिनी है।४९

बहुनात्र किमुक्तेन मम शक्त्यात्मकं जगत् ।
मय्येव[3] प्रेर्यते कृत्स्नं मय्येव प्रलयं व्रजेत् ॥५०॥

अधिक कहने की क्या आवश्यकता, समस्त जगत् मेरी शक्ति का स्वरूप है। मैं ही सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करता हूँ और अन्त में मुझमें ही विलीन हो जाता है ।५०

अहं हि भगवानीशः स्वयं ज्योतिः सनातनः ।
परमात्मा परं ब्रह्म मत्तो ह्यन्यो न विद्यते ॥५१॥

मैं ही भगवान्, ईश्वर, स्वयंज्योति, सनातन, परमात्मा और परब्रह्म हूँ। मुझसे भिन्न कुछ नहीं है ।५१

---

१. महेश्वरेति पा० । २. मय्येव युज्यते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत्येतत्परमं ज्ञानं युष्माकं कथितं मया ।
ज्ञात्वा विमुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥५२॥

यह परमज्ञान मैंने तुम लोगों को बता दिया । इसको जानकर प्राणी संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है ।५२

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

श्री कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वरगीता-उपनिषद् में ब्रह्मविद्या एवं योगशास्त्र में ऋषियों और व्यास के संवाद में छठा अध्याय समाप्त ॥६॥

●

सप्तमोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

शृणुध्वमृषयः सर्वे प्रभावं परमेष्ठिनः ।
यं ज्ञात्वा पुरुषो मुक्तो न संसारे पतेत्पुनः ॥१॥

महादेव बोले—आप सब परमेष्ठी के प्रभाव का श्रवण करें, जिसे जानकर पुरुष मुक्त हो जाता है, पुनः संसार में उसका पतन नहीं होता है ।१

परात्परतरं ब्रह्म शाश्वतं ध्रुवमव्ययम्[1] ।
नित्यानन्दं निर्विकल्पं तद्धाम परमं मम ॥२॥

जो पर से भी परतर, शाश्वत, ध्रुव, अविनाशी, नित्यानन्द और निर्विकल्प है, वह मेरा परम धाम है ।२

अहं ब्रह्मविदां ब्रह्मा स्वयंभूर्विश्वतोमुखः ।
मायाविनामहं देवः पुराणो हरिरव्ययः ॥३॥

मैं ब्रह्मवेत्ताओं का ब्रह्मा, स्वयंभू, विश्वतोमुख, मायावियों का देव, पुराण, हरि और अव्यय हूँ ।३

१. परमं ध्रुवमिति, निष्कलं परमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगिनामस्म्यहं शम्भुः स्त्रीणां देवी गिरीन्द्रजा ।
आदित्यानामहं विष्णुर्वसूनामस्मि पावकः ॥४॥

मैं योगियों में शम्भु हूँ, स्त्रियों में पार्वती, आदित्यों में विष्णु और वसुओं में पावक हूँ ।४

रुद्राणां शङ्करश्चाहं गरुडः पतताम्हम् ।
ऐरावतो गजेन्द्राणां रामः शस्त्रभृतामहम् ॥५॥

रुद्रों में शंकर, पक्षियों में गरुड़, गजेन्द्रों में ऐरावत तथा शस्त्रधारियों में परशुराम हूँ ।५

ऋषीणां च वसिष्ठोऽहं देवानाञ्च शतक्रतुः ।
शिल्पिनां विश्वकर्माहं प्रह्लादः[1] सुरविद्विषाम् ॥६॥

ऋषियों में वसिष्ठ, देवों में इन्द्र, शिल्पियों में विश्वकर्मा और सुरद्रोहियों में प्रह्लाद हूँ ।६

मुनीनामप्यहं व्यासो गणानाञ्च विनायकः ।
वीराणां वीरभद्रोऽहं सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥७॥

मुनियों में व्यास, गणों में गणेश, वीरों में वीरभद्र और सिद्धों में कपिल मुनि हूँ ।७

पर्वतानामहं मेरुर्नक्षत्राणाञ्च चन्द्रमाः ।
वज्रं प्रहरणानाञ्च व्रतानां सत्यमस्म्यहम् ॥८॥

पर्वतों में सुमेरु, नक्षत्रों में चन्द्रमा, आयुधों में वज्र और व्रतों में सत्य हूँ ।८

अनन्तो भोगिनां देवः सेनानीनाञ्च पार्वकिः ।
आश्रमाणां गृहस्थोऽहमीश्वराणां महेश्वरः ॥९॥

नागों में अनन्त शेष, सेनापतियों में कार्तिकेय, आश्रमों में गृहस्थ और ईश्वरों में महेश्वर हूँ ।९

महाकल्पश्च कल्पानां युगानां कृतमस्म्यहम् ।
कुबेरः सर्वयक्षाणां तृणानाञ्चैव[2] वीरुधः ॥१०

कल्पों में महाकल्प और युगों में सत्ययुग हूँ । यक्षों में कुबेर और तृणों में लता हूँ ।१०

---

१. प्रह्लादोऽस्म्यमरद्विषामिति पा० । २. गणेशानाञ्च वीरुकः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजापतीनां दक्षोऽहं निर्ऋतिः सर्वरक्षसाम् ।
वायुर्बलवतामस्मि द्वीपानां पुष्करोऽस्म्यहम् ॥११

प्रजापतियों में दक्ष; राक्षसों में निर्ऋति, बलवानों में वायु और द्वीपों में पुष्कर हूँ ।११

मृगेन्द्राणाञ्च सिंहोऽहं यन्त्राणां धनुरेव च ।
वेदानां सामवेदोऽहं यजुषां शतरुद्रियम् ॥१२

मृगेन्द्रो में सिंह, यन्त्रों में धनुष, वेदों में सामवेद और यजुर्मन्त्रों में शतरुद्रिय हूँ ।१२

सावित्री सर्वजप्यानां गुह्यानां प्रणवोऽस्म्यहम् ।
सूक्तानां पौरुषं सूक्तं ज्येष्ठसाम च सामसु ॥१३

जपनीय मंत्रों में सावित्री और गुह्य मन्त्रों में प्रणव (ओंकार) हूँ। सूक्तों में पुरुषसूक्त और सामों में ज्येष्ठसाम हूँ ।१३

सर्ववेदार्थविदुषां मनुः स्वायम्भुवोऽस्म्यहम् ।
ब्रह्मावर्त्तस्तु देशानां क्षेत्राणामविमुक्तकम् ॥१४

समस्त वेदार्थों के विद्वानों में स्वायम्भुव मनु मैं हूँ देशों में ब्रह्मावर्त और क्षेत्रों में अवि मुक्त (काशी) हूँ ।१४

विद्यानामात्मविद्याहं ज्ञानानामैश्वरं[1] परम् ।
भूतानामस्म्यहं व्योम तत्त्वानां मृत्युरेव च ॥१५

विद्याओं में आत्मविद्या, ज्ञानों में ईश्वरीय ज्ञान, पञ्च महाभूतों में आकाश और तत्त्वों में मृत्यु हूँ ।१५

पाशानामस्म्यहं माया कालः कलयतामहम् ।
गतीनां मुक्तिरेवाहं परेषां परमेश्वरः ॥१६

पाशों में मैं माया हूँ और विनाशकों में काल हूँ। गतियों में मुक्ति एवं श्रेष्ठों में परमेश्वर हूँ ।१६

यच्चान्यदपि लोकेऽस्मिन् सत्त्वं तेजोबलाधिकम् ।
तत्सर्वं प्रतिजानीध्वं मम तेजोविजृम्भितम्[2] ॥१७

× नाथानां विश्वनाथोहं पुरीणां काशिका पुरी इति अधिकः लि० पु० ।
१. ईश्वरः परमिति पा० । २. विजृम्भणमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस लोक में और भी जो प्राणी तेज एवं बल में अधिक है, उसे मेरे ही तेज से विकसित जानो ।१७

आत्मानः पशवः प्रोक्ताः सर्वे संसारवर्त्तिनः ।
तेषां पतिरहं देवः स्मृतः पशुपतिर्बुधैः ॥१८

संसारवर्ती समस्त आत्मा पशु नाम से अभिहित हैं । मैं ईश्वर उनका पति (स्वामी) हूँ, इस लिए विद्वानों ने मुझे पशुपति कहा है ।१८

मायापाशेन बध्नामि पशूनेतान् स्वलीलया ।
मामेव मोचकं प्राहुः पशूनां वेदवादिनः ॥१९

इन पशुओं को मैं अपनी लीला से मायापाश में बांधता हूँ । और इन पशुओं को बन्धन से छुड़ाने वाला भी वेदवादी लोग मुझे ही कहते हैं ।१९

मायापाशेन बद्धानां मोचकोऽन्यो न विद्यते ।
मामृते परमात्मानं भूताधिपतिमव्ययम् ॥२०

बद्ध जीवों को मायापाश से छुड़ाने वाला भूतपति, परमात्मा एवं अविनाशी मुझे छोड़कर दूसरा कोई नहीं है ।२०

चतुर्विंशतितत्त्वानि माया कर्म गुणा इति ।
एते पाशाः पशुपतेः क्लेशाश्च पशुबन्धनाः ॥२१

चौबीस तत्त्व, माया, कर्म और गुण ये पशुपति के पाश क्लेशकारक और पशुबन्धन हैं ।२१

मनो बुद्धिरहङ्कारः खानिलाग्निजलानि भूः ।
एताः प्रकृतयस्त्वष्टौ विकाराश्च तथापरे ॥२२

मन, बुद्धि, अहंकार, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी—ये आठ प्रकृतियाँ हैं और इनसे भिन्न सब विकार हैं ।२२

श्रोत्रं त्वक् चक्षुषी जिह्वा घ्राणञ्चैव तु पञ्चमम् ।
पायूपस्थं करौ पादौ वाक् चैव दशमी मता ॥२३

शब्दः स्पर्शश्च रूपश्च रसो गन्धस्तथैव च ।
त्रयोविंशतिरेतानि तत्त्वानि प्राकृतानि च ॥२४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कान, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, नाक, गुदा, लिंग हाथ, पैर, वाणी, शब्द, स्पर्श, रूप; रस, गन्ध—ये तेईस तत्त्व प्राकृत हैं।२३-२४।

चतुर्विंशकमव्यक्तं प्रधानं गुणलक्षणम् ।
अनादिमध्यनिधनं कारणं जगतः परम् ॥२५

चौबीसवां तत्त्व वह है जो अव्यक्त, प्रधान, गुण-लक्षण, आदि, मध्य और अन्त से रहित तथा जगत् का परम कारण है।२५

सत्त्वं रजस्तमश्चेति गुणत्रयमुदाहृतम् ।
साम्यावस्थितिमेतेषामव्यक्तां प्रकृतिं विदुः ॥२६

सत्त्व, रज और तम—ये तीन गुण कहे गये हैं। इन तीनों की साम्यावस्था को अव्यक्त प्रकृति कहते हैं।२६

सत्त्वं ज्ञानं तमो ज्ञानं राजसं[1] समुदाहृतम् ।
गुणानां बुद्धिवैषम्याद्वैषम्यं कवयो विदुः ॥२७

सत्त्वज्ञान, तमोज्ञान और राजस ज्ञान—ये तीनों ज्ञान बुद्धि की विषमता के कारण होते हैं, यह विद्वानों का कहना है।२७

धर्माधर्मावितिं प्रोक्तौ पाशौ द्वौ कर्मसंज्ञितौ ।
मय्यर्पितानि कर्माणि न बन्धाय विमुक्तये ॥२८

धर्म और अधर्म- ये दो कर्मसंज्ञक पाश कहे गये हैं। मुझको अर्पित किये गये कर्म बन्धन में नहीं डालते हैं, बल्कि मोक्षसाधक होते हैं।२८

अविद्यामस्मितां रागं द्वेषं चाभिनिवेशनम् ।
क्लेशाख्यांस्तान् स्वयं प्राह पाशानात्मनिबन्धनात् ॥२९

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश—इन पाँचों को आत्म-बन्धन के कारण क्लेश नामक पाश कहा गया है।२९

एतेषामेव पाशानां मायाकारणमुच्यते ।
मूलप्रकृतिरव्यक्ता सा शक्तिर्मयि तिष्ठति ॥३०

इन पाशों का कारण माया ही कही जाती है। वह माया मेरी अव्यक्त मूल प्रकृति के रूप में मुझमें ही अवस्थित है।३०

स एव मूलप्रकृतिः प्रधानं पुरुषोऽपि च ।
विकारा महदादीनि देवदेवः सनातनः ॥३१

---

१. रजोमिश्रमुदाहृतमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह मूलप्रकृति ही प्रधान और पुरुष नाम से अभिहित की जाती है। वही महत् आदि विकार एवं देवदेव सनातन है।३१

स एव बन्धः स च बन्धकर्त्ता स एव पाशः[1] पशुभृत्स एव।
स वेद सर्वं न च तस्य वेत्ता तमाहुराद्यं पुरुषं पुराणम् ॥३२

वही बन्धन, वह बान्धनकर्ता, वही पाश, वही पशुभृत् और वही सर्वज्ञ है। उसको कोई नहीं जानता है। उसी को आद्य एवं पुराण पुरुष कहा जाता है।३२

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वर गीता-उपनिषद् में ब्रह्मविद्या में योग-शास्त्र में ऋषि और व्यास के संवाद में सातवाँ अध्याय समाप्त ॥७॥

अष्टमोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

अन्यद्गुह्यतमं ज्ञानं वक्ष्ये ब्राह्मणपुङ्गवाः।
येनासौ तरते जन्तुर्घोरं संसारसागरम् ॥१

महादेव बोले--हे ब्राह्मणश्रेष्ठो! मैं और अत्यन्त गोपनीय ज्ञान बताऊँगा। जिससे प्राणी भयंकर संसार-सागर को पार कर लेता है।१

अयं[2] ब्रह्मा तमः शान्तः शाश्वतो निर्मलोऽव्ययः।
एकाकी भगवानुक्तः केवलः परमेश्वरः ॥२

मैं ब्रह्ममय भगवान् शान्त, शाश्वत, निर्मल, अविनाशी, एकाकी, केवल और परमेश्वर कहा गया हूँ।२

मम योनिर्महद्ब्रह्म तत्र गर्भं दधाम्यहम्।
मूलमायाभिधानं तं ततो जातमिदं जगत् ॥३

महाब्रह्म मेरा योनि (मूल) स्वरूप है। मैं उसमें मूलमाया नामक गर्भ धारण करता हूँ। उससे यह जगत् उत्पन्न होता है।३

---

१. पाशः पशवः स इति पा०। २. अहमिति, अहं ब्रह्ममयः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधानं पुरुषो ह्यात्मा महद्भूतादिरेव[1] च ।
तन्मात्राणि मनोभूतानीन्द्रियाणि च जज्ञिरे ॥४

उससे प्रधान, पुरुष, आत्मा, भूतादि, महान् पञ्च तन्मात्रा एवं इन्द्रिय उत्पन्न हुई हैं ।४

ततोऽण्डमभवद्धैममर्ककोटिसमप्रभम् ।
तस्मिञ्जज्ञे महाब्रह्मा मच्छक्त्या चोपबृंहितः ॥५

उससे करोड़ों सूर्य के समान प्रभावाला सोने का अण्ड उत्पन्न हुआ । एवं मेरी शक्ति द्वारा प्रवर्धित महान्ब्रह्मा उससे उत्पन्न हुआ ।५

ये चान्ये बहवो जीवास्तन्मयाः सर्व एव ते ।
न मां पश्यन्ति पितरं मायया मम मोहिताः ॥६

और जो बहुत से जीव हैं, वे सब तन्मय हैं । वे मेरी माया से मोहित होने के कारण मुझ पिता को नहीं देखते हैं ।६

यासु योनिषु ताः सर्वाः सम्भवन्तीह मूर्तयः ।
तां[2] मातरं परां योनिं मामेव पितरं विदुः ॥७

वे सभी मूर्तियाँ इस संसार में जिन योनियों से उत्पन्न होती हैं, उस परम योनि को माता और मुझे ही पिता जानना चाहिए ।७

यो[3] मामेवं विजानाति बीजिनं पितरं प्रभुम् ।
स वीरः सर्वलोकेषु न मोहमधिगच्छति ॥८

जो इस प्रकार मुझे प्रभु, पिता एवं बीजस्वरूप समझता है, वह वीर सभी लोकों में मोह को प्राप्त नहीं करता है ।८

ईशानः सर्वविद्यानां भूतानां परमेश्वरः ।
ओङ्कारमूर्तिर्भगवानहं ब्रह्मा प्रजापतिः ॥९

मैं ही सकल विद्याओं का ईश्वर, भूतगण का परमेश्वर ओंकारमूर्ति, भगवान्, ब्रह्मा और प्रजापति हूँ ।९

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥१०

---

१. महान् भूतादिरिति पा० । २. तासां माया परा योनिरिति पा० । ३. मायामेवमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं समस्त प्राणियों में समान भाव से अवस्थान करता हुआ परमेश्वर हूँ। सकल वस्तुओं के विनष्ट हो जाने पर भी मेरा विनाश नहीं होता, जो व्यक्ति इस रूप में मेरा दर्शन करता है, वही यथार्थ-दर्शनकारी है।१०

समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति पराङ्गतिम्[1] ॥११

जो व्यक्ति ईश्वर को सकल पदार्थों में अवस्थित देखता है, वह अपने से अपनी हिंसा नहीं करता है। वह परम गति को प्राप्त होता है।११

विदित्वा सप्त सूक्ष्माणि षडङ्गं च महेश्वरम्।
प्रधानविनियोगज्ञः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥१२

सात सूक्ष्म पदार्थों तथा षडङ्ग महेश्वर को जानकर जो व्यक्ति प्रधान विनियोग को जान लेता है, वह परब्रह्म को प्राप्त करता है।१२

सर्वज्ञता तृप्तिरनादिबोधः [2]स्वच्छन्दता नित्यमलुप्तशक्तिः।
अनन्तशक्तिश्च विभोर्विदित्वा षडाहुरङ्गानि महेश्वरस्य ॥१३

प्रभु महेश्वर की षडङ्गता ये हैं--सर्वज्ञता, तृप्ति, अनादिबोध, स्वच्छन्दता, नित्य अलुप्तशक्ति और अनन्तशक्ति ये जानने योग्य हैं।१३

तन्मात्राणि मन आत्मा च तानि सूक्ष्माण्याहुः सप्त तत्त्वात्मकानि।
या सा हेतुः प्रकृतिः सा प्रधानं बन्धः प्रोक्तो विनयेनापि[1] तेन ॥१४

पञ्चतन्मात्र, मन और आत्मा--ये सात सूक्ष्म तत्त्व हैं। सबकी हेतुभूत जो प्रकृति है वही प्रधान है। प्रधान द्वारा जो बन्धन (संसार) मिलता है वही विनियोग है।१४

या सा शक्तिः प्रकृतौ लीनरूपा वेदेषूक्ता कारणं ब्रह्मयोनिः।
तस्या एकः परमेष्ठी पुरस्तान्माहेश्वरः पुरुषः सत्यरूपः ॥१५

महेश्वर की जो शक्ति प्रकृति में लीन रूप से अवस्थित है, उसी को वेदों में ब्रह्मयोनि और कारण रूप में कहा गया है। परमेष्ठी, पुरस्तात् और सत्यरूपी माहेश्वर पुरुष ही एक मात्र पुरुष है।१५

ब्रह्मा योगी परमात्मा महीयान् व्योमव्यापी वेदवेद्यः पुराणः।
एको रुद्रो मृत्युमव्यक्तमेकं बीजं विश्वं देव एकः स एव ॥१६

---

१. परं पदमिति पा०। २. स्वतन्त्रता इति पा०। ३. विनियोगोऽपि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही पुरुष ही ब्रह्मा, योगी, परमात्मा, महीयान्, व्योमरूपी, वेदवेद्य और पुराण है। वही एकमात्र रुद्रदेव, मृत्यु, अव्यक्त, अद्वितीय, बीज और विश्व है।१६

तमेवैकं प्राहुरन्येऽप्यनेकं [1]त्वामेवात्मा केचिदन्यं तमाहुः।
अणोरणीयान्महतो महीयान्महादेवः प्रोच्यते विश्वरूपः[2] ॥१७

कोई उनको 'एक' कहते हैं और कोई अनेक। कोई उनको आत्मा कहते हैं और कोई अन्य। किन्तु वे अणु होने पर भी अणीयान् हैं और महत् होने पर भी महीयान् हैं। वे ही विश्वरूप महादेव कहे जाते हैं।१७

एवं हि यो वेद गुहाशयं परं प्रभुं[3] पुराणं पुरुषं विश्वरूपम्।
हिरण्मयं बुद्धिमतां पराङ्गतिं स बुद्धिमान्[4] बुद्धिमतीत्य तिष्ठति ॥१८

जो व्यक्ति उन महेश्वर को इस रूप में गुहाशय, परम प्रभु, पुराणपुरुष, विश्वरूप और हिरण्मय जानता है, वह बुद्धिमान् बुद्धि का अतिक्रमण करके परम गति को प्राप्त करता है।१८

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वर-गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या में योगशास्त्र में ऋषियों और व्यास के संवाद में आठवाँ अध्याय समाप्त ॥८॥

१. त्वैकात्मानमिति पा०। २. वेदविद्भिरिति पा०। ३. परमिति पा०। ४. अबुद्धिमानिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवमोऽध्यायः

ऋषय ऊचुः

निष्कलो निर्मलो नित्यो निष्क्रियः परमेश्वरः ।
तन्नो वद महादेव विश्वरूपः कथं भवान् ॥१

ऋषिगण बोले—परमेश्वर निष्कल, निर्मल, नित्य और निष्क्रिय हैं। तब हे महादेव! आप विश्वरूप कैसे हुए? हमें बता दें।१

ईश्वर उवाच

नाहं विश्वो न विश्वञ्च मामृते विद्यते द्विजाः ।
माया निमित्तमात्रास्ति सा[1] चात्मनि मयाश्रिता ॥२

ईश्वर बोले—द्विजगण! मैं न विश्व हूँ और न विश्व ही मेरे बिना रह सकता है। माया ही इसका कारण है और मैंने माया को अपने में आश्रय दिया है।२

अनादिनिधना शक्तिर्माया व्यक्तिसमाश्रया[2] ।
तन्निमित्तः प्रपञ्चोऽयमव्यक्ताज्जायते[3] खलु ॥३

व्यक्त्याश्रय शक्ति माया है। वह आदि अन्त से रहित है। तज्जन्य यह प्रपञ्च अव्यक्त से उत्पन्न होता है।३

अव्यक्तं कारणं प्राहुरानन्दं ज्योतिरक्षरम् ।
अहमेव परं ब्रह्म मत्तो[4] ह्यन्यत्र विद्यते ॥४

अतः अव्यक्त इसका कारण है, जो आनन्द एवं अक्षर-ज्योतिः स्वरूप है। मैं ही परम ब्रह्म हूँ। मुझसे भिन्न कुछ नहीं है।४

तस्मान्मे विश्वरूपत्वं निश्चितं ब्रह्मवादिभिः ।
एकत्वे च पृथक्त्वे च प्रोक्तमेतन्निदर्शनम् ॥५

इसी से ब्रह्मवादियों ने मेरा विश्वरूपत्व निश्चित किया है। एकता या पृथकता में भी यही उदाहरण लागू होता है।५

---

१. साचास्य कमुपाश्रिता इति पा०। २. व्यक्तसमाश्रिता इति, व्यक्तसमाश्रया इति पा०। ३. मव्यक्तादभवत् खलु इति पा०। ४. मत्तोऽन्यद्धि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहं तत्परमं ब्रह्म परमात्मा सनातनः ।
अकारणं द्विजाः प्रोक्ता न दोषो ह्यात्मनस्तथा ॥६

सुतरां मैं ही सनातन परमात्मा अकारण और परम ब्रह्म हूँ। द्विजगण! आत्मा का कोई दोष नहीं है।६

अनन्ताः शक्तयोऽव्यक्ता मायया संस्थिता ध्रुवाः ।
तस्मिन्दिवि स्थितं नित्यमव्यक्तं भाति केवलम् ॥७

कारण शक्तियाँ अनन्त, अव्यक्त और माया द्वारा संस्थित हैं, अतएव ध्रुव हैं। इस लिए केवल अव्यक्त उस द्यौः में स्थित एवं नित्य कहा जाकर प्रकाशित होता है।७

अभिन्नं[1] वक्ष्यते भिन्नं ब्रह्माव्यक्तं सनातनम् ।
एकया मायया युक्तमनादिनिधनं ध्रुवम् ॥८

वह सनातन अव्यक्त ब्रह्म अभिन्न होने पर भी शक्तियों द्वारा भिन्न रूपेण प्रतीत होता है। कारण वह एक मात्र माया से युक्त, आदि अन्त से रहित एवं ध्रुव है।८

पुंसोऽन्याभूद्यथा भूतिरन्यया न तिरोहितम् ।
अनादि मध्यं तिष्ठन्तं चेष्टते विद्यया किल ॥९

पुरुष का जब अन्य ऐश्वर्य होता है और जब वह दूसरे ऐश्वर्य से तिरोहित नहीं होता है। उस समय वह अनादि मध्यनिष्ठ होता है। केवल माया द्वारा वह चेष्टित होता है।९

तदेतत्परमव्यक्तं प्रभामण्डलमण्डितम् ।
तदक्षरं परं ज्योतिस्तद्विष्णोः परमं पदम् ॥१०

सुतरां यह परम अव्यक्त प्रभामण्डल से मण्डित, अक्षर, परम ज्योतिः स्वरूप विष्णु का परम पद है।१०

तत्र सर्वमिदं प्रोतमोतं चैवाखिलं जगत् ।
तदेवेदं जगत्कृत्स्नं तद्विज्ञाय विमुच्यते ॥११

उसमें यह सम्पूर्ण जगत् ओत-प्रोत-भाव से स्थित है। वही यह सम्पूर्ण जगत् है। इसे अवगत करके मुक्तिलाभ किया जा सकता है।११

यतो वाचो निवर्त्तन्ते अप्राप्य मनसा सह ।
आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् बिभेति[2] न कुतश्चन ॥१२

---

१. याभिस्तल्लक्ष्यतेभिन्नमिति पा० २. न बिभेति कदाचनेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन सहित वाणी जिसे न पाकर निवृत्त हो जाती है, उस आनन्दमय ब्रह्म के स्वरूप का ज्ञाता व्यक्ति किसी से भी नहीं डरता है ।१२

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं पुरुषं[1] पुरस्तात् ।
तं विज्ञाय परिमुच्येत विद्वान्नित्यानन्दी भवति ब्रह्मभूतः ॥१३

इस सूर्यवर्ण, तम से परे अवस्थित, महान् पुरुष को मैं जानता हूँ । विद्वान् व्यक्ति उसको जानकर मुक्ति लाभ करता है और ब्रह्मभूत होकर नित्यानन्दमय हो जाता है ।१३

अस्मात्परं नापरमस्ति किञ्चिद्यज्ज्योतिषां ज्योतिरेकं दिविस्थम् ।
तदेवात्मानं मन्यमानोऽथ विद्वानात्मानन्दी भवति ब्रह्मभूतः ॥१४

इसके अतिरिक्त दूसरा कुछ नहीं है, जो ज्योतियों के मध्य एक मात्र आकाशस्थ ज्योति है, उसी को आत्मा मानता हुआ विद्वान् ब्रह्मस्वरूप होकर नित्यानन्दमय हो जाता है ।१४

तदप्यहं कलिलं गूढदेहं ब्रह्मानन्दममृतं विश्वधामा ।
वदन्त्येवं ब्राह्मणा ब्रह्मनिष्ठा यत्र गत्वा न निवर्तेत भूयः ॥१५

ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मणगण कहते हैं कि वही (मैं) अविनाशी, परिपूर्ण, गूढदेह, ब्रह्मानन्द, अमृत और विश्वधाम है । उसे प्राप्त करके पुनः लौटना नहीं पड़ता है ।१५

हिरण्मये परमाकाशतत्त्वे यद्वैदिवि[2] विप्रतिभातीव तेजः ।
तद्विज्ञाने[3] परिपश्यन्ति धीरा विभ्राजमानं विमलं व्योमधाम ॥१६

हिरणमय, परम आकाशतत्त्व में स्वर्गमध्य जो तेज प्रकाशित होता है, उसी को धीरगण चमकने वाला, निर्मल आकाशधाम कहकर विज्ञान के विषय में दर्शन करते हैं ।१६

ततः परं परिपश्यन्ति धीरा आत्मन्यात्मानमनुभूय साक्षात् ।
स्वयं प्रभुः परमेष्ठी महीयान् ब्रह्मानन्दी भगवानीश[4] एषः ॥१७

आत्मा में आत्मा का साक्षात् अनुभव करके धीरगण उससे परे कुछ नहीं देखते हैं । वही स्वयंप्रभु परमेष्ठी, महीयान्, ब्रह्मानन्दमय भगवान् ईश्वर है ।१७

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
तमेवैकं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम् ॥१८

---

१. तमसः परस्तादिति पा० । २. यदर्चिषीति पा० । ३. तद्विज्ञानेन इति पा० । ४. भवानीश इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही एकमात्र देव सभी प्राणियों में गूढभाव से अवस्थित, सर्वव्यापी, सभी प्राणियों का अन्तरात्मा है। जो धीरगण उसका इस भाव से दर्शन करते हैं, उन्हीं को शाश्वती शान्ति मिलती है, दूसरों को नहीं। १८

सर्वाक्षिशिरोग्रीवः सर्वभूतगुहाशयः।
सर्वव्यापी स भगवान्तस्मात्सर्वगतः शिवः ॥१९॥

उसका मस्तक और ग्रीवा सभी स्थानों में विद्यमान हैं, वह सभी प्राणियों के हृदय में स्थित है। वह सर्वव्यापी भगवान् है। उसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। १९

इत्येतदैश्वरं ज्ञानमुक्तं वो मुनिपुंगवाः।
गोपनीयं विशेषेण योगिनामपि दुर्लभम् ॥२०॥

मुनिश्रेष्ठो! यह ईश्वरीय ज्ञान मैंने आपलोगों को बता दिया। यह योगियों के लिए भी दुर्लभ है, विशेष रूप से गोपनीय है। २०

इति श्रीकूर्म० उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
ऋषिनारदसंवादे नवमोऽध्यायः ॥९॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वरगीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या में योग-शास्त्र में ऋषियों और नारद के संवाद में नवाँ अध्याय समाप्त ॥९॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दशमोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

अलिंगमेकमव्यक्तलिंगं ब्रह्मेति निश्चितम् ।
स्वयं ज्योतिः परं तत्त्वं पूर्वं[1] व्योम्नि व्यवस्थितम् ॥१

ईश्वर बोले—जो परम-ब्रह्म है, वही अलिंग, एक, अव्यक्तलिंग, ध्रुव, स्वयं ज्योतिः स्वरूप, परम तत्त्व और आकाश में अवस्थित है ।१

अव्यक्तं कारणं यत्तदक्षरं परमं पदम् ।
निर्गुणं सिद्धिविज्ञानं[2] तद्वै पश्यन्ति सूरयः ॥२

(अव्यक्तलिंग अर्थात्) अव्यक्त जो कारण है, वह अक्षर, परम पद, निर्गुण एवं शुद्ध विज्ञानस्वरूप है । पण्डितगण उसी का दर्शन करते हैं ।२

तन्निष्ठ[3] स्वान्तसङ्कल्पा नित्यं तद्भावभाविताः ।
पश्यन्ति तत्परं ब्रह्म यत्तल्लिंगमिति श्रुतिः ॥३

लिंग अर्थात् कारणरूप में जो अभिहित किया जाता है, उसी परम ब्रह्म का तन्निष्ठ, स्वान्त संकल्प वाले एवं नित्य तद्भाव से भावित मुनिगण दर्शन करते हैं ।३

अन्यथा न हि मां द्रष्टुं शक्यं वै मुनिपुंगवाः ।
नहि तद्विद्यते ज्ञानं येन तज्ज्ञायते[4] परम् ॥४

मुनिश्रेष्ठो! अन्य प्रकार से मुझे देखा नहीं जा सकता है । ऐसा कोई ज्ञान नहीं जिससे उस (ब्रह्म) को देखा जाय ।४

एतत्तत्परमं स्थान[5] केवलं कवयो विदुः ।
अज्ञानतिमिरं[6] ज्ञानं यस्मान्मायामयं जगत् ॥५

यह वह परम स्थान है, जिसे केवल पण्डितगण जानते हैं । क्योंकि ज्ञान अज्ञानरूप अन्धकार से आवृत है और जगत् मायामय है ।५

---

१. परे इति पा० । २. शुद्धविज्ञानमिति पा० । ३. तन्निष्ठाः शान्तसङ्कल्पा इति पा० । ४. यतस्तज्जायते इति पा० । ५. ज्ञानमिति पा० । ६. अज्ञानभिरज्ञानमिति पा० । इतरदिति साधु ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यज्ज्ञानं निर्मलं शुद्धं निर्विकल्पं निरञ्जनम् ।
ममात्मासौ तदेवैनमिति[1] प्राहुर्विपश्चितः ॥६

जो ज्ञान निर्मल, शुद्ध, निर्विकल्प और निरञ्जन है, वह मेरा आत्मा है, विद्वानों ने ऐसा कहा है ।६

येऽप्यनेकं प्रपश्यन्ति तत्परं परमं पदम् ।
आश्रिताः परमां निष्ठां बुद्ध्वैक्यं[2] तत्त्वमव्ययम् ॥७

जो उस प्रधान परम पद को अनेक भाव में देखते हैं, वे अव्यय तत्त्व को ऐक्य-रूप में जानकर परम निष्ठा के आश्रित होते हैं ।७

ये पुनः परमं तत्त्वमेकं वानेकमीश्वरम् ।
भक्त्या मां सम्प्रपश्यन्ति विज्ञेयास्ते तदात्मकाः ॥८

फिर जो परम तत्त्व को एक वा अनेक कहकर ईश्वरभाव में भक्तिपूर्वक हमारा दर्शन करते हैं, उन्हें तदात्मक कहकर जानना चाहिए ।८

साक्षाद्वै प्रपश्यन्ति स्वात्मानं परमेश्वरम्[3] ।
नित्यानन्दं निर्विकल्पं सत्यरूपमिति स्थितिः ॥९

वे अपने आत्मा को परमेश्वर देव के रूप में देखते हैं एवं आत्मा को नित्यानन्द; निर्विकल्प और सत्यरूप समझते हैं ।९

भजन्ते परमानन्दं सर्वगं जगदात्मकम् ।
स्वात्मन्यवस्थिताः शान्ताः परे व्यक्तापरस्य[4] तु ॥१०

अपने आत्मा में अवस्थित दूसरे शान्त मुनिगण परमानन्दमय, जगदात्मा; सर्वगत अव्यक्त ब्रह्म का भजन करते हैं ।१०

एषा विमुक्तिः परमा मम सायुज्यमुत्तमम् ।
निर्वाणं ब्रह्मणा चैक्यं कैवल्यं कवयो विदुः ॥११

इसे परम मुक्ति और मेरा उत्तम सायुज्यमोक्ष कहा जाता है। ब्रह्म के साथ एकत्व-प्राप्ति को पण्डितगण निर्वाण या कैवल्य मोक्ष कहते हैं ।११

तस्मादनादिमध्यान्तं वस्त्वेकं परमं शिवम् ।
स ईश्वरो महादेवस्तं विज्ञाय प्रमुच्यते ॥१२

---

१. तदेवेदमिति पा० एनदिति साधु। २. बुद्ध्यैकमिति पा०। ३. यत्सदात्मकमिति, यत्तदात्मकमिति पा०। ४. परव्यक्ते परस्य तु इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतएवमात्र शिव ही आदि-मध्य-अन्त-रहित परम वस्तु हैं । वही ईश्वर महादेव हैं । उन्हें जान लेने पर मुक्ति मिल जाती है ।१२

न तत्र सूर्यः प्रतिभातीह चन्द्रो नक्षत्राणां[1] गणो नोत विद्युत् ।
तद्भासितं ह्यखिलं भाति विश्वमतीव भासमलं तद्विभाति ॥१३

वहाँ न सूर्य चमकता है, न चन्द्रमा, न नक्षत्रगण और न बिजली । अपितु उसी ईश्वर से सम्पूर्ण विश्व उद्भासित हो रहा है । उसकी निर्मल दीप्ति शोभित होती है ।१३

विश्वोदितं निष्कलं[2] निर्विकल्पं शुद्धं बृहत्परमं[3] यद्विभाति ।
अत्रान्तरे ब्रह्मविदोऽथ नित्यं पश्यन्ति तत्त्वमचलं यत्स ईशः ॥१४

वह विश्व में उदित, निष्कल, निर्विकल्प, शुद्ध, परम और बृहद्रूप में भासित होता है । ब्रह्मवेत्तागण उसके बीच नित्य एवं अचल तत्त्व का दर्शन करते हैं । वही ईश्वर है ।१४

नित्यानन्दममृतं सत्यरूपं शुद्धं वदन्ति पुरुषं सर्ववेदाः ।
प्राणानिति[4] प्राणविनेशितारं ध्यायन्ति[5] वेदैरिति निश्चितार्थाः ॥१५

सभी वेद उसे नित्यानन्द, अमृत, सत्यरूप, शुद्ध, एवं पुरुष कहते हैं । तत्त्ववेत्तागण उसे प्राण कहकर प्राण के बिना शासक के रूप में ध्यान करते हैं, यह वेदों का निर्णीत अर्थ है ।१५

न भूमिरापो न मनो न वह्निः प्राणोऽनिलो गगनं नोत बुद्धिः ।
न चेतनोऽन्यत्परमाकाशमध्ये विभाति देवः शिव एक केवलः ॥१६

वह भूमि, जल, मन, अग्नि, प्राण, वायु, आकाश, बुद्धि और चेतन भी नहीं है । वह एकमात्र केवल शिव के रूप में परमाकाश के बीच चमकता रहता है ।१६

इत्येतदुक्तं परमं रहस्यं ज्ञानञ्चेदं[6] सर्ववेदेषु गीतम् ।
जानाति योगी विजनेऽथ[7] देशे युञ्जीत योगं प्रयतो ह्यजस्रम् ॥१७

सभी वेदों में गाया गया परमरहस्यात्मक ज्ञान मैंने बता दिया । उसे विजन स्थान में योगी पवित्र होकर नित्य योगाभ्यास के द्वारा प्राप्त कर सकता है ।१७

---

१. नक्षत्रतारातपनश्च विद्यु दिति पा० । २. नित्योदितं सामदामिति पा० । ३. शुभ्रं विशस्तं परममिति पा० । ४. तमोमिति प्रणवेन इति पा० । ५. वेदार्थविनिश्चितार्थमिति पा० । ६. ज्ञानामृतं सर्ववेदेषु गूढमिति पा० । ७. यदेवमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिनारदसंवादे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में ईश्वर गीतोपनिषद् ब्रह्मविद्या में योगास्त्र में ऋषियों और नारद के संवाद में दसवाँ अध्याय समाप्त ॥१०॥

एकादशोऽध्यायः

ईश्वर उवाच

अतः परं प्रवक्ष्यामि योगं परमदुर्लभम् ।
येनात्मानं प्रपश्यन्ति भानुमन्तमिवेश्वरम् ॥१

ईश्वरबोले—इसके बाद मैं परम दुर्लभ योग बताऊँगा, जिससे लोग आत्मा को ईश्वर के रूप में सूर्य के समान देखते हैं ।१

योगाग्निर्दहते क्षिप्रमशेषं पापपञ्जरम्[1] ।
प्रसन्नं जायते ज्ञानं साक्षान्निर्वाणसिद्धिदम् ॥२

योगरूपाग्नि शीघ्र ही समस्त पाप-राशि को जला डालता है । तब साक्षात् निर्वाणसिद्ध देने वाला निर्मल ज्ञान उत्पन्न होता है ।२

योगात्संजायते ज्ञानं ज्ञानाद्योगः प्रवर्त्तते ।
योगज्ञानाभियुक्तस्य प्रसीदति महेश्वरः ॥३

योग से ज्ञान की उत्पत्ति होती है और ज्ञान से योग की । योग और ज्ञान से सम्पन्न व्यक्ति के प्रति महेश्वर प्रसन्न होते हैं ।३

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं नित्यमेव च ।
ये युञ्जन्ति महायोगं ते विज्ञेया महेश्वराः ॥४

जो प्रतिदिन (नियमपूर्वक) एक काल वा दो काल वा तीन काल सतत महा-योग (निर्विकल्प योग) में संलग्न रहते हैं उन्हे महेश्वर समझना चाहिए ।४

योगस्तु द्विविधो ज्ञेयोह्यभावः प्रथमो मतः ।
अपरस्तु महायोगः[2] सर्वयोगोत्तमोत्तमः ॥५

---

१. सञ्चयमिति पा० । २. अनुफा सुनफा इति ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग दो प्रकार का समझना चाहिए--पहला अभावयोग (सविकल्पक योग) और दूसरा महायोग (निर्विकल्पक योग) जो सभी योगों में श्रेष्ठतम है ।५

शून्यं सर्वनिराभासं स्वरूपं यत्र चिन्त्यते ।
अभावयोगः स प्रोक्तो येनात्मानं प्रपश्यति ॥६

जहाँ शून्य एवं समस्त सादृश्य विहीन स्वरूप का चिन्तन किया जाता है, वह अभावयोग कहलाता है, जिसके द्वारा आत्मा को देखा जाता है ।६

यत्र पश्यति चात्मानं नित्यानन्दं निरञ्जनम् ।
मयैक्यं स मया[1] योगो भाषितः परमः[2] स्वयम् ॥७

और जिस योगानुष्ठान के द्वारा सदानन्द, निर्मल आत्मा को मेरे (ईश्वर के) सहित अभिन्नरूप में देखा जाता है, उसे मैंने स्वयं परम योग कहा है।७

ये चान्ये योगिनां योगाः श्रूयन्ते ग्रन्थविस्तरे ।
सर्वे ते ब्रह्मयोगस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥८

योगियों के जो अन्य योग ग्रन्थ-समुदाय से सुने जाते हैं, वे सब ब्रह्मयोग की सोलहवीं कला के बराबर भी नहीं हैं ।८

यत्र साक्षात्प्रपश्यन्ति विमुक्ता विश्वमीश्वरम् ।
सर्वेषामेव योगानां स योगः परमो मतः ॥९

मुक्त पुरुष जिस योग में विश्व को साक्षात् ईश्वररूप में देखते हैं, वहयोग सभी योगों से श्रेष्ठ हैं ।९

सहस्रशोऽथ बहुशो[3] ये चेश्वरबहिष्कृताः ।
न ते पश्यन्ति मामेकं योगिनो यतमानसाः ॥१०

हजारों ऐसे योग हैं, जिन्हें ईश्वर ने बहिष्कृत कर दिया। संयत मन वाले वे योगी होते हुए भी एक मुझे नहीं देखते हैं ।१०

प्राणायामस्तथा ध्यानं प्रत्याहारोऽथ धारणा ।
समाधिश्च मुनिश्रेष्ठा यमश्च नियमासने ॥११
मय्येकचित्तता योगः प्रत्यन्तरनियोगतः[4] ।
तत्साधनानि चान्यानि युष्माकं कथितानि तु ॥१२

हे मुनिश्रेष्ठगण! प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार, धारण, समाधि, यम और नियम—ये आठ प्रकार के साधन अन्यवृत्ति निरोधपूर्वक केवल मेरे प्रति एकाग्रचित्तता-

---

१. महायोगः इति पा० । २. परमेश्वरः इति पा० । ३. शतशः इति पा० । ४. वृत्त्यंतर इति, वृत्तान्तर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप योग के हैं। उन साधनों के भी अन्य साधन हैं--ये तुम लोगों को बता दिये ।११-१२।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यापरिग्रहौ ।
यमाः संक्षेपतः प्रोक्ताश्चित्तशुद्धिप्रदा नृणाम् ॥१३

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह-ये संक्षेप में कहे गये हैं जो मनुष्यों के लिए चितशुद्धि प्रदायक हैं ।१३

कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा ।
अक्लेशजननं प्रोक्ता त्वहिंसा परमर्षिभिः ॥१४

कर्म, मन, वाणी से किसी भी प्राणी को कभी कोई क्लेश न देना अहिंसा है, यह परमर्षियों ने कहा है ।१४

अहिंसायाः परो धर्मो नास्त्यहिंसापरं सुखम् ।
विधिना या भवेद्धिंसा त्वहिंसैव[1] प्रकीर्तिता ॥१५

अहिंसा से श्रेष्ठ कोई धर्म नहीं है। अहिंसा से बढ़कर सुख नहीं है। विधिपूर्वक जो हिंसा की जाती है, वह अहिंसा ही कही गई है ।१५

सत्येन सर्वमाप्नोति सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
यथार्थकथनाचारः सत्यं प्रोक्तं द्विजातिभिः ॥१६

सत्य से सब कुछ प्राप्त होता है। सत्य में सब प्रतिष्ठित है। यथार्थ कथन को द्विजातियों ने सत्य कहा है ।१६

परद्रव्यापहरणं चौर्यादथ बलेन वा ।
स्तेयं तस्यानाचरणादस्तेयं धर्मसाधनम् ॥१७

चोरी से अथवा बलपूर्वक दूसरे के द्रव्य का अपहरण कर लेना 'स्तेय' कहलाता उस स्तेय का आचरण न करना 'अस्तेय' कहलाता है जो धर्म का साधन है ।१७

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा ।
सर्वत्र मैथुनत्यागं ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते ॥१८

सर्वदा सभी अवस्थाओं में कर्म, मन और वाणी से सर्वत्र मैथुन का त्याग कर देना 'ब्रह्मचर्य' कहलाता है ।१८

आपत्तिकाल में भी इच्छा पूर्वक द्रव्य न लेना 'अपरिग्रह' कहलाता है। उसका प्रयत्नपूर्वक पालन करना चाहिए ।१९

---

१. सा न्त्वहिंसैव कीर्तिता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रव्याणामप्यनादानमापद्यपि तथेच्छया ।
अपरिग्रहमित्याहुस्तं प्रयत्नेन पालयेत् ॥१९

आपत्तिकाल में भी इच्छापूर्वक द्रव्य लेना 'अपरिग्रह' कहलाता है। उसका प्रयत्नपूर्वक पालन करना चाहिए ।१९

तपः स्वध्यायसन्तोषौ शौचमीश्वरपूजनम् ।
समासान्नियमाः प्रोक्ता योगसिद्धिप्रदायिनः ॥२०

तपस्या, स्वाध्याय' सन्तोष, शौच और ईश्वर का पूजन ये योगसिद्धिदायकनियम संक्षेप में बताये गये हैं ।२०

उपवासपराकादिकृच्छ्रचान्द्रायणादिभिः ।
शरीरशोषणं प्राहुस्तापसास्तप उत्तमम् ॥२१

उपवास, पराकव्रत, प्राजापत्यव्रत कृच्छ्रचान्द्रायण आदिव्रतों द्वारा शरीर को सुखाना उत्तम तप है, यह तपस्वियों का कहना है ।२१

वेदान्तशतरुद्रीयप्रणवादिजपं बुधाः ।
सत्त्वसिद्धिकरं पुंसां स्वाध्यायं परिचक्षते ॥२२

विद्वानों ने वेदान्त, शतरुद्रीय, प्रणव आदि के जप को पुरुषों के लिए सत्त्वसिद्धिकारक स्वाध्याय कहा है ।२२

स्वाध्यायस्य त्रयो भेदा वाचिकोपांशुमानसाः ।
उत्तरोत्तरवैशिष्ट्यं प्राहुर्वेदार्थवेदिनः ॥२३

स्वाध्याय के तीन भेद हैं—वाचिक, उपांशु (चुपचाप) और मानस (मन ही मन) । इन तीनों में उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है—ऐसा वेदार्थज्ञाताओं का कहना है ।२३

यः शब्दबोधजननः परेषां शृण्वतां स्फुटम् ।
स्वाध्यायो वाचिकः प्रोक्त उपांशोरथ लक्षणम् ॥२४

जिसमें सुनने वाले दूसरे लोगों को स्पष्ट रूप से शब्दों का बोध हो जाय वह वाचिक स्वाध्याय है। अब उपांशु स्वाध्याय का लक्षण सुनिए ।२४

ओष्ठयोः स्पन्दमात्रेण परस्याशब्दबोधकम् ।
उपांशुरेष निर्दिष्टः साध्वसौ[1] वाचिकाज्जपात् ॥२५

जिसमें दोनों ओठों का स्पन्दन (किंचित् चलन) हो और दूसरों को शब्द बोध न हो उसे उपांशु कहते है। उपांशु स्वाध्याय या जप वाचिक जप से श्रेष्ठ है ।२५

---

१. सहस्रवाचिको जपः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्पदाक्षरसङ्गत्या परिस्पन्दनवर्ज्जितम् ।
चिन्तनं सर्वशब्दानां मानसं तज्जपं विदुः ॥२६

जिसमें स्पन्दन बिलकुल न हो किन्तु पद और अक्षरों की संगति द्वारा सभी शब्दों का चिन्तन होता रहे, उसे मानस जप समझना चाहिए ।२६

यदृच्छालाभतो वित्तं[1] अलं पुंसो भवेदिति ।
प्राशस्त्यमृषयः[2] प्राहुः सन्तोषं सुखलक्षणम् ॥२७

मनुष्य को अपने आप जो धन मिल जाय, उसे पर्याप्त समझना सुखदायक सन्तोष है । ऋषियों ने इसे उत्तम (सन्तोष) कहा है ।२७

बाह्यमाभ्यन्तरं शौचं द्विधा प्रोक्तं द्विजोत्तमाः ।
मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं मनः शुद्धिरथान्तरम् ॥२८

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! शौच दो प्रकार के होते हैं—बाह्य और आन्तरिक । उनमें मिट्टी और जल द्वारा शौच को बाह्य तथा चित्त की शुद्धता को आन्तरिक शौच कहा जाता है ।२८

स्तुतिस्मरणपूजाभिर्वाङ्मनःकायकर्मभिः ।
सुनिश्चला शिवे भक्तिरेतदीशस्य पूजनम् ॥२९

स्तुति (प्रशंसा), स्मरण और अर्चना रूपी वचन मन, शरीर और कर्म द्वारा की गई शंकर भगवान् की सुनिश्चल भक्ति ही ईश्वर की पूजा है ।२९

यमाश्च नियमाः प्रोक्ताः प्राणायामं निबोधत ।
प्राणः स्वदेहजो वायुरायामस्तन्निरोधनम् ॥३०

यम और नियम कहे जा चुके हैं, अब प्राणायाम क्या है सुनें । अपने शरीर से उत्पन्न वायु प्राण और उसका निग्रह आयाम है ।३०

उत्तमाधममध्यत्वात्त्रिधायं प्रतिपादितः ।
य एव द्विविधः प्रोक्तः सगर्भोऽगर्भ एव च ॥३१

प्राणायाम, उत्तम मध्यम और अधम भेद से तीन प्रकार का होता है । इनमें से प्रत्येक प्रकार सगर्भ और अगर्भ, दो भेदों में विभक्त है ।३१

मात्राद्वादशको मन्दश्चतुर्विंशतिमात्रकः ।
मध्यमः प्राणसंरोधः षट्त्रिंशन्मात्रिकोऽन्तकः[3] ॥३२

---

१. नित्यमिति पा० । २. यां निष्ठामिति पा० । ३. मात्रिकोत्तम इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधम प्राणायाम बारह मात्राओं का, मध्यम चौबीस तथा उत्तम छत्तीस मात्राओं का होता है ।३२

यः[1] स्वेदकम्पनोच्छ्वासजनकस्तु यथाक्रमम् ।
संयोगश्च[2] मनुष्याणामानन्दाच्चोत्तमोत्तमः ॥३३

प्राणायाम क्रमानुसार पसीना, कम्प और उच्छ्वास उत्पन्न करते हैं। आनन्दानुभूति के न्यूनाधिक्य के अनुसार इनकी पारस्परिक उत्कृष्टता आंकी जाती है ।३३

सुनफाख्यं हि तं योगं सगर्भविजयं बुधाः ।
एतद्धि[3] योगिनां प्राहुः प्राणायामस्य लक्षणम् ॥३४

सुनफा नामक उस प्राणायाम को विद्वान् लोग सगर्भ विजय कहते हैं। यह योगियों के प्राणायाम का लक्षण है ।३४

सव्याहृतिं सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह ।
त्रिर्जपेदायतप्राणः प्राणायामोऽथ[4] नामतः ॥३५

सप्तव्याहृति और प्रणवयुक्त गायत्री का शिरोमन्त्र के साथ साँस रोक कर तीन बार जप किए जाने को प्राणायाम कहते हैं ।३५

रेचकः पूरकश्चैव प्राणायामोऽथ कुम्भकः ।
प्रोच्यते सर्वशास्त्रेषु योगिभिर्यतमानसैः ॥३६

मनः संयम करने वाले ने समस्तशास्त्रों में रेचक पूरक और कुम्भक को प्राणायाम कहा है ।३६

रेचको बाह्यनिश्वासः पूरकस्तन्निरोधनः ।
साम्येन संस्थितिर्या सा कुम्भकः परिगीयते ॥३७

साँस छोड़ने का नाम रेचक, साँस रोकने का नाम पूरक और साम्यावस्था (अर्थात् साँस छोड़ने और लेने की क्रिया न करके स्थिर रहना) कुम्भक के नाम से प्रख्यात है ।३७

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु स्वभावतः ।
निग्रहः प्रोच्यते सद्भिः प्रत्याहारस्तु सत्तमाः ॥३८

हे साधुवृन्द ! विषयों में स्वभावतः विचरण करने वाली इन्द्रियों को संयम में रखने को, मनीषियोंने प्रत्याहार कहा हैं ।३८

---

१. यः स्वेदकम्पनोत्थान इति पा० । २. मन्दमध्यममुख्यानामानन्दादुत्तमोत्तमः । सगर्भमाहुः सजपमगर्भविजयं बुधाः इति पा० । ३. एतद्धि योगिनामुक्तमिति पा० । ४. प्राणायामः स उच्यते इति पा० । ५. रेचकोऽनलनिश्वासादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृत्पुण्डरीके नाभ्यां वा मूर्ध्नि पर्वसु मस्तके ।
एवमादिषु देशेषु धारणा चित्तबन्धनम् ॥३९

हृदय कमल, नाभि, मूर्धा, सन्धियों और मस्तकादि स्थानों में चित्तवृत्ति को एकाग्र करना धारणा है ।३९

देशावस्थितिमालम्ब्य ऊर्ध्वं[1] या वृत्तिसन्ततिः ।
प्रत्यन्तरैरसृष्टा[2] या तद्ध्यानं सूरयो विदुः ॥४०

एक देश में अवस्थिति का आलम्बन लेकर ऊर्ध्वगामी वृत्तिपरम्परा को अन्य वृत्ति के सम्पर्क से अलग रखने को विद्वानों ने ध्यान कहा है ।४०

एकाकारः समाधिः स्याद्देशालम्बनवर्जितः ।
प्रत्ययो ह्यर्थमात्रेण योगशासनमुत्तमम्[3] ॥४१

किसी का आलम्बन किये बिना ध्येय के साथ एकाकार होना समाधि है। जिसमें अर्थ (ध्येय) मात्र की प्रतीति हो वह उत्तम योगशासन है ।४१

धारणा द्वादशायामा ध्यानं द्वादश धारणाः ।
ध्यानं द्वादशकं यावत्समाधिरभिधीयते ॥४२

बारह प्रकार के प्राणायाम धारणा, बारह धारणायें ध्यान और बारह ध्यान, समाधि कहलाते हैं ।४२

आसनं स्वस्तिकं प्रोक्तं पद्ममर्द्धासनं तथा ।
साधनानाञ्च सर्वेषामेतत्साधनमुत्तमम् ॥४३

आसन तीन प्रकार के होते हैं—स्वस्तिक, पद्म और अर्धासन,। समस्त साधनों में ये तीन साधन सर्वश्रेष्ठ हैं ।४३

ऊर्वोरुपरि विप्रेन्द्राः कृत्वा पादतले उभे ।
समासीनात्मनः पद्ममेतदासनमुत्तमम् ॥४४

हे विप्रश्रेष्ठ ! दोनों पैरों के तलवों को जंघा के ऊपर रखकर बैठने से श्रेष्ठ पद्मासन होता है ।४४

उभे कृत्वा पातदले जानूर्वोरन्तरेण हि ।
समासीनात्मनः प्रोक्तमासनं स्वस्तिकं परम् ॥४५

दोनों पैरों के तलवों को जंघा के नीचे रखकर, बैठने से स्वस्तिकासन होता है ।४५

---

१. बुद्धेरिति पा० । २. वृत्त्यन्तरैरसंस्पृष्टा इति पा० । ३. साधनेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकं पादमथैकस्मिन्विष्टभ्योरसि सत्तमाः ।
आसीनार्द्धासनमिदं योगसाधनमुत्तमम् ॥४६

हे साधुश्रेष्ठ ! एक पैर, दूसरे पैर पर रखकर ठेहुने को छाती से लगाकर बैठने से अर्धासन बनता है जो उत्तम योगसाधन है ।४६

अदेशकाले योगस्य दर्शनं न हि विद्यते ।
अग्न्यभ्यासे जले वापि शुष्कपर्णचये तथा ॥४७
जन्तुव्याप्ते श्मशाने च जीर्णगोष्ठे चतुष्पथे ।
सशब्दे सञ्चये[1] वापि चैत्यवल्मीकसञ्चये ॥४८
अशुभे दुर्जनाक्रान्ते मशकादिसमन्विते ।
नाचरेद्[2] हबाधे वा दौर्मनस्यादिसंभवे ॥४९

अयोग्य स्थान और काल में योग दर्शन नहीं होता । अग्नि के समीप, जल में, सूखे पत्तों के ढेर में, प्राणियों से व्याप्त स्थान में, श्मशान में, जर्जर गोशाला में, चौराहे पर, कोलाहल या भययुक्त स्थान पर, यज्ञशाला में या दीमक के ढेर पर, अशुभ, दुष्टों से आक्रान्त तथा मच्छरादि कीटों से युक्त स्थान में, शरीर में पीड़ा और दुश्चिन्ता होने पर, योगासन नहीं करना चाहिए ।४७-४९।

सुगुप्ते सुशुभे देशे गुहायां पर्वतस्य च ।
नद्यास्तीरे पुण्यदेशे देवतायतने तथा ॥५०
गृहे वा सुशुभे देशे[3] निर्ज्जने जन्तुवर्जिते ।
युञ्जीत योगं[4] सततमात्मानं तत्परायणः[5] ॥५१

अत्यन्त गोपनीय और पवित्र स्थान में, पर्वतों की गुफाओं में नदी के किनारे, पुण्यक्षेत्र में, मन्दिरों में, घर के अन्दर अथवा एकान्त और प्राणिविहीन पवित्र स्थान में, मुझमें ध्यान लगाकर, योगासन करना चाहिए ।५०-५१

नमस्कृत्याथ योगीन्द्राञ्छिष्यांश्चैव विनायकम् ।
गुरुञ्चैव च मां योगी युञ्जीत सुसमाहितः ॥५२

शिष्य सहित, श्रेष्ठ योगीजनों को, गणेश जी को, गुरु और मुझे (शंकर को) प्रणाम करके, भलीभाँति समाधिस्थ होकर योगासन करना चाहिए ।५२

---

१. समये इति पा० । २. रम्ये इति पा० । ३. योगीति पा० । ४. मत्परायण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसनं स्वस्तिकं बद्ध्वापद्ममर्द्धमथापि वा ।
नासिकाग्रे समां दृष्टिमीषदुन्मीलितेक्षणः ॥५३
कृत्वाथ निर्भयः शान्तस्त्यक्त्वा मायामयं जगत् ।
स्वात्मन्येव स्थितं देवं चिन्तयेत्परमेश्वरम् ॥५४

स्वस्तिक, पद्म अथवा अर्धासन करके, नेत्रों को अधखुला रख, दृष्टि को नासिका के अग्रभाग में स्थिर करके, मायामय संसार का परित्याग कर, भयरहित होकर, शान्तभाव से, अपनी आत्मा में विराजमान उस परमेश्वर का चिन्तन करना चाहिए ।५३-५४।

शिखाग्रे द्वादशांगुल्ये कल्पयित्वाथ पङ्कजम् ।
धर्मकन्दसमुद्भूतं ज्ञानेनालं सुशोभनम् ॥५५
ऐश्वर्याष्टदलं श्वेतं परं वैराग्यकर्णिकम् ।
चिन्तयेत्परमं कोशं कर्णिकायां हिरण्मयम् ॥५६
सर्वशक्तिमयं साक्षाद्यं प्राहुर्दिव्यमव्ययम् ।
ओङ्कारवाच्यमव्यक्तं रश्मिज्वालासमाकुलम्[1] ॥५७
चिन्तयेत्तत्र विमलं परं ज्योतिर्यदक्षरम् ।
तस्मिञ्ज्योतिषि विन्यस्य स्वानन्दं[2] मम भेदतः ॥५८
ध्यायीत[3] कोशमध्यस्थमीशं परमकारणम् ।
तदात्मा सर्वगो भूत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥५९

बारह अंगुल लम्बी शिखा के अग्रभाग में, धर्मरूपी कन्द से उत्पन्न; श्रेष्ठ ज्ञाननाल से सुशोभित कमल का चिन्तन करते हुए, ऐश्वर्यरूपी आठ पंखुड़ियों से युक्त अत्यन्त शुभ्र, वैराग्यरूपी बीजकोषों से युक्त, उस कमल के बीज कोष में, हिरण्मय परम कोष का ध्यान करते हुए, सर्वशक्तिमान्, साक्षात् अक्षय स्वर्गरूप (परमेश्वर), ओङ्कार, अप्रकाशित किरणों से व्याप्त, स्वच्छ और उस अनश्वर परम ज्योति का चिन्तन करना चाहिए। उस ज्योति समूह को अभिन्न रूप से आत्मा में स्थापित कर, कोष के मध्य स्थित, परम कारण स्वरूप ईश्वर का ध्यान करना चाहिए तथा ध्यान के समय तन्मय और एकाग्र होकर, अन्य विषयों का चिन्तन नहीं करना चाहिए ।५५-५९

---

१. ज्वालेति पा० । २. स्वात्मानं तदभेदत इति, स्वात्मानन्दमभेदत इति पा० । ३. ध्यायीताकाशेति पा० ध्यायीत-अत्र आत्मनेपदित्वमार्षम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतद्गुह्यतमं ज्ञानं ध्यानान्तरमथोच्यते ।
चिन्तयित्वा तु पूर्वोक्तं हृदये पद्ममुत्तमम् ॥६०
आत्मानमथ कांतारं[1] तत्रानलसमत्विषम् ।
मध्ये वह्नि शिखाकारं पुरुषं पञ्चविंशकम् ॥६१

यह अत्यन्त गुप्त ज्ञान है। अब ध्यानान्तर के विषय में बताने जा रहा हूँ। उपर्युक्त श्रेष्ठ कमल का चिन्तन करके, उसमें अग्नि के समान प्रकाशयुक्त, कान्ता स्वरूपिणी आत्मा तथा अग्नि की लपटों के समान, पचीस समष्टियों से युक्त पुरुष रूपी परमात्मा का चिन्तन करना चाहिए ।६०-६१।

चिंतयेत्परमात्मानं तन्मध्ये गगनं परम् ।
ओङ्कारबोधितं तत्त्वं शाश्वतं शिवमुच्यते[2] ॥६२

उस (कमल) में, परम आकाश स्वरूप, ओङ्कार के द्वारा भलीभाँति ज्ञात होने वाले, नित्य और कल्याणमय परमात्मा का चिन्तन करना चाहिए ।६२

अव्यक्त[3] प्रकृतौ लीनं परं ज्योतिरनुत्तमम् ।
तदन्तः परमं तत्त्वमात्माधारं निरञ्जनम् ॥६३

उसमें अप्रकाशित, प्रकृति में लीन, अत्युत्तम, प्रकाश से युक्त, परम तत्व, आत्मा धार स्वरूप, परमात्मा का ध्यान करना चाहिए ।६३

ध्यायीत तन्मयो नित्यमेकरूपं महेश्वरम् ।
विशोध्य सर्वतत्त्वानि प्रणवेनाथवा पुनः ॥६४
संस्थाप्य मयि चात्मानं निर्मले परमे पदे ।
प्लावयित्वात्मनो देहं तेनैव ज्ञानवारिणा ॥६५
मदात्मा मन्मना भस्म गृहीत्वा त्वग्निहोत्रिकम्[4] ।
तेनोद्धूलितसर्वाङ्गमग्निरादित्यमन्वतः ॥६६
चिन्तयेत्स्वात्मनीशानं परं ज्योतिःस्वरूपिणम् ।
एष पाशुपतो योगः पशुपाशविमुक्तये ॥६७

सदैव एक स्वरूप को धारण करने वाले (अद्वितीय), महेश्वर का एकाग्रचित होकर ध्यान करना चाहिए अथवा समस्त तत्त्वों को ओङ्कार के द्वारा संशोधित कर, स्वच्छ परम पद स्वरूपमुझमें आत्मा को स्थापित करना चाहिए। तदनन्तर ज्ञानरूपी जल से अपने देह को प्लावित करके, मुझमें आत्मसर्पण कर, अग्निहोत्र भाग से उत्पन्न

---

१. कर्तारमिति पा० । २. शिवमच्युतमिति पा० । ३. अनन्तमिति पा० ।
४. त्वग्निहोत्रजमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भस्म को,ग्रहण करके, "अग्निरादित्य" इस मन्त्र का उच्चारण कर, उस भस्म को सम्पूर्ण शरीर में लगाकर परम प्रकाश स्वरूप, भगवान् शिव अपनी आत्मा में चिन्तन करना चाहिए। इस पाशुपत योग के द्वारा मनोविकारों से मुक्ति मिलती है।६४-६७।

[1]सर्ववेदान्तमार्गोऽयमत्याश्रममिति श्रुतिः।
एतत्परतरं गुह्यं मत्सायुज्यप्रदायकम् ॥६८

सारे उपनिषदों का सार तथा संन्यासियों के लिए तपोभूमि स्वरूप यह योग, अत्यन्त गोपनीय और मेरा सान्निध्य प्रदान करने वाला है।६८

द्विजातीनां तु कथितं भक्तानां ब्रह्मचारिणाम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च क्षमा शौचं तपो दमः ॥६९
सन्तोषः सत्यमास्तिक्यं व्रताङ्गानि विशेषतः।
एकेनाप्यथ हीनेन व्रतमस्य न लुप्यते ॥७०

ब्राह्मणों, भक्तों और ब्रह्मचारियो से कहा गया है कि, ब्रह्मचर्य, अहिंसा, क्षमा शोच, तप, इन्द्रिनिग्रह, सन्तोष, सत्य, और आस्तिक्य, व्रत के विशिष्ट अङ्ग होते हैं। इनमें से एक भी अङ्ग, हीन हो जाय, तो व्रत भङ्ग हो जाता।६९-७०।

तस्मादात्मगुणोपेतो मद्व्रतं वोढुमर्हति।
वीतरागभयक्रोधा मन्यया मामुपाश्रिताः ॥७१
बहवोऽनेन[2] योगेन पूता मद्भावयोगतः।
ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ॥७२

मेरे व्रतों को आत्मगुण से मुक्त होकर वहन करना चाहिए। वीतरागी होकर भय और क्रोध का त्याग कर, मेरी शरण में आकर, मेरी भक्ति के द्वारा, बहुत लोग पवित्र हो गए हैं। जो जिस प्रकार से मेरी उपासना करता है, मैं उसे उसी प्रकार से प्राप्त होता हूँ।७१-७२।

ज्ञानयोगेन मां तस्माद्यजेत परमेश्वरम्।
अथवा भक्तियोगेन वैराग्येण परेण तु ॥७३

मैं परमेश्वर हूँ, इसीलिए मेरी उपासना, ज्ञानयोग, भक्तियोग अथवा वैराग्य के द्वारा करनी चाहिए।७३

---

१. सारोऽयमिति पा०। २. बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः इति, मद्भावभाविताः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतसा बोधयुक्तेन पूजयेन्मां सदा शुचिः ।
सर्वकर्माणि संन्यस्य भिक्षाशी निष्परिग्रहः ॥७४

प्राप्नोति मम सायुज्यं गुह्यमेतन्मयोदितम् ।
अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रीकरण एव च ॥७५

निर्ममो निरहङ्कारो यो मद्भक्तः स मे प्रियः ।
संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ॥७६

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ।
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ॥७७

हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स हि मे प्रियः ।
अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ॥७८

सर्वारम्भपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ।
तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित् ॥७९

अनिकेतः स्थिरमतिर्मद्भक्तो मामुपैष्यति ।
सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मत्परायणः ॥८०

मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं परमं पदम् ।
चेतसा सर्वकर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः ॥८१

बोधयुक्त चित्त से, सदा पवित्र होकर, मेरी अर्चना करनी चाहिए। सारे कर्मों का त्याग कर, भिक्षाटन पर जीवन निर्वाह करके, विषय वस्तुओं को त्यागने से मेरा सान्निध्य प्राप्त होता है। मैंने यह गुप्त तत्त्व बता दिया है। जो व्यक्ति किसी प्राणी को हिंसा नहीं करता, उससे मैत्री और करुणा का भाव रखता है, जो ममताहीन और अहंकार से परे है, वही मेरा प्रिय भक्त है। जो पूरी तरह से सन्तुष्ट, योगी और दृढ़निश्चयी है, मुझमें मन और बुद्धि अर्पित करता है, वही मेरा भक्त है और वही मुझे प्रिय है। जिसके द्वारा लोग विचलित नहीं होते तथा जिसे लोग विचलित नहीं कर पाते, जो हर्ष, क्रोध, भय और उत्तेजना से मुक्त है, वही मेरा प्रिय है। जो व्यक्ति निरपेक्ष, पवित्र, दक्ष, उदासीन, पीड़ा रहित, और समस्त अनुष्ठानों का परित्याग कर देने पर भी भक्तिवान् है, वही मेरा प्रिय है। निन्दा और स्तुति में समान भाव रखने वाला अर्थात् निन्दा और स्तुति जिसके लिए समान हों, मौन का आश्रय ग्रहण करने वाला तथा जो सभी परिस्थितियों में सन्तुष्ट, गृहहीन और स्थिर बुद्धि वाला हो, वही मेरा भक्त है तथा वही मुझे प्राप्त कर सकता है। मत्परायण होकर सारे कर्मों को करने से, मेरी कृपा से, शाश्वत परम पद की प्राप्ति होती है। मुझमें एकाग्र होकर, सारे कर्मों को, मन से मुझे समर्पित कर दो।७३-८१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निराशीर्निर्ममो भूत्वा मामेकं शरणं व्रजेत् ।
त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ॥८२

कर्मण्यपि प्रवृतोऽपि कर्मणा[1] तेन बुध्यते ।
निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः[2] ॥८३

शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति तत्पदम्[3] ।
यदृच्छालाभतृप्तस्य द्वन्द्वातीतस्य[4] चैव हि ॥८४

कुर्वतो मत्प्रसादार्थं कर्म संसारनाशनम् ।
मन्मना मन्नमस्कारो मद्याजी मत्परायणः ॥८५

मामुपास्यति[5] योगीशो ज्ञात्वा मां परमेश्वरम् ।
मामेवाहुः[6] परं ज्योतिर्बोधयन्तः परस्परम् ॥८६

विषयों का त्याग कर, ममताहीन होकर, मेरी शरण में आओ। कर्मफल का त्याग करके, सदैव सन्तुष्ट और निराश्रय होने से, कर्म में लीन होने पर भी, वह कर्मों के बन्धन में नहीं बँधता। आत्मा और मन पर नियन्त्रण करके, आश्रयहीन होकर, सारे विषयों का त्याग करके, केवल शारीरिक कर्म करने से परम पद की प्राप्ति होती है। जो मनुष्य जितना प्राप्त हुआ और जो कुछ भी प्राप्त हुआ इससे सन्तुष्ट होकर, द्वन्द्वों से परे हो जाता हैं, तथा जो मुझे प्रसन्न करने के लिए कर्म करता है, उसे पुनः संसार में नहीं आना पड़ता। मुझमें मन लगाने वाले, मुझे नमस्कार तथा मेरी आराधना करने वाले, मुझमें मन को एकाग्र करने वाले जो योगिश्रेष्ठ मुझे परम प्रकाश स्वरूप कहकर, परस्पर एक दूसरे को समझाते हैं, वे ही परमेश्वर स्वरूप मुझको जान पाते हैं और पा लेते हैं।८२-८६।

कथयन्तश्च मां नित्यं मम सायुज्यमाप्नुयुः ।
एवं नित्याभियुक्तानां मायेयं[7] कर्म सात्त्वगम् ॥८७

माया मोह से लिप्त कर्मों को करने वाले, सर्वथा अपराधी, जो मुझे नित्य कहते हैं, वे भी मेरा सान्निध्य प्राप्त करते हैं।८७

नाशयामि तमः कृत्स्नं ज्ञानदीपेन भास्वता ।
मद्बुद्धयो मां सततं पूजयन्तीह ये जनाः ॥८८

---

१. नैव तेन निबध्यते इति पा०। २. जितचित्तात्मेति पा०। ३. किल्विषमिति पा०। ४. द्वन्द्वातीतस्य-द्वन्द्वं सुखदुःखशीतोष्णादिद्वन्द्वं तदतीतस्य इत्यर्थः। ५. उपास्ते इति साधु। मामपैष्यतीति पा०। ६. मद्बुद्धयो मां सततमिति पा०। ७. मदीयं कर्मसत्त्वगम् इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मुझमें चित्त को एकाग्र कर, मेरी पूजा करता है, उनके तमोगुण युक्त कर्मों का, मैं ज्ञानरूपी प्रकाशमान दीपक से नाश करता हूँ ।८८

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।
ये चान्ये भोगकर्मार्थं यजन्ते ह्यन्यदेवताः ॥८९

जो लोग फल प्राप्ति की कामना से, दूसरे देवताओं की पूजा करते हैं, उनके योग और क्षेम (अप्राप्य विषय की प्राप्ति और प्राप्त विषय की रक्षा) को भी मैं धारण करता हूँ ।८९

तेषां तदन्तं विज्ञेयं देवतानुगतं फलम् ।
ये चान्ये देवताभक्ताः पूजयन्तीह देवताः ॥९०

अन्य देवताओं के भक्त, जो भिन्न-भिन्न देवताओं की पूजा करते हैं, उनको उतनी ही फल की प्राप्ति होगी, ऐसा जानिए, क्योंकि फलों की प्राप्ति देवताश्रित होती है ।९०

मद्भावनासमायुक्ता मुच्यन्ते तेऽपि मानवाः ।
तस्माद्विनश्वरानन्यांस्त्यक्त्वा[1] देवानशेषतः ॥९१

मेरा चिन्तन करते हुए, जो विनश्वर देवताओं की भक्ति त्याग देते हैं, वे भी मुक्ति प्राप्त करते हैं ।९१

मामेव संश्रयेदीशं स याति परमं पदम् ।
त्यक्त्वा पुत्रादिषु स्नेहं निःशोको निष्परिग्रहः ॥९२

पुत्रादि का मोह त्याग कर शोक न करने वाले तथा विषय वस्तु का संग्रह न करने वाले, जो व्यक्ति प्रभुस्वरूप मेरी शरण में आते हैं, वे परम पद प्राप्त करते हैं ।९२

यजेच्चामरणाल्लिङ्गं विरक्तः परमेश्वरम् ।
येऽर्चयन्ति सदा लिङ्गं त्यक्त्वा भोगानशेषतः ॥९३

एकेन जन्मना तेषां ददामि परमं पदम् ।
परात्मनः सदा लिंगं केवलं रजतप्रभम्[2] ॥९४

ज्ञानात्मकं सर्वगतं योगिनां हृदि संस्थितम् ।
ये चान्ये नियता भक्ता भावयित्वा विधानतः ॥९५

---

१. विश्वेश्वरेति पा० । २. सन्निरञ्जनमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्र क्वचन तल्लिंगमर्च्चयन्ति महेश्वरम् ।
जले वा वह्निमध्ये वा व्योम्नि सूर्येऽप्यथान्यतः ॥९६

रत्नादौ भावयित्वेशमर्चयेल्लिंगमैश्वरम् ।
सर्वलिंगमयं ह्येतत्सर्वं लिंगे प्रतिष्ठितम् ॥९७

जो सारे भोग विलास का त्याग कर, मृत्यु पर्यन्त, लिङ्ग की पूजा करते हैं, मैं उन्हें एक जन्म में ही स्वर्ग प्रदान करता हूँ। परमात्मा का वह लिङ्ग चाँदी के समान कान्ति वाला, ज्ञानमण्डित, सर्वत्र विचरण करने वाला तथा सदैव योगियों के हृदय में अवस्थित रहता है। अतः शिवलिङ्ग के जो मान्य निश्चय भक्त हैं, वे नियमानुसार लिङ्ग का चिन्तन करके, किसी भी स्थान में महेश्वर लिङ्ग की पूजा कर लेते हैं। जल, अग्नि, आकाश, सूर्य अथवा अन्यत्र रत्नादि में अलौकिक लिङ्ग की पूजा करनी चाहिए, क्योंकि सबकुछ लिङ्गमय है और लिङ्ग में ही सब कुछ विद्यमान है।९३-९७।

तस्माल्लिंगेऽर्च्चयेदीशं यत्र क्वचन शाश्वतम् ।
अग्नौ क्रियावतामप्सु व्योम्नि सूर्ये मनीषिणाम् ॥९८

परमेश्वर रूप, शाश्वत, लिङ्ग की पूजा किसी भी स्थान में किया जा सकता है। क्रियावान व्यक्ति अग्नि और जल में तथा ज्ञानीजन आकाश और सूर्य में इसकी अर्चना करते हैं।९८

काष्ठादिष्वेव मूर्खाणां हृदि लिंगन्तु योगिनाम् ।
यद्यनुत्पन्नविज्ञानो विरक्तः प्रीतिसंयुतः ॥९९

यावज्जीवं जपेद्युक्तः प्रणवं ब्रह्मणो वपुः ।
अथवा शतरुद्रीयं जपेदामरणाद्द्विजः ॥१००

एकाकी यतचित्तात्मा स याति परमं पदम् ।
वसेच्चामरणाद्विप्रा वाराणस्यां समाहितः ॥१०१

सोऽपीश्वरप्रसादेन याति तत्परमम्पदम्[1] ।
तत्रोत्क्रमणकाले हि सर्वेषामेव देहिनाम् ॥१०२

ददाति परमं ज्ञानं येन मुच्येत बन्धनात् ।
वर्णाश्रमविधिं कृत्स्नं कुर्वाणो मत्परायणः ॥१०३

तेनैव जन्मना ज्ञानं लब्ध्वा याति शिवं पदम् ।
येऽपि तत्र वसन्तीह नीचा वै पापयोनयः ॥१०४

---

१. तत्परमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वे तरन्ति संसारमीश्वरानुग्रहाद् द्विजाः ।
किन्तु विघ्ना भविष्यन्ति पापोपहतचेतसाम् ॥१०५

अज्ञानी काष्ठादि वस्तुओं में तथा ज्ञानी अपने मन में ही लिङ्ग की पूजा कर लेते हैं। यदि विशिष्ट ज्ञान की उत्पत्ति न हो तो (सांसारिक भोगों से) उदासीन होकर, आनन्द पूर्वक, ईश्वर के शरीर रूपी ओङ्कार का अथवा शतरुद्रिय का जीवन भर जप करने से परम पद की प्राप्ति होती है। यदि कोई ब्राह्मण, अपने चित्त पर विजय प्राप्त कर, मृत्यु पर्यन्त काशीवास करे, तो उसे भी ईश्वर की कृपा से परम पद को प्राप्ति होती है। मृत्यु के समय, समस्त काशीवासियों को उस परम ज्ञान की प्राप्ति होती है; जिसके द्वारा मनुष्य (सांसारिक) बन्धन से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। जो मुझमें एकाग्रचित्त होकर, वर्णाश्रम धर्म के नियमों का भलीभाँति पालन करते हैं, वे इसी जन्म में आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर, शिवत्व की प्राप्ति कर लेते हैं। हे ब्राह्मणवृन्द ! काशी में रहकर, जो निम्न पापयोनि में निवास करते हैं वे ईश्वर के अनुग्रह से संसार को पार कर लेते हैं, परन्तु जिनका चित्त, पाप में लिप्त होता है, उनको संसार से तरने के लिए अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है।९९-१०५।

धर्मान्समाश्रयेत्तस्मान्मुक्तये संततं[1] द्विजाः ।
एतद्रहस्यं वेदानां न देयं यस्य कस्यचित् ॥१०६
धार्मिकायैव दातव्यं भक्ताय ब्रह्मचारिणे ।
इत्येतदुक्त्वा भगवान् शाश्वतो[2] योगमुत्तमम् ॥१०७

व्यास उवाच

व्याजहार समासीनं नारायणमनामयम् ।
मयैतद्भाषितं ज्ञानं हितार्थं ब्रह्मवादिनाम् ॥१०८

हे ब्राह्मणवृन्द ! मुक्ति के लिए, धर्म की शरण में आना चाहिए। वेदों के इस गुप्त ज्ञान को किसी और को नहीं केवल धर्म में आस्था रखने वाले तथा भक्त ब्रह्मचारियों को ही देना चाहिए।

व्यास बोले—इस प्रकार, शाश्वत योगश्रेष्ठ को बताकर भगवान् समीप बैठे हुए, निरामय नारायण से बोले कि मेरे द्वारा बताया गया यह ज्ञान ब्रह्मवादियों (विद्वानों) के लिए हितकारी है।१०६-१०८।

दातव्यं शान्तचित्तेभ्यः शिष्येभ्यो भवता शिवम् ।
उक्त्वैवमथ योगीन्द्रानब्रवीद्भगवानजः ॥१०९

---

१. नियतमिति पा०। २. आत्मयोगमनुत्तममिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिताय सर्वभक्तानां द्विजातीनां द्विजोत्तमाः ।
भवन्तोऽपि हि मज्ज्ञानं शिष्याणां विधिपूर्वकम् ॥११०

उपदेक्ष्यन्ति भक्तानां सर्वेषां वचनान्मम ।
अयं नारायणो योऽसावीश्वरो[1] नात्र संशयः ॥१११

शान्त मन वाले शिष्यों को भी यह कल्याणकारी ज्ञान दिया जा सकता है, अजन्मा भगवान् ने योगी श्रेष्ठों से कहा, हे ब्राह्मणवृन्द ! मैंने यह उपदेश सभी भक्तों और ब्राह्मणों के हित के लिए दिया है । आप सब यह ज्ञान सम्यक् रूप से अपने शिष्यों को प्रदान करेंगे । मेरे ही शब्दों में, मेरा यह उपदेश भक्तों को सुनायेंगे कि, यह नारायण है और यह महादेव, दोनों एक है, इसमें कोई सन्देह नहीं ।१०९-१११।

नान्तरं ये प्रपश्यन्ति तेषां देयमिदं परम् ।
ममैषा परमा मूर्तिर्नारायणसमाह्वया ॥११२

सर्वभूतात्मभूतस्था शान्ता चाक्षरसंस्थिता ।
येऽन्यथा मां प्रपश्यन्ति लोके भेददृशो जनाः ॥११३

न ते मुक्तिं प्रपश्यन्ति जायन्ते च पुनः पुनः ।
ये त्वेनं विष्णुमव्यक्तं माञ्च देवं महेश्वरम् ॥११४

एकीभावेन पश्यन्ति न तेषां पुनरुद्भवः ।
तस्मादनादिनिधनं विष्णुमात्मानमव्ययम् ॥११५

मामेव सम्प्रपश्यध्वं[2] पूजयध्वं तथैव च ।
येऽन्यथा सम्प्रपश्यन्ति[3] मत्त्वैवं देवतान्तरम् ॥११६

ते यान्ति नरकान् घोरान्नाहं तेषु व्यवस्थितः ।
मूर्खं वा पण्डितं वापि ब्राह्मणं वा मदाश्रयम् ॥११७

मोचयामि श्वपाकं वा न नारायणनिन्दकम् ।
तस्मादेष महायोगी मद्भक्तैः पुरुषोत्तमः ॥११८

अर्चनीयो नमस्कार्यो मत्प्रीतिजननाय वै ।
एवमुक्त्वा वासुदेवमालिंग्य स पिनाकधृक् ॥११९

अन्तर्हितोऽभवत्तेषां सर्वेषामेव पश्यताम् ।
नारायणोऽपि भगवांस्तापसं वेषमुत्तमम् ॥१२०

---

१. योऽहमीश्वरः इति पा० । २. सम्प्रपश्यतेति साधु । ३. मां प्रपश्यन्तीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जग्राह योगिनः सर्वांस्त्यक्त्वा वै परमं वपुः ।
ज्ञानं भवद्भिरमलं प्रसादात्परमेष्ठिनः ॥१२१

जो (नारायण और महादेव में) भेद नहीं देखते, उन्हें यह श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान करना चाहिए। नारायण नामक मेरी यह दिव्य मूर्ति, सभी प्राणियों की आत्मा में शान्त और अनश्वर रूप से विद्यमान रहता है। भेददर्शी मुझे भिन्न प्रकार से देखते हैं, उन्हें मुक्ति नहीं मिलती और वे बार-बार जन्म लेते रहते हैं। जो अदृश्य विष्णु और देव महेश्वर मुझे, अभिन्न रूप से देखते हैं, उन्हें पुनः जन्म नही लेना पड़ता। इस लिए अनादि निधन (स्वयम्भू) विष्णु और अनश्वर आत्मास्वरूप, मेरा दर्शन प्राप्त करो तथा मेरी पूजा करो। जो मेरे अतिरिक्त, अन्य देवताओं की अन्य प्रकार से देखते हैं, वे घोर नरकगामी होते हैं, मैं उन्हें व्यवस्थित नहीं करता। मूर्ख, पण्डित, ब्राह्मण अथवा चाण्डाल, जो नारायण निन्दक नहीं होते, जब मेरी शरण में आते हैं, तो मैं उन को भी मुक्ति प्रदान करता हूँ। अतः मेरे भक्तों को, मेरा स्नेह प्राप्त करने के लिए, महान्‌योगी, पुरुषोत्तम की पूजा करनी चाहिए तथा नमस्कार भी करना चाहिए। यह कहकर भगवान् शंकर, कृष्ण का आलिङ्गन कर, सबके देखते ही देखते अन्तर्धान हो गए और भगवान् विष्णु ने अलौकिक शरीर को त्याग कर, श्रेष्ठ तपस्वी वेश धारण करके योगीवृन्द से बोले—जगदीश्वर की कृपा से आपलोगों को पवित्र ज्ञान की प्राप्ति हुई ।११२-१२१।

साक्षाद्देवमहेशस्य ज्ञानं संसारनाशनम् ।
गच्छध्वं विज्वराः सर्वे विज्ञानं परमेष्ठिनः ॥१२२
प्रवर्त्तयध्वं शिष्येभ्यो धार्मिकेभ्यो मुनीश्वराः ।
इदं भक्ताय शान्ताय धार्मिकायाहिताग्नये ॥१२३
विज्ञानमैश्वरं देयं ब्राह्मणाय विशेषतः ।
एवमुक्त्वा स विश्वात्मा योगिनां योगवित्तमः[1] ॥१२४
नारायणो महायोगी जगामादर्शनं स्वयम् ।
ऋषयस्तेऽपि[2] देवेशं नमस्कृत्य महेश्वरम् ॥१२५
नारायणञ्च भूतादिं स्वानि स्थानानि लेभिरे ।

साक्षात् देव महेश्वर से संसारनाशक ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् हे मुनि-श्रेष्ठ ! आप सब विषयी होकर जाएँ और धार्मिक शिष्यों को, परमेश्वर के विशिष्ट ज्ञान के प्रति प्रवृत्त करें। भक्त, शान्त, धार्मिक और अग्निहोत्री ब्राह्मण को ही

---

१. योगमुत्तममिति पा०। २. तेऽपि देवाधिदेवेशमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषरूप से ईश्वरीय ज्ञान प्रदान करना चाहिए। यह कहकर संसार के आत्मास्वरूप, योगियों में श्रेष्ठ, महायोगी नारायण अन्तर्धान हो गए। ऋषिवृन्द भी भगवान् शंकर और प्राणियों के आदिस्वरूप नारायण को प्रणाम कर, अपने-अपने स्थान को चले गए ।१२२-१२५½।

सनत्कुमारो भगवान् संवर्त्ताय महामुनिः ॥१२६
दत्तवानैश्वरं ज्ञानं सोऽपि सत्यत्वमाययौ[1] ।
सनन्दनोऽपि योगीन्द्रः पुलहाय[2] महर्षये ॥१२७
प्रददौ गौतमायाथ पुलहोऽपि प्रजापतिः ।
अङ्गिरा वेदविदुषे भारद्वाजाय दत्तवान् ॥१२८
जैगीषव्याय कपिलस्तथा पञ्चशिखाय च ।
पराशरोऽपि सनकात्पिता मे सर्वतत्त्वदृक् ॥१२९
लेभे तत्परमं ज्ञानं तस्माद्वाल्मीकिराप्तवान् ।
ममोवाच पुरा देवः सतीदेहभवाङ्गजः ॥१३०
वामदेवो महायोगी रुद्रः कालपिनाकधृक्[3] ।
नारायणोऽपि भगवान्देवकीतनयो हरिः ॥१३१
अर्जुनाय स्वयं साक्षाद्दत्तवानिदमुत्तमम् ।

महामुनि भगवान् सनत्कुमार ने प्रलय काल में, यह ईश्वरीय ज्ञान प्रदान कर मुक्ति प्राप्त की थी। मुनिश्रेष्ठ सनन्द ने महर्षि पुलह को, प्रजापति पुलह ने गौतम को, अङ्गिरा ने वेदज्ञ, भारद्वाज को, कपिल मुनि ने जैगीषव्य और पञ्चशिख को यह ज्ञान प्रदान किया था। मेरे पिता सर्वतत्त्वद्रष्टा पराशर मुनि ने सनक से और बाल्मीकि ने मेरे पिता से वह परम ज्ञान प्राप्त किया। सती के देह और शिव के अंग से उत्पन्न, कालपिनाक धनुषधारी, रुद्रस्वरूप, महायोगी वामदेव ने पहले मुझे यह ज्ञान प्रदान किया था। देवकीपुत्र नारायण हरि ने, अर्जुन को, स्वयं इस श्रेष्ठ ज्ञान का दान किया था ।१२६-१३१½।

यदाहं लब्धवान्रुद्राद्वामदेवादनुत्तमम् ॥१३२
विशेषाद्गिरिशे भक्तिस्तस्मादारभ्य मेऽभवत् ।
शरण्यं गिरिशं रुद्रं प्रपन्नोऽहं विशेषतः ॥१३३
भूतेशं गिरिशं स्थाणुं देवदेवं त्रिशूलिनम् ।
भवन्तोऽपि हि तं देवं शम्भुं गोवृषवाहनम् ॥१३४

---

१. सत्यव्रताय तु इति पा०। २. पुलस्त्यायेति पा०। ३. किलेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रपद्यन्तां सपत्नीकाः सपुत्राः शरणं शिवम् ।
वर्त्तध्वं तत्प्रसादेन कर्मयोगेन शंकरम् ॥१३५
पूजयध्वं महादेवं गोपतिं व्यालभूषणम् ।

जिस दिन मैंने रुद्र वामदेव से यह अद्वितीय ज्ञान प्राप्त किया, उसी दिन से महादेव के प्रति, मेरे विशेष भक्ति का उदय हुआ। मैंने भूतनाथ, गिरीश, स्थाणु, देवाधिदेव, त्रिशूली, रुद्र का आश्रय विशेष रूप से ग्रहण किया। आपलोग भी पत्नी और पुत्र सहित गोवृषवाहन, देव शम्भु शिव का आश्रय ग्रहण कीजिए। कर्मयोग के अनुसार शंकर महादेव का सहारा लेकर अपनी जीवन यात्रा पूरी कीजिए और गोपति, सर्वभूषण महादेव की पूजा कीजिए ।१३२-१३५½।

एवमुक्ते पुनस्ते तु शौनकाद्या महेश्वरम् ॥१३६
प्रणेमुः शाश्वतं स्थाणुं व्यासं सत्यवतीसुतम् ।
अब्रुवन् हृष्टमनसः कृष्णद्वैपायनं प्रभुम्[1] ॥१३७
साक्षाद्देवं हृषीकेशं शिवं लोकमहेश्वरम् ।
भवत्प्रसादादचला शरण्ये गोवृषध्वजे ॥१३८
इदानीं जायते भक्तिर्या देवैरपि दुर्लभा[2] ।
कथयस्व मुनिश्रेष्ठ कर्मयोगमनुत्तमम् ॥१३९
येनासौ भगवानीशः समाराध्यो मुमुक्षुभिः ।

व्यास के ऐसा कहने पर, शौनकादि मुनियों ने सनातन, स्थाणु, महेश्वर और सत्यवतीपुत्र व्यास को पुनः प्रणाम किया और प्रसन्न होकर कृष्णद्वैपायन व्यास से बोले—आपकी कृपा से साक्षात् देव ऋषिकेश, शिव, लोकमहेश्वर, शरणागत वत्सल, गोवृषध्वज के प्रति हमलोगों की जो भक्ति हुई है, वह देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। हे मुनिश्रेष्ठ! मोक्ष पाने के अभिलाषी व्यक्ति, जिसके द्वारा भगवान् शंकर की आराधना करते हैं, उस श्रेष्ठ कर्मयोग को बताइये ।१३६-१३९½।

त्वत्सन्निधावेव सूतः शृणोतु भगवद्वचः ॥१४०
तद्वच्चाखिललोकानां रक्षणं धर्मसंग्रहम् ।
यदुक्तं देवदेवेन विष्णुना कूर्मरूपिणा ॥१४१
पृष्टेन मुनिभिः सर्वं शक्रेणामृतमन्थने ।
श्रुत्वा सत्यवतीसूनुः कर्मयोगं सनातनम् ॥१४२

---

१. मुनिमिति । २. वल्लभेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनीनां भाषितं कृत्स्नं प्रोवाच सुसमाहितः ।
य इमं पठते नित्यं संवादं कृत्तिवाससः ॥१४३
सनत्कुमारप्रमुखैः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
श्रावयेद्वा द्विजान् शुद्धान् ब्रह्मचर्यपरायणान् ॥१४४
यो वा विचारयेदर्थं स याति परमाङ्गतिम् ।
यश्चैतच्छृणुयान्नित्यं भक्तियुक्तो दृढव्रतः ॥१४५
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके महीयते ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पठितव्यो मनीषिभिः ॥१४६
श्रोतव्यश्चानुमन्तव्यो[1] विशेषाद्ब्राह्मणैः सदा ॥१४७

अमृत मन्थन के समय मुनियों और इन्द्रादि देवताओं द्वारा पूछे जाने पर देवाधिदेव कूर्म रूपी विष्णु ने निखिल ब्रह्माण्ड की रक्षा और धर्मसंग्रह के निमित्त जिस कर्मयोग का वर्णन किया था, हे सूत ! आपके सान्निध्य में रहकर हम वही ईश वचन सुनेंगे। मुनियों से ऐसा सुनकर सत्यवती पुत्र (व्यास) भलीभाँति एकाग्र चित्त होकर मुनियों से बोले—जो व्यक्ति सदा सनत्कुमारादि से यह महादेव संवाद सुनता है, वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है। जो ब्रह्मनिष्ठ और पवित्र ब्राह्मणों को यह संवाद सुनाता है अथवा इसके अर्थ पर विचार करता है, उसे परम गति की प्राप्ति होती है। जो भक्तिभाव से, दृढ़व्रती होकर, नित्य इस संवाद को सुनता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर, स्वर्ग में निवास करता है। इसलिए ज्ञानियों और विशेष रूप से ब्राह्मणों को सदा इस शिव संवाद का पाठ, श्रवण और मनन करना चाहिए।१४०-१४७।

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ईश्वरगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे एकादशोऽध्यायः ॥११॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, ईश्वरगीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या-योगशास्त्र के वर्णन प्रसंग में ऋषि व्यास संवाद नामक—ग्यारहवाँ अध्याय समाप्त ॥११॥

●

१. श्रोतव्यश्चाथेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वादशोऽध्यायः

अथ व्यासगीताकथनम्

व्यास उवाच

शृणुध्वमृषयः सर्वे वक्ष्यमाणं[1] सनातनम् ।
कर्मयोगं ब्राह्मणानामात्यन्तिकफलप्रदम् ॥१

व्यास बोले—हे ऋषिवृन्द ! ब्राह्मणों के लिए अत्यन्त फलप्रदायक, सनातन कर्मयोग का वर्णन किया जा रहा है आप सब सुनें ।१

आम्नायसिद्धमखिलं ब्राह्मणानां[2] प्रदर्शितम् ।
ऋषीणां शृण्वतां पूर्वं मनुराह प्रजापतिः ॥२
सर्वपापहरं पुण्यमृषिसङ्घैर्निषेवितम् ।
समाहितधियो यूयं शृणुध्वं गदतो मम ॥३

पहले प्रजापति मनुने, सुनने के लिए उद्ग्रीव ऋषिवृन्दों के समीप, ब्रह्मा द्वारा बताए गए, जिस वेदोक्त अखिल कर्मयोग का पारायण किया था, मैं ऋषियों द्वारा सेवित, समस्त पापों का नाश करने वाले, इस पवित्र कर्मयोग को बताने जा रहा हूँ, आप सब एकाग्रचित्त होकर सुनें ।२-३।

कृतोपनयनो वेदानधीयीत द्विजोत्तमाः ।
गर्भाष्टमेऽष्टमे वाब्दे स्वसूत्रोक्तविधानतः[3] ॥४
दण्डी च मेखली सूत्री कृष्णाजिनधरो मुनिः ।
भिक्षाचारी[4] ब्रह्मचारी स्वाश्रमे निवसन् सुखम् ॥५

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! आठ वर्ष की आयु में अपने-अपने गृह्य-सूत्रों में वर्णित विधानों के अनुसार यज्ञोपवीत संस्कार में संस्कृत होकर, दण्ड, मेखला, यज्ञोपीत और काले मृग का चर्म धारण कर, मुनिव्रत और ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए, भिक्षाटन कर निर्वाह करना चाहिए तथा ब्रह्मचर्याश्रम के सुखों का अनुभव करते हुए, समस्त वेदों का अध्ययन—करना चाहिए ।४-५।

---

१. ब्रह्मयोगमिति पा० । २. ब्रह्मणा तूपदर्शितमिति पा० । ३. स्वगृह्योक्तेति पा० । ४. भिक्षाहारो गुरुहितो वीक्षमाणो गुरोर्मुखमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्पासमुपवीतार्थं निर्मितं ब्रह्मणा पुरा ।
ब्राह्मणानां त्रिवृत्सूत्रं कौशं वा वस्त्रमेव वा ॥६

ब्राह्मणों के लिए, ब्रह्मा द्वारा यह यज्ञोपवीत कपास से बनाया गया है, इसके अतिरिक्त नियमानुसार कुश अथवा उनसे निर्मित यज्ञोपवीत को धारण करने का भी, इन्हें अधिकार है, किन्तु यज्ञोपवीत सदैव, त्रिगुणारोपित सूत्रों से निर्मित होना चाहिए ।६

सदोपवीती चैव स्यात्सदा बद्धशिखो द्विजः ।
अन्यथा यत्कृतं कर्म तद्भवत्ययथाकृतम् ॥७

ब्राह्मणों को सदैव यज्ञोपवीत धारण कर शिखा बाँधकर रखनी चाहिए। यज्ञोपवीत धारण किए बिना, तथा शिखा बाँधे बिना, किए हुए कर्मों का उन्हें फल नहीं मिलता ।७

वसेदविकृतं वासः कार्पासं वा कषायकम् ।
तदेव परिधानीयं शुक्लमच्छिद्रमुत्तमम् ॥८

उत्तम कोटि का, बिना कटा हुआ, श्वेत कपास या कौषेय वस्त्र (रेशमी वस्त्र), रूप परिवर्तन किए बिना (अर्थात् उन्हें सिले बिना, केवल थान के रूप में) धारण करना चाहिए ।८

उत्तरन्तु समाख्यातं वासः कृष्णाजिनं शुभम् ।
अभावे दिव्यमजिनं रौरवं वा विधीयते ॥९

कृष्ण वर्ण का मृगचर्म, ब्राह्मणों के लिए उत्तम उत्तरीय माना जाता है। कृष्णाजिन के अभाव में उत्कृष्ट कोटि का मृगचर्म या रुरुचर्म (मृगविशेष की छाल) भी उत्तरीय के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है ।९

उद्धृत्य दक्षिणं बाहुं सव्ये[1] बाहौ समर्पितम् ।
उपवीतं भवेन्नित्यं निवीतं कण्ठसज्जने[2] ॥१०
सव्यं बाहुं समुद्धृत्य दक्षिणे तु धृतं द्विजाः ।
प्राचीनावीतमित्युक्तं पैत्रे कर्मणि योजयेत् ॥११

दाहिने हाथ के नीचे से ले जाकर, बायें कन्धे पर स्थित यज्ञोपवीत का नाम उपवीत, है तथा गले में स्थित यज्ञोपवीत का नाम निवीत, बाएँ हाथ के नीचे से ले जाकर, दाहिने कन्धे पर स्थित यज्ञोपवीत का नाम प्राचीनावीत है। श्राद्ध या पितरों को तर्पण करते समय प्राचीनावीती होना पड़ता है ।१०-११।

---

१. सव्यबाहाविति पा० । २. विधिरेष सनातन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्न्यगारे गवां गोष्ठे होमे जप्ये तथैव च ।
स्वाध्याये भोजने नित्यं ब्राह्मणानाञ्च सन्निधौ ॥१२
उपासने गुरूणाञ्च सन्ध्ययोः साधुसंगमे ।
उपवीती भवेन्नित्यं विधिरेष सनातनः ॥१३

अग्निशाला और गौशाला में, हवन, जप. वेदाध्ययन और भोजन करते समय, ब्राह्मणों के सान्निध्य में, गुरु और सन्ध्योपासना के समय तथा साधुओं के सान्निध्य में सदा उपवीती होना चाहिए। यही ब्राह्मण का सनातन धर्म है।१२-१३।

मौञ्जी त्रिवृत्समा श्लक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला ।
कुशेन[1] निर्मिता विप्रा ग्रन्थिनैकेन वा त्रिभिः ॥१४

ब्राह्मण को मूंज से बनी हुई, त्रिगुणित और बराबर मेखला बनानी चाहिए। मूंज न रहने पर, कुश से एक या तीन गाँठों वाली मेखला बनानी चाहिए ।१४

धारयेद्बैल्वपालाशौ दण्डौ केशान्तकौ द्विजः ।
यज्ञार्हं वृक्षजं वाथ सौम्यमव्रणमेव च ॥१५

ब्राह्मण केश के अग्र भाग तक लम्बा सुन्दर तथा छेद रहित, बेल या पलाश का दण्ड अथवा यज्ञ में प्रयुक्त होने वाले किसी भी वृक्ष का दण्ड धारण कर सकता है।१५

सायं प्रातर्द्विजः संध्यामुपासीत समाहितः ।
कामाल्लोभाद्भयान्मोहात्त्यक्त्वैनां पतितो भवेत् ॥१६

ब्राह्मण को प्रतिदिन एकाग्रचित्त होकर प्रातः और सांध्य वन्दन करना चाहिए। काम, लोभ, भय तथा मोहवश सन्ध्या वन्दन न करने से वह पतित होता है ।१६

अग्निकार्यं ततः कुर्यात्सायम्प्रातर्यथाविधि[2] ।
स्नात्वा सन्तर्पयेद्देवान्ऋषीन् पितृगणांस्तथा ॥१७

विधि के अनुसार प्रातः तथा सन्ध्या समय अग्निहोत्र यज्ञ करना चाहिए। प्रातः काल स्नान के उपरान्त अग्निहोत्र यज्ञ करके तदनन्तर देवता, ऋषि और पितरों का तर्पण करना चाहिए ।१७

देवताभ्यर्चनं कुर्यात्पुष्पैः पत्रेण चाम्बुना ।
अभिवादनशीलः स्यान्नित्यं वृद्धेषु धर्मतः ॥१८

तर्पणोपरान्त पत्र, पुष्प और जल से देवताओं की पूजा समाप्त करके धर्म के अनुसार गुरुजनों को प्रणाम करना चाहिए ।१८

---

१. मुञ्जाभावे कुशेनाहरिति पा० । २. प्रसन्नधीरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असावहं भो नामेति सम्यक् प्रणतिपूर्वकम् ।
आयुरारोग्यसान्निध्यं[1] द्रव्यादिपरिवर्जितम् ॥१९

धन सम्पत्ति की कामना किए बिना, केवल आयु और स्वास्थ्य की कामना के साथ भलीभाँति प्रणाम करते हुए 'अभिवादयेऽहमुकशर्म्माऽहमस्मि भोः' अर्थात् 'मैं अमुक शर्मा, आपको प्रणाम करता हूँ" इस प्रकार ब्राह्मण को अभिवादन वाक्य कहना होगा ।१९

आयुष्मान् भव सौम्येति वाच्यो विप्रोऽभिवादने ।
अकारश्चास्य नाम्नोऽन्ते वाच्यः पूर्वाक्षरप्लुतः ॥२०

प्रणाम किया जाने वाला ब्राह्मण भी, प्रणाम करने वाले ब्राह्मण को "आयुष्मान् भव सोम्यामुकशर्म्मन्" अर्थात् हे अमुक शर्मा, तुम दीर्घायु प्राप्त करो, यह वाक्य कहकर पलट कर प्रणाम करके, प्रणाम करने वाले ब्राह्मण के नाम के अन्त में स्थित अकारादि स्वर वर्ण का और उसके (अकारादि स्वर वर्ण के) न रहने पर अन्तिम वर्ण के ठीक पहले स्थित स्वर वर्ण का संक्षेप में उच्चारण करेगा ।२०

न[2] कुर्याद्योऽभिवादस्य द्विजः प्रत्यभिवादनम् ।
नाभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस्तथैव सः ॥२१

प्रणाम करने से जो प्रत्युत्तर न दे, विद्वानों को उसे फिर कभी प्रणाम नहीं करना चाहिए, क्योंकि वह शूद्र के समान होता है ।२१

विन्यस्तपाणिना[3] कार्यमुपसंग्रहणं गुरोः ।
सव्येन सव्यः स्प्रष्टव्यो दक्षिणेन तु दक्षिणः ॥२२

गुरु का चरण स्पर्श करना हो तो अत्यन्त तत्परता के साथ दाहिने हाथ से दायाँ और बाएँ हाथ से बायाँ चरण स्पर्श करना चाहिए ।२२

लौकिकं वैदिकञ्चापि तथाध्यात्मिकमेव वा
आददीत यतो ज्ञानं तं पूर्वमभिवादयेत् ॥२३

लौकिक, वैदिक या आध्यात्मिक, सभी प्रकार का ज्ञान जिससे प्राप्त करना हो, सबसे पहले उसी (गुरु) की वन्दना करनी चाहिए ।२३

नोदकं धारयेद्भैक्ष्यं पुष्पाणि समिधं तथा ॥
एवंविधानि चान्यानि न दैवाद्येषु कर्मसु ॥२४

---

१. सिद्धार्थमिति, आयुरारोग्यमन्विच्छन्निति पा० । २. येन वेत्यभिवादस्येति पा० । ३. सव्यस्तपाणिनेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैवी कार्यों में जल, भोजन योग्य वस्तु, पुष्प. समिधा और उपर्युक्त वस्तुओं के समान अन्य कोई भी वस्तु ग्रहण नहीं करना चाहिए।२४

ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत्क्षत्रबन्धुमनामयम्।
वैश्यं क्षेमं समागत्य शूद्रमारोग्यमेव च ॥२५

एक दूसरे के साथ साक्षात्कार होने पर ब्राह्मण से 'कुशल' क्षत्रिय से 'अनामय' वैश्य से 'क्षेम' तथा शूद्र से 'आरोग्य' कहकर, उसका हाल पूछना चाहिए।२५

उपाध्यायः पिता ज्येष्ठो भ्राता चैव महीपतिः।
मातुलः श्वशुरश्चैव मातामहपितामहौ ॥२६
वर्णज्येष्ठः पितृव्यश्च सर्वे[1] ते गुरवः स्मृताः।

उपाध्याय, पिता, बड़े भाई, राजा, मामा, ससुर, नाना, दादा, ब्राह्मण और पिता के भाई (ताऊ या चाचा), इन सभी को गुरु माना गया है।२६½

माता मातामही गुर्वी पितुर्मातुश्च सोदराः ॥२७
श्वश्रूः पितामही ज्येष्ठा भ्रातृजाया[2] गुरुस्त्रियः।

माता, नानी, गुरुपत्नी, पिता की बहन (बुआ), माता की बहन (मौसी), सास, दादी और बड़ी भाभी, इन सभी स्त्रियों को गुरुजन कहा गया है।२७½

इत्युक्तो गुरुवर्गोऽयं मातृतः पितृतस्तथा[3] ॥२८
अनुवर्त्तनमेतेषां मनोवाक्कायकर्मभिः।

उपर्युक्त समस्त गुरुजनों को गुरुवर्ग कहा जाता है। गुरुवर्ग दो प्रकार का होता है—मातृवर्ग और पितृवर्ग। मन, वचन, कर्म और शरीर द्वारा इनकी आज्ञा का पालना करना चाहिए।२८½

गुरुं दृष्ट्वा समुत्तिष्ठेदभिवाद्य कृताञ्जलिः ॥२९
नैतैरुपविशेत्सार्द्धं विवदेतार्थकारणात्[4]।

गुरु का दर्शन होने पर प्रणाम करके, हाथ जोड़कर खड़े रहना चाहिए। गुरु के साथ एक आसन पर नहीं बैठना चाहिए तथा प्रयोजन होने पर भी गुरु से कलह नहीं करना चाहिए।२९½

जीवितार्थमपि द्वेषाद्गुरुभिर्नैव भाषणम् ॥३०½
उदितोऽपि गुणैरन्यैर्गुरुद्वेषी पतत्यधः।

---

१. पुंसोऽत्रेति पा०। २. धात्री च गुरवः इति पा०। ३. पितृतो द्विजाः इति पा०। ४. विवदेन्नात्र कारणादिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने जीवन के निमित्त भी कोई बात गुरु से वैरभाव से ग्रस्त होकर नहीं करनी चाहिए। गुरु से वैर रखने वाला व्यक्ति, अन्यान्य गुणों से सम्पन्न होने पर भी नरक को जाता है।३०

गुरूणामपि सर्वेषां पूज्याः पञ्च विशेषतः ॥३१
तेषामाद्यास्त्रयः श्रेष्ठास्तेषां माता सुपूजिता ।

गुरु, सभी प्रकार के पूजनीय होते हैं। उनमें भी निम्नलिखित पांच प्रकार के गुरु विशेष रूप से पूजनीय होते हैं—उनमें भी प्रथम तीन सर्वाधिक श्रेष्ठ होते है तथा माता को सबकी तुलना में आराध्य कहा गया है।३१½

यो भावयति यः सूते येन विद्योपदिश्यते ॥३२
ज्येष्ठो भ्राता च भर्त्ता च पञ्चैते गुरवः स्मृताः ।

पिता, माता, अध्यापक, बड़े भाई और पति, इन पांचों को, उपर्युक्त पांच गुरुओं में गिना गया है।३२½

आत्मनः सर्वयत्नेन प्राणत्यागेन वा पुनः ॥३३
पूजनीया विशेषेण पञ्चैते भूतिमिच्छता ।

हित की कामना करने वाला व्यक्ति, अत्यन्त यत्नपूर्वक अथवा प्राण विसर्जित करके भी, उपर्युक्त पांच गुरुओं की पूजा करता है।३३½

यावत्पिता च माता च द्वावेतौ निर्विकारिणौ ॥३४
तावत्सर्वं परित्यज्य पुत्रः स्यात्तत्परायणः ।

जब तक माता पिता में वैरांग्य न उत्पन्न हो जाय, तब तक पुत्र को चाहिए कि वह अपने-सारे कर्मों का त्याग कर उनकी सेवा करे।३४½

पिता माता च सुप्रीतौ स्यातां पुत्रगुणैर्यदि ॥३५
स पुत्रः सकलं धर्ममाप्नुयात्तेन कर्मणा ।

यदि पुत्र के गुणों से माता-पिता सन्तुष्ट हो जाएं, तो माता-पिता की सेवा रूपी कर्म से ही पुत्र को सारे धर्मों की प्राप्ति हो जाती है।३५½

नास्ति मातृसमो[1] देवो नास्ति तातसमो गुरुः ॥३६
तयोः प्रत्युपकारो हि न कथञ्चन विद्यते ।

संसार में माता के समान देवता और पिता के समान गुरु नहीं है। इनके उपकार का बदला किसी भी कर्म के द्वारा चुकाया नहीं जा सकता।३६½

---

१. मातृसमं दैवमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तयोर्नित्यं प्रियं कुर्यात्कर्मणा मनसा गिरा ॥३७½
न ताभ्यामननुज्ञातो धर्ममन्यं समाचरेत्[1] ।

मनसा, वाचा, कर्मणा उन्हीं कर्मों को करना चाहिए जो माता पिता को प्रिय लगे, उनकी आज्ञा के बिना दूसरा कोई धार्मिक कार्य भी नहीं करना चाहिए ।३७½

वर्ज्जयित्वा मुक्तिफलं नित्यं नैमित्तिकं तथा ॥३८
धर्मसारः समुद्दिष्टः प्रेत्यानन्तफलप्रदः[2] ।

मुक्ति प्रदान करने वाले और नित्य नैमित्तिक कर्मों को छोड़, सारे कर्मों का परित्याग करके भी माता-पिता को प्रिय लगने वाले कर्म ही करने चाहिए । ऐसे आचरण को, परलोक में असीम फलप्रदायी और धर्मों का सार कहा गया है ।३८½

सम्यगाराध्य वक्तारं विसृष्टस्तदनुज्ञया ॥३९
शिष्यो विद्याफलं भुङ्क्ते प्रेत्य वा पूज्यते दिवि ।

गुरु की आज्ञा पाकर, अपने घर को लौटा हुआ शिष्य, विद्या के फल का सेवन तो करता ही है अपितु परलोक में स्वर्ग भी प्राप्त करता है ।३९½

यो भ्रातरं पितृसमं ज्येष्ठं मूर्खोऽवमन्यते ॥४०
तेन दोषेण स प्रेत्य निरयं घोरमृच्छति ।

जो मूर्ख, पिता तुल्य जेठे भाई का अपमान करता है, अपने इस अपराध के कारण परलोक में उसे नरक भोगना पड़ता है ।४०½

पुंसां वर्त्मनि तिष्ठेत[3] पूज्यो भर्त्ता च सर्वदा ॥४१
अपि मातरि लोकेऽस्मिन्नुपकाराद्धि गौरवम् ।

स्त्रियों को सदा पुरुष का अनुसरण करना चाहिए । पति सदैव उनके लिए पूजनीय होता है । मनुष्य को माता के हित साधन में संलग्न रहना चाहिए, इससे इस संसार में सम्मान मिलता है ।४१½

ये नरा भर्तृपिण्डार्थं स्वान्प्राणान् सन्त्यजन्ति हि ॥४२
तेषामथाक्षयाँल्लोकान् प्रोवाच भगवान्मनुः ।

जो मनुष्य स्वामी का पिण्डदान करने के लिए प्राण त्याग देते हैं, उनका वास स्वर्गलोक में होता है । ऐसा भगवान् मनु का कहना है ।४२½

मातुलांश्च पितृव्यांश्च श्वशुरानृत्विजो गुरून् ॥४३
असावहमिति ब्रूयुः प्रत्युत्थाय यवीयसः ।

---

१. समाश्रयेदिति पा० । २. प्रेत्यानन्देति पा० । ३. चेष्टेतेति पा० । ४. यद्यप्येते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मामा, पिता के भाई, ससुर; पुरोहित और गुरु यदि आयु में छोटे हों तो खड़े रहकर 'असावहं' अर्थात् 'मैं अमुक व्यक्ति हूँ' कहना चाहिए।४३½

अवाच्यो दीक्षितो नाम्ना यवीयानपि यो भवेत् ॥४४
भो भवत्पूर्वकत्वेन अभिभाषेत धर्मवित् ।

यज्ञ में दीक्षित व्यक्ति आयु में छोटा होने पर भी धार्मिक व्यक्ति होता है। अतः उनका नाम लेकर सम्बोधन न करके 'भो भवत्' यह कहकर सम्बोधन करना चाहिए।४४

अभिवाद्यश्च पूज्यश्च शिरसा वन्द्य एव च ॥४५
ब्राह्मणः क्षत्रियाद्यैश्च श्रीकामैः सादरं सदा ।

लक्ष्मी की कामना करने वाले क्षत्रियादि वर्गों के व्यक्तियों को सदैव ब्राह्मणों को प्रणाम करना चाहिए, उनकी-पूजा करनी चाहिए तथा माथे से उनको वन्दना करनी चाहिए।४५½

नाभिवाद्यास्तु विप्रेण क्षत्रियाद्याः कथञ्चन ॥४६
ज्ञानकर्मगुणोपेता ये यजन्ति बहुश्रुताः ।

क्षत्रियादि तीनों वर्गों के लोगों को ब्राह्मण कभी प्रणाम नहीं करेंगे। उनमें से यदि कोई बहुशास्त्रविद् महान् पण्डित, ज्ञानी और शास्त्रों के अनुसार कर्मों का अनुष्ठान करने वाला तथा गुणी हो, वह भी ब्राह्मण द्वारा पूजनीय नहीं होगा।४६½

ब्राह्मणः सर्ववर्णानां स्वस्ति कुर्यादिति श्रुतिः ॥४७
सवर्णेषु सवर्णानां काम्यमेवाभिवादनम् ।

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्णों को ब्राह्मण आशीर्वाद देगा, सवर्ण को सवर्ण प्रणाम कर सकता है।४७½

गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः ॥४८
पतिरेव गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः ।

ब्राह्मणों का गुरु अग्नि है और ब्राह्मण सारे वर्णों का गुरु है। पतिपत्नी का गुरु है परन्तु अतिथि सभी का गुरु है।४८½

विद्या कर्म तपो बन्धुर्वित्तं भवति पञ्चमम् ॥४९
मान्यस्थानानि पञ्चाहुः पूर्वं पूर्वं गुरूत्तरात् ।

विद्या कर्म, आयु, मित्र और धन, ये पाँचों सम्माननीय होते हैं। उनमें भी क्रमशः पूर्व, पर से श्रेष्ठ माने गए हैं।४९½

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतानि[1] त्रिषु वर्णेषु भूयांसि बलवन्ति च ॥५०
यत्र स्युः सोऽत्र मानार्हः शूद्रोऽपि दशमीं गतः ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यादि तीनों वर्णों में विद्या, कर्म, आयु, मित्र और धन में कोई एक भी यदि किसी में अधिक मात्रा में हो, वही अधिक सम्माननीय होगा। इसलिए ९० वर्ष का वृद्ध शूद्र भी सम्मान का पात्र है ।५०½

पन्था देयो ब्राह्मणाय स्त्रियै राज्ञे ह्यचक्षुषे ॥५१
वृद्धाय भारभुग्नाय[2] रोगिणे दुर्बलाय च ।

(मार्ग पर) चलते समय ब्राह्मण, राजा, अन्धे, स्त्री, रोगी, बोझा ढोने वाले वृद्ध और कमजोर व्यक्तियों को पहले जाने का अवसर देने के लिए मार्ग से परे हट जाना चाहिए ।५१½

भिक्षामाहृत्य शिष्टानां[3] गृहेभ्यः प्रयतोऽन्वहम् ॥५२
निवेद्य गुरवेऽश्नीयाद्वाग्यतस्तदनुज्ञया[4] ।

प्रतिदिन सभ्य व्यक्ति के घर से, पवित्र होकर भिक्षा मांगना चाहिए और मांगी हुई भिक्षा गुरु को समर्पित कर देना चाहिए, तत्पश्चात् गुरु का आदेश-प्राप्त करने के बाद मौन होकर भोजन करना चाहिए ।५२½

भवत्पूर्वं चरेद्भैक्ष्यमुपनीतो द्विजोत्तमः ॥५३
भवन्मध्यं तु राजन्यो वैश्यस्तु भवदुत्तरम् ।

यज्ञोपवीत धारण करने वाले ब्राह्मण ब्रह्मचारी 'भवत्' शब्द पहले लगाकर भिक्षा याचना करेंगे (अर्थात् 'भवति भिक्षां देहि' कहेंगे) यज्ञोपवीती क्षत्रिय बीच में भवत् शब्द लगाकर भिक्षा याचना करेंगे (अर्थात् 'भिक्षां भवति देहि' कहेंगे) और यज्ञोपवीती वैश्य अन्त में भवत् शब्द का उच्चारण कर भिक्षा याचना करेंगे (अर्थात् भिक्षां देहि भवति' कहेंगे) ।५३½

मातरं वा स्वसारं वा मातुर्वा भगिनीं निजाम् ॥५४
भिक्षेत भिक्षां प्रथमं या चैनं न विमानयेत् ।

माता, बहन, माता की सगी बहन अथवा ऐसी स्त्री जो ब्रह्मचारी को खाली हाथ लौटाकर उसको अपमानित नहीं करेंगी, उससे सबसे पहले भिक्षा याचना करनी चाहिए ।५४½

---

१. पञ्चानामिति पा० । २. भग्नायेति, मग्नाय इति पा० । ३. शिष्याणामिति, सृष्टानामिति पा० । ४. वाग्यत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वजातीयगृहेष्वेव सार्ववर्णिकमेव वा ॥५५
भैक्ष्यस्य[1] चरणं युक्तं पतितादिषु[2] वर्ज्जितम् ।

अपनी जाति के लोगों के घर से भिक्षा मांगकर लानी चाहिए। वहाँ भिक्षा न मिलने पर अन्य सभी वर्णों के पास भिक्षा मांगा जा सकता है। परन्तु पतित व्यक्ति से कभी भिक्षा नहीं मांगनी चाहिए।

वेदयज्ञैरहीनानां प्रपन्नानां[3] स्वकर्मसु ॥५६
ब्रह्मचारी हरेद्भैक्ष्यं गृहेभ्यः प्रयतोऽन्वहम् ।

वेदों के ज्ञाता, यज्ञादि सम्पन्न करने वाले और अपनी जाती के अनुसार कर्मों का सम्पादन करने वाले व्यक्ति के पास ब्रह्मचारी को प्रतिदिन पवित्र होकर भिक्षा मांगनी चाहिए।५६½

गुरोः कुले न भिक्षेत न ज्ञातिकुलबन्धुषु ॥५७
अलाभे त्वन्यगेहानां पूर्वं पूर्वं विवर्ज्जयेत् ।

गुरु, सगे सम्बन्धी, मामा और मित्र के परिवार से ब्रह्मचारी को भिक्षा नहीं मांगनी चाहिए। भिक्षा माँगने योग्य अन्य गृहस्थ न मिलने पर उपरीक्त पूर्व कुलों को छोड़कर परवर्ती मामा आदि के परिवार से भिक्षा मांग लेनी चाहिए।५७½

सर्वं वा विचरेद्ग्रामं पूर्वोक्तानामसम्भवे ॥५८
नियम्य प्रयतो वाचं दिशस्त्वनवलोकयन् ।

यदि भिक्षा मांगने योग्य पूर्वोक्त सभी गृहों में अभाव हो, तो पवित्र होकर, वाणी को नियन्त्रित कर, इधर-उधर दृष्टि न दौड़ाकर, सभी गाँवों में (अर्थात् चारों वर्णों में) भिक्षा याचना की जा सकती है।५८½

समाहृत्य तु तद्भैक्ष्यं पचेदन्नममायया[4] ॥५९
भुञ्जीत प्रयतो नित्यं वाग्यतोऽनन्यमानसः ।

भोजन के लिए अन्नादि संग्रहीत हो जाने के पश्चात् सावधानीपूर्वक उसे पकाकर; वाणी को नियन्त्रित कर, एकाग्रचित्त होकर, उसे खाना चाहिए।५९½

भैक्ष्येण वर्त्तयेन्नित्यमेकान्नादी भवेद्व्रती ॥६०
भैक्ष्येण वृत्तिनो वृत्तिरुपवाससमा स्मृता ।

---

१. भैक्ष्यस्याचरणमिति पा०। २. पतितादिविवर्जितः इति पा०। ३. प्रशस्तानामिति पा०। ४. यावदर्थममायया इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचारी को किसी एक व्यक्ति का अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिए, किन्तु प्रतिदिन भिन्न-भिन्न व्यक्ति के घर से भिक्षा संग्रह करनी चाहिए। इसलिए भिक्षा द्वारा जीवन निवहि करने-वाले ब्रह्मचारी के जीवन निर्वाह की विधि को ऋषिगण उपवास के समान मानते हैं।६०½

पूजयेदशनं नित्यमद्याच्चैतदकुत्सयन् ॥६१
दृष्ट्वा हृष्येत्प्रसीदेच्च ततो भुञ्जीत वाग्यतः[1] ॥६२

प्रतिदिन अत्यन्त आदर पूर्वक, निन्दा किए बिना (अर्थात् यह अच्छा नहीं, वह अच्छा नहीं यह कहे विना) अन्न ग्रहण करना चाहिए। अन्न को देखते ही पहले स्वस्थ और प्रसन्न होकर, तत्पश्चात् वाणी को नियन्त्रित कर भोजन करना चाहिए।६१-६२।

अनारोग्यमनायुष्यमस्वर्ग्यञ्चातिभोजनम् ।
अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात्तत्परिवर्ज्जयेत् ॥६३

अत्यधिक भोजन करना रोग उत्पन्न करने वाला, आयु क्षीण करने वाला, स्वर्ग एवं धर्म विरोधी होता है तथा लोग अतिभोजन की निन्दा करते हैं इसलिए अत्यधिक भोजन नहीं करना चाहिए।६३

प्राङ्मुखोऽन्नानि भुञ्जीत सूर्याभिमुख एव वा ।
नाद्यादुदङ्मुखो नित्यं विधिरेष सनातनः ॥६४

पूर्व दिशा या सूर्य की ओर मुँह करके, भोजन ग्रहण करना चाहिए किन्तु उत्तर दिशा की ओर मुँह करके कभी भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए, यही सनातन विधि है।६४

प्रक्षाल्य पाणिपादौ च भुञ्जानो द्विरुपस्पृशेत् ।
शुचौ देशे समासीनो भुक्त्वा च द्विरुपस्पृशेत् ॥६५

हाथ-पैर धोकर, स्वच्छ स्थान पर बैठकर, भोजन से पहले तथा भोजन के बाद दो बार मुख प्रक्षालन (आचमन) करना चाहिए।६५

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे द्वादशोऽध्यायः ॥१२

श्री कूर्म पुराण के उत्तरार्द्ध में व्यास गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योग शास्त्र में ऋषि व्यास संवाद में बारहवाँ अध्याय समाप्त।

●

---

१. प्रतिनन्देच्च सर्वशः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रयोदशोऽध्यायः

व्यास उवाच

भुक्त्वा पीत्वा च सुप्त्वा च स्नात्वा रथ्योपसर्पणे[1] ।
ओष्ठौ विलोमकौ स्पृष्ट्वा वासो विपरिधाय च ॥१

रेतोमूत्रपुरीषाणामुत्सर्गेऽयुक्तभाषणे[2] ।
ष्ठीवित्वाध्ययनारम्भे कासश्वासागमे तथा ॥२

चत्वरं वा श्मशानं वा समागम्य द्विजोत्तमः ।
सन्ध्ययोरुभयोस्तद्वदाचान्तोऽप्याचमेत्पुनः ॥३

भोजन, पान, निद्रा, स्नान, राह चलने, रोमविहीन होंठ का स्पर्श करने वस्त्र पहनने, वीर्य, मूत्र, मल त्यागने, असंगत वार्तालाप करने या थूकने के बाद, अध्ययन से पहले खाँसी आने या साँस छोड़ने पर, आंगन या श्मशान में जाने से तथा दोनों संध्या समय, ब्राह्मणों को पहले एकबार आचमन किए रहने के बाद भी, पुनः आचमन करना चाहिए ।१-३।

चण्डालम्लेच्छसंभाषे स्त्रीशूद्रोच्छिष्टभाषणे ।
उच्छिष्टं पुरुषं स्पृष्ट्वा भोज्यञ्चापि तथाविधम् ॥४

चाण्डाल, म्लेच्छ, स्त्री, शूद्र, अथवा नीच व्यक्ति के साथ मेलजोल करने से तथा नीच व्यक्ति या भोजन का स्पर्श करने से, आचमन करना चाहिए ।४

आचामेदश्रुपाते वा लोहितस्य तथैव च ।
भोजने[3] सन्ध्ययोः स्नात्वा त्यागे मूत्रपुरीषयोः ॥५

रक्त या अश्रु प्रवाहित होने, भोजन, संध्यावन्दन, स्नान करने और मल मूत्र त्यागने पर, आचमन करना चाहिए ।५

आचान्तोऽप्याचमेत्सुप्त्वा सकृत्सकृदथाव्ययः[4] ।
अग्नेर्गवामथालम्भे स्पृष्ट्वा प्रयतमेव च ॥६

---

१. रथ्यावसर्पणे इति पा० । २. ऽनृतभाषणे इति पा० । ३. भोजनेच सन्ध्यायाः स्नात्वेति पा० । ४. दथान्यतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निद्रा के पश्चात् या अन्यान्य कारणों के लिए एक एकबार आचमन अथवा अग्नि, गाय या पवित्र वस्तु (गंगाजल) का स्पर्श करना चाहिए ।६

स्त्रीणामथात्मनः[1] स्पर्शे नीवीं वा परिधाय च ।
उपस्पृशेज्जलञ्चान्तस्तृणं[2] वा भूमिमेव च ॥७

स्त्री का शरीर, उसका कटिबन्धन या वस्त्र छू लेने से शुद्धि के लिए जल, भीगा हुआ तृण या पृथ्वी का स्पर्श करना चाहिए ।७

केशानां चात्मनः स्पर्शं वाससोऽक्षालितस्य च ।
अनुष्णाभिरफेनाभिर्विशुद्धाद्भिश्च वाग्यतः[3] ॥८

अपना केश या बिना धुला हुआ वस्त्र छू लेने से, शुद्धता के लिए, वाणी पर सदा नियन्त्रण रखकर, शीतल और फेन रहित पानी से आचमन करना चाहिए ।८

शौचेप्सुः सर्वदाचामेदासीनः प्राग्उदङ्मुखः ।
शिरः प्रावृत्य कण्ठं वा मुक्तकच्छशिखोऽपि वा ॥९

सिर और गले को ढाककर, धोती की काँछ और शिखा खोलकर, सदा उत्तर या पूर्व दिशा की ओर मुँह करके आचमन करना चाहिए ।९

अकृत्वा पादयोः शौचमाचान्तोऽप्यशुचिर्भवेत् ।
सोपानत्को जलस्थो वा नोष्णीषी चाचमेद्बुधः ॥१०

ज्ञानीजन जूते पहनकर, पानी में खड़े होकर, पगड़ी बाँध कर और पैर धोए बिना आचमन नहीं करते, क्योंकि ऐसा करने से अपवित्रता बनी रहती है ।१०

न चैवं वर्षधाराभिर्हस्तोच्छिष्टैः[4] तथा बुधः ।
नैकहस्तार्पितजलैर्विना सूत्रेण वा पुनः ॥११
न पादुकासनस्थो वा बहिर्जानुकरोऽपि[5] वा ।

विद्वान्, वर्षा के जल से अपवित्र हुए हाथों से, एक हाथ से डाले गए जल से, यज्ञोपवीत के बिना, पादुकासन पर बैठकर घुटनो और हाथों को बाहर निकालकर आचमन नहीं करते ।११-११½ ।

विट्शूद्रादिकरामुक्तैर्नं चोच्छिष्टैस्तथैव च ॥१२

---

१. स्त्रीणामथात्मसंस्पर्शे इति पा० । २. जलं वार्द्रमिति । ३. अदुष्टाभिरवधमंतः इति पा० । ४. न तिष्ठन्नोद्धृतोदकैः इति पा० । ५. बहिर्जानुरथापिवा । न जल्पन् हसन्प्रेक्षन् शयानः प्रह्व एवच । नावीक्षिताक्षिः फेनाद्यैरुपेताभिस्तथापिवा । शूद्रादिविः करैर्मुक्तैर्नं क्षाराभिस्तथैव च इति लि० पु० । अदुष्टाभिश्च धर्मतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न चैवाङ्गुलिभिः शस्तं प्रकुर्वन्नन्य[1] मानसः ।
न वर्णरसदुष्टाभिर्न चैवाप्रचुरोदकैः[2] ॥१३
न पाणिक्षुभिताभिर्वा न बहिष्कक्ष एव वा ।

शूद्र या अपवित्र व्यक्ति द्वारा दिए गए जूठे या उँगली डुबोए हुए जल से, शब्द करते हुए, अनमना होकर, बदरंगे (वर्णदुष्ट), स्वादहीन (रसदुष्ट), मात्रा में कम, तथा हाथों से हिलाए गए जल से और कमरे से बाहर जाकर, आचमन नहीं करना चाहिए १२-१३½ ।

हृद्गाभिः पूयते विप्रः कण्ठगाभिः क्षत्रियः शुचिः ॥१४
प्राशिताभिस्तथा वैश्यः स्त्रीशूद्रौ स्पर्शतोऽम्भसः[3] ।

आचमन का जल हृदय तक आने से ब्राह्मण, गले तक आने से क्षत्रिय, केवल मुँह में प्रवेश करने से वैश्य तथा (जीभ और होठों की सीमा का) स्पर्श करने योग्य थोड़े जल से शूद्र और स्त्री पवित्र होते हैं ।१४-१४½ ।

अङ्गुष्ठमूलरेखायां[4] तीर्थं ब्राह्ममिहोच्यते ॥१५
प्रदेशिन्याश्च यन्मूलं पितृतीर्थमनुत्तमम् ।
कनिष्ठामूलतः पश्चात्प्राजापत्यं प्रचक्षते ॥१६

अँगूठे के मूल भाग की रेखा को ब्रह्म तीर्थ, प्रदेशिनी के मूल को अत्युत्तम पितृतीर्थ तथा कनिष्ठिका को प्राजापत्य तीर्थ कहते हैं ।१५-१६।

अङ्गुल्यग्रे स्मृतं दैवं तद्वै वार्षं प्रकीर्त्तितम् ।
मूले[5] वा दैवमादिष्टमाग्नेयं मध्यतः स्मृतम् ॥१७
तदेव सौमिकं तीर्थमेवं ज्ञात्वा न मुह्यति ।

सभी उँगलियों के अग्रभाग दैव तीर्थ कहलाते हैं, इन्हें आर्षतीर्थ भी कहा जाता है अथवा उँगलियों के मूल भाग को दैवतीर्थ और मध्यभाग को आग्नेय तीर्थ जानिए। आग्नेय तीर्थ को सौमिक तीर्थ के नाम से भी जाना जाता है। इन्हें जान लेने से अज्ञान नहीं रह जाता ।१७-१७½ ।

ब्राह्मेणैव तु तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत् ॥१८
कायेन वाथ दैवेन चाथाचान्ते[6] शुचिर्भवेत् ।

---

१. न कुर्यान्नान्यमानसः इति पा० । २. न चैव प्रदरोदकैरिति पा० । ३. स्पर्शंतोऽन्ततः इति पा० । ४. अंगुष्ठमूलान्तरितरेखा यां ब्राह्ममुच्यते इति पा० । ५. दैवमादिष्टमाग्नेयमिति पा० । ६. पैत्रेण न तु वै द्विजाः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मण को सदैव ब्रह्मतीर्थ या दैवतीर्थ से आचमन करना चाहिए, लेकिन पितृतीर्थ से नहीं।१८-१८½।

त्रिराचामेदपः[1] पूर्वं ब्राह्मणः प्रयतस्ततः ॥१९
संवृताङ्गुष्ठमूलेन मुखं वै समुपस्पृशेत् ।
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यान्तु स्पृशेन्नेत्रद्वयं ततः ॥२०
तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन स्पृशेन्नासापुटद्वयम् ।
कनिष्ठाङ्गुष्ठयोगेन श्रवणे समुपस्पृशेत् ॥२१

ब्राह्मण को पहले पवित्र होकर, तीनबार जल से आचमन करना चाहिए। तत्पश्चात् अँगूठे के मूल भाग को सिकोड़कर मुँह का, अँगूठे और अनामिका से दोनों नेत्रों, तर्जनी और अँगूठे से दोनों नासापुटों, कनिष्ठिका और अँगूठे से दोनों कानों का स्पर्श करना चाहिए।१९-२१।

सर्वाङ्गुलीभिर्बाहू[2] च हृदयन्तु तलेन न वा ।
नाभिः[3] शिरश्च सर्वाभिरङ्गुष्ठेनाथ वा द्वयम् ॥२२

सारी उँगलियों से दोनों भुजाओं, हथेली से हृदय तथा अंगूठे या सारी उँगलियों से नाभि और सिर का स्पर्श करना चाहिए।२२

त्रिः प्राश्नीयात्तदम्भस्तु सुप्रीतास्तेन[4] देवताः ।
ब्रह्मा विष्णुर्महेशश्च भवन्तीत्यनुशुश्रुम ॥२३

हमने यह सुना है कि, आचमन करते हुए तीनबार जल पीने से, ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर प्रसन्न होते हैं।२३

गंगा च यमुना चैव प्रीयेते परिमार्ज्जनात् ।
संस्पृष्टयोर्लोचनयोः प्रीयेते शशिभास्करौ ॥२४

आचमन के द्वारा मुख प्रक्षालन करने से गंगा और यमुना तथा दोनों नेत्रों का स्पर्श करने से चन्द्रमा और सूर्य प्रसन्न होते हैं।२४

नासत्यदस्रौ प्रीयेते स्पृष्टे नासापुटद्वये ।
श्रोत्रयोः स्पृष्टयोस्तद्वत्प्रीयेते चानिलानलौ ॥२५

नासापुटों का स्पर्श करने से अश्विनीकुमार तथा कानों के स्पर्श से वायु और अग्नि प्रसन्न होते हैं।२५

---

१. त्रिः प्राश्नीयादपः इति पा०। २. सर्वासामथ योगेनेति पा०। ३. स्पृशेद्वै शिरस्तद्वदंगुष्ठेनाथेति पा०। ४. प्रीतास्तेनान्यदेवताः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्पृष्टे हृदयेवास्य प्रीयन्ते सर्वदेवताः ।
मूर्ध्नि संस्पर्शनादेव प्रीतस्तु पुरुषो भवेत् ॥२६

हृदय के स्पर्श से सारे देवता और सिर के स्पर्श से परम पुरुष प्रसन्न होते हैं। २६

नोच्छिष्टं कुर्वते नित्यं विप्रुषोऽङ्गं नयन्ति याः ।
दन्तान्तर्दन्तलग्नेषु जिह्वोष्ठैरशुचिर्भवेत् ॥२७

मुँह से शरीर पर गिरने वाले, अत्यन्त सूक्ष्म जल की बूँदों से अंग जूठा नहीं होता। दाँतों में लगी हुई वस्तु, दाँतों के समान मानी जाती है, परन्तु जीभ से छू लेने पर वह अपवित्र हो जाती है ।२७

स्पृशन्ति बिन्दवः पादौ य आचामयतः परान् ।
भूमिकास्ते समाज्ञेया न तैरप्रयतो भवेत् ॥२८

दूसरे व्यक्ति को आचमन के लिए जल देते समय, यदि जल की बूँदें देने वाले के पैरों पर गिर पड़े, तो उससे जल वाला अपवित्र नहीं होता। उन जलकणों को विशुद्ध भूमिका जल के समान मानना चाहिए ।२८

मधुपर्के च सोमे च ताम्बूलस्य च भक्षणे ।
फले मूलेक्षुदण्डे च न दोषं प्राह वै मनुः ॥२९

मनु के कथनानुसार, सोमरस और मधुपर्क का पान करने तथा ताम्बूल (पान), फल-मूल और ईख का भक्षण करने से, कोई दोष नहीं लगता ।२९

प्रचुरान्नोदपानेषु यद्युच्छिष्टो[1] भवेद्द्विजः ।
भूमौ निक्षिप्य तद्द्रव्यमाचम्याभ्युक्षिपेत्ततः ॥३०

यदि ब्राह्मण अधिक मात्रा में अन्न और जलपात्र लेकर जूठा हो जाय, तो उसे उन सभी द्रव्यों को भूमि पर रखकर आचमन कर लेना चाहिए। परन्तु आचमन के बाद फिर उन्हें ग्रहण नहीं करना चाहिए ।३०

तैजसं वा समादाय यद्युच्छिष्टो भवेद्द्विजः ।
भूमौ निक्षिप्य तद्द्रव्यमाचम्याह्रियते[2] तु तत् ॥३१

यदि गरम वस्तु हाथ में लेकर, ब्राह्मण जूठा हो जाय, तो उस वस्तु को भूमि पर उतार कर, पहले आचमन करके, तत्पश्चात् उस वस्तु को बिना खाए ही छोड़ देना चाहिए ।३१

---

१. द्रव्यहस्त इति पा० । २. माचम्याभ्युक्षयेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यद्यमन्त्रं[1] समादाय भवेद्ब्रुच्छेषणान्वितः ।
अनिधायैव तद्द्रव्यमाचान्तः शुचितामियात् ॥३२
वस्त्रादिषु विकल्पः स्यान्न[2] स्पृष्ट्वा चैवमेव हि ।

इसके अतिरिक्त अन्य वस्तु लेकर, यदि ब्राह्मण जूठा हो जाय, तो उन वस्तुओं को भूमि पर न रखकर, केवल आचमन करने से ही वे पवित्र हो जाती हैं। वस्त्रादि के विषय में विकल्प है, यदि जूठी चीज वस्त्रों से न छुए, तो पूर्वोक्त विधि से शुद्ध हुआ जा सकता है ।३२-३२½।

अरण्येऽनुदके रात्रौ चौरव्याघ्राकुले पथि ॥३३
कृत्वा मूत्रं पुरीषं वा द्रव्यहस्तो न दुष्यति ।
निधाय दक्षिणे कर्णे ब्रह्मसूत्रमुदङ्मुखः ॥३४
अह्नि कुर्याच्छकृन्मूत्रं रात्रौ चेद्दक्षिणामुखः ।
अन्तर्द्धाय महीं काष्ठैः पत्रैर्लोष्टैस्तृणेन वा ॥३५
प्रावृत्य च शिरः कुर्याद्विण्मूत्रस्य विसर्जनम् ।

जंगल, जल रहित स्थान और रात्रि में, चोर और व्याघ्र बहुल मार्ग में, वस्तु हाथ में लेकर मल-मूत्र त्यागने से दोष नहीं लगता। दाहिने कान में यज्ञोपवीत डालकर दिन में उत्तर और रात्रि में दक्षिण दिशा की ओर मुँह करके मल-मूत्र त्यागना चाहिए। काष्ठ, पत्ता, मिट्टी के ढेले या घास भूमि पर बिछाकर, सिर ढक कर मल मूत्र त्यागना चाहिए ।३३-३५½।

छायाकूपनदीगोष्ठचैत्यान्तःपथि भस्मसु ॥३६
अग्नौ वेश्म श्मशाने च विण्मूत्रे न समाचरेत् ।
न[3] गोपथे न कृष्टे वा महावृक्षे न शाड्वले ॥३७
न तिष्ठन्वा न निर्वासा न च पर्वतमस्तके ।
न जीर्णदेवायतने न वल्मीके कदाचन ॥३८
न[4] ससत्त्वेषु गर्त्तेषु नागच्छन्वा समाचरेत् ।
तुषाङ्गारकपालेषु राजमार्गे तथैव च ॥३९
न क्षेत्रे विमले चापि न तीर्थे न चतुष्पथे ।
नोद्याने न समीपे वा नोषरे न पराशुचौ ॥४०

---

१. यदा स्रुवमिति पा०। २. तत्संस्पृश्याचमेदिहेति पा० ३. न गोमये न कुंभे इति पा०। ४. गच्छन्वा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छाया, कुआँ, नदी, गोशाला, यज्ञस्थान के बीचोबीच, मार्ग में, राख की ढेर पर, अग्नि या श्मशान में गायों के विचरण मार्ग पर, खड़े और निर्वस्त्र होकर, पर्वत की चोटी पर, पुराने मन्दिर में, दीमक की ढेर पर, प्राणीयुक्त गड्ढे में, चलते-चलते, भूसी, अंगार और कपाल युक्त स्थान में, राजमार्ग पर, खेत में, निर्मल तीर्थ में, चौराहे पर उद्यान या उसके समीप, ऊसर भूमि और अत्यन्त अपवित्र स्थान में, मल मूत्र नहीं त्यागना चाहिए।३६-४०।

न सोपानत्पादुको वा गन्ता[1] यानान्तरिक्षगः।
न चैवाभिमुखं स्त्रीणां गुरुब्राह्मणयोर्न[2] च ॥४१

न देवदेवालययोर्नद्यामपि[3] कदाचन।
नदीं ज्योतींषि वीक्षित्वा[4] न वार्याभिमुखोऽथ वा।
प्रत्यादित्यं प्रत्यनलं प्रतिसोमं तथैव च ॥४२

खड़ाऊ या चमड़े का जूता पहन कर, सिर पर छाता लगाकर, ऊँची जगह पर बैठकर, स्त्री, गुरु, ब्राह्मण, देवता, मन्दिर, या नदी के सामने, ग्रह-नक्षत्रों को या इधर-उधर देखते हुए, वायु के बहाव के सामने तथा अग्नि-चन्द्रमा या सूर्य की ओर मुँह करके मल-मूत्र नहीं त्यागना चाहिए।४१-४२।

आहृत्य मृत्तिकां कूलाल्लेपगन्धापकर्षणात्।
कुर्यादतन्द्रितः शौचं विशुद्धैरुद्धृतोदकैः ॥४३

लेप और दुर्गन्ध को दूर करने के लिए, आलस्य त्यागकर नदी तट से लाई गई मिट्टी और उठाए गए शुद्ध जल से शौच करना चाहिए।४३

नाहरेन्मृत्तिकां विप्रः पांशुलान्न च कर्दमान्।
न मार्गान्नोषराद्देशाच्छौचोच्छिष्टात्तथैव च ॥४४

ब्राह्मण को, धूल, कीचड़, ऊसर भूमि, मार्ग और दूसरे के शौच से बची हुई मिट्टी कभी नहीं लेनी चाहिए।४४

न देवायतनात्कूपाद्ग्रामादन्तर्ज्जलात्तथा[5]।
उपस्पृशेत्ततो नित्यं पूर्वोक्तेन विधानतः ॥४५

मन्दिर, कुँआ, गाँव, या जल के भीतर से शौच के लिए मिट्टी नहीं लेनी चाहिए। शौच के पश्चात् पूर्वोक्त विधि के अनुसार नित्य आचमन करना चाहिए।४५

---

१. न च्छत्री नान्तरिक्षके इति पा०। २. गवामिति पा०। ३. अपामपीति पा०। ४. वीक्ष्येति साधु। ५. ग्रामान्न च जलात्तथेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

श्री कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, व्यासगीताउपनिषद में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र के वर्णन प्रसङ्ग में ऋषियों और व्यास के संवाद में तेरहवाँ अध्याय समाप्त ।

चतुर्दशोऽध्यायः

शिष्यब्रह्मचारिणां धर्माः

व्यास उवाच

एवं दण्डादिभिर्युक्तः शौचाचारसमन्वितः ।
आहूतोऽध्ययनं कुर्याद्वीक्षमाणो गुरोर्मुखम् ॥१

व्यास बोले--पूर्वोक्त दण्डादि धारण करने वाले और शौचादि नियमों का पालन करने वाले ब्रह्मचारी को, गुरु के द्वारा बुलाए जाने पर, उनका चेहरा देखते हुए अध्यन करना चाहिए ।१

नित्यमुद्धृतपाणिः[1] स्यात्सन्ध्याचारसमन्वितः ।
आस्यतामिति चोक्तः सन्नासीताभिमुखं गुरोः ॥२

सन्ध्या वन्दन करने वाले, सदाचारी ब्रह्मचारी को दाहिना हाथ ऊपर उठाकर (उद्यत दक्षिणपाणि) गुरु के द्वारा बैठने का आदेश देने पर, उनकी तरफ मुंह करके बैठना चाहिए ।२

प्रतिश्रवणसम्भाषे शयानो न समाचरेत् ।
आसीनो[2] न च तिष्ठन्वा उत्तिष्ठन्वा पराङ्मुखः ॥३

लेटकर, बैठकर, भोजन करते हुए, दूर खड़े रहकर या दूसरी तरफ मुंह घुमाकर न (गुरु की आज्ञा) सुननी चाहिए और न ही उनसे वार्तालाप करना चाहिए ।३

न च शय्यासनञ्चास्य सर्वदा गुरुसन्निधौ ।
गुरोश्च चक्षुर्विषये न यथेष्टासनो भवेत् ॥४

---

१. उद्यतेति पा० । २. नासीनो न च भुञ्जानो न तिष्ठन्निति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिष्य के बैठने का स्थान तथा उसकी शय्या, सदैव गुरु के स्थान से नीचे रहना चाहिए तथा गुरु के सामने शिष्य को अपनी इच्छानुसार हाथ-पैर फैलाकर नहीं बैठना चाहिए ।४

नोदाहरेदस्य नाम परोक्षमपि केवलम् ।
न चैवास्यानुकुर्वीत गतिभाषितचेष्टितम् ॥५

गुरु के पीठ पीछे न तो उनका नामोच्चारण करना चाहिए और न ही उनके बोलने, चलने तथा विभिन्न चेष्टाओं का अनुकरण करना चाहिए ।५

गुरोर्यत्र प्रतीवादो निन्दा चापि प्रवर्त्तते ।
कर्णौ[1] तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं वा ततोऽन्यतः ॥६

जहाँ गुरु का विरोध या निन्दा होती हो, वहाँ शिष्य को अपने हाथों से कान बन्द कर लेना चाहिए या उस स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर चला जाना चाहिए ।६

दूरस्थो नार्च्चयेदेनं न क्रुद्धो नान्तिके स्त्रियाः ।
न चैवास्योत्तरं ब्रूयात् स्थिते नासीत सन्निधौ ॥७

दूर रहकर क्रोधित होकर और स्त्री के पास गुरु की पूजा नहीं करनी चाहिए । उनकी बातों का पलटकर जवाब नहीं देना चाहिए और यदि वह खड़े हों तो शिष्य को बैठे नहीं रहना चाहिए ।७

उदकुम्भं कुशान् पुष्पं समिधोऽस्याहरेत्सदा ।
मार्जनं लेपनं नित्यमंगानां वा समाचरेत् ॥८

गुरु के लिए सदैव पानी से भरा हुआ घड़ा, कुश, पुष्प और समिधा लानी चाहिए तथा उनके शरीर पर तेलमालिश कर सुगन्धित द्रव्य का लेप करना चाहिए ।८

नास्य निर्माल्य शयनं पादुकोपानहावपि ।
आक्रमेदासनं[1] छायामासन्दीं वा कदाचन ॥९

गुरु की माला, शय्या, खड़ाऊँ, जूता, आसन, छाया और चौकी कभी नहीं लाँघनी चाहिए ।९

साधयेद्दन्तकाष्ठादीन् कृत्यञ्चास्मै[2] निवेदयेत् ।
अनापृच्छ्य न गन्तव्यं भवेत्प्रियहिते रतः ॥१०

१. आक्रमेदासनं चास्य छायादीनिति पा० । आसन्दी-चतुष्पादासनविशेषः ।
२. लब्धञ्चास्मै इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरु के लिए दातौन लाना चाहिए। प्रत्येक कार्य उन्हें बताकर करना चाहिए और उनसे पूछे बिना कहीं नहीं जाना चाहिए। सदैव उन्हीं कार्यों को करना चाहिए जो उन्हें अच्छा लगे तथा हितकारी हो।१०

न पादौ सारयेदस्य सन्निधाने कदाचन।
जृम्भाहास्यादिकञ्चैव कण्ठप्रावरणं तथा ॥११
वर्ज्जयेत्सन्निधौ नित्यमथास्फोटतमं[1] वचः।

गुरु के पास, पैर फैलाकर बैठना, जम्हाई लेना, हँसना, गले में उत्तरीय लपेट कर बैठना और ताल ठोंकना सर्वथा वर्जित हैं।११-११½।

यथाकालमधीयीत यावन्न विमना गुरुः ॥१२
आसीताथ[2] गुरोरुक्ते फलके वा समाहितः।
आसने शयने याने नैकस्तिष्ठेत्कदाचन ॥१३

जब तक गुरु अनमने न हो जाय, तब तक अध्ययन करते रहना चाहिए। गुरु की आज्ञा से ब्रह्मचारी एकाग्रचित्त होकर लकड़ी की पाटी पर बैठ सकता है, किन्तु आसन, शय्या, या वाहन पर कदापि नहीं बैठ सकता।१२-१३।

धावन्तमनुधावेत्तं गच्छन्तञ्चानुगच्छति।
गोऽश्वोष्ट्रयानप्रासादप्रस्तरेषु कटेषु च ॥१४
आसीत गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनौषु च।

सदैव गुरु के पीछे-पीछे चलना चाहिए। यदि वह द्रुतगति से जा रहे हों तो उतनी ही गति से उनके पीछे चलना चाहिए। गुरु के साथ एक आसन पर बैठने का निषेध होने पर भी बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी, ऊँट से खींची जाने वाली गाड़ी, महल, पत्थर से बने हुए आँगन, तृण के बने विशाल आसन, पत्थर की वेदी, लकड़ी की पाटी और नाव में गुरु के साथ बैठा जा सकता है।१४-१४½।

जितेन्द्रियः स्यात्सततं वश्यात्माऽक्रोधनः शुचिः ॥१५
प्रयुञ्जीत सदा वाचं मधुरां हितभाषिणीम्।

सदा इन्द्रियों और क्रोध को अपने वश में रखकर पवित्र रहना चाहिए और मधुर तथा हितकारी वचन बोलना चाहिए।१५-१५½।

गन्धमाल्यं रसं भव्यं शुक्लं[3] प्राणिविहिंसनम् ॥१६

---

१. अवस्फोटनमेव चेति, बाहुस्फोटनमेव चेति पा०। २. आसीताधो गुरोर्गत्वेदिति, आसीताधो गुरोः कूर्चे इति पा०। ३. शुक्लं-धौतधवलदुकूलमित्यर्थः। रसं कन्यां शुक्तमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभ्यङ्गञ्चाञ्जनोपानच्छत्रधारणमेव च ।
कामं लोभं भयं निद्रां गीतवादित्रनर्त्तनम् ॥१७

द्यूतं[1] जनपरीवादं स्त्रीप्रेक्षालम्भनं तथा ।
परोपघातं पैशुन्यं प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥१८

ब्रह्मचारी को सुगन्धित द्रव्य, माला, मधुरादि रसों का सेवन, भड़कीले तथा उज्ज्वल वस्त्रादि धारण, प्राणिहिंसा और तेल मालिश करना, कज्जल लगाना, जूता और छाता धारण करना, काम, लोभ, भय, निद्रा, गीत और वाद्यादि सुनना, नृत्यादि देखना, जुआ खेलना, लोगों की निन्दा करना, स्त्री के प्रति कटाक्ष या उसका आलिंगन करना, दूसरों का अनिष्ट और पीठ पीछे निन्दा जैसे कार्यों को यत्नपूर्वक त्याग देना चाहिए ।१६-१८

उदकुम्भं सुमनसो गोशकृन्मृत्तिकां कुशान् ।
आहरेद्यावदर्थानि भैक्ष्यञ्चाहरहश्चरेत् ॥१९

गुरु की आवश्यकतानुसार जल भरा घड़ा, पुष्प, गोबर, मिट्टी और कुश लाना चाहिए और प्रतिदिन भिक्षाटन भी करनी चाहिए ।१९

कृतञ्च लवणं सर्वं वर्ज्यं पर्युषितञ्च यत् ।
अनृत्यदर्शी सततं भवेद्गीतादिनिस्पृहः ॥२०

कृत्रिम लवण और सारे बासी द्रव्यों का त्याग करना चाहिए। नृत्य नहीं देखना चाहिए और गीतादि के प्रति सदा उदासीन रहना चाहिए ।२०

नादित्यं वै समीक्षेत न चरेद्दन्तधावनम्[2] ।
एकान्तमशुचिस्त्रीभिः शूद्रान्त्यैरभिभाषणम् ॥२१

ब्रह्मचारी को न तो सूर्य दर्शन करना चाहिए और न ही दाँत साफ करने चाहिए । अपवित्र स्त्री, शूद्र और चाण्डालादि के साथ एकान्त में वार्तालाप भी नहीं करना चाहिए ।२१

गुरुप्रियार्थं[3] सर्वं हि प्रयुञ्जीत न कामतः ।
मलापकर्षणं स्नानमाचरेद्वै कथञ्चन ॥२२

अपनी इच्छानुसार कार्य न करके, गुरु को जो प्रिय लगे ऐसे कार्य करने चाहिए । स्नान करते समय शरीर का मल नहीं निकालना चाहिए ।२२

---

१. आतर्ज्जनमिति पा० । २. नाचरेदिति पा० । ३. गुरुच्छिष्टं भेषजार्थमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न कुर्यान्मानसं विप्रो गुरोस्त्यागं कदाचन ।
मोहाद्वा यदि वा लोभात्त्यक्त्वैनं पतितो भवेत् ॥२३

ब्राह्मण को गुरु का त्याग करने की बात मन में कदापि नहीं लानी चाहिए लोभ या मोहवश गुरु का त्याग करने से पतित होना पड़ता है ।२३

लौकिकं वैदिकञ्चापि तथाध्यात्मिकमेव च ।
आददीत यतो ज्ञानं न तं द्रुह्येत्कदाचन ॥२४

लौकिक, वैदिक और आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करने वाले गुरु के साथ द्रोह कभी नहीं करना चाहिए ।२४

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः ।
उत्पथं प्रतिपन्नस्य मनुस्त्यागं समब्रवीत् ॥२५

मनु के अनुसार—अहंकारी, कार्य और अकार्य में भेद न जानने वाले, भ्रष्टाचारी गुरु का त्याग किया जा सकता है ।२५

गुरोर्गुरौ सन्निहिते गुरुवद्भक्तिमाचरेत्[1] ।
न चातिसृष्टो गुरुणा स्वान् गुरूनभिवादयेत् ॥२६

गुरु के भी गुरु के आ जाने से, उनकी भक्ति गुरु के समान ही करनी चाहिए तथा गुरुगृह में निवास करते समय उनकी आज्ञा के बिना अपने गुरुजनों को प्रणाम नहीं करना चाहिए ।२६

विद्यागुरुष्वेतदेव नित्या वृत्तिः स्वयोनिषु ।
प्रतिषेधत्सु चाधर्माद्धितं चोपदिशत्स्वपि ॥२७

विद्यादान करने वाले अपने कुल को गुरु अधर्माचरण करने पर उसका निषेध करने वाले और हितोपदेशक की, गुरु के समान भक्ति करनी चाहिए ।२७

श्रेयत्सु गुरुवद्वृत्तिं नित्यमेव समाचरेत् ।
गुरुपुत्रेषु दारेषु गुरोश्चैव स्वबन्धुषु ॥२८

श्रेष्ठजनों (अर्थात् ज्ञान और तपस्यादि सम्पन्न व्यक्तियों) की, शिष्य के अलावा अधिक आयु के सजातीय व्यक्तियों की गुरु के पुत्र, पत्नी और गुरु के सम्बन्धियों के साथ, गुरु के समान आचरण करना चाहिए ।२८

---

१. गुरुवद्वृत्तिमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालः संमानयन्मान्यान् शिष्यो वा यज्ञकर्मणि[1] ।
अध्यापयन् गुरुसुतो गुरुवन्मानमर्हति ॥२९

उत्सादनं वै गात्राणां स्नापनोच्छिष्टभोजने ।
न कुर्याद्गुरुपुत्रस्य पादयोः शौचमेव च ॥३०

यदि गुरु पुत्र आयु में छोटा अथवा यज्ञविद्या में शिष्य हो, लेकिन वेद का अध्यापक हो तो वह गुरु के समान सम्माननीय होगा किन्तु गुरु के समान गुरु पुत्र के शरीर में तेल मालिश करना, उसे स्नान कराना, उसका जूठन खाना और उसके पैर धुलाना सर्वथा वर्जित है ।२९-३०

गुरुवत्परिपूज्याश्च सवर्णा गुरुयोषितः ।
असवर्णास्तु सम्पूज्याः प्रत्युत्थानाभिवादनैः ॥३१

गुरु की सवर्णा पत्नी सभी गुरुओं की अपेक्षा पूजनीय होती है किन्तु असवर्णा पत्नियों को, उठकर तथा चरण स्पर्श किए बिना, केवल नमस्कार कर, सम्मानित करना चाहिए ।३१

अभ्यञ्जनं स्नापनञ्च गात्रोत्सादनमेव च ।
गुरुपत्न्या न कार्याणि केशानाञ्च प्रसाधनम् ॥३२

गुरु पत्नी के शरीर में उबटन लगाना, स्नान कराना, मालिश करना और केश सज्जा निषिद्ध है ।३२

गुरुपत्नी तु युवती नाभिवाद्येह पादयोः ।
कुर्वीत वन्दनं भूमावसावहमिति[2] ब्रुवन् ॥३३

युवती गुरु पत्नी को चरण स्पर्श कर प्रणाम न करके 'मैं अमुक आपका अभिवादन करता हूँ', यह कहकर केवल भूमि पर प्रणाम कर लेना चाहिए ।३३

विप्रोष्य[3] पादग्रहणमन्वहं[4] चाभिवादनम् ।
गुरुदारेषु सर्वेषु[4] सतां धर्ममनुस्मरन् ॥३४

शिष्य को विदेश यात्रा से लौट आने के बाद, सभ्य लोगों के आचार व्यवहार का स्मरण कर, सभी गुरुपत्नियों का चरणस्पर्श और अभिवादन करना चाहिए ।३४

---

१. जपकर्मणीति पा० । २. भूम्यामिति पा० । ३. विप्रोऽयेति पा० । ४. कुर्वीतिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मातृष्वसा मातुलानी श्वश्रूश्चाथ पितृष्वसा ।
संपूज्या गुरुपत्नी च समस्ता गुरुभार्यया ॥३५

मौसी, मामी, सास और बुआ, गुरु पत्नी के समान पूजनीय होती हैं क्योंकि ये सभी गुरुपत्नी के समान है ।३५

भ्रातुर्भार्या च संग्राह्या सवर्णाहन्यहन्यपि ।
विप्रस्य तूपसंग्राह्या ज्ञातिसम्बन्धियोषितः ॥३६

बड़े भाई की पत्नी भाभी को प्रतिदिन और सम्बन्धी स्त्रियों को प्रवास से लौटने के पश्चात् चरण छूकर प्रणाम करना चाहिए ।३६

पितुर्भगिन्या मातुश्च ज्यायस्यां च स्वसर्यपि ।
मातृवद्वृत्तिमातिष्ठेन्माता ताभ्यो गरीयसी ॥३७

पिता, माता और सगी बड़ी बहन के साथ माता की भाँति व्यवहार करना चाहिए किन्तु माता इनसे भी श्रेष्ठ होती है ।३७

एवमाचारसंपन्नमात्मवन्तमदाम्भिकम् ।
वेदमध्यापयेद्धर्मं पुराणाङ्गानि नित्यशः ॥३८

इस प्रकार गुरु को उपर्युक्त आचरणों का भलीभाँति पालन करने वाले आत्मवान्, गर्वहीन शिष्य को, प्रतिदिन वेद, धर्मशास्त्र, पुराण और वेदांग का अध्यापन करना चाहिए ।३८

संवत्सरोषिते शिष्ये गुरुर्ज्ञानमनिर्दिशन् ।
हरते दुष्कृतं तस्य शिष्यस्य वसतो गुरुः ॥३९

यदि संवत्सर तक शिष्य के गुरु गृह में निवास करने पर भी गुरु उसे ज्ञान दान न दे तो वह उस शिष्य का अपराधी बन जाता है ।३९

आचार्यपुत्रः शुश्रूषुर्ज्ञानदो धार्मिकः शुचिः ।
सूक्तार्थदोऽरसः[1] साधुः[2] स्वाध्याय्यादेशधर्मतः ॥४०

आचार्य पुत्र, सेवा करने वाले, दूसरों को ज्ञानदान देने वाले, धार्मिक, पवित्र, अध्ययन किए गए विषयों को समझने और स्मरण रखने में समर्थ, धन देने वाले, पुत्रादि, साधु और सम्बन्धी, इन दसों को धर्मानुसार अध्ययन कराना चाहिए ।४०

कृतज्ञश्च तथाद्रोही मेधावी तूपकुन्नरः[3] ।
आप्तः प्रियोऽथ विधिवत् षडध्याप्या द्विजातयः ॥४१

---

१. अरसःशृङ्गारादिरसहीनः रागहीन इत्यर्थः । २. शक्तोऽन्नदोऽर्थदः साधुरिति पा० । ३. शुभकुन्नर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्विजातियों (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) में, कृतज्ञ, द्रोह न करने वाले; मेधावी, परोपकारी, विश्वस्त और प्रिय, यह छः अध्यापन के योग्य होते हैं। पूर्वोक्त दस प्रकारों में इन्हें वेदाध्ययन और दूसरों को तथाकथित शास्त्रों का अध्ययन कराना चाहिए।४१-४१½।

एतेषु ब्रह्मणो[1] दानमन्यत्र च यथोदितान्।
आचम्य संयतो नित्यमधीयीत ह्युदङ्मुखः ॥४२
उपसंगृह्य तत्पादौ वीक्षमाणो गुरोर्मुखम्।
अधीष्व भो इति ब्रूयाद्विरामस्त्विति नारभेत् ॥४३

प्रतिदिन, आचमन करके, गुरु के चरणों की वन्दना कर,उत्तर की ओर मुँह करके, गुरु का मुँह देखते-देखते, एकाग्रचित्त होकर, अध्ययन करना चाहिए। 'अध्ययन करो' ऐसा कहने से अध्ययन करना और 'आज यहीं तक' कहने से अध्ययन समाप्त कर देना चाहिए।४२-४३।

अनुकूलं[2] समासीनः पवित्रैश्चैव पावितः।
प्राणायामैस्त्रिभिः पूतस्तत ओङ्कारमर्हति ॥४४

अनुकूल ढंग से बैठकर पवित्र कुश धारण कर तीनबार प्राणायाम करके शुद्ध हो जाने के पश्चात् ओङ्कार उच्चारण के योग्य बना जा सकता है।४४

ब्राह्मणः प्रणवं कुर्यादन्ते च विधिवद्द्विजः।
कुर्यादध्ययनं नित्यं ब्रह्माञ्जलिकरस्थितः ॥४५

वेदाध्ययन प्रारम्भ और समाप्त करते समय द्विजातियों को विधिवत् ओङ्कार का उच्चारण करना चाहिए तथा प्रतिदिन ब्रह्माञ्जलि (अध्ययन के समय दोनों हाथ जोड़कर बैठने की स्थिति को ब्रह्माञ्जलि कहा जाता है) बाँधकर वेदाध्ययन करना चाहिए।४५

सर्वेषामेव भूतानां वेदश्चक्षुः सनातनम्।
अधीयीताव्ययं नित्यं ब्राह्मण्याच्च्यवतेऽन्यथा ॥४६

वेद सभी प्राणियों के लिए सनातन चक्षु स्वरूप होता है, इसीलिए प्रतिदिन वेदाध्ययन करना चाहिए। वेदाध्ययन न करने से ब्राह्मण नष्ट हो जाता है।४६

योऽधीयीत ऋचो नित्यं क्षीराहुत्या सदेवताः।
प्रीणाति तर्पयन्त्येनं कामैस्तृप्ताः सदैव[3] हि ॥४७

---

१. ब्राह्मण इति पा०। २. प्राञ्जलिश्च समासीनः, प्राक्कूले इति प्राक्कूलं प्रयुंपासीनः इति पा०। ३. सदेवताः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो नित्य ऋग्वेद का अध्ययन करके. दूध की आहुति देकर देवताओं को प्रसन्न करता है, देवता तृप्त होकर, सभी कामनाओं की पूर्ति कर उसे सन्तुष्ट कर देते हैं। ४७

यजूंष्यधीते नियतं दध्ना प्रीणाति देवताः ।
सामान्यधीते प्रीणाति घृताहुतिभिरन्वहम् ॥४८

नित्य यजुर्वेद का अध्ययन करने वाला दधि तथा सामवेद का अध्ययन करने वाला घी की आहुति देकर, देवता जिससे प्रसन्न होते हैं, उसी के द्वारा, देवताओं को, उसी प्रकार से प्रसन्न करता है ।४८

अथर्वाङ्गिरसो नित्यं मध्वा[1] प्रीणाति देवताः ।
वेदाङ्गानि[2] पुराणानि मांसैश्च तर्पयेत्सुरान् ॥४९

प्रतिदिन अथर्ववेद का अध्ययन करने वाला मधु और वेदांग तथा पुराण का अध्ययन करने वाला मांस से देवताओं को प्रसन्न करता है ।४९

अपां समीपे नियतो[3] नैत्यिकं विधिमाश्रितः ।
गायत्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः ॥५०

वन में जाकर, नदी-निर्झरादि के निकट, यत्नपूर्वक, स्वाध्याय की विधि का पालन करते हुए एकाग्रचित्त होकर, गायत्री का पाठ करना चाहिए ।५०

सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम् ।
गायत्रीं वै जपेन्नित्यं जपयज्ञः प्रकीर्त्तितः ॥५१

हजार बार गायत्री का जप सर्वश्रेष्ठ और सौ बार जप मध्यम माना जाता है। इस प्रकार प्रतिदिन किसी एक प्रकार से गायत्री का जप करना चाहिए क्योंकि यही ब्रह्मयज्ञ के नाम से प्रख्यात है ।५१

गायत्रीञ्चैव वेदांस्तु तुलयातोलयत्प्रभुः ।
एकतश्चतुरो वेदान् गायत्रीञ्च तथैकतः ॥५२

ईश्वर ने गायत्री और चतुर्वेदों को तराजू पर रखकर तोला। एक पलड़े पर गायत्री तथा दूसरे पर चारों वेदों को रखा गया, जिसमें दोनों पलड़े बराबर रहे ।५२

---

१. मधुना इति पा० । २. धर्माङ्गानीति पा० । ३. प्रयतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओङ्कारमादितः कृत्वा व्याहृतीस्तदनन्तरम् ।
ततोऽधीयीत सावित्रीमेकाग्रः श्रद्धयान्वितः ॥५३

एकाग्रचित्त होकर, श्रद्धा के साथ, पहले ओङ्कार, तदनन्तर व्याहृति का उच्चारण कर, गायत्री मन्त्र का पाठ करना चाहिए ।५३

पुराकल्पे समुत्पन्ना भूर्भुवः स्वः सनातनाः ॥५४

अतीत में, प्रलय के समय, सारे अशुभों का नाश करने वाली भूः भुवः, स्वः नामक तीन सनातन महाव्याहृतियां उत्पन्न हुई थीं । ५४

महाव्याहृतयस्तिस्रः सर्वाः शुभनिबर्हणाः ॥५५
प्रधानं पुरुषः कालो विष्णुर्ब्रह्मा महेश्वरः ।
सत्त्वं रजस्तमस्तिस्रः क्रमाद्व्याहृतयः स्मृताः ॥५६

तीनों व्याहृतियां प्रकृति-पुराण-काल, ब्रह्मा-विष्णु- महेश और सत्त्व-रज-तम के रूप में स्मरण की जाती हैं ।५५-५६

ओङ्कारस्तत्परं ब्रह्म सावित्री स्यात्तदक्षरम् ।
एष मन्त्रो महायोगः सारात्सार उदाहृतः ॥५७

ओङ्कार परमब्रह्मस्वरूप और सावित्री अविनाशी ब्रह्मस्वरूप है, यह मन्त्र सारात्सार महायोग के नाम से जाना जाता है ।५७

योऽधीतेऽहन्यहन्येतां सावित्रीं वेदमातरम् ।
विज्ञायार्थं ब्रह्मचारी स याति परमां गतिम् ॥५८

गायत्री के बाद और कोई जप नहीं है यह जानकर, अर्थ को समझते हुए, प्रतिदिन वेदमाता गायत्री का पाठ करने वाला ब्रह्मचारी परम गति प्राप्त करता है ।५८

गायत्री वेदजननी गायत्री लोकपावनी ।
न गायत्र्याः परं जाप्यमेतद्विज्ञाय मुच्यते ॥५९

हे मुनिश्रेष्ठों ! वेदों की जननी और सभी लोगों को पवित्र करने वाली गायत्री से बढ़कर कोई जपनीय मंत्र नहीं है, यह जानकर मुक्त हो जाता है ।५९

श्रावणस्य तु मासस्य पौर्णमास्यां द्विजोत्तमाः ।
आषाढ्यां प्रोष्ठपद्यां वा वेदोपाकरणं स्मृतम् ॥६०
उत्सृज्य ग्रामनगरं मासान्विप्रोर्ध्वपञ्चमान् ।
अधीयीत शुचौ देशे ब्रह्मचारी समाहितः ॥६१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुष्ये तु छन्दसां कुर्याद्बहिरुत्सर्जनं द्विजाः ।
माघशुक्लस्य वा प्राप्ते पूर्वाह्णे प्रथमेऽहनि ॥६२

हे ब्राह्मण श्रेष्ठों! सावन, आषाढ़ या भादों की पूर्णिमा को, अपने-अपने गृह्य सूत्र में बताए गए विधान के अनुसार वेदों का उपाकर्म करने के पश्चात्, ब्रह्मचारी को साढ़े पाँच महीने तक, गाँव या नगर छोड़कर, पवित्र स्थान में, एकाग्रचित्त होकर, वेदाध्ययन करना चाहिए ।

हे ब्राह्मणवृन्द ! वेदाध्ययन समाप्त कर, पूस के पुष्यनक्षत्र में, गाँव के बाहर, वेदों का उत्सर्ग अर्थात् विसर्जन-होमादि करना चाहिए अथवा माघ-शुक्ल-पक्ष के पहले दिन पूर्वाह्ण में, उत्सर्ग क्रिया सम्पन्न करनी चाहिए ।६०-६२।

छन्दसां[1] प्रीणनं कुर्यात् स्वेषु ऋक्षेषु वै द्विजाः ।
वेदाङ्गानि पुराणानि कृष्णपक्षे च मानवः ॥६३

हे विप्रगण ! उसके बाद मनुष्य को प्रत्येक शुक्लपक्ष को वेदपाठ और कृष्ण पक्ष को वेदांग तथा पुराण का अध्ययन करना चाहिए ।६३

इमान्नित्यमनध्यायानधीयानो विवर्जयेत् ।
अध्यापनं च कुर्वाणो ह्यनध्यायान्विवर्जयेत् ॥६४

जिन दिनों में अध्ययन निषिद्ध है, वेदपाठी शिष्यों को उन दिनों में अध्ययन पूर्णरूप से वर्जित कर देना चाहिए तथा अध्यापकों को भी उन-उन दिनों में अध्यापन कार्य नहीं करना चाहिए ।६४

कर्णश्रवेऽनिले रात्रौ दिवापांशुसमूहने ।
विद्युत्स्तनितवर्षेषु महोल्कानाञ्च संप्लवे ॥६५
आकालिकमनध्यायमेतेष्वाह प्रजापतिः ।
निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषाञ्चोपसर्जने ॥६६
एतानाकालिकान्विद्यादनध्यायानृतावपि ।
प्रादुष्कृतेष्वग्निषु तु विद्युत्स्तनितनिस्वने ॥६७

रात को जब हवा चलने की आवाज सुनाई पड़े और दिन में हवा के साथ धूल उड़ने लगे, तो उस समय अध्ययन वर्जित कर देना चाहिए ।

प्रजापति मनु के अनुसार, बिजली की चमक और बादलों की गड़गड़ाहट के साथ पानी बरसे या कहीं उल्कापात हो तो, आकालिक अध्ययन (अर्थात् प्रारम्भ होने से लेकर दूसरे दिन उसी समय तक अध्ययन वर्जित) जानो ।

---

१. विप्रोष्ठ्रंपञ्चमान्—हे विप्राः सन्धिरार्षः । २. छन्दांस्यूर्ध्वमथोत्सृज्येति, छन्दांस्यूर्ध्वमतोऽभ्यस्येच्छुक्लपक्षेषु वै द्विजाः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षा ऋतु में वज्राघात होने (अर्थात् आकाश से अस्वाभाविक ध्वनि उत्पन्न होने) भूकम्प आने और सूर्य चन्द्रमादि नक्षत्रमण्डलियां उपसर्जित हो जाने से आकालिक अनध्याय होता है।६५-६७।

सज्योतिः स्यादनध्यायमनृतौ चात्र दर्शने ।
नित्यानध्याय एव स्याद्ग्रामेषु नगरेषु च ॥६८

होमाग्नि प्रज्वलित करते समय पानी न बरस कर केवल बिजली चमके और बादलों की गड़गड़ाहट सुनाई दे और वर्षा ऋतु से भिन्न ऋतु में आकाश में बादल दिखाई दे, तो सज्योति अनध्याय (अर्थात् दिन में हो तो सायं तक और रात में हो तो दूसरे दिन प्रातः काल तक अध्ययन निषिद्ध) होता है ।६८

धर्मनैपुण्यकामानां पूतिगन्धेन नित्यशः ।
अन्तःशवगते ग्रामे वृषलस्य च सन्निधौ ॥६९

जो लोग धर्म में दक्षता प्राप्त करना चाहते हैं, उनके लिए शव वाले गाँव, दुर्गन्धयुक्त स्थान में, तथा शूद्र के समीप सदा अध्ययन निषिद्ध है अर्थात् उन्हें ऐसे स्थान में नहीं रहना चाहिए ।६९

अनध्यायो भुज्यमाने[1] समवाये जनस्य च ।
उदके मध्यरात्रे च विण्मूत्रे च विवर्जयेत् ॥७०
उच्छिष्टः श्राद्धभुक् चैव मनसापि न चिन्तयेत् ।

भोजन करते हुए तथा लोगों के समूह में अध्ययन नहीं करना चाहिए जल के अन्दर, आधी रात को, मलमूत्र त्यागते हुए, जूठे मुंह से, और श्राद्ध भोजन वाले दिन मन में भी वेदों का चिन्तन नहीं करना चाहिए ।७०½

प्रतिगृह्य द्विजो विद्वानेकोद्दिष्टस्य केतनम् ॥७१
त्रयहं न कीर्त्तयेद्ब्रह्म राज्ञो[2] राहोश्च सूतके ।

विद्वान् ब्राह्मण, प्रेतश्राद्ध का निमन्त्रण स्वीकार करने के दिन से, राजा का सूतक, चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण होने से, लगातार तीन दिनों तक वेदों का अध्ययन नहीं करते ।७०-७१½।

---

१. रुद्यमाने इति, नुद्यमाने इति पा० । २. राज्ञः सूतके—राज्ञः पुत्रादिजननाशौचे, राहोः सूतके—राहुग्रहणात् परमकाले इत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यावदेकोऽनुद्दिष्टस्य स्नेहो लेपश्च तिष्ठति ॥७२
विप्रस्य विपुले[1] देहे तावद्ब्रह्म न कीर्त्तयेत् ।

जब तक ब्राह्मण के विशाल देह में, श्राद्ध के घृत, कुंकुम और चन्दन की सुगन्ध बनी रहती है, तब तक वेदाध्ययन नहीं करना चाहिए ।७२-७३½।

शयानः प्रौढपादश्च कृत्वा वै चावसिक्थकाम् ॥७३
नाधीयीतामिषं जग्ध्वा सूतकान्नमेव च ।
नीहारे बाणपाते च सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥७४
अमावास्यां चतुर्दश्यां पौर्णमास्यष्टमीषु च ।

बिस्तर पर लेटकर, उकड़ूं बैठकर, दोनों घुटनों में कपड़ा बाँधकर, मांस और जन्म-मृत्यु के सूतक का अन्न खाकर वेदाध्ययन नहीं करना चाहिए।

कोहरा छाने तथा बाणपात होने से प्रातः और सायं काल, अमावस्या, चतुर्दशी पूर्णिमा, और अष्टमी तिथि को अध्ययन निषिद्ध है ।७४-७५।

उपाकर्मणि चोत्सर्गे त्रिरात्रं क्षपणं स्मृतम् ॥७५
अष्टकासु त्र्यहोरात्रमृत्वन्तासु च रात्रिषु ।
मार्गशीर्षे तथा पौषे माघमासे तथैव च ॥७६
तिस्रोऽष्टकाः समाख्याताः कृष्णपक्षे तु सूरिभिः ।

उपाकर्म और उत्सर्ग के तीन रात तक अध्ययन नहीं करना चाहिए। अष्टक के दिन से तीन दिन और रात तथा ऋतु के अन्तिम दिन से तीन रात तक अध्ययन वर्जित है। विद्वानों ने अगहन, पूस और माघ की कृष्णाष्टमी को अष्टक कहा है ।७६½

श्लेष्मातकस्य च्छायायां शाल्मलेर्मधुकस्य च ॥७७
कदाचिदपि नाध्येयं कोविदारकपित्थयोः ।

श्लेष्मातक, शाल्मली, मधूक, कोविदार और कपित्थ (कैथा) के पेड़ के नीचे बैठकर, कभी अध्ययन नहीं करना चाहिए ।७७½

समानविद्ये च मृते तथा सब्रह्मचारिणि ॥७८
आचार्ये संस्थिते वापि त्रिरात्रं क्षपणं स्मृतम् ।

समकक्ष विद्वान्, सहपाठी, और आचार्य की मृत्यु हो जाने से तीन रात तक अध्ययन नहीं किया जाना चाहिए ।७८½

---

१. विदुषः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिद्राण्येतानि विप्राणां येऽनध्यायाः प्रकीर्त्तिताः ॥७९
हिंसन्ति राक्षसास्तेषु तस्मादेतान्विसर्ज्जयेत्[1] ।

जिस समुदाय को अनध्याय होता है (अर्थात् जिस समुदाय के लिए अध्ययन वर्जित होता है) उस समुदाय के ब्राह्मणों को अनध्याय के दिन, अध्ययन का पूर्ण रूप से परित्याग कर देना चाहिए क्योंकि अनध्याय के दिन अध्ययनरूपी छिद्र प्राप्त करने से राक्षस हिंसा करते हैं ।७९½

नैत्यिके नास्त्यनध्यायः सन्ध्योपासन एव च ॥८०
उपाकर्मणि कर्मान्ते[2] होममन्त्रेषु चैव हि ।
एकामृचमथैकं वा यजुः सामाथ वा पुनः ॥८१
अष्टकाद्यास्वधीयीत मारुते चातिवायति ।
अनध्यायस्तु नाङ्गेषु नेतिहासपुराणयोः ॥८२
न धर्मशास्त्रेष्वन्येषु पर्वण्येतानि वर्ज्जयेत् ।

नित्यकर्म, सन्ध्योपासन, उपाकर्म, कर्मान्त और होम-मन्त्र में अनध्याय दोष नहीं लगता । तेज हवा चलने पर और अष्टकादि में ऋग्वेद, सामवेद तथा यजुर्वेद से केवल एक मन्त्र पढ़ा जा सकता है । वेदांग, इतिहास, पुराण, और धर्मशास्त्र के पाठ से अनध्याय दोष नहीं लगता, केवल त्योहारों के दिन इनका अध्ययन नहीं किया जाता ।८०-८२½

एष धर्मः समासेन कीर्त्तितो ब्रह्मचारिणाम् ॥८३
ब्रह्मणाभिहितः पूर्वमृषीणां भावितात्मनाम् ।

ब्रह्मचारियों का यह धर्म मैंने संक्षेप में बताया । पहले ब्रह्मा ने भावितात्मा ऋषियों को यह बताया था ।८३½

योऽन्यत्र कुरुते यत्नमनधीत्य श्रुतिं द्विजाः ॥८४
स संमूढो न सम्भाष्यो वेदबाह्यो द्विजातिभिः ।

हे ब्राह्मणवृन्द ! जो द्विजातिगण (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) वेदाध्ययन न करके, अन्य शास्त्रों का अध्ययन अधिक मनोयोग से करते हैं, वे अत्यधिक मूर्ख और वेद-बहिष्कृत होते हैं । दूसरे लोग उससे वार्तालाप नहीं करते ।८४½

न वेदपाठमात्रेण सन्तुष्टो वै द्विजोत्तमाः ॥८५

---

१. विवर्ज्जयेदिति पा० । २. होमान्ते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवमाचारहीनस्तु[1] पङ्क्तेः गौरिव सीदति ।
योऽधीत्य विधिवद्वेदं वेदार्थं न विचारयेत् ॥८६
स चान्धः शूद्रकल्पस्तु पदार्थं न प्रपद्यते ।

ब्राह्मणों को केवल वेदपाठ से ही सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए। वेदाध्यायी ब्राह्मण यदि उपर्युक्त आचारों का पालन न करे, तो वह कीचड़ में गिरी गाय के समान खिन्न हो जाता है। जो विधिपूर्वक वेदाध्ययन करके भी, वेद के अर्थ पर विचार नहीं करता, उसका पूरा वंश शूद्रतुल्य माना जाता है और दान के पात्रों में उनकी गिनती नहीं होती ।८५-८६½।

यदि चात्यन्तिकं वासं कर्तुमिच्छति वै गुरौ ॥८७
युक्तः परिचरेदेनमाशरीराभिघातनात्[2] ।
गत्वा वनं वा विधिवज्जुहुयाज्जातवेदसम् ॥८८
अभ्यसेत्स तदा नित्यं ब्रह्मनिष्ठः समाहितः ।
सावित्रीं शतरुद्रीयं वेदाङ्गानि विशेषतः ।
अभ्यसेत्सततं युक्तो भस्मस्नानपरायणः ॥८९

यदि आजीवन गुरु गृह में निवास करने की इच्छा हो, तो उस निष्ठावान् ब्रह्मचारी को, मृत्यु पर्यन्त एकाग्रचित्त होकर गुरु की सेवा करनी होगी अथवा वन में जाकर विधिपूर्वक अग्नि में हवन करते हुए, प्रतिदिन ब्रह्मनिष्ठ और एकाग्रचित्त होकर वेदाभ्यास करना होना और पूरे शरीर में भस्म लपेटकर, पूरे मनोयोग से गायत्री, शतरुद्रीय और वेदांग का विशेषरूप से अभ्यास करना होगा ।८७-८९।

एतद्विधानं परमं पुराणं वेदागमे सम्यगिहेरितञ्च ।
पुरा महर्षिप्रवरानुपृष्टः स्वायम्भुवो यन्मनुराह देवः ॥९०

वेदांग सम्मत उत्कृष्ट पुराणविधि के विषय में मैंने आपलोगों को बता दिया। प्राचीन काल में देव स्वयम्भुव मनु ने ऋषियों द्वारा पूछे जाने पर उन्हें यह बताया था ।९०

एवमीश्वरसमर्पितान्तरो योऽनुतिष्ठति विधिं विधानवित् ।
मोहजालमपहाय सोऽमृतं याति तत्पदमनामयं शिवम् ॥९१

विधि विधानों का ज्ञाता, जो व्यक्ति, उपर्युक्त प्रकार से ईश्वर में आत्मसमर्पण

---

१. पाठमात्रावसन्नस्तु इति पा०। २. मा शरीरविमोक्षणादिति, मा शरीरनिपातनादिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर इस विधि का पालन करता है, वह संसार के माया मोह का त्याग कर, निरामय, परम-कल्याणकारी मोक्ष को प्राप्त करता है ।९१

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मचारिधर्मनिरूपणं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

श्री कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, ब्रह्मविद्या के वर्णन प्रसंग में, वेदाध्ययनादि-क्रमनियम नामक चौदहवाँ अध्याय समाप्त ॥१४॥

●

पञ्चदशोऽध्यायः

ब्रह्मचारिणां गार्हस्थ्यधर्माः

व्यास उवाच

वेदं वेदौ तथा वेदान्विन्द्याद्वा[1] चतुरो द्विजाः ।
अधीत्य चाभिगम्यार्थं ततः स्नायाद्द्विजोत्तमाः ॥१

व्यास बोले—ब्राह्मणश्रेष्ठो ! द्विजातियों (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों) को अपनी-अपनी शाखा का अध्ययन कर, एक, दो, तीन या चारों वेदों का अध्ययन और उनके अर्थ को भलीभाँति जान लेने के पश्चात्, समावर्तन स्नान करना चाहिए ।१

गुरवे तु धनं दत्त्वा स्नायीत[2] तदनुज्ञया ।
चीर्णव्रतोऽथ[3] युक्तात्मा स शक्तः स्नातुमर्हति ॥२

गुरु को धन देकर सन्तुष्ट करने के पश्चात्, उनकी आज्ञा से समावर्तन स्नान करना चाहिए । व्रतों का आचरण करने वाले, शुद्धात्मा और शक्तिशाली व्यक्ति ही समावर्तन स्नान का अधिकारी होता है ।२

वैणवीं धारयेद्यष्टिमन्तर्वासं तथोत्तरम् ।
यज्ञोपवीतद्वितयं सोदकञ्च कमण्डलुम् ॥३

स्नातक को बाँस का दण्ड, कौपीन, उत्तरीय, दो यज्ञोपवीत और जल से भरा हुआ कमण्डल धारण करना चाहिए ।३

---

१. वेदाङ्गाश्चतुरोऽन्यथा इति, साङ्गान्वै चतुरो द्विजः इति पा० । २. स्नायादिति साधु । ३. तीर्णव्रतोऽथ मुक्तात्मा शक्तो वेति, चीर्णे व्रते सुयुक्तात्मा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छत्रं चोष्णीषममलं पादुके चाप्युपानहौ ।
रौक्मे च कुण्डले वेदं व्युप्तकेशनखः शुचिः ॥४

नाखून और केश काटकर, पवित्र होकर, छत्र, स्वच्छ पगड़ी, खड़ाऊँ या जूता और सोने के कुण्डल धारण करने चाहिए ।४

स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्याद्बहिर्माल्यं न धारयेत् ।
अन्यत्र काञ्चनाद्विप्रः न रक्तां बिभृयात्स्रजम् ॥५

प्रतिदिन वेदों का अध्ययन करना चाहिए और बहिर्माल्य नहीं धारण करना चाहिए । सोने का हार छोड़कर दूसरा कोई लाल रंग की माला नहीं धारण करनी चाहिए ।५

शुक्लाम्बरधरो नित्यं सुगन्धः प्रियदर्शनः ।
न जीर्णमलवद्वासा भवेद्धि वैभवे सति ॥६

श्वेत वस्त्र धारण करके अंगों में सुगन्धित द्रव्य का लेप लगाकर, सदा सुन्दर दीखना चाहिए । धन-सम्पदा रहने पर फटे और मैले वस्त्र धारण करना उचित नहीं है ।६

न रक्तमुल्बणञ्चान्यधृतं वासो न कुण्डिकाम् ।
नोपानहौ स्रजं वाथ पादुके न प्रयोजयेत् ॥७
उपवीतकरान्[1] दर्भान्तथा कृष्णाजिनानि च ।

लाल रंग का, भड़कीला और दूसरे का पहना हुआ वस्त्र, दूसरे का धारण किया हुआ कमण्डल, जूता, खड़ाऊँ, माला, यज्ञोपवीत, आभूषण, कुश और मृगचर्म धारण नहीं करना चाहिए ।७½

नापसव्यं परीदध्याद्वासो न विकृतञ्च यत् ॥८
आहरेद्विधिवद्दारान् सदृशानात्मनः शुभान्[2] ।
रूपलक्षणसंयुक्तान्योनिदोषविवर्जितान् ॥९

अपसव्य और बेढंगे वस्त्र नहीं धारण करना चाहिए । सुन्दर, शुभलक्षणों से युक्त, योनिदोषरहित, मंगलमयी, और अपने समान (अर्थात् अपने ही वर्ण की) स्त्री के साथ विधिपूर्वक विवाह करना चाहिए ।८-९।

अमातृगोत्रप्रभवामसमानर्षिगोत्रजाम्[3] ।
आहरेद्ब्राह्मणो भार्यां शीलशौचसमन्विताम् ॥१०

---

१. उपवीतमलङ्कारमिति पा० । २. सभानिति पा० । ३. आमन्त्रीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समान गोत्र, प्रवर या नानी के गोत्र की कन्या के साथ विवाह करना निषिद्ध है। ब्राह्मण को शील गुण सम्पन्न और शुद्धाचार का पालन करने वाली कन्या के साथ विवाह करना चाहिए।१०

ऋतुकालाभिगामी स्याद्यावत्पुत्रोऽभिजायते।
वर्जयेत्प्रतिषिद्धानि[1] दिनानि तु प्रयत्नतः ॥११

जब तक पुत्रोत्पत्ति हो सकती है, तब तक ऋतु निषिद्ध दिनों को प्रयत्नपूर्वक छोड़कर, ऋतुकाल में पत्नी के साथ सहवास करना चाहिए।११

षष्टचष्टमीं पञ्चदशीं द्वादशीं च चतुर्दशीम्।
ब्रह्मचारी भवेन्नित्यं ब्राह्मणः[2] संयतेन्द्रियः ॥१२

षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा और अमावस्या को सहवास नहीं करना चाहिए और इन दिनों में ब्राह्मण को इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखकर ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।१२

आदधीतावसथ्याग्निं जुहुयाज्जातवेदसम्।
व्रतानि स्नातको नित्यं पावनानि च पालयेत् ॥१३

स्नातक को सदैव गृह्याग्नि ग्रहण कर, उसमें हवन और पवित्र करने वाले व्रतों का पालन करना चाहिए।१३

वेदोदितं स्वकं कर्म नित्यं कुर्यादतन्द्रितः।
अकुर्वाणः पतत्याशु नरकान्याति भीषणान् ॥१४

आलस्य का त्याग कर, प्रतिदिन, वेदों में बताए गए अपने कर्मों को करना चाहिए। ऐसा न करने से व्यक्ति शीघ्र ही पतित होकर मृत्यु के बाद नरक में जाता है। १४

अभ्यसेत्प्रयतो वेदं महायज्ञांश्च भावयेत्।
कुर्याद्गृह्याणि कर्माणि सन्ध्योपासनमेव च ॥१५

वेदाध्ययन, महायज्ञ, गृह्योक्त कर्म और सन्ध्योपासना नियमानुसार सम्पादित करनी चाहिए।१५

सख्यं समाधिकैः कुर्यादर्च्चयेदीश्वरं[3] सदा।
दैवतान्यधिगच्छेत कुर्याद्भार्याविभूषणम् ॥१६

---

१. वर्जयेत्तां प्रयत्नेन प्रतिषिद्धदिनानि तु इति पा०। २. तद्वज्जन्मत्रयाहनीति पा०। ३. उपेयादीश्वरमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने समान अथवा अपने से अधिक गुणी व्यक्ति के साथ मित्रता, सदैव ईश्वर की आराधना में लिप्त रहना और ईश्वरपरायण होना चाहिए तथा पत्नी को अलंकारों से सुसज्जित रखना चाहिए ।१६

न धर्मं ख्यापयेद्विद्वान्न पापं गूहयेदपि ।
कुर्वीतात्महितं नित्यं सर्वभूतानुकम्पनम् ॥१७

किए गए धर्म कार्यों का बखान और अपने पापों को छिपाना नहीं चाहिए। सभी प्राणियों के प्रति दयाभाव रखकर ही सदा अपना हितसाधन करना चाहिए ।१७

वयसः कर्मणोऽर्थस्य श्रुतस्याभिजनस्य च ।
[1]वेदवाग्बुद्धिसारूप्यमाचरेद्विहरेत्सदा ॥१८

सदा आयु, कर्म, धन, वेदाध्ययन और वंश की मर्यादा के अनुसार वेद (ज्ञान) वाक्य और बुद्धि को ढालकर सुखपूर्वक जीवनयापन करना चाहिए ।१८

श्रुतिस्मृत्युदितः सम्यक् साधुभिर्यश्च सेवितः ।
तमाचारं निषेवेत नेहेतान्यत्र कर्हिचित् ॥१९

श्रुति और स्मृतियों में बताए गए, साधुओं के द्वारा पालन किए जाने वाले, रीतियों का ही सेवन करना चाहिए अन्य आचारों का नहीं ।१९

येनास्य पितरो याता येन याताः पितामहाः ।
तेन यायात्सतां मार्गं तेन गच्छन् तरिष्यति ॥२०

पिता, पितामह और साधुगण, जिस सन्मार्ग पर चले थे, उसी मार्ग पर चलने से मुक्ति मिलेगी (ऐसा सोचना चाहिए ।२०

नित्यं स्वाध्यायशीलः स्यान्नित्यं यज्ञोपवीतवान् ।
सत्यवादी[2] जितक्रोधो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥२१

इस प्रकार प्रतिदिन वेदाध्ययन करने वाला, यज्ञोपवीतधारी, सत्यवादी और क्रोध को जीतने वाला व्यक्ति, मोक्ष प्राप्त करता है ।२१

सन्ध्यास्नानपरो नित्यं ब्रह्मयज्ञपरायणः ।
अनसूयो मृदुर्दान्तो गृहस्थः प्रेत्य वर्द्धते ॥२२

सन्ध्यावन्दन, स्नान और ब्रह्मयज्ञ का अनुष्ठान करने वाला, ईर्ष्या न करने वाला, मृदु स्वभाव से युक्त और इन्द्रिय-निग्रह करने वाला गृहस्थ स्वर्ग लाभ करता है ।२२

---

१. देशेति, वेषेति पा० । २. नित्ययाजीवित पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीतरागभयक्रोधो लोभमोहविवर्जितः ।
सावित्रीजापनिरतः श्राद्धकृन्मुच्यते[1] गृही ॥२३

जो गृहस्थाश्रम में रहकर भी विषय वासना, भय, कोध, लोभ और मोह का त्याग कर, नियमानुसार गायत्री का जप और श्राद्ध करता है, वह संसार से मुक्त हो जाता है।२३

मातापित्रोर्हिते युक्तो गोब्राह्मणहिते रतः ।
दान्तो[2] यज्वा देवभक्तो ब्रह्मलोके महीयते ॥२४

माता-पिता, गाय और ब्राह्मणों के हित में संलग्न, इन्द्रियों को वश में रखने वाला, यज्ञपरायण और देवताओं की भक्ति करने वाला व्यक्ति स्वर्ग में सम्मानित होता है।

त्रिवर्गसेवी सततं देवतानाञ्च पूजनम् ।
कुर्यादहरहर्नित्यं नमस्येत् प्रयतः सुरान् ॥२५
विभागशीलः[3] सततं क्षमायुक्तो दयालुकः ।
गृहस्थस्तु समाख्यातो न गृहेण गृही भवेत् ॥२६

त्रिवर्ग (धर्म अर्थ काम) सेवी, सदा देवताओं की पूजा करने वाला, प्रतिदिन नियमानुसार देवताओं को प्रणाम करने वाला, विभागशील, क्षमाशील और दयालु व्यक्ति को गृहस्थ कहते हैं न कि गृह में रहने वाले व्यक्ति को।२५-२६।

क्षमा दया च विज्ञानं सत्यं चैव दमः शमः ।
अध्यात्मनिरतज्ञाननेतद्ब्राह्मणलक्षणम्[4] ॥२७

क्षमा, दया, विज्ञान, सत्य, दम, शम और आध्यात्मिकज्ञान ब्राह्मण के लक्षण हैं।२७

एतस्मान्न प्रमाद्येत विशेषेण द्विजोत्तमाः ।
यथाशक्ति चरेत्कर्म निन्दितानि विवर्जयेत् ॥२८

ब्राह्मण श्रेष्ठों को उपर्युक्त गुणों के पालन में त्रुटि नहीं करनी चाहिए, साथ ही निन्दनीय कर्मों को त्याग कर यथाशक्ति सत्कर्म करना चाहिए।२८

विधूय मोहकलिलं लब्ध्वा योगमनुत्तमम् ।
गृहस्थो मुच्यते बन्धान्नात्र कार्या विचारणा ॥२९

---

१. शुद्धकृन्मुच्यते गृही इति, श्राद्धं कुर्वन् प्रमुच्यते इति पा०। २. दाता इति पा०। ३. विचारशीलः इति पा० विभागशीलः—रात्रिन्दिवं विभज्य धर्मार्थकाम-सेवीत्यर्थः। ४. शीलतेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोह जाल को काटकर, श्रेष्ठ योग प्राप्त कर लेने से, गृहस्थ सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं ।२९

विगर्हातिक्रमाक्षेपाहिंसाबन्धवधात्मनाम् ।
अन्यमन्युसमुत्थानां दोषाणां सर्षणं क्षमा ॥३०

दूसरे के द्वारा क्रोधवश की गई निन्दा, अनादर, तिरस्कार, हिंसा, बन्धन और वध करने के प्रयासों को सहन करना, क्षमा है ।३०

स्वदुःखेष्विव कारुण्यं परदुःखेषु सौहृदात् ।
दयेति मुनयः प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य साधनम् ॥३१

अपने दुःख के समान दूसरे के दुःख में मित्र की भाँति करुणा करने का नाम दया है, मुनियों ने इस दया को साक्षात् धर्म का साधन बताया है ।३१

चतुर्दशानां विद्यानां धारणं हि यथार्थतः ।
विज्ञानमिति तद्विद्याद्यत्र धर्मो विवर्द्धते ॥३२

चौदह विद्याओं के अर्थ को भली भाँति जानकर, मन में धारण करने का नाम विज्ञान है, इस विज्ञान से धर्म की वृद्धि होती है ।३२

अधीत्य विधिवद्वेदानर्थञ्चैवोपलभ्य तु ।
धर्मकार्यान्निवृत्तश्चेन्न तद्विज्ञानमिष्यते ॥३३

नियमपूर्वक वेदाध्ययन करके, उसके अर्थ को भली भाँति जानकर भी जो, धर्म कार्य नहीं करता, उसके उस ज्ञान को विज्ञान नहीं कहा जाता ।३३

सत्येन लोकाञ्जयति सत्यं तत्परमं पदम् ।
यथाभूतप्रवादं तु सत्यमाहुर्मनीषिणः ॥३४

मनीषियों का कहना है कि जो घटना जिस प्रकार घटित हुई हो, उसे उसी प्रकार वर्णित करने का नाम सत्य है । इसी सत्य के द्वारा, मृत्यु के बाद समस्त लोक जीते जा सकते हैं, सत्य ही स्वर्ग है ।३४

दमः शरीरोपरमः शमः प्रज्ञाप्रसादजः ।
अध्यात्ममक्षरं विद्याद्यत्र गत्वा न शोचति ॥३५

तपस्या से शरीर क्षीण होने का नाम दम, बुद्धि और प्रसन्नता से जो उत्पन्न हो उसे शम, जहाँ जाकर शोक न करना पड़े, उस अविनाशी परम ब्रह्म का नाम अध्यात्म है ।३५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यया स देवो भगवान्विद्यया वेद्यते परः ।
साक्षाद्देवो महादेवस्तज्ज्ञानमिति कीर्तितम् ॥३६

जिस विद्या के द्वारा देवताओं के देव, भगवान् शंकर को साक्षात् जाना जा सके उसे ज्ञान कहते हैं ।३६

तन्निष्ठस्तत्परो विद्वान्नित्यमक्रोधनः शुचिः ।
महायज्ञपरो विद्वान्[1] भवेत्तदनुत्तमम् ॥३७

जिसकी बुद्धि शंकर भगवान में लगी हो जो उनकी पूजा करता हो, जो क्रोध नहीं करता और जो पवित्र है, वही विज्ञान है । महायज्ञपरायण वह विद्वान् श्रेष्ठ तत्त्वज्ञान प्राप्त करता है ।३७

धर्मस्यायतनं यत्नाच्छरीरं प्रतिपालयेत् ।
न च देहं विना रुद्रो विद्यते पुरुषैः परः ॥३८

धर्म का गूह स्वरूप अर्थात् धर्म का आधार, इस शरीर का यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए । शरीर के बिना परमपुरुष शंकर भगवान की प्राप्ति नहीं होती है ।३८

नित्यधर्मार्थकामेषु युज्येत नियतो द्विजः ।
न धर्मवर्जितं काममर्थं वा मनसा स्मरेत् ॥३९

गृहस्थ को सदा एकाग्र होकर धर्म, अर्थ और लाभ में संलग्न रहना चाहिए । किन्तु धर्म विहीन अर्थ और काम की चिन्ता कभी मन में भी नहीं लानी चाहिए ।३९

सीदन्नपि हि धर्मेण न त्वधर्मं समाचरेत् ।
धर्मो हि भगवान्देवो गतिः सर्वेषु जन्तुषु ॥४०

धर्म कार्य करते हुए, यदि कभी निराश भी होना पड़े तो भी अधर्म का पालन नहीं करना चाहिए । धर्म ही देवस्वरूप ईश्वर और सभी प्राणियों की गति है ।४०

भूतानां प्रियकारी स्यान्न परद्रोहकर्मधीः ।
न वेददेवतानिन्दां कुर्यात्तैश्च न संवदेत् ॥४१

सभी प्राणियों को जो प्रिय लगे, ऐसा कार्य करना चाहिए । अपनी बुद्धि को, कभी दूसरों को क्षति पहुँचाने में नही लगानी चाहिए । वेदों और देवताओं की निन्दा नहीं करनी चाहिए और यहाँ तक कि निन्दा करने वाले के साथ वार्तालाप भी नहीं करनी चाहिए ।४१

---

१. लभ्यते तनुमुत्तमामिति, लभते तत्त्वमुत्तममिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यस्त्विमं नियतं विप्रो धर्माध्यायं पठेच्छुचिः ।
अध्यापयेच्छ्रावयेद्वा ब्रह्मलोके महीयते ॥४२

जो ब्राह्मण पवित्र होकर इस धर्माध्याय का पाठ करता है, कराता है और दूसरों को सुनाता है, वह मृत्यूपरान्त स्वर्गलोक पाकर, वहाँ सम्मानित होता है ।४२

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ऋषिव्याससंवादे ब्रह्मचारिणां गार्हस्थ्यधर्मनिरूपणं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

श्री कूर्ममहापुराण के उत्तरार्द्ध में, ब्रह्मविद्या के वर्णन प्रसंग में धर्माध्याय नामक पन्द्रहवाँ अध्याय समाप्त ॥१५॥

षोडशोऽध्यायः

व्यास उवाच

न हिंस्यात्सर्वभूतानि नानृतं वा वदेत्क्वचित् ।
नाहितं नाप्रियं ब्रूयान्न स्तेनः स्यात्कथञ्चन ॥१

व्यास बोले—किसी प्राणी के प्रति हिंसा नहीं करनी चाहिए । असत्य, अहितकर और अप्रिय वचन नहीं बोलना चाहिए तथा कभी चोरी नहीं करनी चाहिए ।१

तृणं वा यदि वा शाकं मृदं वा जलमेव च ।
परस्यापहरञ्जन्तुर्नरकं प्रतिपद्यते ॥२

दूसरे का घास, साग, मिट्टी और जल चुराने से व्यक्ति नरक में जाता है ।२

न राज्ञः प्रतिगृह्णीयान्न शूद्रात्पतितादपि ।
नान्यस्माद्याचकत्वञ्च[1] निन्दिताद्दुर्ज्जयेद्बुधः ॥३
नित्यं याचनको न स्यात्पुनस्तत्रैव[2] याचयेत् ।
प्राणानपहरत्येष याचकस्तस्य दुर्मतिः ॥४

राजा, शूद्र, पतित व्यक्ति का दान कभी ग्रहण नहीं करना चाहिए । यदि सामर्थ्य न हो तो दूसरों से दान माँगा जा सकता है परन्तु पतित व्यक्ति से तो सदा नहीं माँगना चाहिए और बारबार एक ही व्यक्ति से नहीं माँगना चाहिए,

---

१. न चान्यस्मादशक्तश्चेति पा० । २. पुनस्तं नैवेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि प्रतिदिन एक ही व्यक्ति से दान माँगने वाला, दुष्टबुद्धि याचक, दाता के प्राण हर लेता है।४

न देवद्रव्यहारी स्याद्विशेषेण द्विजोत्तमः ।
ब्रह्मस्वं वा नापहरेदापद्यपि कदाचन ॥५

हे ब्राह्मण श्रेष्ठों! देव-सम्पत्ति विशेष रूप से नहीं चुरानी चाहिए। ब्राह्मण का धन तो आपत्तिकाल में भी कभी नहीं चुराना चाहिए।५

न विषं विषमित्याहुर्ब्रह्मस्वं विषमुच्यते ।
देवस्वं चापि यत्नेन सदा परिहरेत्ततः ॥६

मुनिवृन्द! साँप के मुँह से निकलने वाले विष को विष नहीं कहते अपितु ब्राह्मण और देवताओं की सम्पत्ति को विष कहा गया है, इसलिए इनका सदा त्याग करना चाहिए।६

पुष्पे शाकोदके काष्ठे तथा मूले तृणे फले ।
अदत्तादानमस्तेयं मनुः प्राह प्रजापतिः ॥७

प्रजापति मनु का कहना है कि यदि फूल, साग, जल, काष्ठ, फल-मूल, और दूब, स्वामी से पूछे बिना ग्रहण किया जाय, तो यह चोरी नहीं कही जायगी।७

ग्रहीतव्यानि पुष्पाणि देवार्चनविधौ द्विजाः ।
नैकस्मादेव नियतमननुज्ञाय केवलम् ॥८

हे ब्राह्मणवृन्द! देवता की पूजा के निमित्त बिना स्वामी से पूछे फूल तो चुना जा सकता है, परन्तु प्रतिदिन एक ही स्थान से बिना पूछे नहीं लेना चाहिए।८

तृणं काष्ठं फलं पुष्पं प्रकाशं वै हरेद्बुधः ।
धर्मार्थं केवलं ग्राह्यं ह्यन्यथा पतितो भवेत् ॥९

विद्वान् व्यक्ति तृण, काष्ठ, फल और फूल, इन सारी वस्तुओं को धार्मिक कार्य के लिए सबके सामने उठा ले सकता है परन्तु दूसरे कार्य के लिए उठाने से पतित हो जाता है।९

तिलमुद्गयवादीनां मुष्टिर्ग्राह्या पथि स्थितैः ।
क्षुधार्तैर्नान्यथा विप्रा धर्मविद्भिरिति स्थितिः[1] ॥१०

धर्मज्ञों ने यह नियम बनाया है कि, राह चलते हुए अत्यधिक भूख सताने पर बुध व्यक्ति मुट्ठी भर तिल, मूंग और जौ ग्रहण कर सकता है, परन्तु भूखा न रहने पर कोई वस्तु ग्रहण नहीं कर सकता।१०

१. श्रुतिरिति, स्थितमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न धर्मस्यापदेशेन पापं कृत्वा व्रतं चरेत् ।
व्रतेन पापं प्रच्छाद्य कुर्वन् स्त्रीशूद्रलम्बनम् ॥११

पाप करके प्रायश्चित्त स्वरूप, व्रतों का पालन करते हुए, पाप को छिपाकर, स्त्री और शूद्रादि को चकित करके कोई अनुष्ठान नहीं करना चाहिए ।११

प्रेत्येह चेदृशो विप्रो गर्ह्यते ब्रह्मवादिभिः ।
छद्मना चरितं यच्च व्रतं रक्षांसि गच्छति ॥१२

छल कपट के द्वारा जिन व्रतों का अनुष्ठान किया जाता है, उनका भोग राक्षस लगाते हैं । छल कपट से व्रत करने वाला ब्राह्मण इहलोक और परलोक में ब्रह्मज्ञों के द्वारा निन्दित होता है ।१२

अलिङ्गी लिंगिवेशेन यो वृत्तिमुपजीवति ।
स लिंगिनां हरेदेनस्तिर्यग्योनौ च जायते ॥१३

जिसका जो लिंग (चिह्न) नहीं होता वह यदि उस लिंग विशेष के चिह्नों को धारण करके उसके सहारे जीविकोपार्जन करता है, तो उसे उस लिंग का पाप लगता है, जिसके कारण अगले जन्म में उसे पक्षी योनि में जन्म लेना पड़ता है ।१३

बैडालव्रतिनः[1] पापा लोके धर्मविनाशकाः ।
सद्यः पतन्ति पापेन कर्मणस्तस्य तत्फलम् ॥१४

धर्म का नाश करने वाले, बैड़ाल व्रतधारी (अर्थात् प्रकट रूप से धर्माचरण और अप्रकट रूप से पापाचार करने वाले) पापी तुरन्त पाप में पतित हो जाते हैं । उनके इस कर्म का यही फल है ।१४

पाखण्डिनो विकर्मस्थान्वामाचारांस्तथैव च ।
पञ्चरात्रान्[2] पाशुपतान्[3] वाङ्मात्रेणापि नार्चयेत् ॥१५

पाखण्डी, अपने वर्ग से भिन्न वर्ण के अनुसार जीविकोपार्जन करने वाला, तान्त्रिक, पञ्चरात्र और पाशुपत (शैवविशेष) धर्मावलम्बियों की पूजा वाणी से भी नहीं करनी चाहिए ।१५

वेदनिन्दारतान् मर्त्यान्देवनिन्दारतांस्तथा ।
द्विजनिन्दारतांश्चैव मनसापि न चिन्तयेत् ॥१६

वेदों, देवताओं और ब्राह्मणों की निन्दा करने वाले व्यक्तियों को मन में नहीं लाना चाहिए ।१६

---

१. चण्डालव्रतिन इति पा० । २. पञ्चरात्रनामकग्रन्थानुसारिणो वैष्णवविशेषान् पा० । ३. पाशुपतान्—शैवविशेषान् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याजनं योनिसम्बन्धं सहवासञ्च भाषणम् ।
कुर्वाणः पतते जन्तुस्तस्माद्यत्नेन वर्जयेत् ॥१७

उपर्युक्त सभी पापी पतित होते हैं, इसलिए इनसे पौरोहित्य करवाने, योन सम्बन्ध रखने, सहवास और वार्तालाप करने से भी पतित होना पड़ता है। इसलिए इनका साथ छोड़ने का प्रयास करना चाहिए ।१७

देवद्रोहाद्गुरुद्रोहः कोटिकोटिगुणाधिकः ।
ज्ञानापवादो नास्तिक्यं तस्मात्कोटिगुणाधिकम् ॥१८

देवद्रोह से गुरुद्रोह करोड़ों गुणा, तथा गुरुद्रोह से भी ज्ञाननिन्दक और नास्तिक होना करोड़ों गुणा अधिक पापजनक है ।१८

गोभिश्च दैवतैर्विप्रैः कृष्या राजोपसेवया ।
कुलान्यकुलता यान्ति यानि हीनानि धर्मतः ॥१९

गाय, ब्राह्मण, देवता, राजसेवा और कृषि जैसी हीनवृत्ति के द्वारा जीविकोपार्जन करने वाला व्यक्ति कुलीन होने पर भी उसका वंश दूषित हो जाता है।१९

कुविवाहैः क्रियालोपैर्वेदानध्ययनेन च ।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च ॥२०

कुविवाह, क्रियालोप (नित्य-नैमित्यिक कर्मों को सम्पन्न न करने से) और वेदपाठ न करने से, ब्राह्मण के द्वारा अपमानित किए जाने पर कुलीन व्यक्ति अपने कुल से पतित हो जाता है ।२०

अनृतात्पारदार्याच्च तथाऽभक्ष्यस्य भक्षणात् ।
अश्रौतधर्माचरणात्क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् ॥२१

झूठ बोलने, पराई स्त्री के साथ सहवास करने, न खाने योग्य वस्तु खाने और वेदविरुद्ध धर्माचरण करने से, वंश का शीघ्र नाश हो जाता है ।२१

अश्रोत्रियेषु वै दानाद्वृषलेषु तथैव च ।
विहिताचारहीनेषु क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् ॥२२

वेद पाठ और नियमानुसार आचारों का पालन न करने वाले ब्राह्मणों और शूद्रों को दान देने से वंश का शीघ्र नाश हो जाता है ।२२

नाधार्मिकैर्वृते ग्रामे न व्याधिबहुले भृशम् ।
न शूद्रराज्ये निवसेन्न पाखण्डजनैर्वृते ॥२३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस गाँव में नास्तिक, और पाखण्डी अधिक संख्या में निवास करते हों, जहाँ बीमारियाँ अधिक होती हैं और शूद्रों का राज्य हो, वहाँ नहीं रहना चाहिए ।२३

हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्ये पूर्वपश्चिमयोः शुभम् ।
मुक्त्वा समुद्रयोर्देशं नान्यत्र निवसेद्द्विजः ॥२४

ब्राह्मण को हिमालय और विन्ध्य पर्वत के बीच निवास करना चाहिए। (इसके अतिरिक्त) पूर्व और पश्चिमी समुद्र तट को छोड़कर, अन्य शुभ देशों में निवास किया जा सकता है परन्तु इन स्थानों के अलावा और कहीं निवास करना निषिद्ध है ।२४

कृष्णो वा यत्र चरति मृगो नित्यं स्वभावतः ।
पुण्याश्च विश्रुता नद्यस्तत्र वा निवसेद्द्विजः ॥२५

जहाँ काले रंग का हिरण निर्भय होकर विचरण करता हो, और जहाँ शास्त्रों में वर्णित पवित्र नदियाँ बहती हों, ब्राह्मण को ऐसे स्थान पर निवास करना चाहिए ।२५

अर्द्धक्रोशान्नदीकूलं वर्जयित्वा द्विजोत्तमः ।
नान्यत्र निवसेत्पुण्यां नान्त्यजग्रामसन्निधौ ॥२६

ब्राह्मणश्रेष्ठों को नदी से आधे कोस की दूरी पर निवास करना चाहिए, इसके अलावा किसी दूसरें स्थान पर और चाण्डालों की बस्ती के पास नहीं रहना चाहिए ।२६

न संवसेच्च पतितैर्न चण्डालैर्न पुक्कसैः ।
न मूर्खैर्नाविलिप्तैश्च नान्त्यैर्नान्त्यावसायिभिः ॥२७

पतित, चाण्डाल, पुक्कश, मूर्ख, वैभव के घमण्ड में चूर, नीचजाति और अन्त्यावसायियों (बीच काम करने वालों) के साथ नहीं रहना चाहिए ।२७

एकशय्यासनं पंक्तिर्भाण्डपक्वान्नमिश्रणम् ।
याजनाध्यापनं योनिस्तथैव सहभोजनम् ॥२८

सहाध्यायस्तु दशमः सहयाजनमेव च ।
[1]एकादशैते निर्दिष्टा दोषाः सांकर्यसंज्ञिताः ॥२९

उपर्युक्त व्यक्तियों के साथ, एक शय्या पर सोना, एकासन पर बैठना, एक पंक्ति में बैठकर खाना, इनके बरतन और पकाए हुए अन्न के साथ अपने बरतन और पक्वान्न मिलाना, इनका पौरोहित्य करना, इनको पढ़ाना, इनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना, साथ-साथ भोजन, अध्ययन और पौरोहित्य करना, ग्यारह कार्य शंकर दोष कहलाते हैं ।२८-२९।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीपे वा व्यवस्थानात्पापं संक्रमते नृणाम् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संकरं वर्ज्जयेद्बुधः ॥३०

एकपंक्त्युपविष्टा ये न स्पृशन्ति परस्परम् ।
भस्मना कृतमर्यादा न तेषां संकरो भवेत् ॥३१

ऐसे व्यक्तियों को समीप निवास करने से पाप लगता है। इसलिए संकर पापों को उत्पन्न करने वाले कार्यों का बलपूर्वक त्याग करना चाहिए परन्तु एक पंक्ति में बैठकर भी यदि भस्म से सीमा रेखा खींच दी जाय और परस्पर एक दूसरे का स्पर्श न हो, तो इससे संकर दोष नहीं लगता ।३०-३१।

अग्निना भस्मना चैव सलिलेन विशेषतः ।
द्वारेण स्तम्भमार्गेण षड्भिः पंक्तिर्विभिद्यते ॥३२

अग्नि, जल, भस्म, द्वार, खम्भा और मार्ग, इन छः वस्तु से पंक्ति पृथक् हो जाती है (अर्थात् उपर्युक्त वस्तुओं में से किसी एक का भी बीच में व्यवधान रहने से पंक्ति दोष नहीं लगता) ।३२

न कुर्याद्[1]खवैराणि विवादं चैव पैशुनम् ।
परक्षेत्रे गां चरन्तीं न चाचक्षति कस्यचित् ॥३३

बिना प्रयोजन के किसी के साथ शत्रुता, झगड़ा और कुटिलता नहीं करनी चाहिए और खेत में घुसकर गाय को खड़ी फसल चरते देखकर, भी किसी से कहना नहीं चाहिए ।३३

न संवसेत्सूतकिना न कञ्चिन्मर्मणि स्पृशेत् ।
न सूर्यपरिवेषं वा नेन्द्रचापं शवाग्निकम् ॥३४

जिसको सूतक लगा हो, उसके साथ निवास नहीं करना चाहिए और न ही किसी के मर्म को आघात पहुँचाना चाहिए। सूर्यमण्डल, इन्द्रधनुष को देखना और शवाग्नि का स्पर्श करना निषिद्ध है ।३४

परस्मै कथयेद्विद्वाञ्छशिनं वा कदाचन[3] ।
न कुर्यादबहुभिः सार्द्धं विरोधं वा[4] कदाचन ॥३५

विद्वानों को कभी किसी से अपना जन्म चन्द्र नहीं बताना चाहिए और बहुत-से लोगों के साथ विरोध नहीं करना चाहिए ।३५

---

१. एकादश समुद्दिष्टा इति पा० । २. शुष्कवैराणीति पा० । ३. कथञ्चनेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मनः प्रतिकूलान परेषां न समाचरेत् ।
तिथिं पक्षस्य न ब्रूयान्नक्षत्राणि विनिर्दिशेत् ॥३६

जो कार्य अपने को प्रतिकूल मालूम पड़े, वह दूसरों के लिए नहीं करना चाहिए। अपने जन्म की तिथि, पक्ष और नक्षत्र किसी को नहीं बताना चाहिए ।३६

नोदक्यामभिभाषेत नाशुचिं वा द्विजोत्तमः ।
न देवगुरुविप्राणां दीयमानं तु वारयेत् ॥३७

ब्राह्मणों को रजस्वला और अपवित्र के साथ बातचीत नहीं करनी चाहिए। देवता, गुरु और ब्राह्मण को दान देने के लिए इच्छुक दाता को दान से विमुख नहीं करना चाहिए ।३७

न चात्मानं प्रशंसेद्वा परनिन्दाञ्च वर्जयेत् ।
वेदनिन्दां देवनिन्दां प्रयत्नेन विवर्ज्जयेत् ॥३८

अपनी प्रशंसा और दूसरों की निन्दा नहीं करनी चाहिए। वेद और देवताओं की निन्दा छोड़ने का प्रयास करना चाहिए ।३८

यस्तु देवानृषीन् विप्रान् वेदान्वा निन्दति द्विजः ।
न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा शास्त्रेष्विह मुनीश्वराः ॥३९

हे मुनीश्वरों ! जो ब्राह्मण, देवता, ऋषि, ब्राह्मण और वेदों की निन्दा करता है। उसकी मुक्ति का मार्ग किसी भी शास्त्र में नहीं मिलता ।३९

निन्दयेद्यो गुरून्देवान्वेदं वा सोपबृंहणम्[1] ।
कल्पकोटिशतं साग्रं रौरवे पच्यते नरः ॥४०

जो व्यक्ति गुरु, देवता और बृहत् वेदों की निन्दा करता है, वह सौ करोड़ कल्पों से भी अधिक समय तक नरक में वास करता है ।४०

तूष्णीमासीत निन्दायां न ब्रूयात्किञ्चिदुत्तरम् ।
कर्णौ पिधाय गन्तव्यं न चैतानवलोकयेत् ॥४१

वेद, गुरु या देवताओं की निन्दा सुनने से मौन धारण कर न तो किसी प्रकार का उत्तर देना चाहिए और न निन्दकों की तरफ देखना चाहिए, बल्कि कानों को ढक कर उस स्थान से दूसरे स्थान में चला जाना चाहिए ।४१

वर्जयेद्यो रहस्यञ्च परेषां गूहयेदबुधः ।
विवादं स्वजनैः साद्धं न कुर्याद्यो कदाचन ॥४२

---

१. सोपबृंहणं—उपबृंहणान्वितम् । उपबृंहणं संग्रहेण वर्द्धनम्, संहिताकारेण निबद्धम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानियों को दूसरों की गुप्त बातों को लेकर उनकी आलोचना न करके, उन्हें गुप्त रखना चाहिए और निकट सम्बन्धियों के साथ कदापि झगड़ा नहीं करना चाहिए ।४२

न पापं पापिनं ब्रूयादपापं वा द्विजोत्तमाः ।
स तेन तुल्यदोषः स्यान्मिथ्यादिदोषवान् भवेत् ॥४३

द्विजश्रेष्ठों ! कोई चाहे पापी हो या निष्पाप, उसे पापी नहीं कहना चाहिए। क्योंकि पापी को पापी कहने से उतना ही पाप लगता है और यदि वह निष्पाप हो तो मिथ्या कथन होने के कारण अधिक पापी होना पड़ता है ।४३

यानि मिथ्याभिशस्तानां पतन्त्यश्रूणि रोदनात् ।
तानि पुत्रान् पशून् घ्नन्ति तेषां मिथ्याभिशंसिनाम् ॥४४

यदि कोई झूठी बदनामी के कारण रोता है, तो उसके सारे आंसू, बदनाम करने वाले के पुत्र और पशु समूहों का समूल नाश कर देते हैं ।४४

ब्रह्महत्यासुरापाने स्तेयगुर्वङ्गनागमे ।
दृष्टं[1] विशोधनं सद्भिर्नास्ति मिथ्याभिशंसने ॥४५

ब्रह्महत्या, मद्यपान, चोरी, गुरु पत्नी के साथ सहवासादि महापापों का प्रायश्चित्त मृत्यु है परन्तु झूठ बोलने से पापी की शुद्धि का कोई मार्ग शेष नहीं रहता ।४५

नेक्षेतोद्यन्तमादित्यं शशिनञ्चानिमित्ततः ।
नास्तं यातं न वारिस्थं नोपसृष्टं न मध्यगम् ॥४६

उदय और अस्त होते हुए, आकाश के मध्य स्थित, जल में प्रतिबिम्बित और राहुग्रस्त सूर्य तथा चन्द्रमा को नहीं देखना चाहिए ।४६

विरोहितं वाससा[2] वा नदर्शान्तरगामिनम्[3] ।
न नग्नां स्त्रियमीक्षेत पुरुषं वा कदाचन ॥४७

वस्त्र से ढक कर तथा शीशे में प्रतिबिम्बित सूर्य और चन्द्रमा को तथा निर्वस्त्र स्त्री और पुरुष को नहीं देखना चाहिए ।४७

न च मूत्रं पुरीषं वा न च संसृष्टमैथुनम् ।
नाशुचिः सूर्यसोमादौ ग्रहानालोकयेद् बुधः ॥४८

---

१. दृष्टं वै शोधनं वृद्धैरिति, वृद्धैरिति पा० । २. वा संसारादिति पा० । ३. नादर्शान्तरगामिनामिति, न दृशाद्यनुगामिनामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्र, मल, तथा मैथुन में निरत व्यक्ति को न देखे। विद्वान् पुरुष अपवित्रावस्था में सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रहों की ओर न ताके ।४८

पतितव्यङ्गचण्डालानुच्छिष्टान्नावलोकयेत् ।
नाभिभाषेत च परमुच्छिष्टो वावगर्वितः[1] ॥४९

पतित, विकलांग, चाण्डाल और उच्छिष्ट (परित्यक्त वा जूठे मुँह वाले को नहीं देखना चाहिए। जूठे मुँह या मिथ्यागर्वी होकर किसी से बात नहीं करनी चाहिए ।४९

न स्पृशेत्प्रेतसंस्पर्शं न क्रुद्धस्य गुरोर्मुखम् ।
न तैलोदकयोश्छायां न पत्नीं भोजने सति ।
नियुक्तबन्धनाङ्गां[2] वा नोन्मत्तं मत्तमेव वा ॥५०

शव का भलीभाँति स्पर्श करने वाले व्यक्तियों को छूना नहीं चाहिए। क्रोधान्वित गुरु का मुँह, तेल और पानी में अपनी परछाईं तथा भोजन करती हुई पत्नी को नहीं देखना चाहिए। बन्धन मुक्त गाय, नशे में चूर व्यक्ति तथा पागल के पास नहीं जाना चाहिए ।५०

नाश्नीयात् भार्यया सार्द्धं नैनामीक्षेत मेहनीम्[3] ।
क्षुवन्तीं जृम्भमाणां वा नासनस्थां यथासुखम् ॥५१

पत्नी के साथ बैठकर भोजन नहीं करना चाहिए तथा मूत्र त्याग करती हुई, छींकती हुई, जम्हाई लेती हुई या (आराम के क्षणों में) अलस भाव से बैठी हुई पत्नी को नहीं देखना चाहिए ।५१

नोदके चात्मनो रूपं शुभं वाशुभमेव वा ।
न लङ्घयेच्च मूत्रं[4] वा नाधितिष्ठेत्कदाचन ॥५२

भली हो या बुरी, दोनों ही स्थितियों में अपनी परछाईं जल में नहीं देखनी चाहिए और मूत्र को कभी लाँघना या उस पर खड़े नहीं होना चाहिए ।५२

न शूद्राय मतिन्दद्यात्कृशरं पायसं दधि ।
नोच्छिष्टं वा घृतमधु न च कृष्णाजिनं हविः ॥५३

शूद्रों को ज्ञान का उपदेश, तिल और चावल से पकाई हुई वस्तु, खीर, दही, घी, शहद, काला मृगचर्म, हवन की सामग्री और जूठन नहीं देनी चाहिए ।५३

न चैवास्मै व्रतं दद्यान्न च धर्मं वदेद्बुधः ।
न च क्रोधवशङ्गच्छेद्द्वेषं रागञ्च वर्जयेत् ॥५४

---

१. वावगुण्ठितः इति पा० । २. नामुक्तेति, न मुक्तेति पा० । ३. चाशुचिमिति पा० । ४. मतिमानिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वानों के लिए शूद्रों को व्रत और धर्म का उपदेश देना निषिद्ध है। कदापि क्रोध के वशीभूत नहीं होना चाहिए, साथ ही अनुराग तथा द्वेष दोनों का त्याग करना चाहिए ।५४

लोभं दम्भं तथा वर्ज्यं यात्राविज्ञानकुत्सनम्[1] ।
मानं मोहं तथा क्रोधं द्वेषञ्च परिवर्जयेत् ॥५५

लोभ, अहंकार, यात्रा ज्ञान की निन्दा, मान, मोह, क्रोध और द्वेष को त्यागने का प्रयत्न करना चाहिए ।५५

न कुर्यात्कस्यचित्पीडां सुतं शिष्यञ्च ताडयेत् ।
न हीनानुपसेवेत न च तीक्ष्णमतीन् क्वचित् ॥५६

पुत्र और शिष्य को मारने का विधान है किन्तु किसी और को पीड़ित करने का नहीं। हीनों और तीक्ष्ण बुद्धि वालों की शरण में कभी नहीं जाना चाहिए ।५६

नात्मानञ्चावमन्येत दैन्यं यत्नेन वर्ज्जयेत् ।
न[2] चाशिष्यं न सत्कुर्यान्नात्मानं शंसयेद्बुधः ॥५७

ज्ञानियों को अपनी उपेक्षा किए बिना दरिद्रता को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। सम्माननीय व्यक्तियों का सत्कार तथा स्वयं को संशय में नहीं डालना चाहिए ।५७

न नखैर्विलिखेद्भूमिं गां च संवेशयेन्न हि ।
न नदीषु[3] नदीं ब्रूयात्पर्वते न च पर्वतान्[4] ॥५८

नाखून से भूमि पर लिखना और गाय को पीठ पर नहीं बैठना चाहिए। एक नदी में दूसरे नदी को तथा एक पर्वत पर दूसरे पर्वत की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए ।५८

आ वसेत्तेन नैवापि न त्यजेत्सहयायिनम् ।
नावगाहेदपो नग्नो वह्निञ्चापि व्रजेत्पदा ॥५९

भोजन और विश्राम के समय साथी को त्यागना नहीं चाहिए। जल में निर्वस्त्र होकर स्नान और अग्नि में पैर नहीं डालना चाहिए ।५९

---

१. ईर्ष्यामिति पा० । २. न विशिष्टानिति, न च शिष्टानिति, न चाशिष्टानिति पा० । ३. नदीस्थितः नदीविषयिकां कथां पर्वतारूढः पर्वतसम्बन्धिनीं कथां तथा नापि प्रस्तूयात् । ४. तेन तादृशेन नद्यां नदीं पर्वते पर्वतं निर्दिशता जनेन सह नैवोत्तरेत् । आवासे भोजनेवापीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिरोऽभ्यङ्गावशिष्टेन तैलेनाङ्गं न लेपयेत् ।
न शस्त्रसर्पैः क्रीडेत न स्वानि खानि च स्पृशेत् ॥६०

सिर पर तेल लगाकर, बचे हुए तेल को शरीर पर मलना, साँप और अस्त्रों के साथ खिलवाड़ तथा अपने इन्द्रियों का स्पर्श नहीं करना चाहिए ।६०

रोमाणि च रहस्यानि नाशिष्टेन सह व्रजेत् ।
न पाणिपादावग्नौ च चापलानि समाश्रयेत् ॥६१

गुप्तांगों में स्थित बालों को छूना और असभ्य व्यक्ति के साथ गमन नहीं करना चाहिए । अग्नि में हाथ, पैर, की चंचलता का त्याग करना चाहिए ।६१

न[1] शिश्नोदरयोर्नित्यं न च श्रवणयोः क्वचित् ।
न चाङ्गनखवादं वै कुर्यान्नाञ्जलिना पिबेत् ॥६२

लिंग, पेट और कान की चंचलता का परित्याग करना चाहिए । शरीर और नाखूनों को बजाना तथा अँजुली से जल पीना नहीं चाहिए ।६२

नाभिहन्याज्जलं पद्भ्यां पाणिना वा कदाचन ।
न शातयेद्दिष्टकाभिः फलानि सफलानि च ॥६३

जल में हाथ पैर नहीं चलाना चाहिए तथा ढेले से फलों एवं फल युक्त को नहीं तोड़ना चाहिए ।६३

न म्लेच्छभाषणं शिक्षेन्नाकर्षेच्च पदासनम् ।
न भेदनमधिस्फोटं छेदनं वा विलेखनम् ॥६४

म्लेच्छों को भाषा को सीखना, पैर से आसन खींचना, नाखून से किसी को चोट पहुँचाना, उसे बजाना, उससे कुश को चीरना और मिट्टी खोदना निषिद्ध है ।६४

कुर्याद्विमर्दनं धीमान्नाकस्मादेव निष्फलम् ।
नोत्सङ्गे भक्षयेद्भक्ष्यान् वृथाचेष्टाञ्च नाचरेत् ॥६५

बुद्धिमान् पुरुष को कभी अकारण और व्यर्थ जाने वाला युद्ध नहीं लड़ना चाहिए । खाने की वस्तु को गोद में रखकर खाना और जिस कार्य से कोई दृष्ट या अदृष्ट फल न मिलता हो, तो उस कार्य को, नहीं करना चाहिए ।६५

न नृत्येदथवा गायेन्न वादित्राणि वादयेत् ।
न संहताभ्यां पाणिभ्यां कण्डूयेदात्मनः शिरः ॥६६

---

१. न शिश्नोदरचापल्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाचना, गाना, बजाना और एक साथ दोनों हाथों से सिर खुजलाना नहीं चाहिए ।६६

न लौकिकैः स्तवैर्देवांस्तोषयेद्भेषजैरपि[1] ।
नाक्षैः क्रीडेन्न धावेत नाप्सु विण्मूत्रमाचरेत् ॥६७

औषधि या लौकिक स्तुतियों से देवताओं को सन्तुष्ट करने का प्रयास, जुआ खेलना, दौड़ना और पानी के अन्दर मलमूत्र का त्याग नहीं करना चाहिए ।६७

नोच्छिष्टः संविशेन्नित्यं न नग्नः स्नानमाचरेत् ।
न गच्छेन्न पठेद्वापि न चैव स्वशिरः स्पृशेत् ॥६८

जूठे होकर सोना, निर्वस्त्र होकर स्नान करना और जूठे तथा निर्वस्त्र होकर कहीं जाना, पाठ करना और सिर को छूना नहीं चाहिए ।६८

न दन्तैर्नखरोमाणि छिन्द्यात्सुप्तं न बोधयेत् ।
न बालातपमासेवेत्[2] प्रेतधूमं विवर्जयेत् ॥६९

दाँतों से नाखून और रोएँ को तोड़ना, सोते हुए व्यक्ति को जगाना, क्वार-कार्तिक का धूप और चिता के धुएँ को शरीर में लगाना, उचित नहीं है ।६९

नैकः सुप्याच्छून्यगृहे स्वयं नोपानहौ हरेत् ।
नाकारणाद्वा निष्ठीवेन्न बाहुभ्यां नदीं तरेत् ॥७०

सूने घर में अकेले सोना, अपने जूतों को ढोना, अकारण थूकना और भुजाओं (के बल से, नदी नहीं पर करना चाहिए ।७०

न पादक्षालनं कुर्यात्पादेनैव कदाचन ।
नाग्नौ प्रतापयेत्पादौ न कांस्ये धावयेद्बुधः ॥७१

ज्ञानियों को एक पैर से दूसरे पैर को धोना, आग में तपाना और काँसे के बर्तन में धोना नहीं चाहिए ।७१

नातिप्रसारयेद्देवं ब्राह्मणान् गामथापि वा ।
वायग्निगुरुविप्रान्वा सूर्यं वा शशिनं प्रति ॥७२

देवता, गुरु, ब्राह्मण, गाय, वेदज्ञ ब्राह्मण, वायु, अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य को अतिप्रसारित नहीं करना चाहिए ।७२

अशुद्धशयनं यानं स्वाध्यायं स्नानभोजनम् ।
बहिर्निष्क्रमणञ्चैव न कुर्वीत कथञ्चन ॥७३

१. वाक्यजैरपीति, बाह्यजैरपीति, पा० । २. आसेवेतेति साधु ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपवित्र होकर सोना, वाहन पर चढ़ना, वेदाध्ययन करना, स्नान, भोजन और घर से बाहर कदापि घूमना नहीं चाहिए ।७३

स्वप्नमध्ययनं यानमुच्चारं[1] भोजनं गतिम् ।
उभयोः सन्ध्ययोर्नित्यं मध्याह्ने तु विवर्जयेत् ॥७४

दोनों संध्यासमय और मध्याह्न में, सोना, पढ़ना, वाहन पर चढ़ना, मल मूत्र त्यागना, भोजन गमन जैसे कार्यों को छोड़ने का यथा सम्भव प्रयास करना चाहिए ।७४

न स्पृशेत्पाणिनोच्छिष्टो विप्रो गोब्राह्मणानलान् ।
न चैवान्नं पदा[2] वापि न देवप्रतिमां स्पृशेत् ॥७५

जूठा हो जाने के पश्चात्, ब्राह्मण को अपने हाथों से गाय, ब्राह्मण, अग्नि, अन्न और देवताओं की मूर्ति को छूना नहीं चाहिए तथा पैरों से तो कदापि नहीं छूना चाहिए ।७५

नाशुद्धोऽग्निं परिचरेन्न देवान् कीर्त्तयेदृषीन् ।
नावगाहेदगाधाम्बु धारयेन्नाग्निमेकतः[3] ॥७६

अपवित्र व्यक्ति अग्नि की सेवा, देवता और ऋषियों का नामोच्चारण, गहरे जल में स्नान और हाथ में अग्नि को धारण नहीं कर सकता ।७६

न वामहस्तेनोद्धृत्य पिबेद्वक्त्रेण वा जलम् ।
नोत्तरेदनुपस्पृश्य नाप्सु रेतः समुत्सृजेत् ॥७७

बाएँ हाथ से उठाकर और औंधे मुंह पशुओं की भाँति जल नहीं पीना चाहिए । जूठे मुंह से जवाब देना और पानी में वीर्य त्यागना नहीं चाहिए ।७७

अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा ।
व्यतिक्रमेन्न स्रवन्तीं नाप्सु मैथुनमाचरेत् ॥७८

मलमूत्रादि अपवित्र वस्तु लगे हुऐ वस्त्रों को धोने के लिए उन्हें जलाशय में नहीं डुबोना चाहिए । रक्त विषादि द्रव्यों को जलाशय में बहाना, वेग से बहती हुई नदी को पार करना तथा जल में मैथुन क्रिया करना अनुचित है ।७८

चैत्यं[4] वृक्षं न वै छिन्द्यान्नाप्सु ष्ठीवनमुत्सृजेत्[5] ।
नास्थिभस्मकपालानि न केशान्न च कण्टकान् ।
ओषांगारकरीषं वा नाधितिष्ठेत्कदाचन ॥७९

---

१. स्नानमिति पा० । २. चात्मानमिति पा० । ३. धारयेद्वानिमित्ततः इति पा० । ४. चैत्यवृक्षमिति, चत्यवृक्षानिति पा० । ५. माचरेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस वृक्ष के नीचे ग्राम देवता की पूजा की जाती हो, ऐसे पवित्र वृक्ष को काटना, जल में थूकना, अस्थि, भस्म, कपाल, केश, काँटा, धान के छिलके (तूष), अंगार और सूखे गोबर पर पैर रखना निषिद्ध है।७९

न चाग्निं लंघयेद्धीमान्नोपदध्यादधः क्वचित् ।
न चैनं पादतः कुर्यान्मुखेन न धमेद्बुधः ॥८०

विद्वानों को कदापि अग्नि को लांघना, उसे शय्या के नीचे रखकर सोना, पैर के पास रखना और-फूंक कर जलाना नहीं चाहिए।८०

न कूपमवरोहेत नाचक्षीताशुचिः क्वचित् ।
अग्नौ न प्रक्षिपेदग्निं नादिग्नः प्रशमयेत्तथा ॥८१

अग्नि में अग्नि डालना, जल से अग्नि को बुझाना, कुएं में उतरकर नहाना और जूठे मुंह से कुछ बोलना नहीं चाहिए।८१

सुहृन्मरणमार्त्तिं वा न स्वयं श्रावयेत्परान् ।
अपण्यमथ[1] पण्यं वा विक्रये न प्रयोजयेत् ॥८२

मित्र की मृत्यु अथवा उसकी पीड़ा का समाचार दूसरे व्यक्ति को स्वयं नहीं सुनाना चाहिए। व्यापार करते समय जो वस्तु विकाऊ न हो उसे या अन्य वस्तु, झूठ बोलकर और धोखे से नहीं बेचना चाहिए।८२

न वह्निं मुखनिश्वासैर्ज्वालयेन्नाशुचिर्बुधः ।
पुण्यस्नानोदकस्नाने सीमान्तं वा[2] कृषेन्न तु ॥८३

ज्ञानियों को फूंक से अग्नि जलाना तीर्थ-स्थल के जल में अपवित्र होकर-नहाना और सीमा की भूमि को जोतना नहीं चाहिए।८३

न भिन्द्यात्पूर्वसमयं[3] सत्योपेतं[4] कदाचन ।
परस्परं पशून् व्यालान् पक्षिणो नावबोधयेत् ॥८४

प्रतिज्ञा करके तोड़ना और-सांप, पशु-पक्षियों को आपस में लड़ाना नहीं चाहिए।८४

परबाधां न कुर्वीत जलपानायनादिभिः[5] ।
कारयित्वा सुकर्माणि कारून् पश्चान्न वर्जयेत् ।
सायं प्रातर्गृहद्वारान् भिक्षार्थं नावघाटयेत् ॥८५

---

१. कूटपण्यमिति, कृतपण्यं चेति पा०। २. चाग्रसेत्र तु इति पा०। न कृषेत्—नातिक्रम्य गच्छेदित्यर्थः। ३. पूर्वसमयं पूर्वनियमबन्धमित्यर्थः। ४. अभ्युपेत-मिति पा०। ५. जलवातातपादिभिरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल, पान और मार्ग या गृह आदि से दूसरों को पीड़ित नहीं करना चाहिए। शिल्पी से कोई वस्तु बनवाकर, फिर उसे पारिश्रमिक दिए बिना ही भगाना नहीं चाहिए और प्रातः तथा संध्या समयभिक्षा के लिए द्वार नहीं खटखटाना चाहिए।८५

बर्हिर्माल्यं बर्हिर्गन्धं भार्यया सह भोजनम्।
विगृह्यवादं कुद्वारप्रवेशं च विवर्जयेत् ॥८६

दूसरे के द्वारा प्रयोग करने के बाद फेंकी गई माला और सुगन्धित द्रव्य को धारण नहीं करना चाहिए। पत्नी के साथ बैठकर एक ही पात्र में भोजन नहीं करना चाहिए तथा मार्ग को छोड़कर कुमार्ग पर नहीं चलना चाहिए।८६

न खादन् ब्राह्मणस्तिष्ठेन्न[1] जल्पन्न हसन् बुधः।
स्वमग्निं नैव[2] हस्तेन स्पृशेन्नाप्सु चिरं वसेत् ॥८७

न पक्षकेणोपधमेन्न शूर्पेण न पाणिना।
मुखेनैव धमेदग्निं मुखादग्निरजायत ॥८८

ब्राह्मण के लिए खाते-खाते उठकर खड़े होना, हँसते-हँसते बोलना, अपनी-अग्नि को हाथ से छूना, ज्यादा देर तक पानी में डूबे रहना, पंखा, सूप और हाथों से अग्नि को प्रज्वलित नहीं करना चाहिए। अपनी अग्नि को सदैव मुँह से जलाना चाहिए क्योंकि यह मुँह से उत्पन्न हुई है।८७-८८।

परस्त्रियं न भाषेत नायाज्यं याजयेद् द्विजः।
नैकश्चरेत् सभां विप्रसमवायं च वर्जयेत्।
देवतायतनं[3] गच्छेत्कदाचिन्नाप्रदक्षिणम् ॥८९

पराई स्त्री के साथ वार्तालाप और यज्ञ करने के अयोग्य व्यक्ति का पौरोहित्य नहीं करना चाहिए। ब्राह्मण को अकेले या मण्डली बनाकर सभा में नहीं जाना चाहिए और प्रदक्षिणा किए बिना मन्दिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए।८९

न वीजयेद्वा वस्त्रेण न देवायतने स्वपेत्।
नैकोऽध्वानं प्रपद्येत नाधार्मिकजनैः सह ॥९०
न व्याधिदूषितैर्वापि न शूद्रैः पतितैर्न वा।
नोपानद्वर्जितोऽध्वानं जलादिरहितस्तथा ॥९१

कपड़े से हवा करना और मन्दिर में सोना नहीं चाहिए। मार्ग में अकेले, नास्तिक, पतित शूद्र और अत्यन्त रुग्ण व्यक्ति के साथ नहीं चलना चाहिए तथा जूता और पानी साथ लिए बिना मार्ग पर चलना नहीं चाहिए।९०-९१।

---

१. न जपेद्वा इति पा०। २. हस्तेनैकेनेति पा०। ३. न देवायतनं गच्छेत्कदाचिद्वाप्रदक्षिणामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न रात्रौ वारिणा सार्द्धं न विना च कमण्डलुम् ।
नाग्निगोब्राह्मणादीनामन्तरेण व्रजेत्क्वचित् ॥९२

रात में, जल के साथ, कमण्डल लिए बिना, अग्नि, गाय और ब्राह्मण के बीच से नहीं चलना चाहिए ।९२

निवर्त्स्यन्तीं न वनितामतिक्रामेद्द्विजोत्तमाः ।
न निन्देद्योगिनः सिद्धान् गुणिनो[1] वा यतींस्तथा ॥९३

हे द्विजोत्तमवृन्द ! आश्रित और आश्रय लेने की इच्छा रखने वाली स्त्री की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए । तपस्वी, सिद्ध पुरुष, गुणी व्यक्ति और संन्यासियों की निन्दा नहीं करनी चाहिए ।९३

देवतायतने[2] प्राज्ञो न देवानां च सन्निधौ ।
नाक्रामेत्कामतश्छायां ब्राह्मणानां गवामपि[3] ॥९४

ज्ञानियों को, मन्दिर या देवता के सामने, ब्राह्मण और गाय की छाया, जानबूझकर नहीं लाँघना चाहिए ।९४

स्वां तु नाक्रमयेच्छायां पतिताद्यैर्नं रोगिभिः ।
नाङ्गारभस्मकेशादिष्वधितिष्ठेत्कदाचन ॥९५

पतित तथा रोगी व्यक्ति से अपनी छाया न तो लँघवानी चाहिए और न ही अंगार, केश, भस्मादि पर खड़े होना चाहिए ।९५

वर्जयेन्मार्जनीरेणुं स्नानवस्त्रघटोदकम् ।
न भक्षयेदभक्ष्याणि नापेयञ्चापिबेद्द्विजाः ॥९६

हे द्विजगण ! झाड़ू की धूल को शरीर पर लगने नहीं देना चाहिए । कपड़ा पछाड़ते और घड़े में पानी भरते समय पानी का छींटा शरीर पर नहीं पड़ना चाहिए । न खाने योग्य वस्तु को खाना और न पीने योग्य वस्तु को पीना उचित नहीं होता ।९६

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे गार्हस्थ्यधर्मनिरूपणं
नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, गार्हस्थ्यधर्म निरूपण नामक सोलहवाँ अध्याय समाप्त हुआ ॥१६

---

१. व्रतिनोवेतिपा० । २. देवतायतनं प्राज्ञो देवानाञ्चैव मन्त्रिणामिति पा० । ३. ब्राह्मणानाञ्च गोरपीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सप्तदशोऽध्यायः

भक्ष्याभक्ष्यनिर्णयः

व्यास उवाच

नाद्याच्छूद्रस्य विप्रोऽन्नं मोहाद्वा यदि वान्यतः ।
स शूद्रयोनिं व्रजति यस्तु भुंक्ते ह्यनापदि ॥१

व्यास बोले—ब्राह्मण को शूद्र का अन्न नहीं खाना चाहिए। आपातकाल को छोड़कर, यदि वह जानबूझकर या अनजाने में भी शूद्र का अन्न ग्रहण-करता है, तो उसे शूद्रयोनि प्राप्त होती है।१

षण्मासान्यो द्विजो भुंक्ते शूद्रस्यान्नं विगर्हितम् ।
जीवन्नेव भवेच्छूद्रो मृत[1] एवाभिजायते ॥२

जो ब्राह्मण छः महीने तक शूद्र का अन्न-ग्रहण-करता है, वह जीवितावस्था में ही शूद्रत्व प्राप्त करता है, और-मृत्यु के बाद उसे कुकुरयोनि प्राप्त होती है।२

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्रस्य च मुनीश्वराः ।
यस्यान्नेनोदरस्थेन मृतस्तद्योनिमाप्नुयात् ॥३

हे मुनीश्वरवृन्द ! मृत्यु के समय, ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में से जिसका अन्न पेट में रहता है। मृत्यु के पश्चात् उसी जाति में उसका जन्म होता है।३

नटान्नं[2] नर्त्तकान्नञ्च तक्ष्णोऽन्नं कर्मकारिणः[3] ।
गणान्नं गणिकान्नञ्च षडन्नानि च वर्ज्जयेत् ॥४

नट, नर्त्तक, बढ़ई, चर्मकार, सम्मिलित जनसमूह और वेश्या, इन छः लोगों के अन्न का त्याग करना चाहिए।४

चक्रोपजीविरजकतस्करध्वजिनां तथा ।
गन्धर्वलोहकारान्नं सूतकान्नञ्च वर्ज्जयेत् ॥५

तेली, धोबी, तस्कर, सुरा बेचने वाले, गायक, लुहार, और जिसको सूतक लगा हो, उसका अन्न त्याग देना चाहिए।५

---

१. मृतःश्वाचाभिजायते इति पा०। २. राजान्नमिति पा०। ३. चर्मकारिण इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलालचित्रकर्मान्नं[1] वार्धुषेः पतितस्य च ।
सुवर्णकारशैलूषव्याधबद्धातुरस्य[2] च ॥६
चिकित्सकस्य चैवान्नं पुंश्चल्या दण्डकस्य[3] च ।
स्तेननास्तिकयोरन्नं देवतानिन्दकस्य च ॥७
सोमविक्रयिणश्चान्नं श्वपाकस्य विशेषतः ।

कुम्हार, चित्रकार, महाजन, पतित, सुनार, नट, व्याध, कैदी, रोगी, चिकित्सक, चरित्रहीन-स्त्री, दण्डक, चोर, नास्तिक, देवनिन्दक, सोम-विक्रेता और श्वपाक का अन्न-नहीं-खाना चाहिए ।६-७½।

भार्याजितस्य चैवान्नं यस्य चोपपतिगृंहे ॥८
उच्छिष्टस्य कदर्यस्य तथैवोच्छिष्टभोजिनः ।

जो स्त्रैण हो अथवा जिसको घर में पत्नी का प्रेमी निवास करता हो उनका अन्न या जूठन, तथा जूठन खाने वाले और कंजूस व्यक्ति का अन्न नहीं खाना चाहिए ॥८-८½।

अपंक्त्यान्नञ्च संघान्नं शस्त्रजीवस्य चैव हि ॥९
क्लीबसन्न्यासिनश्चान्नं मत्तोन्मत्तस्य चैव हि ।
भीतस्य रुदितस्यान्नमवकृष्टं परिग्रहम्[4] ॥१०

पंक्ति को बाहर दिया हुआ अन्न, समूह का अन्न, शस्त्रजीवी, नपुंसक, संन्यासी; शराबी, पागल, भयभीत और-रोते हुए व्यक्ति का अन्न, तिरस्कारपूर्वक दिया हुआ और जिस पर छींका गया हो, ऐसा अन्न ग्रहण नहीं करना चाहिए ।९-१०

ब्रह्मद्विषः पापरुचेः श्राद्धान्नं सूतकस्य च ।
वृथापाकस्य चैवान्नं शठान्नं चतुरस्य[5] च ॥११

ब्राह्मणद्वेषी और पापबुद्धि रखने वाले का अन्न, प्रेतश्राद्ध और-सूतक का अन्न नहीं खाना चाहिए । देवताओं के लिए नहीं, केवल अपने लिए पकाया हुआ, धूर्त और-चालाक व्यक्ति का अन्न नहीं खाना चाहिए ।११

अप्रजानान्तु नारीणां भृतकस्य[6] तथैव च ।
कारुकान्नं विशेषेण शस्त्रविक्रयिणस्तथा ॥१२

---

१. पौनर्भवशत्रकर्त्रोरभिशस्तस्य चैव हि इति पा० । २. व्याधितस्यातुरस्यचे ति पा । ३. दांभिकस्येति पा० । ४. परिक्षतमिति, अवकृष्टं परिक्षुतमिति पा० । ५. श्वशुरस्येति, शवान्नं भासुरस्य च इति पा० । ६. कृतघ्नस्येति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँझ स्त्री, नौकर, शिल्पी और शस्त्रविक्रेता, का अन्न-ग्रहण नहीं करना चाहिए ।१२

शौण्डान्नं[1] धातिकान्नं च भिषजामन्नमेव च ।
विद्धप्रजननस्यान्नं परिवेत्तन्नमेव च ॥१३
पुनर्भुवो विशेषेण तथैव दिधिषूपतेः ।

सुरा बेचने वाले, चिकित्सक, घण्टी बजाकर जीविकोपार्जन करने वाले, विद्धलिंगी, परिवेत्ता (बड़े-भाई के अविवाहित रहने से छोटे भाइयों में जो पहले विवाह कर ले), पुनर्भू (दुबारा ब्याही-गई स्त्री का सन्तान का) और दिधिषूपति (पुत्रोत्पादनार्थ-धर्मसम्मत ढंग से नियुक्त भाई की पत्नी के प्रति नियोगधर्म का उल्लंघन कर कामभाव से आसक्त होने वाला) का अन्न नहीं खाना चाहिए ।१३½

अवज्ञातं चावधूतं सरोषं विस्मयान्वितम् ॥१४
गुरोरपि न भोक्तव्यमन्नं संस्कारवर्जितम् ।

जिस अन्न के विषय में कोई जानकारी न हो, जो पैर से छुआ गया हो जिसके प्रति सन्देह हो और अशुद्ध अन्न ग्रहण नहीं करना चाहिए, चाहे, वह गुरु का दिया हुआ क्यों न हो ।१४-१४½॥

दुष्कृतं हि मनुष्यस्य सर्वमन्ने व्यवस्थितम् ॥१५
यो यस्यान्नं समश्नाति स तस्याश्नाति किल्बिषम् ।

मनुष्य का सारा पाप उसके अन्न में निहित रहता है, इसलिए जो जिसका अन्न खाता है, उसे अन्न दाता का पाप भोगना पड़ता है ।।१५-१५½॥

आर्द्धिकः[2] कुलमित्रश्च स्वगोपालश्च[3] नापितः ॥१६
कुशीलवः कुम्भकारः क्षेत्रकर्मक एव च ।
एते शूद्रेषु भोज्यान्नं दत्त्वा स्वल्पं पणं बुधैः ।

बटाईदार, वंशपरम्परा से जो वंश का हितैषी हो, जो जिसके गायों की देखभाल करता हो, जो जिसके घर क्षौर कर्म करता हो, नट, कुम्हार-और-किसान, जैसे शूद्रों को थोड़ा धन देकर फिर इनका अन्न-ग्रहण-किया जा सकता है ।।१६½॥

पायसं स्नेहपक्वं यत् गोरसं चैव सक्तवः ॥१७
पिण्याकं चैव तैलं च शूद्राद्गाह्यं[4] तथैव च ।

---

१. शौण्डिकान्नमिति पा० । २. आर्तिजः इति पा० । ३. गोपालो दासनापितौ । एते शूद्रेषु भोज्यान्नं यश्चात्मानं निवेदयेत् इति पा० । ४. शूद्राद्ग्राह्यं द्विजातिभिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध और घी से पकायी गई वस्तु, दूध, सत्तू, तिल की खली और तेल शूद्र से ग्रहण किये जा सकते हैं ॥१७–१७½।

वृन्ताकं जालिका[1] शाकं कुसुम्भाश्मन्तकं तथा ॥१८
पलाण्डुं लसुनं सूक्तं निर्यासं चैव वर्जयेत् ।

बैंगन, कुल्फा और कुसुमी का साग, अरुई, प्याज, लहसुन, सड़ी हुई-वस्तु और किसी वस्तु का सार नहीं ग्रहण करना चाहिए ।१८½

छत्राकं विड्वराहञ्च[2] शेलं पीयूषमेव च ॥१९
विलयं सुमुखञ्चैव कवकानि[3] च वर्जयेत् ।

मशरूम, जंगली सूअर, लसौड़ा, दस दिन की व्यायी हुई गाय का दूध, विलय और सुमुख का साग तथा कुकुरमुत्ते का त्याग करना चाहिए ।१९½

गृञ्जनं किंशुकं चैव कुक्कुटं[4] च तथैव च ॥२०
उदुम्बरमलाबुं च जग्ध्वा पतति वै द्विजः ।
वृथा कृशरसंयावं पायसापूपमेव च ॥२१
अनुपाकृतमांसं च देवान्नानि हवींषि च ।

गाजर, पलाश, मुर्गा, गूलर, और-लौकी-खाने से ब्राह्मण पतित हो जाता है। कृशर (तिल और-चावल-से बनी वस्तु); संयाव (दूध और गुड़ से पकाई-हुई दलिया) खीर और भरपूर (पीठी भरकर बनाया हुआ मिष्ठान्न), यदि देवता को चढ़ाने के लिए नहीं, केवल-अपने-उपयोग के लिए बनाया गया हो तो स्वीकार नहीं करना चाहिए ।२०–२१½।

यवागुं मातुलिङ्गञ्च मत्स्यानप्यनुपाकृतान् ॥२२
नीपं कपित्थं प्लक्षं च प्रयत्नेन विवर्जयेत् ।

मन्त्रों से शुद्ध न किया हुआ मांस और-मछली, नैवेद्यादि देवान्न, हवन से पहले घृतादि हवनीय द्रव्य, यवागू (जौ का पिण्ड) नींबू, कदम्ब, कैथा-और बड़हर (अश्वत्थ) को त्यागने का प्रयास करना चाहिए ।२२½

पिण्याकं चोद्धृतस्नेहं[5] विवाधानास्तथैव च ॥२३
रात्रौ च तिलसम्बद्धं प्रयत्नेन दधि त्यजेत् ।

---

१. नालिकेति पा० । २. पीलूषमेवेति, विड्वराहञ्च शैलं पेयुषमेव च इति, विड्वराहञ्च शेलूषपेयूषमेव च इति पा० । ३. करकाणीति पा० । ४. ककुभञ्चेति पा । ५. देववान्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन में बिना चिकनाई के तरल पदार्थ, तिल की खली, और चावल तथा रात में तिल से बनी हुई वस्तु और दही नहीं खाना चाहिए ।२३½

नाश्नीयात्पयसा तक्रं न बीजान्युपजीवयेत् ॥२४
क्रियादुष्टं भावदुष्टमसत्संगं विवर्जयेत् ।

दूध के साथ दही नहीं खाना चाहिए। बीज से जीविकोपार्जन नहीं करना चाहिए। बनाते समय अपवित्र हुई या जो देखने में अच्छी न लगे, ऐसी-वस्तु-और दुष्ट व्यक्ति का साथ सदैव छोड़ना चाहिए ।२४½

केशकीटावपन्नं च स्वभूर्लेखं[1] च नित्यशः ॥२५
श्वाघ्रातं च पुनः सिद्धं चण्डालावेक्षितं तथा ।
उदक्यया च पतितैर्गवा चाघ्रातमेव च ॥२६
अनर्चितं पर्युषितं पर्याघ्रान्तं च नित्यशः ।
काककुक्कुटसंस्पृष्टं कृमिभिश्चैव संयुतम् ॥२७
मनुष्यैरथवा घ्रातं कुष्ठिना स्पृष्टमेव च ।

केश या कीट पड़े हुए, एक बार पकाकर उतार लिए जाने के बाद दुबारा पकाए हुए, चाण्डाल, रजस्वला और पतित व्यक्ति के द्वारा देखे गए, अनादर के साथ दिए हुए, बासी, आचमन कर लेने वाले व्यक्ति की थाली में बचें, कौआ-और-मुर्गे के द्वारा छू लिए गए, कीड़े पड़े हुए, मनुष्य के द्वारा-सूंघे हुए और कोढ़ी- के द्वारा छू लिए गए अन्न को नहीं खाना चाहिए ।२५–२७½।

न रजस्वलया दत्तं न पुंश्चल्या सरोषकम्[2] ॥२८
मलवद्वाससा चापि परयाचोपयोजयेत्[3] ।

रजस्वला और पुंश्चली स्त्रीका दिया हुआ अन्न और क्रोध- पूर्वक, मैले-वस्त्र पहनकर देने वाली स्त्री का अन्न, नहीं ग्रहण करना चाहिए ।२८½

विवत्सायाश्च गोः क्षीरमौष्ट्रं वा[4] निर्दशस्य च ॥२९
आविकं सन्धिनीक्षीरमपेयं[5] मनुरब्रवीत् ।

मनु के अनुसार, बिना बछड़े की गाय, ऊँट, जिसे सूतक लगा हो ऐसे व्यक्ति की गाय, भेंड़ और गाभिन गाय का दूध नहीं पीना चाहिए ।२९–½

बलाकं हंसदात्यूहं कलविंकं शुकं तथा ॥३०
तथा[6] कुररवल्लूरं जालपादञ्च कोकिलम् ।

---

१. सुहल्लेखञ्चेति, नभो वारिच नित्यशः इति च पा० । २. सरोमयेति; सरोषया इति च पा० । ३. परवासोऽथ वर्जयेदिति पा० । ४. चानिर्दशन्तथेति पा० । ५. सङ्गिनीक्षीरमपेयमिति पा० । ६. कुरदञ्चचकारञ्चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाषांश्च खञ्जरीटांश्च श्येनं गृध्रं तथैव च ॥३१
उलूकं चक्रवाकञ्च भासं पारावतं तथा ।
कपोतं टिट्टिभञ्चैव ग्रामकुक्कुटमेव च ॥३२
सिंहं व्याघ्रञ्च मार्जारं श्वानं कुक्कुरमेव च ।
शृगालं मर्कटं चैव गर्दभञ्च न भक्षयेत् ।

बगुला, हंस, पपीहा, गौरैया, तोता, कुरर, सूखा-हुआ मांस, जिन पक्षियों के नाखून आपस में जुड़े हुए होते हैं, कोयल, नीलकण्ठ, खंजन, बाज, गिद्ध, उल्लू, चक्रवाक, मास पक्षी, कबूतर, पंडूक, टिटहरी, ग्राम्य मुर्गा, सिंह, बाघ, बिल्ली कुत्ता, ग्रामीण सूअर, सियार, बन्दर और गधे का मांस नहीं खाना चाहिए । ।३०–३२½

न भक्षयेत्सर्वमृगान्नान्यान्वनचरान्[1] द्विजान् ॥३३
जलेचरान् स्थलचरान् प्राणिनश्चेति धारणा ।

साधारण नियम के अनुसार बताए गए सभी प्राणियों को छोड़कर, दूसरे समस्त ग्राम्य या जंगली पशु-पक्षियों और जलचर-स्थलचरों को नहीं खाना चाहिए । ।३३½

गोधा कूर्मः शशः श्वावित्[2] सल्लकी चेति सत्तमाः ॥३४
भक्ष्याः पञ्चनखा नित्यं मनुराह प्रजापतिः ।

प्रजापति मनु के अनुसार स्वर्णगोधा, कछुआ, खरगोश, गेंडा, और शाही जैसे पांच नाखूनों वाले प्राणियों का मांस खाया जा सकता है ।३४½

मत्स्यान् सशल्कान् भुञ्जीयान्मांसं रौरवमेव च ॥३५
निवेद्य देवताभ्यस्तु ब्राह्मणेभ्यस्तु नान्यथा ।

छिलके वाली मछली और रुरु मृग का मांस देवता और ब्राह्मणों को चढ़ाने के पश्चात् खाना चाहिए अन्यथा नहीं ।३५½

मयूरन्तित्तिरञ्चैव कपिञ्जलकमेव[3] च ॥३६
वार्ध्रीणसं द्वीपिनञ्च भक्ष्यानाह प्रजापतिः ।

मनु के अनुसार, मोर, तीतर, चातक, बूढ़ा खासी, और बतख का मांस खाया जा सकता है ।३६½

---

१. पक्षिणो अन्यान्वनेचरानिति पा० । २. खड्गीती पा० । ३. कपोतञ्च कपिञ्जलमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजीवान्[1] सिंहतुण्डांश्च तथा पाठीनरोहितौ ॥३७
मत्स्येष्वेते समुद्दिष्टा भक्षणीया मुनीश्वराः ।

हे मुनीश्वरवृन्द ! मछलियों में राजीव, शकुल, पाठीन और रोहित (रोहू) मछली भक्षणीय हैं । यज्ञ में हवन के बाद, इन प्राणियों के बचे हुए मांस को खाया जा सकता है ।३७½

प्रोक्षितं भक्षयेदेषां मांसञ्च द्विजकाम्यया ॥३८
यथाविधि नियुक्तं च प्राणानामपि चात्यये ।

बहुत से ब्राह्मणों की इच्छा से, इन प्राणियों का मांस खाया जा सकता है। इनका मांस नियमानुसार श्राद्ध में प्रयोग किया जाता है । बीमारी या आहाराभाव के कारण प्राणरक्षा, के लिए भी इनका मांस भक्षणीय है ।३८½

भक्षयेदेव मांसानि शेषभोजी न लिप्यते ॥३९
औषधार्थमशक्तौ वा नियोगाद्यं न कारयेत् ।

यूँ तो मांस खाना उचित नहीं है, किन्तु यज्ञ से बची हुई सामग्री के रूप में, बीमार होने पर औषधि के रूप में और यज्ञ से संलग्न होकर मांस खाने से दोष नहीं लगता ॥३९½

आमन्त्रितस्तु यः श्राद्धे दैवे वा मांसमुत्सृजेत् ।
यावन्ति पशुरोमाणि तावतो नरकान् व्रजेत् ॥४०

जो व्यक्ति श्राद्ध में आमन्त्रित होकर या धार्मिक कार्य से संलग्न होकर भी मांस नहीं खाता, वह, पशुओं के शरीर में कितने-रोएँ होते हैं, उतने वर्षों तक नरक भोगता है ।४०

अपेयं वाप्यपेयञ्च तथैवास्पृश्यमेव च ।
द्विजातीनामनालोच्यं नित्यं मद्यमिति स्थितिः ॥४१

शास्त्रों के अनुसार, ब्राह्मण को कभी मद्य का दान, पान, स्पर्श और दर्शन नहीं करना चाहिए ।४१

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन मद्यं निन्द्यञ्च वर्ज्जयेत् ।
पीत्वा पतितः कर्मभ्यो न सम्भाष्यो भवेद्द्विजैः ॥४२

मद्यपान करने से पतित होना पड़ता है । ब्राह्मणों को ऐसे व्यक्ति से नहीं बोलना चाहिए । इसलिए सब प्रकार के प्रयत्न से मद्यपान का त्याग करना चाहिए ।४२

---

१. शेखरं सिंहतुंडञ्चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्षयित्वा ह्यभक्ष्याणि पीत्वापेयान्यपि द्विजः ।
नाधिकारी भवेत्तावद्यावत्तन्न व्रजत्यधः ॥४३

न खाने योग्य वस्तु खाने और न पीने योग्य वस्तु पीने से मनुष्य तब तक कार्य करने का अधिकारी नहीं होता जब तक प्रायश्चित के द्वारा पापमुक्त नहीं हो जाता ।४३

तस्मात्परिहरेन्नित्यमभक्ष्याणि प्रयत्नतः ।
आरोप्य[1] याति चैवैको तथा वै याति रौरवम् ॥४४

हे विप्रगण ! अभक्ष्य भक्षण और अपेय पान का त्याग करना चाहिए, अन्यथा नरकगामी होना पड़ता है ।

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे भक्ष्याभक्ष्यनिर्णये व्यासगीतासु
सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

कूर्मपुराण के ये उत्तरार्द्ध में, व्यासगीता का भक्ष्याभक्ष्यनिर्णय नामक सत्रहवाँ अध्याय समाप्त ॥१७॥

●

अष्टादशोऽध्यायः

ब्राह्मणानां नित्यकर्तव्यकर्माणि

ऋषय ऊचुः

अहन्यहनि कर्त्तव्यं ब्राह्मणानां महामुने ।
तदाचक्ष्वाखिलं कर्म येन मुच्येत बन्धनात् ॥१

ऋषिवृन्द बोले—हे महामुनि ! जिससे सांसारिक बन्धनों से मुक्त हुआ जा सकता है, ब्राह्मणों के लिए प्रतिदिन पालन करने योग्य उन कर्मों के विषय में बताइये ।१

व्यास उवाच

वक्ष्ये समाहिता यूयं शृणुध्वं गदतो मम ।
अहन्यहनि कर्त्तव्यं ब्राह्मणानां क्रमाद्विधिम् ॥२

---

१. अपेयानि च विप्रा वै तथा चेद्याति रौरवमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यास बोले—प्रतिदिन ब्राह्मणों के करने योग्य कर्मों का मैं क्रमशः एक के बाद एक बखान करने जा रहा हूँ, आप सब लोग एकाग्रचित्त होकर मेरे निकट बैठकर सुनें ।२

ब्राह्मे मुहूर्ते तूत्थाय धर्ममर्थञ्च चिन्तयेत् ।
कायक्लेशञ्च[1] यन्मूलं ध्यायेत मनसेश्वरम् ॥३

ब्राह्ममुहूर्त में नींद से उठकर, मन ही मन ईश्वर का ध्यान करना चाहिए तथा धर्म अर्थ के साथ, ईश्वर प्राप्ति के उपायों पर भी चिन्तन करना चाहिए ।३

उषःकाले च सम्प्राप्ते कृत्वा चावश्यकं बुधः ।
स्नायान्नदीषु शुद्धासु शौचं कृत्वा यथाविधि ॥४

तत्पश्चात् उषाकाल में, विद्वान् व्यक्ति को शास्त्रों के अनुसार आवश्यक कर्त्तव्य शौचादिनित्यक्रिया समाप्त करके, पवित्र नदीं में स्नान करना चाहिए ।४

प्रातः स्नानेन पूयन्ते येऽपि पापकृतो जनाः ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन प्रातः स्नानं समाचरेत् ॥५

पापी भी यदि प्रातः काल स्नान करे तो पवित्र हो जाता है, इसलिए प्रातःकाल यत्नपूर्वक स्नान करना चाहिए ।५

प्रातः स्नानं प्रशंसन्ति दृष्टादृष्टकरं हि तत् ।
ऋषीणामृषिता[2] नित्यं प्रातः स्नानान्न संशयः ॥६

प्रातः स्नान से दृष्ट (मल दूर होना) और अदृष्ट (पुण्य) फलों की प्राप्ति होती है इसलिए मुनिगण प्रातः स्नान की प्रशंसा करते हैं। प्रतिदिन प्रातः स्नान करने से मुनियों को मुनित्व की प्राप्ति होती है, इसमें कोई सन्देह नहीं ।६

मुखे सुप्तस्य सततं लाला याः संस्रवन्ति हि ।
ततो नैवाचरेत्कर्म अकृत्वा स्नानमादितः ॥७

सोए हुए व्यक्ति के मुँह से लार निकलती है इसलिए स्नान किए बिना कोई कर्मानुष्ठान नहीं करना चाहिए ।७

अलक्ष्मको[3] जलं किञ्चित् दुःस्वप्नं दुर्विचिन्तितम् ।
प्रातः स्नानेन पापानि पूयन्ते नात्र संशयः ॥८

इसमें सन्देह नहीं कि प्रातः स्नान से अलक्ष्मी, जलदोष, दुःस्वप्न और दुश्चिन्तादि सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।८

---

१. कायक्लेशं तदद्भुतमिति पा० । २. ऋषिभिर्वंहुभिश्चीर्णमिति पा० । ३. अलक्ष्मीः कालकर्णी चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः स्नानं विना पुंसां प्रभातं कर्म संस्मृतम् ।
होमे जप्ये विशेषेण तस्मात्स्नानं समाचरेत् ॥९

बिना नहाए हुए व्यक्ति का कोई भी कार्य पवित्र नहीं होता, इसलिए जप होमादि कार्य करने से पहले स्नान अवश्य कर लेना चाहिए ।९

अशक्तावशिरस्कं वा स्नानमस्य विधीयते ।
आर्द्रेण वाससा वाथ मार्ज्जनं कापिलं स्मृतम् ॥१०

अस्वस्थ व्यक्ति अशिरस्क स्नान (अर्थात् सिर पर पानी डाले बिना अंग प्रत्यंग धोना) करेगा । ऐसा करने में भी असमर्थ होने से गीले कपड़े से शरीर पोंछ लेना चाहिए । इसीसे वह पवित्र हो जाता है ।१०

आयत्ये[1] वै समुत्पन्ने स्नानमेव समाचरेत् ।
ब्रह्मादीनामथाशक्तौ स्नानान्याहुर्मनीषिणः ॥११

असमर्थ होने पर, बताए गए किसी एक विधि के अनुसार स्नान कर लेना चाहिए । महर्षियों का कहना है कि अपनी शक्ति के अनुसार ब्रह्मादि स्नान करना चाहिए ।११

ब्राह्ममाग्नेयमुद्दिष्टं वायव्यं दिव्यमेव च ।
वारुणं यौगिकं यच्च[2] षोढा स्नानं समासतः ॥१२

ऋषियों ने ब्राह्म, आग्नेय, वायव्य, दिव्य, वारुण और योगिक नामक छः प्रकार की स्नान-विधियाँ बताई हैं ।१२

ब्राह्मं तु मार्ज्जनं मन्त्रैः कुशैः सोदकबिन्दुभिः ।
आग्नेयं भस्मना पादमस्तकाद्वेहधूलनम् ॥१३

मन्त्र पढ़कर, कुश से पानी की बूंदें छिड़क कर स्वयं को पवित्र करने का नाम ब्राह्म स्नान और सिर से पैर तक भस्म लेपन करने का नाम आग्नेय स्नान है ।१३

गवां हि रजसा प्रोक्तं वायव्यं स्नानमुत्तमम् ।
यत्तु सातपवर्षेण स्नानं तद्दिव्यमुच्यते ॥१४

गाय के चलने से उठने वाली धूल से सर्वाङ्ग सुसज्जित करने का नाम वायव्य और धूप तथा वर्षा का पानी शरीर में लगाना दिव्य स्नान कहलाता है ।१४

वारुणञ्चावगाहस्तु मानसं स्वात्मवेदनम् ।
योगिनां स्नानमाख्यातं योगे[3] विश्वातिचिन्तनम् ॥१५

---

१. असामर्थ्ये इति पा० । २. अद्वदिति पा० । ३. योगाद्विष्णुविचिन्तनमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी व्यथा के विषय में सोचते हुए स्नान करना वारुण और समाधिस्थ होकर विश्व का चिन्तन करना यौगिक स्नान कहलाता है ।१५

आत्मतीर्थमिति ख्यातं सेवितं ब्रह्मवादिभिः ।
मनःशुद्धिकरं पुंसां नित्यं तत्स्नानमाचरेत् ॥१६

ब्रह्मवादियों द्वारा किया गया यौगिक स्नान, आत्मतीर्थ भी कहलाता है। पुरुषों को नित्य करना चाहिए, क्योंकि यह आन्तरिक शुद्धि करता है। विद्वानों को अपनी शक्ति के अनुसार वारुण या प्राजापत्य (ब्राह्म) स्नान करना चाहिए ।१६

शक्तश्चेद्वारुणं विद्वान् प्रायश्चित्ते तथैव च ।
प्रक्षाल्य दन्तकाष्ठं वै भक्षयित्वा विधानतः ॥१७

दातौन को धोकर भली-भाँति चबाना, तत्पश्चात् आचमन करके, प्रतिदिन स्नान करना चाहिए ।१७

आचम्य प्रयतो नित्यं स्नानं प्रातः[1] समाचरेत् ।
मध्याङ्गुलिसमस्थौल्यं द्वादशांगुलसम्मितम् ॥१८
सत्वचं दन्तकाष्ठं स्यात्तदग्रेण तु धावयेत् ।

दातौन मध्यमा उँगली के बराबर मोटी, बारह अंगुल लम्बी और त्वचा मुक्त होनी चाहिए। दातौन के अगले सिरे से दाँत साफ करना चाहिए ।१८½

क्षीरवृक्षसमुद्भूतं मालतीसम्भवं शुभम् ।
अपामार्गञ्च बिल्वञ्च करवीरं विशेषतः ॥१९

क्षीरि (खिरनी) मालती, अपामार्ग, बेल और करवीर के वृक्ष की डाल दातौन के लिए शुभ मानी जाती है ।१९

वर्ज्जयित्वा निन्दितानि गृहीत्वैकं यथोदितम् ।
परिहृत्य दिनं पापं भक्षयेद्वै विधानवित् ॥२०

विधानज्ञ व्यक्ति को घटिया दातौन त्याग कर, जिस तिथि को निषेध न हो, उस दिन एक दातौन लेकर, दाँत साफ करना चाहिए ।२०

नोत्पाटयेद्दन्तकाष्ठं नाङ्गुल्यग्रेण[2] धारयेत् ।
प्रक्षाल्य भंक्त्वा तज्जह्याच्छुचौ देशे समाहितः ॥२१

दातौन को तोड़ना और उँगली के अग्रभाग से नहीं पकड़ना चाहिए। दाँत साफ कर लेने के बाद दातौन को धोकर, तोड़ कर फिर किसी पवित्र स्थान से सावधानी पूर्वक फेंक देना चाहिए ।२१

---

१. प्राजापत्यमिति पा० । २. नांगुल्या धारयेत् क्वचिदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्नात्वा सन्तर्पयेद्देवानृषीन् पितृगणांस्तथा ।
आचम्य मन्त्रविन्नित्यं पुनराचम्य वाग्यतः ॥२२

तदनन्तर, मन्त्रज्ञ व्यक्ति को स्नान और आचमन करके प्रतिदिन वाणी पर नियन्त्रण रखकर, देवता, ऋषि और पितरों का तर्पण करना चाहिए ।२२

सम्मार्ज्य मन्त्रैरात्मानं कुशैः सोदकबिन्दुभिः ।
आपोहिष्ठाव्याहृतिभिः सावित्र्या वारुणैः शुभैः ॥२३

मन्त्र पाठ करते हुए जल में भिगोए हुए कुश को छिड़क कर, अपने आप को पवित्र करके, "आपोहिष्ठा" मन्त्र का तीन बार पाठ करने के पश्चात्, व्याहृति, सावित्री और शुभ वारुण मन्त्र का पाठ करना चाहिए ।२३

ओङ्कारव्याहृतियुतां गायत्रीं वेदमातरम् ।
जप्त्वा जलाञ्जलिं दद्याद् भास्करं प्रति तन्मनाः ॥२४

अन्त में ओंकार और महाव्याहृतियुक्त वेदमाता गायत्री का जप करके, सूर्य की ओर चित्त लगाकर, जलांजलि देना चाहिए ।२४

प्राक्कल्पेषु[1] ततः स्थित्वा दर्भेषु सुसमाहितः ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा ध्यायेत्सन्ध्यामितिः स्मृतिः[2] ॥२५

पहले से बिछे हुए कुशासन पर, शुद्ध अन्तः करण के साथ बैठकर पहले तीन बार प्राणायाम करने के बाद संध्या ध्यान करना चाहिए, यही शास्त्रों का विधान है ।२५

या च सन्ध्या जगत्सूतिर्मायातीता हि निष्कला ।
ऐश्वरी[3] केवला शक्तिस्तत्त्वत्रयसमुद्भवा ॥२६

जो संध्या है वही संसार की जन्मदात्री, मायातीत, कलाहीन, तीनों तत्त्वों से उत्पन्न, केवल दैवी शक्ति है ।२६

ध्यात्वार्कमण्डलगतां सावित्रीं वै जपेद्बुधः ।
प्राङ्मुखः सततं विप्रः सन्ध्योपासनमाचरेत् ॥२७

विद्वानों को सूर्यमण्डल में स्थित सावित्री का मन में ध्यान लगाकर, जप करना चाहिए और सदैव पूर्व दिशा की ओर मुंह करके सन्ध्योपासना करनी चाहिए ।२७

सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु ।
यदन्यत्कुरुते किञ्चिन्न तस्य फलमाप्नुयात् ॥२८

---

१. प्राक्कूलेषु समासीनः इति पा० । २. श्रुतिरीति पा० । ३. ऐश्वरी तु परैति पा० ।

 CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्ध्योपासना न करने वाला व्यक्ति अपवित्र होने के कारण किसी भी कार्य का अधिकारी नहीं होता, इसलिए वह जो कुछ भी करता है, उसे उसका फल नहीं मिलता ।२८

अनन्यचेतसः शान्ता ब्राह्मणा वेदपारगाः ।
उपास्य विधिवत् सन्ध्यां प्राप्ताः पूर्वेऽपरां गतिम् ॥२९

एकाग्रचित्त, शान्त, वेदपरायण ब्राह्मणों ने प्राचीन काल में शास्त्रोक्त विधि से सन्ध्योपासना कर परमगति प्राप्त की ।२९

योऽन्यत्र कुरुते यत्नं धर्मकार्ये द्विजोत्तमः ।
विहाय सन्ध्याप्रणतिं स याति नरकायुतम् ॥३०

जो ब्राह्मण सन्ध्योपासना किए बिना, दूसरे धार्मिक कार्यों में अधिक ध्यान लगाता है वह दस हजार बार नरकवासी होता है। ३०

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सन्ध्योपासनमाचरेत् ।
उपासितो भवेत्तेन देवो योगतनुः परः ॥३१

अतः अत्यन्त यत्नपूर्वक सन्ध्योपासना करनी चाहिए क्योंकि इसी से योगात्मा परमेश्वर की उपासना होती है ।३१

सहस्रपरमां नित्यं शतमध्यां दशावराम् ।
सावित्रीं वै जपेद्विद्वान् प्राङ्मुखः प्रयतः स्थितः ॥३२

विद्वानों को प्रतिदिन एकाग्रचित्त होकर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके हजार बार श्रेष्ठ गायत्री या सौ बार मध्यम गायत्री या दस बार निःकृष्ट गायत्री का जप करना चाहिए ।३२

अथोपतिष्ठेदादित्यमुद्यन्तं वै समाहितः ।
मन्त्रैस्तु विविधैः सौरैः ऋग्यजुःसामसम्भवैः ॥३३

तत्पश्चात् एकाग्र होकर ऋक्, यजु और सामवेद से उत्पन्न विभिन्न सूर्यमन्त्रों का जप करते हुए, उगते सूर्य की उपासना करनी चाहिए ।३३

उपस्थाय महायोगं देवदेवं दिवाकरम् ।
कुर्वीत प्रणतिं भूमौ मूर्ध्ना तेनैव[1] मन्त्रतः ॥३४

इस प्रकार महायोगी, देवताओं के देवता, सूर्य की उपासना कर सूर्य मन्त्र का पाठ करते हुए; भूमि पर सिर झुकाकर प्रणाम करना चाहिए ।३४

---

१. नित्यञ्चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओङ्कारद्योताय[1] च शान्ताय कारणत्रयहेतवे ।
निवेदयामि चात्मानं नमस्ते विश्वरूपिणे ॥३५

(मन्त्र है)—तुम खद्योत नाम से प्रसिद्ध, शान्त और कारणत्रय के हेतु स्वरूप हो। तुमको आत्मसमर्पण कर, विश्वरूप तुम्हे प्रणाम करता हूँ।३५

नमस्ते घृणिने तुभ्यं सूर्याय ब्रह्मरूपिणे ।
त्वमेव ब्रह्म परममापोज्योतीरसोऽमृतम् ।
भूर्भुवः स्वस्त्वमोङ्कारः शर्वो रुद्रः सनातनः ॥३६

तुम दयालु हो, ब्रह्मरूपी हो, सूर्य हो, तुम्हें प्रणाम करता हूँ। तुम्ही परमब्रह्म हो, तुम्हीं जल, प्रकाश रस और अमृत हो। भूः, भुवः, स्वः, व्याहृति, ओंकार, सनातन पुरुष रुद्र महादेव, जीव के देह में रहने वाले परम ज्योति परमात्मा और शिव स्वरूप, तुम्हें मैं प्रणाम करता हूँ। ३६

पुरुषः सन्महोऽन्तस्थं प्रणमामि कपर्दिनम् ।
त्वमेव विश्वं बहुधा जात यज्जायते च यत् ।
नमो रुद्राय सूर्याय त्वामहं शरणं गतः ॥३७

यह विश्व अनेक प्रकार के सत् और असत् तत्त्वों को जन्म देता है, यह भी तुम्हीं हो, तुम रुद्र और सूर्य हो, तुम्हें प्रणाम कर तुम्हारी शरणागति स्वीकार करता हूँ।३७

प्रचेतसे नमस्तुभ्यं नमो मीढुष्टमाय च ।
नमो नमस्ते रुद्राय[2] त्वामहं शरणं गतः ।
हिरण्यबाहवे तुभ्यं हिरण्यपतये नमः ॥३८

तुम मीढुष्टम, तुम करुण और तुम रुद्र हो, तुम्हे बारम्बार प्रणाम करता हूँ। मैं तुम्हारी शरण में आता हूँ। तुम हिरण्यबाहु, हिरण्यपति हो, तुम्हें मैं प्रणाम करता हूँ।३८

अम्बिकापतये तुभ्यमुमायाः पतये नमः ।
नमोऽस्तु नीलग्रीवाय नमस्तुभ्यं पिनाकिने ॥३९

तुम अम्बिकापति और उमापति हो, तुम्हें प्रणाम करता हूँ। तुम नीलग्रीव, पिनाकी, विलोहित, भर्ग और सहस्राक्ष हो; तुम्हे मैं प्रणाम करता हूँ।३९

---

१. खगोलकायानन्ताय शान्ताय ज्ञानरूपिणे इति पा०। २. सदसत्सूयते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलोहिताय भर्गाय सहस्राक्षाय ते नमः ।
तमोऽपहाय[1] ते नित्यमादित्याय नमोऽस्तु ते ॥४०

नमस्ते वज्रहस्ताय[2] त्र्यम्बकाय नमो नमः ।
प्रपद्ये त्वां विरूपाक्षं महान्तं[3] परमेश्वरम् ॥४१

हिरण्मये गृहे गुप्तमात्मानं सर्वदेहिनाम् ।

तुम अन्धकार का नाश करने वाले आदित्य हो, तुम्हें मैं नित्य प्रणाम करता हूँ । तुम वज्रहस्त और त्रिनेत्र हो, तुम्हें बारबार प्रणाम करता हूँ । तुम वीरुपाक्ष, महान्, परमेश्वर और तुम्हीं समस्त प्राणियों के स्वर्णिम शरीर रूपी ग्रह के गुप्तात्मा हो । ४०-४१½ ।

नमस्यामि परं ज्योतिर्ब्रह्माणं त्वां परामृतम्[4] ॥४२
विश्वं पशुपतिं भीमं नरनारीशरीरिणम् ।
नमः सूर्याय रुद्राय भास्वते परमेष्ठिने ॥४३

तुम श्रेष्ठ ज्योति स्वरूप, ब्रह्मा, श्रेष्ठ अमृत और विश्व हो, तुम्हीं पशुपति, भीम, अर्धनारीश्वर हो, तुम्हीं सूर्य, रुद्र और भास्वान् परमेश्वर हो, तुम्हें मैं प्रणाम करता हूँ ।४२-४३।

उग्राय सर्वतक्षाय[5] त्वां प्रपद्ये सदैव हि ।
एतद्वै सूर्यहृदयं जप्त्वा स्तवमनुत्तमम् ॥४४

उग्र और सर्वतक्ष के नाम से प्रसिद्ध हो, मैं सदैव तुम्हारी शरण में आता हूँ। इस प्रकार श्रेष्ठ सूर्य हृदय स्तोत्र का पाठ करके, प्रातः और मध्याह्न समय, सूर्य को प्रणाम करना चाहिए ।४४

प्रातःकालेऽथ मध्याह्ने नमस्कुर्याद्दिवाकरम् ।
इदं पुत्राय शिष्याय धार्मिकाय द्विजातये ॥४५
प्रदेयं सूर्यहृदयं ब्रह्मणा[6] तु प्रदर्शितम् ।

पुत्र, शिष्य और धार्मिक द्विजातियों को, ब्रह्मा द्वारा बताए गए, सूर्य हृदय स्तव का पाठ करने का उपदेश देना चाहिए ।४५½।

सर्वपापप्रशमनं वेदसारसमुद्भवम् ।
ब्राह्मणानां हितं पुण्यमृषिसंघैर्निषेवितम् ॥४६

---

१. नमो हंसाय ते तुभ्यमिति पा० । २. वहु इति पा० । ३. दहन्तमिति पा० । ४. परां गतिमिति पा० । ५. सर्वभक्षाय, इति च पा० । ६. ब्रह्मणस्तु प्रसादतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पवित्र हृदय स्तोत्र सभी पापों का नाश करने वाला, वेदों के सार से उत्पन्न, ब्राह्मणों का हितकारक और ऋषिवृन्दों के द्वारा सेवित है ।४६

अथागम्य गृहं विप्रः समाचम्य यथाविधि ।
प्रज्वाल्य वह्निं विधिवज्जुहुयाज्जातवेदसम् ॥४७

तत्पश्चात् घर आकर आचमन करके विधानानुसार अग्नि प्रज्वलित कर, अग्नि में नियमानुसार हवन करना चाहिए ।४७

ऋत्विक् पुत्रोऽथ पत्नी वा शिष्यो वापि सहोदरः ।
प्राप्यानुज्ञां विशेषेण ह्यध्वर्युर्वा यथाविधि ॥४८

अनुमति प्राप्त होने से पुत्र, शिष्य, पत्नी, सहोदर या पुरोहित भी विधानानुसार हवन कर सकते हैं ।४८

पवित्रपाणिः पूतात्मा शुक्लाम्बरधरः शुचिः ।
अनन्यमनसा[1] नित्यं जुहुयात्संयतेन्द्रियः ॥४९

हाथ में पवित्री लेकर, शुद्ध अन्तः करण से, श्वेत वस्त्र धारण कर, शुद्ध होकर, इन्द्रियों को वश में रखकर, एकाग्र मन से, अग्नि में हवन करना चाहिए ।४९

विना दर्भेण यत्कर्म विना सूत्रेण[2] वा पुनः ।
राक्षसं तद्भवेत्सर्वं नामुत्रेह फलप्रदम् ॥५०

यज्ञोपवीत और कुश के बिना हवन करने से, उस कर्म का फल राक्षसों को मिलता है तथा इसलोक और परलोक में उस कर्म के द्वारा कोई उपकार नहीं होता ।५०

देवतानि नमस्कुर्यादुपहारा[3] न्निवेदयेत् ।
दद्यात्पुष्पादिकं तेषां वृद्धांश्चैवाभिवादयेत् ॥५१

देवताओं को प्रणाम कर, उन्हें पुष्प नैवेद्यादि चढ़ाकर वयस्क लोगों को प्रणाम करना चाहिए ।५१

गुरुञ्चैवाप्युपासीत हितञ्चास्य समाचरेत् ।
वेदाभ्यासं ततः कुर्यात्प्रयत्नाच्छक्तितो द्विजः ॥५२

गुरुकी उपासना और उनके हितकार्यों में संलग्न रहकर ब्राह्मण को अपने सामर्थ्य के अनुसार वेदाध्ययन करने का प्रयास करना चाहिए ।५२

---

१. अनन्यमनसो वह्निमिति पा० । २. मन्त्रेण यदिति पा० । ३. देवसारान्निवेदयेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जपेदध्यापयेच्छिष्यान्धारयेद्वै[1] विचारयेत् ।
अवेक्ष्य तञ्च शास्त्राणि धर्मादीनि द्विजोत्तमाः ॥५३

हे द्विजोत्तमगण ! ब्राह्मणों को जप करना, शिष्यों को (वेद) पढ़ाना, स्वयं वेदों के अर्थ को समझकर उस पर विचार करना और शास्त्र द्वारा धर्म और अधर्म का निरूपण करना चाहिए ।५३

वैदिकांश्चैव निगमान्वेदांगानि च सर्वशः ।
उपेयादीश्वरं वाथ योगक्षेमप्रसिद्धये ॥५४

शिष्यों को वेदों के निगमों (अंशों, सिद्धान्तों) और वेदांगों का अध्ययन कराना और योग क्षेम (अप्राप्य की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा) की सिद्धि के लिए, राजा के समीप जाना चाहिए ।५४

साधयेद्विविधानर्थान् कुटुम्बार्थे ततो द्विजः ।
ततो मध्याह्नसमये स्नानार्थं मृदमाहरेत् ॥५५

परिवार के लिए विविध प्रकार की धन सम्पत्ति संगृहीत करना चाहिए और मध्याह्न समय स्नान के लिए मिट्टी लानी चाहिए ।५५

पुष्पाक्षतान् कुशतिलान् गोशकृच्छुद्धमेव वा ।
नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरस्सु च ।
स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्त्तप्रस्रवणेषु च ॥५६

फूल, अक्षत, चावल, कुश, तिल और शुद्ध गोबर लाना चाहिए । नदी, देव-कुंड, तड़ाग, सरोवर, नहर और प्रस्रवण (झरना) में प्रतिदिन स्नान करना चाहिए ।५६

परकीयनिपानेषु न स्नायाद्वै कदाचन ।
पञ्चपिण्डान्समुद्धृत्य स्नायाद्वा सम्भवे पुनः ॥५७

दूसरे के कुएँ के समीप स्थित हौज में कभी स्नान नहीं करना चाहिए । पाँच मिट्टी के पिण्डों को पानी से निकालकर, तब नहाना चाहिए ।५७

मृदैकया शिरः क्षाल्यं द्वाभ्यां नाभेस्तथोपरि ।
अधस्तु तिसृभिः कार्यः पादौ षड्भिस्तथैव च ॥५८

मिट्टी का एक पिण्ड लेकर उससे सिर, दो पिण्डों से नाभिका ऊपरी हिस्सा, तीन पिण्डों से नाभि का निचला हिस्सा और छः पिण्डों से पैरों को साफ करना चाहिए ।५८

---

१. श्रावयेच्चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्तिका च समुद्दिष्टा सार्द्राद्यलकमात्रिका ।
गोमयस्य प्रमाणन्तु तेनाङ्गं लेपयेत्पुनः[1] ॥५९

जितनी मात्रा में गीली मिट्टी लेकर, जिन अंगों को जिस प्रकार से साफ करने को बताया गया है, उतनी ही मात्रा में गोबर लेकर, उन-उन अंगो में उतनी बार लेप लगाना चाहिए ।५९

लेपयित्वा तीरसंस्थं तल्लिङ्गैरेव मन्त्रतः ।
प्रक्षाल्याचम्य विधिवत्ततः स्नायात्समाहितः ॥६०

तट पर बैठकर लेप से सम्बन्धित मन्त्र पढ़ते हुए, शरीर में मिट्टी और गोबर का लेप लगाना चाहिए । तत्पश्चात् उन्हें धोकर, नियमानुसार आचमन कर, एकाग्र होकर, स्नान करना चाहिए ।६०

अभिमन्त्र्य जलं मन्त्रैस्तल्लिङ्गैर्वारुणैः[2] शुभैः ।
भावपूतस्तदव्यक्तं धारयेद्विष्णुमव्ययम्[3] ॥६१

प्रकाशक और शुभ वारुण मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित कर, भावशुद्ध होकर अप्रत्यक्ष और अविनाशी विष्णु का ध्यान करना चाहिए ।६१

आपो नारायणोद्भूतास्ता एवास्यायनं पुनः ।
तस्मान्नारायणं देवं स्नानकाले स्मरेद्बुधः ॥६२

चल, नारायण से उत्पन्न और नारायण का आश्रय स्थान है अतः विद्वान् व्यक्ति स्नान करते हुए, नारायण का स्मरण करते हैं ।६२

प्रेक्ष्य सोङ्कारमादित्यं त्रिर्निमज्जेज्जलाशये ॥६३

ओंकार का उच्चारण करते हुए और सूर्य की ओर देखकर, तीनबार जलाशय में डुबकी लगाना चाहिए ।६३

आचान्तः[4] पुनराचामेन्मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ॥६४

अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः ।
त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योतीरसोऽमृतम् ॥६५

पहले आचमन किए रहने पर भी, मन्त्रज्ञ व्यक्ति निम्नलिखित मन्त्र के द्वारा आचमन करें—हे देव ! तुम प्राणियों के अन्तः करण में, सबके हृदय गुहा में विचरण करते हो । तुम्ही विश्वतोमुख, तुम्हीं यज्ञ, वषट्कार, जल, ज्योति रस और अमृत हो ।६४-६५।

---

१. लेपयेत्ततः इति पा० । २. तल्लिङ्गैनैवेति पा० । ३. ध्यायन्वै विष्णुमिति; धारयन्निति पा० । ४. पुनः पुनस्तथाचामेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रुपदां वा त्रिरभ्यस्येद्व्याहृतिं प्रणवान्विताम् ।
सावित्रीं वा जपेद्विद्वान्तथा चैवाघमर्षणम् ॥६६

तत्पश्चात् 'द्रुपदां' मन्त्र का तीन बार पाठ कर विद्वान् व्यक्ति प्रणव और महाव्याहृतियुक्त सावित्री का तीन बार जप करेंगे तथा अघमर्षण सूक्त का तीन बार पाठ करेंगे ।६६

ततः सम्मार्ज्जनं कुर्यात् आपोहिष्ठा मयो भुवः ।
इदमापः प्रवहतो व्याहृतिभिस्तथैव च ॥६७

'आपोहिष्ठा मयोभुवः' और 'इदमापः प्रवहत': आदि मन्त्र और व्याहृति से शरीर को मलेंगे ।६७

तथाभिमन्त्र्य तत्तोयमापो हिष्ठादिभिस्त्रिकैः[1] ।
अन्तर्जलगतो मग्नो जपेत्त्रिरघमर्षणम् ॥६८

'आपोहिष्ठादि' तीन मन्त्रों से जल को अभिमन्त्रित कर पानी में गर्दन तक डूबकर अघमर्षण सूक्त का तीन बार पाठ करेंगे ।६८

द्रुपदां[2] वाथ सावित्रीं तद्विष्णोः परमं पदम् ।
आवर्त्तयेच्च प्रणवं देवं वा संस्मरेद्धरिम् ॥६९

'द्रुपदा' 'सावित्री' और 'तद्विष्णो परमं पदं' मन्त्र की आवृत्ति करने के बाद प्रणव की आवृत्ति करनी चाहिए या भगवान् विष्णु का स्मरण करना चाहिए ।६९

द्रुपदादिव यो मन्त्रो यजुर्वेदे प्रतिष्ठितः ।
अन्तर्जले त्रिरावर्त्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥७०

जल के भीतर यजुर्वेदोक्त 'द्रुपदादि' मन्त्र का तीन बार पाठ करने से, सारे पाप धुल जाते हैं ।७०

अपः पाणौ समादाय जप्त्वा वै मार्जने कृते ।
विन्यस्य मूर्ध्नि तत्तोयं मुच्यते सर्वपातकैः ॥७१

शरीर मलने के बाद, हथेली में जल रखकर मन्त्रोच्चारण करते हुए, उस जल को सिर पर डालने से, सारे पापों से मुक्ति मिल जाती है ।७१

यथाश्वमेधः क्रतुराट् सर्वपापापनोदनः ।
तथाघमर्षणं[3] प्रोक्तं सर्वपापापनोदनम् ॥७२

---

१. हिष्ठादिमन्त्रकैरिति पा० । २. त्रिपथामिति, त्रिपदामिति पा० । ३. अथाघमर्षणं सूक्तमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे यज्ञों में श्रेष्ठ, अश्वमेध सारे पाप दूर करता है उसी प्रकार अघमर्षण सूक्त समस्त पापों का नाशक है ।७२

अथोपतिष्ठेदादित्यमूर्ध्वं पुष्पाक्षतान्वितम्[1] ।
प्रक्षिप्यालोकयेद्ध्व मूर्ध्वं[2] यस्तमसः परः ॥७३

तत्पश्चात् पुष्प और अक्षत युक्त जल को ऊपर की ओर उछालकर, अन्धकार के बाद उगने वाले सूर्य को ऊपर की ओर मुंह करके देखना चाहिए ।७३

उदुत्यं चित्रमित्येते तच्चक्षुरिति मन्त्रतः ।
हंसः शुचिषदन्तेन सावित्र्या सविशेषतः ॥७४
अन्यैश्च वैदिकैर्मन्त्रैः सौरैः पापप्रणाशनैः ।
सावित्रीं वै जपेत्पश्चाज्जपयज्ञः स वै स्मृतः ॥७५

'उदुत्यं' चित्रं' 'तच्चक्षुः', 'हंसः शुचिषत्', इन वैदिक मन्त्रों से सूर्योपस्थान करना चाहिए । तत्पश्चात् सावित्री मन्त्र जपना चाहिए, सावित्री जप को ही जपयज्ञ कहा गया है ।७४-७५।

विविधानि पवित्राणि गुह्यविद्यास्तथैव च ।
शतरुद्रीयं[3] शिरसं सौरान्मन्त्रांश्च सर्वतः ॥७६

इसके पश्चात् विविध पवित्र मन्त्रों का, गुह्यविद्या, शतरुद्रीय, आथर्वशिरोमन्त्र और सौरमन्त्र का सामर्थ्य के अनुसार पाठ करना चाहिए ।७६

प्राक्कूलेषु समासीनः कुशेषु प्राङ्मुखः शुचिः ।
तिष्ठंश्च[4] वीक्षमणोऽर्कं जप्यं कुर्यात् समाहितः ॥७७

तट पर कुशासन पर बैठकर, पूर्व दिशा की ओर मुंह करके, शुद्ध और समाधिस्थ होकर, सूर्य की ओर देखते हुए जप करना चाहिए ।७७

स्फाटिकेन्द्राक्षरुद्राक्षैः पुत्रजीवसमुद्भवैः ।
कर्त्तव्या त्वक्षमाला स्यादुत्तरादुत्तमा[5] स्मृता ॥७८

स्फटिक, इन्द्राक्ष, रुद्राक्ष या पुत्रजीवादि वस्तुओं से जप की माला तैयार करनी चाहिए और इस माला को उत्तरोत्तर प्रशस्त जानो ।७८

जपकाले न भाषेत व्यंगा न प्रक्षयेद्बुधः ।
न कंपयेच्छिरो ग्रीवां दन्तान्नैव प्रकाशयेत् ॥७९

---

१. पुष्पाक्षताञ्जलिमिति, पुष्पान्वितं जलमिति पा० । २. उद्वयं तमसस्परि इति पा० । ३. शतरुद्रीयमाथर्वशिरः सौरांश्च पा० । ४. तिष्ठंश्चोद्वीक्षमाणोऽर्कमिति पा० । ५. उत्कृष्टा चोत्तरोत्तरा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पण्डितों के लिए जप करते समय, बोलना, दूसरी ओर देखना, सिर और गर्दन हिलाना तथा दांत दिखाना वर्जित है ।७९

गुह्यका राक्षसा सिद्धा हरन्ति प्रसभं यतः ।
एकान्तेषु शुचौ देशे तस्माज्जप्यं समाचरेत् ॥८०

जप करते हुए, निषिद्ध कर्मों को करने से यज्ञ, राक्षस और सिद्ध; जप का बलपूर्वक हरण कर लेते हैं। इसलिए एकान्त और पवित्र स्थान में बैठकर जप करना चाहिए ।८०

चण्डालाशौचपतितान् दृष्ट्वा चैव पुनर्जपेत् ।
तैरेव भाषणं कृत्वा स्नात्वा चैव पुनर्ज्जपेत् ।८१

जप करते हुए चाण्डाल, पतित और सूतक लगे हुए व्यक्ति को देख लेने से आचमन करके और बात कर लेने से स्नान करके, पुनः जप करना चाहिए ।८१

आचम्य प्रयतो नित्यं जपेदशुचिदर्शने ।
सौरान्मन्त्रान् शक्तितो वै पावमानीस्तु कामतः ॥८२

प्रतिदिन नियमानुसार आचमन करके, जप करना चाहिए और अपवित्र व्यक्ति को देख लेने से अपने सामर्थ्य और इच्छानुसार, सौर या पवमान मन्त्र का जप करना चाहिए ।८२

यदि स्यात् क्लिन्नवासा वै वारिमध्यं गतोऽपि वा ।
अन्यथा तु शुचौ भूम्यां दर्भेषु सुसमाहितः ॥८३

यदि जप करने वाला गीले वस्त्र पहने हुए हो तो उसे जल में रहकर और सूखे वस्त्र पहने हो तो पवित्र स्थान पर कुश पर बैठकर एकाग्रचित्त होकर जप करना चाहिए ।८३

प्रदक्षिणं समावृत्य नमस्कृत्य ततः क्षितौ ।
आचम्य च यथाशास्त्रं भक्त्या स्वाध्यायमाचरेत् ॥८४

तत्पश्चात् सूर्य की परिक्रमा करके, भूमि पर प्रणाम कर, आचमन करने के बाद, शास्त्रानुसार वेदाध्ययन करना चाहिए ।८४

ततः सन्तर्पयेद्देवानृषीन् पितृगणांस्तथा ।[1]
आदावोङ्कारमुच्चार्य नामान्ते तर्पयामि वः ॥८५

उसके बाद देवता, ऋषि और पितरों का तर्पण करके, शुरू में ओंकार और नाम के अन्त में 'तर्पयामि वः' का उच्चारण करना चाहिए ।८५

---

१. पितृगणान् क्रमादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवान् ब्रह्मऋषींश्चैव तर्पयेदक्षतोदकैः ।
तिलोदकैः पितॄन् भक्त्या स्वसूत्रोक्तविधानतः[1] ॥८६

अपने-अपने गृह्यसूत्र में बताए गए नियमानुसार देवताओं और ऋषियों को चावल युक्त जल से तथा पितरों को तिलयुक्त जल से भक्ति भाव से तर्पण करना चाहिए ।८६

अन्वारब्धेन सव्येन पाणिना दक्षिणेन तु ।
देवर्षींस्तर्पयेद्धीमानुदकाञ्जलिभिः पितॄन् ।
यज्ञोपवीती देवानां निवीती ऋतिषर्पणे ॥८७

विद्वान् मनुष्य बाएँ और दाहिने हाथ की अंजुली में जल लेकर देवता, ऋषि और पितरों का तर्पण करते हैं । देवताओं का तर्पण उपवीती, ऋषियों का निवीती और पितरों का प्राचीनावीती होकर, अपने-अपने तीर्थ (उँगलियों के स्थान विशेष) के द्वारा, भक्ति भाव से करना चाहिए ।८७

प्राचीनावीती पित्र्ये तु स्वेन तीर्थेन भावितः ।
निष्पीड्य स्नानवस्त्रं तु समाचम्य च वाग्यतः ।
स्वैर्मन्त्रैरर्चयेद्देवान् पुष्पैः पत्रैरथाम्बुभिः ॥८८

तदनन्तर गीले वस्त्रों को निचोड़ कर आचमन करके, वाणी पर नियन्त्रण रख, (बताए गए) देवताओं को उन्हीं से सम्बन्धित मन्त्रों का पाठ करते हुए, पुष्प, पत्र और जल से पूजना चाहिए ।८८

ब्रह्माणं शङ्करं सूर्यं तथैव मधुसूदनम् ।
अन्यांश्चाभिमतान्देवान्[2] भक्त्याचारो नरोत्तमः ॥८९

हे नरश्रेष्ठ ! ब्रह्मा, शिव, सूर्य, विष्णु तथा अन्यान्य अभीष्ट देवताओं को भक्ति-भाव से पूजना चाहिए ।८९

प्रदद्याद्वाथ पुष्पाणि सूक्तेन[3] पौरुषेण तु ।
आपो वै देवताः सर्वास्तेन सम्यक् समर्चिताः ॥९०

पुरुष सूक्त के मन्त्रों का पाठ करते हुए, देवताओं का पुष्प और जल चढ़ाने से, सारे देवताओं की पूजा भलीभाँति सम्पन्न हो जाती है ।९०

ध्यात्वा प्रणवपूर्वं देवतानि समाहितः ।
नमस्कारेण पुष्पाणि विन्यसेद्वै पृथक् पृथक् ॥९१

---

१. स्वसूत्रोक्त इति पा० । २. अन्यांश्चापि महादेवान् भक्त्या चाक्रोधनो नर इति पा० । ३. सूक्तेन पौरुषेण-पुरुषसूक्तेन "सहस्रशीर्षाः पुरुषः" इत्यादिमन्त्रेण ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकाग्रचित होकर, प्रणवोच्चारण के पश्चात्, सभी देवताओं का ध्यान करके, उन्हें प्रणाम करने के बाद, पृथक्-पृथक् रूप से सारे देवताओं को फूल चढ़ाना चाहिए ।९१

विष्णोराराधनात्पुण्यं विद्यते कर्म वैदिकम् ।
तस्मादनादिमध्यान्तं नित्यमाराधयेद्धरिम् ॥९२

विष्णु की पूजा के अतिरिक्त पुण्य प्रदान करने वाला, दूसरा कोई वैदिक कर्म नहीं है, इसलिए प्रतिदिन, आदि, मध्य और अन्त रहित विष्णु की आराधना करनी चाहिए ।९२

तद्विष्णोरिति मन्त्रेण सूक्तेन पुरुषाहितः[1] ।
न ताभ्यां सदृशो मन्त्रो वेदेषूक्तश्चतुर्ष्वपि ॥×
तदात्मा तन्मनाः शान्तस्तद्विष्णोरिति मन्त्रतः ॥९३

'तद्विष्णोः' नामक मन्त्र और (पुरुष) सूक्त के समान मन्त्र चारों वेदों में नहीं है, इसलिए तन्मय होकर, विष्णु में चित्त लगाकर, शान्त भाव से, 'तद्विष्णोः' मन्त्र का पाठ करते हुए भगवान् विष्णु को अपनी आत्मा समर्पित कर देनी चाहिए ।९३

अथवा देवमीशानं भगवन्तं सनातनम् ।
आराधयेन्महादेवं भावपूतो महेश्वरम् ॥९४

अथवा सनातन, देवाधिदेव, ईशान, महादेव, भगवान् शंकर की भक्तिभाव से आराधना करनी चाहिए ।९४

मन्त्रेण रुद्रगायत्र्या प्रणवेनाथ वा पुनः ।
ईशानेनाथवा रुद्रैस्त्र्यम्बकेन समाहितः ॥९५

पुष्पैः पत्रैरथादिभिर्वा चन्दनाद्यैर्महेश्वरम् ।
उक्त्वा नमः शिवायेति मन्त्रेणानेन वा जपेत् ॥९६

एकाग्रचित्त होकर, रुद्रगायत्री, प्रणव, ईशान, शतरुद्रिय, और अम्बक मन्त्र का पाठ करके, पुष्प, विल्वपत्र चन्दनादि अथवा केवल जल से 'नमः शिवाय' मन्त्र का उच्चारण कर, उसका जप करते हुए, भगवान् शंकर की पूजा करनी चाहिए ।९५-९६।

नमस्कुर्यान्महादेवं तं मृत्युञ्जयमीश्वरम्[2] ।
निवेदयीत स्वात्मानं यो ब्रह्माणमितीश्वरम् ॥९७

जपने के बाद, मृत्युञ्जय देवाधिदेव महादेव को नमस्कार कर 'यो ब्रह्माणं' आदि मन्त्र पाठ कर, ईश्वर को आत्म समर्पण करना चाहिए ।९७

---

१. पुरुषेण तु इति पा० । × निवेदयित्वा चात्मानं विष्ण्वावमिततेजसि इत्यधिकः लि० पु० । २. ऋतं सत्यमितीश्वरमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदक्षिणं द्विजः कुर्यात्पञ्च वर्षाणि वै बुधः ।
ध्यायीत[1] देवमीशानं व्योममध्यगतं शिवम् ॥९८

हे विद्वानो ! ब्राह्मण को पाँच वर्षों तक प्रदक्षिणा करते हुए आकाश के मध्यस्थित देवाधिदेव ईशान, भगवान् शिव का ध्यान करना चाहिए ।९८

अथावलोकयेदर्कं हंसः शुचिषदित्यृचा ।
कुर्वन् पंच महायज्ञान् गृहं गत्वा समाहितः ॥९९

'हंसः शुचिषत्' ऋक् मन्त्र के द्वारा, सूर्य दर्शन करना चाहिए । तदन्तर घर जाकर, एकाग्र चित्त से पंच महायज्ञ करना चाहिए ।९९

देवयज्ञं पितृयज्ञं भूतयज्ञं[2] तथैव च ।
मानुष्यं ब्रह्मयज्ञं च पंचयज्ञान् प्रचक्षते ॥१००

देवयज्ञ, पितृयज्ञ, भूतयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, तथा ब्रह्मयज्ञ, इन पांचों का नाम पंचयज्ञ है ।१००

यदि स्यात्तर्पणादर्वाक् ब्रह्मयज्ञः कृतो न हि ।
कृत्वा मनुष्ययज्ञं वै ततः स्वाध्यायमाचरेत् ॥१०१

यदि तर्पण से पहले ब्रह्मयज्ञ न किया गया हो तो मनुष्य यज्ञ (अतिथि सेवा) सम्पन्न करने के बाद वेदाध्ययन या अध्यापन रूपी ब्रह्मयज्ञ सम्पन्न करना चाहिए ।१०१

अग्नेः पश्चिमतो देशे भूतयज्ञान्त एव च ।
कुशपुञ्जे समासीनः कुशपाणिः समाहितः ॥१०२

कुश के ढेर पर बैठकर तथा हाथ में कुश लेकर, अग्नि के पश्चिम दिशा में भूतयज्ञ (पशु पक्ष्यादि को अन्न देना भूतयज्ञ कहलाता है) सम्पन्न करना चाहिए ।१०२

शालाग्नौ लौकिके वाथ जले भूम्यामथापि वा ।
वैश्वदेवश्च कर्त्तव्यो देवयज्ञः स वै स्मृतः ॥१०३

शालाग्नि, लौकिकाग्नि, जल या भूमि में वैश्वदेव होम करना चाहिए, उसे देवयज्ञ कहा जाता है ।१०३

यदि स्याल्लौकिके पक्षे ततोऽन्नं तत्र हूयते ।
शालाग्नौ तत्पचेदन्नं विधिरेष सनातनः ॥१०४

यदि लौकिकाग्नि में भोजन बनाया गया हो तो लौकिकाग्नि में और शालाग्नि में बनाया गया हो तो शालाग्नि में वैश्वदेव होम करना चाहिए, यही सनातन नियम है ।१०४

---

१. ध्यायीत-ध्यायेत्, आर्षः प्रयोगः । २. ऋषियज्ञन्तथैव चेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवेभ्यश्च हुतादन्नाच्छेषाद्भूतबलिं हरेत् ।
भूतयज्ञः स विज्ञेयो भूतिदः सर्वदेहिनाम् ॥१०५

वैश्वदेव होम से बचे हुए अन्न से भूतबलि कर्म करना चाहिए, इसे सभी प्राणियों को ऐश्वर्य प्रदान करने वाला भूतयज्ञ जानना चाहिए ।१०५

श्वभ्यश्च श्वपचेभ्यश्च पतितादिभ्य एव च ।
दद्याद्भूमौ बहिश्चान्नं[1] पक्षिभ्यो द्विजसत्तमाः ॥१०६

हे ब्राह्मणश्रेष्ठो ! पतित, चाण्डाल, कुकुर और पक्षियों को घर से बाहर भूमि पर अन्न देना चाहिए ।१०६

सायञ्चान्नस्य सिद्धस्य पत्न्यमन्त्रं बलिं हरेत् ।
भूतयज्ञस्त्वयं नित्यं सायम्प्रातर्यथाविधि ॥१०७

सायंकाल पत्नी को पके हुए अन्न से विना मन्त्र के बलि प्रदान करना चाहिए । प्रतिदिन प्रातः और सायंकाल नियमानुसार भूतयज्ञ करना चाहिए ।१०७

एकन्तु भोजयेद्विप्रं पितॄनुद्दिश्य सन्ततम् ।
नित्यश्राद्धं तदुच्छिष्टं पितृयज्ञो गतिप्रदः ॥१०८

प्रतिदिन पितरों का नाम लेकर एक ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए । यही नित्यश्राद्ध और गतिप्रदायक पितृयज्ञ कहलाता है ।१०८

उद्धृत्य वा यथाशक्ति किञ्चिदन्नं समाहितः ।
वेदतत्त्वार्थविदुषे द्विजायैवोपपादयेत् ॥१०९

वेदार्थज्ञ किसी श्रेष्ठ ब्राह्मण को सामर्थ्य के अनुसार थोड़ा सा अन्न लेकर, एकाग्रचित्त होकर, दान देना चाहिए ।१०९

पूजयेदतिथिं नित्यं नमस्येदर्चयेद्विभुम् ।
मनोवाक्कर्मभिः शान्तः स्वागतं स्वगृहं गतः ॥११०

तत्पश्चात् घर आए हुए शान्त अतिथि की मन, वचन और कर्म से पूजा करनी चाहिए तथा प्रतिदिन अतिथि देवता की अर्चना कर, प्रणाम करना चाहिए ।११०

अन्वारब्धेन सव्येन पाणिना दक्षिणेन तु ।
हन्तकारमथाग्रं वा भिक्षां वा शक्तितो द्विजः ॥१११

बाएँ हाथ से थामकर, दाहिने हाथ से अतिथियों को प्रतिदिन अपने सामर्थ्य के अनुसार, हन्तकार, अग्र या भिक्षा दान करनी चाहिए ।१११

---

१. बलिं त्वन्नं पक्षिभ्योऽथ द्विजोत्तमा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दद्यादतिथये नित्यं बुध्येत परमेश्वरम् ।
भिक्षामाहुर्ग्रासमात्रामग्रं तत्स्याच्चतुर्गुणम् ॥११२
पुष्कलं हन्तकारन्तु तच्चतुर्गुणमुच्यते ।

अतिथि को परमेश्वर जानना चाहिए । एक कौर बराबर अन्न भिक्षा, उसका चौगुना अग्र, अग्र का चौगुना पुष्काल अन्न, हन्तकार कहलाता है ।११२½।

गोदोहकालमात्रं वै प्रतीक्ष्यो ह्यतिथिः स्वयम् ॥११३
अभ्यागतान्यथाशक्ति पूजयेदतिथीन्सदा ।
भिक्षां वै भिक्षवे दद्याद्विधिवद्ब्रह्मचारिणे ।

गाय दुहने के समय (अर्थात् प्रातः और सायंकाल) अतिथि की प्रतीक्षा करके, स्वयं भोजन करना चाहिए । आए हुए अतिथियों की सदैव अपने सामर्थ्य के अनुसार पूजा करनी चाहिए ।११३½

दद्यादन्नंयथा शक्ति ह्यर्थिभ्यो लोभवर्ज्जितः[1] ।११४

भिखारी और ब्रह्मचारी को विधिवत् भिक्षा देनी चाहिए । लोभ किए बिना, सामर्थ्यानुसार, याचकों को अन्न-दान करना चाहिए ।११४

सर्वेषामप्यलाभे हि त्वन्नं गोभ्यो निवेदयेत् ।
भुञ्जीत बहुभिः[2] सार्द्धं वाग्यतोऽन्नमकुत्सयन् ॥११५

याचक न मिलने पर केवल गाय को ही अन्न दान करना चाहिए । इसीसे व्यक्ति को सारी सिद्धि प्राप्त हो जाती है । तत्पश्चात् बहुत से लोगों के साथ, मौन होकर भोजन, करना चाहिए ।११५

अकृत्वा तु द्विजः पञ्च महायज्ञान् द्विजोत्तमाः ।
भुञ्जीत चेत्स मूढात्मा तिर्यग्योनिं स गच्छति ॥११६

हे ब्राह्मण श्रेष्ठो ! जो ब्राह्मण पंच महायज्ञ किए बिना अन्न ग्रहण करता है । वह दुर्बुद्धि युक्त व्यक्ति पक्षी योनि में जन्म लेता है ।११६

वेदाभ्यासोऽन्वहं शक्त्या महायज्ञः क्रियाक्षया ।
नाशयन्त्याशु पापानि देवताभ्यर्च्चनं तथा ॥११७

पंच महायज्ञ करने में असमर्थ होने पर, प्रतिदिन सामर्थ्यानुसार वेदाभ्यास और देवताओं की पूजा करनी चाहिए । ऐसा करने से, उस व्यक्ति के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।११७

---

१. तस्माच्चतुर्गुणमिति, तस्याच्चतुर्गुणमिति पा० २. बन्धुभिरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यो मोहादथवाज्ञानादकृत्वा[1] देवताऽर्च्चनम् ।
भुंक्ते स याति नरकं सूकरं[2] नात्र संशयः ॥११८

जो व्यक्ति अज्ञानतावश, देवता की पूजा किए बिना भोजन करता है, वह व्यक्ति मृत्यु के बाद नरक भोगता है और शूकर योनि में जन्म लेता है, इसमें कोई सन्देह नहीं ११८

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कृत्वा कर्माणि वै द्विजाः ।
भुञ्जीत स्वजनैः सार्द्धं स याति परमां गतिम् ॥११९

अतः जो ब्राह्मण विधानानुसार सारे कर्मों को यत्न पूर्वक सम्पन्न कर सम्बन्धियों के साथ भोजन करता है, उसे उत्कृष्ट गति प्राप्त होती है ।११९

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु ब्राह्मणानां
नित्यकर्तव्यकर्मनिरूपणं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में, ब्राह्मणों के नित्यकर्तव्य कर्म निरूपण नामक अठारहवाँ अध्याय समाप्त ॥१८॥

एकोनविंशोऽध्यायः

ब्राह्मणानां नित्यकर्तव्यकर्मसु भोजनादिप्रकारः ।

व्यास उवाच

प्राङ्मुखोऽन्नानि भुञ्जीत सूर्याभिमुख एव वा ।
आसीनः स्वासने शुद्धे भूम्यां पादौ निधाय च ॥१

व्यासबोले—शुद्ध और अपने ही आसन पर बैठकर पैरों को भूमि पर छुआ कर, पूर्व दिशा की ओर या सूर्य की तरफ मुंह करके भोजन करना चाहिए ।१

---

१. मोहादथ बालत्वादकृत्वा इति पा० । २. शूकरेष्वभिजायते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः ।
श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते ह्युदङ्मुखः ॥२

दीर्घायु की कामना करने वालों को पूर्व दिशा की ओर, यश के अभिलाषी दक्षिणाभिमुख होकर, सम्पत्ति की कामना करने वालों को पश्चिम की ओर और-सत्य फल प्राप्ति की इच्छा रखने वालों को, उत्तराभिमुख होकर भोजन करना चाहिए ।२

पञ्चार्द्रो भोजनं कुर्याद्भूमौ पात्रं निधाय च ।
उपवासेन तत्तुल्यं मनुराह प्रजापतिः ॥३

पांचों अंगों को धोकर और भोजन की थाली को भूमि पर रखकर, भोजन करना चाहिए । प्रजापति मनु ने इस प्रकार के भोजन को उपवास के समान माना है ।३

उपलिप्ते शुचौ देशे पादौ प्रक्षाल्य वै करौ ।
आचम्यार्द्राननोऽक्रोधः पञ्चार्द्रो भोजनं चरेत् ॥४

दो हाथ, दो पैर, और मुंह, इन पांचों अंगों को धोकर, गोबर से लिपे हुए स्वच्छ स्थान पर बैठकर आचमन करके, क्रोध का परित्याग कर, भोजन करना चाहिए ।४

महाव्याहृतिभिस्त्वन्नं परिधायोदकेन तु ।
अमृतोपस्तरणमसीत्यापोऽशानक्रियाञ्चरेत् ॥५

महाव्याहृति का पाठ करते हुए, जल से अन्न को चारो तरफ से घेरकर अमृतोपस्तरणमसि' मन्त्र का पाठ करके, जल का आचमन करना चाहिए ।५

स्वाहाप्रणवसंयुक्तां प्राणायाद्याहुतिं ततः ।
अपानाय ततो भुक्त्वा व्यानाय तदनन्तरम् ॥६

उदानाय ततः कुर्यात्समानायेति पञ्चमम् ।
विज्ञाय तत्त्वमेतेषां जुहुयादात्मनि द्विजः ॥७

तत्पश्चात् 'प्राणाय स्वाहा कह कर प्राणाहुति, 'अपानाय स्वाहा' कहकर अपानाहुति, 'व्यानाय स्वाहा' कहकर व्यानाहुति, 'उदानाय स्वाहा' कहकर उदानाहुति, और अन्त में 'समानाय स्वाहा' कहकर पांचवी आहुति देनी चाहिए । इन आहुतियों का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने के बाद ब्राह्मणों को आत्मा में पञ्च प्राणाहुतियां देनी चाहिए ।६७।

शेषमन्नं यथाकामं[2] भुञ्जीत व्यंजनैर्युतम् ।
ध्यात्वा तन्मनसा देवानात्मानं[3] वै प्रजापतिम् ॥८

---

१. आपःपानोति पा० । २. यथोक्तञ्चइति पा० । ३. देवमात्मानमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवता, आत्मा और प्रजापति का मन ही मन ध्यान करके शेष अन्न को, व्यंजनों के साथ, अपनी इच्छानुसार, खाना चाहिए ।८

अमृतापिधानमसीत्युपरिष्टादपः पिबेत् ।
आचान्तः पुनराचामेदयंगौरिति मन्त्रतः ॥९

भोजन समाप्त हो जाने के बाद 'अमृतापिधानमसि' मन्त्र का पाठकर करके जल पीना चाहिए । तत्पश्चात् 'अयं गोः' मन्त्र पढ़कर, पुनः आचमन करना चाहिए ।९

द्रुपदां वा त्रिरावर्त्य सर्वपापप्रणाशनीम् ।
प्राणानां ग्रन्थिरसीत्यालभेदुदरं[1] ततः ॥१०

सभी पापों का नाश करने वाला 'द्रुपदां' मन्त्र तीनबार पढ़कर, फिर 'प्राणानां ग्रन्थिरसि' मन्त्र पढ़कर, उदरस्पर्श करना चाहिए ।१०

आचम्यांगुष्ठमात्रेण पादांगुष्ठेन दक्षिणे ।
निस्रावयेद्धस्तजलमूर्ध्वहस्तः समाहितः ॥११

आचमन करके, (हाथ की) उँगलियों से दाहिने पैर की उँगलियों में जल डालना चाहिए, फिर हाथों को ऊपर उठाकर, जल गिरा देना चाहिए ।११।

कृतानुमन्त्रणं कुर्यात्सन्ध्यायामिति मन्त्रतः ।
अथाक्षरेण[2] स्वात्मानं योजयेद्ब्राह्मणेति हि ॥१२

'सन्ध्यायां' मन्त्र से अनुमति माँग कर, 'ब्राह्मण' मन्त्र से आत्मयोग देना चाहिए ।१२

सर्वेषामेव योगानामात्मयोगः स्मृतः परः ।
योऽनेन विधिना कुर्यात्स[3] कविर्ब्राह्मणः स्वयम् ॥१३

सभी योगों में आत्मयोग को श्रेष्ठ माना गया है । जो व्यक्ति विधानानुसार आत्मयोग करता है, वह विद्वान् स्वर्ग प्राप्त करता है ।१३।

यज्ञोपवीती भुञ्जीत स्रग्गन्धालंकृतः शुचिः ।
सायम्प्रातर्नान्तरा वै सन्ध्यायान्तु विशेषतः ॥१४

उपवीती, पवित्र और सुगन्धित माला से अलंकृत होकर भोजन करना चाहिए । सायं और प्रातः दोनो समयों में, विशेष रूप से सायं काल भोजन नहीं करना चाहिए ।१४

---

१. लभेत हृदयन्त त इति पा० । २. अथ क्रमेणेति पा० । ३. स याति ब्रह्मणः क्षयमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाद्यात्सूर्यग्रहात्पूर्वं प्रतिसायं शशिग्रहात् ।
ग्रहकाले न चाश्नीयात्स्नात्वाश्नीयाद्विमुक्तये ॥१५

सूर्यग्रहण से पहले, चन्द्रग्रहण लगने से पहले सायंकाल में, सूर्य और चन्द्रग्रहण लगे रहने पर, भोजन नहीं करना चाहिए। ग्रहण समाप्त हो जाने के बाद नहाकर, तब भोजन करना चाहिए।१५।

मुक्ते शशिनि चाश्नीयाद्यदि न स्यान्महानिशा ।
असुक्तयोरस्तगयोरद्याद्दृष्ट्वा परेऽहनि ॥१६

यदि चन्द्रग्रहण आधी रात को समाप्त हो तो भोजन नहीं करना चाहिए। सूर्य और चन्द्रमा यदि ग्रहणावस्था में ही अस्त हो जाय, तो उस दिन भोजन न करके दूसरे दिन उन्हें मुक्तावस्था देखकर, तब भोजन करना चाहिए।१६।

नाश्नीयात्प्रेक्षमाणानामप्रदाय च दुर्मतिः ।
यज्ञावशिष्टमद्याद्वा न क्रुद्धो नान्यमानसः ॥१७

भोजन की ओर देखने वाले भूखे व्यक्ति को दिए बिना, दुर्बुद्धि युक्त मनुष्य को भी भोजन नहीं करना चाहिए। यज्ञ से बची हुई वस्तु खानी चाहिए, परन्तु क्रोधित और अनमना होकर नहीं।१७।

आत्मार्थं भोजनं यस्य रत्यर्थं यस्य मैथुनम् ।
वृत्त्यर्थं यस्य चाधीतं निष्फलं तस्य जीवितम् ॥१८

जो व्यक्ति केवल अपने लिए ही भोजन बनाता है और स्वयं खाता है, जो मैथुन काम-वासना की तृप्ति के लिए करता है और जो धन कमाने के लिए अध्ययन करता है उसका जीवन व्यर्थ है।१८

यद्भुङ्क्ते वेष्टितशिरा यच्च भुङ्क्ते ह्युदङ्मुखः ।
सोपानत्कश्च यो भुङ्क्ते सर्वं विद्यात्तदासुरम् ॥१९

जो सिर ढक कर, उत्तर दिशा की ओर मुँह करके, सीढ़ी पर बैठकर भोजन करता है, वह भोजन असुरों को तृप्त करता है।१९

नार्द्धरात्रे न मध्याह्ने नाजीर्णे नार्द्रवस्त्रधृक् ।
न चभिन्नासनगतो न[1] यानसंस्थितोऽपि वा ॥२०

आधीरात को और ठीक मध्याह्न (भरी दोपहरी) समय भोजन नहीं करना चाहिए। अपिच (बदहजमी) होने से, गीले वस्त्र पहन कर, टूटे आसन पर बैठकर और वाहन पर चढ़ कर भोजन नहीं करना चाहिए।२०।

१. न शयानः स्थितोऽपि वेति, न शय्यान्तः स्थितोऽपि वा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न भिन्नभाजने चैव न भूम्यां न च पाणिषु ।
नोच्छिष्टो घृतमादद्यात्[1] न मूर्द्धानं स्पृशेदपि ॥२१

किसी दूसरे के पात्र में, भूमि पर या हाथ पर रखकर भोजन नहीं करना चाहिए। भोजन करते हुए, जूठे हाथों से न घी लेना चाहिए और न ही सिर का स्पर्श करना चाहिए।२१।

न ब्रह्म कीर्त्तयेच्चापि न निःशेषं न भार्यया ।
नान्धकारे न[2] सन्ध्यायां न च देवालयादिषु ॥२२

भोजन करते हुए वेदपाठ नहीं करना चाहिए और न ही पूरी तरह से पात्र को खाली करके भोजन करना चाहिए (अर्थात् थाली में थोड़ा अन्न बचाना चाहिए)। स्त्री के साथ, अँधेरे में, दोनों संध्यासमयों में और मन्दिर आदि में भोजन नहीं करना चाहिए।२२

नैकवस्त्रस्तु भुञ्जीत न यानशयनस्थितः ।
न पादुकानिगतोऽथ न हसन्विलपन्नपि ॥२३

एक वस्त्र पहन कर, वाहन पर बैठकर या लेटकर, खड़ाऊँ पहन कर हँसते और रोते हुए भोजन नहीं करना चाहिए।२३।

भुक्त्वा वै सुखमास्थाय तदन्नं परिणामयेत् ।
इतिहासपुराणाभ्यां वेदार्थानुपबृंहयेत्[3] ॥२४

भोजन के बाद जब तक खाया हुआ अन्न पच नहीं जाता, तब तक आराम से बैठकर, इतिहास पुराणादिरूप वेदार्थ की व्याख्या करनी चाहिए।२४।

ततः सन्ध्यामुपासीत पूर्वोक्तविधिना शुचिः ।
आसीनश्च जपेद्देवीं गायत्रीं पश्चिमां प्रति ॥२५

तत्पश्चात् पवित्र होकर, बताए गए नियमों के अनुसार सन्ध्योपासना करनी चाहिए और पश्चिम की ओर मुंह करके गायत्री जपना चाहिए।२५।

न तिष्ठति तु यः पूर्वामास्ते सन्ध्यां तु पश्चिमाम् ।
स शूद्रेण समो लोके सर्वकर्मविवर्जितः[4] ॥२६

जो व्यक्ति पूर्वोक्त विधि के अनुसार प्रातः और सायंकाल सन्ध्योपासना और पश्चिमाभिमुख होकर गायत्री का जप किए बिना भोजन करता है, वह इस संसार में सभी कर्मों का त्याग करने वाले शूद्र के समान हो जाता है।२६।

---

१. आदद्यादिति आर्षः प्रयोगः—आददीत इति साधु पा०। २. न चाकाशे इति पा०। ३. तदर्थोऽनुपबृंहयेदिति पा०। ४. धर्मेति, सर्वकर्मबहिष्कृत इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुत्वाग्निं विधिवन्मन्त्रैर्भुक्त्वा यज्ञावशिष्टकम् ।
सभृत्यबान्धवजनः स्वपेच्छुष्कपदो निशि ॥२७

सायंकाल अग्नि में विधिवत् आहुति देकर यज्ञ से बचे हुए अन्न को ग्रहण करना चाहिए। तत्पश्चात् पैर धोकर, सुखाकर, रात को सेवकों और मित्रों के साथ सोना चाहिए।२७।

नोत्तराभिमुखः स्वप्यात्पश्चिमाभिमुखो न च ।
न चाकाशे न नग्नो वा नाशुचिर्नासने क्वचित् ॥२८

उत्तर या पश्चिम दिशा की ओर मुँह करके, खुली जगह पर, निर्वस्त्र और अपवित्र होकर तथा बैठने के आसन पर नहीं सोना चाहिए।२८।

न शीर्णायान्तु खट्वायां शून्यागारे न चैव हि ।
नानुवंशे[1] न पालाशे शयने वा कदाचन ॥२९

टूटी हुई खाट पर, सूने घर में, बाँस और पलाश की चारपाई पर कभी नहीं सोना चाहिए।२९।

इत्येतदखिलेनोक्तमहन्यहनि वै मया ।
ब्राह्मणानां कृत्यजातमपवर्गफलप्रदम्[2] ॥३०

मैंने ब्राह्मणों के लिए प्रतिदिन करने योग्य, मोक्ष फलदायक कर्मों का बखान कर दिया है।३०।

नास्तिक्यादथवालस्याद्ब्राह्मणो न करोति यः ।
स याति नरकान्घोरान् काकयोनौ च जायते ॥३१

नास्तिकता या आलस्यवश, जो ब्राह्मण इन नियमों का पालन नहीं करता, वह मृत्यु के बाद, घोर नरक में जाता है और तत्पश्चात् काक योनि में जन्म लेता है।३१।

नान्यो विमुक्तये पन्था मुक्त्वाश्रमविधिं स्वकम् ।
तस्मात्कर्माणि कुर्वीत तुष्टये परमेष्ठिनः ॥३२

अपने-अपने आश्रमों में बताए गए नियमों का पालन करने के अतिरिक्त मुक्ति का दूसरा कोई उपाय नहीं है। इसलिए ईश्वर की सन्तुष्टि के लिए बताए गए कर्मों का यत्नपूर्वक पालन करना चाहिए।३२।

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु ब्राह्मणानां नित्यकर्त्तव्यकर्मसु भोजनादिप्रकारवर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥१९

१. नापि वैणे इति पा०। २. कृत्यतममिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, व्यासगीता में ब्राह्मणों के नित्यकर्त्तव्य कर्म के वर्णन प्रसंग में भोजनादि प्रकार-वर्णन नामक उन्नीसवाँ अध्याय समाप्त ॥१९॥

विंशोऽध्यायः

अथ श्राद्धकल्पः

व्यास उवाच

अथ श्राद्धममावास्यां प्राप्य कार्यं द्विजोत्तमैः ।
पिण्डान्वाहार्यकं भक्त्या भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥१

व्यास बोले—ब्राह्मण श्रेष्ठों के द्वारा अमावस के दिन भक्तिभाव से, भोग प्रदायक पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध करना चाहिए ।१

पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धं क्षीणे राजनि शस्यते ।
अपराह्णे द्विजातीनां प्रशस्तेनामिषेण च ॥२

चन्द्रमा के क्षीण होने पर अर्थात् कृष्णपक्ष में पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध करना उचित है । द्विजातियों को (अमावस के दिन) अपराह्ण में प्रचुर आमिष के द्वारा पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध करना चाहिए ।२

प्रतिपत्प्रभृति ह्यन्यास्तिथयः कृष्णपक्षके ।
चतुर्दशीं वर्जयित्वा प्रशस्ता ह्युपरोधतः[२] ॥३

केवल चतुर्दशी छोड़, प्रतिपदादि कृष्णपक्ष की सभी तिथियों में श्राद्ध किया जा सकता है, परन्तु उत्तरोत्तर तिथि में अर्थात् बार-बार श्राद्ध करने से व्यक्ति समृद्ध होता है ।३

अमावास्याष्टकास्तिस्रः पौषमासादिषु त्रिषु ।
[1]तिस्रस्तास्त्वष्टकाः पुण्या माघी पञ्चदशी तथा ॥४
त्रयोदशी मघायुक्ता वर्षासु च विशेषतः ।
शस्यपाकश्राद्धकालाः नित्याः प्रोक्ता दिने दिने ॥५

---

१. क्षीणे राजनि क्षययुक्ते चन्द्रेकृष्णपक्षे इत्यर्थः । २. ह्युपरा यतः इति, ह्युत्तरोत्तरे इति पा० । ३. तिस्रस्त्वन्वष्टकार्यमिति द्वा० ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी अमावास्याएँ, पूस आदि मासों की तीन अष्टमियाँ, गौणपौषीय, गौणमाघीय और गौणफाल्गुनीय तीनों पुण्य कृष्णाष्टमियाँ, माघ की पूर्णिमा, बरसात की मघायुक्त त्रयोदशी और फसल कटने का समय, श्राद्ध के लिए उचित होता है। यह श्राद्ध नित्य होता है और इसे प्रतिदिन करना चाहिए ।४–५।

नैमित्तिकन्तु कर्त्तव्यं ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।
बान्धवानां[1] विस्तरेण नारकी स्यादतोऽन्यथा ॥६

चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण और सम्बन्धियों की मृत्यु के निमित्त किया जाने वाला श्राद्ध नैमित्तिक श्राद्ध कहलाता है। इसे करना अत्यंत आवश्यक होता है, अन्यथा नरकगामी होना पड़ता है ।६

काम्यानि चैव श्राद्धानि शस्यन्ते ग्रहणादिषु ।
अयने विषुवे चैव व्यतीपाते त्वनन्तकम् ॥७

चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण और उपर्युक्त दूसरे समय में किए जाने वाले सभी काम्य श्राद्ध श्रेष्ठ फल प्रदान करते हैं। उत्तरायण, दक्षिणायन, विषुव और व्यतीपात योग में श्राद्ध करने से अनंत फल की प्राप्ति होती है ।७

संक्रान्त्यामक्षयं श्राद्धं तथा जन्मदिनेष्वपि ।
नक्षत्रेषु च सर्वेषु कार्यं काले विशेषतः ॥८

संक्राति और जन्मदिन पर किये गये श्राद्ध अक्षय फल प्राप्ति के लिये होते हैं और विशेष फल की प्राप्ति के लिये सभी नक्षत्रों में काम्य श्राद्ध किया जा सकता है ।८

स्वर्गञ्च लभते कृत्वा कृत्तिकासु द्विजोत्तमः ।
अपत्यमथ रोहिण्यां सौम्ये तु ब्रह्मवर्चसम् ॥९

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! कृत्तिका नक्षत्र में श्राद्ध करने से स्वर्ग, रोहिणी में पुत्र, और मृगशिरा में ब्रह्म तेज की प्राप्ति होती है ।९

रौद्राणां[2] कर्मणां सिद्धिमार्द्रायां शौर्यमेव च ।
पुनर्वसौ तथा भूमिं श्रियं पुष्ये तथैव च ॥१०

आर्द्रा नक्षत्र में श्राद्ध करने से भयानक कर्मों की सिद्धि और शौर्य की प्राप्ति होती है। पुनर्वसु नक्षत्र में श्राद्ध करने से भूमि तथा पुष्य में लक्ष्मी प्राप्त होती है ।१०

सर्वान्कामांस्तथा सार्प्ये पित्र्ये सौभाग्यमेव च ।
अर्यम्णे तु धनं विन्देत् फाल्गुन्यां पापनाशनम् ॥११

---

१. ब्राह्मणानाञ्चमरणे इति, बान्धवाञ्च मरणे इति पा०। २. रौद्राणां सिद्धमार्द्रायां कर्मणां सौख्यमेव चेति, रोहिण्यां कर्मणां सिद्धिमिति ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अश्लेषा नक्षत्र में श्राद्ध करने से समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है। मघा में श्राद्ध करने से सौभाग्य, अर्यण्म अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी में धन और उत्तरा फाल्गुनी में समस्त पापों का नाश होता है।११

ज्ञातिश्रेष्ठ्यं तथा हस्ते चित्रायां च बहून् सुतान्।
वाणिज्यसिद्धिं स्वातौ तु विशाखासु सुवर्णकम् ॥१२

हस्त नक्षत्र में श्राद्ध करने से सम्बन्धियों में श्रेष्ठता की प्राप्ति होती है और चित्रा में श्राद्ध करने से अनेक पुत्र प्राप्त होते हैं। स्वाति में श्राद्ध करने से व्यापार में लाभ और विशाखा में श्राद्ध करने से सोना मिलता है।१२

मैत्रे बहूनि मित्राणि राज्यं शाक्रे तथैव च।
मूले कृषिं लभेज्ज्ञानं सिद्धिमाप्ये समुद्रतः ॥१३

अनुराधा में श्राद्ध करने से अनेक मित्रों की प्राप्ति और ज्येष्ठा में राज्य प्राप्त होता है। मूल नक्षत्र में श्राद्ध करने से खेती से लाभ और पूर्वाषाढ़ में सारे कार्य सफल होते हैं।१३

सर्वान् कामान्वैश्वदेवे श्रैष्ठ्यन्तु श्रवणे पुनः।
धनिष्ठायां[1] तथा कामानम्बुपे च परम्बलम् ॥१४

उत्तराषाढ़ में श्राद्ध करने से समस्त इच्छित वस्तुओं, श्रवण में श्रेष्ठत्व, धनिष्ठा में सारे अभिलषित द्रव्यों और शतभिषा में श्राद्ध करने से श्रेष्ठ बल की प्राप्ति होती है।१४

अजैकपादे कुप्यं स्यादाहिबुध्ने गृहं शुभम्।
रेवत्यामबहवो गावो ह्यश्विन्यान्तुरगांस्तथा।
याम्ये तु जीवितन्तु स्याद्यः श्राद्धं सम्प्रयच्छति ॥१५

पूर्वभाद्रपद नक्षत्र में श्राद्ध करने से सोने और चाँदी से भिन्न द्रव्य, उत्तरभाद्रपद में घर, खेती में अनेक गाय, अश्विनी में अनेक अश्व और भरणी नक्षत्र में श्राद्ध करने से दीर्घायु की प्राप्ति होती है।१५

आदित्यवारेऽन्वारोग्यं चन्द्रे सौभाग्यमेव च।
कुजे सर्वत्र विजयं सर्वान् कामान् बुधस्य तु ॥१६

रविवार को श्राद्ध करने से आरोग्य, सोमवार को सौभाग्य, मंगल को सर्वत्र विजय और बुधवार को श्राद्ध करने से सारी इच्छित वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं।१६

---

१. श्राविष्टायां तथा काम्यं वारुणे इति पा०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यामभीष्टान्तु गुरौ धनं वै भार्गवे पुनः ।
शनैश्चरे लभेदायुः प्रतिपत्सु सुतान् शुभान् ॥१७

गुरुवार को श्राद्ध करने से विद्या, और अभीष्ट सिद्धि, शुक्र को धनलाभ, शनिवार को दीर्घायु और प्रतिपदा को श्राद्ध करने से शुभ लक्षणों से युक्त पुत्र की प्राप्ति होती है ।१७

कन्यका वै द्वितीयायां तृतीयायान्तु विन्दति ।
पशून् क्षुद्रांश्चतुर्थ्यां वै पञ्चम्यां शोभनान् सुतान् ॥१८

द्वितीया में श्राद्ध करने से कन्या, की प्राप्ति होती है और तृतीया में श्राद्ध करने से बहुत ज्ञान लाभ होता है। चतुर्थी में श्राद्ध करने से क्षुद्र पशु और पञ्चमी में श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है ।१८

षष्ठ्यां द्युतिं कृषिञ्चापि सप्तम्यां च धनं नरः ।
अष्टम्यामपि वाणिज्यं लभते श्राद्धदः सदा ॥१९

षष्ठी में श्राद्ध करने से कान्ति की प्राप्ति तथा कृषि में लाभ होता है। सप्तमी में श्राद्ध करने से मनुष्य धनवान् होता है। अष्टमी के दिन श्राद्ध करने व्यवसाय में लाभ होता है ।१९

स्यान्नवम्यामेकखुरं दशम्यां द्विखुरं बहु ।
एकादश्यान्तथा रूप्यं ब्रह्मवर्चस्विनः सुतान् ॥२०

नवमी के दिन श्राद्ध करने से एक खुर वाले पशु (अश्वादि), दशमी में दो खुरों वाले पशु (गवादि) और एकादशी तिथि में श्राद्ध करने से चाँदी तथा ब्रह्मतेज से युक्त अनेक पुत्रों की प्राप्ति होती है ।२०

द्वादश्यां जातरूपं च रजतं कुप्यमेव च ।
ज्ञातिश्रैष्ठ्यं त्रयोदश्यां चतुर्दश्यान्तु कुप्रजाः ।
पञ्चदश्यां सर्वकामान् प्राप्नोति श्राद्धदः सदा ॥२१

द्वादशी में श्राद्ध करने से सोना, चाँदी और अन्यान्य धातुओं की प्राप्ति और त्रयोदशी में करने से सम्बन्धियों में श्रेष्ठता की प्राप्ति होती है। चतुर्दशी में करने से कुसंतान और अमावस में श्राद्ध करने वाला व्यक्ति सदा अपनी इच्छित वस्तुएँ प्राप्त करता है ।२१

तस्माच्छ्राद्धं न कर्त्तव्यं चतुर्दश्यां द्विजातिभिः ।
शस्त्रेण तु हतानान्तु श्राद्धं तत्र प्रकल्पयेत् ॥२२

इसलिए द्विजातियों को चतुर्दशी तिथि में श्राद्ध नहीं करना चाहिए, केवल शस्त्र से मारे हुए व्यक्तियों का श्राद्ध चतुर्दशी में होता है ।२२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रव्यब्राह्मणसम्पत्तौ न कालनियमः कृतः ।
तस्माद्भोगापवर्गार्थं श्राद्धं कुर्युं द्विजातयः ॥२३

द्रव्य, ब्राह्मण और सम्पत्ति की प्राप्ति होने पर समय सम्बन्धी नियमों पर विचार किए बिना किसी भी दिन श्राद्ध किया जा सकता है। इसीलिए भोग मोक्ष के लिए द्विजातियों को (किसी भी समय) श्राद्ध करना चाहिए ।२३

कर्मारम्भेषु सर्वेषु कुर्यादभ्युदये पुनः ।
पुत्रजन्मादिषु श्राद्धं पार्वणं पर्वसु स्मृतम् ॥२४

सारे कार्य आरम्भ करने से पहले, उन्नति के निमित्त किए जाने वाले कार्य से पहले, पुत्र जन्म पर और पर्व के दिन पार्वण श्राद्ध करना चाहिए ।२४

अहन्यहनि नित्यं स्यात्काम्यं नैमित्तिकं पुनः ।
एकोद्दिष्टादि विज्ञेयं द्विधा श्राद्धन्तु पार्वणम् ॥२५

एतत्पञ्चविधं श्राद्धं मनुना परिकीर्त्तितम् ।
यात्रायां षष्ठमाख्यातं तत्प्रयत्नेन पालयेत् ॥२६

मनु ने पाँच प्रकार के श्राद्ध बतलाएँ हैं, प्रतिदिन किए जाने वाले श्राद्ध नित्य श्राद्ध,, काम्य श्राद्ध, नैमित्तिक श्राद्ध, वृद्धि श्राद्ध, और पार्वण श्राद्ध । तीर्थयात्रा के निमित्त किया जाने वाला श्राद्ध छठा श्राद्ध कहलता है, इस श्राद्ध को यत्नपूर्वक करना चाहिए ।२५–२६।

शुद्धये सप्तमं श्राद्धं ब्रह्मणा परिभाषितम् ।
दैविकञ्चाष्टमं श्राद्धं यत्कृत्वा मुच्यते भयात् ॥२७

ब्रह्मा के अनुसार प्रायश्चित्त के समय किया जाने वाला श्राद्ध सप्तम और दैविक श्राद्ध आठवें प्रकार का श्राद्ध होता है, जिसे करने से भय से मुक्ति मिलती है ।२७

सन्ध्यां रात्रौ न कर्त्तव्यं राहोरन्यत्र दर्शनात् ।
देशानान्तु विशेषेण भवेत्पुण्यमनन्तकम् ॥२८

सन्ध्या समय और रात को श्राद्ध नहीं करना चाहिए, परन्तु इस समय ग्रहण लग जाए, तो करना चाहिए। स्थान विशेषों में किए जाने वाले श्राद्ध अनन्त पुण्य फल दायक होते हैं ।२८

गंगायासक्षयं श्राद्धं प्रयागेऽमरकण्टके ।
गायन्ति पितरो गाथां[3] नर्त्तयन्ति मनीषिणः ॥२९

---

२. वृद्धिश्राद्धन्तु इति पा० । ३. गाथाः कीर्त्तयन्ति इति पा० ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एष्टव्या बहवः पुत्राः शीलवन्तो गुणान्विताः ।
तेषान्तु समवेतानां यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ॥३०
गयां प्राप्यानुषंगेण यदि श्राद्धं समाचरेत् ।
तारिताः पितरस्तेन स यांति परमाङ्गतिम् ॥३१

गंगा, प्रयाग और अमरकण्टक, में श्राद्ध करने से कभी न क्षीण होने वाला, असीम फल प्राप्त होता है। फिर यह गाथा गाते हैं और विद्वान् यह कहते हैं कि शील और गुणवान एकाधिक पुत्रों की कामना करनी चाहिए, क्योंकि यदि उनमें से एक भी पिण्डदान के लिए अथवा किसी अन्य कार्य से गया जाकर श्राद्ध करता है तो उस श्राद्ध से पितर नरक से मुक्ति पा जाते हैं और श्राद्धकर्ता भी श्रेष्ठगति प्राप्त करता है।२९–३१।

वाराहपर्वते चैव गयायां वै विशेषतः ।
वाराणस्यां विशेषेण यत्र देवः स्वयं हरः ॥३२
गंगाद्वारे प्रभासे तु बिल्वके नीलपर्वते ।
कुरुक्षेत्रे च कुब्जाम्रे भृगुतुंगे महालये ॥३३
केदारे फल्गुतीर्थे च नैमिषारण्य एव च ।
सरस्वत्यां विशेषेण पुष्करे तु विशेषतः ॥३४
नर्मदायां कुशावर्ते श्रीशैले भद्रकर्णके ।
वेत्रवत्यां[1] विशाखायां गोदावर्यां विशेषतः ॥३५
एवमादिषु चान्येषु तीर्थेषु पुलिनेषु च ।
नदीनाञ्चैव तीरेषु तुष्यन्ति पितरः सदा ॥३६

वाराह पर्वत, गया, भगवान् शंकर के निवास स्थान वाराणसी, गंगाद्वार, प्रभास क्षेत्र, विल्वकतीर्थ, नीलपर्वत, कुरुक्षेत्र, कुब्जाम्र, भृगुतुंग, महालय, केदारनाथ, फल्गुतीर्थ, नैमिषारण्य, सरस्वती तीर, पुष्कर क्षेत्र, नर्मदा, कुशावर्त, श्रीशैल, भद्रकर्णक, वेत्रवती, विशाखा, गोदावरी आदि नदी के तट पर, अथवा अन्यान्य तीर्थों, नदी तट की रेतीली भूमि और नदियों के तटों पर, श्राद्ध करने से पितर सदैव सन्तुष्ट होते हैं।३३–३६।

व्रीहिभिश्च यवैर्माषैरद्भिर्मूलफलेन वा ।
श्यामाकैश्च यवैः[2] काशैर्नीवारैश्च प्रियङ्गुभिः ।
गोधूमैश्च तिलैर्मुद्गैर्मासं प्रीणयते पितॄन् ॥३७

---

१. फाल्गुनीतीर्थे इति पा० । २. जैत्रवत्यां विशेषेण इति विपाशायामिति पा० ।
३. शुभैः शाकैरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रीहि, जौ, माष (उरद), मूल, फल, श्यामाक (सांवां), उत्तम साग, काश (तृण विशेष) नीवार (तिन्नी के चावल), प्रियंगु, (काउन) गेहूँ, तिल और मूंग से श्राद्ध करने से पितर एक महीने तक तृप्त रहते हैं।३७

आम्रान् पाने रतानिक्षून् सृद्वीकांश्च सदाडिमान्।
विदश्वांश्च कुरण्डांश्च श्राद्धकाले प्रदापयेत् ॥३८

पितरों को श्राद्ध में आम, करौंदा, ईख, अँगूर, अनार, काला कद्दू और कोरण्ड देना चाहिए।३८

लाजान्मधुयुतान् दद्यात्सक्तून् शर्करया सह।
दद्याच्छ्राद्धे प्रयत्नेन शृंगाटककशेरुकान् ॥३९

मधुयुक्त लावा, शक्कर युक्त सत्तु, सिंघाड़ा और कशेरु (केसर) आदि फल श्राद्ध में प्रयत्नपूर्वक देना चाहिए।३९

द्वौ मासौ मत्स्यमांसेन त्रीन्मासान् हरिणेन तु।
औरभ्रेणाथ चतुरः शाकुनेनेह पञ्च तु।
पण्मासांश्छागमांसेन पार्षतेनेह[4] सप्त वै ॥४०

मछली से श्राद्ध करने से दो महीने, हिरण के मांस से श्राद्ध करने से तीन महीने, भेड़ के मांस से चार, पक्षी के मांस से पांच, बकरे के मांस से छः तथा पृषती (मृगविशेष) के मांस से श्राद्ध करने से सात महीने तक, पितर तृप्त रहते हैं।४०

अष्टावेणस्यमांसेन रौरवेण नवैव तु।
दशमासांस्तु तृप्यन्ति वराहमहिषामिषैः ॥४१
शशकूर्मयोर्मांसेन मासानेकादशैव तु।
संवत्सरन्तु गव्येन पयसा पायसेन तु।

रुरुमृग के मांस से श्राद्ध करने से नौ महीने, वराह तथा महिष के मांस से श्राद्ध करने से दस महीने और खरगोश या कछुए के मांस से श्राद्ध करने से ग्यारह महीने तक गाय के दूध या खीर से श्राद्ध करने से पितर साल भर, तृप्त रहते हैं।४१½।

वार्ध्रीणसस्य मांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ॥४२

और गैंड़े के मांस से श्राद्ध करने से बारह सालों तक तृप्त रहते हैं।४२

---

१ विदारीञ्च भरण्डां इति, विदार्यां च सकेण्डांश्च इति पा०। २. शृङ्गाटकविषकेबुकानिति पा०। ३. पार्षतेनाथ इति पा०। ४. मासास्तु तृप्यन्ते इति पा०। ५. शशकूर्मयोस्तु मांसेनेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालशाकं महाशल्कः खड्गलोहामिषं मधु ।
आनन्त्यायैव कल्पन्ते मुन्यन्नानि च सर्वशः ॥४३

पटुआ या करेमू साग, बड़े-बड़े छिल्के वाली मछली, गैंडे का मांस, लाल बकरे का मांस, शहद, और मुनियों के द्वारा भक्षणीय अन्न, श्राद्ध में देने से, पितर सदा के लिए तृप्त हो जाते हैं ।४३

क्रीत्वा लब्ध्वा स्वयं वाथ मृतानाहृत्य वै द्विजः ।
दद्याच्छ्राद्धे प्रयत्नेन तदस्याक्षयमुच्यते ॥४४

मांस चाहे खरीदा हुआ हो, अपने आप मरे हुए पशु का हो या दान में मिला हो, श्राद्ध में अवश्य, यत्नपूर्वक मांस चढ़ाना चाहिए, इससे अक्षय फल प्राप्त होता है ।४४

पिप्पली[1] रुचकञ्चैव तथा चैव मसूरकम् ।
कूष्माण्डालाबुवार्त्ताकभूतृणं सरसं तथा ॥४५
कुसुम्भपिण्डमूलं वै तन्दुलीयकमेव च ।
राजमाषांस्तथा क्षीरं माहिषाजं विवर्जयेत् ॥४६

पिप्पली, बिजौरा नीबू मसूर, कद्दू, लौकी, बैंगन, भूतृण सरस, (रूसा घास), (फूल विशेष) बड़ी उरद महिष या बकरी का दूध नहीं चढ़ाना चाहिए ।४५–४६।

आढक्यः कोविदाराश्च पालक्या मरिचास्तथा ।
वर्जयेत्सप्तमत्नेन श्राद्धकाले द्विजोत्तमः ॥४७

हे ब्राह्मणश्रेष्ठों ! कोदों, कचनार, पालक, और काली मिर्च का श्राद्ध में परित्याग करना चाहिए ।४७

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु श्राद्धकल्पे विंशोऽध्यायः ॥२०॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में, श्राद्धकल्प नामक बीसवां अध्याय समाप्त ॥२०॥

१. पिप्पलीं क्रमुकञ्चैव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकविंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

स्नात्वा यथोक्तं सन्तर्प्य पितॄंश्चन्द्रक्षये द्विजः ।
पिण्डान्वाहार्यकं श्राद्धं कुर्यात्सौम्यमनाः शुचिः ॥१

व्यास बोले—अमावस्या तिथि में, स्नान करके कहे गए नियमानुसार पितरों का तर्पण कर, पवित्र होकर, ब्राह्मणों को शुद्ध अन्तः करण से पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध करना चाहिए ।१

पूर्वमेव समीक्षेत[1] ब्राह्मणं वेदपारगम् ।
तीर्थं तद्धव्यकव्यानां प्रदानानाञ्च[2] स स्मृतः ॥२

पहले वेदज्ञ ब्राह्मण की समीक्षा करें क्योंकि वही विशुद्ध-ब्राह्मण हव्य-कव्य दान के पात्र होते हैं ।२

ये सोमपा विरजसो धर्मज्ञाः शान्तचेतसः ।
व्रतिनो नियमस्थाश्च ऋतुकालाभिगामिनः ॥३

पञ्चाग्निरप्यधीयानो यजुर्वेदविदेव च ।
बह्वृचश्च त्रिसौपर्णस्त्रिमधुर्वा च योऽभवत् ॥४

त्रिणाचिकेतच्छन्दोगो ज्येष्ठसामग एव च ।
अथर्वशिरसोऽध्येता रुद्राध्यायी विशेषतः ॥५

अग्निहोत्रपरो विद्वान्न्यायविच्च षडङ्गवित् ।
मन्त्रब्राह्मणविच्चैव यश्च स्याद्धर्मपाठकः ॥६

ऋषिव्रती ऋषीकश्च शान्तचेता[3] जितेन्द्रियः ।
ब्रह्मदेयानुसन्तानो गर्भशुद्धः सहस्रदः ॥७

चान्द्रायणव्रतचरः सत्यवादी पुराणवित् ।
गुरुदेवाग्निपूजासु प्रसक्तो ज्ञानतत्परः ॥८

---

१. परीक्षेत इति पा० । २. प्रदाने चातिथिस्मृतः इति पा० । ३. तथा द्वादशवार्षिकः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमुक्तः सर्वतो धीरो ब्रह्मभूतो द्विजोत्तमः ।
महादेवाच्चनरतो वैष्णवः पंक्तिपावनः ॥९

सोम पान करने वाले, रजोगुणहीन, धर्मज्ञ, शान्तचित्त, व्रतों और नियमों का पालन करने वाले, ऋतुकालभिगामी, पञ्चाग्नि में हवन करने वाले, अध्ययनकर्ता, यजुर्वेदज्ञ, अनेक ऋचाओं का ज्ञाता, त्रिसौपर्ण (ऋग्वेद का अंशविशेष त्रिसुपर्ण कहलाता है, उस अंश का पाठ करने वाले), त्रिमधु (मधुवाताद्रि तीन ऋचाओं—का पाठ करने वाले), त्रिणाचिकेत (यजुर्वेद के अंशविशेष का पाठ करने वाले) सामवेद का अध्ययन करने वाले, ज्येष्ठसामग (सामवेद के आरण्यकों-का गान-करने वाले), अथर्वशिरोध्यायी, रुद्राध्यायी, अग्निहोत्र-करने वाले, विद्वान्, न्यायवेत्ता, षडंगों के ज्ञाता, मन्त्रज्ञ, मन्त्रों के ब्राह्मण भाग को जानने वाले, धर्मशास्त्र का पाठ करने वाले, ऋषिचान्द्रायण, व्रत का पालन करने वाले, तपस्वी, शान्तचित्त, इन्द्रियों को दमन करने, ब्राह्मण विवाह से विवाहित स्त्री के गर्भ से उत्पन्न सन्तान, संस्कारों से परिशुद्ध किए गए, बहुदानी, चान्द्रायण व्रत का पालन करने, सत्यवादी, पुराणज्ञ, गुरु देवता और अग्नि की पूजा करने वाले, ज्ञानरत, सभी विधि-निषेधों से परे, अर्थात् पूर्णरूपेण मुक्त, ब्रह्मज्ञ, महादेव और विष्णु की पूजा करने वाले ब्राह्मण-श्रेष्ठ पंक्तिपावन होते हैं।३–९।

अहिंसानिरतो नित्यमप्रतिग्रहणस्तथा ।
सत्री[1] च दाननिरतो विज्ञेयः पंक्तिपावनः ॥१०

अहिंसक, कभी दान न लेने वाले, याज्ञिक और दाता ब्राह्मण पंक्तिपावन होते हैं। १०

(युवानः श्रोत्रियाः स्वस्था महायज्ञपरायणाः ।
सावित्रीजापनिरता ब्राह्मणाः पंक्तिपावनाः ।
कुलानां श्रुतवन्तश्च शीलवन्तस्तपस्विनः ।
अग्निचित् स्नातको विप्रो विज्ञेयाः पंक्तिपावनाः)
मातापित्रोर्हिते युक्तः प्रातःस्नायी तथा द्विजः ।
अध्यात्मविन्मुनिर्दान्तो विज्ञेयः पंक्तिपावनः ॥११

वेदाध्यायी, युवक, स्वस्थ, महायज्ञपरायण, गायत्री जप में निरत ब्राह्मण पंक्तिपावन कहे गये हैं। कुलीन, शास्त्रज्ञाता, शीलवान्, तपस्वी, अग्निहोत्री, और स्नातक विप्र पंक्तिपावन कहलाते हैं। माता-पिता के हित में संलग्न प्रातःस्नान करने वाले,

---

१. सघृण इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्यात्मविद्या जानने वाले, तपस्वी, व्रतपालक, और इन्द्रियों का दमन करने वाले ब्राह्मण पंक्ति-पावन होते हैं ।११

ज्ञाननिष्ठो महायोगी वेदान्तार्थविचिन्तकः ।
श्रद्धालुः श्राद्धनिरतो ब्राह्मणः पंक्तिपावनः ॥१२

ज्ञानी, महायोगी, वेदान्त के अर्थ का चिन्तन-करने वाले, श्रद्धालु-और श्राद्ध-करने वाले ब्राह्मण पंक्तिपावन होते हैं ।१२

वेदविद्यारतः स्नातो ब्रह्मचर्यपरः सदा ।
अथर्वणो मुमुक्षुश्च ब्राह्मणः पंक्तिपावनः ॥१३

समावर्तन स्नान सम्पन्न करने वाले, सदा ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, अथर्ववेद का अध्ययन करने वाले मोक्षाभिलाषी ब्राह्मण पंक्तिपावन होते हैं ।१३

असमानप्रवरको ह्यसगोत्रस्तथैव च ।
सम्बन्धशून्यो विज्ञेयो ब्राह्मणः पंक्तिपावनः ॥१४

असमान प्रवर, असमानगोत्र तथा सम्बन्ध विहीन ब्राह्मण पंक्तिपावन होते हैं ।१४

भोजयेद्योगिनं शान्तं तत्त्वज्ञानरतं यतः ।
अभावे[1] नैष्ठिकं दान्तमुपकुर्वाणकं तथा ॥१५

योगी, शान्त और तत्त्वज्ञ, संन्यासी को-श्राद्ध में भोजन कराना चाहिए यदि ऐसा सन्यासी न मिले तो नैष्ठिक या उपकुर्वाण ब्रह्मचारी को भोजन कराना चाहिए ।१५

तदलाभे गृहस्थं तु मुमुक्षुं सङ्गवर्जितम् ।
सर्वालाभे साधकं वा गृहस्थमपि भोजयेत् ॥१६

यदि वे भी न मिले तो मोक्षाभिलाषी और विषय-वासनाओं को त्याग देने वाले गृहस्थ को भोजन कराना चाहिए, ऐसे गृहस्थ के अभाव में साधक गृहस्थ को भोजन कराना चाहिए ।१६

प्रकृतेर्गुणतत्त्वज्ञो यस्याश्नाति यतिर्हविः ।
फलं वेदान्तवित्तस्य[2] सहस्रादतिरिच्यते ॥१७

वेदज्ञ ब्राह्मण द्वारा हव्य-ग्रहण-करने से जितना लाभ होता है, उससे -सहस्र गुना अधिक लाभ, प्रकृति के गुणों का रहस्य जानने वाले संन्यासी को भोजन कराने से मिलता है ।१७

तस्माद्यत्नेन योगीन्द्रमीश्वरज्ञानतत्परम् ।
भोजयेद्हव्यकव्येषु अलाभादितरान्द्विजान् ॥१८

---

१. अलाभे इति पा० । १. वेदविदां तस्य इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए देवताओं और पितरों के कार्य में ईश्वर का ज्ञान रखने वाले, श्रेष्ठ योगी को यत्नपूर्वक भोजन कराना चाहिए। यदि ऐसे योगी न मिलें, तब दूसरे ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। १८

एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हव्यकव्ययोः।
अनुकल्पस्त्वयं ज्ञेयः सदा सद्भिरनुष्ठितः ॥१९

हव्य-कव्य प्रदान-करने के लिए इन्हें प्रथम नियम जानो। इनका अभाव होने से साधुओं के द्वारा अनुष्ठित अन्य विधियों को सदा गौण जानना चाहिए।१९

मातामहं मातुलञ्च स्वस्रीयं श्वशुरं गुरुम्।
दौहित्रं विट्पतिं बन्धुमृत्विग्याज्यौ च भोजयेत् ॥२०

नाना, मामा, भांजा, ससुर, गुरु, नाती, दामाद, मित्र (अर्थात् मौसेरे और फुफेरे भाई) पुरोहित, और शिष्य इन दस व्यक्तियों को भोजन करवाया जा सकता है।२०

न श्राद्धे भोजयेन्मित्रं धनैः कार्योऽस्य संग्रहः।
पैशाची दक्षिणाशा हि नेहामुत्र फलप्रदा ॥२१

श्राद्ध में मित्र को भोजन नहीं कराना चाहिए। धन से मित्र के साथ मित्रता निभानी चाहिए। पिशाच की भाँति आचरण करने वाले और दक्षिणा के लोभी व्यक्ति को भोजन नहीं कराना चाहिए, ऐसे लोगों को भोजन कराने से कोई फल नहीं मिलता।२१

कामं श्राद्धेऽर्चयेन्मित्रं नाभिरूपमपि त्वरिम्।
द्विषतां हि हविर्भुक्तं भवति प्रेत्य निष्फलम् ॥२२

उपर्युक्त व्यक्तियों के अभाव में अपनी इच्छा से मित्र को श्राद्ध में भोजन करवाया जा सकता है। परन्तु शत्रु को पण्डित होने पर भी, उसे श्राद्ध में भोजन के लिए आमन्त्रित नहीं करना चाहिए क्योंकि शत्रु द्वारा ग्रहण की गई छवि, परलोक में फल नहीं देती।२२

ब्राह्मणो ह्यनधीयानस्तृणाग्निरिव शाम्यति।
तस्मै हव्यं न दातव्यं न हि भस्मनि हूयते ॥२३

जो ब्राह्मण अध्ययन नहीं करता अर्थात् मूर्ख होता है वह तृणाग्नि के समान स्वयं तेजहीन हो जाता है। इसलिए ऐसे ब्राह्मण को हव्यदान नहीं करना चाहिए, क्योंकि कोई भी भस्म में आहुति नहीं देता।२३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथोषरे बीजमुप्त्वा न वप्ता लभते फलम् ।
तथाऽनृचे हविर्दत्त्वा न दानाल्लभते[1] फलम् ॥२४

जैसे ऊसर भूमि में बीज बोने से, बोने वाले को कोई फल नहीं मिलता, उसी प्रकार वेद का ज्ञान न रखने वाले ब्राह्मण को हव्यदान करने से दाता को कोई फल नहीं मिलता ।२४

यावतो ग्रसते पिण्डान्हव्यकव्येष्वमन्त्रवित् ।
तावतो ग्रसते प्रेत्य दीप्तान्[2] स्थूलांस्त्वयोगुडान् ॥२५

मन्त्र न जानने वाला व्यक्ति हव्य और काव्य के जितने पिण्ड खाता है, परलोक में उसे जलते हुए लोहे के उतने ही पिण्ड खाने पड़ते हैं ।२५

अपि विद्याकुलैर्युक्ता हीनवृत्ता नराधमाः ।
यत्रैते भुञ्जते हव्यं तद्भवेदासुरं द्विजाः ॥२६

विद्वान् और उच्चकुलोत्पन्न, जो नराधम हीनवृत्ति में लिप्त रहते हैं, उसे श्राद्ध में भोजन कराने से, वह भोज्य सामग्री असुरों को प्राप्त होती है ।२६

यस्य वेदश्च वेदी च विच्छिद्येते त्रिपूरुषम् ।
स वै दुर्ब्राह्मणो नार्हः श्राद्धादिषु कदाचन ॥२७

जिस ब्राह्मण की तीन पीढ़ियाँ वेद और वेदी (वेदोक्त क्रियाकलापों) का परित्याग कर चुकी हैं, वह दुर्ब्राह्मण कहलाता हैं और उन्हें श्राद्ध में कभी भोजन नहीं कराना चाहिए । २७

शूद्रप्रेष्यो[3] भृतो राज्ञो वृषलानाञ्च[4] याजकः ।
बधबन्धोपजावी च षडेते ब्रह्मबन्धवः ॥२८

शूद्र का दास, राजा का वेतनभोगी, शूद्रों का याजक, बध और बन्धन से जीविकोपार्जन करने वाले, यह छः प्रचार के व्यक्ति ब्रह्मबन्धु (अर्थात् अधम ब्राह्मण) कहलाते हैं । २८

दत्त्वानुयोगो द्रव्यार्थं पतितान्मनुरब्रवीत् ।
वेदविक्रयिणो ह्येते श्राद्धादिषु विगर्हिताः ॥२९

जो लोग प्रश्नों का उत्तर देकर जीविका निर्वाह करते हैं, उन्हें मनु ने पतित कहा है। जो वेद बेचकर (अर्थात् वेदपाठ वेदाध्ययन या वेद ग्रन्थों को बेचकर) जीविकोपार्जन करते हैं उन्हें श्राद्ध में नहीं बुलाना चाहिए । २९

---

१. दाता लभते इति पा० । २. दीप्तानलानयोगुडानिति पा० । ३. शूद्रप्रेष्यो भृतो राज्ञ इति पा० । ४. वृषलीग्रामयाजकः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुतविक्रयिणो ये तु परपूर्वासमुद्भवाः ।
असामान्यान् यजन्ते ये पतितास्ते प्रकीर्तिताः ॥३०

पुत्र को बेचने वाले, परपूर्वा स्त्री (ऐसी स्त्री, पर पुरुष जिसका पति हो) की सन्तान और नीच वर्ण के–यज्ञकर्त्ता पतित के रूप में जाने जाते हैं। ३०

असंस्कृताध्यापका ये भृत्यर्थेऽध्यापयन्ति ये ।
अधीयते तथा वेदान् पतितास्ते प्रकीर्तिताः ॥३१

संस्कृत से भिन्न भाषा पढ़ाने वाले, और वेतन लेकर वेदाध्ययन-अध्यापन करने वाले पतित होते हैं, ऐसा प्रचलित है।३१

वृद्धश्रावकनिर्ग्रन्थाः पञ्चरात्रविदो जनाः ।
कापालिकाः पाशुपताः पाषण्डा ये च तद्विधाः ॥३२
यस्याश्नन्ति हवींष्येते दुरात्मानस्तु तामसाः ।
न तस्य तद्भवेच्छ्राद्धं प्रेत्य चेह फलप्रदम् ॥३३

केवल-वृद्धों के समीप शास्त्र श्रवण करने वाले, निर्ग्रन्थ, पंचरात्र ग्रन्थों का पाठ करने वाले, कापालिक, पाशुपत शास्त्र का अध्ययन करने वाले, पाखण्डी और पाखण्डी के समान अन्य निन्दित दुरात्मा व्यक्ति, जिसके श्राद्ध में हवि भक्षण करते हैं, उसके लिए किया गया श्राद्ध, इहलोक और परलोक में कोई फल नहीं देता ।३२-३३।

अनाश्रमी द्विजो यः स्यादाश्रमी वा निरर्थकः[1] ।
मिथ्याश्रमी च ते विप्रा विज्ञेयाः पंक्तिदूषकाः ॥३४

जो ब्राह्मण अनाश्रमी (आश्रम में-न-रहने वाले), आश्रम में रहकर भी आश्रमधर्म का पालन न करने वाले और मिथ्याश्रमी (धूर्त) होते हैं, ऐसे ब्राह्मणों को पंक्ति दूषक (पंक्तिपावन के अयोग्य) जानो।३४

दुश्चर्मा कुनखी कुष्ठी श्वित्री च श्यावदन्तकः ।
विद्धचजननश्चैव स्तेनः क्लीबोऽथ नास्तिकः ॥३५
मद्यपो वृषलीसक्तो वीरहा दिधिषूपतिः ।
अगारदाही कुण्डाशी सोमविक्रयिणो द्विजाः ॥३६

दूषित चर्म वाले, रोगयुक्त नाखूनों वाले, कोढ़ी, धवल रोगी, विवर्ण (काला) दाँतों वाले, विद्धलिंगी, चोर, नपुंसक, नास्तिक, शराबी, शूद्रागामी, वीरघाती,

---

१. निबन्धकः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिधिषूपति (अर्थात्-धर्मानुसार नियुक्त मृत भाई की पत्नी के प्रति कामभावना से आसक्त होने वाले) गूहदाही, कुण्डाशी (अवैध सन्तान का अन्न खाने वाले) और सोम बेचने वाले ब्राह्मण पंक्तिदूषक होते हैं ।३५–३६।

परिवेत्ता च हिंस्रश्च परिविर्त्तिनिराकृतिः ।
पौनर्भवः कुसीदश्च तथा नक्षत्रदर्शकः ॥३७

परिवेत्ता, परिविर्त्ति (अर्थात् बड़े भाई के अविवाहित या अनग्निक रहने से जो छोटा भाई पहले विवाह या अग्नि स्वीकार कर लेता है, उस छोटे भाई को परिवेत्ता और बड़े भाई को परिविर्त्ति कहते हैं । हिंस्र, पति के मर जाने पर स्वेच्छा से किसी कि पत्नी बनकर पुत्र उत्पन्न करती है, ऐसी स्त्री का पुत्र, सूदखोर और नक्षत्रसूचक (मूर्ख गणक) पंक्तिदूषक होते हैं । ३७

गीतवादित्रशीलश्च[1] व्याधितः काण एव च ।
हीनाङ्गश्चातिरिक्ताङ्गो ह्यवकीर्णी तथैव च ॥३८
अन्नदूषी[2] कुण्डगोली अभिशस्तोऽथ देवलः ।
मित्रध्रुक् पिशुनश्चैव नित्यं भार्यानुवर्त्तितः ॥३९
मातापित्रोर्गुरोस्त्यागी दारत्यागी तथैव च ।
गोत्रस्पृक् भ्रष्टशौचश्च काण्डस्पृष्टस्तथैव च ॥४०
अनपत्यः[3] कूटसाक्षी याचको रङ्गजीवकः ।
समुद्रयायी कृतहा तथा समयभेदकः ॥४१

गीतवाद्यप्रेमी, पाप रोग से पीड़ित, काना, अंगहीन या अतिरिक्त अङ्ग से युक्त, अवकीर्णी (ब्रह्मचर्यावस्था में स्त्रीगामी) निषिद्ध अन्न को खाने वाले, कुण्ड (पति रहने पर भी प्रेमी से उत्पन्न अवैध सन्तान), गोलक (विधवा के गर्भ से उत्पन्न), पतित देवल (पुजारी-ब्राह्मण), मित्रध्रुक् (मित्र के साथ द्रोह करने वाले), कपटी, सदा पत्नी की आज्ञा का पालन करने वाले, माता, पिता और गुरु का त्याग करने वाले; पत्नी का त्याग करने वाले, गोत्रस्पृक् (सगोत्रगामी), भ्रष्ट, अपवित्र, अस्त्रोपजीवी, पुत्रहीन, झूठी गवाही देने वाले, दान माँगने वाले, रंगरेज, समुद्र में यात्रा करने वाले, कृतघ्न और प्रतिज्ञा तोड़ने वाले ब्राह्मण पंक्ति दूषक होते हैं ।३८–४१

वेदनिन्दारतश्चैव देवनिन्दापरस्तथा ।
द्विजनिन्दारतश्चैव वर्ज्याः श्राद्धादिकर्मणि ॥४२

---

१. गीतवादित्रनिरत इति पाः० । २. कान्तादूषीति पा० । ३. कुशाक्षी चक्रबन्दी च याजकों रङ्गजीवक इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदनिन्दा, देवनिन्दा और ब्राह्मणों की निन्दा में लिप्त रहने वाले ब्राह्मणों का, श्राद्धादि कार्य में परित्याग करना चाहिए ।४२

कृतघ्नः पिशुनः क्रूरो नास्तिको वेदनिन्दकः ।
मित्रध्रुक् कुहकश्चैव विशेषात्पंक्तिदूषकः ॥४३

कृतघ्न कपटी, क्रूर, नास्तिक, वेदनिन्दक, मित्र से द्रोह करने वाले और जादू-टोना करने वाले ब्राह्मणों को विशेषरूप से पंक्तिदूषक जानो । ४३

सर्वे पुनरभोज्यान्ना न[1] दानार्हाः स्वकर्मसु ।
ब्रह्महा[2] चाभिशस्ताश्च वर्ज्जनीयाः प्रयत्नतः ॥४४

पूर्वोक्त सभी ब्राह्मण श्राद्धान्न भोजन और स्वयं के लिए किए गए कर्मों में भी दान के अयोग्य पात्र होते हैं । इसके अतिरिक्त ब्रह्मघाती और पतित ब्राह्मणों का श्राद्ध में त्याग करने का प्रयत्न करना चाहिए ।४४

शूद्रान्नरसपुष्टांगः सन्ध्योपासनवर्जितः ।
महायज्ञविहीनश्च ब्राह्मणः पंक्तिदूषकः ॥४५

शूद्रों के अन्न रस से पुष्ट होने वाले, सन्ध्योपासना और महायज्ञ न करने वाले ब्राह्मण, पंक्तिदूषक होते हैं ।४५

अधीतनाशनश्चैव स्नानदानविवर्जितः[3] ।
तामसो राजसश्चैव ब्राह्मणः पंक्तिदूषकः ॥४६

जो वेद पढ़कर भूल गया हो, स्नान-और-दान-का त्याग कर चुका हो, वह तथा तमोगुण अथवा रजोगुण से युक्त ब्राह्मण पंक्तिदूषक होता है ।४६

बहुनात्र किमुक्तेन विहितान् ये न कुर्वते ।
निन्दितानाचरन्त्येते वर्ज्याः श्राद्धे प्रयत्नतः ॥४७

और अधिक क्या कहें, जो व्यक्ति विहित कर्मों का पालन न करके, निन्दित कर्मों को करता है, उन्हें श्राद्ध कर्म से प्रयत्नपूर्वक दूर ही रखना चाहिए ।

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु श्राद्धकल्पे एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में श्राद्धकला नामक इक्कीसवाँ अध्याय समाप्त । २१

---

१. तदा नार्हाश्च कर्मसु इति पा० । २. ब्रह्मभावान्निरस्ताश्चेति पा० । ३. स्नानहोमेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वाविंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

गोमयेनोदकैर्भूमिं शोधयित्वा समाहितः ।
सन्निमन्त्र्य द्विजान् सर्वान् साधुभिः सन्निमन्त्रयेत् ॥१

व्यास-बोले--एकाग्रचित्त होकर गोबर और जल से भूमि को शुद्ध करके, निमन्त्रण योग्य सभी ब्राह्मणों को साधुओं (सज्जन पुरुषों) के द्वारा निमन्त्रण भेजना चाहिए ।१

श्वो भविष्यति मे श्राद्धं पूर्वेद्युरभिपूज्य च ।
असम्भवे परेद्युर्वा यथोक्तैर्लक्षणैर्युतान् ॥२

श्राद्ध के पहले दिन "मैं अगले-दिन श्राद्ध-करूँगा" यह कहकर पूर्वोक्तलक्षणों से युक्त ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। श्राद्ध से पहले दिन असम्भव होने पर, दूसरे दिन (श्राद्ध के दिन) निमन्त्रण किया जा सकता है ।२

तस्य ते पितरः श्रुत्वा श्राद्धकालमुपस्थितम् ।
अन्योऽन्यं मनसा ध्यात्वा संपतन्ति मनोजवाः ॥३

श्राद्ध करने वाले व्यक्ति के पितर, श्राद्ध का समय आ गया है ऐसा सोचकर, मन के समान तीव्र गति से, श्राद्ध के समय आ पहुँचते हैं ।३

तैर्ब्राह्मणैः सहाश्नन्ति पितरो ह्यन्तरिक्षगाः ।
वायुभूतास्तु तिष्ठन्ति भुक्त्वा यान्ति परां गतिम् ॥४

अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले पितर, उन ब्राह्मणों के साथ श्राद्धान्न ग्रहण करते हैं। वे वायु के रूप में उपस्थित रहकर भोजन ग्रहण करके, श्रेष्ठ गति प्राप्त करते हैं ।४

आमन्त्रिताश्च ते विप्राः श्राद्धकाल उपस्थिते ।
वसेयुर्नियताः सर्वे ब्रह्मचर्यपरायणाः ॥५

श्राद्ध के समय, उन सभी उपस्थित ब्राह्मणों को संयमित और ब्रह्मचर्यपरायण होकर रहना चाहिए ।५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्रोधनोऽत्वरोऽमत्तः सत्यवादी समाहितः ।
भारं मैथुनमध्वानं श्राद्धकृद्वर्ज्जयेद्ध्रुवम्[1] ॥६

जिन्हें श्राद्ध-करना है उन्हे, क्रोध, व्यस्तता और नशा त्याग-कर, सत्यवादी और इन्द्रिय निग्रहशील होना चाहिए। भार नहीं ढोना चाहिए तथा मैथुन करना और मार्ग चलना नहीं चाहिए ।६

आमन्त्रितो ब्राह्मणो वै योऽन्यस्मै कुरुते क्षणम् ।
स याति नरकं घोरं सूकरत्वं प्रयाति च ॥७

जो ब्राह्मण किसी एक व्यक्ति का निमन्त्रण स्वीकार कर, उसके घर भोजन न करके, दूसरे के यहाँ भोजन कर लेता है, वह घोर नरक में जाकर, शूकर योनि में जन्म लेता है ।७

आमन्त्रयित्वा यो मोहादन्यं[2] चामन्त्रयेद्द्विजः ।
स तस्मादधिकः पापी विष्ठाकीटोऽभिजायते ॥८

जो व्यक्ति एक ब्राह्मण को निमन्त्रित करने के बाद उसकी उपेक्षा कर, दूसरे को भोजन कराता है, उसे उससे भी अधिक पापी जानो। ऐसा व्यक्ति मृत्यु के बाद मल का कीट होकर जन्म लेता है ।८

श्राद्धे निमन्त्रितो विप्रो मैथुनं योऽधिगच्छति ।
ब्रह्महत्यामवाप्नोति तिर्यग्योनौ विधीयते ॥९

जो ब्राह्मण-श्राद्ध में आमन्त्रित होने के बाद मैथुन कर्म करता है, उसे ब्रह्महत्या का पाप लगता है और वह तिर्यक् योनि में जन्म लेता है ।९

निमन्त्रितस्तु यो विप्रो ह्यध्वानं[3] याति दुर्मतिः ।
भवन्ति पितरस्तस्य तन्मांसं पापभोजनाः ॥१०

निमन्त्रित होने के बाद, जो ब्राह्मण-मार्ग पर चलता है, उसके पितरों को उस महीने धूल फाँक कर रहना पड़ता है ।१०

निमन्त्रितस्तु यः श्राद्धे कुर्याद्वै कलहं द्विजः ।
भवन्ति पितरस्तस्य तन्मांसं मलभोजनाः ॥११

निमन्त्रित होकर जो ब्राह्मण, झगड़ा करता है, उसके पितरों को महीने भर मल खाकर रहना पड़ता है ।११

---

१. जपमिति पा०। २. परञ्चामन्त्रयेद्द्विजमिति पा०। ३. ह्यध्वानमधिगच्छति इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्मान्निमन्त्रितः श्राद्धे नियतात्मा भवेद्द्विजः ।
अक्रोधनः शौचपरः कर्त्ता चैव जितेन्द्रियः ॥१२

निमन्त्रित ब्राह्मणों को एकाग्रचित्त, क्रोधरहित और पवित्र रहना चाहिए। श्राद्धकर्ता को भी इन्द्रियों को वश में रखकर, उपर्युक्त आचरणों का पालन-करना चाहिए ।१२

श्वोभूते दक्षिणां गत्वा दिशं दर्भान्समाहितः ।
समूलानाहरेद्वारि दक्षिणाग्रान् सुनिर्मलान् ॥१३

श्राद्धकर्ता को, श्राद्ध से पहले दिन, दक्षिण दिशा की ओर जाकर, एकाग्रचित्त होकर, जड़ सहित, स्वच्छ दक्षिणाग्र-कुश और जल लाना चाहिए ।१३

दक्षिणाप्रवणं स्निग्धं विभक्तं शुभलक्षणम् ।
शुचिं देशं विविक्तञ्च गोमयेनोपलेपयेत् ॥१४

दक्षिण दिशा की ओर ढलान-वाली, चिकनी, दूसरे सम्बन्धों से रहित, प्रकाशयुक्त शुभ लक्षणों वाली पवित्र भूमि को गोबर से लीपना चाहिए ।१४

नदीतीरेषु तीर्थेषु स्वभूमौ चैव नाम्बुषु ।
विविक्तेषु च तुष्यन्ति दत्तेन पितरः सदा ॥१५

नदी तट, तीर्थ स्थान अपनी भूमि, पर्वतों के पठार और निर्जन स्थान पर श्राद्ध करने से पितर बहुत तृप्त होते हैं ।१५

परक्ये भूमिभागे तु पितॄणां नैव निर्वपेत् ।
स्वामिभिस्तद्विहन्येत मोहाद्यत् क्रियते नरैः ॥१६

पितरों के लिए, पराई-भूमि पर कभी श्राद्ध नहीं करना चाहिए। पराई भूमि पर मोहवश श्राद्ध-करने से, भूस्वामी श्राद्ध के अन्न को दूषित कर देता है ।१६

अटव्यः पर्वताः पुण्यास्तीर्थान्यायतनानि च ।
सर्वाण्यस्वमिकान्याहुर्न ह्येतेषु परिग्रहः ॥१७

गुणियों का कहना है कि जंगल, पर्वत, पुण्य स्थान, सारे तीर्थ और मन्दिरों की भूमि का कोई स्वामी नहीं होता ।१७

तिलान्प्रविकिरेत्तत्र[1] सर्वतो बंधयेदजम्[2] ।
असुरोपहतं श्राद्धं तिलैः शुध्यत्यजेन तु ॥१८

श्राद्ध भूमि के चारों तरफ तिल-फैला-कर बकरा बाँध देना चाहिए। क्योंकि

---

१. तिलांस्तु विकिरेत्तत्र सर्वतोप्येव मार्जनम् इति पा० । २. बन्धयेदजामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असुरों द्वारा उत्पन्न किए गए दोष तिल फैलाने और बकरा बाँधने से नष्ट हो जाते हैं।१८

ततोऽन्नं बहुसंस्कारं नैकव्यञ्जनमध्यगम्[1]।
चोष्यं पेयं संसृतं[2] च यथाशक्ति प्रकल्पयेत् ॥१९

तत्पश्चात् अनेक प्रकार से शुद्ध किया हुआ, चूसने और पीने योग्य विविध व्यंजनों से युक्त अन्न को अपने सामर्थ्य के अनुसार परोसना चाहिए।१९

ततो निवृत्ते मध्याह्ने लुप्तरोमनखान्द्विजान्।
अवगम्य[3] यथामार्गं प्रयच्छेद्दन्तधावनम् ॥२०

मध्याह्न ढल जाने के बाद जिन ब्राह्मणों ने क्षौरकर्म (बाल और नाखुन बनवाना) समाप्त कर लिया हो उन्हें नियमानुसार दातौन देना चाहिए।२०

"आसध्वमिति संजल्पन्नासीरन्ते पृथक् पृथक्"
तैलमभ्यञ्जनं स्नानं स्नानीयञ्च पृथग्विधम्।
पात्रैरौदुम्बरैर्दद्याद्वैश्वदेवत्वपूर्वकम् ॥२१

'बैठिये' ऐसा कहते हुए आशीर्वाद के बाद अलग-अलग तिल का तेल, नहाने का वस्त्र और नहाने का जल, गूलर के पात्र में रखकर वैश्वदेव मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मणों को देना चाहिए।२१

ततः स्नानान्निवृत्तेभ्यः प्रत्युत्थाय कृताञ्जलिः।
पाद्यमाचमनीयं च संप्रयच्छेद्यथाक्रमम् ॥२२

तत्पश्चात्—स्नान क्रिया समाप्त हो जाने के बाद, हाथ जोड़ कर खड़े-होकर, क्रमशः पैर धोने का जल और आचमनीय देना चाहिए।२२

ये चात्र विश्वदेवानां द्विजाः पूर्वं निमन्त्रिताः।
प्राङ्मुखान्यासनान्येषां त्रिदर्भोपहतानि च ॥२३

विश्वदेव के लिए, जो ब्राह्मण पहले आमन्त्रित किए जाते हैं, उनका आसन पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बिछाकर, उस पर तीन कुश रख देना चाहिए।२३

दक्षिणामुखमुक्तानि पितृणामासनानि च।
दक्षिणाग्रेषु दर्भेषु प्रोक्षितानि तिलोदकैः ॥२४

दक्षिणाग्र-कुशा को तिल और जल से पवित्र करके, पितरों के लिए दक्षिण दिशा की ओर मुँह करके बिछाना चाहिए।२४

---

१. नानाव्यंजनसंयुतमिति, व्यञ्जनमभ्युतमिति, व्यञ्जनव्यञ्चितमिति पा०। २. समृद्धञ्चेति पा०। ३. अभिगम्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेषूपवेशयेदेतानासनं संस्पृशन्नपि ।
आसध्वमिति सञ्जल्पन्नासीरंस्ते पृथक् पृथक् ॥२५

'बैठिए' ऐसा कहकर, ब्राह्मणों को पूर्वोक्त पृथक्-पृथक् आसनों पर बैठाना चाहिए, परन्तु बैठाने से पूर्व आसनों का हाथों से स्पर्श कर लेना चाहिए।२५

द्वौ दैवे प्राङ्मुखौ पित्र्ये त्रयश्चोदङ्मुखास्तथा ।
एकैकं[1] तत्र देवन्तु पितृमातामहेष्वपि ॥२६

देव पक्ष में, दो ब्राह्मणों को पूर्वाभिमुख और पितर पक्ष में तीन ब्राह्मणों को उत्तर दिशा की ओर मुंह करके बैठाना चाहिए। ये दो ब्राह्मण पिता और नाना के पक्ष में एक-एक देवता के समान होते हैं।२६

सत्क्रियां देशकालौ च शौचं ब्राह्मणसम्पदम् ।
पंचैतान्विस्तरो हन्ति तस्मान्नेहेत विस्तरम् ॥२७

अपि वा भोजयेदेकं ब्राह्मणं वेदपारगम् ।
श्रुतशीलादिसम्पन्नमलक्षणविवर्जितम् ॥२८

श्राद्ध-कार्य में अधिक ब्राह्मणों को निमन्त्रित नहीं करना अर्थात् विस्तार करना देश, काल, सत्कार, पवित्रता और ब्राह्मण सम्पदा को नष्ट कर देता है अथवा-वेदज्ञ, श्रुतिशील सम्पन्न और कुलक्षण रहित एक ही ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए।२७-२८।

उद्धृत्य पात्रे चान्नं तत्सर्वस्मात्प्रकृतात्ततः ।
देवतायतने वासौ निवेद्यान्यत्प्रवर्त्तयेत् ॥२९

जितने प्रकार के व्यंजन बने हैं, उनसे थोड़ा-थोड़ा अन्न निकाल कर पहले देवपक्ष में अन्नोत्सर्ग-करने के बाद, पितरों को उद्देश्य कर अन्नादि का दान करना चाहिए।२९

प्राश्येदन्नं तदग्नौ तु दद्याद्वै ब्रह्मचारिणे ।
तस्मादेकमपि श्रेष्ठं विद्वांसं भोजयेद्द्विजम् ॥३०

श्राद्धीय अन्न, पहले अग्नि में फिर ब्रह्मचारी को खिलाना चाहिए। इसलिए श्रेष्ठ और विद्वान् एक ही ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए।३०

भिक्षुको ब्रह्मचारी वा भोजनार्थमुपस्थितः ।
उपविष्टस्तु यः श्राद्धे कामं तमपि भोजयेत् ॥३१

---

१. एकैकं वा भवेत्तत्र देवमातामहेष्वपीति, एकैकं भावयेत्तत्र एवं मातामहेष्वपीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि भोजन के समय भिक्षुक या ब्रह्मचारी आकर बैठ जाए, तो उन्हें श्राद्ध के समय भलीभाँति भोजन कराना चाहिए।३१

अतिथिर्यस्य नाश्नाति न तच्छ्राद्धं प्रशस्यते।
तस्मात् प्रयत्नाच्छ्राद्धेषु पूज्या ह्यतिथयो द्विजैः ॥३२

जिस श्राद्ध में अतिथि को भोजन नहीं कराया जाता है, वह श्राद्ध अधिक फल देने में समर्थ नहीं होता। इसलिए श्राद्धकाल उपस्थित होने पर अत्यन्त-यत्नपूर्वक अतिथि को भोजन कराना चाहिए।३२

आतिथ्यरहिते श्राद्धे भुञ्जते ये द्विजातयः।
काकयोनिं व्रजन्त्येते दाता चैव न संशयः ॥३३

इसमें कोई सन्देह नहीं कि, अतिथि भोजन रहित श्राद्ध में जो ब्राह्मण भोजन करते हैं, वे काकयोनि में जन्म लेते हैं।३३

हीनाङ्गः पतितः कुष्ठी व्रणयुक्तस्तु[1] नास्तिकः।
कुक्कुटः शूकरश्वानौ वर्ज्याः श्राद्धेषु दूरतः ॥३४

श्राद्धकर्म में अंगहीन, पतित, कोढ़ी, घावयुक्त, चाण्डाल, नास्तिक, कुक्कुट, शूकर और कुत्ते को दूर से ही भगा देना चाहिए।३४

बीभत्सुमशुचिं नग्नं मत्तं धूर्तं रजस्वलाम्।
नीलकाषायवसनपाषण्डांश्च विवर्जयेत् ॥३५

घृणित, अपवित्र, नग्न, पागल, धूर्त, रजस्वला, नीला या काषाय वस्त्रधारी और पाखण्डियों को श्राद्धसमय परित्याग करना चाहिए।३५

यत्तत्र क्रियते कर्म पैतृकं ब्राह्मणान्प्रति।
तत्सर्वमेव कर्त्तव्यं वैश्वदेवत्यपूर्वकम् ॥३६

श्राद्ध में ब्राह्मणों के प्रति किए जाने वाले सारे कर्म वैश्वदेव मतानुसार करना चाहिए।३६

यथोपविष्टान् सर्वांस्तानलङ्कुर्याद्विभूषणैः।
स्रग्दामभिः शिरोवेष्टैर्धूपवासोऽनुलेपनैः ॥३७

ततस्त्वावाहयेद्देवान् ब्राह्मणानामनुज्ञया।
उदङ्मुखो यथान्यायं विश्वेदेवास इत्यृचा ॥३८

सुखपूर्वक आसन पर बैठे हुए उन ब्राह्मणों को अलंकारों से अलंकृत करना

---

१. व्रणी पुक्केशनास्तिको इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। माला, यज्ञोपवीत, सुगन्धित द्रव्य, पगड़ी, वस्त्र और चन्दनादि से अलंकृत करके, तत्पश्चात् ब्राह्मणों से अनुमति लेकर उत्तर की ओर मुंह करके शास्त्रानुसार–'विश्वेदेवासः' ऋक् मन्त्र से देवताओं का आवाहन करना चाहिए।३७-३८।

द्वे पवित्रे गृहीत्वास्य भाजने क्षालिते पुनः।
शन्नो देवी जलं क्षिप्त्वा यवोऽसीति यवांस्तथा ॥३९

या दिव्या इति मन्त्रेण हस्ते त्वर्घं विनिक्षिपेत्।
प्रदद्याद्गन्धमाल्यानि धूपादीनि च शक्तितः ॥४०

दो पवित्री लेकर इसको अर्घ्यपात्र में धोकर, 'शन्नो देवी' मन्त्र का पाठ करके जल और 'यवोऽसि' मन्त्र पढ़कर जो छिड़कने के बाद 'या दिव्या' मन्त्र पढ़कर ब्राह्मण के हाथ में अर्घ्य देकर, अपने सामर्थ्यानुसार सुगन्धित द्रव्य, माला, धूप, दीपादि दान करना चाहिए।३९-४०।

अपसव्यं ततः कृत्वा पितृणां दक्षिणामुखः।
आवाहनं ततः कुर्यादुशन्तस्त्वेत्यृचा बुधः ॥४१

आवाह्य तदनुज्ञातो जपेदायन्तुनस्ततः।
शन्नो देव्योदकं पात्रे तिलोऽसीति तिलांस्तथा ॥४२

तत्पश्चात् विद्वान श्राद्धकर्ता दक्षिणाभिमुख और अपसव्य (यज्ञोपवीत को दाहिने कन्धे पर लटका कर) होकर 'उशन्तस्त्वा' ऋक्मन्त्र से पितरों का आह्वान–करके, पितृ ब्राह्मणों की आज्ञा से शास्त्रानुसार 'आयन्तु नः' मन्त्र का जप करेंगे। जप के बाद अर्घ्यपात्र में 'शन्नोदेवी' मन्त्र पढ़कर जल तथा 'तिलोऽसि' मन्त्र पढ़कर तिल डालेंगे।४१-४२।

क्षिप्त्वा चार्घं यथापूर्वं दत्त्वा हस्तेषु वा पुनः।
संस्रवांश्च ततः सर्वान् पात्रे कुर्यात्समाहितः ॥४३

पहले की भांति अर्घ्य दान करके या ब्राह्मण के हाथों अर्घ्य दान देकर, एकाग्रचित्त होकर पितामह पात्र और प्रपितामह पात्र के संस्रव (अर्थात् अर्घ्य से बचे हुए जल) को पितृपात्र में रखेंगे।४३

पितृभ्यः स्थानमेतच्च न्युब्जपात्रं निधापयेत्।
अग्नौ करिष्यन्नादाय पृच्छेदन्नं घृतप्लुतम्।
कुरुष्वेत्यभ्यनुज्ञातो जुहुयादुपवीतवित्[1] ॥४४

तत्पश्चात् 'पितृभ्यः स्थानमसि' मन्त्र पढ़कर अर्घ्यपात्र को उलटना चाहिए।

---

१. जुहूयादुपवीतवानिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर घी मिश्रित अन्न ग्रहण करके ब्राह्मणों से 'अग्नौ करिष्ये' यह वाक्य पूछना चाहिए। ब्राह्मणों के द्वारा 'कुरुष्व' यह उत्तर देने के बाद उपवीती होकर हवन करना चाहिए।४४

यज्ञोपवीतिना होमः कर्त्तव्यः कुशपाणिना।
प्राचीनावीतिना पित्र्यं वैश्वदेवं तु होमवित् ॥४५

उक्त हवन हाथों में कुश लेकर और यज्ञोपवीती होकर करना चाहिए। पितरों के लिए किया जाने वाला और वैश्वदेव हवन–प्राचीनावीती होकर करना चाहिए ।४५

दक्षिणं पातयेज्जानुं देवान् परिचरन्सदा।
पितृणां परिचर्यासु पातयेदितरं तथा ॥४६

देवताओं के लिए किए जाने वाले सभी कार्य दाहिना घुटना टेक कर तथा पितरों के लिए किए जाने वाले कार्य बायाँ घुटना टेककर करना चाहिए ।४६

सोमाय वै पितृमते स्वधा नम इति ब्रुवन्।
अग्नये कव्यवाहनाय स्वधेति जुहुयात्ततः ॥४७

'सोमाय पितृमते स्वधा नमः' और–'अग्नये कव्यवाहनाय स्वधा' मन्त्रों को पढ़कर हवन करना चाहिए ।४७

अग्न्यभावे तु विप्रस्य पाणावेवोपपादयेत्।
महादेवान्तिके वाथ गोष्ठे वा सुसमाहितः ॥४८

अग्नि के अभाव में ब्राह्मण के हाथों में हवन (दान) किया जा सकता है। अथवा एकाग्रचित्त होकर महादेव के समीप या गायों के चरने वाले मैदान में भी हवन करने का विधान हैं ।४८

ततस्तैरभ्यनुज्ञातो गत्वा वै दक्षिणां दिशम्।
गोमयेनोपलिप्याथ[1] स्थानं कुर्यात्ससैकतम् ॥४९

मण्डलं चतुरस्रं वा दक्षिणाप्रवणं शुभम्।
त्रिरुल्लिखेत्तस्य मध्यं दर्भेणैकेन चैव हि ॥५०

तत्पश्चात् पितृ ब्राह्मण से आज्ञा मिलने पर दक्षिण दिशा–की ओर जाकर, बालुकामय भूमि को गोबर से लीपकर, उस स्थान पर, दक्षिण दिशा की ओर ढलान वाली, गोलाकार या चौकोर जगह बनानी होगी।

---

१. उपलिप्योर्वीमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके बीचोबीच एक कुश से तीन जगह, तीन बार (देवपक्ष, मातामहपक्ष, और पितृपक्ष) लिखना होगा ।४९-५०।

ततः संस्तीर्य तत्स्थाने दर्भान्वै दक्षिणाग्रगान् ।
त्रीन् पिण्डान्निर्वपेत् तत्र हविःशेषात्समाहितः ।।५१
उप्य[1] पिण्डांस्तु तद्धस्तं निमृज्याल्लेपभोजनान् ।
तेषु दर्भेष्वथाचम्य त्रिराचम्य शनैरसून् ।
तदन्नं तु नमस्कुर्यात्पितॄनेव च मन्त्रवित् ।।५२

उक्त स्थान पर दक्षिणाग्र कुशों-को बिछाकर, उसके ऊपर हवि के बचे हुए अंश से तीन पिण्ड दान करने चाहिए। पिण्डदान के पश्चात् हाथ को लेपभोजी पितरों के निमित्त, कुशों से पोंछकर, तीन बार आचमन कर, धीरे-धीरे सांस छोड़ते हुए और मन्त्र पढ़ते हुए, उस (पिण्ड दिए हुए) अन्न को और पितरों को नमस्कार करना चाहिए ।५१-५२।

उदकं निनयेच्छेषं शनैः पिण्डान्तिके पुनः ।
अवजिघ्रेच्च तान् पिण्डान् यथा[2] न्युप्त्वा समाहितः ।।५३

एकाग्रचित्त होकर क्रमशः दिए हुए पिण्डों के समीप धीरे-धीरे जल डालना होगा और क्रमानुसार दान दिए गए पिण्डों को सूंघना होगा ।५३

अथ पिण्डाच्च शिष्टान्नं विधिवद्भोजयेद्द्विजान् ।
मांसान् पूपांश्च विविधाञ्छ्राद्धकल्पांस्तु[3] शोभनान् ।।५४

तत्पश्चात् पिण्ड से बचे हुए अन्न को, नियमानुसार ब्राह्मणों को खिलाना चाहिए। उन्हें मांस, पूए, विविध प्रकार की सुन्दर श्राद्धीय वस्तुएँ खिलाये ।५४

ततोऽन्नमुत्सृजेद्भुक्तेष्वग्रतो[4] विकिरन्भुवि ।
पृष्ट्वा तदन्नमित्येव तृप्तानाचामयेत्ततः ।।५५

(तदनन्तर अन्न का उत्सर्ग करे। ब्राह्मणों के भोजन कर लेने पर उनसे पूछकर उनके आगे भूमि पर उसी अन्न को बिखेर दें। तृप्त ब्राह्मणों को (हाथ-मुँह धुलाकर आचमन कराये ।५५

आचान्ताननुजानीयादभितो रम्यतामिति ।
स्वधास्त्विति च ते ब्रूयुर्ब्राह्मणास्तदनन्तरम् ।।५६

---

१. लुप्तपिण्डांस्तु तं हस्तं विसृज्य लेपभागिनामिति पा० । २. षड्ऋतूंश्च इति पा० । ३. दद्यात्कृशरपायसमिति पा० । ४. (.) चिह्नमध्यस्थश्लोकाः क्वचिद्दि-भन्नतया दृश्यन्ते ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचमन के बाद उन्हें आराम करने के लिए कहें। तदनन्तर वे ब्राह्मण बोलें—'स्वधास्तु'।५६

ततो भुक्तवतां तेषामन्नशेषं निवेदयेत्।
यथा ब्रूयुस्तथा कुर्यादनुज्ञातस्तु तैर्द्विजैः ॥५७

भोजन किये हुए ब्राह्मणों को बची हुई भोजन सामग्री समर्पित करे। उन द्विजों से आज्ञा लेकर जैसा वे कहें वैसा करे।५७

पित्रे स्वदितमित्येव वाच्यं गोष्ठेषु सुश्रितम्।
सम्पन्नमित्यभ्युदये देवे सेवितमित्यपि ॥५८

पितृश्राद्ध में ब्राह्मण 'स्वदितम्' बोले, सामूहिक श्राद्ध में 'सुश्रितम्' मंगल-कर्म में 'सम्पन्नम्' और देवकर्म में 'सेवितम्' कहे।५८

विसृज्य ब्राह्मणान् तान्वै पितृपूर्वन्तु वाग्यतः।
दक्षिणान्दिशमाकांक्षन्याचेतेमान्वरान् पितॄन् ॥५९

पहले पितरों को पश्चात् ब्राह्मणों को विदा करके वाक्यसंयमपूर्वक दक्षिण दिशा की ओर साकांक्ष होकर इन वरों की याचना करे।५९

दातारो नोऽभिवर्द्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च।
श्रद्धा च नो मा विगमद्बहुदेयञ्च नोऽस्त्विति ॥६०

हमारे दाताओं की वृद्धि हो, वेदों और सन्तान की वृद्धि हो, हमारे भीतर से श्रद्धा न जाये। हमारे पास बहुत देय सामग्री हो।६०

पिण्डांस्तुगोऽजविप्रेभ्यो दद्यादग्नौ जलेऽपि वा।
मध्यमन्तु ततः पिण्डमद्यात्पत्नी सुतार्थिनी ॥६१

दान किये हुए पिण्ड गाय, बकरी, ब्राह्मण को दे दे अथवा अग्नि या जल में डाल दे। पुत्र चाहने वाली पत्नी मध्यम पिण्ड स्वयं खा ले।६१

प्रक्षाल्य हस्तावाचम्य ज्ञातिं शेषेण तोषयेत्।
सूपशाकफलानीक्षून्[1] पयो दधि घृतं मधु ॥६२

पश्चात् हाथों को धोकर आचमन करे और शेष सामग्री से भाई-बन्धुओं को सन्तुष्ट करे। पकी हुई दाल या रसा, साग, फल, ईख, दूध, दही, घी और मधु ब्राह्मणों को खिलाये।६२

---

१. पुष्पशाकफलानिक्षूनिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्नञ्चैव यथाकामं विविधं भोज्यपेयकम् ।
यद्यदिष्टं द्विजेन्द्राणां तत्सर्वं विनिवेदयेत् ॥६३

ब्राह्मणों को उनकी इच्छानुसार—अन्नादि और विभिन्न प्रकार के भोज्य और पेय देने चाहिए। इसके अतिरिक्त ब्राह्मणों को वह सब कुछ देना चाहिए, जो वे चाहते हों ।६३

धान्यांस्तिलांश्च विविधान् शर्करा विविधास्तथा ।
उष्णमन्नं द्विजातिभ्यो दातव्यं श्रेय इच्छता ।
अन्यत्र फलमूलेभ्यो पानकेभ्यस्तथैव च ॥६४

विभिन्न प्रकार के अन्न, तिल और शक्कर ब्राह्मणों को देना चाहिए और मंगलाकांक्षी ब्राह्मणों को गरम भोजन कराना चाहिए, परन्तु फल-मूल और जल गरम नहीं देना चाहिए ।६४

न भूमौ पातयेज्जानुं न कुप्येन्नानृतं वदेत् ।
म पादेन स्पृशेदन्नं न चैवमवधूनयेत् ॥६५

उस समय घुटनों को भूमि पर नहीं टिकाना चाहिए, क्रोध नहीं करना चाहिए झूठ नहीं बोलना चाहिए, पैरों से अन्न को छूना और पैरों को हिलाना नहीं चाहिए ।६५

क्रोधेनैव च यद्भुक्तं यद्भुक्तं त्वयथाविधि ।
यातुधाना विलुम्पन्ति जल्पता चोपपादितम् ॥६६

क्रोधित होकर, अत्यन्त व्यस्तता के साथ और बातें करते हुए जिन वस्तुओं का दान किया जाता है, उसे राक्षस हर लेते हैं ।६६

स्विन्नगात्रो न तिष्ठेत सन्निधौ च द्विजोत्तमाः ।
न च पश्येत काकादीन् पक्षिणः प्रतिलोमगान्[1] ।
तद्रूपाः पितरस्तत्र समायान्ति बुभुक्षवः[2] ॥६७

शरीर गीला हो तो, ब्राह्मणों के पास आकर नहीं बैठना चाहिए और श्राद्ध के समय कौए जैसे पक्षियों की ओर न तो देखना चाहिए और न ही उन्हें उड़ाना चाहिए, क्योंकि क्षुधित पितर इसी रूप में वहाँ आते हैं ।६५

न दद्यात्तत्र हस्तेन प्रत्यक्षं लवणं तथा ।
न चायसेन पात्रेण न चैवाश्रद्धया पुनः ॥६८

---

१. प्रतिषेधयेदिति पा० । २. च्युताः क्षराः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमक को सीधे हाथों से उठाकर नहीं देना चाहिए, लोहे के पात्र से भोजन नहीं परोसना चाहिए और बिना श्रद्धा के कोई वस्तु दान में नहीं देनी चाहिए।६८

काञ्चनेन तु पात्रेण राजतोदुम्बरेण वा।
दत्तमक्षयतां याति खड्गेन च विशेषतः ॥६९

सोने चाँदी और उदुम्बर (गूलर काष्ठ) से बने हुए पात्र में परोसा गया अन्न अक्षय फल-प्रदायक होता है और खड्ग पात्र (गेंड़े-के चमड़े से बना पात्र) से परोसी हुई वस्तु विशेष फल दान करती है।६९

पात्रे तु मृण्मये यो वै श्राद्धे[1] वै भोजयेद्द्विजान्।
स याति नरकं घोरं भोक्ता चैव पुरोधसः ॥७०

श्राद्ध के समय ब्राह्मणों को मिट्टी के पात्र में भोजन कराने से दाता, पुरोहित और भोजन करने वाला तीनों घोर नरकगामी होते हैं।७०

न पंक्त्यां विषमं दद्यान्न याचेत न दापयेत्।
याचिता दापिता दाता नरकान्याति भीषणान्[2] ॥७१

एक पंक्ति में बैठे हुए ब्राह्मणों को भोजन परोसने में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करना चाहिए, माँगना नहीं चाहिए तथा किसी को ज्यादा और किसी को कम भोजन नहीं परोसवाना चाहिए। जो इस तरह माँगते हैं, दान-देते और दिलवाते हैं—वे सभी घोर नरक में जाते हैं।७१

भुञ्जीरन्नग्रतः[3] श्रेष्ठं न ब्रूयुः प्राकृतान् गुणान्।
तावद्धि पितरोऽश्नन्ति यावन्नोक्ता हविर्गुणाः ॥७२

सभी सम्यों को पकाए हुए व्यंजनों का गुणगान किए बिना भोजन करना चाहिए, क्योंकि पितर तभी तक भोजन करते हैं—जब तक हवि का गुणगान नहीं किया जाता।७२

नाग्रासनोपविष्टस्तु भुंजीत प्रथमं द्विजः।
बहूनां पश्यतां सोऽन्यः पंक्त्या हरति किल्बिषम् ॥७३

पहले से ही आसन पर बैठकर, जो ब्राह्मण सबसे पहले भोजन प्रारम्भ कर देता है, उसमें, दूसरी पंक्ति में बैठकर, उसको देखने वाले, अनेक ब्राह्मणों का पाप संक्रमित हो जाता है।७३

---

१. श्राद्धे भोजयते पितॄनिति पा०। २. दारुणानिति पा०। ३. भुञ्जीरन्वाग्र्य ताः शिष्याः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न किंचिद्वर्जयेच्छ्राद्धे नियुक्तस्तु द्विजोत्तमः ।
न मांसस्य निषेधेन न चान्यस्यान्नमीक्षयेत् ॥७४

श्राद्ध कर्म में नियुक्त ब्राह्मणों को (भोजन में) किसी भी व्यंजन का परित्याग नहीं करना चाहिए । मांस भक्षण का निषेध होने पर भी श्राद्ध में नियुक्त ब्राह्मण-श्रेष्ठों को मांस भक्षण करना चाहिए और दूसरे के अन्न की ओर नहीं देखना चाहिए ।७४

यो नाश्नाति द्विजो मांसं नियुक्तः पितृकर्मणि ।
स प्रेत्य पशुतां याति सम्भवानेकविंशतिम् ॥७५

श्राद्ध कर्म में नियुक्त होकर भी जो ब्राह्मण मांस नहीं खाता, वह इक्कीस बार पशुयोनि में जन्म लेता है ।७५

स्वाध्यायाञ्छ्रावयेदेषां धर्मशास्त्राणि चैव हि ।
इतिहासपुराणानि श्राद्धकल्पांश्च शोभनान् ॥७६

वेद, इतिहास, पुराण, धर्मशास्त्र और अत्यन्त सुन्दर श्राद्धकल्प ब्राह्मणों को सुनाना चाहिए ।७६

ततोऽन्नमुत्सृजेद्भोक्ता साग्रतो विकिरन्भुवि ।
पृष्ट्वा स्वदितमित्येवं तृप्तानाचामयेत्ततः ॥७७

तत्पश्चात्—अन्न उत्सर्ग कर, भोजन किए हुए ब्राह्मणों के सामने भूमि पर उस अन्न को फैलाने के बाद, 'स्वदित' यह वाक्य पूछकर तृप्त ब्राह्मणों को आचमन कराना चाहिए ।७७

आचान्ताननुजानीयादभितो रम्यतामिति ।
स्वधास्त्विति च तं ब्रूयुर्ब्राह्मणास्तदनन्तरम् ॥७८

आचमन के बाद 'अभिरम्यताम्' कहकर, ब्राह्मणों से अनुमति लेने पर, ब्राह्मण वृन्द श्राद्धकर्त्ता को 'स्वधास्तु' कहेंगे ।७८

ततो भुक्तवतां तेषामन्नशेषं निवेदयेत् ।
यथा ब्रूयुस्तथा कुर्यादनुज्ञातस्तु तैर्द्विजैः ॥७९

भोजन किए हुए ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर, भोजन से बचे हुए अन्न को, वे जो कुछ करने के लिए कहें, वही करना चाहिए ।७९

पित्र्ये स्वदित इत्येव वाक्यं गोष्ठेषु सुव्रितम् ।
संपन्नमित्यभ्युदये दैवे रोचत इत्यपि ॥८०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पितरों के श्राद्ध में 'स्वदितं', गोष्ठ श्राद्ध में 'सूत्रितम्' आभ्युदयिक श्राद्ध (उन्नति के लिए किये गये श्राद्ध) में 'सम्पन्नं' और देवश्राद्ध में 'रोचते' कहना चाहिए। ८०

विसृज्य ब्राह्मणान् स्तुत्वा पितृपूर्वं तु वाग्यतः ।
दक्षिणां दिशमाकांक्षन्याचेतेमान् वरान्पितॄन् ॥८१
दातारो नोभिवर्द्धन्तां वेदाः संततिरेव च ।
श्रद्धा च नो माव्यगमद्बहुदेयं च नोस्त्विति ॥८२

वाणी पर नियन्त्रण रखकर, पितृपूर्वक स्तुति करके, सारे ब्राह्मणों को विदा करने के बाद, दक्षिण दिशा की ओर मुड़कर पितरों को सम्बोधित कर यह वर माँगना चाहिए—हमारे सारे दाता, वेद और सन्तान समृद्ध हों, हमारे शरीर से श्रद्धा दूर न हो, हमें दी हुई वस्तु प्रभूत हो और मुझे किसी से कुछ माँगना न पड़े ।८१-८२।

पिंडांस्तु गोजविप्रेभ्यो दद्यादग्नौ जलेपि वा ।
मध्यमं तु ततः पिंडमद्यात्पत्नी सुतार्थिनी ॥८३

श्राद्ध के बचे हुए पिण्डों को गाय, बकरी या ब्राह्मण को देना चाहिए अथवा जल में बहा देना चाहिए। पत्नी यदि पुत्र की कामना करती हो, तो पिता को मध्यम पिण्ड का सेवन करना चाहिए ।८३

प्रक्षाल्य हस्तावाचम्य ज्ञातीन् शेषेण भोजयेत् ।
ज्ञातिष्वपि चतुर्थेषु स्वान् भृत्यान् भोजयेत्ततः ॥८४

तत्पश्चात् दोनों हाथ धोकर, आचमन करके बची हुई सामग्री से सम्बन्धियों को तुष्ट करना चाहिए और चौथे प्रहर अपने सेवकों को भोजन कराना चाहिए ।८४

पश्चात्स्वयञ्च पत्नीभिः शेषमन्नं समाचरेत्[1] ।
नोच्छासयेत्[2] तदुच्छिष्टं यावन्नास्तङ्गतो रविः ॥८५

इन सभी लोगों के भोजन कर लेने के पश्चात् पत्नी के साथ बैठकर, बचा हुआ अन्न ग्रहण करना चाहिए और जब तक सूर्यास्त न हो जाय, तब तक जूठे को निकालना नहीं चाहिए ।८५

ब्रह्मचारी भवेतान्तु दम्पती रजनीन्तु ताम् ।
दत्त्वा श्राद्धं तथा भुक्त्वा सेवते यस्तु मैथुनम् ॥८६
महारौरवमासाद्य कीटयोनिं व्रजेत्पुनः ॥८७

श्राद्ध की रात, पति-पत्नी को, ब्रह्मचारी की तरह बिताना चाहिए, क्योंकि

---

१. समाहरेदिति पा० । २. निखनेच्च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्राद्ध करके अथवा श्राद्धीय अन्न ग्रहण करके जो व्यक्ति मैथुन करता है, वह महारौरव नरक भोगकर, कीटयोनि में जन्म लेता है ।८६-८७।

शुचिरक्रोधनः शान्तः सत्यवादी समाहितः ।
स्वाध्यायञ्च तथाध्वानं कर्त्ता भोक्ता च वर्ज्जयेत् ॥८८

श्राद्धकर्ता और श्राद्ध में भोजन करने वाले को पवित्र, क्रोधरहित, शान्त, सत्यवादी और एकाग्रचित्त होकर वेदाध्ययन और अध्वगमन का त्याग करना चाहिए ।८८

श्राद्धं भुक्त्वा परश्राद्धे भुञ्जते ये द्विजातयः ।
महापातकिभिस्तुल्या यान्ति ते नरकान् बहून् ॥८९

जो ब्राह्मण श्राद्ध करने के बाद दूसरे के श्राद्ध में जाकर भोजन करते हैं, वे ब्राह्मण महापापी के समान अनेक नरक भोगते हैं।८९

एष वो विहितः सम्यक् श्राद्धकल्पः समासतः[1] ।
अनेन वर्द्धयेन्नित्यं ब्राह्मणो ऽव्यसनान्वितः ॥९०

मैंने संक्षेप में, समस्त श्राद्धकल्प–बता दिया । इससे व्यसनरहित ब्राह्मण नित्य वृद्धि प्राप्त करेगा ।९०

आमश्राद्धं यदा कुर्याद्विधिज्ञः श्रद्धयान्वितः ।
तेनान्नौकरणं कुर्यात्पिण्डांस्तेनैव निर्वपेत् ॥९१

श्रद्धावान्, विधिवेत्ता जिस अन्न से आम श्राद्ध करते हैं, उन्हें उसी प्रकार के आमान्न से अग्नीकरण और पिण्डदान भी करना चाहिए ।९१

योऽनेन विधिना श्राद्धं कुर्याद्वै शान्तमानसः[2] ।
व्यपेतकल्मषो नित्यं यतीनां[3] वर्त्तयेत्पदम् ॥९२

जो व्यक्ति शान्त मन से इसी नियम के अनुसार श्राद्ध करता है, वह निष्पाप होकर संन्यासियों–द्वारा प्राप्त करने योग्य, नित्य पद प्राप्त करता है ।९२

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्राद्धं कुर्याद्द्विजोत्तमः ।
आराधितो भवेदीशस्तेन सम्यक् सनातनः ॥९३

इसलिए ब्राह्मण श्रेष्ठों को अत्यन्त यत्नपूर्वक श्राद्ध करना चाहिए, इससे सनातन भगवान् महादेव सम्यक् रूप से पूजित होते हैं ।९३

---

१. सनातनः इति पा० । २. यतमानसः इति पा० । ३. योगिनामुच्यते पदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपि मूलैः फलैर्वापि प्रकुर्यान्निर्धनो द्विजः ।
तिलोदकैस्तर्पयित्वा पितॄन् स्नात्वा समाहितः ॥९४

निर्धन ब्राह्मण स्नान करके, एकाग्रचित्त होकर तिलोदक से पितरों का तर्पण करके फल-मूल से श्राद्ध कर सकता है ।९४

न जीवत्पितृको दद्याद्धोमान्तं वा विधीयते ।
येषां वापि पिता दद्यात्तेषाञ्चैके प्रचक्षते ॥९५

जिस व्यक्ति का पिता जीवित हो, वह श्राद्ध नहीं कर सकता, परन्तु कुछ लोगों का कहना है कि पिता जिनका श्राद्ध करता हो, पुत्र भी उनका श्राद्ध कर सकता है ।९५

पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
यो यस्य प्रीयते तस्मै देयं नान्यस्य तेन तु ॥९६

पिता, पितामह, और प्रपितामह, इनमें से जिनकी मृत्यु हो जाए केवल उन्हीं का श्राद्ध-करना चाहिए दूसरों का नहीं ।९६

भोजयेद्वापि जीवन्तं यथाकामन्तु भक्तितः ।
न जीवन्तमतिक्रम्य ददाति प्रयतः शुचिः ॥९७

यदि ये लोग (पिता, पितामह और प्रतिमाह) जीवित हों, तो इन्हें ही भोजन कराना—चाहिए । जीवित व्यक्ति को भोजन कराए बिना कोई कार्य नहीं करना चाहिए ।९७

द्व्यामुष्यायणिको[1] दद्याद्बीजिक्षेत्रिकयोः समम् ।
अधिकारी भवेत्सोऽथ नियोगोत्पादितो यदि ॥९८

यदि द्व्यामुष्यायणिक (जारज) पुत्र नियोग बिधि से उत्पन्न हुआ हो, तो वह पुत्र बीजी और क्षेत्रिक में बराबर दान देने का अधिकारी होता है ।९८

अनियुक्तात्सुतो[2] यश्च शुक्रतो जायतेत्विह ।
प्रदद्याद्बीजिने पिण्डं क्षेत्रिणे तु ततोऽन्यथा ॥९९

द्वौ पिण्डौ निर्वपेत्ताभ्यां क्षेत्रिणे बीजिने तथा ।
कीर्त्तयेदथचैवास्मिन्[3] बीजिनं क्षेत्रिणं ततः ।
मृताहनि तु कर्त्तव्यमेकोद्दिष्टं विधानतः ॥१००

---

१. भ्रात्रन्तरेण दत्तकत्वेन गृहीतोऽपि स्वपितुर्दायादादिभाक् पुत्रो द्व्यामुष्यायणिकः । अत्र तु क्षेत्रजः । बीजी जन्मदाता, क्षेत्रिकः यस्य क्षेत्रे उत्पन्नः । २. ऋक्थार्द्धं समादद्यादिति पा० । ३. कीर्त्तयेदथ वैकस्मिन्निति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो पुत्र नियोग विधि से नहीं उत्पन्न होता, वह केवल बीजी को ही पिण्ड दान करता है। नियोगोत्पादित पुत्र क्षेत्री को भी पिण्डदान करता है, परन्तु वह पहले बीजी और बाद में क्षेत्री का नामोल्लेख करके, तब दो पिण्डों का दान करेगा। मृत्यु की तिथि को विधानानुसार एकोद्दिष्ट श्राद्ध करना चाहिए ।९९-१००।

अशौचे स्वे परिक्षीणे काम्यं वै कामतः पुनः ।
पूर्वाह्णे चैव कर्त्तव्यं श्राद्धमभ्युदयार्थिना ॥१०१

अपना सूतक पूरा हो जाने के बाद ही अपनी इच्छा से काम्यश्राद्ध किया जा सकता है। उन्नति के लिए किया जाने वाला श्राद्ध-पूर्वाह्ण में करना चाहिए ।१०१

देववत्सर्वमेव स्यान्नैव कार्यास्तिलैः क्रियाः ।
दर्भाश्च ऋजवः कार्या युग्मान्वै भोजयेद्द्विजान् ॥१०२

इस श्राद्ध (नान्दीमुख श्राद्ध) में सारे कार्य देव श्राद्ध की भाँति होते हैं केवल तिल का काम जौसे पूरा करना चाहिए। इस श्राद्ध में सीधा कुश देना चाहिए और दो ब्राह्मणों को एक साथ जोड़े में भोजन कराना चाहिए ।१०२

नान्दीमुखास्तु पितरः प्रीयन्तामिति वाचयेत् ।
मातृश्राद्धन्तु पूर्वं स्यात्पितॄणां तदनन्तरम् ॥१०३
ततो मातामहानान्तु वृद्धौ श्राद्धत्रयं स्मृतम् ।
देवपूर्वं प्रदद्याद्वै न कुर्यादप्रदक्षिणम् ॥१०४

'नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्तां' ऐसा पाठ करते रहना चाहिए। नान्दीमुख श्राद्ध में पहले माता, फिर पिता और अन्त में मातामहों का—तीन प्रकार का श्राद्ध करना चाहिए। इन तीनों श्राद्धों से पहले देवश्राद्ध करना चाहिए और प्रदक्षिण किए बिना श्राद्ध नहीं करना चाहिए ।१०३-१०४।

प्राङ्मुखो निर्वपेद्विद्वानुपवीती[1] समाहितः ।
पूर्वं तु मातरः पूज्या भक्त्या वै सगणेश्वराः ॥१०५
स्थण्डिलेषु विचित्रेषु प्रतिमासु द्विजातिषु ।
पुष्पैर्धूपैश्च नैवेद्यैर्भूषणैरपि[2] पूजयेत् ॥१०६
पूजयित्वा मातृगणं कुर्याच्छ्राद्धत्रयं द्विजः ।

एकाग्रचित्त से, उपवीती होकर पूर्व दिशा की ओर मुंह करके, पिण्डदान करना चाहिए। प्रथमतः षोडश मातृकाओं और गणेशजी की भक्तिभाव से पूजा करके तत्पश्चात् यज्ञीयभूमि में विचित्र प्रतिमाओं और ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। पुष्प,

---

१. पिण्डानिति पा०। २. गन्धाद्यैर्भूषणैरपीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गन्ध, धूप, नैवेद्यादि और अलंकारों से मातृकाओं की पूजा करके, श्राद्ध-त्रय सम्पन्न करना चाहिए ।१०५-१०६½

अकृत्वा मातृयोगन्तु यः श्राद्धन्तु निवेशयेत् ।
तस्य क्रोधसमाविष्टा हिंसां गच्छन्ति[1] मातरः ॥१०७

जो व्यक्ति उक्त प्रकार से षोडशमातृकाओं की पूजा किए बिना श्राद्ध करता है, मातृकाएँ उन पर क्रोधित होकर, हिंसा करती हैं ।१०७

इतिश्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु श्राद्धकल्पो नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२

कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में श्राद्धकल्प नामक बाईसवाँ अध्याय समाप्त ।२२।

●

त्रयोविंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

दशाहं प्राहुराशौचं सपिण्डेषु विधीयते ।
मृतेषु वापि जातेषु ब्राह्मणानां द्विजोत्तमाः ॥१

व्यास बोले—हे ब्राह्मणश्रेष्ठों ! मुनियों का कहना है कि सपिण्ड जन्म और सपिण्ड मृत्यु में ब्राह्मणों को दस दिन का सूतक होता है ।१

नित्यानि चैव कर्माणि काम्यानि च विशेषतः ।
न कुर्याद्विहितं किञ्चित्स्वाध्यायं मनसापि च ॥२

ऐसे सूतकावस्था में नित्य, काम्य और अन्य कोई भी विहित कर्म नहीं करना चाहिए तथा मन में भी वेदों का स्वाध्याय नहीं करना चाहिए ।२

शुचीनक्रोधनान्[2] भूम्यान् शालाग्नौ भावयेद्द्विजान् ।
शुष्कान्नेन फलैर्वापि वैतानान् जुहुयात्तथा ॥३

---

१. इच्छन्तीति पा० । २. शुचीननिधनानन्यानिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पवित्र, क्रोधहीन और शान्त ब्राह्मणों को शालाग्नि में हवन के लिए नियुक्त करना चाहिए। नियुक्त ब्राह्मणों को सूखे अन्न और फल से यज्ञीय अग्नि में हवन करना चाहिए।३

न स्पृशेदुरिभानन्ये न च तेभ्यः समाहरेत्।
चतुर्थे पंचमे चाह्नि[1] संस्पर्शः कथितो बुधैः ॥४

दूसरे लोग, सूतक लगे हुए व्यक्ति को न तो स्पर्श करेंगे और न ही उनके पास से कोई वस्तु ग्रहण करेंगे। विद्वानों का कहना है कि चौथे या पांचवे दिन उन्हें छुआ जा सकता है।४

सूतके तु सपिण्डानां संस्पर्शो नैव दुष्यति।
सूतकं सूतिकां चैव वर्ज्जयित्वा नृणां पुनः ॥५

जन्म के समय होने वाले अशौच में, सपिण्डों के स्पर्श से कोई दोष नहीं लगता, केवल मनुष्यों के बालक और प्रसूति को छूना वर्ज्य है।५

अधीयानस्तथा वेदान् वेदविच्च पिता भवेत्।
संस्पृश्याः सर्व एवैते स्नानान्माता दशाहतः ॥६

वेदाध्ययन करने वाले, वेदज्ञ और पिता ये सब लोग स्नान के बाद स्पर्श करने योग्य हो जाते हैं और दसवाँ बीत जाने के बाद माता भी स्पृश्य होती हैं।६

दशाहं निर्गुणे प्रोक्तमाशौचं वार्तिनिर्गुणे।
एकद्वित्रिगुणैर्युक्तश्चतुर्ह्येकदिनैः शुचिः ॥७

निर्गुण और अतिनिर्गुण के लिए दस दिन का सूतक जानों। एक गुण, द्विगुण और त्रिगुण युक्त ब्राह्मणों की क्रमशः चार दिन, तीन दिन और एक दिन बीत जाने पर शुद्धि होती है।७

दशाह्नादपरं सम्यगधीयीत जुहोति च।
चतुर्थे तस्य संस्पर्शं मनुः प्राह प्रजापतिः ॥८

प्रजापति मनु के अनुसार दसवाँ बीतने पर अध्ययन और हवनादि सम्यग्रूपेण सम्पन्न करने का विधान है तथा चौथा बीतने पर छूआछूत का दोष मिट जाता है।८

क्रियाहीनस्य मूर्खस्य महारोगिण एव च।
यथेष्टाचरणस्येह मरणान्तमशौचकम् ॥९

---

१. वाह्निसंस्पर्शः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाहीन, मूर्ख, महारोगी और यथेच्छाचारी व्यक्तियों को जीवन भर सूतक रहता है ।८

त्रिरात्रं दशरात्रं वा ब्राह्मणानामशौचकम् ।
प्राक्संवत्सरात् त्रिरात्रं[1] दशरात्रं ततः परम् ॥९०

ब्राह्मणों को तीन या दस रात का सूतक रहता है । यदि एक वर्ष पहले मृत्यु हो तो तीन रात का और बाद में तो दस रात का सूतक होता है ।१०

ऊनद्विवार्षिके प्रेते मातापित्रोस्तदिष्यते ।
(त्रिरात्रेण शुचिस्त्वन्यो यदि ह्यत्यन्तनिर्गुणः ।
अदन्तजातमरणे पित्रोरेकाहमिष्यते ।)
जातदन्ते त्रिरात्रं स्याद्यदि स्यातान्तु निर्गुणौ ॥९१

दो वर्ष से कम आयु के बच्चे की मृत्यु हो जाने से उसके माता पिता को और दाँत के साथ पैदा होने वाले बालक की मृत्यु हो जाने से उसके अत्यन्त निर्गुण माता-पिता को तीन रात का सूतक होता है ।११

आदन्तजननात्सद्य आचूडादेकरात्रकम् ।
त्रिरात्रमौपनयनात्सपिण्डानामशौचकम्[2] ॥९२

सपिण्डों (सात पीढ़ी के भीतर का परिवार) के लिए, दाँत निकलने से पहले बालक की मृत्यु हो जाने से सद्यः शोच, चूड़ाकर्म से पहले होने से एक रात का और उपनयन से पहले मृत्यु हो जाने से तीन रात का सूतक लगता है ।१२

जातमात्रस्य बालस्य यदि स्यान्मरणं पितुः ।
मातुश्च सूतकं तत्स्यात्पितास्यात्स्पृश्य एव च ॥९३
सद्याशौचं सपिण्डानां कर्त्तव्यं सोदरस्य तु ।
ऊर्ध्वं दशाहादेकाहं सोदरो यदि निर्गुणः ॥९४

बालक का जन्म होने के बाद, जननाशोच के चलते ही बालक की मृत्यु हो जाए, तो पिता-माता के अंगों का स्पर्श न करने वाला सूतक होगा, सपिण्डों और सहोदरों को सद्यःशोच होगा, परन्तु सहोदर यदि निर्गुण हो, तो दस दिन के बाद भी एक दिन का सूतक होता है ।१३-१४।

ततोऽर्ध्वं दन्तजननात्सपिण्डानामशौचकम् ।
एकरात्रं[3] निर्गुणानां चौडादूर्ध्वन्त्रिरात्रकम् ॥९५

निर्गुण सपिण्डों को दाँत निकालने के बाद बालक की मृत्यु हो जाने से एक रात का और चूड़ाकर्म के बाद होने से तीन रात का सूतक लगता है ।१५

१. प्राक्संस्कारात्त्रिरात्रं स्यात्तस्मादूर्ध्वं दशाहकमिति, प्राक्संस्कारात्त्रिरात्रं वै दशरात्रमतः परमिति पा० । २. सपिण्डानामुदाहृतमिति पा० । ३. एकाहं निर्गुणा-नान्तु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अदन्तजातमरणं सम्भवेद्यदि सत्तमाः ।
एकरात्रं सपिण्डानां यदि तेऽत्यन्तनिर्गुणाः ॥१६

बिना दाँत निकले, यदि बालक की मृत्यु हो जाए तो अत्यन्त निर्गुण सपिण्डों के लिए एक रात का सूतक होता है ।१६

व्रतादेशात्सपिण्डानां गर्भस्रावात्स्वपाततः ।
(सर्वेषामेव गुणिनामूर्ध्वन्तु विषमः पुनः ।
अर्वाक् षण्मासतः स्त्रीणां यदि स्याद्गर्भसंस्रवः ।
तदा मासससमैस्तासामशौचं दिवसैः स्मृतम् ।
तत उर्ध्वन्तु पतने स्त्रीणां द्वादश रात्रिकम् ।
सद्यः शौचं सपिण्डानां गर्भस्रावाच्च धातुतः ।)
गर्भच्युतादहोरात्रं सपिण्डेऽत्यन्तनिर्गुणे ।
यथेष्टाचरणे ज्ञातौ त्रिरात्रमिति निश्चयः ॥१७

अपने से किये गये गर्भपतन होने पर सभी सपिण्डों को व्रत का पालन करना चाहिए। यदि छह मास से पहले स्त्रियों का गर्भस्राव हो जाये तो जितने महीने हुए हों उतने दिन अशौच रहेगा। छह मास के बाद पतन होने पर स्त्रियों को बारह रात सूतक रहता है। धातु (पत्थर आदि के ठोकर) से गर्भस्राव होने पर सपिण्डों को सद्यः शौच लगता है। गर्भस्राव होने से अत्यन्त निर्गुण सपिण्डों को एक दिन और रात का और यथेच्छाचारी सम्बन्धियों को तीन रात का सूतक होता है ।१७

यदि स्यात्सूतके सूतिर्मरणे वा मृतिर्भवेत् ।
शेषेणैव भवेच्छुद्धिरहःशेषे त्रिरात्रकम् ॥१८

यदि जननाशौच के चलते जननाशौच और मरणाशौच के चलते मरणाशौच हो जाय, तो पहले से चल रहे शौच के जितने दिन शेष हों उसी में दोनों अशौच पूरे हो जाते हैं। परन्तु पहले से चल रहे अशौच के अन्तिम दिन, फिर से कोई नया अशौच प्रारम्भ हो जाय तो पहले से चल रहा अशौच तीन रात और बढ़ जाता है ।१८

मरणोत्पत्ति[1]योगेन मरणेन समाप्यते ।
आद्यं वृद्धिमदाशौचं तदा[2] पूर्वेण शुद्ध्यति ॥१९

यदि मरणाशौच के चलते जननाशौच और जननाशौच के चलते मरणाशौच हो जाय, तो मरणाशौच से जननाशौच पूरा हो जाता है (अर्थात् मरणाशौच ही गुरुतर होता है)। यदि किसी सूतक की आधी अवधि बीत जाने के बाद कोई नया सूतक होता है तो आद्यवृद्धिमत् अशौच में ही पहले वाला सूतक पूरा हो जाता है ।१९

---

१. मरणोत्पत्तियोगे तु मरणाच्छुद्धिरिष्यते इति पा०। २. ऊर्ध्वञ्चेत् न शुद्ध्यति इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(तथाच पञ्चमीरात्रिमतीत्य परतो भवेत्) ।
देशान्तरगतं श्रुत्या सूतकं शावमेव च ।
तावदप्रयतो[1] मर्त्यो यावच्छेषं समाप्यते ॥२०

वैसा होने पर पाँचवीं रात्रि को विता कर आगे सूतक होगा। किसी दूसरे स्थान में रहकर, यदि जन्म और मृत्यु के सूतक की सूचना मिले, तो सूतक के जितने दिन शेष हों, उतने ही दिन का सूतक मानना चाहिए ।२०

अतीते सूतके प्रोक्तं सपिण्डानां त्रिरात्रकम् ।
(अथैव मरणे स्नानमूर्ध्वं संवत्सराद्यदि ।
वेदार्थविच्चाधीयानो योऽग्निवान्वृत्तिकर्षितः ।
सद्यः शौचं भवेत्तस्य सर्वावस्थासु सर्वदा ।
स्त्रीणामसंस्कृतानान्तु प्रदानात्परतः सदा ।
सपिण्डानां त्रिरात्रं स्यात्संस्कारे भर्त्तुरेव हि ।
अहस्त्वदत्तकन्यानामशौचं मरणं स्मृतम् ।
ऊनद्विवर्षामरणे सद्यः शौचमुदाहृतम् ।
आदन्तात्सोदरे सद्य आचूडादेकरात्रकम् ।)
आप्रदानात्त्रिरात्रं स्याद्दशरात्रं ततः परम् ॥२१

यदि कोई मरणाशौच बीत जाने के बाद मृत्यु का समाचार सुनता है तो सपिण्डों को तीन रात सूतक मानना पड़ता है। यदि एक वर्ष के बाद मरण की सूचना मिले तो स्नान कर लेना चाहिए। वेदार्थों के ज्ञाता, वेदाध्ययन करने वाले अग्निहोत्री तथा क्षीण जीविका वाले को सर्वदा सभी अवस्थाओं में सद्यः शौच लगता है। असंस्कृत स्त्रियों के दान के बाद मृत्यु होने पर सपिण्डों को तीन रात और संस्कार के समय मृत्यु होने पर केवल पति को अशौच लगता है। जिसका दान नहीं हुआ है उस कन्या के मरने पर एक दिन का अशौच लगता है। दो वर्ष से कम अवस्था की कन्या के मरने पर तुरन्त की जाने वाली शुद्धि कही गई है। विवाह से पहले कन्या की मृत्यु हो जाने से तीन रात तक और विवाह के बाद दस रात का सूतक होता है ।२१

मातामहानां मरणे त्रिरात्रं स्यादशौचकम् ।
एकादशानाञ्च[2] तथा सूतके चैतदेव हि ॥२२

नाना की मृत्यु से नाती को और एकोदक अथवा समानोदकों (ऐसे सम्बन्धी जिनसे रक्त सम्बन्ध हो) के सूतक (जन्म या मृत्युजन्य) में तीन रात का अशौच होता है ।२२

पक्षिणां योनिसम्बन्धे बान्धवेषु तथैव च ।
एकरात्रं समुद्दिष्टं गुरौ सब्रह्मचारिणि ॥२३

---

१. तावत्स्यादशुचिर्विप्रो यावच्छेषः समाप्यते इति पा० । २. एकोदकानां मरणे इति, एकोदकानां च तथेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनके साथ योनि सम्बन्ध हो और पिता के मित्रों की मृत्यु हो जाने से पक्षिणी अशौच (अर्थात् एक रात और उसके पहले तथा बाद वाले दिन या दो रात और उनके बीच वाले दिन का सूतक) होता है। गुरु के ब्रह्मचारी अवस्था में मृत्यु हो जाने से एक रात का सूतक होता है ।२३

प्रेते राजनि सज्योतिर्यस्य स्याद्विषये स्थितः ।
गृहे मृतासु सर्वासु कन्यासु च त्र्यहं पितुः ॥२४

जिस राजा के अधिकार क्षेत्र में निवास किया जाता है, उस राजा की मृत्यु हो जाने से सज्योति अशौच और विवाहिता स्त्री के पिता के घर मृत्यु होने से, पिता को तीन दिन का अशौच होता है ।२४

परपूर्वासु भार्यासु पुत्रेषु कृतकेषु च ।
त्रिरात्रं स्यात्तथाचार्यस्वधार्यास्वन्यगासु च ॥२५

जो स्त्री पहले किसी दूसरे पुरुष की पत्नी थी, ऐसी स्त्री के कृतक पुत्र के, आचार्य और पर पुरुषगामिनी अपनी स्त्री की मृत्यु से तीन रात का सूतक होता है ।२५

आचार्यपुत्रे पत्न्याञ्च अहोरात्रमुदाहृतम् ।
एकाहं स्यादुपाध्याये स्वशास्रे श्रोत्रियेऽपि च ॥२६

आचार्यपुत्र और आचार्यपत्नी की मृत्यु से एक दिन और रात का तथा अपने गाँव में स्थित वेदज्ञ ब्राह्मण की मृत्यु से एक दिन का सूतक होता है ।२६

त्रिरात्रमसपिण्डेषु स्वगृहे संस्थितेषु च ।
एकाहं[1] चास्वबर्धे स्यादेकरात्रं तदिष्यते ॥२७

सपिण्डों के अपने घर में मृत्यु होने से तीन रात का, दूसरे गाँव में निवास करने वाले वेदज्ञ, ब्राह्मणों के अपने घर में मृत्यु होने से एक दिन का तथा शिष्य की मृत्यु से गुरु को एक रात का सूतक होता है ।२७

त्रिरात्रं श्वश्रूमरणात् श्वशुरे चैतदेव हि ।
सद्यःशौचं समुद्दिष्टं स्वगोत्रे संस्थिते सति ॥२८

सास और ससुर की मृत्यु से तीन रात का और सगोत्र की मृत्यु से सद्यःशौच होता है ।२८

शुद्ध्येद्विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः ।
वैश्यः पञ्चदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥२९

---

१. एकाहं च श्वशुर्ये इति, एकाहं वा श्वशुर्ये इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मण दस दिनों में, क्षत्रिय बारह, वैश्य पन्द्रह और शूद्र एक महीने में शुद्ध होते हैं ।२९

क्षत्रविट्शूद्रदायादा ये स्युर्विप्रस्य बान्धवाः ।
तेषामशौचे विप्रस्य दशाहाच्छुद्धिरिष्यते ॥३०

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र से उत्पन्न मित्रों के यहाँ सूतक हो जाने पर, ब्राह्मण की शुद्धि दस दिन में ही हो जाती है ।३०

राजन्यवैश्यावप्येवं हीनवर्णासु योनिषु ।
तमेव शौचं कुर्यातां विशुद्ध्यर्थमसंशयम् ॥३१

क्षत्रिय और वैश्यों को, हीनवर्णा स्त्री के गर्भ से उत्पन्न, पुत्र के जन्म या मृत्यु पर, अपने वर्ण में बताए गए नियमानुसार ही सूतक लगेगा, इसी में उनकी शुद्धि है ।३१

सर्वे तूत्तरवर्णानामशौचं[1] कुर्युरादृताः ।
तद्वर्णविधिदृष्टेन स्वन्तु शौचं स्वयोनिषु ॥३२

सभी वर्णों के लोग अपने वर्ण से श्रेष्ठ वर्ण वाले सपिण्ड के जन्म या मृत्यु के समय, उस (श्रेष्ठ) वर्ण में बताए गए नियमों के अनुसार, सावधानी पूर्वक सूतक का पालन करेंगे और अपने वर्ण के सपिण्ड के जन्म या मृत्यु पर अपने वर्ण में विहित सूतक का पालन करेंगे ।३२

षड्रात्रं तु त्रिरात्रं स्यादेकरात्रं क्रमेण तु ।
वैश्यक्षत्रियविप्राणां शूद्रेष्वाशौचमेव च ॥३३

शूद्र के यहाँ सूतक लगने पर वैश्यों को छः रात का, क्षत्रियों को तीन और ब्राह्मणों को एक रात का सूतक लगता है ।३३

अर्द्धमासोऽथ षड्रात्रं त्रिरात्रं द्विजपुंगवाः ।
शूद्रक्षत्रियविप्राणां वैश्यस्याशौचमेव च ॥३४

हे ब्राह्मणश्रेष्ठों ! वैश्य (सपिण्ड) के यहाँ सूतक लगने से, शूद्रों को आधे महीने (१५ दिन), क्षत्रियों को छः रात और ब्राह्मणों को तीन रात का सूतक लगता है ।३४

षड्रात्रं वै दशाहञ्च विप्राणां वैश्यशूद्रयोः ।
अशौचं क्षत्रिये प्रोक्तं क्रमेण द्विजपुङ्गवाः ॥३५

---

१. शौचं कुर्युरनर्चिताः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षत्रिय (सपिण्ड) के यहाँ सूतक लगने से ब्राह्मणों को छः रात का तथा वैश्यों और शूद्रों को दस दिनों का सूतक लगता है ।३५

शूद्रविट्क्षत्रियाणान्तु ब्राह्मणस्य[1] तथैव च ।
दशरात्रेण शुद्धिः स्यादित्याह कमलापतिः[2] ॥३६

कमलापति विष्णु के कथनानुसार, ब्राह्मण (सपिण्ड) के यहाँ सूतक लगने से, शूद्र, वैश्य और क्षत्रियों की दस रातों के बाद शुद्धि होती है ।३६

असपिण्डं द्विजं प्रेतं विप्रो निर्हृत्य बन्धुवत् ।
अशित्वा च सहोषित्वा दशरात्रेण शुद्ध्यति ॥३७

असपिण्ड मृत ब्राह्मण के शव को, यदि कोई ब्राह्मण, मित्रवत्– दहन-वहन करें और मृत ब्राह्मण के सपिण्डों का भोजन ग्रहण करके उसी घर में निवास करे, तो उस ब्राह्मण की शुद्धि दस रात्रियों के बाद होती हैं ।३७

यद्यन्नमत्ति तेषान्तु त्रिरात्रेण ततः शुचिः ।
अन्नदंस्त्वन्नमश्नन्तु न च तस्मिन् गृहे वसेत् ॥३८

यदि वह ब्राह्मण, असपिण्ड ब्राह्मण के घर का केवल अन्न ग्रहण करे, तो तीन रात के बाद शुद्धि होती है। यदि न अन्न ग्रहण करे और न उस घर में निवास करे, तो उसी दिन शुद्धि हो जाती है ।३८

सोदकेऽथ तदेव स्यान्मातुराप्तेषु बन्धुषु ।
दशाहेन शवस्पर्शी सपिण्डश्चैव शुद्ध्यति ॥३९

समानोदकों और माता के सम्बन्धियों का दहन-वहन करने से तीन रात्रियों के बाद और शव का स्पर्श करने वाले सपिण्डों को दस दिनों के बाद शुद्धि होती है ।३९

यदि निर्हरति प्रेतं लोभादाक्रान्तमानसः ।
दशाहेन द्विजः शुद्ध्येद्द्वादशाहेन भूमिपः ॥४०
अर्द्धमासेन वैश्यस्तु शूद्रो मासेन शुध्यति ।
षड्रात्रेणाथवा सर्वे त्रिरात्रेणाथवा पुनः ॥४१

लोभ के वशीभूत होकर शव का अन्त्येष्टि करने वाले ब्राह्मण दस दिन, क्षत्रिय बारह दिन, वैश्य आधे महीने (१५ दिन) और शूद्र एक महीने में शुद्ध होते हैं अथवा सभी लोग छः या तीन रात्रियों के बाद शुद्ध होते हैं ।४०-४१।

---

१. ब्राह्मणे संस्थिते सतीति पा० । ५. कमलोद्भवः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनाथञ्चैव निर्हृत्य ब्राह्मणं धनवर्जितम् ।
स्नात्वा सम्प्राश्य च घृतं शुध्यन्ति ब्राह्मणादयः ॥४२

अनाथ और निर्धन ब्राह्मण का वहन-वहन करने के बाद, स्नान करके, घी का सेवन कर लेने से सभी शुद्ध हो जाते हैं ।४२

अपरश्चेत् परं वर्णमपरञ्चापरे[1] यदि ।
अशौचे संस्पृशेत्स्नेहात्तदाशौचेन शुद्ध्यति ॥४३

उच्च वर्ण वाला यदि निम्न वर्ण वाले के शव को ढोता या आग देता है, तो उसे निम्न वर्ण में विहित सूतक के नियमों का पालन करना होगा । इसके विपरीत निम्न वर्ण का व्यक्ति, उच्च वर्ण के व्यक्ति का अन्त्येष्टि करता है, तो वह उच्च वर्ण में विहित सूतक के नियमों का पालन करेगा । अपवित्र व्यक्ति का स्पर्श करने से, स्नान के बाद शुद्धि हो जाता है ।४३

प्रेतीभूतं द्विजं विप्रो ह्यनुगच्छेत कामतः ।
स्नात्वा सचैलं स्पृष्ट्वाग्निं घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥४४

जो ब्राह्मण अपनी इच्छा से, मृत ब्राह्मण का अनुगमन करता है, वह सवस्त्र स्नान के बाद, अग्नि का स्पर्श कर, घी पीने से शुद्ध होता है ।४४

एकाहात्क्षत्रिये शुद्धिर्वैश्ये स्याच्च द्व्यहेन तु ।
शूद्रे दिनत्रयं प्रोक्तं प्राणायामशतं पुनः ॥४५

शव के पीछे-पीछे जाने से क्षत्रिय एक दिन, वैश्य दो दिन और शूद्र तीन दिन के बाद शुद्ध होंगे, परन्तु उन सभी को सौ बार प्राणायाम करना होगा ।४५

अनस्थिसञ्चिते शूद्रे रौति चेद्ब्राह्मणः स्वकैः ।
त्रिरात्रं स्यात्तथा शौचमेकाहं त्वन्यथा स्मृतम् ॥४६

यदि ब्राह्मण, शूद्र के घर जाकर, अस्थि चयन से पहले रोता है, तो तीन रात का और किसी दूसरे स्थान पर रोता है तो एक दिन का सूतक होता है ।४६

अस्थिसञ्चयनादर्वागेकाहः क्षत्रवैश्ययोः ।
अन्यथा चैव सज्योतिर्ब्राह्मणे स्नानमेव तु ॥४७

अस्थि चयन से पहले, क्षत्रिय या वैश्य, किसी शूद्र के घर जाकर रुदन करें, तो एक दिन का और किसी दूसरे स्थान पर रुदन करने से सज्योति अशौच होता है । ब्राह्मण के अस्थि चयन से पहले, यदि वैश्य और शूद्र इस प्रकार रोएँ, तो मात्र स्नान से ही उनकी शुद्धि हो जाती है ।४७

---

१. अधरञ्चाधर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनस्थिसञ्चिते विप्रो ब्राह्मणो रौति चेत्तदा ।
स्नानेनैव शवेच्छुद्धिः सचैलेनात्र संशयः ॥४८

ब्राह्मण के अस्थिचयन से पहले, यदि कोई दूसरा ब्राह्मण उसके घर जाकर रोता है, तो वस्त्र पहनकर स्नान करने से उसकी शुद्धि हो जाती है ।४८

यस्तैः सहाशनं कुर्याच्छयनादीनि चैवहि ।
बान्धवो वापरो वापि स दशाहेन शुध्यति ॥४९

कोई व्यक्ति अशौची व्यक्ति के साथ, प्रत्यक्ष रूप से भोजन और शयन करता है, वह यदि सम्बन्धी हो या न हो, उसे उस दिन का सूतक मानकर, तब शुद्ध होना पड़ेगा ।४९

यस्तेषां सममश्नाति सकृदेवापि कामतः ।
तदाशौचे निवृत्तेऽसौ स्नानं कृत्वा विशुध्यति ॥५०

जो व्यक्ति जानबूझकर अशौची के साथ एक बार भोजन कर लेता है, वह अशौच की अवधि पूरी होने के बाद, स्नान करके शुद्ध होता है ।५०

यावत्तदन्नमश्नाति दुर्भिक्षाभिहतो[1] नरः ।
तावन्त्यहान्यशौचं स्यात्प्रायश्चित्तं ततश्चरेत्[2] ॥५१

दुर्भिक्षपीड़ित व्यक्ति[1] जितने दिनों तक किसी अशौची का अन्न खाएगा, उसे उतने दिनों का अशौच होगा और अशौच की अवधि समाप्त हो जाने के बाद, उसे प्रायश्चित्त भी करना पड़ेगा ।५१

दाहाद्यशौचं कर्त्तव्यं द्विजानामग्निहोत्रिणाम् ।
सपिण्डानाञ्च मरणे मरणादितरेषु च ॥५२

अग्निहोत्री ब्राह्मणों के मृत्यु पर शवदाह होने तक सूतक रहता है । सपिण्डों के जन्म और मृत्यु पर सूतक का पालन करना पड़ता है ।५२

सपिण्डता च पुरुषे सप्तमे विनिवर्त्तते ।
समानोदकभावस्तु जन्मनाम्नोरवेदने ॥५३

सात पीढ़ी बीत जाने से सपिण्डता समाप्त हो जाती है तथा (अपने वंश के) किस पुरुष की सन्तान है, इसकी जानकारी न होने से या नाम न जानने से, समानोदकता समाप्त हो जाती है ।५३

---

१. दुर्भिक्षोपहतः इति पा० । २. ततः स्मरेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः ।
लेपभाजस्त्रयो ज्ञेयाः सापिण्ड्यं साप्तपौरुषम् ॥५४

पिता, पितामह, प्रपितामहादि लेपभोजी तीन जनों की सात पीढ़ियों में सपिण्डता होती है ।५४

अप्रत्तानां तथा स्त्रीणां सापिण्ड्यं साप्तपौरुषम् ।
तासान्तु भर्तृसापिण्ड्यं प्राह देवः पितामहः ॥५५

देव पितामह के अनुसार अविवाहिता कन्या की सपिण्डता सात पीढ़ियों में और विवाहिता कन्या की सपिण्डता पति के कुल में होती है ।५५

ये चैकजाता बहवो भिन्नयोनय एव च ।
भिन्नवर्णास्तु सापिण्ड्यं भवेत्तेषां त्रिपूरुषम् ॥५६

किसी व्यक्ति की भिन्न वर्ण की पत्नी से उत्पन्न पुत्रों की सपिण्डता तीन पीढ़ियों तक रहती है ।५६

कारवः शिल्पिनो वैद्या दासीदासास्तथैव च ।
दातारो नियमाच्चैव ब्रह्मविद्ब्रह्मचारिणौ ।
सत्त्रिणो व्रतिनस्तावत्सद्यःशौचमुदाहृतम् ॥५७

कारीगर, शिल्पी, वैद्य, दासी, दास, दाता, नियमों के प्रति अनुरक्त, ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मचारी, यज्ञ करने वाले और व्रतानुचारियों को सद्यःशौच होता है ।५७

राजा चैवाभिषिक्तश्च अन्नसत्रिण एव च ।
यज्ञे विवाहकाले च दैवयागे तथैव च ।
सद्यः शौचं समाख्यातं दुर्भिक्षे चाप्युपप्लवे ॥५८

राजा, अभिषिक्त व्यक्ति और अन्नदाताओं को, आरब्ध यज्ञ, आरब्ध विवाह और आरब्ध देवपूजा में, दुर्भिक्ष तथा नगर या गाँवों में आने वाली आकस्मिक आपदाओं में, सद्यः शौच होता हैं ।५८

डिंबाहवहतानाञ्च सर्पादिमरणेऽपि[1] च ।
सद्यः शौचं समाख्यातं स्वज्ञातिमरणे[2] तथा ॥५९

भ्रूण हत्या होने पर, युद्ध में मरने से अथवा विद्युत, राजा, पक्षी और साँप के के द्वारा मृत्यु हो जाने पर सद्यःशौच होता है ।५९

---

१. विद्युता पार्थिवैर्द्विजैरिति पा० । २. सर्पादिमरणे तथा इति पा ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निमरुत्प्रपतने वीराध्वन्यप्यनाशके ।
गोब्राह्मणार्थे संन्यस्ते सद्यःशौचं विधीयते ॥६०

अग्नि या हवा से मृत्यु होने पर, दुर्गम मार्ग में जाते हुए या अनशन करते हुए मृत्यु हो जाने से, गाय और ब्राह्मण के लिए मृत्यु होने पर और संन्यास धारण करने के बाद मृत्यु हो जाने से सद्यःशौच होता है ।६०

नैष्ठिकानां वनस्थानां यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ।
नाशौचं कीर्त्यते सद्भिः पतिते च तथा मृते ॥६१

साधुजनों ने नैष्ठिक ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, संन्यासी, उपकुर्वाण ब्रह्मचारी और पतितों की मृत्यु हो जाने से, होने वाले अशौच का कोई उल्लेख नहीं किया है ।६१

पतितानां न दाहः स्यान्नान्त्येष्टिर्नास्थिसञ्चयः ।
नाश्रुपातो न पिण्डो वा कार्यं श्राद्धादिकं क्वचित् ॥६२

पतियों की मृत्यु हो जाने से दाह क्रिया, अन्त्येष्टि और अस्थिचयनादि कर्म नहीं किए जाते, इसके अतिरिक्त अश्रुपात, पिण्डदान और श्राद्धादि भी वर्जित है ।६२

व्यापादयेत्तथात्मानं स्वयं योऽग्निविषादिभिः ।
विहितं तस्य नाशौचं नाग्निर्नाप्युदकादिकम् ॥६३

जो व्यक्ति अग्नि या विष के द्वारा स्वेच्छा से अपनी आत्मा को नष्ट करता है, उसके लिए अशौच, अग्नि-संस्कार या जल पिण्डदानादि कार्यों का विधान नहीं है ।६३

अथ किञ्चित्प्रमादेन म्रियतेऽग्निविषादिभिः ।
तस्याशौचं विधातव्यं कार्यञ्चैवोदकादिकम् ॥६४

यदि असावधानी के कारण, किसी की मृत्यु, अग्नि वा विष के द्वारा हो जाती है, तो उसके लिए श्राद्ध करना चाहिए तथा ऐसे मृतकों के लिए अशौच का विधान भी है ।६४

जाते कुमारे तदहः कामं कुर्यात्प्रतिग्रहम् ।
हिरण्यधान्यगोवाससस्तिलांश्च गुडसर्पिषा ॥६५

पुत्र उत्पन्न होने पर, उस दिन सोना, वस्त्र, गाय, धान्य, तिल, अन्न, गुड़ और घी, इन सभी वस्तुओं का दान इच्छानुसार ग्रहण करना चाहिए ।६५

फलानि पुष्पं शाकञ्च लवणं काष्ठमेव च ।
तक्रं दधि घृतं तैलमौषधं क्षीरमेव च ।
आशौचिनो गृहाद्ग्राह्यं शुष्कान्नञ्चैव नित्यशः ॥६६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशौची व्यक्ति से प्रतिदिन फल, फूल, साग, नमक, लकड़ी, जल, दही, घी, तेल, औषधि, दूध और सूखा अन्न लिया जा सकता है।६६

आहिताग्निर्यथान्यायं दग्धव्यस्त्रिभिरग्निभिः।
अनाहिताग्निर्गृह्येण लौकिकेनेतरो जनः ॥६७

अग्निहोत्री ब्राह्मण का दाह संस्कार, शास्त्रों के अनुसार, तीन प्रकार की अग्नि से करना चाहिए। अग्निहोत्री ब्राह्मण को गृह्योक्त विहित अग्नि से तथा दूसरों को लौकिक अग्नि से जलाना चाहिए।६७

देहाभावात्पलाशैस्तु कृत्वा प्रतिकृतिं पुनः।
दाहः कार्यो यथान्यायं सपिण्डैः श्रद्धयान्वितैः ॥६८

मृतदेह के अभाव में, मरे हुए व्यक्ति की प्रतिमूर्ति, पलाश के पत्तों से बनाकर, सपिण्डों को श्रद्धापूर्वक, नियमानुसार उस प्रतिमूर्ति का दाह संस्कार सम्पन्न करना चाहिए।६८

सकृत्प्रसिञ्चेदुदकं नामगोत्रेण वाग्यतः।
दशाहं बान्धवाः श्राद्धं सर्वे चैव[1] सुसंयताः ॥६९

सभी सम्बन्धियों को, निरन्तर दस दिनों तक, गीले वस्त्र में, वाणी पर नियन्त्रण रखकर, नामगोत्र का उच्चारण करते हुए, एक बार तर्पण करना चाहिए।६९

पिण्डं प्रतिदिनं दद्युः सायं प्रातर्यथाविधि।
प्रेताय च गृहद्वारि चतुर्थे भोजयेद्द्विजान् ॥७०
द्वितीयेऽहनि कर्त्तव्यं क्षुरकर्म सबान्धवैः।
चतुर्थे बान्धवैः सर्वैरस्थ्नां सञ्चयनं भवेत्।
पूर्वान्प्रयुञ्जयेद्विप्रान्[2] युग्मान् सुश्रद्धया शुचीन् ॥७१
पंचमे नवमे चैव तथैवैकादशेऽहनि।
युग्मांश्च भोजयेद्विप्रान्नवश्राद्धन्तु तद्द्विजाः ॥७२
एकादशेऽह्नि कुर्वीत प्रेतमुद्दिश्य भावतः।
द्वादशे वाह्नि कर्त्तव्यं नवमेऽप्यथवाहनि[3]।
एकं पवित्रमेकोऽर्घः पिंडपात्रं तथैव च ॥७३

---

१. चैवार्द्रवाससः इति पा०। २. पूर्वन्तु भोजयेद्विप्रानिति पा०। प्रयुंजयेत्—प्रयोजयेत् आर्षः प्रयोगः। ३. अनिन्द्ये स्वथवाहनि इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं मृताह्नि कर्त्तव्यं प्रतिमासन्तु वत्सरम् ।
सपिण्डीकरणं प्रोक्तं पूर्णे संवत्सरे पुनः ॥७४

प्रतिदिन, प्रातः और सायंकाल, घर के बाहर प्रेत के नाम पर पिण्डदान करना चाहिए, चौथे दिन ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए, दूसरे दिन सगे सम्बन्धियों के साथ क्षौर कर्म और चौथे दिन अस्थि चयन करना चाहिए। एक जोड़ा अर्थात् दो पवित्र ब्राह्मणों को पूर्वाभिमुख बैठाकर श्रद्धापूर्वक भोजन कराना चाहिए और मृत्यु के पांचवें नौवें और ग्यारहवें दिन एक ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए, इसीका नाम नवश्राद्ध है। ग्यारहवें, बारहवें या नवें दिन प्रेत को उद्देश्य कर श्राद्ध करना चाहिए। इस श्राद्ध में एक पवित्री, एक अर्घ्य और एक पिण्ड देना चाहिए। इस प्रकार प्रति महीने और प्रतिवर्ष, मृत्यु के दिन श्राद्ध करना चाहिए तथा एक वर्ष पूरा हो जाने पर सपिण्डीकरण किया जाता है ।७०-७४।

कुर्याच्चत्वारि पात्राणि प्रेतादीनां द्विजोत्तमाः ।
प्रेतार्थे पितृपात्रेषु पात्रमासेचयेत्ततः ॥७५

प्रेत, पितामह, प्रपितामह और वृद्धपितामह के प्रति, एक-एक कर, चार अर्घ्य पात्र तैयार करना चाहिए ।७५

ये समाना इति द्वाभ्यां पिण्डानप्येवमेव हि ।
सपिण्डीकरणश्राद्धं देवपूर्वं विधीयते ॥७६

'ये समानाः', इन दो मन्त्रों का उच्चारण कर, पितामह, प्रपितामह और वृद्धप्रपितामह के पात्र में प्रेतार्घ्य और प्रेतपिण्ड मिला, पहले देवश्राद्ध करने के बाद सपिण्डी-करण श्राद्ध करना चाहिए ।७६

पितॄनावाहयेत्तत्र पुनः प्रेतं विनिर्दिशेत् ।
ये सपिण्डीकृताः प्रेता न तेषां स्युः प्रतिक्रियाः ।
यस्तु कुर्यात्पृथक् पिण्डं पितृहा सोऽभिजायते ॥७७

तत्पश्चात् पितामहों का आवाहन करने के बाद, प्रेत का आह्वान करना चाहिए। जिन प्रेतों का सपिण्डीकरण श्राद्ध हो चुका है, उनसे सम्बन्धित कोई भी कार्य प्रेतपद उल्लिखित कर नहीं करना चाहिए। जो व्यक्ति सपिण्डीकृत प्रेत का कार्य प्रेतपद उल्लिखित कर करता है, उसे पितृहत्या का पाप लगता है ।७७

मृते पितरि वै पुत्रः पिण्डानब्दं[1] समावसेत् ।
दद्याच्चान्नं सोदकुम्भं प्रत्यहं प्रेतधर्मतः ॥७८

---

१. पिण्डमब्दं समाचरेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिता की मृत्यु हो जाने से, पुत्र एक साल तक पिण्डदान करेगा और सालभर तक प्रतिदिन प्रेतधर्मानुसार अम्बुघट श्राद्ध करेगा।७८

पार्वणेन विधानेन सांवत्सरिकमिष्यते ।
प्रतिसंवत्सरं कुर्याद्विधिरेष सनातनः ॥७९

प्रतिवर्ष पार्वणविधान के अनुसार सांवत्सरिक श्राद्ध करना चाहिए, यही सनातन विधि है ।७९

मातापित्रोः सुतैः कार्यम्पिण्डदानादिकं च यत् ।
पत्नी कुर्यात्सुताभावे पत्न्यभावे तु सोदरः ८०॥

माता-पिता के पिण्डदानादि सारे कर्म पुत्र करेगा, पुत्र के अभाव में पत्नी और पत्नी के अभाव में सहोदर भाई करेगा।८०

अनेनैव विधानेन जीवः श्राद्धं समाचरेत् ।
कृत्वा दानादिकं सर्वं श्रद्धायुक्तः समाहितः ॥८१

सभी मनुष्यों को एकाग्रचित्त होकर, श्रद्धापूर्वक दान देकर, पूर्वोक्त नियमानुसार श्राद्ध करना चाहिए।८१

एष वः कथितः सम्यग्गृहस्थानां क्रियाविधिः ।
स्त्रीणां भर्तृषु शुश्रूषा धर्मो नान्य इहोच्यते ॥८२

मैंने सम्यक् रूप से, गृहस्थों की क्रियाविधि आपलोगों को बता दी है। परन्तु स्त्रियों के लिए पति सेवा से भिन्न कोई धर्म नहीं है ८२

स्वधर्मतत्परा नित्यमीश्वरार्पितमानसाः ।
प्राप्नुवन्ति[1] परं स्थानं यदुक्तं वेदवादिभिः ॥८३

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु श्राद्धकल्पे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

अपने धर्म में तत्पर रहने वाले और सदैव ईश्वरार्पित चित्त वाले लोग, वेदवक्ताओं द्वारा बताए गए उत्कृष्ट स्थान को प्राप्त करते हैं।८३

श्री कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में श्राद्धकल्प नामक तेईसवाँ अध्याय समाप्त ।२३।

---

१. प्राप्नोति तत्परमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्विंशोऽध्यायः

द्विजानामग्निहोत्रादिकृत्यम्

व्यास उवाच

अग्निहोत्रन्तु जुहुयात्सायम्प्रातर्यथाविधि[1] ।
दर्शे[2] चैव हि तस्यान्ते नवसस्ये तथैव च ॥१

इष्ट्वा[3] चैव यथान्यायमृत्वन्ते च द्विजोऽध्वरः ।
पशुना त्वयनस्यान्ते समान्ते सोऽग्निकैर्मखैः ॥२

व्यास बोले—प्रातः और सायंकाल विधि के अनुसार अग्निहोत्र यज्ञ करना चाहिए । कृष्णपक्ष के अन्त में (अमावस में) दर्श और शुक्लपक्ष के अन्त में (पूर्णिमा में) पौर्णमास नामक यज्ञ करना चाहिए । नई फसल कटने पर ब्राह्मण उससे यज्ञ करेगें । ऋतु के समाप्त होने पर चातुर्मास, अयन के अन्त में पशु यज्ञ और साल के अन्त में, सोमरस से सम्पन्न होने वाले अग्निष्टोमादि यज्ञ करने चाहिए ।१–२।

नानिष्ट्वा नवस्येष्ट्या पशुना वाग्निमान्द्विजः ।
न चान्नमद्यन्मांसं वा दीर्घमायुर्जिजीविषुः ॥३

दीर्घायु प्राप्त करने के अभिलाषी अग्निहोत्री ब्राह्मण नवशस्येष्टि और पशु यज्ञ किए बिना अन्न या मांस भक्षण नहीं करेंगे ।३

नवेनान्नेन चानिष्ट्वा पशुहव्येन चाग्नयः ।
प्राणानेवात्तुमिच्छन्ति नवान्नामिषगृद्धिनः ॥४

जो व्यक्ति नई फसल या पशु से यज्ञ किए बिना, अन्न या मांस भक्षण करते हैं, वे अपने प्राण को ही खाने की इच्छा करते हैं ।४

सावित्रान्शान्तिहोमांश्च कुर्यात्पर्वसु नित्यशः ।
पितॄंश्चैवाष्टकाः सर्वे नित्यमन्वष्टकासु च ॥५

प्रत्येक पर्व पर सावित्री और शान्ति हवन तथा सभी को अष्टक या अन्वष्टक में, पितरों के लिए नित्य श्राद्ध करना चाहिए ।५

---

१. आद्यन्तेऽहर्निशोः सदा इति, आद्यन्ते ह्यनिशं सदा इति पा० । २. दर्शेन चैव पक्षान्ते पौर्णमासेन चैव हि इति, दर्शेन चार्द्धमासान्ते पौर्णमासेन चैव हि इति पा० । ३. सस्यान्ते नवसस्येन तथत्वंन्ते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एष धर्मः परो नित्यमपधर्मोऽन्य उच्यते ।
त्रयाणामिह वर्णानां गृहस्थाश्रमवासिनाम् ॥६

तीनों वर्गों (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) के गृहस्थों के लिए, ये सत्य नित्य और श्रेष्ठ धर्म हैं तथा दूसरे कार्य अधर्म कहे जाते हैं ।६

नास्तिक्यादथवालस्याद्योऽग्नीन्नाधातुमिच्छति ।
यजेत वा न यज्ञेन स याति नरकान् बहून् ॥७

नास्तिक होने या आलस के कारण, जो अग्निहोत्री ब्राह्मण अग्न्याधान या यज्ञ नहीं करता, उसे अनेको नरक भोगने पड़ते हैं ।७

(तामिस्रमन्धतामिस्रं महारौरवरौरवौ ।
कुम्भीपाकं वैतरणीमसिपत्रवनं तथा ।
आन्यांश्च नरकान् घोरान् सम्प्राप्नोति सुदुर्मतिः ।
अन्त्यजानां कुले विप्राः शूद्रयोनौ च जायते ।)
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन ब्राह्मणो हि विशेषतः ।
आधायाग्निं विशुद्धात्मा यजेत परमेश्वरम् ॥८

विप्रगण ! दुष्टबुद्धि व्यक्ति तामिस्र, अन्धतामिस्र, महारौरव, रौरव, कुम्भीपाक वैतरणी, असिपत्रवन तथा अन्य नरकों में गिरता है। नरकभोग के बाद वह चाण्डालों एवं शूद्रयोनि में जन्म लेता है ।) इसीलिए ब्राह्मण को अत्यन्त यत्न के साथ अग्न्याधान करके, पवित्रात्मा होकर, परमेश्वर की पूजा करनी चाहिए ।८

अग्निहोत्रात्परो धर्मो द्विजानां नेह विद्यते ।
तस्मादाराधयेन्नित्यमग्निहोत्रेण शाश्वतम् ॥९

ब्राह्मणों के लिये अग्निहोत्र से बढ़कर, दूसरा कोई श्रेष्ठ धर्म नहीं है, इसीलिये उन्हें निरन्तर अग्निहोत्र के द्वारा ईश्वर की आराधना करनी चाहिये ।९

यस्त्वाध्यायाग्निमांश्च स्यान्न यष्टुं देवमिच्छति ।
स संमूढो न सम्भाष्यः किं पुनर्नास्तिको जनः ॥१०

जो व्यक्ति अग्निहोत्री होकर भी, बाद में आलस के कारण अग्निहोत्र यज्ञ नहीं करता, उसके साथ वार्तालाप नहीं करना चाहिये, उससे बढ़कर नास्तिक, कोई दूसरा नहीं होता ।१०

यस्य त्रैवार्षिकं भक्तं पर्याप्तं भृत्यवृत्तये ।
अधिकं[1] वा भवेद्यस्य स सोमं पातुमर्हति ॥११

जिस व्यक्ति के पास तीन साल तक अपने आश्रितों का पेट भरने की सामग्री हो अथवा इससे अधिक हो, वही सोमयज्ञ कर सकता है ।११

१. अधिकञ्चाथ विद्येत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एष वै सर्वयज्ञानां सोमः प्रथम इष्यते ।
सोमेनाराधयेद्देवं सोमलोकमहेश्वरम् ॥१२

सभी यज्ञों में सोमयज्ञ, अत्यन्त श्रेष्ठ यज्ञ के नाम से जाना जाता है। इसके द्वारा सोमयज्ञ में स्थित महेश्वर की आराधना करनी चाहिये।१२

न सोमयागादधिको महेशाराधनात्ततः ।
न सोमो विद्यते तस्मात्सोमेनाभ्यर्च्चयेत्परम् ॥१३

महादेव की आराधना के लिए सोमयज्ञ से श्रेष्ठ या उसके समान कोई दूसरा यज्ञ नहीं होता, इसलिए इस यज्ञ के द्वारा, उस श्रेष्ठतम महादेव की आराधना करनी चाहिये।१३

पितामहेन विप्राणामादाय[1] विहितः पशुः ।
धर्मो विमुक्तये साक्षाच्छ्रौतः स्मार्त्तो भवेत्पुनः ॥१४

पितामह, (ब्रह्मा) ने, ब्राह्मणों की मुक्ति के लिये, जिस श्रेष्ठ धर्म का वर्णन पहले किया था, वह श्रौत और स्मार्त भेद से दो प्रकार का होता है।१४

श्रौतस्त्रेताग्निसम्बन्धात् स्मार्त्तः पूर्वं मयोदितः ।
श्रेयस्करतमः श्रौतस्तस्माच्छ्रौतं समाचरेत् ॥१५

श्रौत धर्म त्रेताग्नि से सम्बन्धित होता है और स्मार्त धर्म का वर्णन मैंने पहले कर दिया है। श्रौत धर्म अत्यन्त कल्याणकारी है, अतः उसी का पालन करना चाहिये।१५

उभावपि हितौ धर्मौ वेदवेदविनिःसृतौ ।
शिष्टाचारस्तृतीयः स्याच्छ्रुतिस्मृत्योरभावतः[2] ॥१६

दोनों प्रकार के धर्म वेद से उत्पन्न होने के कारण श्रेयस्कर है। श्रुति और स्मृति के अभाव में शिष्टजनों के द्वारा किया गया आचरण, तीसरा धर्म जानो।१६

धर्मेणाधिगतो यैस्तु वेदः सपरिबृंहणः ।
ते शिष्टा ब्राह्मणाः प्रोक्ताः नित्यमात्मगुणान्विताः ॥१७

जिन्होने धर्मानुसार, विस्तृत वेदों का अध्ययन किया हो, ऐसे आत्मगुणों से युक्त ब्राह्मणों को शिष्ट कहा गया है।१७

तेषामभिमतो यः स्याच्चेतसा नित्यमेव हि ।
स धर्मः कथितः सद्भिर्नान्येषामिति धारणा ॥१८

---

१. आदावभिहितः शुभः इति पा०। २. अलाभतः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके विचारों के अनुरूप जो कुछ भी हो, उसे विद्वानों ने धर्म कहा है, किन्तु दूसरों के द्वारा किया गया आचण धर्म नहीं है, यही धारणा प्रचलित है ।१८

पुराणं धर्मशास्त्राणि वेदानामुपबृंहणम् ।
एकस्माद्ब्रह्मविज्ञानं धर्मज्ञानं तथैकतः ॥१९

पुराण और धर्मशास्त्र वेदों का विस्तार हैं । इनमे से एक (पुराण) से ब्रह्मविज्ञान और दूसरे (धर्मशास्त्र) से धर्म ज्ञान बना । १९

धर्मं जिज्ञासमानानां तत्प्रमाणतरं स्मृतम् ।
धर्मशास्त्रं पुराणानि ब्रह्मज्ञानेतराश्रमम्[1] ॥२०

जो धर्म के विषय में जानना चाहते हैं, उनके लिए धर्मशास्त्र उत्कृष्ट प्रमाण है और ब्रह्मज्ञानपरायणों के लिए पुराण श्रेष्ठ प्रमाण हैं ।२०

नान्यतो जायते धर्मो ब्राह्मी विद्या च वैदिकी ।
तस्माद्धर्मं पुराणं च श्रद्धातव्यं मनीषिभिः ॥२१

धर्मशास्त्र और पुराण के अतिरिक्त किसी अन्य साधन से, धर्म और वेदविहित ब्रह्मविद्या का ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता, इसीलिए विद्वानों को धर्मशास्त्र और पुराण के प्रति श्रद्धालु होना चाहिए ।२१

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु द्विजानामग्निहोत्रादि-कृत्यनिरूपणं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में, ब्राह्मणों के अग्निहोत्रादि कर्मनिरूपण नामक चौबीसवाँ अध्याय समाप्त ।२४।

---

१. ब्रह्मज्ञानपरायणा इति पा० धर्मं जिज्ञासमानानामित्यादि श्लोकद्वयं पुस्तके श्लोकत्रयात् प्रागेव दृश्यते ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चविंशोऽध्यायः

द्विजातीनां वृत्तिः

व्यास उवाच

एष वोऽभिहितः कृत्स्नो गृहस्थाश्रमवासिनः ।
द्विजातेः परमो धर्मो वर्त्तनानि निबोधत ॥१

व्यास बोले—गृहस्थाश्रम में निवास करने वाले द्विजातियों के परम धर्मका का वर्णन मैंने कर दिया है, अब मैं आपलोगों के करने योग्य कर्मों के विषय में बताने जा रहा हूँ ।१

द्विविधस्तु गृही ज्ञेयः साधकश्चाप्यसाधकः ।
अध्यापनं याजनं च पूर्वस्याहुः प्रतिग्रहम् ।
कुसीदकृषिवाणिज्यं प्रकुर्वन्तः स्वयं कृतम् ॥२

साधक और असाधक दो प्रकार के गृहस्थ होते हैं। इनमें से साधक गृहस्थ जीविकोपार्जन के लिए अध्यापन, यज्ञ और दान ग्रहण कर सकते हैं। ये अपने लिए सूदखोरी का काम, कृषि और व्यापार भी कर सकते हैं ।२

कृषेरभावे वाणिज्यं तदभावे कुसीदकम् ।
आपत्कल्पस्त्वयं ज्ञेयः पूर्वोक्तो मुख्य इष्यते ॥३

कृषि के आभाव में व्यापार और व्यापार के अभाव में सूद का काम किया जाना चाहिए। आपत्काल में ही इन तीन व्यापारों को अपनाना चाहिए अन्यथा पूर्वोक्त (अध्यापन, याजन और दान) जीविकोपार्जन के साधनों को ही मुख्य जानों ।३

स्वयं वा कर्षणाकुर्याद्वाणिज्यं वा कुसीदकम् ।
कष्टा पापीयसी वृत्तिः कुसीदं तद्विवर्ज्जयेत् ॥४

अथवा स्वयं कृषि, व्यापार या सूदखोरी का काम करना चाहिए। सूदखोरी की जीविका बहुत पापजनक होती हैं, इसीलिए उसका त्याग करना ही उचित है ।४

क्षात्रवृत्तिं परां प्राहुर्न स्वयं कर्षणं द्विजैः ।
तस्मात्क्षात्रेण वर्त्तेत वर्ततेऽनापदि द्विजः ॥५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वानों ने ब्राह्मणों के लिए, स्वयं कृषि कर्म करने की अपेक्षा, क्षत्रिय वृत्ति अपनाने को श्रेष्ठ माना है। इसलिए आपत्काल में, ब्राह्मण यदि क्षत्रिय वृत्ति को अपनाता है तो वह पतित नहीं होता।५

तेन चावाप्यजीवंस्तु वैश्यवृत्तिः कृषिं व्रजेत्।
न कथंचन कुर्वीत ब्राह्मणः कर्म कर्षणम् ॥६

यदि ब्राह्मण क्षत्रिय वृत्ति नहीं ग्रहण कर पाता, तो वैश्य वृत्ति ग्रहण कर लेना चाहिए, परन्तु स्वयं कृषि कार्य नहीं करना चाहिए।६

लब्धलाभः पितॄन्देवान् ब्राह्मणांश्चापि पूजयेत्।
ते तृप्तास्तस्य तं दोषं शमयन्ति न संशयः ॥७

लाभ होने से पितरों, देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। इसमें कोई संशय नहीं कि, ये लोग तृप्त होकर (कृषि कर्म के कारण उत्पन्न) सारे दोष नष्ट कर देते हैं।७

देवेभ्यश्च पितृभ्यश्च दद्याद्भागन्तु विंशकम्।
त्रिंशद्भागं ब्राह्मणानां कृषिं कुर्वन्न दुष्यति ॥८

उपार्जित वस्तु के बीसवें भाग से, देवताओं और पितरों को एक भाग तथा बसवें भाग से ब्राह्मणों को एक भाग देने से, कृषि कर्म में दोष नहीं लगता।८

वाणिज्ये द्विगुणं दद्यात् कुसीदी त्रिगुणं पुनः।
कृषिपालान्न दोषेण युज्यते नात्र संशयः ॥९

कृषि की तुलना में, व्यापार से हुए लाभ में दुगुना और सूदखोरी में तिगुना देना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि, इस प्रकार भाग देने से, इन कार्यों में दोष नहीं लगता।९

शिलोञ्छं[1] वाप्याददीत गृहस्थः साधकः पुनः।
विद्याशिल्पादयस्त्वन्ये बहवो वृत्तिहेतवः ॥१०

साधक गृहस्थ शिलोञ्छ वृत्ति भी ग्रहण कर सकता है। उसके लिए विद्या शिल्पादि अन्य और भी बहुत से जीविकोपार्जन के साधन हैं।१०

असाधकस्तु यः प्रोक्तो गृहस्थाश्रमसंस्थितः।
शिलोञ्छे तस्य कथिते द्वे वृत्ती परमर्षिभिः ॥११

असाधक गृहस्थों के लिए, ऋषियों ने, शिल और उञ्छ दो जीविकायें बताई हैं।११

---

१. शिलोञ्छनमाददीतेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृतेनाथवा जीवेन्मृतेनाप्यथवा यदि ।
अयाचितं स्यादमृतं मृतं भैक्षन्तु याचितम् ॥१२

अथवा अमृत के द्वारा या आपत्काल में मृत के द्वारा जीविका निर्वाह कर सकते हैं। बिना माँगी हुई वस्तु अमृत और भिक्षा में प्राप्त वस्तु मृत होती है।१२

कुशूलधान्यको वा स्यात्कुम्भीधान्यक एव च ।
त्र्यह्निको वापि च श्वेदश्वस्तनिक एव च ॥१३

कुशूल्यधान्यक (संचित अन्न से तीन साल तक या उससे अधिक जीविका निर्वाह करने वाला) कुम्भीधान्यक (संचित अन्न से एक साल तक जीविका निर्वाह करने वाला) अथवा त्र्यह्निक (संचित अन्न से तीन दिन तक सपरिवार पेट भरने वाला) अथवा अश्वस्तनिक (आने वाले कल को पेट भरने के लिए जिसके पास अंशमात्र भी अन्न संचित न हो) होना चाहिए।१३

चतुर्णामपि वै तेषां द्विजानां गृहमेधिनाम् ।
श्रेयान्परः परो ज्ञेयो धर्मतो लोकजित्तमः ॥१४

कुशूलधान्यादि तीन प्रकार, संचयी और असंचयी एक प्रकार, ऐसे चार प्रकार के गृहस्थ ब्राह्मणों में, उत्तरोत्तर को श्रेष्ठ जानो। क्योंकि धर्मानुसार ये परलोक में श्रेष्ठ लोकजयी होते हैं।१४

षट्कर्मको भवेत्तेषां त्रिभिरन्यः प्रवर्त्तते ।
द्वाभ्यामेकश्चतुर्थस्तु ब्रह्मराद्धेन जीवति ॥१५

(बड़े परिवार वाले) गृहस्थ ब्राह्मण, छः जीविकाओं ऋत, अयाचित, भिक्षा, कृषि, व्यापार और सूदखोरी) के द्वारा, दूसरे (उससे छोटे परिवार वाले) ब्राह्मण तीन जीविकाओं (याजन, अध्यापन और दान) के द्वारा, तीसरे (उनसे भी छोटे परिवार वाले ब्राह्मण) प्रकार के ब्राह्मण दो कर्मों (अध्यापन और याजन) से तथा चौथे प्रकार के ब्राह्मण केवल एक (अध्यापन) जीविका के द्वारा अपने परिवार का पालन पोषण करेंगे।१५

वर्त्तयंस्तु शिलोञ्छाभ्यामग्निहोत्रपरायणः ।
इष्टिः पार्वायणान्ता याः केवला निर्वपेत्सदा ॥१६

शिल और उञ्छ वृत्ति के द्वारा जीविकोपार्जन करने वाले ब्राह्मण, यदि धन से सम्पन्न होने वाले पुण्यकर्मों को करने में अक्षम हों, तो उसे केवल अग्निहोत्र परायण होना चाहिए और पर्व तथा अयन के अन्त से सम्पन्न होने वाले यज्ञों को करना चाहिए।१६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न लोकवृत्तं वर्त्तेत वार्त्तान्ते[1] वृत्तिहेतवे ।
अजिह्मामशठां शुद्धां जीवेद्ब्राह्मणजीविकाम् ॥१७

जीविकोपार्जन के लिए लोकवृत्ति का अनुसरण नहीं करना चाहिए। जीविका का जो साधन अहंकार और छल से शून्य हो, सरल हों, जिसमें लेशमात्र भी कुटिलता न हो और जो अत्यन्त शुद्ध हो गृहस्थ ब्राह्मण को वही जीविका अपनानी चाहिए।१७

याचित्वा चार्थसद्भ्योऽन्नं पितॄन्देवांस्तु तोषयेत् ।
याचयेद्वा[2] शुचीन्दान्तान् तेन तृप्येत् स्वयं ततः ॥१८

शिष्टजनों से अन्न माँगकर, पितरों को तृप्त करना चाहिए या पवित्र संन्यासियों को दान देना चाहिए, परन्तु उससे स्वयं अपना पेट नहीं भरना चाहिए ।१८

यस्तु द्रव्यार्ज्जनं कृत्वा गृहस्थस्तोषयेन्न तु ।
देवान्पितॄंस्तु विधिना शुनां योनिं व्रजत्यधः ॥१९

जो व्यक्ति द्रव्य कमाकर परिवारजनों, देवताओं और पितरों को विधिपूर्वक सन्तुष्ट नहीं करता, वह कुकुरयोनि प्राप्त करता है ।१९

धर्मश्चार्थश्च कामश्च श्रेयो मोक्षश्चतुष्टयम् ।
धर्माद्विरुद्धः कामः स्याद्ब्राह्मणानान्तु नेतरः ॥२०

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, में चारों श्रेयस्कर हैं। धर्म के अविरोधी काम का आश्रय लिया जा सकता है परन्तु धर्मविरोधी काम कभी भी पालनीय नहीं होता ।२०

योऽर्थो धर्माय नात्मार्थं सोऽर्थोनार्थस्तथेतरः ।
तस्मादर्थं समासाद्य दद्याद्वै जुहुयाद्द्विजः ॥२१

केवल धर्म के लिए संचित अर्थ ही अर्थ है और जो अर्थ अपने लिए संग्रह किया जाता है, वह अर्थ नहीं होता। अतः ब्राह्मण को अर्थ संचित कर सुपात्र को दान देना चाहिए या यज्ञ करना चाहिए ।२१

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु द्विजातीनां वृत्तिनिरूपणं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में, द्विजातियों का वृत्ति-निरूपण नामक पच्चीसवाँ अध्याय समाप्त ॥२५॥

●

---

१. वृत्तिहेतोः कथंचनेति पा०। २. याचयित्वा शुचिर्दान्तं नच तृप्येदिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षड्विंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दानधर्ममनुत्तमम् ।
ब्रह्मणाभिहितं पूर्वमृषीणां ब्रह्मवादिनाम् ॥१

व्यास बोले—पहले स्वयं ब्रह्मा ने ब्रह्मवादी ऋषियों को जिस अत्युत्तम दानधर्म के विषय में बताया था, अब मैं वही बताने जा रहा हूँ ।१

अर्थानामुचिते[1] पात्रे श्रद्धया प्रतिपादनम् ।
दानमित्यभिनिर्दिष्टं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥२

सुपात्र में श्रद्धापूर्वक धन का प्रतिपादन ही, भुक्ति-मुक्ति फलप्रदायक दान के रूप में जाना जाता है ।२

यद्ददाति विशिष्टेभ्यः शिष्टेभ्यः[2] श्रद्धया युतः ।
तद्वित्तमहं मन्ये शेषं कस्यापि रक्षति ॥३

विशिष्ट सभ्यजनों को श्रद्धापूर्वक दिए गए दान को मैं वित्त (धन) मानता हूँ—शेष धन (अर्थात् दान न देकर रखा गया धन) दूसरों का होता है (रखने वाले का नहीं) । वह केवल उसकी रक्षा करता है ।३

नित्यं नैमित्तिकं काम्यं त्रिविधं दानमुच्यते ।
चतुर्थं विमलं प्रोक्तं सर्वदानोत्तमोत्तमम् ॥४

दान नित्य, नैमित्तिक और काम्य भेद से तीन प्रकार का होता है । चौथे प्रकार का दान, विमल दान कहलाता है, जो समस्त दानों की तुलना में श्रेष्ठ होता है ।४

अहन्यहनि यत्किञ्चिद्दीयतेऽनुपकारिणे ।
अनुद्दिश्य फलं तस्माद्ब्राह्मणाय तु नित्यकम् ॥५

फल प्राप्ति की आशा के बिना, प्रतिदिन किसी उपकारी ब्राह्मण को नहीं अपितु साधारण ब्राह्मण को दिया जाने वाला दान नित्य दान कहलाता है ।५

---

१. उदिते इति, उदिते शास्त्रोक्ते इत्यर्थः । २. श्रद्धया परया युत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यत्तु पापोपशान्यर्थं दीयते विदुषाङ्करे ।
नैमित्तिकन्तदुद्दिष्टं दानं सद्भिरनुष्ठितम्[1] ॥६

सभ्य व्यक्ति, पाप का नाश करने के लिए, पण्डितों के हाथों में जो दान देते हैं वह नैमित्तिक दान कहलाता है ।६

अपत्यविजयैश्वर्यस्वर्गार्थं यत्प्रदीयते ।
दानं तत्काम्यमाख्यातमृषिभिर्धर्मचिन्तकैः ॥७

सन्तान, विजय, ऐश्वर्य या स्वर्गादि की कामना से दिए जाने वाले दान को धर्म चिन्तक ऋषियों ने काम्य दान कहा है ।७

यदीश्वरप्रीणनार्थं ब्रह्मवित्सु प्रदीयते ।
चेतसा धर्मयुक्तेन दानं तद्विमलं शिवम् ॥८

ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए, धर्मपरायण होकर, वेदज्ञ ब्राह्मणों को जो दान दिया जाता है, वह मंगलकारी दान, विमल दान के नाम से जाना जाता है ।८

दानधर्मं निषेवेत पात्रमासाद्य शक्तितः ।
उत्पत्स्यते हि तत्पात्रं यत्तारयति सर्वतः ॥९

सुपात्र मिलने पर ही सामर्थ्यानुसार दानरूप धर्म की सेवा करनी चाहिये, क्योंकि ऐसा पात्र कदाचित् ही उपस्थित होता हैं, जो दाता कां सभी प्रकार के पापों से मुक्ति दिलाने में समर्थ होता है ।९

कुटुम्बभक्तवसनाद्देयं[2] यदतिरिच्यते ।
अन्यथा दीयते यद्धि न तद्दानं फलप्रदम् ॥१०

कुटुम्ब का पेट भरने के बाद, जो बचे, उसका दान करना चाहिये । कुटुम्ब का पेट भरे विना, दान देने से, वह फलदायक नहीं होता ।१०

श्रोत्रियाय कुलीनाय विनीताय तपस्विने ।
व्रतस्थाय[3] दरिद्राय यद्देयं भक्तिपूर्वकम् ॥११

वेदज्ञ ब्राह्मण, कुलीन, विनीत, तपस्वी, ब्रह्मचारी और दरिद्रों को भक्तिभाव से दान देना चाहिये ।११

यस्तु दद्यान्महीम्भक्त्या ब्राह्मणायाहिताग्नये ।
स याति परमं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ॥१२

---

१. सद्भिरुत्तममिति पा० । २. भरणाद्देयमिति पा० । ३. वृत्तस्थाय सदाचाराय इत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो व्यक्ति भक्तिभाव से अग्निहोत्र ब्राह्मण को भूमि दान करता है, वह उस परम स्थान पर पहुँचता है, जहाँ से किसी प्रकार का दुःख नहीं भोगना पड़ता ।१२

इक्षुभिः सन्ततां भूमिं यवगोधूमशालिनीम् ।
ददाति वेदविदुषे यः स भूयो न जायते ॥१३

जो व्यक्ति ईख, जौ और गेहूँ की फसल वाली भूमि वेदज्ञ ब्राह्मण को दान में देता है, वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है ।१३

गोचर्ममात्रामपि वा यो भूमिं सम्प्रयच्छति ।
ब्राह्मणाय दरिद्राय सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१४

जो व्यक्ति गोचर्म जितनी भूमि, निर्धन ब्राह्मण को दान में देता है, वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है ।१४

भूमिदानात्परं दानं विद्यते नेह किञ्चन ।
अन्नदानन्तेन तुल्यं विद्यादानं ततोऽधिकम् ॥१५

भूमि दान से बढ़कर श्रेष्ठ दान और कोई नहीं है। अन्न दान भूमि दान के समान होता है परन्तु विद्यादान उससे भी अधिक फलदायक होता है ।१५

यो ब्राह्मणाय शुचये[1] धर्मशीलाय शीलिने ।
ददाति विद्यां विधिना ब्रह्मलोके महीयते ॥१६

जो व्यक्ति, शान्त, पवित्र और धार्मिक ब्राह्मण को, विधि पूर्वक विद्या दान करता है, वह ब्रह्मलोक में सम्मानित होता है ।१६

दद्यादहरहस्त्वन्नं श्रद्धया ब्रह्मचारिणे ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्राह्मणं[2] स्थानमाप्नुयात् ॥१७

जो व्यक्ति प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक ब्रह्मचारी को अन्न दान करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर, ब्रह्मलोक में जाता है ।१७

गृहस्थायान्नदानेन फलम्प्राप्नोति मानवः ।
आगमे चास्य दातव्यं दत्त्वाप्नोति परां गतिम् ॥१८

गृहस्थ को अन्न दान करने से मनुष्य को फल नहीं मिलता। गृहस्थ को यदि दान करना हो तो आगम (वेदादि का ज्ञान) दान करना चाहिए। इससे दाता श्रेष्ठ गति प्राप्त करता है ।१८

---

१. शान्ताय शुचये धर्मशालिने इति पा० । २. ब्राह्मणं ब्रह्मणः सम्बन्धीयमित्यर्थः स्थानं ब्राह्मलोकमित्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैशाख्यां पौर्णमास्यान्तु ब्राह्मणान्सप्त पञ्च वा ।
उपोष्य विधिना शान्ताञ्छुचीन् प्रयतमानसाः ॥१९
पूजयित्वा तिलैः कृष्णैर्मधुना च विशेषतः ।
गन्धादिभिः समभ्यर्च्य वाचयेद्वा स्वयं वदेत् ॥२०
प्रीयतां धर्मराजेति यद्वा मनसि वर्त्तते ।
यावज्जीवं कृतम्पापं[1] तत्क्षणादेव नश्यति ॥२१

वैशाख पूर्णिमा के दिन, व्रत रहकर, शान्त, पवित्र, और एकाग्रचित होकर, सात या पांच ब्राह्मणों को काले तिल और मधु से भली-भांति पूजकर, गन्धादि द्रव्यों से आरती उतारकर, हे धर्मराज ! आप प्रसन्न हों, यह वाक्य कहकर अथवा जो कुछ भी कामना मन में हो, यह उन ब्राह्मणों से कहलवाना और स्वयं भी कहना चाहिए। ऐसा करने से जीवन भर के पाप, क्षण में नष्ट हो जाते हैं ।१९–२१।

कृष्णाजिने तिलान् दत्त्वा हिरण्यं मधुसर्पिषी ।
ददाति यस्तु विप्राय सर्वं तरति दुष्कृतम् ॥२२

जो व्यक्ति काले मृगचर्म में सोना, मधु और घी रखकर, ब्राह्मण को दान देता है, वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है ।२२

कृतान्नमुदकुम्भञ्च वैशाख्याञ्च विशेषतः ।
निर्दिश्य धर्मराजाय विप्रेभ्यो मुच्यते भयात् ॥२३

वैशाख के महीने में, धर्मराज को उद्देश्य कर, पका हुआ अन्न और जल से भरा हुआ घड़ा, ब्राह्मणों को दान देने से, भय से मुक्ति मिलती है ।२३

सुवर्णतिलयुक्तैस्तु ब्राह्मणान् सप्त पञ्च वा ।
तर्पयेदुदपात्राणि ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥२४

सात या पांच सुपात्र ब्राह्मणों को सोना और तिल के साथ जल भरे पात्र दान करने से ब्रह्म हत्या के पाप से छुटकारा मिल जाता है ।२४

(माघमासे तु विप्रस्तु द्वादश्यां समुपोषितः ।)
शुक्लाम्बरधरः कृष्णैस्तिलैर्हुत्वा हुताशनम् ।
प्रदद्याद्ब्राह्मणेभ्यस्तु विप्रेभ्यः[2] सुसमाहितः ।
जन्मप्रभृति यत्पापं सर्वं तरति वै द्विजः ॥२५

माघ की कृष्ण द्वादशी में उपवास कर, सफेद वस्त्र धारण करके, आग में काले

१. यावज्जीवन्तु तत्सापमिति पा० । २. तिलानेव समाहितः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिल से हवन करते हुए, एकाग्रचित्त से ब्राह्मणों को तिल दान करने से, जीवन भर के सारे पापों से मुक्ति मिल जाती है ।२५

अमावास्यामनुप्राप्य ब्राह्मणाय तपस्विने ।
यत्किञ्चिद्देवदेवेशं दद्याद्रोद्दिश्य शङ्करम् ॥२६

प्रीयतामीश्वरः सोमो महादेवः सनातनः ।
सप्तजन्मकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति ॥२७

अमावस्या के दिन, 'उमा सहित ईश्वर सनातन महादेव प्रसन्न हों' यह कहकर देवदेवेश भगवान् शंकर के नाम से तपस्वी ब्राह्मण को जो कुछ भी दान दिया जाता है, उसके द्वारा सात जन्मों में किए गए पाप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं । २६–२७।

यस्तु कृष्णचतुर्दश्यां स्नात्वा देवं पिनाकिनम् ।
आराधयेद्द्विजमुखे न तस्यास्ति पुनर्भवः ॥२८

जो व्यक्ति कृष्णचतुर्दशी के दिन स्नान करके, भगवान् शंकर की आराधना कर, ब्राह्मण को भोजन कराता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता ।२८

कृष्णाष्टम्यां विशेषेण धार्मिकाय द्विजातये ।
स्नात्वाभ्यर्च्य यथान्यायं पादप्रक्षालनादिभिः ॥२९

प्रीयतां मे महादेवो दद्याद्द्रव्यं स्वकीयकम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति परमां गतिम् ॥३०

जो व्यक्ति कृष्णाष्टमी के दिन, स्नान करके, धार्मिक ब्राह्मणों को नियमानुसार पैर धुलाकर, विशेष रूप से उनकी पूजा करके, महादेव हमारे प्रति प्रसन्न हों यह कहकर अपनी वस्तु दान करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर, परम गति प्राप्त करता है ।२९–३०।

द्विजैः कृष्णचतुर्दश्यां कृष्णाष्टम्यां विशेषतः ।
अमावास्यान्तु वै भक्तैः पूजनीयस्त्रिलोचनः ॥३१

कृष्णाष्टमी, कृष्णचतुर्दशी और अमावस्या के दिन, भक्त ब्राह्मण, विशेष रूप से भगवान शिव की पूजा करेंगे ।३१

एकादश्यां निराहारो द्वादश्यां पुरुषोत्तमम् ।
अर्चयेद्ब्राह्मणमुखे स गच्छेत्परमं पदम् ॥३२

एकादशी को उपवास करके, द्वादशी को पुरुषोत्तम विष्णु की पूजा करके, विष्णुप्रीति की कामना से ब्राह्मण भोजन करवाया जाय, तो परमगति की प्राप्ति होती है ।३२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एषां तिथिर्वैष्णवी स्याद्द्वादशी शुक्लपक्षके ।
तस्यामाराधयेद्देवं प्रयत्नेन जनार्दनम् ॥३३

शुक्लपक्ष की द्वादशी विष्णु से सम्बन्धित होती है, इसीलिए इस द्वादशी को भगवान् विष्णु की यत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिए ।३३

यत्किञ्चिद्देवमीशानमुद्दिश्य ब्राह्मणे शुचौ ।
दीयते विष्णवे वापि तदनन्तफलप्रदम् ॥३४

ऋषियों ने कहा है कि, इस दिन देवाधिदेव महादेव अथवा भगवान् विष्णु के नाम पर पवित्र ब्राह्मण को जो कुछ भी दान दिया जाता है, उससे अनन्त फल प्राप्त होता है ।३४

यो हि यां देवतामिच्छेत्समाराधयितुन्नरः ।
ब्राह्मणान् पूजयेद्विद्वान् स तस्यास्तोषहेतुतः ॥३५

जो व्यक्ति जिस देवता की आराधना करना चाहता हो, उसे उस देवता को सन्तुष्ट करने के लिए ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए ।३५

द्विजानां वपुरास्थाय नित्यं तिष्ठन्ति देवताः ।
पूज्यन्ते ब्राह्मणालाभे प्रतिमादिष्वपि क्वचित् ॥३६

ब्राह्मणों के शरीर में सदैव सभी देवताओं का वास होता है। ब्राह्मण न मिलने पर कभी-कभी मूर्ति में भी देवताओं की पूजा की जाती है ।३६

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन तत्तत्फलमभीप्सुभिः ।
द्विजेषु देवता नित्यं पूजनीया विशेषतः ॥३७

इसीलिए देवता विशेष में फल विशेष की कामना कर, सदा ब्राह्मण में ही विशेष रूप से देवता की पूजा करनी चाहिए ।३७

विभूतिकामः सततं पूजयेद्वै पुरन्दरम् ।
ब्रह्मवर्चसकामस्तु ब्रह्माणं ब्रह्मकामुकः ॥३८

ऐश्वर्य की कामना करने वाले सदैव इन्द्र की पूजा करें और ब्रह्मतेज या ब्रह्म की प्राप्ति चाहने वाले ब्रह्मा को पूजें ।३८

आरोग्यकामोऽथ रविं धेनुकामो हुताशनम् ।
कर्मणां सिद्धिकामस्तु पूजयेद्वै विनायकम् ॥३९

आरोग्यकामी सूर्य को, धनकामी अग्नि को और सभी कार्यों की सिद्धि चाहने वाले गणेश जी की पूजा करें ।३९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोगकामस्तु शशिनं बलकामः समीरणम् ।
मुमुक्षुः सर्वसंसारात्प्रयत्नेनाच्चयेद्धरिम् ॥४०

भोगकामी चन्द्रमा को बलकामी वायु को, सारे संसार से मुक्ति चाहने वाले, यत्नपूर्वक विष्णु को पूजें ।४०

यस्तु योगं तथा मोक्षमिच्छेत्तज्ज्ञानमैश्वरम् ।
सोऽर्चयेद्वै विरूपाक्षं प्रयत्नेन[1] महेश्वरम् ॥४१

जो योग, मोक्ष और ईश्वरीय ज्ञान की कामना करते हैं, वे यत्नपूर्वक भगवान् विरूपाक्ष (शंकर) की पूजा करें ।४१

ये[2] वाञ्छन्ति महाभोगान् ज्ञानानि च महेश्वरम् ।
ते पूजयंति भूतेशं केशवञ्चापि भोगिनः ॥४२

जो भोगी पुरुष महाभोग समूह या ज्ञान प्राप्ति की इच्छा रखते हैं, उन्हें भूतेश महादेव और केशवविष्णु की पूजा करनी चाहिए ।४२

वारिदस्तृप्तिमाप्नोति सुखमक्षय्यमन्नदः ।
तिलप्रदः प्रजामिष्टान्दीपदश्चक्षुरुत्तमम् ॥४३

जलदान करने से तृप्ति, अन्नदान से अक्षय सुख, तिलदान से अपनी इच्छानुसार सन्तान और दीपदान करने से उत्तम आँखें मिलती हैं ।४३

भूमिदः सर्वमाप्नोति दीर्घमायुर्हिरण्यदः ।
गृहदोऽग्र्याणि वेश्मानि रूप्यदो रूपमुत्तमम् ॥४४

भूमिदान करने से सब कुछ, स्वर्णदान करने से दीर्घायु, गृहदान से उत्तम अट्टालिका, और चांदी का दान करने से सुन्दर रूप की प्राप्ति होती है ।४४

वासोदश्चन्द्रसालोक्यमश्विसालोक्यमश्वदः ।
अनड्वुद्दः[2] श्रियं पुष्टां गोदो ब्रध्नस्य विष्टपम् ॥४५

वस्त्र दान करने से चन्द्रलोक में वास होता है । अश्वदान से श्रेष्ठ यान, बैलदान से अतुल सम्पत्ति और गोदान करने से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है ।४५

---

१. प्रयत्नेनेश्वरं हरमिति पा० । २. अर्थदाता श्रियञ्चेष्टामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यानशय्याप्रदो भार्यामैश्वर्यमभयप्रदः ।
धान्यदः शाश्वतं सौख्यं ब्रह्मदो ब्रह्मसात्म्यताम्[1] ॥४६

वाहन या शय्यादान करने से मनपसन्द पत्नी मिलती है। डरे हुए व्यक्ति को अभयदान देने से प्रभूत ऐश्वर्य, धान का दान करने से चिरस्थायी सुख तथा वेद का दान करने से ब्रह्मतादात्म्य की प्राप्ति होती है ।४६

धान्यान्यपि यथाशक्ति विप्रेषु प्रतिपादयेत् ।
वेदवित्सु विशिष्टेषु प्रेत्य स्वर्गं समश्नुते ॥४७

जो व्यक्ति अपने सामर्थ्य के अनुसार, वेदज्ञ विशिष्ट ब्राह्मणों में धान दान करता है, वह परलोक में स्वर्ग भोगता है ।४७

गवां वा संप्रदानेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
इन्धनानां प्रदानेन दीप्ताग्निर्जायते नरः ॥४८

गाय को (घास) खिलाने से सभी पापों से मुक्ति मिलती है। इन्धन दान करने से मनुष्य दीप्ताग्नि प्राप्त करता है (अर्थात् उसकी पाचनशक्ति में वृद्धि होती है।)४८

फलमूलानि शाकानि भोज्यानि[2] विविधानि च ।
प्रदद्याद्ब्राह्मणेभ्यस्तु मुदा युक्तः स्वयम्भवेत् ॥४९

जो ब्राह्मणों को फल, मूल, साग और विविध प्रकार के भोज्य पदार्थ दान में देता है, वह सदैव प्रसन्न रहता है ।४९

औषधं स्नेहमाहारं रोगिणे रोगशान्तये ।
ददानो रोगरहितः सुखी दीर्घायुरेव च ॥५०

जो व्यक्ति रोगी को रोग से आराम देने के लिए दवाई, चिकने पदार्थ और भोजन दान करता है, वह निरोगी रहकर, सुखी और दीर्घायु होता है ।५०

असिपत्रवनं मार्गं क्षुरधारासमन्वितम् ।
तीव्रतापञ्च तरति क्षत्रोपानत्प्रदो नरः ॥५१

जो व्यक्ति छाता और चमड़े का जूता दान करता है, वह उस्तरे के समान तीखी धारवाले असिपत्रवन नामक नरक और तीव्र ताप को पार कर जाता है ।५१

---

१. ब्रह्म शाश्वतमिति पा० । २. पर्णानि पानानीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यद्यदिष्टतमं लोके यच्चापि दयितं गृहे ।
तत्तद्गुणवते देयन्तदेवाक्षयमिच्छता ॥५२

इस संसार में जो कुछ भी प्रिय हो और अपने घर में जो अत्यन्त सुन्दर वस्तु हो, अक्षय पुण्याभिलाषी व्यक्ति को, ये सारी वस्तुएँ गुणी ब्राह्मण को दान कर देनी चाहिए ।५२

अयने विषुवे चैव ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।
संक्रान्त्यादिषु कालेषु दत्तम्भवति चाक्षयम् ॥५३

अयन और विषुवसंक्रान्ति, सूर्य और चन्द्रग्रहण तथा संक्रान्त्यादि समय में दान की गई वस्तुएँ अक्षय फल प्रदान करती हैं ।५३

प्रयागादिषु तीर्थेषु पुण्येष्वायतनेषु च ।
दत्त्वा चाक्षयमाप्नोति नदीषु च वनेषु च ॥५४

प्रयागादि तीर्थ, मन्दिर, नदी या तालाब के किनारे सुपात्र को दिया गया दान अक्षय फलोत्पादक होता है ।५४

दानधर्मात्परो धर्मो भूतानान्नेह विद्यते ।
तस्माद्विप्राय दातव्यं श्रोत्रियाय द्विजातिभिः ॥५५

प्राणियों के लिए दान धर्म से बढ़कर श्रेष्ठ धर्म, दूसरा कोई नहीं, इसीलिए द्विजातियों को वेदज्ञ ब्राह्मणों को दान देना चाहिए । ५५

स्वर्गायुर्भूतिकामेन तथा पापोपशान्तये ।
मुमुक्षुणा च दातव्यं ब्राह्मणेभ्यस्तथान्वहम् ॥५६

स्वर्ग, आयु, ऐश्वर्य और मोक्ष की कामना करने वाले व्यक्तियों को अथवा पापी के पापनाश हेतु प्रतिदिन ब्राह्मणों को दान देना चाहिए ।५६

दीयमानन्तु यो मोहाद्गोविप्राग्निसुरेषु च ।
निवारयति पापात्मा तिर्यग्योनिं व्रजेत्तु सः ॥५७

गाय, ब्राह्मण, अग्नि या अन्य देवताओं को दान देते समय, जो व्यक्ति अज्ञानतावश उसे (दान-कर्म को) रोकता है, वह पापात्मा मृत्यु के बाद तिर्यक् योनि में जन्म लेता है ।५७

यस्तु द्रव्यार्ज्जनं कृत्वा नार्च्चयेद्ब्राह्मणान् सुरान् ।
सर्वस्वमपहृत्यैनं राष्ट्राद्विप्रतिवासयेत्[1] ॥५८

---

१. राजा राष्ट्रात्प्रवासयेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो व्यक्ति धनोपार्जन के बाद, उस धन से देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा नहीं करते, राजा को उनसे सर्वस्व छीनकर, राज्य से निर्वासित कर देना चाहिए।५८

यस्तु दुर्भिक्षवेलायामन्नाद्यं न प्रयच्छति।
म्रियमाणेषु सत्त्वेषु[1] ब्राह्मणः स तु गर्हितः ॥५९

तस्मान्न[2] प्रतिगृह्णीयान्न वै देयञ्च तस्य हि।
अङ्कयित्वा स्वकाद्राष्ट्रात्तं राजा विप्रवासयेत् ॥६०

अकाल पड़ जाने पर, अन्न के अभाव में मरते हुए ब्राह्मण को जो व्यक्ति अन्नादि दान नहीं करता, वह निन्दित ब्रह्महत्या के पाप में लिप्त हो जाता है। ऐसे व्यक्ति से दान लेना और दान देना वर्जित हैं। राजा को ऐसे व्यक्तियों को चिह्नित कर निर्वासित कर देना चाहिए।५९-६०।

यस्तु[3] सद्भ्यो ददातीह न द्रव्यं धर्मसाधनम्।
स पूर्वाभ्यधिकः पापी नरके पच्यते नरः ॥६१

जो व्यक्ति सभ्यजनों को धर्म कार्य के निमित्त, धन दान नहीं करता, वह पहले व्यक्ति से भी अधिक पापी होता है और परलोक में जाकर नरक भोगता है।६१

स्वाध्यायवन्तो ये विप्रा विद्यावन्तो जितेन्द्रियाः।
[4]सत्यसंयमसंयुक्तास्तेभ्यो दद्याद्विजोत्तमाः ॥६२

हे ब्राह्मण श्रेष्ठों! जो ब्राह्मण वेदों का अध्ययन करते हैं, विद्वान्, इन्द्रियजित्, सत्यनिष्ठ, संयमी होते हैं, उन्हीं को दान-देना चाहिए।६२

सुभुक्तमपि विद्वांसं धार्मिकम्भोजयेद्द्विजम्।
न तु मूर्खमवृत्तस्थं दशरात्रमुपोषितम् ॥६३

भलीभाँति भोजन किए हुए, विद्वान् और धार्मिक ब्राह्मण को ही भोजन कराना चाहिए परन्तु अधार्मिक और मूर्ख ब्राह्मण यदि दस रात तक भूखा रहे, फिर भी उसे भोजन नहीं कराना चाहिए।६३

सन्निकृष्टमतिक्रम्य श्रोत्रियं यः प्रयच्छति।
स तेन कर्मणा पापी दहत्यासप्तमं कुलम् ॥६४

---

१. विप्रेषु ब्रह्महा इति पा०। २. न तस्मात्प्रतिगृह्णीयुर्न विशेयुश्च ते न हि इति पा०। ३. यश्चासद्भ्यो ददातीह स्वधनं धर्मसाधकमिति पा०। ४. सत्यसंयम-संस्थेभ्यो दद्याद्विप्रो द्विजोत्तमः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो व्यक्ति निकटस्थ वेदज्ञ ब्राह्मण को छोड़कर, दूसरे ब्राह्मण को दान देता है, वह पापी अपने इस पाप से सातों पीढ़ियों को जलाता है।६४

यदि स्यादधिको विप्रः शीलविद्यादिभिः स्वयम् ।
तस्मै यत्नेन दातव्यमतिक्रम्यापि सन्निधिम् ॥६५

दूर स्थित ब्राह्मण यदि निकटस्थ-ब्राह्मण से विद्या-शीलादि में अधिक हो तो निकटस्थ ब्राह्मण की उपेक्षा कर दूरस्थ को ही यत्नपूर्वक दान करना चाहिए।६५

योऽर्च्चितं प्रति गृह्णाति ददात्यर्च्चितमेव वा ।
तावुभौ गच्छतः स्वर्गं नरकन्तु विपर्यये ॥६६

पूजित वस्तु दान में देने या पूजित वस्तु दान में लेने वाले, दोनों को स्वर्ग की प्राप्ति होती है, उसके विपरीत होने पर नरकगामी होना पड़ता है।६६

न वार्य्यपि प्रयच्छेत नास्तिके हेतुकेऽपि[1] च ।
पाषण्डेषु च सर्वेषु नावेदविदि धर्मवित् ॥६७

नास्तिक, मिथ्या तार्किक, पाखण्डी और वेदों के अज्ञानी व्यक्ति को जल भी दान नहीं करना चाहिए।६७

अपूपञ्च हिरण्यञ्च गामश्वं पृथिवीं तिलान् ।
अविद्वान्प्रतिगृह्णानो भस्मीभवति काष्ठवत् ॥६८

पूआ, स्वर्ण, गाय, घोड़ा, भूमि और तिल, कोई अविद्वान् व्यक्ति दान में ले, तो वह लकड़ी की भाँति भस्म हो जाता है।६८

द्विजातिभ्यो धनं लिप्सेत्प्रशस्तेभ्यो द्विजोत्तमः ।
अपि वा जातिमात्रेभ्यो न तु शूद्रात्कथञ्चन ॥६९

ब्राह्मणश्रेष्ठ को योग्य द्विजातियों से ही धन की इच्छा करनी चाहिए। अभाव की स्थिति में क्षत्रिय और वैश्य से भी दान माँगा जा सकता है परन्तु शूद्र से किसी भी स्थिति में दान नहीं लिया जा सकता।६९

वृत्तिसङ्कोचमन्विच्छेत् नेहेत धनविस्तरम् ।
धनलोभे प्रसक्तस्तु ब्राह्मण्यादेव हीयते ॥७०

ब्राह्मण को अपनी जीविका संकुचित करने की इच्छा करनी चाहिए न कि धनविस्तार की। धनलोभी ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व नष्ट हो जाता है।७०

---

१. हैतुके-हेतुमन्विष्यतीतिहैतुकः कुतर्की, श्रद्धाहीनः, तस्मिन्। २. अपि राजन्य-वैश्याभ्यामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदानधीत्य सकलान् यज्ञांश्चावाप्य सर्वशः ।
न तां गतिमवाप्नोति सङ्कोचाद्यामवाप्नुयात् ॥७१

समस्त वेदों का अध्ययन और सारे यज्ञ सम्पन्न करने पर भी, मनुष्य को सीमित धन कमाने वाले के समान गति नहीं प्राप्त होती ।७१

प्रतिग्रहरुचिर्न स्याद्यात्रार्थन्तु धनं हरेत् ।
स्थित्यर्थादधिकं गृह्णन् ब्राह्मणो यात्यधोगतिम् ॥७२

दान के प्रति अधिक आकृष्ट नहीं होना चाहिए, केवल जीविका निर्वाह के लिए जितनी आवश्यकता हो उतना ही धन संग्रह करना चाहिए । इससे अधिक धन संग्रह करने से ब्राह्मण अधोगति प्राप्त करता है ।७२

यस्तु[1] स्याद्याचको नित्यं न स स्वर्गस्य भाजनम् ।
उद्वेजयति भूतानि यथा चौरस्तथैव सः ॥७३

सदैव मांगने वाला व्यक्ति स्वर्ग का उपर्युक्त पात्र नहीं होता और गृहस्थों के लिए नित्य उत्तेजना उत्पन्न करने वाले चोर के समान होता है ।७३

गुरून् भृत्याश्चोज्जिहीर्षन् अर्चिष्यन्देवतातिथीन् ।
सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्न तु तृप्येत्स्वयन्ततः ॥७४

गुरुजनों और सेवकों के जीवन निर्वाह के लिए अथवा देवता और अतिथियों की पूजा अर्चना के लिए सभी वर्णों से धन मांगा जा सकता है । किन्तु दान में मांगी गई वस्तुओं से स्वयं तृप्त नहीं होना चाहिए ।७४

एवं गृहस्थो युक्तात्मा देवतातिथिपूजकः ।
वर्त्तमानः संयतात्मा याति तत्परमम्पदम् ॥७५

देवता और अतिथि की पूजा करने वाले संयतात्मा गृहस्थ, यदि इस प्रकार से जीवन निर्वाह करे, तो उसे परम पद की प्राप्ति होती है ।७५

पुत्रे निधाय वा सर्वं गत्वारण्यन्तु तत्त्ववित् ।
एकाकी विचरेन्नित्यमुदासीनः समाहितः ॥७६

पुत्र पर सब कुछ छोड़कर, तत्वज्ञ-व्यक्ति, वन जाकर, उदासीन और एकाग्र होकर, अकेले विचरण करे ।७६

एष वः कथितो धर्मो गृहस्थानां द्विजोत्तमाः ।
ज्ञात्वा तु तिष्ठेन्नियतं तथानुष्ठापयेद्द्विजान् ॥७७

---

१. यस्तु याचनकः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे ब्राह्मणश्रेष्ठों ! मैंने, आप लोगों को सम्पूर्ण गृहस्थधर्म बता दिया। इसे जानकर, इसका पालन करेंगे और सभी ब्राह्मणों से ऐसा ही अनुष्ठान करवायेंगे ।७७

इति देवमनादिमेकमीशं गृहधर्मेण समर्चयेदजस्रम् ।
तमतीत्य स सर्वभूतयोनिं प्रकृतिं वै स परं न याति जन्म ॥७८

जो व्यक्ति अनादि देव महेश्वर की आराधना, निरन्तर गृहस्थ धर्म के अनुसार करता है, वह सारी भूतयोनि प्रकृति की पार कर जाता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता ।७८

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे व्यासगीतासु षड्विंशोऽध्यायः ॥२६

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में छब्बीसवाँ अध्याय समाप्त ।२६

●

सप्तविंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

एवं गृहाश्रमे स्थित्वा द्वितीयं भागमायुषः ।
वानप्रस्थाश्रमं गच्छेत्सदारः साग्निरेव वा ॥१

व्यास बोले—इस प्रकार, आयु के दूसरे हिस्से को गृहस्थाश्रम में बिताकर, अग्नि और पत्नी के साथ वानप्रस्थाश्रम में जाना चाहिए ।१

निक्षिप्य भार्यां पुत्रेषु गच्छेद्वनमथापि वा ।
दृष्ट्वापत्यस्य चापत्यं जर्जरीकृतविग्रहः ॥२

शरीर वृद्धावस्था से ग्रस्त होने पर, पुत्र के पास पत्नी को रखकर और सन्तान की सन्तान (नाती-पोते) को देखकर वनगमन करना चाहिए ।२

शुक्लपक्षस्य पूर्वाह्णे प्रशस्ते चोत्तरायणे ।
गत्वारण्यं नियमवांस्तपः कुर्यात्समाहितः ॥३

उत्तरायण के शुक्लपक्ष में, शुभ दिन के पूर्वाह्ण में वन जाकर, नियमों का पालन करने वाला व्यक्ति, एकाग्रचित्त होकर तपस्या करे ।३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फलमूलानि पूतानि नित्यमाहारमाहरेत् ।
यताहारो भवेत्तेन पूजयेत्पितृदेवताः ॥४

आहार के लिए प्रतिदिन फल-मूल लायें और आहार पर नियन्त्रण रखें। फल-मूल से ही देवताओं और पितरों की पूजा करें ।४

पूजयित्वातिथीन्नित्यं स्नात्वा चाभ्यर्चयेत्सुरान् ।
गृहादादाय चाश्नीयादष्टौ ग्रासान् समाहितः ॥५

प्रतिदिन स्नान करके, देवताओं और अतिथियों की पूजा करें। तत्पश्चात् कुटिया में जाकर एकाग्रचित्त होकर केवल आठ कौर खायें ।५

जटां वै बिभृयान्नित्यं नखरोमाणि नोत्सृजेत् ।
स्वाध्यायं सर्वदा कुर्यान्नियच्छेद्वाचमन्यतः ॥६

सदैव जटा धारण करें, दाढ़ी और नाखुन नहीं काटें, सदा वेदाध्ययन करें और दूसरों के साथ वार्तालाप न करें ।६

अग्निहोत्रञ्च जुहुयात्पञ्च यज्ञान् समाचरेत् ।
मुन्यन्नैर्विविधैर्वन्यैः शाकमूलफलेन च ॥७

मुनियों के ग्रहण योग्य, विभिन्न जंगली वस्तुओं, साग, मूल या फल से अग्निहोत्र और पंचयज्ञ करें ।७

चीरवासा भवेन्नित्यं स्नाति त्रिषवणं शुचिः ।
सर्वभूतानुकम्पी स्यात् प्रतिग्रहविवर्जितः ॥८

सदैव वल्कल धारण करें । तीनों संध्याओं में स्नान करें और सभी प्राणियों के प्रति दयाभाव रखें। किसी से कोई वस्तु न माँगें ।८

स दर्शपौर्णमासेन यजेत नियतं द्विजः ।
ऋक्षेष्वाग्रयणे चैव चातुर्मास्यानि चाहरेत् ॥९

नियमित रूप से दर्शपूर्णमास यज्ञ, नक्षत्र, यज्ञ, नवशस्येष्टि और चातुर्मास्य याग सम्पादित करें ।९

उत्तरायणञ्च[1] क्रमशो दक्षस्यायनमेव च ।
वासन्तैः शारदैर्मेध्यैर्मुन्यन्नैः स्वयमाहृतैः ॥१०

---

१. उत्तरायणञ्चन्द्रमस इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसन्त और शरद ऋतु में उत्पन्न होने वाले नीवारादि स्वयं लाकर, नियमानुसार उत्तरायण और दक्षिणायन यज्ञ सम्पन्न करें ।१०

पुरोडाशांश्चरुञ्चैव द्विविधं निर्वपेत्पृथक् ।
देवताभ्यश्च तद्भुत्वा वन्यं मेध्यतरं हविः ॥११

पुरोडाश और चरु को अलग-अलग बनाकर, उसे देवताओं और पितरों को निवेदन करने के पश्चात् स्वयं खायें, क्योंकि यही पवित्र वन्य हवि होते हैं ।११

शेषं समुपभुञ्जीत लवणञ्च स्वयं कृतम् ।
वर्ज्जयेन्मधुमांसानि भौमानि कवचानि च ॥१२

भूस्तृणं शिशुकञ्चैव श्लेष्मातकफलानि च ।
न फालकृष्टमश्नीयादुत्सृष्टमपि केनचित् ॥१३

नमक अपने हाथों से बनाकर, भोजन करना चाहिए । शहद, मांस, भूमि से उगने वाले कुकुरमुत्ते, भूस्तृण (मालव-देशीय सागविशेष) और चकोतरा नहीं खाना चाहिए। हल से जोती गई भूमि में उत्पन्न अन्नादि और किसी की त्यागी हुई वस्तु नहीं खानी चाहिए १२-१३।

न ग्रामजातान्यार्त्तोऽपि पुष्पाणि च फलानि च ।
श्रावणेनैव विधिना वह्निं परिचरेत्सदा ॥१४

भूख से पीड़ित होने पर भी गाँव में उत्पन्न फूल या फल ग्रहण नहीं करें और श्रावण की विधि के अनुसार सदैव अग्नि की सेवा करें ।१४

न द्रह्येत्सर्वभूतानि निर्द्वन्द्वो निर्भयो भवेत् ।
न[1] नक्तञ्चैवमश्नीयात् रात्रौ ध्यानपरो भवेत् ॥१५

किसी भी प्राणी से झगड़ा नहीं करना चाहिए । सदैव विवाद से मुक्त और निर्भय रहना चाहिए । रात को भोजन न करे, केवल ध्यान में लीन रहना चाहिए ।१५

जितेन्द्रियो जितक्रोधस्तत्त्वज्ञानविचिन्तकः ।
ब्रह्मचारी भवेन्नित्यं न पत्नीमपि संश्रयेत् ॥१६

सदैव इन्द्रियों और क्रोध को वश में रखना चाहिए । तत्त्वचिन्तक होकर ब्रह्मचारी के धर्म का पालन करते हुए पत्नी के साथ भी सहवास न करे ।१६

यस्तु पत्न्या वनं गत्वा मैथुनं कामतश्चरेत् ।
तद्व्रतं तस्य लुप्येत प्रायश्चित्तीयते द्विजः ॥१७

---

१. न नक्तं किञ्चिदश्नीयादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो व्यक्ति वन जाकर, वहाँ कामासक्त होकर पत्नी समागम करता है, उसका व्रत भंग हो जाता है। ऐसे ब्राह्मण को प्रायश्चित्त के योग्य जानो।१७

तत्र यो जायते गर्भो न संस्पृश्यो भवेद्द्विजः।
न च वेदेऽधिकारोऽस्य तद्वंशेऽप्येवमेव हि ॥१८

वानप्रस्थाश्रम में उत्पन्न सन्तान का स्पर्श नहीं करना चाहिए। उस बालक को तथा उस बालक के वंशजों को वेदपाठ का अधिकार नहीं रहता।१८

अधःशयीत नियतं[1] सावित्रीजपतत्परः।
शरण्यः सर्वभूतानां संविभागरतः सदा ॥१९

प्रतिदिन भूमि पर लेटना चाहिए। सावित्री का जप करना चाहिए, सभी प्राणियों की रक्षा करने का प्रयास करना चाहिए और सदैव बराबर बाँटने में रत होना चाहिए।१९

परिवादं मृषावादं निद्रालस्यं विवर्जयेत्।
एकाग्निरनिकेतः स्यात्प्रोक्षितां भूमिमाश्रयेत् ॥२०

निन्दा, झूठ, निद्रा और आलस्य का त्याग करना चाहिए। एकाग्नि होना, घर के बिना रहना और स्वच्छ भूमि पर आश्रय लेना चाहिए।२०

मृगैः सह चरेद्वा यस्तैः सहैव च संविशेत्।
शिलायां वा शर्करायां शयीत सुसमाहितः ॥२१

मृगों के साथ घूमना, उनके साथ सोना, और पत्थर या कंकड़ पर एकाग्रचित्त होकर लेटना चाहिए।२१

सद्यःप्रक्षालको वा स्यान्मासषड्चयकोऽपि वा।
षण्मासनिचयो वा स्यात् समानिचय एव च ॥२२

एकदिन बिताने योग्य या एक महीना खर्च करने योग्य फलादि अथवा छः महीने या एक साल तक का नीवारादि अन्न संग्रह किया जा सकता है।२२

त्यजेदाश्वयुजे मासि संपन्नं[1] पूर्वचिन्तितम्।
जीर्णानि चैव वासांसि शाकमूलफलानि च ॥२३

आश्विन महीने में, पहले से संग्रह किए गए नीवारादि के बचे हुए अंशों, पुराने कपड़ों और साग-फल मूलादि का त्याग करना चाहिए।२३

---

१. सततमिति पा०। २. मूलस्वं पूर्वसञ्चितमिति, उत्पन्नं पूर्वसञ्चितमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दन्तोलूखलिको वा स्यात्कापोतीं वृत्तिमाश्रयेत् ।
अश्मकुट्टो भवेद्वापि कालपक्वभुगेव च ॥२४

दांतों को ही ओखली और मूशल बनाकर भोजन करना चाहिए । अर्थात् कच्चा अन्न चबाकर दांतों से ही छिलका उतार कर खाना चाहिए, कपोतवृत्ति (चुगकर खाना) नहीं अपनानी चाहिए अथवा पत्थर से चूर्ण बनाकर भोजन नहीं करना चाहिए । समय पर पकी हुई वस्तु खानी चाहिए ।२४

नक्तं चान्नं समश्नीयाद्दिवा चाहृत्य शक्तितः ।
चतुर्थकालिको वा स्यात्स्याद्वा चाष्टमकालिकः ॥२५

दिन में अपने सामर्थ्यानुसार अन्न जुटाकर शाम को भोजन करना चाहिए अथवा एकदिन उपवास रहकर दूसरे दिन रात को अथवा तीन दिन उपवास रहकर चौथे दिन रात को भोजन करना चाहिए ।२५

चान्द्रायणविधानैर्वा शुक्ले कृष्णे च वर्त्तयेत् ।
पक्षे पक्षे समश्नीयाद्दिवाजाग्रान्[1] कथितान् सकृत् ॥२६

शुक्ल और कृष्ण के भेद से चान्द्रायण व्रत के आधार पर जीविका निर्वाह करना चाहिए अथवा पूर्णिमा और अमावस्या के दिन उबले हुए जौ का पिण्ड खाना चाहिए ।२६

पुष्पमूलफलैर्वापि केवलैर्वर्त्तयेत्सदा ।
स्वाभाविकैः स्वयं शीर्णैर्वैखानसमते स्थितः ॥२७

अथवा अपने आप भूमि पर गिरने वाले फल-मूल पुष्पादि से पेट भरना चाहिए । वानप्रस्थ में इसी प्रकार जीवन निर्वाह करना पड़ता है ।२७

भूमौ वा परिवर्त्तेत तिष्ठेद्वा प्रपदैर्दिनम् ।
स्थानासनाभ्यां[2] विहरेन्न क्वचिद्धैर्यमुत्सृजेत् ॥२८

भूमि पर करवट बदले । पंजों पर खड़े रहकर दिन बितायें । थोड़ी देर खड़े रहें और थोड़ी देर बैठे । किसी भी समय धैर्य का त्याग न करें ।२८

ग्रीष्मे पंचतपास्तद्वद्वर्षास्वभ्रावकाशकः ।
आर्द्रवासास्तु हेमन्ते क्रमशो वर्द्धयंस्तपः ॥२९

गर्मी में पंचतपा, बरसात में पानी में भीगना और शीत ऋतु में गीला वस्त्र पहनना होगा । इस प्रकार क्रमशः तपस्या में वृद्धि करनी होगी ।२९

---

१. यवागूं क्वथितामिति, यवागूः क्वथिताः इति पा० । २. स्नानाशनाभ्यामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्पृश्य[1] त्रिषवणं पितृदेवांश्च तर्पयेत् ।
एकपादेन तिष्ठेत मरीचीन्वा पिबेत्तदा ॥३०

तीनों संध्याओं में स्नान तथा पितरों और देवताओं को तर्पण करना चाहिए। एक पैर पर खड़ा रहे और सदा (सूर्य की) किरणों का सेवन करे ।३०

पंचाग्निधूमपो वा स्यादुष्मपः सोमपोऽथवा ।
पयः पिबेच्छुक्लपक्षे कृष्णपक्षे[2] च गोमयम् ॥३१

पंचाग्नि होकर गर्म धुआँ पीना चाहिए, ऊष्मपायी और सोमपा होना चाहिए, शुक्लपक्ष में दूध और कृष्णपक्ष में गोबर का सेवन करना चाहिए ।३१

शीर्णपर्णाशनो वा स्यात्कृच्छ्रौर्वा[3] वर्त्तयेत्सदा ।
योगाभ्यासरतश्चैव रुद्राध्यायी भवेत्सदा ॥३२
अथर्वशिरसोऽध्येता वेदान्ताभ्यासतत्परः ।
यमान् सेवेत सततं नियमांश्चाप्यतन्द्रितः ॥३३

सूखे पत्तों को खाना चाहिए अथवा सदैव प्राजापत्यादि व्रत, योगाभ्यास, रुद्राध्याय पाठ, अथर्ववेद के शिरोभाग का अध्ययन करना और वेदान्त के अभ्यास में लगा रहना चाहिए। सदा संयमी होना चाहिए, सजग रहकर सारे नियमों का पालन करना चाहिए ।३२-३३।

कृष्णाजिनः सोत्तरीयः शुक्लयज्ञोपवीतवान् ।
अथ चाग्नीन् समारोप्य स्वात्मनि ध्यानतत्परः ॥३४

उत्तरीय, काले मृग की छाल और श्वेत यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए। आत्मा में अग्नि को आरोपित करके ध्यान लगाना चाहिए तथा मौन व्रत का पालन करते हुए, अग्नि और गृह को छोड़कर मोक्ष के प्रति तत्पर होना चाहिए ।३४

अनग्निरनिकेतः स्यान्मुनिर्मोक्षपरो भवेत् ।
तापसेष्वेव विप्रेषु यात्रिकं भैक्ष्यमाहरेत् ॥३५
गृहमेधिषु चान्येषु द्विजेषु वनवासिषु ।
ग्रामादाहृत्य चाश्नीयादष्टौ ग्रासान्वने वसन् ॥३६
प्रतिगृह्य पुटेनैव पाणिना शकलेन[4] वा ।

फल-मूल न मिलने पर तपस्वी ब्राह्मणों से प्राणधारण के लिए आवश्यक भिक्षा मांग लेनी चाहिए। यदि वहाँ ऐसे ब्राह्मण न रहते हों तो अन्य वनवासी गृहस्थ द्विजातियों

---

१. उपोष्य त्रिषवणञ्चापीति पा० । २. कृष्णपक्षे तु सोमपः इति पा० । ३. कृच्छ्रैरापद्यते सदेति पा० । ४. करकेणेति, करकेनेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से भी भिक्षा मांगी जा सकती है। यदि ऐसी भिक्षा भी न मिले, तो पत्ते के दोने, मिट्टी के सँकोरे या अँजुली में भिक्षा लाकर, वन में रहकर, सिर्फ आठ कौर भोजन करना चाहिए ।३५-३६½ ।

विविधाश्चोपनिषद आत्मसंसिद्धये जपेत् ॥३७
विद्याविशेषान् सावित्रीं रुद्राध्यायं तथैव च ।
महाप्रस्थानिकं वासौ कुर्यादनशनन्तु वा ।
अग्निप्रवेशमन्यद्वा ब्रह्मार्पणविधौ स्थितः ॥३८

अपने आपको सुधारने के लिए विभिन्न उपनिषदों का पाठ करना चाहिए। और विशेष विद्या, सावित्री तथा रुद्राध्याय का पाठ भी करना चाहिए। तत्पश्चात् ईश्वरार्पण विधि में स्थित होकर अर्थात् ब्रह्ममय होकर अनशन या अग्नि प्रवेश रूप, महाप्रस्थानिक कार्य (अर्थात् मृत्यु का उपाय) करना चाहिए ।३७-३८।

येन सम्यगिममाश्रमं शिवं संश्रयन्त्यशिवपुञ्जनाशनम् ।
ते विशन्ति पदमैश्वरं पदं यान्ति यत्र गतमस्य संस्थितेः ॥३९

जो लोग इस (वानप्रस्थ) आश्रम में पापों के समूह का नाश करने वाले भगवान् शिव का आश्रम सम्यक् रूप से ग्रहण करते हैं, वे उस ईश्वरीय पद को प्राप्त कर, स्वर्ग में जाकर स्थित हो जाते हैं ।३९

इति श्रीकूर्मपुराणे उपविभागे व्यासगीतासु वानप्रस्थाश्रमधर्मो नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में, वानप्रस्थधर्म नामक सत्ताईसवाँ अध्याय समाप्त ।२७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टाविंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

एवं वनाश्रमे स्थित्वा तृतीयं भागमायुषः ।
चतुर्थमायुषो भागं संन्यासेन नयेत् क्रमात् ॥१

व्यास बोले—वानप्रस्थाश्रम में इस प्रकार रहते हुए, आयु का तीसरा भाग बिताकर, आयु के चौथे भाग में संन्यास धर्म का पालन करना चाहिए ।१

अग्नीनात्मनि संस्थाप्य द्विजः प्रव्रजितो भवेत् ।
योगाभ्यासरतः शान्तो ब्रह्मविद्यापरायणः ॥२

योगाभ्यास में संलग्न रहने वाले, शान्तचित्त, ब्रह्मविद्यापरायण ब्राह्मण को आत्मा में अग्नि की स्थापना कर प्रव्रज्या ग्रहण करनी चाहिए ।२

यदा मनसि सञ्जातं[1] वैतृष्ण्यं सर्ववस्तुषु ।
तदा संन्यासमिच्छन्ति पतितः स्याद्विपर्यये ॥३

जब सारी वस्तुओं से मन विरक्त हो जाए, तभी संन्यास लेना चाहिए। इसका विपरीत होने पर पतित होना पड़ता है ।३

प्राजापत्यान्निरूप्येष्टिमाग्नेयीमथवा पुनः ।
दान्तःपक्वकषायोऽसौ ब्रह्माश्रममुपाश्रयेत् ॥४

इन्द्रियों का दमन करके, परिपक्व होकर, प्राजापत्य या आग्नेय यज्ञ करते हुए, जोगिया वस्त्र पहनकर, संन्यासाश्रम में प्रवेश करना चाहिए ।४

ज्ञानसंन्यासिनः केचिद्वेदसंन्यासिनः परे ।
कर्मसंन्यासिनस्त्वन्ये विविधाः परिकीर्त्तिताः ॥५

ज्ञान संन्यासी, वेद संन्यासी और कर्म संन्यासी के भेद से संन्यासी तीन प्रकार के होते हैं ।५

यः सर्वसङ्गनिर्मुक्तो निर्द्वन्द्वश्चैव निर्भयः ।
प्रोच्यते ज्ञानसंन्यासी स्वात्मन्येवं व्यवस्थितः ॥६

---

१. सम्पन्नमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनकी किसी विषय में आसक्ति न हो, द्वन्द्वों से मुक्त, भयरहित और आत्मा के प्रति चिन्तनशील हो, वे ज्ञानसंन्यासी कहलाते हैं ।६

वेदस्यैवाभ्यसेन्नित्यं निर्द्वन्द्वो निष्परिग्रहः ।
प्रोच्यते वेदसंन्यासी मुमुक्षुर्विजितेन्द्रियः ॥७

जो द्वन्द्व और दान से मुक्त रहकर, नित्य वेदाभ्यास करते हैं, मोक्षाभिलाषी और इन्द्रियों को जीतने वाले वे लोग वेदसंन्यासी कहलाते हैं ।७

यस्त्वग्नीनात्मसात्कृत्वा ब्रह्मार्पणपरो द्विजः ।
स ज्ञेयः कर्मसंन्यासी महायज्ञपरायणः ॥८

जो ब्राह्मण सभी अग्नियों को आत्मसात् करके, सर्वस्व ब्रह्म को समर्पित कर देते हैं, महायज्ञ का पालन करने वाले वे कर्मसंन्यासी के नाम से जाने जाते हैं ।८

त्रयाणामपि चैतेषां ज्ञानी त्वभ्यधिको मतः ।
न तस्य विद्यते कार्यं न लिङ्गं वा विपश्चितः ॥९

इन तीन प्रकार के संन्यासियों में, जो ज्ञान सन्यासी कहे जाते हैं, वे ही श्रेष्ठतम होते हैं। ऐसे संन्यासियों का कोई कर्म, चिह्न और परिचय नहीं होता ।९

निर्ममो निर्भयः शान्तो निर्द्वन्द्वो निष्परिग्रहः[1] ।
जीर्णकौपीनवासाः स्यान्नग्नो वा ध्यानतत्परः ॥१०

इन्हें ममता रहित, निर्भय, शान्त द्वन्द्व और दान से मुक्त रहकर, पुरानी कौपीन या वस्त्र धारण करके अथवा नग्न होकर, ध्यान में लीन होना चाहिए ।१०

ब्रह्मचारी मितग्रासी ग्रामात्त्वन्नं[2] समाहरेत् ।
अध्यात्ममतिरासीत निरपेक्षो निरामिषः ॥११

ब्रह्मचारी को सीमित कौर ग्रहण करना चाहिए और गांव से अन्न संग्रह करके लाना चाहिए। सदैव ब्रह्मचिन्ता में लीन रहना, निःस्पृह होकर मन में किसी विषय की इच्छा नहीं रखनी चाहिए ।११

आत्मनैव सहायेन सुखार्थी विचरेदिह ।
नाभिनन्देत[3] मरणं नाभिनन्देत जीवितम् ॥१२

इस संसार में, आत्मा को सहायक बनाकर (अर्थात् एकाकी), मोक्ष की इच्छा करते हुए विचरना चाहिए। न (किसी की) मृत्यु से प्रसन्न होना चाहिए और न जीवन प्राप्त करने से ।१२

---

१. पर्णभोजनः इति पा० । २. ग्रामान्नान्नमिति, ग्रामादन्नं समाहरेदिति पा० । ३. नाभिनन्देत इति आर्षमात्मनेपदम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालमेव प्रतीक्षेत निदेशम्भृतको यथा ।
नाधीतव्यं न वक्तव्यं श्रोतव्यं न कदाचन ॥१३

जैसे सेवक, स्वामी के आदेश की प्रतीक्षा करता रहता है, उसी प्रकार केवल कर्म के अधीन रहने वाले जीवन या मृत्यु की प्रतीक्षा करनी चाहिए। वेदों का अध्ययन, उपदेश, और श्रवण नहीं करना चाहिए। इस प्रकार ज्ञान के प्रति तत्पर रहने वाले संन्यासी, ब्रह्मत्व प्राप्त करते हैं अर्थात् उन्हें मुक्ति मिल जाती हैं।१३½

एवं ज्ञात्वा परो योगी ब्रह्मभूयाय कल्पते ।
एकवासाथवा[1] विद्वान् कौपीनाच्छादनस्तथा ॥१४
मुण्डी शिखी वाथ भवेत्त्रिदण्डी निष्परिग्रहः ।
काषायवासाः सततध्यानयोगपरायणः ॥१५
ग्रामान्ते वृक्षमूले वा वसेद्देवालयेऽपि वा ।
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ॥१६

विद्वान् संन्यासी एक वस्त्र अथवा कौपीन धारण करेंगे। पूरा सिर मुड़वाकर, एक शिखा रखेंगे। गृहत्यागी होकर त्रिदण्ड (वाक्, मन और काम रूपी दण्ड) धारण करेंगे। जोगिया वस्त्र पहनकर, गांव की सीमा पर किसी पेड़ के नीचे या मन्दिर में बैठकर, ध्यान या योग की साधना करें। शत्रु, मित्र, मान और अपमान को एक समान समझेंगे।१४-१६।

भैक्ष्येण वर्त्तयेन्नित्यन्नैकान्नादी भवेत्क्वचित् ।
यस्तु मोहेन वान्यस्मादेकान्नादी भवेद्यतिः ॥१७

जो संन्यासी मोहवश या किसी अन्य कारण से, प्रतिदिन एक ही व्यक्ति से अन्न माँगकर भोजन करता है, उसके इस पाप का प्रतिकार, किसी भी धर्मशास्त्र में नहीं बताया गया है।१७½

न तस्य निष्कृतिः काचिद्धर्मशास्त्रेषु कथ्यते ।
रागद्वेषविमुक्तात्मा समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥१८
प्राणिहिंसानिवृत्तश्च मौनी स्यात्सर्वनिः स्पृहः ।
दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत् ।
शास्त्रपूतां वदेद्वाणीं मनःपूतं समाचरेत् ॥१९

१. एकवासाथवा इत्यत्र सन्धिरार्षः, एकवासाः अथवा इति पदच्छेदः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संन्यासी को रागद्वेष से विमुख होना चाहिए। पत्थर के टुकड़े और स्वर्ण को एक समान समझना चाहिए। प्राणि- हिंसा से निवृत्त और निःस्पृह होकर, मौन धारण कर लेना चाहिए। मार्ग को देख देखकर पैर रखना और कपड़े से छानकर, जल पीना चाहिए। शास्त्रों से पवित्र की गई वाणी बोलना और मन को पवित्र करने वाले कार्यों को करना चाहिए।१८-१९।

नैकत्र निवसेद्देशे वर्षाभ्योऽन्यत्र भिक्षुकः।
स्नानशौचरतो नित्यं कमण्डलुकरः शुचिः ॥२०

बरसात को छोड़, अन्य ऋतुओं में भिक्षुक को एक ही स्थान पर निवास नहीं करना चाहिए। मात्र कमण्डल धारण करके, पवित्र रहकर, सदैव स्नान और शुद्धता में प्रवृत्त रहना चाहिए।२०

ब्रह्मचर्यरतो नित्यं वनवासरतो भवेत्।
मोक्षशास्त्रेषु निरतो ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः ॥२१

दम्भाहङ्कारनिर्मुक्तो निन्दापैशुन्यवर्जितः।
आत्मज्ञानगुणोपेतो यतिर्मोक्षमवाप्नुयात् ॥२२

सदा ब्रह्मचारी और वनवासी होना चाहिए। मोक्ष शास्त्र में रत, ब्रह्मचारी, इन्द्रियजित्, दम्भ, अहंकार, निन्दा और कुटिलता से मुक्त, आत्मा का ज्ञान रखने वाले संन्यासी, मोक्ष प्राप्त करते हैं।२१-२२।

अभ्यसेत्सततं वेदं प्रणवाख्यं सनातनम्।
स्नात्वाचम्य विधानेन शुचिर्देवालयादिषु ॥२३

स्नान और नियमानुसार आचमन करके, पवित्र होकर, मन्दिरादि स्थानों में, निरन्तर ज्ञानरूपी सनातन प्रणव का जप करना चाहिए।२३

यज्ञोपवीती शान्तात्मा कुशपाणिः समाहितः।
धौतकाषायवसनो भस्मच्छन्नतनूरुहः ॥२४

अधियज्ञं ब्रह्म जपेदाधिदैविकमेव वा।
आध्यात्मिकं च सततं वेदान्ताभिहितं च यत् ॥२५

यज्ञोपवीत धारण करके, कुश हाथ में लेकर, आत्मा को शान्त करके, धुला हुआ जोगिया वस्त्र पहनकर और देह के सारे रोमों को भस्म से ढककर, एकाग्रचित्त से, यज्ञ सम्बन्धी और देवता विषयक सारें वेदमन्त्रों तथा परमात्मा से सम्बन्धित सारे वेदों और वेदान्तों के नाम से जाने वाले श्रुति-समूहों का निरन्तर पाठ करना चाहिए।२४-२५।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्रेषु चाथ निवसन् ब्रह्मचारी यतिर्मुनिः ।
वेदमेवाभ्यसेन्नित्यं स याति परमाङ्गतिम् ॥२६

जो ब्रह्मचारी और मौनव्रतावलम्बी संन्यासी पर्ण कुटीर में रहकर, प्रतिदिन वेदमन्त्रों का अभ्यास करता है, वह उत्कृष्ट गति प्राप्त करता है ।२६

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं तपः परम् ।
क्षमा दया च सन्तोषो व्रतान्यस्य विशेषतः ॥२७

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, क्षमा, दया और सन्तोषदि व्रतों का विशेष रूप से पालन करना संन्यासी का कर्त्तव्य है ।२७

वेदान्तज्ञाननिष्ठो वा पञ्चयज्ञान् समाहितः ।
ज्ञानध्यानसमायुक्तो भिक्षार्थे नैव तेन हि ॥२८

संन्यासी को वेदान्त का ज्ञाता होना चाहिए अथवा भिक्षा में प्राप्त अन्न के द्वारा, ज्ञान और ध्यान युक्त होकर, एकाग्र मन से, पंचमहायज्ञ सम्पन्न करना चाहिए ।२८

होममन्त्राञ्जपेन्नित्यं काले[1] काले समाहितः ।
स्वाध्यायञ्चान्वहं कुर्यात्सावित्रीं सन्ध्ययोर्जपेत् ॥२९

हवन के समय एकाग्रचित्त से, हवन मन्त्र का पाठ करना चाहिए और प्रतिदिन वेदों का अध्ययन तथा दोनों संध्या समय, सावित्री का जप करना चाहिए ।२९

ततो ध्यायीत[2] तं देवमेकान्ते परमेश्वरम् ।
एकान्ते वर्ज्जयेन्नित्यं कामं क्रोधं परिग्रहम् ॥३०

एकान्त में परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए तथा काम, क्रोध और दान का पूर्णरूपेण त्याग करना चाहिए ।३०

एकवासा द्विवासा वा शिखी यज्ञोपवीतवान् ।
कमण्डलुकरो विद्वान् त्रिदण्डी याति तत्परम् ॥३१

एक या दो वस्त्र पहनने वाला, शिखा रखने वाला, यज्ञोपवीत, कमण्डल और त्रिदण्ड धारण करने वाला विद्वान् संन्यासी ही परम पद प्राप्त करता है ।३१

---

१. होमकाले इति पा० । २. ध्यायीत सततं देवमिति (आत्मनेपदमार्षं) इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्धे व्यासगीतासु यतिधर्मेऽष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में यतिधर्म नामक अट्ठाईसवाँ अध्याय समाप्त ॥२८॥

एकोनत्रिंशोऽध्यायः

पुनर्यतिधर्माः

व्यास उवाच

एवं स्वाश्रमनिष्ठानां यतीनां नियतात्मनाम् ।
भैक्ष्येण वर्त्तनं प्रोक्तं फलमूलैरथापि वा ॥१

पुनः संन्यासी धर्म

व्यास बोले—इस प्रकार अपने आश्रम के प्रति निष्ठावान् और एकाग्रचित्त संन्यासीवृन्द, भिक्षा में प्राप्त वस्तु या फल-फूल से अपना निर्वाह करें ।१

एककालं चरेद्भैक्षं न प्रसज्येत विस्तरे ।
भैक्ष्यप्रसक्तो हि यतिर्विषयेष्वपि सज्जति ॥२

(संन्यासी) एक समय में भिक्षा मांगें और अधिक नहीं मांगे, क्योंकि भिक्षा के प्रति अधिक आसक्ति होने से विषय वस्तुओं के प्रति भी आसक्ति हो जाती है ।२

सप्तागारांश्चरेद्भैक्षमलाभे तु पुनश्चरेत् ।
प्रक्षाल्य पात्रे भुञ्जीत[1] अद्भिः प्रक्षालयेत्पुनः ॥३

अथवाऽन्यदुपादाय पात्रे भुञ्जीत नित्यशः ।
भुक्त्वा तत्संमृजेत्पात्रं यात्रामात्रमलोलुपः ॥४

भिक्षा सात घरों से मांगनी चाहिए । यदि सातवें घर से भिक्षा न मिले तो पुनः एक बार भिक्षा मांगी जा सकती है । पात्र को धोकर, उसमें भोजन करना चाहिए

---

१. भुञ्जीयाददिभः प्रक्षालयेत्तु, तदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और भोजन के बाद पुनः धो लेना चाहिए। अथवा प्रतिदिन नया पात्र लाकर उसमें भोजन करना चाहिए। परन्तु पात्र को धोकर काम चलाना हो तो लोभ किए बिना जीवन निर्वाह के लिए केवल एक पात्र को ही धोकर काम चलाना चाहिए।३-४।

विधूमे सन्नमुसले व्यङ्गारे भुक्तवज्जने।
वृत्ते शरावसम्पाते भिक्षां नित्यं यतिश्चरेत् ॥५

गृहस्थ की रसोई से धुआं उठना बन्द हो जाए, ओखली और मूसल का काम समाप्त हो जाए, अँगीठी की आग बुझ जाए, घर के सारे लोग भोजन कर लें और जूठन भी फेंक दिया जाए, तब संन्यासी को भिक्षा माँगनी चाहिए।५

गोदोहमात्रं तिष्ठेत कालम्भिक्षुरधोमुखः।
भिक्षेत्युक्त्वा सकृत्तूष्णीमश्नीयाद्वाग्यतः शुचिः ॥६

'भिक्षा दो' कहकर, भिक्षुक गाय दुहने में लगने वाले समय तक, सिर झुका कर खड़ा रहेगा और मौन रहकर, पवित्र भाव से एकबार भोजन करके सन्तुष्ट होगा।६

प्रक्षाल्य पाणी पादौ च समाचम्य यथाविधि।
आदित्ये दर्शयित्वान्नं भुञ्जीत प्राङ्मुखः शुचिः ॥७

हाथ पैर धोकर, नियमानुसार आचमन करके, सूर्य को अन्न दिखाकर; पूर्वाभिमुख और पवित्र होकर भोजन करना चाहिए।७

हुत्वा प्राणाहुतीः पञ्च ग्रासानष्टौ समाहितः।
आचम्य देवं ब्रह्माणं ध्यायीत परमेश्वरम् ॥८

पहले 'प्राणाय स्वाहा' मन्त्र का उच्चारण करके, पंच प्राणाहुतियाँ देकर, एकाग्रचित्त से पाठ और भोजन करने के बाद, आचमन करके, सर्वव्यापी देव परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए।८

अलाबुं दारुपात्रं च मृण्मयं वैणवं ततः।
चत्वार्येतानि पात्राणि मनुराह प्रजापतिः ॥९

प्रजापति मनु ने, संन्यासियों के लिए, लौकी, लकड़ी मिट्टी और बाँस से बने, चार प्रकार के पात्र बतलाए हैं।९

प्राग्रात्रे परारात्रे च मध्यरात्रे तथैव च।
सन्ध्यास्वग्निविशेषेण चिन्तयेन्नित्यमीश्वरम् ॥१०

रात्रि के प्रथम, मध्यम और अन्तिम प्रहर तथा संध्या समय, अग्नि विशेष के द्वारा ईश्वर का चिन्तन करना चाहिए।१०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृत्वा हृत्पद्मनिलये विश्वाख्यं विश्वसम्भवम् ।
आत्मानं सर्वभूतानां परस्तात्तमसः स्थितम् ॥११

सर्वस्याधारभूतान्तामानन्दं[1] ज्योतिरव्ययम् ।
प्रधानपुरुषातीतमाकाशकुहरं[2] शिवम् ॥१२

विश्वरूप फिर भी विश्व के कारण स्वरूप सर्वभूतात्मा, तमोगुण में विद्यमान फिर भी तमोगुणातीत, सभी प्राणियों के आधार, अव्यक्त, आनन्दमय, अनश्वर, प्रकृति-पुरुष से परे, आकाश रूप, मंगलमय ज्योति का पहले हृदयपद्म में ध्यान करना चाहिए ।११–१२।

तदन्तः सर्वभावानामीश्वरं ब्रह्मरूपिणम् ।
ध्यायेदनादिमध्यान्तमानन्दादिगुणालयम् ॥१३

महान्तं पुरुषं ब्रह्म ब्रह्माणं सत्यमव्ययम् ।
तरुणादित्यसंकाशं महेशं विश्वरूपिणम्[3] ॥१४

तत्पश्चात् उस ज्योति के बीच सर्वलोकेश्वर ब्रह्मरूपी, आदि मध्य-अन्त रहित, आनन्दादि गुणों के आश्रमरूप, महापुरुष, अनश्वर, सत्यस्वरूप, सर्वव्यापी, परमब्रह्म, बालसूर्य के समान, विश्वरूपी भगवान् महेश का ध्यान करना चाहिए ।१३–१४।

ओङ्कारेणाथ[4] चात्मानं संस्थाप्य परमात्मनि ।
आकाशे देवमीशानं ध्यायीताकाशमध्यगम् ॥१५

आकाशरूप परमात्मा में ओंकार के द्वारा आत्मा को स्थापित करके आकाश के मध्य स्थित देव ईशान (अर्थात् शंकर भगवान्) का ध्यान करना चाहिए ।१५

कारणं सर्वभावानामानन्दैकसमाश्रयम् ।
पुराणं पुरुषं शुभ्रं ध्यायन्मुच्येत बन्धनात् ॥१६

सभी भावनाओं के कारण स्वरूप, आनन्दाश्रय, शुभ्र, पुराण पुरुष का ध्यान करने से, सांसारिक बन्धनों से मुक्ति मिलती है ।१६

यद्वा गुहायां प्रकृतं जगत्संमोहनालये ।
विचिन्त्य परमं व्योम सर्वभूतैककारणम् ॥१७

---

१. आधारमव्यक्तमिति पा० । २. आकाशं दहनं शिवमिति पा० । ३. विश्व-कारिणमिति पा० । ४. ओङ्कारान्तेऽथ इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनं सर्वभूतानां यत्र लोकः प्रलीयते ।
आनन्दं ब्रह्मणः सूक्ष्मं यत्पश्यन्ति मुमुक्षवः ॥१८

तन्मध्ये निहितं ब्रह्म केवलं ज्ञानलक्षणम् ।
अनन्तं सत्यमीशानं विचिन्त्यासीत संयतः ॥१९

अथवा संसार सम्मोहनालय रूपी जो मूलप्रकृति है, इस मूलप्रकृति रूपी गुहा के मध्य स्थित, सभी प्राणियों के एकमात्र कारण, उनका जीवन, उनका लयस्थान—ब्रह्मानन्द स्वरूप और जिसे मोक्ष की कामना करने वाले लोग सूक्ष्म रूप से देख सकते हैं, ऐसे परम व्योमाकार का चिन्तन करके, उसके (व्योमाकार के) बीच स्थित, केवल ज्ञानरूप, अनन्त, सत्य और सर्वेश्वर परमब्रह्म का चिन्तन करते हुए, एकाग्रचित्त होकर स्थित रहना चाहिए ।१७–१९।

गुह्याद्गुह्यतमं ज्ञानं यतीनामेतदीरितम् ।
योऽनुतिष्ठेन्महेशेन सोऽश्नुते योगमैश्वरम् ॥२०

मैंने, संन्यासियों के लिए, अत्यन्त गुप्ततम ज्ञान की बातें बताई । जो व्यक्ति सदा इसका पालन करेगा वह ऐश्वर योग प्राप्त करेगा ।२०

तस्माद्ध्यानरतो नित्यमात्मविद्यापरायणः ।
ज्ञानं समाश्रयेद्ब्राह्मं येन मुच्येत बन्धनात् ॥२१

इसलिए सदा ध्यानमग्न और आत्मविद्यापरायण होकर ब्रह्मज्ञान का अभ्यास करना चाहिए । ब्रह्मज्ञान का अभ्यास करने से सांसारिक बन्धनों से मुक्त हुआ जा सकता है ।२१

गत्वा पृथक् स्वमात्मनं सर्वस्मादेव केवलम् ।
आनन्दमजरं ज्ञानं ध्यायीत च पुनः परम् ॥२२

अपनी आत्मा को सभी पदार्थों से भिन्न जानकर अद्वितीय, आनन्दस्वरूप और अजर-श्रेष्ठज्ञान-का ध्यान-करना चाहिए ।२२

यस्माद्भवन्ति भूतानि यद्गत्वा नेह जायते ।
स तस्मादीश्वरो देवः परस्माद्योऽधितिष्ठति[1] ॥२३

जिनको पाकर लोग पुनः जन्म नहीं लेते, उनसे परे जो विद्यमान हैं वहीं देवताओं के देवता ईश्वर हैं ।२३

---

१. परस्ताद्योऽधितिष्ठतीति, परस्ताद्यो विवस्वत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदन्तरे तद्गमनं शाश्वतं शिवमुच्यते ।
यदाहुस्तत्परो यः स्यात्स देवस्तु महेश्वरः ॥२४

शाश्वत और कल्याणकारी कहलाने वाले परमात्मा जिसमें विद्यमान हैं और जो उस परमात्मा से परे हैं, वही भगवान् महेश्वर हैं ।२४

व्रतानि यानि भिक्षूणां तथैवोपव्रतानि च ।
एकैकातिक्रमे तेषां प्रायश्चित्तं विधीयते ॥२५

भिक्षुओं के लिए, जो भी व्रत या उपव्रत करणीय हैं, उनमें से किसका पालन न करने से कौन सा प्रायश्चित्त करना है, इस विषय में बताया जा रहा है ।२५

उपेत्य तु स्त्रियं कामात्कृच्छ्रसंयतमानसः[1] ।
प्राणायामसमायुक्तः कुर्यात्सान्तपनं शुचिः ॥२६

ततश्चरेत नियमात् कृच्छ्रं संयत मानसः ।
पुनराश्रममागम्य चरेद्भिक्षुरतन्द्रितः ॥२७

काम भावना के वशीभूत होकर स्त्री समागम करने से, एकाग्रचित्त और शुद्ध होकर, सान्तपन नामक प्रायश्चित्त करना चाहिए । तत्पश्चात् एकाग्र मन से नियमानुसार कृच्छ्र व्रत करना चाहिए और पुनः आश्रम में प्रवेश कर भिक्षुक को सावधानी से विचरण करना चाहिए ।२६-२७।

न नर्मयुक्तमनृतं हिनस्तीति मनीषिणः ।
तथापि च न कर्त्तव्यं प्रसंगो ह्येष दारुणः ॥२८

परिहास में कहे गए असत्य को सभी मनीषियों ने दोष नहीं माना है । किन्तु संन्यासी के लिए, ऐसा असत्य भी वर्जित है । क्योंकि ऐसा मिथ्या प्रसंग, भयानक पाप को जन्म देता है ।२८

एकरात्रोपवासश्च प्राणायामशतं तथा ।
कर्त्तव्यं[2] यतिना धर्मलिप्सुना वरमव्ययम् ॥२९

धर्मलोभी संन्यासियों को असत्य बोलने से एक रात उपवास और सौ बार प्राणायाम करना चाहिए ।२९

गतेनापि[3] न कार्यन्ते न कार्यं[4] स्तेयमन्यतः ।
स्तेयादभ्यधिकः कश्चिन्नास्त्यधर्म इति स्मृतिः ॥३०

---

१. प्रायश्चित्तं समाहितः इति पा० । २. उक्त्वा नूनं प्रकर्त्तव्यं यतिना धर्मलिप्सुना इति पा० । ३. परमापदगतेनापि न कार्यं स्तेयमन्यत इति, अत्यन्तापहृतेनापि न कार्यं स्तेयमन्यतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अत्यन्त आपत्काल आ जाने पर संन्यासी दूसरे की वस्तु नहीं चुरायें। शास्त्रों में चोरी से बढ़कर अधर्म, दूसरा और कोई नहीं है।३०

हिंसा चैषा परा दिष्टा या चात्मज्ञाननाशिका।
यदेतद्‌द्रविणं नाम प्राणा ह्येते बहिश्चराः ॥३१

चोरी उत्कट हिंसा कहलाती है, यह आत्मज्ञान का नाशक भी है। जो वस्तु धन के नाम से जानी जाती है, वह मनुष्यों का बाह्य प्राण है।३१

स तस्य हरति प्राणान्यो यस्य हरते धनम्।
एवं कृत्वा सुदुष्टात्मा भिन्नवृत्तो व्रताहतः।
भूयो निर्वेदमापन्नश्चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ॥३२
विधिना शास्त्रदृष्टेन संवत्सरमिति श्रुतिः।
भूयो निर्वेदमापन्नश्चद्भिरेक्षुरतन्द्रितः ॥३३

जो जिसका धन चुराता है, वह मानों उसका प्राण चुरा लेता है। ऐसा करके वह दुष्टात्मा विहित आचार और व्रत से पतित हो जाता है। ऐसा कार्य करने के बाद पश्चात्ताप होने से संन्यासी शास्त्रों में बताए गए नियमों के अनुसार साल भर तक चान्द्रायण व्रत करे। मन में पश्चात्ताप होने के बाद भिक्षुक को सावधानी पूर्वक विचरण करना चाहिए।३२-३३

अकस्मादेव हिंसान्तु यदि भिक्षुः समाचरेत्।
कुर्यात्कृच्छ्रातिकृच्छ्रन्तु चांद्रायणमथापि वा ॥३४

यदि संन्यासी अचानक (अज्ञानतावश) हिंसा कर बैठे तो उसे कृच्छ्रातिकृच्छ्र या चान्द्रायण व्रत करना चाहिए।३४

स्कन्नमिंद्रियदौर्बल्यात् स्त्रियं दृष्ट्वा यतिर्यदि।
तेन धारयितव्या वै प्राणायामास्तु षोडश ॥३५

इन्द्रिय की दुर्बलता के कारण, स्त्री को देखकर यदि संन्यासी का वीर्य पात हो जाए तो उसे सोलह बार प्राणायाम करना होगा। यदि वीर्यपात दिन में हो जाए तो तीन रात तक उपवास और सौ बार प्राणायाम करना चाहिए।३५½

दिवा स्कन्ने त्रिरात्रं स्यात्प्राणायामशतं तथा।
एकांते मधुमांसे च नवश्राद्धे तथैव च।
प्रत्यक्षलवणे प्रोक्तं प्राजापत्यं विशोधनम् ॥३६

प्रतिदिन एक ही व्यक्ति से भिक्षा माँगकर भोजन करने, मधु-मांस, नवश्राद्ध का अन्न और प्रत्यक्ष रूप से नमक खाने से, शुद्धि के लिए प्राजापत्य व्रत करना चाहिए।३६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्याननिष्ठस्य सततं नश्यते सर्वपातकम् ।
तस्मान्महेश्वरं ज्ञात्वा तद्ध्यानपरमो भवेत्[1] ॥३७

यदि संन्यासी सदैव ध्यान में लगा रहे तो सारे पाप नष्ट हो जाते हैं, इसलिए महेश्वर को जानकर, उनके ध्यान में मग्न रहना चाहिए ।३७

यद्ब्रह्म परमं ज्योतिः प्रतिष्ठाक्षरमव्ययम् ।
योऽन्तरा परमं ब्रह्म स विज्ञेयो महेश्वरः ॥३८

जो ब्रह्म परम ज्योति के मध्य स्थित, अक्षर और अव्यय है । जो परम ब्रह्म के मध्य विद्यमान है उन्हें महेश्वर जानो ।३८

एष देवो महादेवः केवलः परमः शिवः ।
तदेवाक्षरमद्वैतं तदादित्यांतरं परम् ॥३९

ये देव महादेव केवल (अर्थात् अद्वितीय) श्रेष्ठ और कल्याणकारी हैं । प्रकाशमय परम ब्रह्म भी अक्षर, अद्वितीय और श्रेष्ठ है, इसलिए महादेव और परम ब्रह्म में कोई अन्तर नहीं है ।३९

यस्मान्महीयसो देवः स्वधाग्निज्ञानसंस्थिते ।
आत्मयोगाह्वये तत्त्वे महादेवस्ततः स्मृतः ॥४०

ज्ञान में लीन रहकर, अपने धाम में, आत्मयोगार्थ तत्त्व से पूजे जाने के कारण, वह भगवान् महादेव कहे जाते हैं ।४०

नान्यं देवं महादेवाद्व्यतिरिक्तं प्रपश्यति ।
तमेवात्मानमात्मेति य स याति परमं पदम् ॥४१

जो अन्य देवताओं को महादेव से पृथक् करके नहीं देखते और जो महादेव को अपनी आत्मा समझते हैं, वे परम पद प्राप्त करते हैं ।४१

मन्यन्ते ये स्वमात्मानं विभिन्नं परमेश्वरात् ।
न ते पश्यन्ति तं देवं वृथा तेषां परिश्रमः ॥४२

जो व्यक्ति अपनी आत्मा को परमेश्वर से पृथक् समझता है, वह उस परम देवता को नहीं देख पाता । ऐसे व्यक्तियों का सारा परिश्रम व्यर्थ हो जाता है ।४२

एकं[2] ब्रह्म परं ब्रह्म ज्ञेयं तत्त्वमव्ययम् ।
स देवस्तु महादेवो नैतद्विज्ञाय बाध्यते ॥४३

---

१. ध्यात्वा तस्य ध्यानरतो भवेदिति पा० । २. एकमेव परं ब्रह्मेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविनाशी तत्त्वस्वरूप, परम ब्रह्म ही एकमात्र जानने योग्य हैं और वही ब्रह्म महादेव है। जो यह जान लेता है, उसे पुनः संसार में जन्म नहीं लेना पड़ता ।४३

तस्माद्यजेत नियतं यतिः संयतमानसः ।
ज्ञानयोगरतः शान्तो महादेवपरायणः ॥४४

अतः संन्यासी को निरन्तर एकाग्रचित्त होकर, ज्ञानयोग का अभ्यास करते हुए शान्त और महादेव परायण होकर यज्ञ करना चाहिए ।४४

एष वः कथितो विप्रा यतीनामाश्रमः शुभः ।
पितामहेन विभुना मुनीनां पूर्वमीरितम् ॥४५

हे ब्राह्मणवृन्दों ! संन्यासियो का शुभ आश्रमधर्म, आपलोगों को बताया गया। भगवान् पितामह ब्रह्मा ने पहले यह मुनियों को बताया था ।४५

नात्र[1] शिष्यस्य योगिभ्यो दद्यादिदमनुत्तमम् ।
ज्ञानं स्वयंभुना प्रोक्तं यतिधर्माश्रयं शिवम् ॥४६

ब्रह्मा द्वारा बताए गए संन्यासी धर्माश्रय स्वरूप, इस कल्याणकारी ज्ञान का उपदेश, पुत्र शिष्य और योगियों को छोड़कर किसी और को नहीं देना चाहिए ।४६

इति यतिनियमानामेतदुक्तं विधानं,
पशुपतिपरितोषे यद्भवेदकहेतुः ।
न भवति पुनरेषामुद्भवो वा विनाशः,
प्रणिहितमनसाये नित्यमेवाचरन्ति ॥४७

सन्यासियों का नियम विधान बताया गया। इन नियमों का पालन करने वाले पर, पशुपति महादेव बहुत प्रसन्न होते हैं। जो लोग एकाग्रचित्त से प्रतिदिन इन नियमों का पालन करते हैं, उनका पुनर्जन्म और मृत्यु नहीं होता ।४७

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्धे व्यासगीतासु यतिधर्मो नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ।२९

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, व्यासगीता के वर्णन प्रसंग में, यतिधर्म नामक उन्तीसवाँ अध्याय समाप्त ।२९

●

१. नापुत्रशिष्येति, स पुत्रशिष्येति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिंशोऽध्याय

प्रायश्चित्त विधिः

व्यास उवाच

अतः परं प्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तविधिं शुभम् ।
हिताय सर्वविप्राणां[1] दोषाणामपनुत्तये ॥१

व्यास बोले--ब्राह्मणों के हित और पाप नाश हेतु मैं शुभ प्रायश्चित्त विधि बताने जा रहा हूँ ।१

अकृत्वा विहितं कर्म कृत्वा निन्दितमेव च ।
दोषमाप्नोति पुरुषः प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥२

शास्त्रों में बताए गए धर्मों का पालन न करने और शास्त्र निशिद्ध कर्मों का पालन करने से मनुष्यों को पाप लगता है । प्रायश्चित्त करने से उसकी शुद्धि हो जाती है ।२

प्रायश्चित्तमकृत्वा तु न तिष्ठेद्ब्राह्मणः क्वचित् ।
यद्ब्रूयुर्ब्राह्मणाः शान्ता विद्वांसस्तत्तथाचरेत् ॥३

प्रायश्चित्त करने वाले ब्राह्मण को प्रायश्चित्त किए विना क्षणमात्र भी नहीं बैठना चाहिए । शान्त और विद्वान् ब्राह्मण जैसा कहें, वैसा ही करना चाहिए ।३

वेदार्थवित्तमः शान्तो धर्मकामोऽग्निमान्द्विजः ।
स एव स्यात्परो धर्मो यमे कोऽपि व्यवस्यति ॥४

श्रेष्ठ, वेदार्थविद्, शान्त, धर्म कर्मानुरागी और अग्निहोत्री एक ब्राह्मण भी जिस कर्म का विधान दे दें, वही कर्म, श्रेष्ठ धर्म होता है ।४

अनाहिताग्नयो विप्रास्त्रयो वेदार्थपारगाः ।
यद्ब्रूयुर्धर्मकामास्ते तज्ज्ञेयं[2] धर्मसाधनम् ॥५

यदि ब्राह्मण वेदार्थ का ज्ञाता किन्तु निरग्नि (अर्थात् जिसने अग्नि चयन न किया हो) हो तो तीन ब्राह्मण धर्मार्थी होकर जिस कर्म को धर्म कहें, उसी कर्म को धर्म का साधन जानों ।५

---

१. सर्वलोकानामिति पा० । २. तज्ज्ञानं धर्मशासनं, तत्क्षम धर्मसाधनमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेकधर्मशास्त्रज्ञा ऊहापोहविशारदाः ।
वेदाध्ययनसम्पन्नाः सप्तैते परिकीर्त्तिताः ॥६

अनेको धर्मशास्त्रों का ज्ञाता, उहापोहविशारद (अर्थात् तर्क सिद्धान्त में पारंगत) वेदाध्ययन करने वाले सात ब्राह्मणों का वाक्य भी धर्म कार्यों में माना जाता है ।६

मीमांसज्ञानतत्त्वज्ञा वेदान्तकुशला द्विजाः ।
एकविंशतिविख्याताः प्रायश्चित्तं वदन्ति वै ॥७

मीमांशा और न्याय दर्शन के ज्ञाता और वेदान्त में पारंगत, इक्कीस ब्राह्मण प्रायश्चित्त के विषय में उपदेश देंगे ।७

ब्रह्महा मद्यपः स्तेनो गुरुतल्पग एव च ।
महापातकिनस्त्वेते यश्चैतैः सह संविशेत् ॥८

ब्रह्महत्या करने वाले, छिपकर मद्य पीने वाले, ब्राह्मण का सोना चुराने वाले और गुरुपत्नी के साथ समागम करने वाले महापापी होते हैं ।८

संवत्सरन्तु पतितैः संसर्गं कुरुते तु यः ।
यानशय्यासनैर्नित्यं जानन्वै पतितो भवेत् ॥९

जो लोग वर्ष भर ऐसे लोगों के साथ रहते हैं, वे भी महापापी होते हैं तथा जो लोग जानबूझकर सदैव ऐसे पापियों के साथ एक वाहन पर चढ़ते हैं, एक शय्या पर सोते और एक ही आसन पर बैठते हैं, वे भी पतित होते हैं ।९

याजनं योनिसम्बन्धं तथैवाध्यापनं[1] द्विजः ।
सद्यः[2] कृत्वा पतत्येव सह भोजनमेव च ॥१०

जानबूझकर पतित कन्या से विवाह, पतित व्यक्ति का पौरोहित्य, पतित को पढ़ाने और उसके साथ एक ही पात्र में भोजन करने से ब्राह्मण तुरन्त पतित हो जाता है ।१०

अविज्ञायाथ यो मोहात्कुर्यादध्यापनं द्विजः ।
संवत्सरेण पतति सहाध्ययनमेव च ॥११

अनजाने में अथवा मोहवश जो पतित व्यक्ति को पढ़ाता है अथवा उसके साथ पढ़ता है, वह एक वर्ष में पतित हो जाता है ।११

ब्रह्महा द्वादशाब्दानि कुष्ठि कृत्वा वने वसेत् ।
भैक्षमात्मविशुद्धयर्थं[3] कृत्वा शवशिरोध्वंजम् ॥१२

---

१ तथैवाययनमिति पा० । २ कृत्वा सद्यः पतेज्ज्ञादिति पा० । ३ भिक्षेदात्मविशुद्धयर्थमिति, भैक्ष्यायात्मविशुद्ध्यर्थमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्म हत्यारे को आत्मशुद्धि के लिए, वन में कुटिया बनाकर बारह वर्ष तक निवास करना होगा और हाथ में चिह्न स्वरूप मरे हुए ब्राह्मण या किसी दूसरे मृतक की खोपड़ी लेकर, भिक्षा माँगनी होगी ।१२

ब्रह्मणावसथान् सर्वान् देवागाराणि वर्ज्जयेत् ।
विनिन्दन् स्वयमात्मानं ब्रह्माणं तञ्च संस्मरन् ॥१३

मन्दिर या ब्राह्मण का घर त्याग कर, उस मरे हुए ब्राह्मण को याद करते हुए और मन ही मन आत्मग्लानि करते हुए, पहले से न तय किए हुए (अर्थात् बिल्कुल नए) सात घरों में भिक्षा माँगने के लिए प्रवेश करना चाहिए ।१३-१३½ ।

असङ्कल्पितयोग्यानि सप्तागाराणि संविशेत् ।
विधूमे शनकैर्नित्यं व्यङ्गारे भुक्तवज्जने ॥१४
एककालं चरेद्भैक्षं दोषं विख्यापयन्नृणाम् ।
वन्यमूलफलैर्वापि वर्त्तयेद्वै[1] समाश्रितः ॥१५

जब गृहस्थ की रसोई से धुआँ निकलना बन्द हो जाए, अँगीठी की आग बुझ जाए और जूठन पोंछ देने के बाद (अर्थात् दोपहर के समय), लोगों को अपना पाप बतलाकर, एक समय भिक्षा माँगनी चाहिए अथवा धैर्य धारण कर जंगली फल-मूल से जीविका निर्वाह करना चाहिए ।१४-१५।

कलालपाणिः खट्वाङ्गी ब्रह्मचर्यपरायणः ।
पूर्णे तु द्वादशे वर्षे ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥१६

हाथ में खोपड़ी लेकर, खट्वाङ्ग (महाव्रतियों के कन्धों पर रखा ध्वज) धारण कर, ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए । इस प्रकार बारह वर्ष पूरा हो जाने के बाद, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है ।१६

अकामतः कृते पापे प्रायश्चित्तमिदं शुभम् ।
कामतो मरणाच्छुद्धिर्ज्ञेया नान्येन केनचित् ॥१७

अनजाने में ब्रह्महत्या करने से, इस प्रायश्चित्त से भला होता है । परन्तु जानबूझकर ब्रह्महत्या करने से प्राणत्यागने के अलावा, कोई दूसरा प्रायश्चित्त नहीं है ।१७

कुर्यादनशनं वाथ भृगोः पतनमेव वा ।
ज्वलंतं वा विशेदग्निं जलं वा प्रविशेत्स्वयम् ॥१८

जानबूझकर ब्रह्महत्या करने वाला व्यक्ति अनशन करे, या पर्वतादि ऊँचे स्थान से गिरे अथवा जलते हुए अग्नि या जल में प्रवेश करे ।१८

---

१ वर्जयेद्धैर्यमाश्रितः इति, वर्त्तयेद्धैर्यमाश्रितः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मणार्थे गवार्थे वा सम्यक् प्राणान् परित्यजेत् ।
ब्रह्महत्यापनोदार्थमन्तरा वा मृतस्य तु ॥१९
दीर्घामयाविनं विप्रं कृत्वानामयमेव वा ।
दत्त्वा[1] चान्नं सुविदुषे ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥२०

यदि ब्रह्महत्यारा इस पाप से मुक्ति के लिए ब्राह्मण या गाय के लिए प्राण त्यागे; अत्यन्त रोगाक्रान्त ब्राह्मण को रोग से मुक्ति दिलाए अथवा विद्वान् ब्राह्मण को अन्नदान करे, तो ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है ।१९-२०।

अश्वमेधावभृथके स्नात्वा वै शुध्यते द्विजः ।
सर्वस्वं वा वेदविदे ब्राह्मणाय प्रदाय च ॥२१

अश्वमेध यज्ञ में अवभृथ स्नान (यज्ञ की समाप्ति पर किया जाने वाला स्नान) करने या वेदज्ञ ब्राह्मण को सब कुछ दान कर देने से ब्रह्मघाती ब्राह्मण, पाप से मुक्त होता है ।२१

सरस्वत्यास्त्वरुणया सङ्गमे लोकविश्रुते ।
शुध्येत्त्रिषवणस्नानत्रिरात्रोपोषितो द्विजः ॥२२

ब्रह्मघाती तीन रात तक उपवास करके, अरुणा और सरस्वती नदी के जगप्रसिद्ध संगम में, तीनो संध्या स्नान करे तो वह ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो सकता है ।२२

गत्वा रामेश्वरं पुण्यं स्नात्वा चैव महोदधौ ।
ब्रह्मचर्यादिभिर्युक्तो दृष्ट्वा रुद्रं विमोचयेत् ॥२३

ब्रह्मचारी बनकर, पवित्र रामेश्वर तीर्थ में जाकर महासमुद्र में स्नान करके, महेश्वर का दर्शन करने से भी शुद्धि हो जाती है ।२३

कपालमोचनं नाम तीर्थं देवस्य शूलिनः ।
स्नात्वाभ्यर्च्य पितॄन् देवान् ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥२४

भगवान् महादेव के कपाल मोचन नामक तीर्थ में जाकर, स्नान करके देवताओं और पितरों की पूजा करने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है ।२४

यत्र देवाधिदेवेन भैरवेणामितौजसा[1] ।
कपालं स्थापितं पूर्वं ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ॥२५
समभ्यर्च्य महादेवं तत्र भैरवरूपिणम् ।
तर्पयित्वा पितॄन् स्नात्वा मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥२६

---

१ कृत्वा चान्नमिति पा० । २ भैरवेण हतौजसा इति पा० ।

 CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन काल में परमेश्वर ब्रह्मा का कपाल, अत्यन्त शक्तिशाली देवाधिदेव भैरव के द्वारा, जिस स्थान पर स्थापित किया गया है, उस स्थान में नहाकर, भैरवरूपी महादेव की पूजा करके, पितरों का तर्पण करने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है ।२५-२६।

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे ब्रह्महत्याप्रायश्चित्तवर्णनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ।३०

कूर्मपुराण के उत्तरार्द्ध में, ब्रह्महत्या के वर्णन प्रसंग में प्रायश्चित्त तर्पण नामक तीसवाँ अध्याय समाप्त ।।३०

एकत्रिंशोऽध्यायः

ब्रह्मणः कपालस्थापनम्

ऋषय ऊचुः

कथं देवेन रुद्रेण शङ्करेणातितेजसा ।
कपालं ब्रह्मणः पूर्वं स्थापितं देहजं भुवि ।।१

ऋषिवृन्द बोले— असीम तेजोमय और भीषण उग्र भगवान् शंकर ने प्राचीन काल में; किस कारण से, ब्रह्मा के दैहिक कपाल को पृथिवी में स्थापित किया था ।१

सूत उवाच

शृणुध्वमृषयः पुण्यां कथां पापप्रणाशिनीम् ।
माहात्म्यं देवदेवस्य महादेवस्य धीमतः ।।२

व्यास बोले—हे ऋषिवृन्द ! आप सब पापनाशक, पुण्यकथा और देवाधिदेव महामति महादेव का माहात्म्य सुनिए ।२

पुरा पितामहं देवं मेरुशृङ्गे महर्षयः ।
प्रोचुः प्रणम्य लोकादिं किमेकं तत्त्वमव्ययम् ।।३

प्राचीनकाल में महर्षि ने सुमेरु-शिखर पर, प्राणियों के आदि, भगवान् पितामह ब्रह्मा को प्रणाम करके पूछा, अव्ययतत्त्व क्या है ।३

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स मायया महेशस्य मोहितो लोकसम्भवः ।
अविज्ञाय[1] परम्भावं स्वात्मानं प्राह ऋषिणम् ॥४
अहं[2] धाता जगद्योनिः स्वयम्भूरेक ईश्वरः ।
अनादि मत्परं ब्रह्म मामभ्यर्च्य विमुच्यते ॥५
अहं हि सर्वदेवानां प्रवर्त्तकनिवर्त्तकः ।
न विद्यते चाभ्यधिको मत्तो लोकेषु कश्चन ॥६

जगत् के स्रष्टा ब्रह्मा महादेव की माया से विमूढ़ होकर, परमभाव को न जानते हुए, ऋषियों से अपनी आत्मा को ही अव्यय तत्त्व कहकर इस प्रकार बताने लगे—मैं ही विधाता हूँ। मैं संसार का कारण, मैं स्वयम्भू, अद्वितीय ईश्वर, मैं अनादि और परमब्रह्म हूँ। मेरी पूजा करने से लोग संसार से मुक्त होते हैं। मैं समस्त देवताओं का निवृत्ति और प्रवृत्तिकर्त्ता हूँ। इस संसार में मुझसे श्रेष्ठ और कोई नहीं।४-६।

तस्यैवं मन्यमानस्य जज्ञे नारायणांशजः ।
प्रोवाच प्रहसन्वाक्यं रोषितोऽयं[3] त्रिलोचनः ॥७
किं कारणमिदं ब्रह्मन्वर्त्तते तव साम्प्रतम् ।
अज्ञानयोगयुक्तस्य न[4] त्वेतत्त्वयि विद्यते ॥८

ब्रह्मा के ऐसा सोचने पर, नारायण के अंश से उत्पन्न यह त्रिनेत्र शंकर क्रुद्ध होकर हँसते हुए कहा—हे ब्रह्मन्! तुम्हारे द्वारा ऐसा कहे जाने का सम्प्रति कौन सा कारण विद्यमान है? तुम अज्ञान के समूह से युक्त हो, इसलिए तुम्हारा ऐसा कहना उचित नहीं है।७-८।

अहं कर्त्तादिलोकानां जज्ञे नारायणात्प्रभोः ।
न मामृतेऽस्य जगतो जीवनं सर्वथा क्वचित् ॥९

मैं इस संसार का कर्त्ता हूँ और मैं प्रभु नारायण से उत्पन्न हुआ हूँ। मेरे बिना; यह संसार एक पल के लिए भी जीवित नहीं रह सकता।९

अहमेव परं ज्योतिरहमेव परा गतिः ।
मत्प्रेरितेन भवता सृष्टं भुवनमण्डलम् ॥१०

मैं श्रेष्ठ ज्योति और परम गति हूँ। मेरे आदेश से ही तुमने इस संसार की सृष्टि की है।१०

---

१ सुविज्ञाय परं भावं प्राह देवर्षिणां तदा इति पा०। २ अहं जातो जगद्योनिः स्वम्यभूरेक ईश्वर इति पा०। ३ रोषताम्रविलोचनः इति, रोषवान् रविलोचनं इति पा०। ४ न त्वेतदुचि तवेति, न वै तदुचितं तवेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं विवदतोर्मोहात्परस्परजयैषिणोः ।
आजग्मुर्यत्र तौ देवौ वेदाश्चत्वार एव हि ॥११

ब्रह्मा और विष्णु अज्ञानतावश परस्पर विजय पाने की इच्छा से, जब ऐसी बातें करने लगें, तो उनके पास चारों वेद आकर उपस्थित हुए ।११

अन्वीक्ष्य देवं ब्रह्माणं यज्ञात्मानञ्च संस्थितम् ।
प्रोचुः संविग्नहृदया याथात्म्यं परमेष्ठिनः ॥१२

देव ब्रह्मा और यज्ञात्मा विष्णु को उपस्थित देखकर, वे उत्कंठित मन से महेश्वर की यथार्थता का वखान करने लगे ।१२

ऋग्वेद उवाच

यस्यान्तःस्थानि भूतानि यस्मात्सर्वं प्रवर्त्तते ।
यदाहुस्तत्परन्तत्त्वं स देवः स्यान्महेश्वरः ॥१३

ऋग्वेद बोले—समस्त प्राणिसमूह जिनमें विद्यमान है तथा जिनसे सब कुछ उत्पन्न हुआ है, मुनिवृन्द जिन्हें श्रेष्ठ तत्त्व कहते हैं, वे ही देव महेश्वर हैं ।१३

यजुर्वेद उवाच

यो यज्ञैरखिलैरीशो योगेन च समर्च्यते ।
यमाहुरीश्वरं देवं स देवः स्यात्पिनाकधृक् ॥१४

यजुर्वेद बोले—जो समस्त यज्ञों और योग के द्वारा पूजित हैं, जिन्हें मुनिवृन्द ईश्वर कहते हैं, वे ही त्रिशूलधारी देव हैं ।१४

सामवेद उवाच

येनेदम्भ्राम्यते विश्वं यदाकाशान्तरं शिवम् ।
योगिभिर्वेद्यते तत्त्वं महादेवः स शङ्करः ॥१५

सामवेद बोले—जो इस संसार को भ्रमित करते हैं, आकाश के मध्य स्थित, मंगलस्वरूप, जिस तत्त्व की चिन्ता योगीवृन्द करते हैं, वे महादेव शंकर हैं ।१५

अथर्ववेद उवाच

यम्प्रपश्यन्ति देवेशं यजन्ते यतयः परम् ।
महेशं पुरुषं रुद्रं स देवो भगवान् भवः ॥१६

अथर्ववेद बोले—संन्यासी वृन्द प्रयास करके जिस रुद्ररूपी परम पुरुष महेश का दर्शन प्राप्त करते हैं वे भगवान् शिव हैं ।१६

एवं स भगवान् ब्रह्मा वेदानामीरितं शुभम् ।
श्रुत्वा विहस्य विश्वात्मा ततश्चाह विमोहितः ॥१७

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों वेदों के द्वारा कहे गए, इन शुभ वाक्यों को सुनकर, विश्वात्मा भगवान् ब्रह्मा अज्ञानतावश हँसकर बोले ।१७

कथं तत्परमं ब्रह्म सर्वसङ्गविवर्जितम् ।
रमते भार्यया सार्द्धं प्रमथैश्चातिगर्वितैः १८

प्रमथवृन्दों (शिव के अनुचरवृन्द) के द्वारा घिरकर जो अपने पत्नी के साथ क्रीड़ा करते हैं, वह कैसे संगी-साथियों से रहित (अर्थात् एकाकी) और परमब्रह्म हो सकते हैं ?१८

इतीरितेऽथ भगवान् प्रणवात्मा सनातनः ।
अमूर्तो मूर्तिमान् भूत्वा वचः प्राह पितामहम् ॥१९

ब्रह्मा के द्वारा ऐसा कहे जाने पर ओंकारात्मा सनातन भगवान् अदृश्य रूप से विद्यमान रहने पर भी, रूप धरकर उपस्थित हुए और पितामह से बोले ।१९

प्रणव उवाच

न ह्येष भगवानीशः स्वात्मनो व्यतिरिक्तया ।
कदाचिद्रमते रुद्रगस्तादृशो हि महेश्वरः ।
अयं स भगवानीशः स्वयंज्योतिः सनातनः ॥२०
स्वानन्दभूता कथिता देवी आगन्तुका शिवा ॥२१

प्रणव (ओंकार) बोले—भगवान् ईश अपनी आत्मा को छोड़कर किसी दूसरी स्त्री के साथ क्रीड़ा नहीं करते, ऐसे रुद्र ही महेश्वर हैं। यह वह ब्रह्म हैं, जो स्वयं प्रकाश स्वरूप और सनातन हैं। आगन्तुका शिवा देवी आत्मानन्दभूता के नाम से जानी जाती हैं ।२०-२१।

इत्येवमुक्तेऽपि तदा यज्ञमूर्त्तेरजस्य च ।
नाज्ञानमगमन्नाशमीश्वरस्यैव मायया ॥२२

प्रणव के द्वारा इस प्रकार कहे जाने के बाद भी ईश्वर की माया से विमूढ़, ब्रह्मा और यज्ञमूर्ति विष्णु का अज्ञान दूर नहीं हुआ ।२२

तदन्तरे महाज्योतिर्विरिञ्चो विश्वभावनः ।
प्रादर्शदद्भुतं दिव्यं पूरयन् गगनान्तरम् ॥२३

ऐसे समय में, विश्व स्रष्टा भगवान् ब्रह्मा ने, अद्भुत, दिव्य, और सारे आकाश में छा जाने वाले, महान् ज्योति को देखा ।२३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्मध्यसंस्थितञ्ज्योतिर्मण्डलं[1] तेजसोज्ज्वलम् ।
व्योममध्यगतं दिव्यं प्रादुरासीद्द्विजोत्तमाः ॥२४

हे ब्राह्मणश्रेष्ठों ! उस ज्योति के बीच, तेज से परिपूर्ण और गोलाकार, एक और दिव्य ज्योति उत्पन्न हुई। जो पहले वाले ज्योति पुंज के बीच स्थित रहकर भी आकाश के मध्य विद्यमान (अर्थात् निराधार) थी ।२४

स दृष्ट्वा वदनं दिव्यमूर्ध्वं लोकपितामहः ।
तैजसं मण्डलं घोरमलोकं यदनिन्दितम् ॥२५

जगत् पितामह (ब्रह्मा) ने, मुंह ऊपर उठाकर, उस दिव्य, भयानक और आनन्दित तेजोमण्डल को देखा ।२५

प्रजज्वालातिकोपेन ब्रह्मणः पञ्चमं शिरः ।
क्षणादपश्यत्स महान् पुरुषा नीललोहितः ॥२६
त्रिशूलपिङ्गलो देवो नागयज्ञोपवीतवान् ।
तं प्राह भगवान् ब्रह्मा शङ्करं नीललोहितम् ॥२७

ब्रह्मा का पाँचवाँ मस्तक अत्यन्त क्रोध से जल उठा और क्षणभर के लिए तेज। पुंज, त्रिशूलधारी पिंगलवर्ण और नागरूपी यज्ञोपवीतधारी, नीललोहित (शिव) महा-पुरुष को देखा। तब भगवान् ब्रह्मा ने नीललोहित शंकर से कहा ।२६-२७।

ज्ञानाय[2] पूर्वं भवतो ललाटादद्य शंकरम् ।
प्रादुर्भूतं महेशानं मामतः शरणं व्रज ॥२८

मैं जानता हूँ कि प्राचीन काल में आप मेरे मस्तक से शंकर रूप धारण कर प्रकट हुए थे, इसलिए मेरी शरण में आ जाइए ।२८

श्रुत्वा सगर्ववचनं पद्मयोनेरथेश्वरः ।
प्राहिणोत्पुरुषं कालं भैरवं लोकदाहकम् ॥२९

ब्रह्मा के अहंकार पूर्ण वचनों को सुनकर ईश्वर ने संसार को जलाकर भस्म कर देने वाले काल भैरव को प्रेरित किया ।२९

स कृत्वा सुमहद्युद्धं ब्रह्मणा कालभैरवः ।
प्रचकर्त्तास्य वदनं विरिञ्चस्याथ पञ्चमम् ॥३०

कालभैरव ने ब्रह्मा के साथ सुमहद् युद्ध करके, उनका पाँचवाँ सिर काट दिया ।३०

---

१. तन्मध्यसंस्थं विमलं मण्डलमिति पा० । २ जनाभि भगवान् पूर्वमिति, पूर्वं भगवन्निति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकृत्तवदनो देवो ब्रह्मा देवेन शम्भुना ।
ममार चेशो योगेन जीवितं प्राप विश्वधृक् ॥३१

देव शम्भु के द्वारा सिर काट दिए जाने पर ब्रह्मा की मृत्यु हुई, परन्तु विश्व के धारक महेश ने योग के द्वारा उन्हें जीवित कर दिया ।३१

अथान्वपश्यदीशानं[1] मण्डलान्तरसंस्थितम् ।
समासीनं महादेव्या महादेवं सनातनम् ॥३२
भुजङ्गराजवलयं चन्द्रावयवभूषणम् ।
कोटिसूर्यप्रतीकाशञ्जटाजूटविराजितम् ॥३३
शार्दूलचर्मवसनं दिव्यमालासमन्वितम् ।
त्रिशूलपाणिं दुष्प्रेक्ष्यं योगिनं भूतिभूषणम् ॥३४

नागराज (वासुकी) जिनके कंगन हैं, आधा चन्द्रमा जिनका शिरोभूषण है; जो करोड़ों सूर्य के समान है, जटाओं के समूह से सुशोभित होने वाले, व्याघ्र चर्म जिनका वस्त्र है, जो दिव्य रुद्राक्ष की माला धारण किए हों, त्रिनेत्र और त्रिशूलधारी, कठिनाई से दर्शन करने योग्य भस्म जिनका आभूषण है, ऐसे महायोगी महादेव को जीवित होकर ब्रह्मा ने मण्डल के बीच महादेवी के साथ बैठे हुए देखा ।३२-३४।

यमन्तरा योगनिष्ठाः प्रपश्यन्ति हृदीश्वरम् ।
तमादिमेकं ब्रह्माणं महादेवं ददर्श ह ॥३५

योगनिष्ठ योगीजन जिन्हें हृदय के बीच ईश्वररूप में देख पाते हैं, उस अद्वितीय आदि पुरुष ब्रह्मारूपी महादेव को उन्होंने देखा ।३५

यस्य सा परमा देवी शक्तिराकाशसंज्ञिता ।
सोऽनन्तैश्वर्ययोगात्मा महेशो दृश्यते किल ॥३६

आकाशसंज्ञिता श्रेष्ठा देवी जिसकी शक्ति है, अनन्त ऐश्वर्यशाली; योगात्मा महेश, ब्रह्मा को दिखाई देने लगे ।३६

यस्याशेषजगद्बीजं विलयं याति मोहनम् ।
सकृत्प्रणाममात्रेण स रुद्रः खलु दृश्यते ॥३७

जिन्हें एक बार प्रणाम करने से, मोहित कर देने वाले सम्पूर्ण जगत् के कारण का नाश होता है, वही रुद्र, ब्रह्मा को दिखाई देने लगे ।३७

येऽथ नाचारनिरतास्तद्भक्ताश्चैव केवलम् ।
विमोचयति लोकात्मा नायको दृश्यते किल ॥३८

---

१ अथान्वपश्यद्गिरिशामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचारनिष्ठा के विना, केवल भक्ति परायण होकर लोग जिनका दर्शन प्राप्त कर लेते हैं, वही जगदात्मा लोकनायक महादेव, ब्रह्मा को दिखाई देने लगे ।३८

यस्य ब्रह्मादयो देवा ऋषयो ब्रह्मवादिनः ।
अर्चयन्ति सदा लिंगं स शिवः खलु दृश्यते ॥३९

ब्रह्मादि देवता और ब्रह्मवक्ता ऋषिवृन्द, सदैव जिसके लिंग की पूजा करते हैं वही शिव दिखाई देने लगे ।३९

यस्याशेषजगत्सूतिर्विज्ञाननतनुरीश्वरः ।
न मुञ्चति सदा पार्श्वं शंकरोऽसौ च दृश्यते ॥४०

सारे संसार की जन्मदात्री प्रकृति ने कदापि जिनका साथ नहीं छोड़ा विशिष्ट ज्ञानरूपी शरीर वाले, ईश्वर, वह शंकर ब्रह्मा को दिखाई देने लगे ।४०

विद्या सहायो भगवान्यस्यासौ मण्डलान्तरम् ।
हिरण्यगर्भपुत्रोऽसौ ईश्वरो दृश्यते परः ॥४१

जिसके मण्डल के बीच विद्या सहाय भगवान् हिरण्यगर्भ पुत्र रुद्र विद्यमान है, वही परमेश्वर दिखाई देने लगे ।४१

पुष्पं वा यदि वा पत्रं यत्पादयुगले जलम् ।
दत्त्वा तरति संसारं रुद्रोऽ सौ दृश्यते किल ॥४२

जिनके चरण कमलों में पुष्प, पत्र या जल दान करने से, मनुष्य संसार से तर जाता है, वही रुद्र दिखाई लगे ।४२

तत्सन्निधाने सकलं नियच्छति सनातनः ।
कालं किल नियोगात्मा कालः कालो हि दृश्यते ॥४३

सनातन काल, जिनके समीप रहकर, उन्हीं के द्वारा नियुक्त किए जाने पर सबके ऊपर प्रभुत्व करते हैं, वह कालों के भी काल, शंकर दिखाई देने लगे ।४३

जीवनं सर्वलोकनां त्रिलोकस्यैव भूषणम् ।
सोमः स दृश्यते देवः सोमो यस्य विभूषणम् ॥४४

सभी प्राणियों के प्राण, स्वर्ग, मर्त्य और पाताल के आभूषण, चन्द्रमा जिनका अलंकार हो, वही महादेव उमा के साथ दिखाई देने लगे ।४४

देव्या सह सदा साक्षाद्यस्य योगस्वभावतः ।
गीयते परमा मुक्तिर्महादेवः स दृश्यते ॥४५

देवी के साथ जिनका संगम स्वाभाविक और श्रेष्ठ मुक्ति के रूप में सदा प्रसिद्ध रहा है, वही महादेव दिखाई देने लगे ।४५

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगिनो योगतत्त्वज्ञा वियोगाभिमुखोऽनिशम् ।
योगं ध्यायन्ति देव्यासौ स योगी दृश्यते किल ॥४६

वियोग के प्रति उन्मुख, योग के तत्त्वों को जानने वाले योगिजन निरन्तर योग में जिनका ध्यान करते हैं, देवी के साथ वही योग पुरुष दिखाई देने लगे ।४६

सोऽनुवीक्ष्य महादेवं महादेव्या सनातनम् ।
वरासने समासीनमवाप परमां स्मृतिम् ४७॥

महादेवी के साथ वरासन पर बैठे सनातन महादेव का दर्शन पाकर, ब्रह्मा को श्रेष्ठ स्मृति प्राप्त हुई ।४७

लब्ध्वा माहेश्वरीं दिव्यां संस्मृतिं भगवानजः ।
तोषयामास वरदं सोमं सोमार्द्धभूषणम् ॥४८

भगवान् ब्रह्मा ने महेश्वर सम्बन्धी दिव्य स्मृति प्राप्त करने के बाद उमा सहित अर्धचन्द्रालंकार महादेव को स्तुति के द्वारा सन्तुष्ट किया ।४८

ब्रह्मोवाच

नमो देवाय महते महादेव्यै नमो नमः ।
नमः शिवाय शान्ताय शिवायै सततं नमः ॥४९

ब्रह्मा बोले—महादेव को नमस्कार, महादेवी को नमस्कार । शान्तमूर्ति शिव और शिवा को निरन्तर नमस्कार ।४९

ओं नमो ब्रह्मणे तुभ्यं विद्यायै ते नमो नमः ।
महेशाय[1] नमस्तुभ्यं मूलप्रकृतये नमः ॥५०

आप ब्रह्मा हैं, आपको नमस्कार । आप विद्या (अर्थात् विशुद्धसत्वप्रधाना प्रकृति) हैं आपको बारम्बार प्रणाम । आप महेश हैं आपको नमस्कार । मूल प्रकृति स्वरूप आपको नमस्कार ।५०

नमो विज्ञानदेहाय चिन्तायै ते नमो नमः ।
नमोऽस्तु कालकालाय ईश्वरायै नमो नमः ॥५१

विज्ञान-देहधारी आपको नमस्कार । चिति स्वरूपा आपको पुनः-पुनः नमस्कार । काल संहारक आपको नमस्कार, आप ईश्वर हैं आपको नमस्कार ।५१

नमो[2] नमोऽस्तु रुद्राय रुद्राण्यै ते नमो नमः ।
नमो नमस्ते कालाय मायायै ते नमो नमः ॥५२

---

१. मूलप्रकृतये तुभ्यं महेशाय नमो नमः इति, नमोमूलप्रकृतये महेशाय नमो नम इति पा० । २. नमस्ते कालकालाय मायै ते नमो नमः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुद्र को बारम्बार नमस्कार, रुद्राणी को भी पुनः-पुनः नमस्कार। काल रूप आपको नमस्कार, माया रूपा आपको बारम्बार नमस्कार ।५२

नियन्त्रे सर्वकार्याणां क्षोभिकायै नमो नमः ।
नमोऽस्तु ते प्रकृतये नमो नारायणाय च ॥५३

आप सभी कार्यों के नियोक्ता हैं, आपको नमस्कार। आप क्षोभिका हैं आपको बारम्बार प्रणाम। प्रकृति रूपिणी आपको नमस्कार, नारायण स्वरूपा आपको नमस्कार ।५३

योगदाय नमस्तुभ्यं योगिनां गुरवे नमः ।
नमः संसारवासाय[1] संसारोत्पत्तये नमः ॥५४

योगदाता आपको नमस्कार। योगियों के गुरु आपको नमस्कार। संसार का बंध तथा उत्पत्ति करने वाले आपको नमस्कार ।५४

नित्यानन्दाय विभवे नमोऽस्त्वानन्दमूर्त्तये ।
नमः कार्यविहीनाय विश्वप्रकृतये नमः ॥५५

नित्य आनन्दमूर्ति आप ही प्रभू हैं, आप आनन्द मूर्ति रूपी हैं आपको नमस्कार। आप कार्य विहीन और संसार की प्रकृति हैं, आपको नमस्कार ।५५

ओंकारमूर्त्तये तुभ्यं तदन्तःसंस्थिताय च ।
नमस्ते व्योमसंस्थाय व्योमशक्त्यै नमो नमः ॥५६

आप ओंकार मूर्ति हैं तथा आप ही ओंकार के बीच स्थित हैं। आप आकाश में स्थित आकाश शक्ति हैं, आपको बारम्बार प्रणाम है ।५६

इति सोमाष्टकेनेशं प्रणिपत्य पितामहः ।
पपात दण्डवद्भूमौ गृणन्वै शतरुद्रियम् ॥५७

इस प्रकार ब्रह्मा ने सोमाष्टक स्तोत्र के द्वारा भगवान् को प्रणाम कर, शतरुद्रीय का गान करते हुए, भूमि पर दण्डवत् किया ।५७

अथ देवो महादेवः प्रणतार्त्तिहरो हरः ।
प्रोवाचोत्थाप्य हस्ताभ्यां प्रीतोऽस्मि तव साम्प्रतम् ॥५८

तत्पश्चात् प्रणाम करने वाले का दुःख हरने वाले भगवान् महादेव ने दोनों हाथों से ब्रह्मा को ऊपर उठाकर कहा—इस समय मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हूँ ।५८

---

१. संसारनाशाय इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दत्त्वास्मै परमं योगमैश्वर्यमतुलं महत् ।
प्रोवाचाग्रस्थितं[1] रुद्रं नीललोहितमीश्वरम् ॥५९

तदनन्तर महादेव ने ब्रह्मा को परमयोग अतुलनीय और प्रभूत ऐश्वर्य दान करके सामने स्थित प्रचण्ड और नीललोहित भगवान् से कहा ।५९

एष ब्रह्मास्य जगतः संपूज्यः प्रथमः स्थितः ।
आत्मना रक्षणीयस्ते गुणज्येष्ठः पिता तव ॥६०

संसार में सर्वप्रथम विद्यमान और पूजनीय ब्रह्मा की रक्षा तुम स्वयं करोगे । गुणों में ज्येष्ठ, ये तुम्हारे पिता हैं ।६०

अयं पुराणः पुरुषोन हन्तव्यस्त्वयानघ ।
स योगैश्वर्यमाहात्म्यान्मामेव शरणङ्गतः ॥६१

हे अनघ (दुःखहीन) ! इस आदि पुरुष की हत्या करना तुम्हारे लिए उचित नहीं । योग और ऐश्वर्य के माहात्म्य में इन्होंने मेरी श्रेष्ठ गति स्वीकार की है ।६१

अयञ्च[2] यज्ञो गर्वोऽसौ सगर्वो भवतानघ ।
शासितव्यो विरिञ्चस्य धारणीयं शिरस्त्वया ॥६२

हे अनघ ! यज्ञ भी साक्षात् मूर्तिमान् है । गर्व करने वाले यज्ञ को भी तुम्हे दण्डित करना चाहिए । इस समय तुम्हें ब्रह्मा के कटे हुए सिर को धारण करना पड़ेगा ।६२

ब्रह्महत्यापनोदार्थं व्रतं लोके प्रदर्शयन् ।
चरस्व सततं भिक्षां संस्थापय सुरद्विजान् ॥६३

तुम ब्रह्महत्या के पाप को दूर करने के लिए पृथ्वी पर व्रत करते हुए सदैव भिक्षा माँगते रहो और भिक्षा (में प्राप्त धन) के द्वारा देवताओं तथा ब्राह्मणों को बसाओ ।६३

इत्येतदुक्त्वा वचनं भगवान् परमेश्वरम् ।
स्थानं स्वाभाविकं दिव्यं ययौ तत्परमम्पदम् ॥६४

भगवान् परमेश्वर यह कहकर, उस स्वाभाविक दिव्य स्थान परम पद को चले गए ।६४

ततः स भगवानीशः कपर्दी[3] नीललोहितः ।
ग्राहयामास वदनं ब्रह्मणः कालभैरवम् ॥६५

---

१ अयञ्च यज्ञो भगवान् सङ्गत इति, अयञ्च यज्ञे इति पा० । २. प्रोवाचान्ते स्थितं देवमिति, प्रोवाचाग्रे स्थितं रुद्रमिति, प्रोवाचाग्रस्थितमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् भगवान् शिव ने नीललोहित कालभैरव से ब्रह्मा का पाँचवाँ सिर ग्रहण करवाया ।६५

चर त्वं पापनाशार्थं व्रतं लोके हितावहम् ।
कपालहस्तो भगवान् भिक्षां गृह्णातु सर्वतः ॥६६

ब्रह्महत्या के पाप को दूर करने के लिए लोकोपकारक व्रत का पालन करो और यह कपाल हाथ में लेकर भिक्षा माँगो ।६६

उक्त्वैवं प्राहिणोत्कन्यां ब्रह्महत्येति विश्रुताम् ।
दंष्ट्राकरालवदनां ज्वालामालाविभूषणाम् ॥६७
यावद्वाराणसीं दिव्यां पुरीमेष गमिष्यति ।
तावद्विभीषणाकारा[1] ह्यनुगच्छ त्रिशूलिनम् ॥६८

कालभैरव से ऐसा कहकर, बड़े-बड़े दाँतों वाली, रौद्र रूपवाली ज्वालाओं की माला को आभूषण के रूप में धारण करने वाली ब्रह्महत्या नाम से प्रसिद्ध अपनी कन्या को यह कहकर भेजा कि, हे भीषणे ! यह (कालभैरव) जब तक दिव्य वाराणसी धाम में पहुँचे तब तक तुम त्रिशूलधारी (कालभैरव) के पीछे-पीछे जाओ ।६७-६८

एवमाभाष्य कालाग्नि प्राह लोकमहेश्वरम् ।
अटस्व लोकानखिलान् भैक्षार्थी मन्नियोगतः ॥६९

इस प्रकार कालाग्नि को आदेश देकर लोकमहेश्वर ने कालभैरव से कहा कि मेरे द्वारा नियुक्त किए गए तुम, भिक्षार्थी बनकर सारे संसार में घूमो ।६९

यदा द्रक्ष्यसि देवेशं नारायणमनामयम् ।
तदासौ वक्ष्यति स्पष्टमुपायं पापशोधनम् ॥७०

जिस समय तुम्हे अनामय (निरोगी) नारायण का दर्शन हो जायेगा, वही तुम्हें पाप दूर करने का स्पष्ट उपाय बतायेंगे ।७०

स देवदेवतावाक्यमाकर्ण्य भगवान् हरः ।
कपालपाणिर्विश्वात्मा चचार भुवनत्रयम् ॥७१

देवाधिदेव भगवान् शंकर की बातें सुनकर, विश्वात्मा कालभैरव ने, कपाल हाथ में लेकर, तीनों लोकों में भ्रमण किया ।७१

आस्थाय विकृतं वेषं दीप्यमानं स्वतेजसा ।
श्रीमत्पवित्रं रुचिरं लोचनत्रयसंयुतम् ॥७२

उनका वेष विकृत होने पर भी अपने तेज से प्रकाशित, अत्यन्त सुन्दर तीन नेत्रों से युक्त, सौन्दर्यशाली और पवित्र था ।७२

१.तावत्त्वं भीषणे कालमनुगच्छ त्रिलोचनमिति, भीषणं कालमनुगच्छश्च शूलिनमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहस्रसूर्यप्रतिमैः[1] सिद्धैः प्रमथपुङ्गवैः ।
भाति कालाग्निनयनो महादेवः समावृतः ॥७३

करोड़ों सूर्य के समान सिद्ध प्रमथ गणों से घिरे हुए, कालाग्नि के समान जलते हुए नेत्र वाले महादेव शोभित होने लगे ।७३

पीत्वा तदमृतं दिव्यमानन्दम्परमेष्ठिनः ।
लीलाविलासबहुलो लोकानागच्छतीश्वरः[2] ॥७४

परमेष्ठी के अमृत स्वरूप इस दिव्य आनन्द का पान करने के लिए, क्रीडा में रमे रहने वाले ईश्वर—संसार के समीप उपस्थित हुए ।७४

तन्दृष्ट्वा कालवदनं शङ्करं कालभैरवम् ।
रूपलावण्यसम्पन्नं नारीकुलमगादनु ॥७५

कालमुख, कालभैरव शंकर को रूप लावण्य से परिपूर्ण देखकर नारी समूह उनके पीछे-पीछे चल पड़ा ।७५

गायन्ति गीतैर्विविधैर्नृत्यन्ति पुरतः प्रभोः ।
सस्मितं प्रेक्ष्य वदनञ्चक्रुभ्रूभङ्गमेव च ॥७६

वे लोग प्रभु के सामने विवध प्रकार से गाने और नाचने लगीं और भगवान के मुस्कुराते हुए मुखमण्डल को देखकर भौहें सिकोड़ने लगीं ।७६

स देवदानवादीनां देशानभ्येत्य शूलधृक् ।
जगाम विष्णोर्भुवनं यत्रास्ते पुरुषोत्तमः ॥७७

त्रिशूलधारी महादेव, देवताओं और राक्षसों के देश में घूमते हुए, अन्त में भगवान् पुरुषोत्तम के निवास स्थान विष्णुलोक पहुँचे ।७७

सम्प्राप्य[3] दिव्यभवनं शङ्करो लोकशंकरः ।
सहैव भूतप्रवरैः प्रवेष्टुमुपचक्रमे ॥७८

लोकोपकारी शंकर, विष्णु के दिव्य भवन में पहुँचकर, भूत श्रेष्ठों (शिव के अनुचर वृन्द) के साथ, उसमें प्रवेश करने का प्रयास करने लगे ।७८

अविज्ञाय परं भावं दिव्यं तत्पारमेश्वरम् ।
न्यवारयत्त्रिशूलांकं द्वारपालो महाबलः ॥७९

शङ्खचक्रगदापाणिः पीतवासा महाभुजः ।
विष्वक्सेन इति ख्यातो विष्णोरंशसमुद्भवः ॥८०

---

१. कोटिसूर्यप्रतीकाशैः प्रमथैश्चातिगर्वितैरिति पा० । २ लोकनां गतिरीश्वर इति पा० । ३ निरीक्ष्य भवनं दिव्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णु के अंश से उत्पन्न, शंख, चक्र, गदाधारी, पीले रंग का वस्त्र धारण किए हुए विष्वकसेन नाम से विख्यात विशाल भुजाओं वाले, महान् बलशाली द्वारपाल ने परमेश्वर के दिव्य परम भाव को न जानकर, त्रिशूलपाणि महादेव को उस भवन में प्रवेश करने से रोका। (तत्पश्चात् कालवेग नाम से प्रसिद्ध शंकर गण कालभैरव के आदेश पर, विष्णु से उत्पन्न उस द्वारपाल के साथ युद्ध करने लगा) ७९-८०।

(अथ तं शंकरगणं युयुधे विष्णुसंभवः।
भीषणो भैरवादेशात्कालवेग इति स्मृतः।)
विजित्य तं कालवेगं क्रोधसंरक्तलोचनः।
दुद्रावाभिमुखं रुद्रं चिक्षेप च सुदर्शनम् ॥८१

कालवेग पर विजय प्राप्त करके विष्वक्सेन, क्रोध से लाल-लाल आँखें लिए रुद्र की ओर दौड़ा और उनकी तरफ सुदर्शन फेंका।८१

अथ देवो महादेवस्त्रिपुरारिस्त्रिशूलभृत्।
तमापतन्तं सावज्ञमालोकयदमित्रजित् ॥८२

तत्पश्चात् त्रिपुरारि त्रिशूलधारी, शत्रुओं को जीतने वाले, भगवान् महादेव ने, विष्वक्सेन को आक्रमण करने के लिए तत्पर देखकर, उसकी ओर उपेक्षाभरी दृष्टि से देखा।८२

तदन्तरे महद्भूतं युगान्तदहनोपमम्।
शूलेनोरसि निर्भिद्य पातयामास तं भुवि ॥८३

उसी समय, प्रलय की आग के समान एक महान् भूत (शिव के अनुचर) ने त्रिशूल से विष्वक् सेन का वक्ष छेद कर, उसे भूमि पर गिरा दिया।८३

स शूलाभिहतोऽत्यर्थं त्यक्त्वा स्वम्परमं बलम्।
तत्याज जीवितं दृष्ट्वा मृत्युं व्याधिहता इव ॥८४

विष्वक्सेन ने, चक्र से अत्यन्त घायल होकर, अपने परम बल को त्याग कर व्याधि से मरने वाले व्यक्ति के समान मृत्यु को देखते हुए, प्राण त्याग दिए।८४

निहत्य विष्णुपुरुषं साद्धं प्रमथपुङ्गवैः।
विवेश चान्तरगृहं समादाय कलेवरम् ॥८५

महादेव ने, विष्णुपुरुष का वध कर, उसका मृतक शरीर उठाकर, प्रमथ पुरुषों (शिव के अनुचर) के साथ विष्णु के अन्तः पुर में प्रवेश किया।८५

वीक्ष्य तं जगतो हेतुमीश्वरं भगवान्हरिः।
शिरां ललाटात्समिध्य रक्तधारामपातयत् ॥८६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान् विष्णु ने जगत् के कारण स्वरूप ईश्वर का दर्शन करके, मस्तक की शिरा भेद कर रुधिर की धारा, प्रवाहित की ।८६

गृहाण भिक्षां भगवन् मदीयाममितद्युते ।
न विद्यतेऽन्या ह्युचिता तव त्रिपुरमर्दन ॥८७

विष्णु बोले--हे अमितद्युति ! हे भगवान् ! मेरी यह भिक्षा स्वीकार कीजिए । हे त्रिपुरमर्दन ! आपके लिए दूसरी भिक्षा उचित नहीं ।८७

न सम्पूर्णं कपालं तद्ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
दिव्यं वर्षसहस्रं तु सा च धारा प्रवाहिता ॥८८

तत्पश्चात्, सहस्रों दिव्य वर्षों में भी परमेष्ठी ब्रह्मा का कपाल, पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हुआ और वह रुधिर धारा सहस्रों दिव्य वर्षों तक बहती रही ।८८

अथाब्रवीत्कालरुद्रं हरिर्नारायणः प्रभुः ।
संस्तुय[1] विविधैर्भावैर्बहुमानपुरःसरम् ॥८९
किमर्थमेतद्वदनं ब्रह्मणो भवता धृतम् ।
प्रोवाच वृत्तमखिलं देवदेवो महेश्वरः ॥९०

तत्पश्चात् प्रभु हरिनारायण, ने अत्यन्त सम्मान सहित, विभिन्न प्रकार से स्तुति करके कालरुद्र से कहा--आपने किस लिए ब्रह्मा का मस्तक धारण किया है ? यह सुनकर देवाधिदेव महेश्वर ने पूरा वृत्तान्त सुनाया ।८९-९०

समाहूय हृषीकेशो ब्रह्महत्यामथाच्युतः ।
प्रार्थयामास भगवान्विमुञ्चति त्रिशूलिनम् ॥९१

हृषिकेश भगवान् अच्युत (विष्णु) ने ब्रह्महत्या को बुलाकर, उससे प्रार्थना की कि वह त्रिशूली (भगवान् शंकर) का त्याग कर दे ।९१

न तत्याजाथ सा पार्श्वं व्याहृतापि मुरारिणा ।
चिरं ध्यात्वा जगद्योनिं शङ्करं प्राह सर्ववित् ॥९२

भगवान् मुरारि (विष्णु) द्वारा इस तरह कही जाने पर भी ब्रह्महत्या भगवान् त्रिशूली के बगल से नहीं हटी । तत्पश्चात् सर्वज्ञ विष्णु ने कुछ देर तक ध्यान लगाकर संसार के कारणभूत शंकर से कहा ।९२

व्रजस्व दिव्यां भगवन्पुरीं वाराणसीं शुभाम् ।
यत्राखिलजगद्दोषात्क्षिप्रन्नाशयतीश्वरः ॥९३

हे भगवान् ! जिस स्थान में महेश्वर सारे संसार के दोषों का शीघ्र नाश करते हैं, आप उस अत्यन्त पवित्र और दिव्य वाराणसी धाम में जाइए ।९३

---

१ संस्तुय वैदिकैर्मन्त्रैरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः सर्वाणि भूतानि तीर्थान्यायतनानि च ।
जगाम लीलया देवो लोकानां हितकाम्यया ॥९४

संसार के हित की कामना से, क्रीड़ावश महादेव सभी गुप्त तीर्थों और मन्दिर में गए ।९४

संस्तूयमानः प्रमथैर्महायोगैरितस्ततः ।
नृत्यमानो महायोगी हस्तन्यस्तकलेवरः ॥९५

तदनन्तर प्रमथगणों के द्वारा चारों ओर से स्तुत्य होते हुए, महायोगी महादेव हाथों में विष्वक्सेन का देह उठाकर नृत्य करते हुए जाने लगे ।९५

तमभ्यधावद्भगवान्हरिर्नारायणः प्रभुः ।
समास्थाय[1] परं रूपं नृत्यदर्शनलालसः ॥९६

नारायण हरि नृत्य देखने की इच्छा से श्रेष्ठ रूप धारण कर महादेव के पीछे-पीछे गए ।९६

निरीक्षमाणो गोविन्दं वृषेन्द्रांकितशासनः ।
सस्मयोऽनन्तयोगात्मा नृत्यति स्म पुनः पुनः ॥९७

बैल पर आरुढ़, अनन्त योगात्मा महादेव ने गोविन्द को देख देखकर, थोड़ा मुस्कुराते हुए, पुनः नृत्य किया ।९७

अनु[2] चानुचरो रुद्रं स हरिर्द्धर्मवाहनः ।
भेजे महादेवपुरीं वाराणसीति विश्रुताम् ॥९८

अन्त में धर्म को वाहन करने वाले रुद्र और नारायण अनुचरों के साथ, वाराणसी नाम से प्रसिद्ध महादेव के धाम पर पहुँचे ।९८

प्रविष्टमात्रे विश्वेशे ब्रह्महत्या कपर्द्दिनि ।
हाहेत्युक्त्वा सनादं वै पातालं प्राप दुःखिता ॥९९

विश्वेश्वर और शंकर के वाराणसी में प्रवेश करते ही ब्रह्महत्या दुःखी होकर, हा-हा शब्द से आर्त्तनाद करते हुए, पाताल में प्रवेश कर गई ।९९

प्रविश्य परमं स्थानं कपालं ब्रह्मणो हरः ।
गणानामग्रतो देवः स्थापयामास शंकरः ॥१००

भगवान् शंकर ने परम धाम में प्रवेश करके, ब्रह्मा का मस्तक गणों के सामने स्थापित किया ।१००

---

१. अथास्थायापरं रूपं रुद्रं दर्शनलालसमिति पा० । २. अथ सानुचरो देवः ससहायः सवाहन इति, अथ सानुचरो रुद्रः स हरिर्धर्मवाहन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापयित्वा महादेवो ददौ तच्च कलेवरम् ।
उक्त्वा सजीवमस्त्विति विष्णवेऽसौ घृणानिधिः ॥१०१

दया के सागर भगवान् महादेव ने मस्तक को स्थापित कर 'जीवन प्राप्त हो' ऐसा कहकर, विष्णु को विष्वक्सेन का देह प्रदान किया ।१०१

ये स्मरन्ति समाजस्रं कापालं वेषमुत्तमम् ।
तेषां विनश्यति क्षिप्रमिहामुत्र च पातकम् ॥१०२

जो व्यक्ति मेरे उत्तम कपालयुक्त रूप को सदैव ध्यान में रखेगा, उनके इहलोक और परलोक के सारे पाप अति शीघ्र नष्ट हो जायेंगे ।१०२

आगम्य तीर्थप्रवरे स्नानं कृत्वा विधानतः ।
तर्पयित्वा पितॄन्देवान्मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥१०३

यदि मनुष्य इस श्रेष्ठ तीर्थ में आकर स्नान करके, पितरों और देवताओं का तर्पण करे, तो ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है ।१०३

अशाश्वतं जगज्ज्ञात्वा व्रजध्वं[1] परमां पुरीम् ।
देहान्ते तत्परं ज्ञानं ददाति परमम्पदम् ॥१०४

जो व्यक्ति इस संसार को क्षणिक मानकर, इस तीर्थ में निवास करेगा, मृत्यु के समय मैं उसे श्रेष्ठ ज्ञान और श्रेष्ठ पद प्रदान करूंगा ।१०४

इतीदमुक्त्वा भगवान् समालिङ्ग्य जनार्दनम् ।
सहैव प्रमथेशानैः क्षणादन्तरधीयत ॥१०५

भगवान् महादेव ने यह कहकर, विष्णु का आलिंगन किया और कुछ ही क्षणों में प्रमथ गणों के साथ अन्तर्ध्यान हो गए ।१०५

स लब्ध्वा भगवान्कृष्णो विष्वक्सेनं त्रिशूलिनः ।
स्वन्देशमगमत्तूष्णीं गृहीत्वा परमं बुधः ॥१०६

भगवान् कृष्ण भी त्रिशूली से विष्वक्सेन को प्राप्त कर, अतिशीघ्र अपने स्थान पर चले गए ।१०६

एतद्वः कथितं पुण्यं महापातकनाशनम् ।
कपालमोचनन्तीर्थं स्थाणोः प्रियकरं शुभम् ॥१०७

महादेव को अतिप्रिय, शुभ और महापाप नाशक कपालमोचन नामक तीर्थ के विषय में आपलोगों से बताया ।१०७

---

१. येऽस्मिन्स्थाने वसन्ति वै इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

य इमं पठतेऽध्यायं ब्राह्मणानां समीपतः ।
मानसैर्वाचिकैः पापैः कायिकैश्च प्रमुच्यते ॥१०८

जो व्यक्ति ब्राह्मण के पास इस अध्याय का पाठ करता है, वह कायिक वाचिक और मानसिक सभी प्रकार के पापों से मुक्त होता है ।१०८

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे कपालमोचनमाहात्म्यं नामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में कपालमोचनमाहात्म्य नामक इकतीसवाँ अध्याय समाप्त ।३१

●

द्वात्रिंशोऽध्यायः

पुनः प्रायश्चित्तप्रकरणम्

व्यास उवाच

सुरापस्तु सुरां तप्तामग्निवर्णां पिबेत्तदा ।
निर्दग्धकायः[1] स तया मुच्यते च द्विजोत्तमः ॥१

व्यास बोले—सुरा पान करने वाला ब्राह्मण, अग्निवर्ण (अर्थात् लाल रंग की) उष्ण सुरा को स्वयं पीएगा । उससे शरीर के झुलस जाने पर वह पाप से मुक्त होगा ।१

गोमूत्रमग्निवर्णं वा गोशकृद्रसमेव च ।
पयो घृतं जलं वाथ मुच्यते पातकात्ततः ॥२

गोमूत्र, गोबर का रस, गाय का दूध, गाय का घी, या जल को अग्निवर्ण बनाकर पीना चाहिए । इनसे शरीर झुलसने से भी पाप से मुक्ति मिलती है ।२

जलार्द्रवासाः प्रयतो ध्यात्वा नारायणं हरिम् ।
ब्रह्महत्याव्रतञ्चाथ चरेत्पापप्रशान्तये ॥३

पाप नाश के लिए, जल में भीगे हुए कपड़े पहन कर, पवित्र होकर और विष्णु का ध्यान करते हुए, ब्रह्महत्या व्रत पालन करना चाहिए ।३

---

१. तया स काये निर्दग्धे मुच्यते तु द्विजोत्तमा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुवर्णस्तेयकृद्विप्रो राजानमभिगम्य तु ।
स्वकर्म ख्यापयन्ब्रूयान्मा भवाननुशास्त्विति ॥४

सोना चुराने वाला ब्राह्मण राजा के पास जाकर कहे, "महाराज ! मैंने सोना चुराया है, मुझे दण्ड दीजिए ।"४

गृहीत्वा मुसलं राजा सकृद्धन्यात्तु तं स्वयम् ।
वधे तु शुद्धयते स्तेनो ब्राह्मणस्तपसाथवा ॥५

राजा चोरी करने वाले ब्राह्मण को, एकबार स्वयं, मूसल से मारेगा । मृत्यु हो जाने पर सोना चुराने वाला पाप से मुक्त हो जाएगा । परन्तु ब्राह्मण केवल तपस्या के बल पर, इस पाप से मुक्त हो सकता है ।५

स्कन्धेनादाय मुसलं लगुडं वापि खादिरम् ।
शक्तिञ्चादाय तीक्ष्णाग्रामायसं दण्डमेव वा ॥६

राजा तेन च गन्तव्यो मुक्तकेशेन धावता ।
आचक्षाणेन तत्पापमेतत्कर्मास्मि शाधि माम् ॥७

लकुच या खदिर की लकड़ी से बनी मूसल, तीक्ष्णाग्र शक्ति (लोहे से बना अस्त्र विशेष) और लोहे का दण्ड, इनमें से कोई एक वस्तु कन्धे पर उठाकर, बाल खोलकर तीव्र गति से राजा के पास जाकर अपना पाप प्रकट करते हुए कहेगा, "मैंने यह कार्य किया है, इसके लिए मुझे दण्डित कीजिए ।"६–७।

शासनाद्वा विमोक्षाद्वा स्तेनः स्तेयाद्विमुच्यते ।
अशासित्वा तु तं राजा स्तेनस्याप्नोति किल्बिषम् ॥८

राजा के दण्ड देने या क्षमा करने पर, सोना चुराने वाला, पाप से मुक्त होगा; किन्तु यदि राजा उसे दण्डित न करे, तो राजा स्वयं उस पाप में लिप्त हो जाएगा ।८

तपसापनोतुमिच्छंस्तु[1] सुवर्णस्तेयजं मलम् ।
चीरवासा द्विजोऽरण्ये चरेद्ब्रह्महणो व्रतम् ॥९

स्नात्वाश्वमेधावभृथे पूतः स्यादथवा द्विजः ।
प्रदद्याद्वाथ विप्रेभ्यः स्वात्मतुल्यं हिरण्यकम् ॥१०
चरेद्वा वत्सरं कृच्छ्रं ब्रह्मचर्यपरायणः ।
ब्राह्मणः स्वर्णहारी तु तत्पापस्यापनुत्तये ॥११

तपस्या से पाप नाश की इच्छा रखने वाले, सुवर्ण चोर ब्राह्मण को कौपीन पहनकर, जंगल में रहकर, ब्रह्महत्या का व्रत करना चाहिए, या ब्राह्मण को अश्वमेध में

१. तपसापनयेत् यस्तु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवभृथ (यज्ञोपरान्त किया जाने वाला स्नान) स्नान करना चाहिए अथवा अपने शरीर के वजन के बराबर सोना ब्राह्मणों को दान करना चाहिए। अथवा सुवर्ण चोर ब्राह्मण को पाप दूर करने के लिए, ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए एक वर्ष तक व्रतानुष्ठान करना चाहिए।९–११।

गुरोर्भार्यां समारुह्य ब्राह्मणः काममोहितः।
अवगूहेत्स्त्रियं तप्तां दीप्तां काष्णायसीं कृताम् ॥१२

काम भावनावश गुरुपत्नी के साथ समागम करने से लोहे की स्त्री बनाकर, उसे तपाकर, उस लौहमूर्ति का आलिंगन करना चाहिए।१२

स्वयं वा शिश्नवृषणावुत्कृत्याधाय चाञ्जलौ।
अभिगच्छेद्दक्षिणाशामानिपातादजिह्मगः[1] ॥१३

अथवा अपना लिंग और अण्डकोष, स्वयं काटकर, उसे अपने हाथ में लेकर, कुटिल गति त्याग कर जब तक प्राण न निकले, तब तक दक्षिण दिशा की ओर चलते रहना चाहिए।१३

गुर्वङ्गनागमः शुद्ध्यै चरेद्ब्रह्महणो व्रतम्।
शाखां वा कण्टकोपेतां परिष्वज्याथ वत्सरम् ॥१४

अधःशयीत नियतो मुच्यते गुरुतल्पगः।
कृच्छ्रं वाब्दं चरेद्विप्रश्चीरवासाः समाहितः ॥१५

अश्वमेधावभृथके स्नात्वा वा शुद्ध्यते द्विजः।
कालेऽष्टमे वा भुञ्जानो ब्रह्मचारी सदा व्रती ॥१६

स्थानाशनाभ्यां विहरंस्त्रिरह्नोऽभ्युपयन्नतः।
अधःशायी त्रिभिर्वर्षैस्तद्व्यपोहति पातकम् ॥१७

ब्रह्महत्याव्रत का पालन करने से अथवा काँटोंवाली डाल का आलिंगन करके वर्षभर प्रतिदिन भूमि पर सोने से, गुरु पत्नी के साथ समागम के पाप से मुक्ति मिलती है। अथवा वल्कल पहनकर एकाग्रचित्त होकर, वर्ष भर प्राजापत्य व्रत करने या अश्वमेधावभृथ में स्नान करने से मुक्ति मिलती है। गुरुपत्नीगामी को तीन वर्षों तक लगातार व्रतों का पालन करने वाला ब्रह्मचारी बनकर रहना चाहिए और अष्टम काल में भोजन करना चाहिए (अर्थात् तीन दिन उपवास तथा चौथे दिन रात को भोजन करना अथवा तीन दिन बाद केवल जल पीना चाहिए और भूमि पर लेटना चाहिए

---

१. आतिष्ठेद्दक्षिणामशामिति, प्रतिष्ठत् इति साधु पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा लोटते हुए जाना या अपनी इच्छा से कुछ समय तक बैठकर और कुछ समय खड़े रहकर विचरण करना चाहिए। ऐसा करने से गुरुपत्नी समागम के पाप से मुक्ति मिलती है अथवा बाद में चार या पाँच चान्द्रायण करने से मुक्त हुआ जा सकता है) ।१४-१७½।

चान्द्रायणानि वा कुर्यात्पञ्च चत्वारि वा पुनः ।
पतितैः संप्रयुक्तात्मा अथ वक्ष्यामि निष्कृतिम् ॥१८

पतितेन तु संसर्गे यो येन कुरुते द्विजः ।
स तत्पापापनोदार्थं[1] तस्यैव व्रतमाचरेत् ॥१९

अब (मैं) पापी के साथ रहने से उत्पन्न होने वाले पापों से मुक्ति का उपाय बताने जा रहा हूँ। जो व्यक्ति जिस प्रकार के पापी के साथ रहेगा, उसे भी वैसा ही पाप लगेगा। और उसे पाप दूर करने के लिए, वही सारे प्रायश्चित्त करने पड़ेंगे। ।१८-१९।

तप्तकृच्छ्रञ्चरेद्वाथ संवत्सरमतन्द्रितः ।
षाण्मासिके तु संसर्गे प्रायश्चित्तार्थमाचरेत् ॥२०

वह व्यक्ति आलस्य का त्याग कर, एक वर्ष तक तप्तकृच्छ्र व्रत और छः महीने साथ रहने पर आधा प्रायश्चित्त (अर्थात् छः महीने तप्तकृच्छ्र व्रत) करना चाहिए ।२०

एभिर्व्रतैरपोहन्ति महापातकिनो मलम् ।
पुण्यतीर्थाभिगमनात्पृथिव्यां वाथ निष्कृतिः ॥२१

इन व्रतों का पालन करने से महापापी का पाप दूर होता है अथवा पृथिवी पर स्थित पुण्य तीर्थों में घूमने से भी पाप दूर होते हैं ।२१

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमम् ।
कृत्वा तैश्चापि संसर्गं ब्राह्मणः कामचारतः ॥२२

कुर्यादनशनं विप्रः पुनस्तीर्थे समाहितः ।
ज्वलन्तं वा विशेदग्निं ध्यात्वा देवं कपर्दिनम् ॥२३

ब्रह्महत्या, मद्यपान, चोरी और गुरुपत्नी के साथ सहवास करने या इन अपराधों को करने वाले पापी के साथ जानबूझकर रहने से, ब्राह्मण को अनशन करना चाहिए अथवा एकाग्रचित्त होकर सारे पुण्य तीर्थों में भ्रमण करना चाहिए अथवा महादेव का ध्यान करते हुए जलती हुई अग्नि में प्रवेश कर जाना चाहिए।२२-२३।

न ह्यन्या निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः ।
तस्मात्पुण्येषु तीर्थेषु दहन्वापि स्वदेहकम् ॥२४

---

१. तत्पापापनाशार्थमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मवादी ऋषियों ने महापापियों के लिए इसके अलावा और दूसरा प्रायश्चित्त नहीं बताया है। अतः महापापी को पुण्यतीर्थों में भ्रमण करना या अपने शरीर को झुलसाना चाहिए।२४

इति श्रीकुर्मपुराणे उत्तरार्द्धे द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥३२

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में बत्तीसवाँ अध्याय समाप्त।३२

●

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

पुनः प्रायश्चित्तकथन

व्यास उवाच

गत्वा दुहितरं विप्रः स्वसारं वा स्नुषामपि।
प्रविशेज्ज्वलनन्दीप्तं मतिपूर्वमिति स्थितिः ॥१

व्यास बोले—अपनी पुत्री, बहन या पुत्रवधू के साथ जानबूझकर सहवास करने से जलते हुए आग में प्रवेश करना चाहिए, यही शास्त्र की मर्यादा है।१

मातृष्वसां[1] मातुलानीं तथैव च पितृष्वसाम्[2]।
भागिनेयीं समारुह्य कुर्यात्कृच्छ्रातिकृच्छ्रकौ ॥२
चान्द्रायणञ्च कुर्वीत तस्य पापस्य शान्तये।
ध्यायन्देवं जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् ॥३

मौसी, मामी, बूआ या भांजी के साथ सहवास करने से कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए अथवा उस पाप की शान्ति के लिए संसार के कारणभूत अनादिनिधन भगवान् विष्णु का ध्यान करते हुए चान्द्रायण व्रत करना चाहिए।२-३।

भ्रातृभार्यां समारुह्य कुर्यात्तत्पापशान्तये।
चान्द्रायणानि चत्वारि पञ्च वा सुसमाहितः ॥४

भाई की पत्नी के साथ सहवास करने से, उस पाप की शान्ति के लिए एकाग्र होकर चार या पाँच चान्द्रायण करना चाहिए।४

---

१. मातृष्वसारमिति साधु। २. पितृष्वसारमिति साधु।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पितृष्वस्रेयीं[1] गत्वा तु स्वस्रीयां मातुरेव च ।
मातुलस्य सुतां वापि गत्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥५

मौसेरी, फुफेरी और ममेरी बहन के साथ सहवास करने से चान्द्रायण व्रत करना चाहिए ।५

सखिभार्यां समारुह्य गत्वा श्यालीं तथैव च ।
अहोरात्रोषितो भूत्वा ततः कृच्छ्रं समाचरेत् ॥६

मित्र की पत्नी और साली के साथ सहवास करने से एक दिन और रात उपवास करके तप्तकृच्छ्र व्रत करना चाहिए ।६

उदक्या गमने विप्रस्त्रिरात्रेण विशुध्यति ।
चाण्डालीगमने चैव तप्तकृच्छ्रत्रयं विदुः ॥७

रजस्वला स्त्री के साथ सहवास करने से तीन रात तक उपवास रखने से शुद्धि हो पाती है। चाण्डालिनी के साथ सहवास करने से, तीन तप्तकृच्छ्र या सान्तपन व्रत करने के अलावा और कोई उपाय नहीं ।७-७½।

शुद्धिः सान्तपनेन स्यान्नान्यथा निष्कृतिः स्मृता ।
मातृगोत्रां समारुह्य समानप्रवरां तथा ॥८
चान्द्रायणेन शुध्येत प्रयतात्मा समाहितः ।
ब्राह्मणो ब्राह्मणीङ्गत्वा कृच्छ्रमेकं समाचरेत् ॥९

माता के समान गोत्र या समान प्रवर वाली किसी स्त्री के साथ सहवास करने से, शुद्ध और एकाग्र चित्त से चान्द्रायण करने से शुद्धि हो जाती है। ब्राह्मण यदि किसी दूसरी ब्राह्मणी के साथ सहवास करे तो एक वर्ष तक कृच्छ्र व्रत करना होगा ।८-९।

कन्यकान्दूषयित्वा तु चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ।
अमानुषीषु पुरुष उदक्यायामयोनिषु ॥१०
रेतः सिक्त्वा जले चैव कृच्छ्रं सान्तपनं चरेत् ।
वार्द्धिकीगमने विप्रस्त्रिरात्रेण विशुद्ध्यति ॥११

कन्या (अविवाहिता या अरजस्वला) के साथ सहवास करने से चान्द्रायण करना चाहिए। मनुष्य से भिन्न किसी दूसरे प्राणी के साथ, रजस्वला स्त्री के साथ, योनि-भिन्न स्थानों में और पानी में वीर्य गिराने से कृच्छ्र और सान्तपन व्रत करना

---

१. पितृष्वसेयां चत्वारि पञ्च वा मातुरेव च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। व्यभिचारिणी स्त्री के साथ सहवास करने से, तीन रात तक उपवास रखने से ब्राह्मण की शुद्धि होती है ।१०-११।

गवि मैथुनमासेव्य चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ।
वेश्यायां मैथुनं कृत्वा प्राजापत्यं चरेद्द्विजः ॥१२

गाय के साथ सहवास करने से चान्द्रायण और वेश्या के साथ करने से ब्राह्मण को प्राजापत्य व्रत करना चाहिए ।१२

पतितां च स्त्रियङ्कृत्वा त्रिभिः कृच्छ्रैर्विशुद्ध्यति ।
पुल्कसीगमने चैव कृच्छ्रं चान्द्रायणं चरेत् ॥१३

पतिता स्त्री के साथ सहवास करने से तीन कृच्छ्र व्रत करने से शुद्धि होती है और चाण्डाल की स्त्री के साथ सहवास करने से कृच्छ्र और चान्द्रायण व्रत करने पड़ते हैं ।१३

नटीं शैलूषकीं चैव रजकीं वेणुजीविनीम् ।
गत्वा चान्द्रायणङ्कुर्यात्तथा चर्मोपजीविनीम् ॥१४

नटी, नर्तकी, धोबिन, बांस बेचने वाली और चमड़े का काम करने वाली स्त्री के साथ सहवास करने से चान्द्रायण व्रत करना पड़ता है ।१४

ब्रह्मचारी स्त्रियङ्गच्छेत्कथञ्चित्काममोहितः ।
सप्तागारं चरेद्भैक्षं वसित्वा गर्दभाजिनम् ॥१५

उपस्पृशेत्त्रिषवणं स्वपापं परिकीर्त्तयन् ।
संवत्सरेण चैकेन तस्मात्पापात् प्रमुच्यते ॥१६

यदि ब्रह्मचारी काम से पीड़ित होकर, किसी स्त्री के साथ सहवास करता है तो उसे गधे का चमड़ा ओढ़कर, सात घरों में जाकर भिक्षा माँगनी पड़ेगी और अपने पाप को बताकर तीनों संध्याओं में स्नान करना होगा। इस प्रकार एक वर्ष तक व्रत का पालन करने से, उसे इस पाप से मुक्ति मिलेगी ।१५-१६।

ब्रह्महत्याव्रतश्चापि[1] षण्मासान्विचरन्यमी ।
मुच्यते ह्यवकीर्णी तु ब्राह्मणानुमते स्थितः ॥१७

अथवा यदि वह ब्राह्मणों की अनुमति से, दृढ़ता पूर्वक छः महीने तक ब्रह्महत्या व्रत का पालन करे, तो अवकीर्णी (वीर्यसेचन करने वाला ब्रह्मचारी) पाप से मुक्त हो सकता है।१७

---

१. ब्रह्महत्याव्रतं वापि षण्मासानाचरेद्यतिः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सप्तरात्रमकृत्वा तु भैक्षचर्याग्निपूजनम् ।
रेतसश्च समुत्सर्गे प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥१८

वीर्यपात हो जाने से सात रात्रियों तक भिक्षा याचना और अग्निपूजन किए बिना प्रायश्चित्त करना चाहिए ।१८

ओंकारपूर्विकाभिस्तु महाव्याहृतिभिः सदा ।
संवत्सरन्तु भुञ्जानो नक्तं भिक्षाशनः शुचिः ॥१९

पहले ओंकार उच्चरित करके, महाव्याहृतियों के द्वारा एक वर्ष तक हवन करना चाहिए, और पवित्र होकर, रात में भिक्षा में प्राप्त वस्तु ग्रहण करनी चाहिए ।१९

सावित्रीञ्च जपेन्नित्यं[1] सत्वरः क्रोधवर्ज्जितः ।
नदीतीरेषु तीर्थेषु तस्मात्पापाद्विमुच्यते ॥२०

नदी किनारे या तीर्थों में, क्रोध का परित्याग कर, सावित्री को जप करने से, इस पाप से मुक्ति मिलती है ।२०

हत्वा तु क्षत्रियं विप्रः कुर्याद्ब्रह्महणो व्रतम् ।
अकामतो वै षण्मासान्दद्यात्पञ्चशतङ्गवाम् ॥२१

क्षत्रिय की हत्या करने से ब्राह्मण को ब्रह्महत्याव्रत का पालन करना चाहिए, परन्तु अनजाने में वध हो जाए, तो छः महीने तक पाँच सो गौएँ दान करनी चाहिए ।२१

अब्दं चरेद्ध्यानयुतो वनवासी समाहितः ।
प्राजापत्यं सान्तपनं तप्तकृच्छ्रन्तु वा स्वयम् ॥२२

अथवा जंगल में रहकर, ध्यान लगाकर एकाग्र चित्त से, एक वर्ष तक प्राजापत्य, सान्तपन या तप्तकृच्छ्र व्रत करना चाहिए ।२२

प्रमादात्कामतो वैश्यं कुर्यात्संवत्सरत्रयम् ।
गोसहस्रन्तु पादन्तु प्रदद्याद्ब्रह्मणो व्रतम्[2] ॥२३

जानबूझकर वैश्य की हत्या करने से, तीन वर्षों तक एक हजार गाएँ दान करनी चाहिए अथवा ब्रह्महत्या व्रत का चौथाई भाग पालन करना चाहिए। अथवा कृच्छ्रातिकृच्छ्र या चान्द्रायण व्रत करना चाहिए ।२३-२३½।

---

१. जपेच्चैव नित्यं क्रोधं विवर्जयेदिति पा० । २. दद्याद्ब्रह्मणो व्रतीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ वा कुर्याच्चान्द्रायणमथापि वा ।
संवत्सरं व्रतं [कुर्याच्छूद्रं हत्वा प्रमादतः ॥२४

जानबूझकर शूद्र की हत्या करने से एक वर्ष तक व्रत का पालन करना चाहिए, अथवा उस पाप की शान्ति के लिए पांच सौ या ढाई सौ गाएँ दान करनी चाहिए।२४-२४½

गोसहस्रार्द्धपादञ्च दद्यात्तत्पापशान्तये ।
अष्टौ वर्षाणि वा त्रीणि कुर्याद् ब्रह्महणो व्रतम् ।
हत्वा तु क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं चैव यथाक्रमम् ॥२५

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की हत्या करने से क्रमानुसार आठ, छः और तीन वर्षों तक ब्रह्महत्या व्रत करना चाहिए।२५

निहत्य ब्राह्मणीं विप्रस्त्वष्टवर्षं [व्रतञ्चरेत् ।
राजन्यां वर्षषट्कं तु वैश्यां संवत्सरत्रयम् ॥२६

ब्राह्मणी की हत्या करने वाला ब्राह्मण आठ वर्षों तक, क्षत्रिय स्त्री की हत्या करने वाला छः वर्षों तक और वैश्य स्त्री की हत्या करने वाला ब्राह्मण तीन वर्षों तक व्रत करेगा ।२६

वत्सरेण विशुद्धयेत शूद्रीं हत्वा द्विजोत्तमः ।
वैश्यां हत्वा द्विजातिस्तु किञ्चिद्दद्यादिद्विजातये ॥२७

शूद्र स्त्री की हत्या करने वाला ब्राह्मण एक वर्ष तक ब्रह्महत्या व्रत पालन करेगा और वैश्य स्त्री की हत्या करने वाला द्विजाति, ब्राह्मण को थोड़ा बहुत दान करने से शुद्ध होगा ।२७

अन्त्यजानां वधे चैव कुर्याच्चान्द्रायणं व्रतम् ।
पराकेणाथवा शुद्धिरित्याह भगवानजः ॥२८

निम्न जाति की स्त्री की हत्या करने से चान्द्रायण अथवा पराक व्रत करके शुद्ध हुआ जा सकता है, ऐसा भगवान् मनु ने कहा है ।२८

मण्डूकं नकुलङ्काकं बिडालं खरमूषकौ ।
श्वानं हत्वा द्विजः कुर्यात्षोडशांशं महाव्रतम् ॥२९

मेढ़क, नेवला, कौआ, ग्राम्य शूकर, चूहा और कुत्ता मारने से महाव्रत (बारह वर्षों तक चलने वाला व्रतविशेष) का सोलहवां अंश प्रायश्चित्त करना चाहिए।२९

पयः पिबेत्त्रिरात्रन्तु श्वानं हत्वा ह्यतन्द्रितः ।
मार्ज्जारं वाथ नकुलं योजनञ्चाध्वनो व्रजेत् ॥३०

अथवा कुत्ता मारने वाला, आलस्य का परित्याग कर, तीन रात्रियों तक पानी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीकर रहेगा। बिल्ली या नेवला मारने से एक योजन की दूरी तक, मार्ग में चलना होगा ।३०

कृच्छ्रं द्वादशरात्रन्तु कुर्यादश्ववधे द्विजः ।
अर्चां कार्ष्णायसीं दद्यात्सर्पं हत्वा द्विजोत्तमः ॥३१

घोड़ा मारने पर, ब्राह्मण का बारह रात्रियों तक कृच्छ्र व्रत करना होगा और साँप मारने से लोहे का, काले रंग का, एक साँप बनाकर, किसी ब्राह्मण को दान करना होगा ।३१

पलालभारकं षण्ढे सीसकञ्चैकमाषकम् ।
घृतकुम्भं वराहे तु तिलद्रोणन्तु तित्तिरे ॥३२

नपुंसक की हत्या करने से, एक भार (अर्थात् १८००० तोला) पुआल या या ब्राह्मण को एक माशा बराबर सीसा दान-करना चाहिए। वराह वध करने से घी से भरा हुआ घड़ा और तीतर मारने से एक द्रोण (अर्थात् ३२ सेर) बराबर तिल दान करना चाहिए।३२

शुशुं द्विहायनं वत्सं क्रौञ्चं हत्वा त्रिहायनम् ।
हत्वा हंसं बलाकाञ्च बकं बर्हिणमेव च ॥३३
वानरं श्येनभासञ्च स्पर्शयेद्ब्राह्मणाय गाम् ।
क्रव्यादांस्तु मृगान्हत्वा धेनुन्दद्यात्पयस्विनीम् ॥३४

तोता मारने से दो साल की गाय और क्रौंच मारने से तीन साल की गाय दान करनी चाहिए। हंस, बलाक, बगुला, मोर, बन्दर, बाज और गिद्ध पक्षी मारने से ब्राह्मण को एक गाय दान करनी चाहिए। मांसाहारी, शेर जैसे जानवरों का वध करने से दुधारू गाय दान करनी चाहिए ।३३-३४।

अक्रव्यादान्वत्सतरीमुष्ट्रं हत्वा तु कृष्णलम् ।
किञ्चिद्देयन्तु विप्राय दद्यादस्थिमतां वधे ॥३५

शाकाहार (मृगादि) जानवरों को मारने से बछिया तथा ऊँट मारने से एक रत्ति सोना और हड्डियों वाले जानवरों को मारने से, ब्राह्मणों को थोड़ा दान दे देना चाहिए ।३५

अनस्थ्नाञ्चैव हिंसायां प्राणायामेन शुध्यति ।
फलदानान्तु वृक्षाणां छेदने जप्यमृक्शतम् ॥३६

बिना हड्डियों वाले जानवरों को मारने से, प्राणायाम कर लेने से शुद्धि हो जाती है। फलदार वृक्ष काटने से सौ ऋचाओं का पाठ करना चाहिए ।३६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुल्मवल्लीलतानान्तु पुष्पितानाञ्च वीरुधाम् ।
अण्डजानां च सर्वेषां स्वेदजानां च सर्वशः ॥३७

झाड़ी, लतर, फूलदार लताएँ, सारे अण्डजों स्वेदजों और फल-फूलदार वृक्षों की काटने से, घी पी लेने से प्रायश्चित्त हो जाता है।३७½।

फलपुष्पोद्भवानाञ्च घृतप्राशो विशोधनम् ।
हस्तिनाञ्च वधे दृष्टं तप्तकृच्छ्रं विशोधनम् ॥३८

चान्द्रायणं पराकं वा गां हत्वा तु प्रमादतः ।
मतिपूर्ववधे चास्याः प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥३९

हाथी मारने पर, तप्तकृच्छ्र व्रत करने से शुद्धि हो जाती है। अन्जाने में गोहत्या करने से चान्द्रायण या पराक व्रत करना चाहिए, किन्तु जानबूझकर गोहत्या करने से, उसका कोई प्रायश्चित्त नहीं होता।३८-३९।

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे प्रायश्चित्तनिरूपणे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३

चतुस्त्रिंशोऽध्यायः

व्यास उवाच

मनुष्याणान्तु हरणं कृत्वा स्त्रीणां गृहस्य च ।
वापीकूपजलानाञ्च शुद्ध्येच्चांद्रायणेन तु ॥१

व्यास बोले—पुरुष, स्त्री, और गृह हरण करने से तथा तालाब या कुएं से पानी चुराने से, चान्द्रायणव्रत करने पर शुद्धि होती है।१

द्रव्याणामल्पसाराणां स्तेयं कृत्वाऽन्यवेश्मनः ।
चरेत्सांतपनं कृच्छ्रं तन्निर्यात्यात्मशुद्धये ॥२

---

१. अण्डजानाञ्च सत्त्वानामिति, अन्नजानान्तु सत्त्वानामिति पा० । २. राजसाञ्चेति, अण्डजानान्तु सर्वश इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम मूल्य की वस्तुएं (अर्थात् तांबा या सीसा) चुराने से; वह वस्तु उसके स्वामी को लौटाकर, सान्तपन व्रत करना चाहिए ।२

धान्यान्नधनचौर्यन्तु कृत्वा कामाद्द्विजोत्तमः ।
स्वजातीयगृहादेव कृच्छ्रार्द्धेन विशुध्यति ॥३

ब्राह्मण यदि जानबूझकर सजातीय के घर से अन्नादि धन चुराता है, तो एक साल तक प्राजापत्य व्रत करने से उसकी शुद्धि होती है ।३

भक्ष्यभोज्योपहरणे यानशय्यासनस्य च ।
पुष्पमूलफलानाञ्च पंचगव्यं विशोधनम् ॥४

खाने, पीने योग्य भोज्य पदार्थ, वाहन, शय्या, आसन, फूल, मूल और फल चुराने से पंचगव्य (गोमूत्र, गोबर, गाय का दूध, दही, और घी) पीकर शुद्ध हुआ जा सकता है ।४

तृणकाष्ठद्रुमाणां च शुष्कान्नस्य गुडस्य च ।
चैलचर्मामिषाणां च त्रिरात्रं स्यादभोजनम् ॥५

तिनका, लकड़ी, पेड़, सूखा हुआ अन्न, गुड़, वस्त्र, चमड़ा और मांस चुराने पर तीन रात तक उपवास रहना चाहिए ।५

मणिमुक्ताप्रवालानां ताम्रस्य रजतस्य च ।
अयस्कांतोपलानाञ्च द्वादशाहं कणाशनम् ॥६

मणि, मुक्ता, तांबा, चांदी, लोह, कांसा और पत्थर में से कोई भी चीज चुराने से बारह दिन चावल का खण्डा खाकर रहना चाहिए ।६

कार्पासस्यैव[1] हरणे द्विशफैकशफस्य च ।
पुष्पगन्धौषधीनाञ्च पिबेच्चैव त्र्यहं पयः ॥७

कपास से बने हुए वस्त्र (सूती वस्त्र), दो और एक खुरों वाले जानवर, फूल और सुगन्धित वनस्पतियों को चुराने से तीन दिनों तक दूध पीकर रहना चाहिए ।७

नरमांसाशनं कृत्वा चान्द्रायणमथाचरेत् ।
काकञ्चैव तथा श्वानञ्जग्ध्वा हस्तिनमेव वा ॥८

वराहं कुक्कुटं वाथ तप्तकृच्छ्रेण शुध्यति ।
क्रव्यादानाञ्च मांसानि पुरीषं मूत्रमेव वा ॥९

---

१. कार्पासकीटजीर्णानामिति, कार्पासक्षौमवस्त्राणामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोगोमायुकपीनां च तदेव व्रतमाचरेत् ।
शिशुमारन्तथा चाषं मत्स्यमांसं तथैव च ॥१०
उपोष्य द्वादशाहञ्च कूष्माण्डैर्जुहुयाद् घृतम् ।
नकुलोलूकमार्जाराञ्जग्ध्वा सान्तपनं चरेत् ॥११

मनुष्य का मांस खाने से चान्द्रायण व्रत करना चाहिए। कौआ, कुत्ता, हाथी, ग्राम्यशूकर, और ग्राम्यमुर्गा, खाने से, तप्तकृच्छ्र व्रत के द्वारा शुद्धि होती है। पशु-पक्षियों का मांस, मल-मूत्र, सांड़, सियार और बन्दर का मांस, शिशुमार (जलजन्तु विशेष) नीलकण्ठ तथा अन्य मछलियों को खाने से तप्तकृच्छ्र व्रत करना चाहिए अथवा बारह दिन उपवास रहकर, कूष्माण्डमन्त्र के द्वारा अग्नि में घी की आहुति देनी चाहिए। नेवला, उल्लू और बिल्ली का मांस खाने से सान्तपन व्रत करना चाहिए। ८-११।

श्वापदोष्ट्रखराञ्जग्ध्वा तप्तकृच्छ्रेण शुध्यति ।
प्रकुर्याच्चैव[1] संस्कारं पूर्वेण विधिनैव तु ॥१२

हिंस्र पशु, ऊँट, और गधा खाने से शुद्धि के लिए तप्तकृच्छ्र व्रत करके, पूर्वोक्त नियमानुसार संस्कार करना चाहिए ।१२

बकं चैव बलाकाञ्च हंसञ्चारण्डवांस्तथा ।
चक्रवाकपलं जग्ध्वा द्वादशाहमभोजनम् ॥१३

बगुला, बलाका, हंस, कारण्डव (हंस, विशेष) और चक्रवाक का मांस खाने से बारह दिनों का उपवास रखना चाहिए।१३

कपोतटिट्टिभांश्चैव शुकं सारसमेव च ।
उलूकं जालपादञ्च जग्ध्वाप्येतद्व्रतञ्चरेत् ॥१४

कबूतर, टिटिहरी, तोता, सारस, उल्लू और बत्तक पक्षी का मांस खाने से बारह दिन उपवास करना होगा।१४

शिशुमारं तथा चाषं मत्स्यमांसं तथैव च ।
जग्ध्वा चैव कटाहारमेतदेव व्रतं चरेत् ॥१५

शिशुमार, नीलकण्ठ और मछली खाने से कटाहार (अर्थात् समय बद्ध आहार करना जब मन चाहे, तब आहार न करना) करते हुए भी, पूर्वोक्त व्रत (अर्थात् बारह दिन का उपवास) का पालन करना चाहिए।१५

---

१. व्रतवच्चैवेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोकिलं चैव मत्स्यादान्मण्डूकं भुजगन्तथा ।
गोमूत्रयावकाहारो मासेनैकेन शुद्धयति ॥१६

कोयल, ऊदबिलाव, मेढक, और साँप खाने पर, एक महीने तक गोमूत्र में जौ उबाल कर खाने से शुद्धि होती है ।१६

जलेचरांश्च जलजान्प्रणुदानथ विष्किरान् ।
रक्तपादांस्तथा जग्ध्वा सप्ताहं चैतदाचरेत् ॥१७

जलचर, जलज (शंखादि), कठफोड़वा जैसे चोंच मारने वाले पक्षी, फैले हुए दानों को चुगने वाले तीतर जैसे पक्षी, और रक्तपाद (तोता) का मांस खाने से; एक सप्ताह तक गोमूत्र में जौ उबालकर खाना चाहिए ।१७

शुनो मांसं शुष्कमांसमात्मार्थं च तथा कृतम् ।
भुक्त्वा मासं चरेदेतत्तत्पापस्यापनुत्तये ॥१८

कुत्ते का मांस, सूखा हुआ मांस और अपना पेट भरने के लिए लाया गया मांस, खाने से, लगने वाले पाप का नाश करने के लिए, एक महीने तक गोमूत्र में पकाया गया जौ खाना चाहिए ।१८

वृन्ताकं भूस्तृणे शिग्रुं कुटकं[1] चटकं तथा ।
प्राजापत्यं चरेज्जग्ध्वा खड्गं कुम्भीकमेव च ॥१९

बैंगन, जमीन के नीचे उगने वाले मूल (जैसे मूली), सहजन, खुम्भी (मशरूम), गौरैया, शंख और कुम्भीर (मगरमच्छ) खाने से, प्राजापत्य व्रत करना पड़ता है।१९

पलाण्डुं लशुनं चैव भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ।
नालिकां तण्डुलीयं च प्राजापत्येन शुध्यति ॥२०

प्याज और लहसुन खाने से चान्द्रायण तथा कमल नाल और चौलाई खाने से, प्राजापत्य व्रत करने से शुद्धि होती है ।२०

अश्मान्तकं तथा पोतं तप्तकृच्छ्रेण शुध्यति ।
प्राजापत्येन शुद्धिः स्यात्कुसुम्भस्य च भक्षणे ॥२१

अरुई और हरिताल (पीले रंग का पक्षी विशेष), खाने से तप्तकृच्छ्र और कुसुंभ खाने से प्राजापत्य व्रत से शुद्धि होती है ।२१

अलाबुं ङ्कशुकञ्चैव भुक्त्वाप्येतद्व्रतञ्चरेत् ।
एतेषाञ्च विकाराणि पीत्वा मोहेन वा पुनः ॥२२
गोमूत्रयावकाहारः सप्तरात्रेण[2] शुध्यति ।

---

१. कुट्टकं कवकं तथेति, कुभाण्डं करकं तथेति पा० । २. मासेनैव विशुद्ध्यतीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोल लौकी और पलाश खाने से प्राजापत्य व्रत करना चाहिए। अज्ञानतावश, खराब हो गए दूध को पी लेने से, सात रात्रियों तक गोमुत्र में पकाया हुआ जौ खाने से शुद्धि होती है।२२-२२½।

उदुम्बरञ्च कामेन तप्तकृच्छ्रेण शुध्यति।
भुक्त्वा चैव नवश्राद्धे मृतके सूतके तथा ॥२३
चान्द्रायणेन शुद्ध्येत ब्राह्मणः सुसमाहितः।

जानबूझकर गूलर खा लेने से तप्तकृच्छ्र व्रत के द्वारा शुद्ध हुआ जा सकता है। नवश्राद्ध, जन्म और मृत्यु में होने वाले सूतक में, किसी सूतकी का अन्न खा लेने से, ब्राह्मण को एकाग्रचित्त होकर चान्द्रायण व्रत करना चाहिए।२३-½।

यस्याग्नौ हूयते नित्यमन्नस्याग्रं न दीयते ॥२४
चांद्रायणञ्चरेत्सम्यक् तस्यान्नप्राशने द्विजः।

जो प्रतिदिन अग्निहोत्र करता है, परन्तु अन्न का पहला भाग दान नहीं करता ऐसे व्यक्ति का अन्न खाने से, ब्राह्मण की शुद्धि, चान्द्रायण व्रत के द्वारा होती है। २४-२४½।

अभोज्यान्नन्तु सर्वेषां भुक्त्वा चान्नमुपस्कृतम् ॥२५
अन्तावसायिनाञ्चैव तप्तकृच्छ्रेण शुद्ध्यति।

जिन जातियों का अन्न ग्रहण करना निषिद्ध है उनका और निम्न जाति वालों का अन्न खाने से तप्तकृच्छ्र व्रत के द्वारा शुद्ध होना पड़ता है।२५-२५½।

चण्डालान्नं द्विजो भुक्त्वा सम्यक् चान्द्रायणञ्चरेत् ॥२६
बुद्धिपूर्वन्तु कृच्छ्राब्दं पुनः संस्कारमेव च।
असुरामद्यपानेन[1] कुर्याच्चान्द्रायणव्रतम् ॥२७

ब्राह्मण यदि, चाण्डाल का अन्न खा ले, तो उसे विधानानुसार चान्द्रायण करना होगा और जानबूझकर खाने से, एक साल तक प्राजापत्य करने के बाद पुनः उसका संस्कार करना पड़ेगा। सुरा के अलावा दूसरा मद्य पीने से चान्द्रायण व्रत करना पड़ता है।२६-२७।

अभोज्यान्नन्तु भुक्त्वा च प्राजापत्येन शुध्यति।
विण्मूत्रप्राशनं कृत्वा रेतसश्चैतदाचरेत् ॥२८

---

१. असुरामद्यपानेन—सुराभिन्नं मद्यं पीत्वेत्यर्थः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न खाने योग्य वस्तु, मल, मूत्र तथा वीर्य भक्षण करने से प्राजापत्य व्रत करना चाहिए ।२८

अनादिष्टे तु चैकाहं सर्वत्र तु यथार्थतः ।
विड्वराहखरोष्ट्राणां गोमायोः कपिकाकयोः ॥२९
प्राश्य मूत्रपुरीषाणि द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ।

अविहित कार्य करने से उत्पन्न होने वाले पाप में नियमानुसार एक दिन का उपवास करना चाहिए । ग्राम्य शूकर, गधा, ऊँट, सियार, बन्दर या कौए का मूत्र या मल खाने से, ब्राह्मण को चान्द्रायण व्रत करना चाहिए ।२९-½।

अज्ञानात्प्राश्य विण्मूत्रं सुरासंस्पृष्टमेव च ॥३०
पुनः संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः ।

अँजाने में, मनुष्य के मल, मूत्र और सुरा से छुई हुई वस्तु खा लेने से तीनों वर्णों का पुनः उपनयन संस्कार होता ।३०-३०½।

क्रव्यादां पक्षिणां चैव प्राश्यमूत्रपुरीषकम् ॥३१
महासांतपनं मोहात्तथा कुर्याद्द्विजोत्तमः ।
भासमण्डूककुरुरे विष्किरे कृच्छ्रमाचरेत् ॥३२

मांसाहारी पशुओं या पक्षियों का मल-मूत्र अज्ञानतावश खा लेने से, ब्राह्मणश्रेष्ठों को सान्तपन व्रत करना चाहिए । गिद्ध, मेढ़क, कुरर और फैले हुए दानों को चुगने वाले तीतर जैसे पक्षियों का मांस खाने से, कृच्छ्र व्रत करना चाहिए ।३१-३२।

प्राजापत्येन शुद्ध्येत ब्राह्मणोच्छिष्टभोजने ।
क्षत्रिये तप्तकृच्छ्रं स्याद्वैश्ये चैवातिकृच्छ्रकम् ॥३३

ब्राह्मण का जूठन खाने से, ब्राह्मण प्राजापत्य, क्षत्रिय का खाने से तप्तकृच्छ्र और वैश्य का खाने से अतिकृच्छ्र व्रत करेगा ।३३

शूद्रोच्छिष्टन्द्विजो भुक्त्वा कुर्याच्चान्द्रायणव्रतम् ।
सुरायाः[1] भाण्डके वारि पीत्वा चान्द्रायणञ्चरेत् ॥३४

शूद्र का जूठन खाने से और सुरा-पात्र में पानी पीने से, ब्राह्मण चान्द्रायण व्रत करेगा ।३४

समुच्छिष्टं द्विजो भुक्त्वा त्रिरात्रेण विशुध्यति ।
गोमूत्रयावकाहारः पीतशेषञ्च वा गवाम् ॥३५

---

१. सुराभाण्डोदरे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जूठा पानी पीने से ब्राह्मण, तीन रात उपवास करके शुद्ध होता है। गाय के पी लेने के बाद बचा हुआ पानी पीने से, गोमूत्र में पका जौ खाना पड़ता है।३५

अपो मूत्रपुरीषाद्यैर्दूषिताः प्राशयेद्यदि।
तदा सान्तपनं कृच्छ्रं व्रतं पापविशोधनम्[1] ॥३६

मल-मूत्र के द्वारा गन्दा हो गया पानी पी लेने से, सान्तपन और कृच्छ्र व्रत से पाप की शुद्धि की जा सकती है।३६

चाण्डालकूपे भाण्डेषु यदि ज्ञानात्पिबेज्जलम्।
चरेत्सांतपनं कृच्छ्रं ब्राह्मणः पापशोधनम् ॥३७

चाण्डाल के कुएँ या पात्र से, जानबूझकर पानी पी लेने से, ब्राह्मण को पाप नाश हेतु सांपन्तन और कृच्छ्र व्रत करना चाहिए।३७

चाण्डालेन तु संस्पृष्टं पीत्वा वारि द्विजोत्तमः।
त्रिरात्रव्रतमुखेन[2] पञ्चगव्येन शुध्यति ॥३८

चाण्डाल का छुआ पानी पी लेने से, ब्राह्मणश्रेष्ठ को शुद्धि के लिए पंचगव्य पीकर, तीन रात तक उपवास करना चाहिए।३८

महापातकिसंस्पर्शे भुक्त्वा स्नात्वा द्विजो यदि।
बुद्धिपूर्वं[3] यदा मोहात्तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ॥३९

यदि जानबूझकर या अंजाने में, ब्राह्मण किसी महापापी के साथ स्नान और भोजन करता है, तो उसे तप्तकृच्छ्र व्रत करना पड़ेगा।३९

स्पृष्ट्वा महापातकिनं चण्डालञ्च रजस्वलाम्।
प्रमादाद्भोजनं कृत्वा त्रिरात्रेण विशुध्यति ॥४०

महापापी, चाण्डाल और रजस्वला स्त्री को छूकर यदि अज्ञानतावश भोजन कर लेता है, तो उसे तीन रात उपवास रहकर, शुद्ध होना पड़ेगा।४०

स्नानार्हो यदि भुञ्जीत ह्यहोरात्रेण शुध्यति।
बुद्धिपूर्वं तु कृच्छ्रेण भगवानाह पद्मजः ॥४१

स्नान करने वाला व्यक्ति, यदि स्नान किये बिना ही, अज्ञानतावश भोजन कर ले, तो एक दिन-रात उपवास करके और जानबूझकर भोजन करने से कृच्छ्र व्रत करके शुद्ध हो सकता है, ऐसा भगवान् मनु का कहना है।४१

---

१. पापविनाशनमिति पा०। २. त्रिरात्रेण विशुध्येत पञ्चगव्येन चैव हीति पा०।
३. बुद्धिपूर्वन्तु मूढात्मा तप्तकृच्छ्रमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भुक्त्वा पर्युषितादीनि गवादिप्रतिदूषिताः ।
भुक्त्वोपवासङ्कुर्वीत कृच्छ्रपादमथापि वा ॥४२

बहुत बासी भोजन तथा गाय के दूध से बनी सड़ी हुई वस्तु खा लेने से, उपवास या कृच्छ्र पाद प्रायश्चित्त करना चाहिए ।४२

संवत्सरान्ते कृच्छ्रं तु चरेद्विप्रः पुनः पुनः ।
अज्ञानभुक्तशुद्धयर्थं ज्ञातस्य तु विशेषतः ॥४३

वर्षभर अज्ञानवश, न खाने योग्य वस्तु खाने से बारबार प्राजापत्य व्रत करना चाहिये, और जानबूझकर खाने से और भी अधिक प्रायश्चित्त करना चाहिये ।४३

व्रात्यानां याजनं कृत्वा परेषामन्त्यकर्म च ।
अभिचारमहीनञ्च त्रिभिः कृच्छ्रैर्विशुध्यति ॥४४

व्रात्यों का पौरोहित्य, दूसरों का अन्त्येष्टि, कर्म, अभिचार कर्म तथा अहीन नामक यज्ञ करने से, तीन कृच्छ्र व्रत करके शुद्ध हुआ जा सकता है ।४४

ब्राह्मणादिहतानां तु कृत्वा दाहादिकं[1] द्विजः ।
गोमूत्रयावकाहारः प्राजापत्येन शुध्यति ॥४५

ब्राह्मण के शाप से मरे हुए व्यक्ति का दाह-कर्म करने से, गोमूत्र में जौ उबालकर खाते हुए प्राजापत्य व्रत करने से शुद्धि होती है ।४५

तैलाभ्यक्तोऽथ वान्तो वा कुर्यान्मूत्रपुरीषके ।
अहोरात्रेण शुद्धयेत श्मश्रुकर्मणि मैथुने ॥४६

तेल मालिश तथा उल्टी करने के बाद, मल-मूत्र त्यागने, क्षौर कर्म करने या मैथुन कर्म करने से एक दिन-रात उपवास रहकर शुद्ध होना पड़ता है ।४६

एकाहेन विहायाग्निं परिहाप्य द्विजोत्तमः ।
त्रिरात्रेण विशुद्धयेत त्रिरात्रात्षडहः परम् ॥४७

यदि अज्ञानवश ब्राह्मण, एक दिन भी हवन न करे, तो तीन रात तक उपवास रहकर शुद्ध होगा और तीन दिन हवन का त्याग करने से, छः दिन उपवास करने से शुद्धि होती है ।४७

दशाहं द्वादशाहं वा परिहाप्य[2] प्रमादतः ।
कृच्छ्रं चांद्रायणं कुर्यात्तत्पापस्योपशांतये[3] ॥४८

---

१. दाहादिकाः क्रिया इति पा० । २. परिवार्य इति पा० । ३. पापस्यापनुत्तये इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस या बारह दिन हवन न करने से पाप नाश के लिए चान्द्रायण व्रत करना पड़ता है।४८

पतिताद्द्रव्यमादाय तदुत्सर्गेण शुध्यति।
चरेच्च[1] विधिना कृच्छ्रमित्याह भगवान्मनुः ॥४९

पतित व्यक्ति से द्रव्य ग्रहण करने से, उसे त्यागने के बाद, विधिपूर्वक प्राजापत्य व्रत करने से शुद्धि होती है, यह भगवान् मनु का कहना हैं।४९

अनाशकान्निवृत्तास्तु प्रव्रज्यावसितास्तथा।
चरेयुस्त्रीणि कृच्छ्राणि त्रीणि चांद्रायणानि च ॥५०

पुनश्च जातकर्मादिसंस्कारैः संस्कृता द्विजाः।
शुद्धयेयुस्तद्व्रतं सम्यक्चरेयुर्धर्मदर्शिनः ॥५१

अनशन व्रत टूट जाने या संन्यास छूट जाने से, उस व्यक्ति को तीन कृच्छ्र और तीन चान्द्रायण व्रत करना होगा। तत्पश्चात् फिर से जातकर्मादि संस्कारों से संस्कृत होकर, ब्राह्मणवृन्द शुद्ध होंगे और धर्मदर्शी होकर भलीभाँति व्रतों का पालन करेंगे।५०-५१।

अनुपासितसन्ध्यस्तु तदहर्यावके भवेत्।
अनश्नन् संयतमना रात्रौ चेद्रात्रिमेव हि ॥५२

सन्ध्योपासना न करने पर, (ब्रह्मचारी को) उस दिन, भोजन किये बिना, एकाग्रचित्त होकर जप करना चाहिए। यदि सायंकाल सन्ध्या न करे तो उस दिन रात को भोजन किये बिना जप करना चाहिये।५२

अकृत्वा समिदाधानं शुचिः स्नात्वा समाहितः।
गायत्र्यष्टसहस्रस्य जप्यं कुर्याद्विशुद्धये ॥५३

अग्नि की स्थापना न करने से, शुद्धि के लिये, स्नान करके, पवित्र होकर, एकाग्रचित्त से आठ हजार बार गायत्री-मंत्र जपना चाहिये।५३

उपवासी चरेत्सन्ध्यां गृहस्थो हि प्रमादतः।
स्नात्वा विशुद्धचते सद्यः परिश्रांतश्च संयतः ॥५४

ध्यान न रहने के कारण यदि (ब्रह्मचारी) संध्यापूजन करना भूल जाये, तो स्नान के बाद, उपवास रहकर संध्यापूजन कर लेना चाहिये। यदि अत्यधिक थकान के कारण संध्या करने में असमर्थ हो, तो सिर्फ उपवास करके शुद्ध हुआ जा सकता है।५४

वेदोदितानि नित्यानि कर्माणि च विलोप्य तु।
स्नातको व्रतलोपं तु कृत्वा चोपवसेद्दिनम् ॥५५

---

१. चरेत्सान्तपनमिति पा०।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि स्नातक (जिसने ब्रह्मचर्य समाप्ति का स्नान कर लिया हो) ब्राह्मण, वेदोक्त नित्य कर्मों और व्रतों का पालन करना भूल जाये, तो उसे एक दिन उपवास करना चाहिए ।५५

संवत्सरं चरेत्कृच्छ्रमन्योत्सादी द्विजोत्तमः ।
चांद्रायणं चरेद्व्रात्यो गोप्रदानेन शुद्धचति ॥५६

अग्नि का त्याग कर देने वाले ब्राह्मण को एक साल तक कृच्छ्र व्रत करना चाहिये। व्रात्य ब्राह्मण की शुद्धि, चान्द्रायण करने या गोदान करने से होती है ।५६

नास्तिक्यं यदि कुर्वीत प्राजापत्यं चरेद्द्विजः ।
देवद्रोहं गुरुद्रोहं तप्तकृच्छ्रेण शुद्धचति ॥५७

ब्राह्मण यदि नास्तिकता करे तो प्राजापत्य व्रत करना चाहिये। देवद्रोह और गुरुद्रोह करने से तप्तकृच्छ्र करना चाहिए ।५७

उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं च कामतः ।
त्रिरात्रेण विशुद्धयेच्च नग्नो वा प्रविशेज्जलम् ॥५८

ऊंट गाड़ी या गधागाड़ी पर स्वेच्छापूर्वक चढ़ने तथा नग्न होकर जल में प्रवेश करने से तीन रात तक उपवास करनेपर शुद्धि होती है ।५८

षष्ठान्नकालता[1] मासं संहिताजप एव च ।
होमाश्च शाकला[2] नित्यं अपाङ्क्तानां विशोधनम् ॥५९

अयाज्य व्यक्ति का पौरोहित्य करने से, एक महीने तक, संहिता का जप करते हुए, दो दिन उपवास रहते हुए, तीसरे दिन रात को भोजन और शाकल मन्त्र पढ़ते हुए, प्रतिदिन शाकल होम करने से, प्रायश्चित्त हो जाता है ।५९

नीलं रक्तं वसित्वा च ब्राह्मणो वस्त्रमेव हि ।
अहोरात्रोषितः स्नातः पंचगव्येन शुद्धचति ॥६०

ब्राह्मण यदि, नीले या लाल रंग का वस्त्र पहनें, तो एक दिन-रात उपवास रह-कर स्नान करके, पंचगव्य पी लेने से, शुद्धि हो जाती है ।६०

वेदधर्मपुराणानां चण्डालस्य तु भाषणे ।
चांद्रायणेन शुद्धिः स्यान्न ह्यन्या तस्य निष्कृतिः ॥६१

चाण्डाल को वेद, धर्मशास्त्र और पुराणों की व्याख्या सुनाने से चान्द्रायण व्रत के द्वारा शुद्धि होती है, इसके अलावा और कोई उपाय नहीं है ।६१

---

१. षष्ठान्नकालता अष्टभागविभक्तस्य दिनस्य षष्ठे भागे भोजनशीलता इत्यर्थः । षष्ठान्नकर्षितमिति २ शाकलाः शाकलप्रोक्तविधिना सम्पादिताः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बन्धनादि निहतं संस्पृश्य ब्राह्मणं क्वचित् ।
चांद्रायणेन शुद्धिः स्यात्प्राजापत्येन वा पुनः ॥६२

फाँसी लगाकर मरे हुए व्यक्ति का शव स्पर्श करने से, चान्द्रायण या प्राजापत्य व्रत करने से शुद्धि होती है ।६२

उच्छिष्टो यद्यनाचांतश्चाण्डालादीन् स्पृशेद् द्विजः ।
प्रमादाद्वै जपेत्स्नात्वा गायत्र्यष्टसहस्रकम् ॥६३

यदि ब्राह्मण, अज्ञानवश, आचमन करने से पहले जूठे मुंह किसी चाण्डाल को छू ले, तो उसे स्नान करके, आठ हजार बार गायत्री जपना चाहिये ।६३

द्रुपदानां शतं वापि ब्रह्मचारी समाहितः ।
त्रिरात्रोपोषितः सम्यक् पंचगव्येन शुद्धयति ॥६४

यदि ब्राह्मचारी उपर्युक्त कृत्य करे, तो उसे एकाग्र चित्त होकर, सौ बार द्रुपदा मन्त्र जपना चाहिये और तीन रात उपवास रहकर, पंचगव्य पीना चाहिये, तभी उसकी शुद्धि होगी ।६४

चाण्डालपतितादींस्तु कामाद्यः संस्पृशेद्द्विजः ।
उच्छिष्टस्तत्र कुर्वीत प्राजापत्यं विशुद्धये ॥६५

जो ब्राह्मण जानबूझकर, जूठे मुंह चाण्डाल और पतितों का स्पर्श करता है, उसे शुद्धि के लिये प्राजापत्य व्रत करना चाहिए ।६५

चाण्डालसूतकि शवांस्तथा नारीं रजस्वलाम् ।
स्पृष्ट्वा स्नायाद्विशुद्धयर्थं तत्स्पृष्टपतितांस्तथा ॥६६

चाण्डाल, सूतकी, पतित, शव और रजस्वला स्त्री का स्पर्श करने से, शुद्धि के लिये स्नान करना चाहिये ।६६

चाण्डालसूतकिशवैः संस्पृष्टं संस्पृशेद्यदि ।
ततः स्नात्वाथ आचम्य जपं कुर्यात्समाहितः ॥६७

चाण्डाल, सूतकी और शव छूने वाले, व्यक्ति का यदि कोई स्पर्श करता है, तो उसे स्नान करके, आचमन करने के बाद, एकाग्रचित्त से जप करना चाहिए ।६७

तत्स्पृष्टस्पर्शिनं स्पृष्टवा बुद्धिपूर्वं द्विजोत्तमः ।
स्नात्वाचामेद्विशुद्धयर्थं प्राह देवः पितामहः ॥६८

चाण्डालादि व्यक्तियों को छूने वाले को जिसने छुआ, उसे यदि कोई ब्राह्मण जानबूझकर छूता है, तो उसे स्नान करके आचमन करना चाहिये, यह पितामह ब्रह्मा का वचन है ।६८

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भुञ्जानस्य तु विप्रस्य कदाचित्संस्पृशेद्यदि ।
कृत्वा शौचं ततः स्नायादुपोष्य जुहुयाद्घृतम् ॥६९

भोजन करते हुये ब्राह्मण को यदि किसी वस्तु का स्पर्श हो जाये, तो नहाकर, पवित्र होकर, उपवास रहकर उसे अग्नि में आहुति देनी चाहिये ।६९

चाण्डालं तु शवं स्पृष्ट्वा कृच्छ्रं कुर्याद्विशुद्धयति ।
स्पृष्टवाऽभ्यक्तस्त्वसंस्पृश्य अहोरात्रेण शुद्धयति ॥७०

ब्राह्मण यदि चाण्डाल का शव देख ले, तो प्राजापत्य व्रत के द्वारा उसकी शुद्धि होती है और (वस्त्र से) लिपटी हुई अवस्था में, स्पर्श किये बिना, केवल देख लेने से; एक दिन और रात उपवास रहकर शुद्ध होना चाहिये ।७०

सुरां स्पृष्ट्वा द्विजः कुर्यात्प्राणायामत्रयं शुचिः ।
पलाण्डुं लशुनञ्चैव घृतं प्राश्य ततः शुचिः ॥७१

यदि ब्राह्मण सुरा का स्पर्श करे, तो तीन प्राणायाम करके और प्याज तथा लहसुन का स्पर्श करने से, घी पीकर शुद्ध होता है ।७१

ब्राह्मणस्तु शुना दष्टस्त्र्यहं सायं पयः पिबेत् ।
नाभेरूर्द्धन्तु दष्टस्य तदेव द्विगुणं भवेत् ॥७२

स्यादेतत्त्रिगुणं बाह्वोर्मूर्ध्नि च स्याच्चतुर्गुणम् ।
स्नात्वा जपेद्वा सावित्रीं श्वभिर्दष्टो द्विजोत्तमः ॥७३

ब्राह्मण को कुत्ता काट लेने पर, तीन दिन, सायंकाल दूध पीना चाहिये । नाभि के ऊपर काटने से छः दिन, बाहु पर काटने से नौ दिन और सिर पर काटने से बारह दिन, सायंकाल दूध पीकर रहना चाहिये अथवा कुत्ते का काटा हुआ ब्राह्मण, स्नान करके, गायत्री का जप करेगा ।७२-७३

अनिर्वर्त्स्य महायज्ञान्यो भुंक्ते तु द्विजोत्तमः ।
अनातुरः सति धने कृच्छ्रार्द्धेन स शुद्धयति[1] ॥७४

नीरोग ब्राह्मण, धन रहने पर भी, पंचयज्ञ किये बिना भोजन करे, तो उसे अर्ध-प्राजापत्य (अर्थात् तीन दिन का उपवास) व्रत करके, शुद्ध होना पड़ेगा ।७४

आहिताग्निरुपस्थानं न कुर्याद्यस्तु पर्वणि ।
ऋतौ न गच्छेद्भार्यां वा सोऽपि कृच्छ्रार्द्धमाचरेत् ॥७५

यदि साग्निक ब्राह्मण पर्व के दिन अग्नि होत्र नहीं करता और जो लोग ऋतुकाल में पत्नी के साथ मैथुन कर्म नहीं करते, उनकी शुद्धि अर्धप्राजापत्य व्रत करने से होती है ।७५

---

१. विनश्यातिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनाद्भिरप्सु नाप्यार्त्तः शरीरं सन्निवेश्य च ।
सचैलो जलमाप्लुत्य गामालभ्य विशुध्यति ॥७६

बिना अस्वस्थता के, कोई मल-मूत्र त्यागने के बाद पानी से शौच क्रिया न करे या पानी के अन्दर मल-मूत्र त्यागे, तो उस व्यक्ति को, उन्हीं वस्त्रों को पहनकर स्नान करके, गाय का स्पर्श करके शुद्ध होना पड़ेगा ।७६

बुद्धिपूर्वन्त्वभ्ययुदिते जपेदन्तर्जले द्विजः ।
गायत्र्यष्टसहस्रं तु त्र्यहं चोपवसेद्द्विजः[1] ॥७७

उपर्युक्त कर्म यदि जान-बूझकर किया जाय तो, ब्राह्मण को सूर्योदय से पानी में डूबकर, आठ हजार बार गायत्री जपना होगा और व्रती होकर तीन दिन उपवास करना होगा ।७७

अनुगम्येच्छया शूद्रं प्रेतीभूतं द्विजोत्तमः ।
गायत्र्यष्टसहस्रञ्च जपं कुर्यान्नदीषु च ॥७८

यदि ब्राह्मण मरे हुये शूद्र के पीछे-पीछे जाता है, तो उसे नदी-किनारे जाकर आठ हजार बार गायत्री जपना होगा ।७८

कृत्वा तु शपथं विप्रो विप्रस्यावधिसंयुत्तम्[2] ।
स चैव यावकान्नेन कुर्याच्चान्द्रायणं व्रतम् ॥७९

यदि ब्राह्मण, शूद्र से कोई समयबद्ध प्रतिज्ञा करता है, तो उसे जौ के द्वारा चान्द्रायण व्रत करना चाहिये ।७९

पङ्क्तौ[3] विषमदानन्तु कृत्वा कृच्छ्रेण शुध्यति ।
छायां श्वपाकस्यारुह्य स्नात्वा सम्प्राशयेद्घृतम् ॥८०

एक ही पंक्ति में किसी को कम या ज्यादा परोसने से प्राजापत्य व्रत के द्वारा शुद्धि होती है । चाण्डाल की परछाईं छू लेने से स्नान करके घी पीना चाहिये ।८०

ईक्षेदादित्यमशुचिर्दृष्ट्वाग्निं[4] चन्द्रमेव वा ।
मानुषं चास्थि संस्पृश्य स्नानं कृत्वा विशुद्धयति ॥८१

अग्नि या चन्द्रमा देखते हुये अपवित्र होने से सूर्य दर्शन करना चाहिये । मनुष्य की अस्थि छू लेने से, स्नान करके शुद्ध होना चाहिये ।८९

---

१. चोपवसेदव्रतीति पा० । २. विप्रस्य वधसंयुतमिति पा० । ३. पंक्त्यामिति पा० । पंक्त्याविषमदानम्-एकपंक्तिस्थितेभ्यो भोजनं कुर्वद्भ्यो ब्राह्मणेभ्यो विषदृशदानं परिवेषणमित्यर्थः । ४. ईक्षेदित्यार्षम् ईक्षेत् इति साधु ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृत्वा तु मिथ्याध्ययनं चरेद्भैक्षन्तु वत्सरम् ।
कृतघ्नो ब्राह्मणगृहे पंचसंवत्सरव्रतो ॥८२

झूठा अध्ययन करने से, एक साल तक भिक्षा माँगनी चाहिये और यदि कृतघ्न व्यक्ति, ब्राह्मण के घर रहकर, पाँच साल तक व्रत करे, तो वह शुद्ध हो जाता है ।८२

हुंकारं ब्राह्मणस्योक्त्वा त्वंकारं च गरीयसः ।
स्नात्वा नाश्नन्नहःशेषं प्रणिपत्य प्रसादयेत् ॥८३

ब्राह्मण को धमकी देने से और सम्मानित व्यक्ति को 'तुम' कहने से, स्नान करके, जब कहा गया है, तब से लेकर, दिन समाप्त होने तक भोजन नहीं करना चाहिये और जिसे ऐसा कहा गया है, उनका पैर पकड़कर, उन्हें प्रसन्न करना चाहिये ।८३

ताडयित्वा तृणेनापि कण्ठं बद्ध्वाथ वाससा ।
विवादे चापि निर्जित्य प्रणिपत्य प्रसादयेत् ॥८४

ब्राह्मण को तृण से मारने पर भी अथवा उनके गले में वस्त्र डालने या वाक्युद्ध में परास्त करने से, प्रणाम करके, उन्हें प्रसन्न करना चाहिये ।८४

अवगूर्य चरत्कृच्छ्रमतिकृच्छ्रं निपातने ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ कुर्वीत विप्रस्योत्पाद्य शोणितम् ॥८५

ब्राह्मण को मारने के लिये डंडा उठाने से कृच्छ्र, डंडा मारने से अतिकृच्छ्र, और खून बहा देने से कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए ।८५

गुरोराक्रोशमनृतं कुर्यात्कृत्वा विशोधनम् ।
एकरात्रं[1] निराहारः तत्पापस्यापनुत्तये ॥८६

गुरु को गुस्सा दिलाने वाला कार्य करने से या झूठ बोलने से उत्पन्न पाप की शान्ति के लिये, एक दिन का उपवास रखना चाहिए ।८६

देवर्षीणामभिमुखं ष्ठीवनाक्रोशने कृते ।
उल्मुकेन दहेज्जिह्वां दातव्यं च हिरण्यकम् ॥८७

देवताओं और ऋषियों के सामने थूकने और उनके प्रति गुस्सा दिखाने से, आग से जीभ जला लेना चाहिये और ब्राह्मणों को सोना भी दान करना चाहिये ।८७

देवोद्यानेषु यः कुर्यान्मूत्रोच्चारं सकृद्द्विजः ।
छिन्द्याच्छिश्नं विशुध्यर्थं चरेच्चान्द्रायणं व्रतम् ॥८८

मन्दिर के उद्यान में जो व्यक्ति मल-मूत्र त्यागता है, वह पाप शान्ति के लिये अपना लिङ्ग काटकर, चान्द्रायण व्रत करे है ।८८

---

१. एकरात्रं त्रिरात्रं वेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवतायतने मूत्रं कृत्वा मोहाद्द्विजोत्तमः ।
शिश्नस्योत्कर्त्तनं कृत्वा चान्द्रायणमथाचरेत् ॥८६

जो ब्राह्मण अन्जाने में मन्दिर के अन्दर मूत्र त्याग देता है, वह शिश्न काटकर, चान्द्रायण करके शुद्ध होता है ।८९

देवतानामृषीणां च देवानां चैव कुत्सनम् ।
कृत्वा सम्यक् प्रकुर्वीत प्राजापत्यं द्विजोत्तमः ॥९०

देवताओं, ऋषियों और देवता के समान व्यक्तियों की निन्दा करने से, ब्राह्मण की शुद्धि, भली-भाँति प्राजापत्य व्रत करने से होती है ।९०

तैस्तु सम्भाषणं कृत्वा स्नात्वा देवं समर्च्चयेत् ।
दृष्ट्वा वीक्षेत भास्वन्तं स्मृत्वा विश्वेश्वरं स्मरेत् ॥९१

उक्त व्यक्ति के साथ वार्तालाप करने से स्नान करके देवता की पूजा करनी चाहिये, उसे देख लेने से सूर्य दर्शन करना चाहिये तथा याद करने से विश्वेश्वर महादेव का ध्यान करना चाहिये ।९१

यः सर्वभूताधिपतिं विश्वेशानं विनिन्दति ।
न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्त्तुं वर्षशतैरपि ॥९२

जो जानबूझकर सारे प्राणियों के स्वामी विश्वेश्वर की निन्दा करता है, उसकी मुक्ति सौ वर्षों में भी नहीं होती ।९२

चान्द्रायणं चरेत्पूर्वं कृच्छ्रं चैवातिकृच्छ्रकम् ।
प्रपन्नः शरणं देवं तस्मात्पापाद्विमुच्यते ॥९३

इस पाप से मुक्त होने के लिये, उनकी शरण में जाकर पहले चान्द्रायण, फिर कृच्छ्र और उसके बाद अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिये ।९३

सर्वस्वदानं विधिवत्सर्वपापविशोधनम् ।
चान्द्रायणं च विधिना कृच्छ्रं चैवातिकृच्छ्रकम् ॥९४

नियमानुसार, सब कुछ दान कर देने से, पापी की शुद्धि हो जाती है और नियमानुसार चान्द्रायण, कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र व्रतों को भी पापी की शुद्धि का कारण बताया गया है ।९४

पुण्यक्षेत्राभिगमनं सर्वपापविशोधनम्[1] ।
अमावस्यां तिथिं प्राप्य यः समाराधयेद्भवम् ॥९५

---

१. विशोधनम् । देवताभ्यर्चनं नृणामशेषाघविनाशनमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मणान् पूजयित्वा तु सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥९६

तीर्थ स्नानों में जाने से भी सारे पापों का नाश होता है। अमावस के दिन, जो व्यक्ति ब्राह्मण की पूजा करके, भगवान् महादेव की आराधना करता है, वह सभी पापों से मुक्त हो जाता है।९५-९६

कृष्णाष्टम्यां महादेवं तथा कृष्णचतुर्दशीम्।
सम्पूज्य ब्राह्मणमुखे सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥९७

कृष्णाष्टमी या कृष्णचतुर्दशी के दिन, ब्राह्मण भोजन करवाकर महादेव की पूजा करने से, सभी पापों से मुक्ति मिलती है।९७

त्रयोदश्यां तथा रात्रौ सोपहारं त्रिलोचनम्।
दृष्ट्वेशं प्रथमे यामे मुच्यते सर्वपातकैः ॥९८

त्रयोदशी की रात के प्रथम प्रहर में, उपहार के साथ त्रिलोचन (भगवान् शंकर) की पूजा करने से, सभी पापों से मुक्ति मिलती है।९८

उपोषितश्चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे समाहितः।
यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च ॥९९
वैवस्वताय कालाय सर्वप्राणहराय[1] च।
प्रत्येकं तिलसंयुक्तान्दद्यात्सप्तोदकाञ्जलीन् ॥१००

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को, उपवास रहकर, एकाग्र मन से, यम, धर्मराज, मृत्यु अन्तक, वैवस्वत, काल और सर्वप्राणहर, इन सातों में प्रत्येक के नाम पर तिल मिला हुआ जल चढ़ाना चाहिये।९९-१००।

स्नात्वा दद्याच्च पूर्वाह्णे मुच्यते सर्वपातकैः।
ब्रह्मचर्यमधःशय्या उपवासो द्विजार्चनम् ॥१०१
व्रतेष्वेतेष कुर्वीत शान्तः संयतमानसः।

स्नान करके, पूर्वाह्ण में, इस प्रकार जल चढ़ाने से सभी पापों से मुक्ति मिलती है। सारे व्रतों में शान्त और एकाग्रचित्त होकर, ब्रह्मचर्य का पालन, भूमि पर शयन, उपवास और ब्राह्मण की पूजा करनी चाहिए।१०१½

अमावास्यायां ब्रह्माणं समुद्दिश्य पितामहम् ॥१०२
ब्राह्मणांस्त्रीन्समभ्यर्च्य मुच्यते सर्वपातकैः।

अमावस के दिन, पितामह ब्रह्मा के नाम पर तीन ब्राह्मणों की विधिपूर्वक पूजा अर्चना करने से समस्त पाप दूर हो जाते हैं।१०२½।

---

१. सर्वप्रहरणाय च। औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने। वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः। इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षष्ठ्यामुपोषितो देवं शुक्लपक्षे समाहितः ॥१०३
सप्तम्यामर्चयेद्भानुं मुच्यते सर्वपातकैः ।

शुक्लपक्ष की षष्ठी में उपवास करके, सप्तमी में एकाग्र चित्त से सूर्य की पूजा करने वाला व्यक्ति सभी पापों से मुक्त होता है ।१०३½।

भरण्यां च चतुर्थ्यां च शनैश्चरदिने यमम् ॥१०४
पूजयेत्सप्तजन्मोत्थैर्मुच्यते पातकैर्नरः ।

शनिवार के दिन, भरणी नक्षत्र और चतुर्थी हो, तो उस दिन यम की पूजा करने वाला, सात जन्मों के पापों से मुक्त हो जाता है ।१०४½।

एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य जनार्दनम् ॥१०५
द्वादश्यां शुक्लपक्षस्य महापापैः प्रमुच्यते ।

जो शुक्ल पक्ष की एकादशी में उपवास रहकर द्वादशी के दिन भगवान् विष्णु की पूजा करता है, वह महापाप से मुक्त हो जाता है ।१०५½

तपो जपस्तीर्थसेवा देवब्राह्मणपूजनम् ॥१०६
ग्रहणादिषु कालेषु महापातकशोधनम् ।

ग्रहण काल में जप, तीर्थसेवा, तप, देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा, जैसे कर्मों के करने से, महापाप भी दूर हो जाता है ।१०६½

यः सर्वपापयुक्तोऽपि पुण्यतीर्थेषु मानवः ॥१०७
नियमेन त्यजेत्प्राणान्मुच्यते सर्वपातकैः ।

जो व्यक्ति सभी प्रकार के पापों से युक्त होते हुए भी पुण्य तीर्थों में नियम से प्राणत्याग करे, तो वह सभी पापों से मुक्ति पा जाता है ।१०७½।

ब्रह्मघ्नं वा कृतघ्नं वा महापातकदूषितम्[1] ॥१०८
भर्त्तारमुद्धरेन्नारी प्रविष्टा सह पावकम् ।
एतदेव परं स्त्रीणां प्रायश्चित्तं विदुर्बुधाः ॥१०९

पति के ब्रह्मघाती, कृतघ्न और महापापी होने पर भी, उसके साथ आग में जलकर, वह स्त्री अपने पति का उद्धार करती है। स्त्रियां जो चाहे कोई भी पाप करें, पति के साथ सती होना ही उनके लिए एकमात्र श्रेष्ठ प्रायश्चित्त होता है, ऐसा विद्वानों का कहना है ।१०८-१०९।

---

१. महापातकिनं नरमिति पा. ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतिव्रता तु या नारी भर्तृशुश्रूषणे रता ।
न तस्या विद्यते पापमिहलोके परत्र च ॥११०

पतिव्रता और पति की सेवा में संलग्न रहने वाली स्त्री को, इस लोक और पर लोक में भी पाप नहीं लगता ।११०

(सर्वपापविनिर्मुक्ता नास्ति कार्या विचारणा ।
पतिव्रत्यसमायुक्ता भर्तृशुश्रूषणोत्सुका ।
न जातु पातकं तस्यामिहलोके परत्र च ।)
पतिव्रता धर्मरता भद्राण्येव लभेत्सदा ।
नास्याः पराभवं कर्त्तुं शक्नोतीह जनः क्वचित् ॥१११

(जो नारी पतिव्रताधर्म से युक्त और पति सेवा में निरत रहती है, वह सब पापों से मुक्त हो जाती है, इसमें विचार नहीं करना चाहिए। इस लोक और परलोक में कभी उसे पातक नहीं छूता।) पतिव्रता और धर्म का पालन करनेवाली स्त्री सभी प्रकार के कल्याणकारी फल प्राप्त करती है, तथा ऐसी स्त्री को इस संसार में, कभी कोई परास्त नहीं कर सकता ।१११

यथा रामस्य सुभगा सीता त्रैलोक्यविश्रुता ।
पत्नी दाशरथेर्देवी विजिग्ये राक्षसेश्वरम् ॥११२

जैसे तीनों लोकों में विख्यात, दशरथ-पुत्र राम की सौभाग्य-शालिनी पत्नी सीता ने अपने सतीत्व के बल पर राक्षसेश्वर (रावण) पर विजय प्राप्त की थी ।११२

रामस्य भार्यां सुभगां[1] रावणो राक्षसेश्वरः ।
सीतां विशालनयनां चकमे कालनोदितः ॥११३

एकबार राक्षसेश्वर रावण ने, काल के द्वारा प्रेरित होकर, राम की सौभाग्य-शालिनी, विशालाक्षी पत्नी सीता की कामना की थी ।११३

गृहीत्वा मायया वेषं चरन्तीं विजने वने ।
समाहर्त्तुं मतिं चक्रे तापसः किल कामिनीम् ॥११४

रावण ने माया के द्वारा, तपस्वी वेष धारण करके, एकान्त वन में विचरण करने वाली नारी (सीता) का अपहरण करना चाहा ।११४

विज्ञाय सा च तद्भावं स्मृत्वा दाशरथिं पतिम् ।
जगाम शरणं वह्निमावसथ्यं शुचिस्मिता ॥११५

पवित्र मुस्कान वाली सीता, रावण की मनोभावना को जानकर, अपने पति दाशरथि राम का स्मरण कर गृह्याग्नि की शरण में चली गई ।११५

---

१. विमलामिति पा०।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपतस्थे महायोगं सर्वलोकविदाहकम्[1] ।
कृतांजलौ रामपत्नी साक्षात्पतिमिवाच्युतम् ॥११६

महायोगस्वरूपा, सारे संसार के दाहक, अग्नि को, अपने पति साक्षात् विष्णु का स्वरूप मानकर, रामपत्नी सीता ने, हाथ जोड़कर उनसे (अग्नि से) प्रार्थना की ।११६

नमस्यामि महायोगं कृशानु[2] गह्वरं परम् ।
दाहकं सर्वभूतानामीशानं कालरूपिणम् ॥११७

महायोगी, श्रेष्ठ गह्वर (अर्थात् अनिर्वचनीय तत्त्व), सभी प्राणियों के दाहक, सर्वभूतेश्वर और सभी के संहारक कालरूपी अग्नि को नमस्कार है ।११७

प्रपद्ये पावकं देवं शाश्वतं विश्वरूपिणम् ।
योगिनं कृत्तिवसनं भूतेशं परमम्पदम् ॥११८

शाश्वत, विश्वरूपी, योगी, मृगचर्मधारी, सभी प्राणियों के ईश्वर, परम पद स्वरूप, अग्नि की शरण में जाती हूँ ।११८

आत्मानं दीप्तवपुषं सर्वभूतहृदि स्थितम् ।
तं प्रपद्ये जगन्मूर्तिं प्रभवं सर्वतेजसाम् ।
महायोगीश्वरं वह्निमादित्यं परमेष्ठिनम् ॥११९

आत्मस्वरूप प्रकाशमान शरीर वाले, सभी प्राणियों के हृदय में स्थित, जगत्मूर्ति सभी तेजों के उत्पत्ति स्थान, महायोगेश्वर, आदित्य, प्रजापति स्वरूप, अग्नि की शरण में जाती हूँ ।११९

प्रपद्ये शरणं रुद्रं महाग्रासं त्रिशूलिनम् ।
कालाग्निं योगिनामीशं भोगमोक्षफलप्रदम् ॥१२०

भयंकर महाग्रास (अर्थात् सर्वसंहारक), त्रिशूलधारी, सर्वयोगीश्वर, भोग और मोक्ष का फल देने वाले कालाग्नि की शरण में जाती हूँ ।१२०

प्रपद्ये त्वां विरूपाक्षं भूर्भुवःस्वःस्वरूपिणम् ।
हिरण्मये गृहे गुप्तं महान्तममितौजसम् ॥१२१

हे अग्नि ! आप विरूपाक्ष हैं । आप महाव्याहृति स्वरूप, स्वर्णिम गृह में अव्यक्त रूप से विद्यमान, महान और अमित तेज स्वरूप हैं, मैं आपकी शरण में जाती हूँ ।१२१

वैश्वानरं प्रपद्येऽहं सर्वभूतेष्ववस्थितम् ।
हव्यकव्यवहं देवं प्रपद्ये वह्निमीश्वरम् ॥१२२

---

१. सर्वदोषविनाशनमिति, सर्वदोषविदाहकमिति, सर्वरोगविनाशनमिति पा० ।
२. कृतान्तं गह्वरं परिमिति, कृत्वा नगहरं परमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी प्राणियों में विद्यमान, वैश्वानर के शरण में जाती हूँ मैं हव्यकव्यवाहन, और ईश्वर, देव वह्नि की शरण में जाती हूँ ।१२२

प्रपद्ये तत्परं तत्त्वं वरेण्यं सवितुः शिवम् ।
स्वर्गमग्निं[1] परं ज्योतिः स्वाक्षयं हव्यवाहनम् ॥१२३

मैं, पूजनीय, कल्याणकारी परम तत्त्व, सविता के आकाश मण्डल में स्थित ज्योतिः स्वरूप, अग्नि की शरण में जाती हूँ । हे हव्यवाहक ! आप मेरी रक्षा कीजिए ।१२३

इति वह्न्यष्टकं जप्त्वा रामपत्नी यशस्विनी ।
ध्यायन्ती मनसा तस्थौ राममुन्मीलितेक्षणा ॥१२४

इस प्रकार वह्न्यष्टक का जप करके, रामपत्नी यशस्विनी सीता, आँखें मूदकर, मन ही मन राम का ध्यान करने लगीं ।१२४

अथावसथ्याद्भगवान्हव्यवाहो महेश्वरः ।
आविरासीत्सुदीप्तात्मा तेजसा निर्दहन्निव ॥१२५

तत्पश्चात् भगवान् हव्यवाहन महेश्वर प्रकाशित होकर मानो तेज से जला देने के लिए, गृह्याग्नि से प्रकट हुए ।१२५

सृष्ट्वा मायामयीं सीतां स रावणवधेच्छया ।
सीतामादाय रामेष्टा[2] पावकोऽन्तरधीयत ॥१२६

भगवान् ने रावण वध की इच्छा से, मायावी सीता की रचना करके, राम की प्रिया सीता को लेकर, अग्नि में ही अन्तर्धान हो गये ।१२६

तां दृष्ट्वा तादृशीं[3] सीतां रावणो राक्षसेश्वरः ।
समादाय ययौ लङ्कां सागरान्तरसंस्थिताम् ॥१२७

राक्षसेश्वर रावण, उस मायावी सीता को देखकर, उसे पाने के लिए, सागर तट पर स्थित लंकापुरी में गया ।१२७

कृत्वा तु रावणवधं रामो लक्ष्मणसंयुतः ।
समादायाभवत्सीतां शङ्काकुलितमानसः ॥१२८

तत्पश्चात् लक्ष्मण के साथ राम ने रावण का वध किया और सीता को लाकर, शंकित हो उठे ।१२८

सा प्रत्ययाय भूतानां सीता मायामयी पुनः ।
विवेश पावकं क्षिप्रं ददाह ज्वलनोऽपि ताम् ॥१२९

---

१. भागमग्निमिति, भार्गवाग्निमिति पा० । २. धर्मिष्ठामिति पा० । ३. तामसीमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मायावी सीता ने लोगों को विश्वास दिलाने के लिए पुनः अग्नि में प्रवेश किया था और अग्नि ने भी उस सीता को जला दिया था।१२९

दग्ध्वा मायामयीं सीतां भगवानुष्णदीधितिः ।
रामायादर्शयत्सीतां पावकोऽभूत्सुरप्रियः ॥१३०

तेज प्रकाश वाले अग्नि ने, मायावी सीता को जलाकर, राम को वास्तविक सीता के दर्शन करवाए थे, इसलिए अग्नि देवताओं को अत्यन्त प्रिय हुए।१३०

प्रगृह्य भर्त्तुश्चरणौ काराभ्यां सा सुमध्यमा ।
चकार प्रणतिं भूमौ रामाय जनकात्मजा ॥१३१

तब, क्षीण कटि, जनकपुत्री सीता ने, दोनों हाथों से, राम का चरण स्पर्श करके, उनको उद्देश्य कर भूमि पर प्रणाम किया।१३१

दृष्ट्वा हृष्टमना रामो विस्मयाकुललोचनः ।
प्रणम्य वह्निं शिरसा तोषयामास राघवः ॥१३२

सारी विचित्रताओं को, आश्चर्य चकित नेत्रों से देखकर प्रसन्न मन से राम ने सिर झुका कर प्रणाम करके, अग्नि को तृप्त किया।१३२

उवाच वह्निं भगवान् किमेषा वरवर्णिनी ।
दग्धा भगवता पूर्वं दृष्ट्वा मत्पार्श्वमागता ॥१३३

तत्पश्चात् वे अग्नि से बोले, हे भगवन्! आपने तो इन्हें (सीता को) अभी भस्म कर दिया। तो क्या, दुबारा यह जन्म लेकर मेरे पास आई।१३३

तमाह देवो लोकानां दाहको हव्यवाहनः ।
यथावृत्तं दाशरथिं भूतानामेव सन्निधौ ॥१३४

तब संसार के दाहक, हव्यवाहन अग्निदेव ने, सभी लोगों के सामने, दाशरथि राम को यह कथा सुनाई।१३४

इयं[1] सा परमा साध्वी पार्वतीव प्रिया तव ।
आराध्य लब्ध्वा तपसा देव्याश्चात्यन्तवल्लभा ॥१३५

(मिथिलेश्वर जनक ने), परम साध्वी, शंकरप्रिया पार्वती की, तपस्या के द्वारा आराधना करके, देवी की अत्यन्त प्रिया सीता को पाया था।१३५

भर्तुः शुश्रूषणोपेता सुशीलेयं पतिव्रता ।
भवानीवेश्वरे गुप्ता माया रावणकामिता ॥१३६

---

१. इत्थं सा मिथिलेशेन पार्वतीं रुद्रवल्लभामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति की सेवा में रत रहने वाली, पतिव्रता और सुशीला सीता की कामना, रावण को करते देखकर, मैंने इसे पार्वती के पास रख दिया था।१३६

या नीता राक्षसेशेन सीता भगवती हृता।
मया मायामयी सृष्टा रावणस्य वधेच्छया ॥१३७

रावण ने जिस सीता का हरण किया था, वह तो भस्मीभूत हो गई। मैंने रावण को मारने की इच्छा से मायावी सीता की रचना की थी।१३७

तवर्थं भवता दृष्टो रावणो राक्षसेश्वरः।
मायोपसंहृता चैव हतो लोकविनाशनः ॥१३८

इसके लिए आप राक्षसेश्वर रावण को देख सके, वह मायावी सीता मेरे द्वारा समाप्त कर दी गई और संसार का विनाश करने वाला रावण भी मारा गया है।१३८

गृहाण चैतां विमलां जानकीं वचनान्मम।
पश्य नारायणं देवं स्वात्मानं प्रभवाव्ययम् ॥१३९

अतः मैं कहता हूँ कि आप, पवित्र जानकी को स्वीकार कीजिए और अपने आप को अविनाशी कारण स्वरूप, देव नारायण को जानिए।१३९

इत्युक्त्वा भगवांश्चण्डो विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः।
मानितो राघवेणाग्निर्भूतैश्चान्तरधीयत ॥१४०

संसार के ज्वाला स्वरूप, विश्वमुख भगवान् चण्ड (अग्नि) यह कहकर अन्तर्धान हुए और भगवान् राम भी मनुष्यों के द्वारा सम्मानित होकर अन्तर्धान हो गए।१४०

एतत्पतिव्रतानां वै माहात्म्यं कथितं मया।
स्त्रीणां सर्वाघशमनं प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ॥१४१

इस प्रकार पतिव्रताओं का माहात्म्य मैंने बताया। मुनियों ने कहा है कि, स्त्रियों के सारे पापों को दूर करने का यही प्रायश्चित्त है।१४१

अशेषपापसंयुक्तः पुरुषोऽपि सुसंयुतः।
स्वदेहं पुण्यतीर्थेषु त्यक्त्वा मुच्येत किल्बिषात्।।१४२

विभिन्न प्रकार के पापों से युक्त पुरुष भी, यदि भली भांति एकाग्र होकर, पुण्यतीर्थ में अपना देह त्यागे, तो सारे पापों से मुक्ति मिल जाती है।१४२

पृथिव्यां सर्वतीर्थेषु स्नात्वा पुण्येषु वा द्विजः।
मुच्यते पातकैः सर्वैः सञ्चितैरपि पूरुषः ॥१४३

 CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथिवी पर स्थित, सारे पुण्य तीर्थों में स्नान करने से, संचित पापों से उसे मुक्ति मिल जाती है ।१४३

व्यास उवाच

इत्येष मानवो धर्मो युष्माकं कथितो मया ।
महेशाराधनार्थाय ज्ञानयोगश्च शाश्वतः ॥१४४

व्यास बोले—स्वयम्भूमनु के द्वारा बताए गए धर्मों के विषय में आपलोगों को बताया और महेश्वर की आराधना के लिए नित्य ज्ञानयोग भी बताया ।१४४

योगेन विधिना युक्तो ज्ञानयोगं समाचरेत् ।
स पश्यति महादेवं नान्यः कल्पशतैरपि ॥१४५

जो व्यक्ति, इस विधान के अनुसार, ज्ञानयोग का आचरण करता है, वही महादेव का दर्शन पाता है । अन्य व्यक्ति सौ जन्मों में भी उन्हें नहीं देख पाता ।१४५

स्थापयेद्यः परं धर्मं ज्ञानं तत्पारमेश्वरम् ।
न तस्मादधिको लोके स योगी परमो मतः ॥१४६

जो व्यक्ति ईश्वर तत्त्व, ज्ञानरूप, परमधर्म की स्थापना करता है, उससे बढ़कर श्रेष्ठ व्यक्ति, इस संसार में नहीं है, और वही व्यक्ति श्रेष्ठ योगी भी है ।१४६

यः संस्थापयितुं शक्तो न कुर्यान्मोहितो जनः ।
स योगयुक्तोऽपि मुनिर्नार्त्यर्थं भगवत्प्रियः ॥१४७

जो व्यक्ति धर्म की स्थापना नहीं करता, वह मुनि और योगी होने पर भी भगवान् को प्रिय नहीं होता है ।१४७

तस्मात्सदैव दातव्यं ब्राह्मणेषु विशेषतः ।
धर्मयुक्तेषु शान्तेषु श्रद्धया चान्वितेषु वै ।१४८

इसलिए सदैव इस ज्ञान का दान करना चाहिए और विशेष रूप से धार्मिक, शान्त और श्रद्धालु ब्राह्मणों को दान करना चाहिए ।१४८

यः पठेद्भवतां नित्यं संवादं मम चैव हि ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो गच्छेत[1] परमाङ्गतिम् ॥१४९

जो व्यक्ति नित्यप्रति व्यास संवाद का पाठ करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर, श्रेष्ठ गति प्राप्त करता है ।१४९

---

१. गच्छेत इत्यार्षमात्मनेपदम् । गच्छेत्स इति, स गच्छेदिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्राद्धं वा दैविके कार्ये ब्राह्मणानां च सन्निधौ ।
पठेत[1] नित्यं सुमनाः श्रोतव्यं च द्विजातिभिः ॥१५०

श्राद्ध, दैविक कार्य या ब्राह्मणों के पास बैठकर, प्रसन्न मन से, प्रतिदिन इसका पाठ करना चाहिए और द्विजातियों को प्रतिदिन सुनना चाहिए ।१५०

योऽर्थं विचार्यं युक्तात्मा श्रावयेद्वा[2] द्विजान् शुचीन् ।
स दोषकंचुकं त्यक्त्वा याति देवं महेश्वरम् ॥१५१

जो मुक्तात्मा व्यक्ति, इसके अर्थ पर विचार करके, पवित्र ब्राह्मणों को सुनाता है, वह दोषरूपी आवरण को त्यागकर, महेश्वर के पास जाता है १५१

एतावदुक्त्वा भगवान्व्यासः सत्यवतीसुतः ।
समाश्वास्य मुनीन्सूतं[3] जगाम च यथागतम् ॥१५२

सत्यवती पुत्र भगवान् व्यास ने, इस प्रकार कहकर, सभी मुनियों को भली भाँति आश्वस्त किया और, यथास्थान चले गए ।१५२

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में चौंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३४॥

●

पञ्चत्रिंशोऽध्यायः

अथ तीर्थप्रकरणम्

ऋषय ऊचुः

तीर्थानि यानि लोकेऽस्मिन्विश्रुतानि महान्त्यपि ।
तानि त्वं कथयास्माकं रोमहर्षण साम्प्रतम् ॥१

ऋषि वृन्द बोले—हे रोमहर्षण ! सम्प्रति आप हमें, संसार में जितने भी महातीर्थ और प्रसिद्ध तीर्थ हैं, उनके विषय में बताइए ।१

---

१. पठेत इत्यार्षमात्मनेपदम् । २. श्रावयेद्ब्राह्मणानिति, श्रावयेद्वै इति पा० । ३. मुनीन् सर्वानिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोमहर्षण उवाच

शृणुध्वं कथयिष्येऽहं तीर्थानि विविधानि च ।
कथितानि पुराणेषु मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः ॥२

रोमहर्षण बोले—ब्रह्मवादी ऋषियों के द्वारा पुराणों में बताए गए, विविध तीर्थों के विषय में बताने जा रहा हूँ, आपलोग सुनें ।२

यत्र स्नानञ्जपो होमः श्राद्धदानादिकं कृतम् ।
एकैकशो मुनिश्रेष्ठाः पुनात्यासप्तमं कुलम् ॥३

पंचयोजनविस्तीर्णं ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
प्रयागं प्रथितं तीर्थं यस्य माहात्म्यमीरितम् ॥४

हे मुनिश्रेष्ठो ! जहाँ स्नान, जप, हवन, श्राद्ध और दानादि कर्मों में से, एक भी कर्म सम्पन्न करने पर, सातों पीढ़ियाँ पवित्र हो जाती हैं । पाँच योजन तक फैले, परमेष्ठी ब्रह्मा का क्षेत्र उस प्रयाग नाम से प्रसिद्ध तीर्थ का माहात्म्य, इससे पहले आपलोगों को बता चुका हूँ ।३-४

अन्यच्च तीर्थप्रवरं कुरूणां देववन्दितम् ।
ऋषीणामाश्रमैर्जुष्टं सर्वपापविशोधनम्[1] ॥५

देवताओं के द्वारा पूजनीय, और श्रेष्ठ कुरुक्षेत्र नाम का एक और तीर्थ, ऋषियों के आश्रमों से सेवित तथा सारे पापों का नाशक है ।५

तत्र स्नात्वा विशुद्धात्मा दम्भमात्सर्यवर्जितः ।
ददाति यत्किञ्चिदपि पुनात्युभयतः कुलम् ॥६

इस तीर्थ में अहंकार और द्वेष का त्याग कर शुद्ध हृदय से स्नान करके, जो कुछ भी दान किया जाता है, वह दाता के दोनों कुलों (मातृ और पितृ कुल) को पवित्र करता है ।६

परं गुह्यं गयातीर्थं पितृणाञ्चातिदुर्लभम् ।
कृत्वा पिण्डप्रदानन्तु न भूयो जायते नरः ॥७

गयातीर्थं अत्यन्त गोपनीय और पितरों के लिए दुर्लभ है। वहाँ पिण्डदान करने से, मनुष्य पुनः जन्म नहीं लेता ।७

सकृद्गयाभिगमनं कृत्वा पिण्डं ददाति यः ।
तारिताः[2] पितरस्तेन यास्यन्ति परमाङ्गतिम् ॥८

---

१. प्रणाशनमिति पा० । २. पितरस्तारितास्तेनेति पा० ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो व्यक्ति एक बार भी गया जाकर पिण्डदान करता है। उसके पितर, उसके द्वारा तर जाते हैं, और श्रेष्ठ गति प्राप्त करते हैं।८

तत्र लोकहितार्थाय रुद्रेण परमात्मना।
शिलातले पदं न्यस्तं तत्र पितॄन्प्रसादयेत् ॥९

वहाँ परमात्मा रुद्र ने सभी प्राणियों के हित के लिए, शिला तल पर पैर रखा था। वहाँ पिण्डदान करके, पितरों को प्रसन्न किया जाता है।९

गयाभिगमनं कर्तुं यः शक्तो नाधिगच्छति।
शोचन्ति पितरस्तं वै वृथा तस्य परिश्रमः ॥१०

जो व्यक्ति समर्थ होने पर भी गया नहीं जाता, उसके पितर उसके प्रति दुःखी रहते हैं, इसलिए उसके द्वारा किए गए अन्यान्य कर्म व्यर्थ हो जाते हैं।१०

गायन्ति पितरो गाथाः कीर्त्तयन्ति महर्षयः।
गयां यास्यति यः कश्चित्सोऽस्मान्सन्तारयिष्यति ॥११

गया के विषय में पितर जो कथा बताते हैं, महर्षियों ने उसे इस प्रकार बताया है-वंश का जो कोई भी, गया जाएगा, वही हम लोगों का उद्धार करेगा।११

यदि स्यात्पातकोपेतः स्वधर्मपरिवर्जितः।
गयां यास्यति यः कश्चित् सोऽस्मान्सन्तारयिष्यति ॥१२

हमारे कुल का कोई भी, यदि पापी अपने धर्म का त्याग करके गया जाता है, तो भी वह हम लोगों का उद्धार करेगा।१२

एष्टव्या बहवः पुत्राः शीलवन्तो[1] गुणान्विताः।
तेषां तु समवेतानां यद्येकोऽपि गयां व्रजेत् ॥१३

शीलवान् और सद्गुण सम्पन्न अनेक पुत्रों की कमना करनी चाहिए, जिससे उनमें से कोई न कोई गया जा सके।१३

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन ब्राह्मणस्तु विशेषतः।
प्रदद्याद्विधिवत्पिण्डान् गयाङ्गत्वा समाहितः ॥१४

इसलिए विशेषरूप से ब्राह्मण, सभी प्रकार से यत्नपूर्वक गया जाकर, एकाग्रचित्त से, विधानों के अनुसार पिण्डदान करता है। १४

---

१. बलवन्त इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्यास्तु खलु ते मर्त्या गयायां पिण्डदायिनः ।
कुलान्युभयतः सप्त समुद्धृत्याप्नुयुः परम् ॥१५

जो मनुष्य गया जाकर पिण्डदान करते हैं, वे लोग पिता और माता दोनो कुलों की, सातों पीढ़ियों का उद्धार करके, स्वयं श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करते हैं। १५

अन्यच्च तीर्थप्रवरं सिद्धावासमुदाहृतम् ।
प्रभासमिति विख्यातं यत्रास्ते भगवान्भवः ॥१६

प्रभास नाम से प्रसिद्ध एक और श्रेष्ठ तीर्थ है। जो सिद्धों की भूमि कही जाती है। वहाँ भगवान् महादेव का निवास है। १६

तत्र[1] स्नानं ततः श्राद्धं ब्राह्मणानाञ्च पूजनम् ।
कृत्वा लोकमवाप्नोति ब्राह्मणोऽक्षय्यमुत्तमम् ॥१७

उस तीर्थ में स्थान करने के बाद ब्राह्मण की पूजा करने से मनुष्य श्रेष्ठ और अविनासी ब्रह्मलोक में जाता है। १७

तीर्थंत्रैयम्बकं नाम सर्वदेवनमस्कृतम् ।
पूजयित्वा तत्र रुद्रं ज्योतिष्टोमफलं लभेत्[2] ॥१८

सभी देवताओं के द्वारा वन्दनीय त्रैयम्बक नामक तीर्थ में, रुद्र की पूजा करने से ज्योतिष्टोम यज्ञ का फल मिलता है ।१८

सुवर्णाक्षं[3] महादेवं समभ्यर्च्य कपर्दिनम् ।
ब्राह्मणान् पूजयित्वा च गाणपत्यं लभेत सः ॥१९

वहाँ (त्रैयम्बक तीर्थ) में सुवर्णाक्ष नामक कपर्दी महादेव और ब्राह्मणों की पूजा करने से, निश्चित रूप से ग्राणपत्य (अनेक लोगों का स्वामित्व) की प्राप्ति होती है। १९

सोमेश्वरं तीर्थवरं रुद्रस्य परमेष्ठिनः ।
सर्वव्याधिहरं पुण्यं रुद्रमालोक्य[4] कारणम् ॥२०

परमेष्ठी महादेव का सोमेश्वर नामक जो वरणीय तीर्थ है, वह सभी व्याधियों का नाशक, पवित्र और रुद्रलोक में निवास रूपी मुक्ति विशेष का कारण है। २०

तीर्थानां परमं तीर्थं विजयं नाम शोभनम् ।
तत्र लिङ्गं महेशस्य विजयं नाम विश्रुतम् ॥२१

---

१. तत्र स्नानन्तु यः इति, तत्र स्नानं तपः श्राद्धमिति पा०। २. लभेत इति साधु। ३. सुपर्णाक्षमिति पा०। ४. रुद्रसायुज्येति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थ विजय नामक सुन्दर तीर्थ है। जहाँ महादेव का विजय नामक विख्यात लिङ्ग विद्यमान है। २१

षण्मासनियताहारो ब्रह्मचारी समाहितः।
उषित्वा तत्र विप्रेन्द्रा यास्यन्ति[1] परमम्पदम् ॥२२

यहाँ पर छः महीने तक, संयताहार, संयतात्मा और ब्रह्मचारी होकर रहने से, ब्राह्मण श्रेष्ठों को परम पद की प्राप्ति होती है। २२

अन्यच्च तीर्थप्रवरं पूर्वदेशेषु शोभनम्।
एकान्तं देवदेवस्य गाणपत्यफलप्रदम् ॥२३

पूर्वदेश में देवाधिदेव महादेव का एकान्त नामक एक और सुन्दर तथा अत्युत्तम तीर्थ है, जो अनेक लोगों का स्वामित्व प्रदान करता है। २३

दत्त्वात्र शिवभक्तानां किञ्चिच्छश्वन्महीं शुभाम्।
सार्वभौमो भवेद्राजा मुमुक्षुर्मोक्षमाप्नुयात् ॥२४

इस तीर्थ में शिवभक्त के नाम पर यदि अल्प मात्रा में भी भूदान किया जाए तो विषयानुरागी व्यक्ति चक्रवर्ती सम्राट् बनता है और मोक्षाभिलाषी मोक्ष प्राप्त करता है। २४

महानदीजलं पुण्यं सर्वपापविनाशनम्।
ग्रहणे तदुपस्पृश्य[2] मुच्यते सर्वपातकैः ॥२५

महानदी का पवित्र जल सभी पापों का नाश करता है। ग्रहण के समय, उसका जल छूने से, मनुष्य सारे पापों से मुक्त हो जाता है। २५

अन्या च विरजा नाम नदी त्रैलोक्यविश्रुता।
तस्यां स्नात्वा नरो विप्रो ब्रह्मलोके महीयते ॥२६

तीनों लोकों में विख्यात विरजा नाम की एक और नदी है, यदि मनुष्य उसमें नहाए तो वह ब्रह्मलोक में सम्मानित होता है। २६

तीर्थे नारायणस्यान्यन्नाम्ना तु पुरुषोत्तमम्।
तत्र नारायणः श्रीमानास्ते परमपूरुषः ॥२७

पुरुषोत्तम नाम का भगवान् नारायण का एक तीर्थ है, उस तीर्थ में परमपुरुष श्रीमन्नारायण विराजमान हैं।२७

पूजयित्वा परं विष्णुं स्नात्वा तत्र द्विजोत्तमः।
ब्राह्मणान्पूजयित्वा तु विष्णुलोकमवाप्नुयात् ॥२८

---

१. प्रयास्यन्ति परम्पदमिति पा०। २. समुपस्पृश्येति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस तीर्थ में स्नान करके, भगवान् विष्णु की पूजा करने के बाद, ब्राह्मणों की पूजा करने से, विष्णुलोक की प्राप्ति होती है। २८

तीर्थानां परमं तीर्थङ्गोकर्ण[1] नाम विश्रुतम्।
सर्वपापहरं शम्भोर्निवासः परमेष्ठिनः ॥२९

तीर्थों में सर्वश्रेष्ठ और सर्वपापविनाशक गोकर्ण नामक तीर्थ है, जो परमेष्ठी शम्भु का निवास स्थान है। २९

दृष्ट्वा लिङ्गं तु देवस्य गोकर्णं परमुत्तमम्।
ईप्सितांल्लभते कामानुदस्य दयितो भवेत् ॥३०

भगवान् का अत्युत्तम लिङ्ग गोकर्णेश्वर का दर्शन करने से, उसे वाञ्छित फल की प्राप्ति होती है और भगवान् महादेव का प्रिय होता है।३०

उत्तरं चापि गोकर्णं लिंगं देवस्य शूलिनः।
महादेवं चार्चयित्वा शिवसायुज्यमाप्नुयात् ॥३१

उत्तरी गोकर्ण में भी त्रिशूलधारी शिव का लिङ्ग विद्यमान है। वहाँ पूजा करने से महादेव का सान्निध्य प्राप्त होता है। ३१

तत्र देवो महादेवः स्थाणुरित्यभिविश्रुतः।
तं दृष्ट्वा सर्वपापेभ्यस्तत्क्षणान्मुच्यते[2] नरः ॥३२

उत्तरी गोकर्ण में देवाधिदेव महादेव स्थाणु के नाम से जाने जाते हैं। उनका दर्शन प्राप्त करने से, मनुष्य उसी क्षण, सारे पापो से मुक्त हो जाता है। ३२

अन्यत्कुब्जाश्रमम्पुण्यं[3] स्थानं विष्णोर्महात्मनः।
संपूज्य पुरुषं विष्णुं श्वेतद्वीपे महीयते ॥३३

महात्मा विष्णु का कुब्जाश्रम नामक एक पुण्य तीर्थ है। वहाँ परमपुरुष विष्णु की पूजा करने से, (मृत्यु के बाद) श्वेतद्वीप में (विष्णुलोक में) सम्मान मिलता है। ३३

यत्र नारायणो देवो रुद्रेण त्रिपुरारिणा।
कृत्वा यज्ञस्य मथनं दक्षस्य तु विसर्जितः ॥३४

इसी स्थान पर त्रिपुरारि रुद्र के द्वारा, दक्षयज्ञ को नष्ट करके, भगवान् नारायण का त्याग किया गया था। ३४

समन्ताद्योजनं क्षेत्रं सिद्धर्षिगणसेवितम्।
पुण्यमायतनं विष्णोस्तत्रास्ते पुरुषोत्तमः ॥३५

---

१. गोकर्णेश्वरमुत्तममिति पा०। २. मुच्यते तत्क्षणादिति पा०। ३. अन्यत् कुब्जाम्रमतुलमिति, अन्यद्वै परमं स्थानं विष्णोर्यच्च महात्मन इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों तरफ योजन तक फैला हुआ क्षेत्र, सिद्धों और ऋषियों के द्वारा उपासित और विष्णु का अत्यन्त पवित्र निवास है। पुरुषोत्तम विष्णु इसी में विराजमान हैं।३५

अन्यत्कोकामुखे विष्णोस्तीर्थमद्भुतकर्मणः।
मुक्तोऽत्र[1] पातकैर्मर्त्यो विष्णुसारूप्यमाप्नुयात् ॥३६

अद्भुतकर्मा विष्णु का कोकामुख नामक और एक तीर्थ है, वहां जाने से मनुष्य सारे पापों से मुक्त होकर, विष्णु के समान रूप प्राप्त कर लेता है।३६

शालिग्रामं महातीर्थं विष्णोः प्रीतिविवर्द्धनम्।
प्राणांस्तत्र नरस्त्यक्त्वा हृषीकेशं प्रपश्यति ॥३७

विष्णु की प्रसन्नता को वर्धित करने वाला, शालिग्राम नामक एक महातीर्थ है। इस तीर्थ में प्राण त्यागने से मनुष्यों को हृषीकेश का दर्शन प्राप्त होता है।३७

अश्वतीर्थमिति ख्यातं सिद्धावासं सुशोभनम्।
आस्ते हयशिरा नित्यं तत्र नारायणः स्वयम् ॥३८

सिद्धों का निवास स्थान अत्यन्त पवित्र अश्वतीर्थ नाम से प्रसिद्ध, एक और तीर्थ हैं। यहाँ भगवान् नारायण, हयशीर्ष (शालिग्राम मूर्ति विशेष) रूप में सदा विराजमान रहते हैं।३८

तीर्थं त्रैलोक्यविख्यातं सिद्धावासं सुशोभनम्।
तत्रास्ति पुण्यदं तीर्थं ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ॥३९

तीनो लोको में विख्यात सिद्धों का आवास और सुन्दर पुष्कर नामक एक और तीर्थ है, जो परमेष्ठी ब्रह्मा का है।३९

पुष्करं सर्वपापघ्नं मृतानां ब्रह्मलोकदम्।
मनसा संस्मरेद्यस्तु पुष्करं वै द्विजोत्तमः ॥४०
पूयते पातकैः सर्वैः शक्रेण सह मोदते।

यह तीर्थ पाप-नाशक है। पुष्कर तीर्थ में मरने से, मृतक को ब्रह्म की प्राप्ति होती है। जो ब्रह्म श्रेष्ठ मन ही मन पुष्कर तीर्थ का स्मरण करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर, मृत्यु के बाद इन्द्रलोक में इन्द्र के साथ आनन्द का उपभोग करता है।४०½।

तत्र देवाः स गन्धर्वाः सयक्षोरगराक्षसाः ॥४१
उपासते सिद्धसङ्घा ब्रह्माणं पद्मसम्भवम्।

इस पुष्कर क्षेत्र में, देवता, गन्धर्व, यक्ष, सिद्ध, और राक्षस वृन्द, मे सभी, पद्म से उत्पन्न ब्रह्मा की उपासना करते हैं।४१½।

---

१. मृतोऽत्रः पातकैर्मुक्त इति, च्युतोऽत्र पातकैर्मर्त्य इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्र स्नात्वा व्रजेच्छुद्धो ब्रह्माणं परमेष्ठिनम् ॥४२
पूजयित्वा द्विजवरं ब्राह्मणं सम्प्रपश्यति ।

हे ब्राह्मण श्रेष्ठो ! वहाँ स्नान करने से शुद्धि होती है और परमेष्ठी ब्रह्मा की पूजा करने से उनका दर्शन प्राप्त होता है ।४२½

तत्राभिगम्य देवेशं पुरुहूतमनिन्दितम् ॥४३
तद्रूपो[1] जायते मर्त्यः सर्वान् कामानवाप्नुयात्[2] ।

वहाँ जाकर निन्दा से परे, देवराज इन्द्र की शरणागति स्वीकार स्वीकार करने से मनुष्यों की सारी मनःकामनाएँ पूरी हो जातीं हैं और परलोक में इन्द्र पद की प्राप्ति होती है ।४३½

सप्तसारस्वतन्तीर्थं[3] ब्रह्माद्यैः सेवितं परम् ॥४४
पूजयित्वा तत्र रुद्रमश्वमेध फलं भवेत् ।

ब्रह्मादि देवताओं के द्वारा आराधित सप्तसारस्वत नामक एक तीर्थ है, वहाँ महादेव की पूजा करने से अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है ।४४½

यत्र मङ्कणको रुद्रं प्रपन्नं परमेश्वरम् ॥४५
आराधयामास शिवं तपसा गोवृषध्वजम् ।

यहाँ मङ्कणक नामक मुनि, –परमेश्वर महादेव की शरण में आये थे और गोवृषध्वज शिव की तपस्या के द्वारा आराधना की थी ।४५½

प्रजज्वालाथ तपसा मुनिर्मङ्कणकस्तदा[4] ॥४६
ननर्त हर्षवेगेन ज्ञात्वा रुद्रं समागतम् ।

तदनन्तर मङ्कणक मुनि तपस्या के द्वारा प्रदीप्त हो उठे (अर्थात् उनकी तपस्या पूर्ण हुई) और भगवान् शंकर को आते हुए देखकर हर्षातिरेक में नृत्य करने लगे ।४६½

तं प्राह भगवानुद्रः किमर्थं नर्त्तितं त्वया ॥४७
दृष्ट्वापि देवमीशानं नृत्यति स्म पुनः पुनः ।

मुनि को इस प्रकार नृत्य करते हुए देखकर, भगवान् महादेव ने पूछा कि–तुम किसलिए इस प्रकार नृत्य कर रहे हो ? मङ्कणक मुनि महादेव महेश्वर को देखकर भी पुनः पुनः नृत्य करने लगे ।४७½

---

१. सद्यः इति, सुरूपो जायते मर्त्यं इति पा० । २. कामान् समश्नुते इति पा० । ३. सप्तगोदावरन्तीर्थमिति पा० । ४. पंचाक्षरपरायण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोऽन्वीक्ष्य भगवानीशः सगर्वं गर्वशान्तये ॥४८
स्वकं देहं विदार्यास्मै भस्मराशिमदर्शयत् ।
पश्येमं मच्छरीरोत्थं भस्मराशिं द्विजोत्तम ॥४९
माहात्म्यमेतत्तपसस्त्वादृशोऽन्योऽपि विद्यते ।
यत्सगर्वं हि भवता नर्त्तितं मुनिपुंगव ॥५०
न युक्तं तापसस्यैतत्त्वत्तोऽप्यभ्यधिको[1] ह्यहम् ।

भगवान् महेश्वर ने मुनि को घमण्ड से युक्त देखकर, उनके घमण्ड को शान्त करने के लिए अपने देह को चीरकर, उन्हें भस्मराशि के दर्शन कराए और कहा कि, हे मुनिश्रेष्ठ ! मेरे शरीर से उत्पन्न इस भस्मराशि को देखो। यह तपस्या का माहात्म्य तुम्हारे जैसे तपस्वी और भी हैं। हे मुनि श्रेष्ठ ! जिस गर्व के साथ आपने नृत्य किया, वह एक तपस्वी के लिए उचित नहीं था। तपस्या में तुमसे अधिक श्रेष्ठ मैं हूँ ।४८-५०½

इत्याभाष्य मुनिश्रेष्ठं स रुद्रोऽखिलविश्वदृक् ॥५१
आख्यया[2] परमं भावं ननर्त्त जगतो हरः ।
सहस्रशीर्षा भूत्वा स सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥५२
दंष्ट्राकरालवदनो ज्वालामाली भयंकरः ।

मुनिश्रेष्ठ से, सारे संसार के संहारकर्ता और संसार के द्रष्टा, रुद्र ने ऐसा कहकर परम भाव का आश्रय लिया और हजारों सिर, नेत्र और चरणों वाले, बड़े-२ दाँतों से युक्त भयानक चेहरा तथा, ज्वालाओं से युक्त भय'कर रूप धारण कर नृत्य करने लगें ।५१-५२½

सोऽन्वपश्यदथेशस्य पार्श्वे[3] तस्य त्रिशूलिनः ॥५३
विशाललोचनामेकां देवीञ्चारुविलासिनीम् ।
सूर्यायुतसमाकारां[4] प्रसन्नवदनां शिवाम् ॥५४
सस्मितं प्रेक्ष्य विश्वेशन्तिष्ठन्तममितद्युतिम् ।

तत्पश्चात् मङ्कणक ऋषि ने, महादेव के बगल में, बड़े-बड़े नेत्रों वाली, सुन्दर हाव भाव से युक्त, दस हजार सूर्य के समान प्रकाशमान, हँसमुख और रमणीया, एवं अपरिमित कान्तियुक्त एक देवी कोदेखा ।५३-५४

दृष्ट्वा संत्रस्तहृदयो वेपमानो मुनीश्वरः ॥५५
ननाम शिरसा रुद्रं रुद्राध्यायञ्जपन्वशी ।

---

१. लुप्तोऽप्यत्राधिकऽह्ययमिति पा० । २. आस्थाय स्वं परमिति पा० । ३. शाश्वतस्येति पा० । ४. समप्रख्यामिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह दृश्य देखकर मङ्कणक मुनि ने भय मे काँपते हुए रुद्राध्याय का जप करके सिर झुकाकर, भगवान् रुद्र को प्रणाम किया ।५५½।

प्रसन्नो भगवानीशस्त्यम्बको भक्तवत्सलः ॥५६
पूर्ववेषं स जग्राह देवी चान्तर्हिताभवत् ।

भगवान् महेश्वर ने मुनि से प्रसन्न होकर अपना भयंकर रूप त्याग दिया और पहले जैसा रूप धारण कर लिया। देवी भी अन्तर्धान हो गई । ५६½।

आलिङ्ग्य भक्तं प्रणतं देवदेवः स्वयं शिवः ॥५७
न भेतव्यं त्वया वत्स प्राह किन्ते ददाम्यहम् ।

विनम्र भक्त मङ्कणक मुनि को देवाधिदेव ने स्वयं आलिंगन किया और बोले– हे वत्स ! तुम्हें डरने की आवश्यकता नहीं । तुम्हें क्या दान दूं बोलो ।५७½।

प्रणम्य मूर्ध्ना गिरिशं हरं त्रिपुरसूदनम् ॥५८
विज्ञापयामास तदा हृष्टः प्रष्टुमना मुनिः ।

तब मङ्कणक मुनि ने प्रसन्न होकर, त्रिपुरसूदन महादेव को सिर झुकाकर प्रणाम किया और पूछने की इच्छा से बोले ।५८½।

नमोऽस्तु ते महादेव महेश्वर नमोऽस्तु ते ॥५९
किमेतद्भगवद्रूपं सुघोरं विश्वतोमुखम् ।
का च सा भगवत्पार्श्वे राजमाना व्यवस्थिता ॥६०
अन्तर्हिते च सहसा सर्वमिच्छामि वेदितुम् ।

हे महादेव ! आपको नमस्कार । हे महेश्वर ! आपको नमस्कार । आपका यह विश्वतोमुख और भयंकर रूप क्या है ? तथा आपके बगल में विराजमान रहने वाली और सहसा अन्तर्धान हो जाने वाली (देवी) कौन थीं ? मैं यह सब कुछ जानना चाहता हूँ ।५९-६०½।

इत्युक्ते व्याजहारेशस्तदा मंकणकं हरः ॥६१
महेशः स्वात्मनो योगं देवीं च त्रिपुरानलः ।

मङ्कणक मुनि ने जब महादेव से ऐसा कहा, तो त्रिपुरदाहक महेश्वर ने अपना योग और देवी का वृत्तान्त इस प्रकार सुनाया ।६१½।

अहं सहस्रनयनः सर्वात्मा सर्वतोमुखः ॥६२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाहकः सर्वपाशानां[1] कालः कालकरो हरः ।
मयैव प्रेर्यते कृत्स्नं चेतनाचेतनात्मकम् ॥६३
सोऽन्तर्यामी[2] स पुरुषो ह्यहं वै पुरुषोत्तमः ।
तस्य सा परमा माया प्रकृतिस्त्रिगुणात्मिका ॥६४

मैं हजार नेत्रों वाला सभी प्राणियों का आत्मा, सर्वतोमुख, सारे बन्धनों का दाहक, कालस्वरूप और कालकर महादेव हूँ। चेतन और अचेतन विश्व को मैं ही प्रेरित करता हूँ, इसलिए मैं ही अन्तर्यामी पुरुष और पुरुषोत्तम हूँ (अर्थात् मैं ही जीवात्मा और परमात्मा हूँ)। त्रिगुणात्मिका प्रकृति, उन्हीं (पुरुषोत्तम) की परमा माया है ।६२-६४।

प्रोच्यते मुनिभिः शक्तिर्जगद्योनिः सनातनी ।
स एष मायया विश्वं व्यामोहयति विश्वकृत् ॥६५
नारायणः परोऽव्यक्तो मायारूप इति श्रुतिः ।

मुनिवृन्द, इसी माया शक्ति को, जगत् का कारण और सनातनी कहते हैं। परम अव्यक्त, विश्वस्रष्टा, नारायण, अपनी माया से सारी सृष्टि को विमोहित किए रहते हैं, ऐसा कहा जाता हैं ।६५½।

एवमेतज्जगत्सर्वं सर्वदा स्थापयाम्यहम् ॥६६
योजयामि प्रकृत्यार्हं पुरुषं पंचविंशकम् ।

सम्पूर्ण संसार को, (एकप्रकार से अपने-अपने कार्यों में) स्थापित करता हूँ और पच्चीस तत्त्वरूपी पुरुष को प्रकृति के साथ मिलाता हूँ ।६६½।

तथा वै संगतो देवः कूटस्थः सर्वगोऽमलः ॥६७
सृजत्यशेषमेवेदं स्वमूर्त्तेः प्रकृतेरजः ।
स देवो भगवान्ब्रह्मा विश्वरूपः[3] पितामहः ॥६८

नित्य, सर्वव्यापी, पवित्र और चैतन्य स्वरूप, अनादि नारायण देव, (अपनी शक्ति स्वरूपा प्रकृति से मिलकर) स्वमूर्ति प्रकृति से, सारे संसार की सृष्टि करते हैं। माया से युक्त विश्वरूप भगवान् नारायण ही, (संसार में) पितामह ब्रह्मा के नाम से जाने जाते हैं ।६७-६८।

तवैतत्कथितं सम्यक् स्रष्टृत्वं परमात्मनः ।
एकोऽहं भगवान्कालो ह्यनादिश्चान्तकृद्विभुः ॥६९

---

१. सर्वपापानामिति पा०। २. सोऽन्तर्यामीशपुरुषः इति पा०। ३. विश्वरूपधरः प्रभुरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमेष्ठी की सृष्टि प्रक्रिया, मैंने सम्यक् रूप से तुम्हे बता दी। अद्वितीय और सर्वव्यापी, मैं ही भगवान् अनादि, कालस्वरूप और सृष्टि का अन्त करने वाला हूँ।६९।

समास्थाय परं भावं प्रोक्तो रुद्रो मनीषिभिः।
ममैव सा परा शक्तिर्देवी विद्येति विश्रुता ॥७०

परम भाव को धारण कर, मैं ही मनीषियों के द्वारा, रुद्र कहलाता हूँ। हे वत्स ! जिसे देवी को मेरे बगल में देखा था, वह मेरी ही परा शक्ति है, जो विद्या नाम से जानी जाती हैं। ७०

दृष्टो हि भवता नूनं विद्यादेहं स्वयं ततः।
एवमेतानि तत्त्वानि प्रधानपुरुषेश्वरः ॥७१

अतः तुमने स्वयं मेरा विद्या-देह देखा है। यह सारा तत्त्व (संसार की—वास्तविक स्थिति) इसी प्रकार है। प्रकृति और जीव का ईश्वर मैं हूँ।७१

विष्णुर्ब्रह्मा च भगवान्रुद्रः काल इति श्रुतिः।
त्रयं मे तदनाद्यन्तं ब्रह्मण्येव व्यवस्थितम् ॥७२

विष्णु स्थितिकर्त्ता, ब्रह्मा सृष्टिकर्ता और रुद्र सारी सृष्टि के संहारक हैं, ऐसा कहा गया है। ये तीनों ही तत्त्व (पदार्थ) परमब्रह्म में व्यवस्थित हैं।७२

तदात्मकं तदव्यक्तं तदक्षरमिति श्रुतिः।
आत्मानन्दपरं[1] तत्त्वं चिन्मात्रं[2] परमम्पदम् ॥७३
आकाशं निष्कलं ब्रह्म तस्मादन्यत्र विद्यते।

इसीलिए ये तीनों पदार्थ (सृष्टि, स्थिति और प्रलय) ब्रह्मात्मक, अव्यक्त और अविनाशी हैं ऐसा श्रुति में कहा गया है। आत्मानन्दमय, तत्त्वस्वरूप, चेतन, परमपद (अर्थात् सभी प्राणियों का परम स्थान), आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त और अंशरहित ब्रह्म से भिन्न, इस संसार में इसका कोई पदार्थ नहीं है।७३½।

एवं विज्ञाय भवता भक्तियोगाश्रयेण तु ॥७४
सम्पूज्यो वन्दनीयोऽहं ततस्तं पश्यसीश्वरम्[3]।
एतावदुक्त्वा भगवाञ्जगामादर्शनं हरः ॥७५

ऐसा जानकर तुम भक्तियोग का आश्रय लेकर, मेरी पूजा और वन्दना करो, तभी तुम ईश्वर को, उनके रूप में देख पाओगे। इतना कहकर भगवान् महादेव अन्तर्धान हो गए।७४-७५

---

१. आत्मानन्दं परमिति, आत्मानन्दः इति पा०। २. चिन्मयमिति पा०।
३. पश्य शाश्वतमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्रैव भक्तियोगेन रुद्रमाराधयन्मुनिः ।
एतत्पवित्रमतुलं तीर्थं ब्रह्मर्षिसेवितम् ।
संसेव्य ब्राह्मणो विद्वान्मुच्यते सर्वपातकैः ॥७६

तत्पश्चात् मङ्कणक मुनि ने, इसी तीर्थ में, भक्तिपूर्वक रुद्र की आराधना की थी। ब्रह्मर्षियों के द्वारा सेवित पवित्र और अतुलनीय इस तीर्थ की आराधना करने से विद्वान् ब्राह्मण, सारे पापों से मुक्त हो जाते हैं।७६

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में पैंतीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३५॥

●

षट्त्रिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

अन्यत्पवित्रं विपुलं तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
रुद्रकोटिरिति ख्यातं रुद्रस्य परमेष्ठिनः ॥१

सूत बोले—परमेष्ठी रुद्र का, तीनों लोकों में विख्यात, अत्यन्त विस्तृत रुद्रकोटि नामक एक और पवित्र तीर्थ है।१

पुरा पुण्यतमे काले देवदर्शनतत्पराः ।
कोटिब्रह्मर्षयो दान्तास्तं देशमगमन्परम् ॥२

प्राचीन समय में पुण्यतम काल में करोड़ों जितेन्द्रिय महर्षि, देवता का दर्शन पाने की कामना से प्रेरित होकर, उस तीर्थ में गये थे।२

अहं द्रक्ष्यामि गिरिशं पूर्वमेव पिनाकिनम् ।
अन्योऽन्यं भक्तियुक्तानां विवादोऽभून्महान्[1] किल ॥३

श्रद्धालु महर्षियों में, 'मैं पहले पिनाकी गिरीश का दर्शन करूँगा' इस प्रकार परस्पर महान् विवाद होने लगा।३

---

१. व्याघातो जायते न हीति, व्याघातो जायते किलेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेषां भक्तिं तदा दृष्ट्वा गिरिशो योगिनां गुरुः ।
कोटिरूपोऽभवद्रुद्रो[1] रुद्रकोटिस्ततोऽभवत्[2] ॥४

तब योगियों के गुरु भगवान् महादेव ने, उनकी भक्ति देखकर, करोड़ो रूप धारण किये थे । इसलिए यह तीर्थ रुद्रकोटि के नाम से जाग जाना जाता हैं ।४

ते स्म सर्वे महादेवं हरं गिरिगुहाशयम् ।
अपश्यन्[3] पार्वतीनाथं हृष्टपुष्टधियोऽभवन् ॥५

पर्वत की गुफा में रहने वाले, पार्वतीपति, महादेव को देखकर वे ऋषिवृन्द अत्यन्त प्रसन्न हुए थे ।५।

अनाद्यन्तं महादेवं पूर्वमेवाहमीश्वरम् ।
दृष्टवानिति भक्त्या ते रुद्रन्यस्तधियोऽभवन् ॥६

जन्म और मृत्यु रहित ईश्वर, महादेव को मैंने ही पहले देखा, यह सोचकर, ब्रह्मर्षिवृन्द, भक्ति में रुद्रमय हो गये ।६।

अथान्तरिक्षे विमलम्पश्यन्ति स्म महत्तरम् ।
ज्योतिस्तत्रैव ते सर्वेऽभिलषन्तः परम्पदम् ॥७

तत्पश्चात् उन्होंने आकाश में एक पवित्र और महान् ज्योति देखी और उसी परम ज्योति में ही, वे सब परम पद में लीन हो गये ।७।

यतः[4] स देवोऽध्युषितस्तीर्थं पुण्यतमं शुभम् ।
दृष्ट्वा रुद्रान्समभ्यर्च्य रुद्रसामीसमाप्नुयुः ॥८

अत्यन्त पवित्र, इस शुभ तीर्थ में भगवान् रुद्र का निवास हैं। इसलिए इस तीर्थ में रुद्र देव का दर्शन और पूजन करने से उनका सामीप्य प्राप्त होता हैं ।८।

अन्यच्च तीर्थप्रवरं नाम्ना मधुवनं शुभम् ।
तत्र गत्वा नियमवानिन्द्रस्यार्द्धासनं लभेत् ॥९

मधुवन नाम का एक और पवित्र तीर्थ है। उस स्थान में जाकर, नियमों का पालन करने से, इन्द्र का आधा आसन प्राप्त होता हैं (अर्थात मृत्यु के बाद इन्द्रलोक में जाकर, इन्द्र के साथ एकासन पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त होता है) ।९

अथान्या पद्मनगरी[5] देशः पुण्यतमः शुभः ।
तत्र गत्वा पितॄन्पूज्य कुलानां तारयेच्छतम् ॥१०

---

१. कोटिशः सुषुवे रुद्रानिति, पा० । २. ततः स्मृतः इति पा० । ३. अपश्यन्तः इति, अमन्यन्त इति पा० । ४. एतत् स्वदेशाध्युषितं तीर्थमिति, एतत्सदेवाध्युषितमिति पा० । ५. पुष्पनगरीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दूसरा, पद्म नगरी (या पुष्प नगरी) नामक शुभ और पुण्यतम तीर्थ है। वहाँ जाकर पितरों की पूजा करने से, अपने वंश के सौ पितरों का उद्धार होता है ।१०

कालञ्जरं महातीर्थं रुद्रलोके महेश्वरः ।
कालंजरं भजन्देवं तत्र भक्तप्रियो हरः ॥११

रुद्रलोक में कालंजर नामक एक महातीर्थ है जहाँ भक्तप्रिय, संहारकर्ता भगवान् महेश्वर कालंजर नामक रुद्र देव का भजन करते हैं ।११

श्वेतो नाम शिवे भक्तो राजर्षिप्रवरः पुरा ।
तदाशीस्तन्नमस्कारैः पूजयामास शूलिनम् ॥१२
संस्थाप्य विधिना रुद्रं भक्तियोगपुरःसरः ।
जजाप रुद्रमनिशं तत्र संन्यस्तमानसः ॥१३

प्राचीनकाल में, श्वेत नाम के एक शिवभक्त राजर्षि श्रेष्ठ ने यहाँ विधिपूर्वक शिवलिङ्ग की स्थापना करके नमस्कारों द्वारा आशीर्वाद प्राप्त किया भक्तियोग पूर्वक शिवमय चित्त से, निरन्तर रुद्र मन्त्र का जप किया ।१२-१३

सितं कार्ष्णाजिनं दीप्तं शूलमादाय भीषणम् ।
नेतुमभ्यागतो देशं स राजा यत्र तिष्ठति ॥१४

तत्पश्चात्, जहाँ श्वेत राजा थे, वहाँ से उन्हें अपने धाम में ले जाने के लिए, दीप्तिमान् शरीर वाले काले मृग का चर्म ओढ़े हुए, हाथ में भयंकर त्रिशूल धारण करके काल वहाँ आये ।१४

वीक्ष्य राजा भयाविष्टः शूलहस्तं समागतम् ।
कालं कालकरं घोरं भीषणं चण्डदीपितम् ॥१५

सारे संसार के प्रलयकर्त्ता, भयंकर घोररूप प्रचण्डदीप्तिवाले, काल को त्रिशूल हाथ में लेकर उपस्थित देखकर, राजा श्वेत भयभीत हो गये ।१५

उभाभ्यामथ हस्ताभ्यां स्पृष्ट्वासौ लिङ्गमुत्तमम् ।
ननाम शिरसा रुद्रं जजाप शतरुद्रियम् ॥१६

तब वे दोनों हाथों से, अत्युत्तम शिवलिङ्ग का स्पर्श किया और सिर झुकाकर रुद्र को नमस्कार करते हुए शतरुद्रिय नामक वैदिक मन्त्र का जप करने लगे ।१६

जपन्तमाह राजानं नमन्तं मनसा भवम् ।
एह्येहीति पुरः स्थित्वा कृतान्तः प्रहसन्निव ॥१७

राजा के द्वारा शतरुद्रिय का जप और बारम्बार शिवलिङ्ग को नमस्कार करता

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ देखकर, यमराज राजा के सामने उपस्थित होकर, व्यंग्यात्मक ढंग से 'आओ, आओ' कहने लगे ।१७।

तमुवाच भयाविष्टो राजा रुद्रपरायणः ।
एकमीशार्च्चनरतं विहायान्यान्निषूदय ॥१८

शिव भक्त राजा भयभीत होकर यमराज से बोले, कि महादेव की पूजा में संलग्न, एक व्यक्ति को छोड़कर, अन्य लोगों का विनाश कीजिए ।१८।

इत्युक्तवन्तं भगवानब्रवीद्भीतमानसम् ।
रुद्रार्च्चनरतो वान्यो मद्वशे को न तिष्ठति ॥१९

भयभीत राजा के द्वारा ऐसा कहे जाने पर, यमराज बोले कि चाहे शिवपूजक हो या दूसरा कोई, कौन मेरे वशीभूत नहीं होता ।१९

एवमुक्त्वा स राजानं कालो लोकप्रकालनः ।
बबन्ध पाशै राजापि जजाप शतरुद्रियम् ॥२०

सारे संसार के प्रलयकर्ता, काल ने यह कहकर राजा को पाश से बांध दिया, परन्तु राजा, तब भी शतरुद्रिय का जप करते रहे ।२०

अथांतरिक्षे विपुलं दीप्यमानं तेजोराशिं भूतभर्त्तुः पुराणम् ।
ज्वालामालासंवृतं व्याप्य विश्वं प्रादुर्भूतं संस्थितं सन्ददर्श ॥२१

तत्पश्चात् राजा श्वेत ने, प्राणियों के स्वामी, महादेव को, दीप्तिमान्, ज्वालाओं की मालाओं से युक्त, अनादि, प्रशस्त तेजराशि को विश्वव्यापक रूप से उत्पन्न होते देखा ।२१।

तन्मध्येऽसौ पुरुषं रुक्मवर्णं देव्या देवं चन्द्रलेखोज्ज्वलाङ्गम् ।
तेजोरूपं पश्यति स्मातिहृष्टो मेने चात्मानमप्यागच्छतीति[1] ॥२२

'राजा ने उस तेज के बीच महा देवी के साथ विद्यमान, सुनहरे वर्ण और चन्द्रलेखा से सुशोभित अंग वाले, तेजोमय पुरुष को देखा। उन्हें देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुए और समझ गये कि मेरे नाथ आ गये हैं ।२२।

आगच्छन्तं नातिदूरेति दृष्ट्वा कालो रुद्रं देवदेव्या महेशम् ।
व्यपेतभीरखिलेशैकनाथं[2] राजर्षिस्तन्नेतुमभ्याजगाम ॥२३

थोड़ी दूर पर महादेवी के साथ महेश्वर को आते देखकर और राजर्षि को

१.मेने चास्मन्नाथ आगच्छतीति इति, मेने चात्मानमथागच्छतीति इति पा० ।
२. अखिलस्यैकनाथमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखिलेश्वर महादेव का शरणागत जानकर भी, काल निर्भय होकर राजा को ले जाने के लिये उद्यत हुआ ।२३।

आलोक्यासौ भगवानुग्रकर्मा देवो रुद्रो भूतभर्त्ता पुराणः ।
एवं भक्तं सत्वरं मां स्मरन्तं देहीतीमं कालरूपं ममेति ॥२४

यह देखकर, प्राणियों के नाथ, पुराणपुरुष, भगवान् उग्रकर्मा देव रुद्र ने, काल से कहा—यह मेरा भक्त है, बड़ी व्याकुलता से मुझे याद कर रहा है। इसलिए इसे मुझे दे दो।२४।

श्रुत्वा वाक्यं गोपते रुद्रभावः कालात्मासौ मन्यमानः स्वभावम् ।
बद्धा भक्तं पुनरेवाथ पाशै रुद्रो रौद्रं चाभिदुद्राव वेगात् ॥२५

वृषभवाहन महादेव का ऐसा वचन सुनकर भी काल ने अपने स्वभाव के अनुसार उग्रभाव से शिवभक्त को पाश से बांध दिया और क्रोधित होकर रुद्र की ओर दौड़े ।२५

प्रेक्षयायान्तं शैलपुत्रीभथेशः सोऽन्वीक्यान्ते विश्वमायाविधिज्ञः ।
सावज्ञं वै वामपादेन कालं त्वेतस्यैनं पश्यतो व्याजघान ॥२६

काल को आते देखकर संसार के प्रपंचों के ज्ञाता, महादेव ने पर्वतपुत्री की की ओर कटाक्ष से देखकर, राजर्षि के सामने काल को तिरस्कार पूर्वक बायें पैर से मारा ।२६

ममार सोऽतिभीषणो महेशपादघातितः ।
विराजते[1] सहोमया महेश्वरः पिनाकधृक् ॥२७

महेश्वर के पदाघात से, अत्यन्त भयंकर काल की मृत्यु हुई और त्रिशूलधारी महेश्वर, उमा के साथ विराजने लगे ।२७

निरीक्ष्य देवमीश्वरं प्रहृष्टमानसो हरम् ।
ननाम वै तमव्ययं स राजपुङ्गवस्तदा ॥२८

तब राजा श्वेत, देव ईश्वर शंकर को देखकर प्रसन्न चित्त से, अविनाशी पुरुष को नमस्कार एवं स्तुति करने लगे ।२८

नमो भवाय हेतवे हराय विश्वशम्भवे ।
नमः शिवाय धीमते नमोऽपवर्गदायिने ॥२९

जगत् के कारण स्वरूप भव को नमस्कार, विश्व मंगल-विधाता हर को नमस्कार ज्ञानी शिव को नमस्कार, मोक्षप्रदाता महादेव को नमस्कार ।२९

---

१. रराज देवतापतिः सहोमयेति, रराजदेवता शिवः सहोमया इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमो नमो नमो नमो महाविभूतये नमः ।
विभागहीनरूपिणे नमो नराधिपाय ते ॥३०

महान् ऐश्वर्यशाली आपको बारम्बार प्रणाम। आपके रूप का विभाग नहीं, आप नराधिपति हैं, आपको नमस्कार।३०

नमोऽस्तु ते गणेश्वर प्रपन्नदुःखशासन ।
अनादिनित्यभूतये वराहशृङ्गधारिणे ॥३१

हे प्राणियों के स्वामी ! हे शरणागत दुःखहारी ! आपको नमस्कार। आप आदि रहित, नित्य, सौभाग्य सम्पन्न और वराह शृङ्गधारी हैं, आपको नमस्कार ।३१

नमो वृषध्वजाय ते कपालमालिने नमः ।
नमो महानगाय ते शिवाय शङ्कराय ते ॥३२

हे वृषध्वज ! आपको नमस्कार। हे कपालमाली ! आपको नमस्कार। हे महानग ! आपको नमस्कार। कल्याणकारी शंकर को नमस्कार ।३२

अथानुगृह्य शंकरः प्रणामतत्परं नृपम् ।
स्वगाणपत्यमव्ययं स्वरूपतामथो ददौ ॥३३

तत्पश्चात्, प्रणाम करने में तत्पर राजा पर महादेव ने कृपा की और अपना अविनाशी गणनायकत्व और सारूप्य (अर्थात् शिव के समान रूप) प्रदान किया ।३३

सहोमया सपार्षदः सराजपुंगवो हरः ।
मुनीशसिद्धवन्दितः क्षणाददृश्यतामगात् ॥३४

तत्पश्चात् उमा, साथियों (गणों और सहचरों) और श्वेत नामक राजा के साथ, महर्षियों और सिद्धों के द्वारा स्तुत्य होते हुए, महेश्वर हर, क्षणभर में अन्तर्धान हो गये ।३४

काले महेशनिहते[1] लोकनाथः पितामहः ।
अयाचत वरं रुद्रं सजीवोऽयं भवत्विति ॥३५

महेश के द्वारा, काल को मार दिये जाने पर, संसार के स्वामी पितामह (ब्रह्मा) ने, 'काल जीवित हो' कहकर, रुद्र से वर याचना की ।३५

नास्ति कश्चिदपीशान दोषलेशो वृषध्वज ।
कृतान्तस्यैव भविता तत्कार्ये विनियोजितः ॥३६

ब्रह्मा बोले—हे ईशान ! वृषध्वज ! यमराज का जरा भी दोष नहीं, क्योंकि उसें आपने ही इस कार्य में लगाया है ।३६

---

१. महेशाभिहते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स देवदेववचनाद्देवदेवेश्वरो हरः ।
तथास्त्वित्याह विश्वात्मा सोऽपि तादृग्विधोऽभवत् ॥३७

देवाधिदेव ब्रह्मा की बातें सुनकर, देवाधिदेवेश्वर विश्वात्मा महेश्वर ने 'तथास्तु' कहा और काल को पुनः जीवन मिल गया ।३७

इत्येतत्परमं तीर्थं कालञ्जरमिति श्रुतम् ।
गत्वाभ्यर्च्य महादेवं गाणपत्यं स विन्दति ॥३८

यह सुना गया है कि यह श्रेष्ठतीर्थ, इसीलिये कालंजर के नाम से प्रसिद्ध हुआ है। वहाँ जाकर महादेव की पूजा करने से गणनायकपद की प्राप्ति होती है ।३८

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे कालवधे षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, कालवध नामक छत्तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३६॥

●

सप्तत्रिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

इदमन्यत्परं स्थानं गुह्याद्गुह्यतरं महत् ।
महादेवस्य देवस्य महालय[1] इति श्रुतम् ॥१

सूत बोले—देव महादेव का, महालय नाम से प्रसिद्ध, एक और गुप्ततम और महत् स्थान है ।१

तत्र देवादिदेवेन रुद्रेण त्रिपुरारिणा ।
शिलातले पदं न्यस्तं नास्तिकानां निदर्शनम् ॥२

इस तीर्थ में, देवाधिदेव त्रिपुरारि रुद्र, ने नास्तिकों के दृष्टान्त स्वरूप, शिलातल पर चरण रखे थे ।२

तत्र पाशुपताः शान्ता भस्मोद्धूलितविग्रहाः ।
उपासते महादेवं वेदाध्ययनतत्पराः ॥३

---

१. आर्षोऽयं प्रयोगः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस स्थान पर भस्म से सुशोभित शरीर वाले, शान्त शिवभक्त, वेदाध्ययन करते हुए, महादेव की उपासना करते हैं ।३

स्नात्वा तत्र पदं शावं दृष्ट्वा भक्तिपुरःसरम् ।
नमस्कृत्वाथ[1] शिरसा रुद्रसामीप्यमाप्नुयात्[2] ॥४

इस तीर्थ में स्नान करके, भक्तिभाव से रुद्र के चरणों का दर्शन करने, और सिर झुकाकर महादेव को नमस्कार करने से रुद्र का सान्निध्य प्राप्त होता है ।४

अन्यच्च देवदेवस्य स्थानं शम्भोर्महात्मनः ।
केदारमिति विख्यातं सिद्धानामालयं शुभम् ॥५

देवाधिदेव महात्मा शम्भु का, केदार नाम से प्रसिद्ध एक और शुभ तीर्थ है। वह सिद्धजनों का प्रसिद्ध निवास स्थान है।५

तत्र स्नात्वा महादेवमभ्यर्च्य वृषकेतनम् ।
पीत्वा चैवोदकं शुद्धं गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥६
श्राद्धं दानादिकं कृत्वा ह्यक्षयं लभते फलम् ।

उस स्थान पर स्नान करके, वृषवाहन महादेव की पूजा करने के पश्चात् अत्यन्त पवित्र जल पीने से, गणों का स्वामित्व प्राप्त होता है । केदारतीर्थ में श्राद्ध और दानादि कर्म करने से अक्षय फल मिलता है ।६-६½।

द्विजातिप्रवरैर्जुष्टं योगिभिर्ज्जंतमानसैः ॥७
तीर्थं प्लक्षावतरणं सर्वपापविनाशनम् ।
तत्राभ्यर्च्य श्रीनिवासं विष्णुलोके महीयते ॥८

एकाग्रचित्त योगी और द्विजातिश्रेठों के द्वारा पूजित सभी पापों के विनाशक, प्लक्षावतरण नाम का एक तीर्थ है । इस तीर्थ में श्रीनिवास विष्णु की पूजा करने से, विष्णुलोक में आदरपूर्वक निवास करने को मिलता है ।७-८।

अन्यच्च मगधारण्यं सर्वलोकगतिप्रदम् ।
अक्षयं विन्दते स्वर्गं तत्र गत्वा द्विजोत्तमः ॥९

समस्त प्राणियों को गति प्रदान करने वाला, मगधारण्य नाम का एक और तीर्थ है । वहाँ जाने से ब्राह्मणश्रेष्ठ को, अक्षय स्वर्ग की प्राप्ति होती है ।९

तीर्थं कनखलं पुण्यं महापातकनाशनम् ।
यत्र देवेन रुद्रेण यज्ञो दक्षस्य नाशितः ॥१०

---

१. नमस्कृत्य इति साधु । २. सारूप्यमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महान् पापों का नाश करने वाला कनखल नामक एक और पवित्र तीर्थ है। यहाँ देवाधिदेव रुद्र ने, दक्ष का यज्ञ भंग किया था।१०

तत्र गंगामुपस्पृश्य शुचिर्भावसमन्वितः।
मुच्यते सर्वपापैस्तु ब्रह्मलोके[1] वसेन्नरः ॥११

उस तीर्थ में पवित्र और श्रद्धायुक्त होकर गंगाजल का आचमन करने से, मनुष्य को सारे पापों से मुक्ति मिल जाती है और ब्रह्मलोक में उसका वास होता है।११

महातीर्थमिति ख्यातं पुण्यं नारायणप्रियम्।
तत्राभ्यर्च्य हृषीकेशं श्वेतद्वीपं स गच्छति ॥१२

भगवान् नारायण को प्रिय, महातीर्थ नाम का एक प्रसिद्ध और पवित्र तीर्थ है। वहाँ हृषीकेश की पूजा करने से विष्णुलोक में वास होता है।१२

अन्यच्च तीर्थप्रवरं नाम्ना श्रीपर्वतं शुभम्।
अत्र प्राणान्परित्यज्य रुद्रस्य दयितो भवेत् ॥१३

श्रीपर्वत नाम का एक और शुभ तीर्थ श्रेष्ठ है। वहाँ प्राण त्यागने वाला व्यक्ति, रुद्र को अत्यन्त प्रिय होता है।१३

तत्र सन्निहितो रुद्रो देव्या सह महेश्वरः।
स्नानपिण्डादिकं तत्र दत्तमक्षय्यमुत्तमम् ॥१४

उसी तीर्थ में महेश्वर, देवी (पार्वती) के साथ विराजमान हैं। अतः वहाँ स्नान दान और श्राद्धादि करने से अक्षय फल मिलता है।१४

गोदावरी नदी पुण्या सर्वपापप्रणाशिनी ॥
तत्र स्नात्वा पितॄन्देवांस्तर्पयित्वा यथाविधि ॥१५
सर्वपापविशुद्धात्मा गोसहस्रफलं लभेत्[2]।

सर्वपापनाशिनी, अत्यन्त पुण्या, गोदावरी नामक नदी है। उस नदी में स्नान करके विधि के अनुसार देवताओं और पितरों का तर्पण करने से, सारे पापों से मुक्ति और हजारों गोदान का फल मिलता है।१५-½।

पवित्रसलिला पुण्या कावेरी विपुला नदी ॥१६
तस्यां स्नात्वोदकं[3] कृत्वा मुच्यते सर्वपातकैः।

पवित्र सलिला, पुण्य और विस्तृत, कावेरी नाम की एक नदी है। उस नदी में स्नान करके तर्पण करने से, सारे पापों से मुक्ति मिल जाती है।१६-½।

---

१. ब्रह्मलोकं लभेन्मृतः इति, ब्रह्मलोकं व्रजेन्नर इति पा०। २. आर्षोयं प्रयोगः। लभेत इति साधु। ३. उदकं कृत्वा-उदकार्यं पितृतर्पणं कृत्वा इत्यर्थः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिरात्रोपोषितेनाथ एकरात्रोषितेन वा ॥१७
द्विजातीनान्तु कथितं तीर्थानामिह सेवनम् ।

शास्त्रों के अनुसार, तीन रात या एक रात उपवास करने से, 'द्विजातियों का तीर्थ सेवन हो जाता है ।१७-½।

यस्य वाङ्मनसी शुद्धे हस्तपादौ च संस्थितौ ॥१८
अलोलुपो ब्रह्मचारी तीर्थानां फलमाप्नुयात् ।

जिस व्यक्ति की वाणी और मन शुद्ध हो हाथ और पैर स्थिर हो (अर्थात् नियन्त्रित हो) तथा जो व्यक्ति लोभहीन और इन्द्रियों को जीत चुका हो, उसे सारे तीर्थों का फल मिल जाता है । १८-½।

स्वामितीर्थं महातीर्थं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥१९
तत्र सन्निहितो नित्यं स्कन्दोऽमरनमस्कृतः ।

तीनों लोकों में प्रसिद्ध, स्वामितीर्थ नाम से विख्यात, एक महातीर्थ है देवताओं के द्वारा वन्द्य स्तुत्य. देव स्कन्द (कार्तिकेय) वहाँ सदैव विद्यमान रहते हैं ।१९½

स्नात्वा कुमारधारायां कृत्वा देवादितर्पणम् ॥२०
आराध्य षण्मुखं देवं स्कन्देन सह मोदते ।

वहाँ कुमारधारा में स्नान करके, देवताओं को तर्पण करने और षडानन, देव कार्तिकेय की पूजा करने से, मृत्यु के बाद उनके साथ, आनन्द भोगने को मिलता है ।२०-½।

नदी त्रैलोक्यविख्याता ताम्रपर्णीति नामतः ॥२१
तत्र स्नात्वा पितॄन्भक्त्या तर्पयित्वा यथाविधि ।
पापकर्तॄनपि पितॄंस्तारयेन्नात्र संशयः ॥२२

तीनों लोकों में विख्यात, ताम्रपर्णी नामक एक नदी है। उसमें स्नान करके, भक्तिभाव से विधानानुसार, पितरों का तर्पण करने से, पापकर्मा पितरों का भी उद्धार किया जा सकता है, इसमें सन्देह वहीं ।२१-२२।

चन्द्रतीर्थमिति ख्यातं कावेर्याः[1] प्रभवेऽक्षयम् ।
तीर्थे तत्र भवेद्दत्तं मृतानां सद्गतिप्रदम्[2] ॥२३

---

१. कावेर्याञ्च भवक्षयमिति पा० । २. स्वर्गतिर्ध्रुवा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रतीर्थ के नाम से विख्यात, एक तीर्थ है, जो कावेरी का उत्पत्ति-स्थान है। वहाँ दी गई वस्तु, अक्षय फल और मृतकों को सद्गति प्रदान करती है।२३

विन्ध्यपादे प्रपश्यन्ति देवदेवं सदाशिवम् ।
भक्ता ये ते न पश्यन्ति यमस्य वदनं द्विजाः ॥२४

हे ब्राह्मणवृन्द ! जो लोग, भक्तिभाव से विन्ध्यमूल में देवाधिदेव सदाशिव का का दर्शन प्राप्त करते हैं। उन्हें फिर यमराज का मुँह नहीं देखना पड़ता।२४

देविकायां वृषो नाम तीर्थं सिद्धनिषेवितम् ।
तत्र स्नात्वोदकं कृत्वा योगसिद्धिञ्च विन्दति ॥२५

देविका नदी में, सिद्धों के द्वारा पूजित, वृष नामक एक तीर्थ है। उस तीर्थ में स्नान करके, तर्पण करने से, पितरों की तृप्ति तो होती ही है, साथ में योग-सिद्धि भी मिलती है।२५

दशाश्वमेधिकं तीर्थं सर्वपापविनाशकम् ।
दशानामश्वमेधानां तत्राप्नोति फलं नरः ॥२६

सर्वपापनाशक, दशाश्वमेधिक नाम का एक तीर्थ है। इस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य को दस अश्वमेध यज्ञों का फल मिलता है।२६

पुण्डरीकं तथा तीर्थं ब्राह्मणैरुपशोभितम् ।
तत्राभिगम्य युक्तात्मा पुण्डरीकफलं लभेत् ॥२७

ब्राह्मणों के द्वारा सुशोभित, पुण्डरीक नाम का एक तीर्थ है। एकाग्रचित्त होकर, उस तीर्थ में जाने से, पौण्डरीक यज्ञ का फल मिलता है।२७

तीर्थेभ्यः परमं तीर्थं ब्रह्मतीर्थमिति स्मृतम् ।
ब्रह्माणमर्च्चयित्वात्र ब्रह्मलोके महीयते ॥२८

तीर्थसमूहों में श्रेष्ठ, ब्रह्मतीर्थ नाम से प्रसिद्ध एक तीर्थ है। यहाँ ब्रह्मा की पूजा करने से, ब्रह्मलोक में, सम्मान सहित वास होता है।२८

सरस्वत्या विनशनं प्लक्षप्रस्रवणं शुभम् ।
व्यासतीर्थमिति ख्यातं मैनाकश्च नगोत्तमः ॥२९
यमुनाप्रभवश्चैव सर्वपापविनाशनः ।

सरस्वती नदी का अन्तर्धान क्षेत्र, रमणीय प्लक्षप्रस्रवण, व्यासतीर्थ, पर्वतश्रेष्ठ मैनाक और यमुनाप्रभव, ये सारे तीर्थ सर्वपापनाशक हैं।२९

पितॄणां दुहिता देवी गन्धकालीति विश्रुता ॥३०
तस्यां स्नात्वा दिवं याति मृतो जातिस्मरो भवेत् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पितरों की पुत्री, देवीस्वरूपा गन्धकाली के नाम से प्रसिद्ध एक नदी है। उस नदी में स्थान करने से स्वर्ग मिलता है और इस नदी में मरने वाले को, मृत्यु के बाद भी, पूर्व जन्म की बातें याद रहती है ।३०-½

कुबेरतुङ्गं पापघ्नं सिद्धचारणसेवितम् ॥३१
प्राणांस्तत्र परित्यज्य कुबेरानुचरो भवेत् ।

सिद्धों और चरणों द्वार पूजित, कुबेरतुङ्ग नाम का एक पापनाशक तीर्थ है,। यहाँ प्राण त्यागने वाला कुवेर का अनुचर बनता है ।३१-½

उमातुङ्गमिति[1] ख्यातं यत्र सा रुद्रवल्लभा ॥३२
तत्राभ्यर्च्य महादेवीं गोसहस्रफलं लभेत् ।

उमातुङ्ग नामक एक तीर्थ है, जहाँ रुद्रप्रिया उमादेवी सदैव विराजमान रहती हैं। वहा महादेवी की पूजा करने से हजारों गोदान का फल मिलता है ।३२ ½

भृगुतुङ्गे तपस्तप्तं श्राद्धं दानं तथा कृतम् ॥३३
कुलान्युभयतः सप्त पुनातीति मतिर्मम ।

भृगुतुंग तीर्थ में तपस्या, श्राद्ध और दान करने से, पितृ और मातृकुलों की सातों पीढ़ियाँ पवित्र होती हैं, यह मेरी धारणा है ।३३½

काश्यपस्य महातीर्थं कालसर्पिरिति श्रुतम् ॥३४
तत्र श्राद्धानि देयानि नित्यं पापक्षयेच्छया ।

कालसर्पि नाम से प्रसिद्ध, काश्यप का एक महान् तीर्थ है। पाप नाश हेतु, इस तीर्थ में प्रतिदिन श्राद्ध और दान करना चाहिए ।३४-½

दशार्णायां तथा दानं श्राद्धं होमं तपो जपः ॥३५
अक्षयञ्चाव्ययञ्चैव कृतं[2] भवति सर्वदा ।

दशार्ण तीर्थ में दान, श्राद्ध, हवन तप और जप करने से सदैव अक्षय और अविकारी फल की प्राप्ति होती है ।३५-½

तीर्थं द्विजातिभिर्जुष्टं नाम्ना वै कुरुजांगलम् ॥३६
दत्त्वा तु दानं विधिवद्ब्रह्मलोके महीयते ।

द्विजातियों के द्वारा सेवित, कुरुजांगल नामक तीर्थ में, विधानानुसार दान करने से ब्रह्मलोक में जाकर सम्मान मिलता है ।३६-½

---

१. उत्तमाङ्गमिति पा० । २. दत्तं भवति नान्यथा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैतरण्यां महातीर्थे स्वर्णवेद्यां[1] तथैव च ॥३७
धर्मपृष्ठे च शिरसि ब्रह्मणः परमे शुभे ।
भरतस्याश्रमे पुण्ये पुण्ये[2] गृध्रवने शुभे ॥३८
महाह्रदे च कौशिक्यां दत्तं भवति चाक्षयम् ।

वैतरणी महातीर्थ स्वर्णवेदी, धर्मपृष्ठ ब्रह्मा के अत्यन्त मनोहर सरोवर में, पुण्योत्पादक भरताश्रम, पवित्र मनोहर गृध्रवन, महाह्रद और कौशिकी नदी में दान करने से अक्षय फल मिलता है। ३७-३८

मुण्डपृष्ठे पदं न्यस्तं महादेवेन धीमता ॥३९
हिताय सर्वभूतानां नास्तिकानां निदर्शनम् ।

सभी प्राणियों के लिए, ज्ञानी महादेव ने मुण्ड पृष्ठ तीर्थ में नास्तिकों के दृष्टान्त स्वरूप, चरण रखे थे ।३९-½

अल्पेनापि तु कालेन नरो धर्मपरायणः ॥४०
पाप्मानमुत्सृजत्याशु जीर्णां त्वचमिवोरगः ।

यहाँ धार्मिक मनुष्य, थोड़े ही समय में पापों को ऐसे त्याग देता है, जैसे साँप अपनी केंचुली त्यागता है ।४०-½

नाम्ना कनकनन्देति तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ॥४१
उदीच्यां ब्रह्मपृष्ठस्य[3] ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ।
तत्र स्नात्वा दिव्यं यान्ति सशरीरा द्विजातयः ॥४२

ब्रह्मपृष्ठ के उत्तर की ओर ब्रह्मर्षियों द्वारा पूजित, तीनों लोकों में विख्यात कनकनन्दा नाम का तीर्थ है। वहाँ स्नान करने से द्विजातिवृन्द, सशरीर स्वर्ग जाते हैं ।४१-४२

दत्तं वापि सदा श्राद्धमक्षयं समुदाहृतम् ।
ऋणैस्त्रिभिर्नरः स्नात्वा मुच्यते क्षीणकल्मषः[4] ॥४३

वहाँ नित्य दान या श्राद्ध करने से अक्षयफल मिलता है, यह मुनियों का कहना हैं और यदि मनुष्य वहाँ स्नान करे, तो वह तीनों ऋणों (देव-पितृ-मनुष्य ऋण) और महान्पाप से मुक्त हो जाता हैं ।४३

---

१. स्वर्णवत्यामिति, स्वर्णनद्यामिति पा०। २. क्षेत्रे श्राद्धवटे इति, पुण्ये श्राद्धवटे इति पा०। ३. मुञ्जपृष्ठस्येति, मुण्डपृष्ठस्येति पा०। ४. घोरकल्मषः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसे सरसि स्नात्वा शक्रस्यार्द्धासनं लभेत् ।
उत्तरं मानसं गत्वा सिद्धिं प्राप्नोत्यनुत्तमाम् ॥४४

मानस सरोवर में नहाने से, इन्द्र का आधा आसन मिलता है और उत्तर मानस सरोवर में जाने से, सर्वोत्कृष्ट सिद्धि प्राप्त होती हैं ।४४

तस्मान्निवर्त्तयेच्छ्राद्धं यथाशक्ति यथाबलम् ।
स कामान् लभते दिव्यान्मोक्षोपायञ्च विन्दति ॥४५

वहाँ जो व्यक्ति, अपने सामर्थ्य और बल के अनुसार श्राद्ध करता हैं वह दिव्य भोगों को प्राप्त करता है और मोक्ष के उपायों को जान जाता है ।४५

पर्वतो हिमवान्नाम नानाधातुविभूषितः ।
योजनानां सहस्राणि साशीतिस्त्वायतो गिरिः ॥४६
सिद्धचारणसंकीर्णा देर्षिगणसेवितः ।
तत्र पुष्करिणी रम्या सुषुम्ना नाम नामतः ॥४७

दस हजार योजन तक फैले, विभिन्न प्रकार के धातुओं से सुसज्जित सिद्धों और चरणों द्वारा व्याप्त देर्षियों द्वारा सेवित हिमवान् नाम का एक पर्वत है। उस पर्वत के बीच सुषुम्ना नामक एक अत्यन्त रमणीय सरोवर है। ४६-४७

तत्र[1] गत्वा द्विजो विद्वान्ब्रह्महत्यां विमुञ्चति ।
श्राद्धं भवति चाक्षय्यं तत्र दत्तं महोदयम् ॥४८ ॥
तारयेच्च पितॄन्सम्यग्दश पूर्वान्दशापरान् ।

विद्वान् ब्राह्मण वहाँ जाने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त हो सकता है। श्राद्ध करने से अक्षय फल और दान करने से प्रभूत समृद्धि प्राप्त होती है। वह पहले और बाद की दसों पीढ़ियों का भलीभाँति उद्धार करता है ।४८-½

सर्वत्र हिमवान् पुण्यो गंगा पुण्या समंततः ॥४९
नद्यः समुद्रगाः पुण्याः समुद्रश्च विशेषतः ।

हिमवान् पर्वत और गंगा सर्वत्र पवित्र है। समुद्र में समाने वाली सभी नदियाँ पुण्य हैं और समुद्र विशेषरूप से पवित्र होते हैं ।४९-½

बदर्याश्रममासाद्य मुच्यते सर्वकिल्विषात् ॥५०
तत्र नारायणो देवो नरेणास्ते सनातनः ।

बदरिकाश्रम में जाने से, मनुष्य सारे पापों से मुक्त होता है। वहाँ सनातन, देव नारायण ऋषि, नर ऋषि के साथ निवास करते हैं ।५०-½

---

१. अनुत्तमाम्-नास्ति उत्तमा यस्याः सः अनुत्तमा ताम् सर्वोत्कृष्टामित्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्षयं तत्र दानं स्याच्छ्राद्धदानादिकञ्च[1] यत् ॥५१
महादेवप्रियं तीर्थं पावनं तद्विशेषतः ।
तारयेच्च पितॄन्सर्वान्दत्त्वा श्राद्धं समाहितः ॥५२

अत्यन्त पवित्रकर्ता यह तीर्थ महादेव को प्रिय है । वहाँ दान और श्राद्ध करने से अक्षय फल मिलता है और एकाग्रचित्त से श्राद्ध करने से, सारे पितर तर जाते है ।५१-५२

देवदारुवनं पुण्यं सिद्धगन्धर्वसेवितम् ।
महता देवदेवेन तत्र दत्तं महेश्वरम् ॥५३
मोहयित्वा मुनीन्सर्वान्समस्तैः सम्प्रपूजितः ।
प्रसन्नो भगवानीशो मुनीन्द्रान् प्राह भावितान् ॥५४

सिद्धों और गन्धर्वों के द्वारा सेवित, देवदारुवन नामक अत्यन्त पवित्र तीर्थ है । यहां दान करने से महान फल की प्राप्ति होती है । यही देवाधिदेव महेश्वर ने, यहां रहने वाले सभी मुनियों को मोहित कर दिया था बाद में सभी मुनिश्रेष्ठों के द्वारा पूजा किए जाने पर भगवान् महादेव ने प्रसन्न होकर उनसे कहा ।५३-५४

इहाश्रमवरे रम्ये निवसिष्यथ[2] सर्वदा ।
मद्भावनासमायुक्तास्ततः सिद्धिमवाप्स्यथ ॥५५

सदैव मेरा ध्यान करते हुए आपलोग, इस रमणीय श्रेष्ठ आश्रम में निवास करेंगे । तभी सिद्धि प्राप्त कर सकेंगे ।५५

यत्र मामर्चयन्तीह लोके धर्मपरायणाः ।
तेषां ददामि परमं गाणपत्यं हि शाश्वतम् ॥५६

इस लोक में, जो धार्मिक व्यक्ति, इस तीर्थ में मेरी पूजा करेंगे, उन्हें मैं अविनासी परम गणनायक पद प्रदान करूंगा ।५६

अत्र नित्यं वसिष्यामि सह नारायणेन तु ।
प्राणानिह नरस्त्यक्त्वा न भूयो जन्म चाप्नुयात्[3] ॥५७

यहां मैं नारायण के साथ, सदा निवास करूंगा । मनुष्य यहां प्राण त्यागने से, पुनः जन्म नहीं लेता है ।५७

संस्मरन्ति च ये तीर्थं देशान्तरगता जनाः ।
तेषाञ्च सर्वपापानि नाशयामि द्विजोत्तमाः ॥५८

---

१. जप्ता वापि तथाविधमिति पा० । २. निवत्स्यथेति साधु । ३. विन्दतीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे ब्राह्मणश्रेष्ठो ! जो लोग, दूसरी जगह रहकर भी, इस तीर्थ का स्मरण करेंगे, मैं उन लोगों के भी सारे पाप नष्ट कर दूंगा ।५८

श्राद्धं दानं तपो होमः पिण्डनिर्वपणं तथा ।
ध्यानं जपश्च नियमः सर्वमत्राक्षयं कृतम् ॥५९

इस जगह पर किए गए श्राद्ध, दान, तप, हवन, पिण्डदान, ध्यान जप और व्रतादि अक्षय फल देते हैं ।५९

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन द्रष्टव्यं हि द्विजातिभिः ।
देवदारुवनं पुण्यं महादेवनिषेवितम् ॥६०

इसलिए सभी ब्राह्मणों को महादेव के द्वारा सेवित पवित्र देवदारुवन नामक तीर्थ का यत्नपूर्वक दर्शन करना चाहिए ।६०

यत्रेश्वरो महादेवो विष्णुर्वा पुरुषोत्तमः ।
तत्र सन्निहिता गंगा तीर्थान्यायतनानि च ॥६१

जिस स्थान पर ईश्वर महादेव और पुरुषोत्तम विष्णु का वास हो, वहां गंगा तीर्थ और मन्दिर सदैव विद्यमान रहते हैं ।६१

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे तीर्थवर्णनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

श्रीकूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, तीर्थ वर्णन नामक सैंतीसवां अध्याय समाप्त ॥३७

●

अष्टत्रिंशोऽध्यायः

देवदारुवनप्रवेशः

ऋषय ऊचुः

कथं दारुवनम्प्राप्तो[1] भगवान्गोवृषध्वजः ।
मोहयामास विप्रेन्द्रान्सूत तद्वक्तुमर्हसि[2] ॥

---

१. दारुवने देवः इति पा० । २. वक्तुमिहार्हसीति, नस्तं वक्तुमिहार्हसीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषिवृन्द बोले—हे सूत ! भगवान् वृषध्वज (महादेव) ने, किस कारणवश, देवदारुवन में प्रवेश करके, ब्राह्मणों को मोहित किया था, यह बताइए ।१

सूत उवाच

पुरा दारुवने रम्ये देवसिद्धनिषेविते ।
स पुत्रदारतनयास्तपश्चेरुः सहस्रशः ॥२

सूत बोले—प्राचीन काल में, देवता और सिद्धों के द्वारा सेवित, रमणीय देवदारुवन में, हजारों की संख्या में मुनियों ने, अपने-पुत्र और पत्नी के साथ तपस्या की थी ।२

प्रवृत्तं विविधं कर्म प्रकुर्वाणा यथाविधि ।
यजन्ति विविधैर्यज्ञैस्तपन्ति च महर्षयः ॥३

उन महर्षियों ने, विभिन्न प्रकार के काम्य कर्मों को करते हुए, तरह-तरह के यज्ञ और तप किये थे ।३

तेषां प्रवृत्तिविन्यस्तचेतसामथ शूलभृत् ।
व्याख्यापयन्सदा[1] दोषं ययौ दारुवनं हरः ॥४

तत्पश्चात्, कामनासक्त चित्त वाले मुनियों की, त्रुटियों को बताने के लिए, भगवान् महादेव, देवदारु वन में गये ।४

कृत्वा विश्वगुरुं विष्णुं पार्श्वे देवो महेश्वरः ।
ययौ निवृत्तिविज्ञानस्थापनार्थञ्च शङ्करः ॥५

देव महेश्वर शंकर ने, विश्व गुरु भगवान् विष्णु को अपने साथ लेकर, निष्काम कर्म की श्रेष्ठता को बताने के लिए, वहाँ गये ।५

आस्थाय विपुलञ्चैष जनं विंशतिवत्सरम् ।
लीलालसो महाबाहुः पीनांगश्चारुलोचनः ॥६

चामीकरवपुः श्रीमान्पूर्णचन्द्रनिभाननः ।
मत्तमातंगगमनो दिग्वासा जगदीश्वरः ॥७

जातरूपमयीं[2] मालां सर्वरत्नैरलंकृताम् ।
दधानो भगवानीशः समागच्छति सस्मितः ॥८

तब भाव युक्त, आजानबाहु, स्थूल शरीर, सुन्दर नयन, स्वर्णभूषणधारी, श्रीयुक्त, पूर्णिमा के चाँद जैसा मुखमण्डल, विशाल हाथी के समान गति, दिगम्बर, विविधरत्न-

---

१. ख्यापयन् स महादेव इति, ख्यातवान् सुमहद्दोषमिति पा० । आस्थाय विपुलं वेषमूनविंशतिवत्सर-मिति, वेषं गूढ़मिति पा० । २, कुबेरशयमयमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जटित सोने की माला पहनकर, मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए, बीस वर्षीय युवक का रूप धरकर, भगवान् महादेव वहाँ गये।६-८।

योऽनन्तः पुरुषो योनिर्लोकानामव्ययो हरिः।
स्त्रीवेषं विष्णुरास्थाय सोऽनुगच्छति शूलिनम् ॥९

अनन्त और अविनाशी पुरुष हरि, जो सम्पूर्ण सृष्टि के उत्पत्तिस्वरूप हैं, वही विष्णु, स्त्री का रूप धरकर, महादेव के पीछे-पीछे चलने लगे।९

सम्पूर्णचन्द्रवदनं पीनोन्नतपयोधरम्।
शुचिस्मितं सुप्रसन्नं रणन्नूपुरकद्वयम् ॥१०
सुपीतवसनं दिव्यं श्यामलं चारुलोचनम्।
उदारहंसगमनं[1] विलासि सुमनोहरम् ॥११

पूर्णचन्द्र के समान मुखमण्डल, स्थूल और उन्नत स्तनयुगल, पवित्र मुस्कानवाली, सुप्रसन्न, पीले रंग का वस्त्र धारण किये हुए, अलौकिक, श्यामल, सुन्दर नेत्रों वाली, हावभाव युक्त, उस सुन्दर स्त्री की चाल राजहंस के समान थी और चलने से उसके पैरों के नूपुर बज रहे थे।१०-११

एवं स भगवानीशो देवदारुवनं हरः।
चचार हरिणा[2] सार्द्धं मायया मोहयञ्जगत् ॥१२

भगवान् महादेव ने, अपनी माया से, संसार को मोहित करके, स्त्रीरूपधारी हरि के साथ देवदारुवन में विचरने लगे।१२

दृष्ट्वा चरन्तं विश्वेशं तत्र तत्र पिनाकिनम्।
मायया मोहिता[3] नार्यो देवदेवं समन्वयुः ॥१३

संसार के स्वामी, पिनाकी को इधर-उधर घूमते हुए देखकर, वहाँ की स्त्रियाँ माया से मोहित होकर, देवादिदेव के पीछे-पीछे चल पड़ीं।१३

विस्रस्ताभरणाः सर्वास्त्यक्त्वा लज्जां पतिव्रताः।
सहैव तेन कामार्त्ता विलासिन्यश्चरन्ति हि ॥१४

पतिव्रता कहलाने वाली, वे स्त्रियाँ महादेव के रूप को देखकर, कामातुर हो उठीं और अस्त व्यस्त वस्त्रों तथा आभूषणों के साथ, विलासिनी (वेश्या) स्त्री की भाँति, लज्जा का त्याग कर, शिव के साथ घूमने लगीं।१४

ऋषीणां पुत्रका ये स्युर्युवानो जितमानसाः।
अन्वागमन्हृषीकेशं[4] सर्वे कामप्रपीडिताः ॥१५

---

१. दधार हंसचलनमिति पा.। २. हरिणाक्षीणामिति षा०। ३. मोहितात्मानः इति पा०। ४. अन्वगच्छन् हृषीकेशमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषियों के तरुण पुत्र जितेन्द्रिय थे, परन्तु वे भी उस क्षण कामातुर होकर, स्त्रीरूपधारी भगवान् विष्णु के पीछे चल पड़े।१५

गायन्ति[1] नृत्यन्ति विलासयुक्ता नारीगणा नायकमेकमीशम्।
दृष्ट्वा सपत्नीकमतीवकान्तमिष्टं तथालिङ्गितमाचरन्ति ॥१६

विलासी स्त्रियाँ, सपत्नीक महादेव को अत्यन्त सुन्दर और अद्वितीय नायक के रूप में देखकर नाचने और गाने लगीं तथा समय-समय पर अपनी इच्छा से आलिंगन भी करने लगीं।१६

ते सन्निपत्य[2] स्मितमाचरन्ति गायन्ति गीतानि मुनीशपुत्राः।
आलोक्य पद्मापतिमादिदेवं शुभांगमन्ये विचरन्ति तेन ॥१७

मुनिकुमार, आदिदेव स्त्रीरूपधारी शुभांगी लक्ष्मीपति के पास आकर, उन्हें देखकर मन्द-मन्द मुस्कुराने और नाचने-गाने लगे। इस प्रकार वे लोग उनके साथ भ्रमण करने लगे।१७

आशामथैकामपि वासुदेवो मायी मुरारिर्मनसि प्रविष्टः।
करोति[3] भोगान्मनसि प्रवृत्तिं मायानुभूयन्त इतीव सम्यक् ॥१८

तत्पश्चात् मायारूपी मुरारि वासुदेव, स्त्रीसमुदाय और मुनिकुमारों के मन में प्रवेश करके, उनके मानसिक प्रवृत्तियों का उपभोग करने लगे। माया में आवृत वे लोग इस उपभोग को वास्तविक समझने लगे।१८

विभाति विश्वामरविश्वनाथः[4] समाधवस्त्रीगणसन्निविष्टः।
अशेषशक्त्या[5] समयं निविष्टो यथैकशक्त्या सह देवदेवः ॥१९

अशेष शक्तिसमन्विता, शक्तिप्रधाना, पार्वती के साथ विराजमान होते हुए, महादेव जिस प्रकार सुशोभित होते हैं, उन ऋषि पत्नियों और स्त्रीरूपधारी माधव के साथ स्थित होकर, अमर गणप्रभुविश्वनाथ, उसी प्रकार सुशोभित हुए थे।१९

करोति नित्यं[6] परमं प्रधानं तथा विरूढः पुनरेव भूयः।
ययौ समारुह्य हरिः स्वभावं तमीदृशं[7] नाम तमादिदेवम् ॥२०

उस समय पापद्रष्टा, महादेव (स्त्रियों के) और आदिदेव नारायण (युवकों के) स्वभाव पर सवार होकर, उन्हे संचालित करने लगे।२०

---

१. यं गोपतिं नित्यविलासबाह्या इति पा०। २. वदन्ति मोहस्मितमाचरन्ति पार्श्वे निपेतुः स्मितमाचरन्तीति पा०। ३. करोति भोगान्मनसिप्रविष्टः, करोति भावं मनसापि वृत्तिमिति पा०। ४. भूतभर्त्ता इति, विश्वात्मकभूतभर्त्ता इति पा०। ५. अशेषपंक्त्यासनसन्निविष्ट इति पा०। ६. नृत्यं परमप्रभावमिति पा०। ७. तदीशवृत्तामृतमादिदेवः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्ट्वा नारीकुलं रुद्रं पुत्रानपि च केशवम् ।
मोहयन्तं मुनिश्रेष्ठाः कोपं सन्दधिरे भृशम् ॥२१

रुद्र नारियों को और केशव पुत्रों को मोहित कर रहे हैं, यह देखकर मुनिवृन्द अत्यन्त क्रोधित हुए ।२१

अतीवपरुषं[1] वाक्यं प्रोचुर्देवं कपर्द्दिनम् ।
शेपुश्च विविधैर्वाक्यैर्मायया[2] तस्य मोहिताः ॥२२

ऋषिवृन्द महादेव की माया से भ्रमित होकर देवाधिदेव भगवान् शंकर से, अत्यन्त कठोर वचन बोले और तरह-तरह का अभिशाप देने लगे ।२२

तपांसि तेषां सर्वेषां प्रत्याहन्यन्त शंकरे ।
यथादित्यप्रतीकाशे तारका नभसि स्थिताः ॥२३

जैसे सूर्य की आभा से प्रकाशमान, आकाश में ताराओं का प्रकाश लुप्त हो जाता है, उसी प्रकार मुनियों का तपोबल भी, महादेव के पास कुण्ठित हो गया था ।२३

तं भर्त्स्य[3] तपसा विप्राः समेत्य वृषभध्वजम् ।
को भवानिति देवेशं पृच्छन्ति स्म विमोहिताः ॥२४

माया के कारण मोहाविष्ट, तपस्वी ब्राह्मणों ने, शिव की निन्दा करने के बाद, उनके पास जाकर, आप कौन हैं ? यह पूछा ।२४

सोऽब्रवीद्भगवानीशस्तपश्चर्तुमिहागतः ।
इदानीं भार्यया देशं भवद्भिरिह सुव्रताः ॥२५

भगवान् महेश्वर बोले, हे सुव्रतीवृन्द ! मैं आपलोगों के साथ तपस्या करने के लिए, पत्नी के साथ इस देश में आया हूँ ।२५

तस्य ते वाक्यमाकर्ण्य भृग्वाद्या मुनिपुङ्गवाः ।
ऊचुर्गृहीत्वा वसनं त्यक्त्वा भार्यां तपश्चर ॥२६

महादेव की बातें सुनकर, भृगु आदि महर्षिवृन्द बोले, वस्त्र पहनकर और पत्नी का त्याग करके तपस्या करो ।२६

अथोवाच विहस्येशः पिनाकी नीललोहितः ।
सम्प्रेक्ष्य जगतां योनिं पार्श्वस्थञ्च जनार्दनम् ॥२७

---

१. अतीवासदृशं वाक्यं प्रोचुर्देवकपर्द्दिनमिति पा० । २. पापैर्विविधैरिति शापैर्विविधरिति पा० । ३. भर्त्स्येति आर्षः प्रयोगः । भर्त्सयित्वेति साधु ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथं भवद्भिरुदितं स्वभार्यापोषणोत्सुकैः ।
त्यक्तव्या मम भार्येति धर्मज्ञैः शान्तमानसैः ॥२८

तत्पश्चात् भगवान् पिनाकि ने थोड़ा हंसकर, बगल में स्थित, संसार की उत्पत्ति के कारण, भगवान् जनार्दन की ओर देखकर कहा, आप सभी लोग अपनी-अपनी पत्नी का भरण पोषण करने के लिए नित्य तत्पर हैं। फिर धर्म का ज्ञान रखने वाले और शान्तमन होकर भी आप लोगों ने मुझे पत्नी का त्याग करने को क्यों कहा ? २७-२८।

ऋषय ऊचुः

व्यभिचाररता भार्याः सन्त्याज्याः पतिनेरिताः ।
अस्माभिर्भक्ताः[1] सुभगा नेदृशास्त्यागमर्हति ॥२९

ऋषियों ने कहा, शास्त्रों में व्यभिचारिणी स्त्री का त्याग करने को कहा गया है। तुम्हारी यह सुहागिन पत्नी व्यभिचारिणी है, इसलिए इसका त्याग करना ही उचित है ।२९

महादेव उवाच

न कदाचिदियं विप्रा मनसाप्यन्यमिच्छति ।
नाहमेनामपि तथा विमुञ्चामि कदाचन ॥३०

महादेव बोले—हे ब्राह्मणों ! मेरी पत्नी ने कभी, मन में भी किसी दूसरे की कामना नहीं की। अतः मै इसे कभी नहीं छोड़ूँगा।३०

ऋषय ऊचुः

दृष्ट्वा व्यभिचरन्तीह ह्यस्माभिः पुरुषाधम ।
उक्तं ह्यसत्यं भवता गम्यतां क्षिप्रमेव हि ॥३१

ऋषिवृन्द बोले—हे नीच पुरुष ! हम लोग इसे व्यभिचारिणी देख रहे हैं। तुम्हारी बातें झूठी हैं। अतः तुम शीघ्र ही यहाँ से चले जाओ।३१

एवमुक्तो महादेवः सत्यमेव मयेरितम् ।
भवतां[2] प्रतिभा ह्येषा त्यक्त्वासौ विचचार ह ॥३२

ऋषियों के ऐसा कहने पर, "मैने सच कहा है। आप लोगों को ही, यह व्यभिचारिणी लगती होगी।" महादेव ने ऐसा कहा और विचरण करने लगे ।३२

---

१. नास्माभिरेषा सुभगा तादृशी त्यागमर्हतीति पा०। २. भवतां प्रतिभाषेणात्युक्तोऽसौ विचचार ह इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोऽगच्छद्धरिणा साद्धं मुनीन्द्रस्य महात्मनः ।
वसिष्ठस्याश्रमं पुण्यं भिक्षार्थी परमेश्वरः ॥३३

तत्पश्चात् परमेश्वर हरि के साथ भिक्षुक बनकर मुनिश्रेष्ठ, महात्मा वशिष्ठ के पवित्र आश्रम में गये ।३३

दृष्ट्वा समागतं देवं भिक्षमाणमरुन्धती ।
वसिष्ठस्य प्रिया भक्त्या प्रत्युद्गम्य ननाम तम् ॥३४

देवाधिदेव भिखारी बनकर आ रहे हैं यह देखकर वसिष्ठ की पत्नी अरुन्धती, उठकर गयीं और भक्तिपूर्वक उन्हें नमस्कार किया ।३४

प्रक्षाल्य पादौ विमलं दत्त्वा चासनमुत्तमम् ।
सम्प्रेक्ष्य शिथिलं गात्रमभिघातहतं द्विजैः ।
सन्धयामास भैषज्यैर्विषण्णवदना सती ॥३५
चकार महतीं पूजां प्रार्थयामास भार्यया ।

तत्पश्चात् पैर धुलाकर, उत्तम और स्वच्छ आसन देखकर, ब्राह्मणों की लाठी के आघात से, हड्डियों को टूटा हुआ देखकर, दुःखी मन से, विभिन्न प्रकार की औषधियों से, उन्हे जोड़ दिया और पत्नी के साथ योगी की महती पूजा की ।३५½

को भवान्कुत आयातः किमाचारो भवानिति ।
उच्यतामाह भगवान्सिद्धानां प्रवरो ह्यहम् ॥३६

यदेतन्मण्डलं शुभ्रं भाति ब्रह्ममयं सदा ।
एषैव देवता मह्यं धारयामि सदैव तु ॥३७

बाद में उन्होंने पूछा—आप कौन हैं, कहाँ से आये हैं ? आपका आचार क्या है ? यह सब बताइए । भगवान् बोले—मै श्रेष्ठ सिद्ध हूँ । यह ब्रह्ममय विशुद्ध मण्डल, जो सदैव प्रकाशित है, वही मेरे देवता हैं । मैं सदा उनका ध्यान करता हूँ ।३६-३७ ।

इत्युक्त्वा प्रययौ श्रीमाननुगृह्य पतिव्रताम् ।
ताडयांचक्रिरे दण्डैर्लोष्टिभिर्मुष्टिभिर्द्विजाः ॥३८

यह कहकर श्रीयुक्त महादेव, अरुन्धती से प्रसन्न होकर, वहाँ से चल पड़े । ब्राह्मण भी, फिर से लाठियों, पत्थरों और मुक्कों से, उन्हे मारने लगे ।३८

दृष्ट्वा चरन्तं गिरिशं नग्नं विकृतिलक्षणम् ।
प्रोचुरेतद्भवांल्लिंगमुत्पाटय[1] सुदुर्मतेः ॥३९

---

१. प्रोचुरेतद्भवांल्लिमुन्नत्पाटयतु दुर्मतिरिति, सुदुर्मते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् शिव को नग्न होकर और विकृतलक्षणों के साथ घूमते हुए देखकर, ऋषियों ने कहा—इस दुष्टबुद्धिवाले का लिङ्ग उखाड़ कर फेंक दो ।३९

तानब्रवीन्महायोगी करिष्यामीति शंकरः ।
युष्माकं मामके लिंगे यदि द्वेषोऽभिजायते ॥४०

महायोगी शंकर, उनसे बोले—यदि मेरे लिङ्ग से आपलोगों को वैर हो, तो मैं उखाड़ फेकूंगा ।४०

उक्त्वा तूत्पाटयामास भगवान्भगनेत्रहा ।
नापश्यंस्तत्क्षणादीशं केशवं लिंगमेव च ॥४१

यह कहकर भगनेत्रहा भगवान् ने अपना लिङ्ग उखाड़ दिया । परन्तु क्षणभर में उन्हे महादेव, केशव और लिङ्ग कुछ भी दिखाई नहीं दिया ।४१

तदोत्पाता बभूवुर्हि लोकानां भयशंसिनः ।
न राजते सहस्रांशुश्चचाल पृथिवी पुनः ।
निष्प्रभाश्च ग्रहाः सर्वे चुक्षुभे च महोदधिः ॥४२

उसके बाद, सारी सृष्टि को भयभीत करने वाले उपद्रव प्रारम्भ हो गये । हजारों किरणों वाले सूर्य का तेज समाप्त हो गया । पृथिवी डोलने लगी । सारे ग्रह कान्तिहीन हो गये और समुद्र चंचल हो उठे ।४२

अपश्यच्चानुसूयात्रेः स्वप्नं भार्या पतिव्रता ।
कथयामास विप्राणां भयादाकुलितेन्द्रिया[1] ॥४३

ऐसे समय में अत्रिमुनि की पत्नी, पतिव्रता अनुसूया ने सपना देखा और भयभीत मन से, ब्राह्मणों से बोलीं ।४३

तेजसा भासयन्कृत्स्नं नारायणसहायवान् ।
भिक्षमाणः शिवो नूनं दृष्टोऽस्माकं गृहेष्विति ॥४४

जिन्हे हम लोगों ने अभी देखा था, वह निश्चय ही भगवान् महेश्वर थे । अपने तेज से; सारे जंगल को प्रकाशित करते हुए, नारायण के साथ हमारे घर में भिक्षा मांगने आये थे ।४४

तस्या वचनमाकर्ण्य शङ्कमाना महर्षयः ।
सर्वे जग्मुर्महायोगं ब्रह्माणं विश्वसम्भवम् ॥४५

अनुसूया के वचनों को सुनकर, महर्षिवृन्द शंकित हो कर, महायोगी और संसार के रचयिता ब्रह्मा के पास गये ।४५

---

१. आकुलितेक्षणा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपास्यमानममलैर्योगिभिर्ब्रह्मवित्तमैः ।
चतुर्वेदैर्मूर्त्तिमद्भिः सावित्र्या सहितं प्रभुम् ॥४६
आसीनमासने रम्ये नानाश्चर्यसमन्विते ।
प्रभासहस्रकलिले ज्ञानैश्वर्यादिसंयुते ॥४७

विविध अचम्भों से युक्त, हजारों तेजों से आवृत, ज्ञान-ऐश्वर्यादि से परिपूर्ण, प्रभु ब्रह्मा, सावित्री के साथ रमणीय आसन पर बैठकर, श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञों, निष्पाप योगियों और मूर्तिमान् चारों वेदों के द्वारा उपासित हो रहे थे ।४६-४७

विभ्राजमानं वपुषा सस्मितं शुभ्रलोचनम् ।
चतुर्मुखं महाबाहुं छन्दोमयमजं परम् ॥४८

मुस्कुराता हुआ मुखमण्डल, उद्दीप्त नेत्र, चतुर्मुख, विशालबाहु और छन्दोमय, परम पुरुष ब्रह्मा, उस समय अपनी शरीर की कान्ति के द्वारा सुशोभित हो रहे थे ।४८

विलोक्य देववपुषं प्रसन्नवदनं शुचिम् ।
शिरोभिर्द्धरणीं गत्वा तोषयामासुरीश्वरम् ॥४९

प्रसन्नचित्त, दैवी शरीर वाले, पवित्र ब्रह्मा को देखकर, ऋषियों ने भूमि पर माथा टेककर, उन्हे प्रणाम करके, प्रसन्न किया ।४९

तान्प्रसन्नमना देवश्चतुर्मूर्तिश्चतुर्मुखः ।
व्याजहार मुनिश्रेष्ठाः किमागमनकारणम् ॥५०

चतुर्मूर्ति, चतुर्मुख, देव ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर उनसे पूछा, कि, 'हे मुनिश्रेष्ठो ! आप लोग किसलिए आये हैं ?' ।५०

तत्तस्य वृत्तमखिलं ब्रह्मणः परमात्मनः ।
ज्ञापयांचक्रिरे सर्वे कृत्वा शिरसि चांजलिम् ॥५१

तब मुनियों ने शिर से अंजलि बाँधकर परमात्मा ब्रह्मा से सारा वृत्तान्त इस प्रकार कह सुनाया ।५१

ऋषय ऊचुः

काश्चिद्दारुवनं पुण्यं पुरुषोऽतीवशोभनः ।
भार्यया चारुसर्वांग्या प्रविष्टो नग्न एव हि ॥५२

ऋषिवृन्द बोले—एक बहुत रूपवान् पुरुष, अपनी सर्वाङ्गसुन्दरी पत्नी के साथ, नग्न होकर, पवित्र दारुवन में आया ।५२

मोहयामास वपुषा नारीणां कुलमीश्वरः ।
कन्यकानां प्रियो यस्तु दूषयामास पुत्रकान् ॥५३

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस व्यक्ति ने अपने शारीरिक सौन्दर्य के द्वारा हमारी पत्नियों और कन्याओं को मोहित कर दिया और उसकी पत्नी ने हमारे पुत्रों को दूषित किया ।५३

अस्माभिर्विविधाः शापाः[1] प्रदत्तास्ते परांहताः ।
ताडितोऽस्माभिरत्यर्थं लिंगं तु विनिपातितम्[2] ॥५४

हम लोगों ने उन्हे तरह-तरह से शाप दिये, परन्तु सब बेकार गया । बाद में उन्हे बहुत पीटा और उनका लिङ्ग भी गिरा दिया ।५४

अन्तर्हितश्च भगवान्सभार्यो लिंगमेव च ।
उत्पाताश्चाभवन् घोराः सर्वभूतभयंकराः ॥५५

लिङ्ग गिरने के बाद ही वह भगवान्, उनकी पत्नी और कटा हुआ लिङ्ग, सब अन्तर्धान हो गये और सारे प्राणियों को डरा देने वाले घोर उपद्रव शुरू हो गये ।५५

क एव पुरुषो देव भीताः स्मः पुरुषोत्तम ।
भवन्तमेव शरणं प्रपन्ना वयमच्युत ॥५६

हे देव ! वह पुरुष कौन थे ? हे पुरुषोत्तम ! हम लोग भयभीत हो गये हैं । हे अच्युत ! हम सब आपकी शरण में आये हैं ।५६

त्वं हि वेत्सि जगत्यस्मिन्यत्किञ्चिदिह चेष्टितम् ।
अनुग्रहेण युक्तेन तदस्माननुपालय ॥५७

हे ब्रह्मन् ! इस संसार में, जो कुछ भी होता है, आप सब जानते हैं । अतः उचित कृपा के द्वारा हम लोगों का भरण पोषण कीजिए ।५७

विज्ञापितो मुनिगणैर्विश्वात्मा कमलोद्भवः ।
ध्यात्वा देवं त्रिशूलांकं कृताञ्जलिरभाषत ॥५८

मुनियों के द्वारा ऐसा कहे जाने पर; विश्वात्मा कमलयोनि ब्रह्मा ने, हाथ जोड़कर, महादेव का ध्यान करके कहने लगे ।५८

ब्रह्मोवाच

हा कष्टं भवतामद्य जातं सर्वार्थनाशनम् ।
धिग्बलं धिक् तपश्चर्यां मिथ्यैव भवतामिह ॥५९

ब्रह्मा बोले—हा कष्ट ! आज तुम लोगों का सर्वनाश उपस्थित है आप लोगों के सामर्थ्य को धिक्कार है और आपलोगों की तपस्या को भी धिक्कार है । आप लोगों ने जो तपस्या की है, वह सब मिथ्या है ।५९

---

१. वाताः प्रवृत्ताश्चेति पा० । २. भुविनिपातितम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संप्राप्य पुण्यसंस्कारान्निधीनां[1] परमं निधिम् ।
उपेक्षितं वृथाचारैर्भवद्भिरिह मोहितैः ॥६०

पुण्य संस्कार से प्राप्त, अमूल्य निधियों के भी निधिस्वरूप, भगवान् महादेव को पाकर भी, आप लोगों ने उनकी उपेक्षा की। आप लोग व्यर्थ ही मोहित हो गये थे।६०

कांक्षन्ते[2] योगिनो नित्यं यतन्तो[3] यतयो निधिम् ।
यमेव तं समासाद्य हा[4] भवद्भिरुपेक्षितम् ॥६१

योगी और संन्यासी लोग जिस सम्पदा की, सदा यत्नपूर्वक कामना करते हैं, हाय ! आपलोगों ने उसे पाकर भी उसकी उपेक्षा की।६१

यजन्ति यज्ञैर्विविधैर्यत्प्राप्तेवेदवादिनः ।
महानिधिं समासाद्य हा भवद्भिरुपेक्षितम् ॥६२

जिन्हें प्राप्त करने के लिए, वेदवादी ऋषिगण, विविध प्रकार के यज्ञों के द्वारा पूजा करते हैं। उस परमनिधि को पाकर भी, आप लोगों ने उनकी उपेक्षा की।६२

यमर्चयित्वा[5] सततं विश्वेशत्वमिदं मम ।
स देवोपेक्षितो दृष्ट्वा निधानं भाग्यवर्जिताः ॥६३

जिनकी सदा पूजा करके मैं संसार का स्वामी बना हूँ। उस परमनिधि को पाकर भी भाग्यहीन आपलोगों ने उनकी—उपेक्षा की यह आप लोगों का दुर्भाग्य हैं।६३

यस्मिन्समाहितं दिव्यमैश्वर्यं यत्तदव्ययम् ।
तमासाद्य निधिं ब्रह्म हा भवद्भिर्वृथाकृतम् ॥६४

जिस अविनाशी में सारे दैवी ऐश्वर्य समाहित हैं, ऐसे विधिस्वरूप परमब्रह्म को पाकर भी, आपलोगों ने यह क्या किया ? ६४

एष देवो महादेवो विज्ञेयस्तु महेश्वरः ।
न तस्य परमं किञ्चित्पदं समधिगम्यते ॥६५

---

१. पुण्यसंस्थानां विधीनामिति पा० । २. कांक्षन्तीति साधु । ३. यतमाना इति साधु । ४. तमासाद्याक्षयं देवमैश्वर्यमखिलं ध्रुवमिति पा० । ५. यं समासाद्य-देवानामैश्वर्यमखिलं जगत् । तमासाद्याक्षयनिधिं हा भवद्भिरुपेक्षितम् । यस्समापत्तिजनितं विश्वेशत्वमिदंमम । तदेवोपेक्षितं दृष्ट्वा निधानं भाग्यवर्जितैः इति लि० पु० । यं समासाद्य जनितमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्हे देवाधिदेव महादेव महेश्वर जानिए। जिनके श्रेष्ठ पद के विषय में, कुछ भी नहीं जाना जा सकता ।६५

देवतानामृषीणां वा पितृणाञ्चापि शाश्वतः ।
सहस्रयुगपर्यन्ते प्रलये सर्वदेहिनाम् ॥६६

हजारों युग बीत जाने के बाद, देवता, ऋषि और पितर जैसे सभी देह-धारियों का अन्त होता है। परन्तु वह, सदा अविनश्वर हैं ।६६

संहरत्येष भगवान्कालो भूत्वा महेश्वरः ।
एष चैव प्रजाः सर्वाः सृजत्येव स्वतेजसा ॥६७

यही, भगवान् महेश्वर कालरूप धारण करके, समस्त प्राणी समूह का नाश करते हैं। फिर यही अपने तेज से समस्त प्राणियों की रचना करते हैं ।६७

एष चक्री चक्रवर्ती श्रीवत्सकृतलक्षणः ।
योगी कृतयुगे देवस्त्रेतायां यज्ञ एव च ।
द्वापरे भगवान्कालो धर्मकेतुः कलौ युगे ॥६८

यही चक्रवर्ती (सारे संसार के स्वामी), यही चक्रधारी, और श्री वत्सचिह्न से युक्त यही विष्णुस्वरूप हैं। इन्हे सत्ययुग में योगी के नाम से, त्रेतायुग में यज्ञ के रूप में, द्वापरयुग में कालरूप में और कलियुग में धर्मकेतु के नाम से जाना जाता है ।६८

रुद्रस्य मूर्त्तयस्तिस्रोयाभिर्विश्वमिदं ततम् ।
तमो ह्यग्नी रजो ब्रह्मा सत्त्वं विष्णुरिति स्मृतिः ॥६९

रुद्र का त्रिगुणात्मक तीन रूप हैं, जिसके द्वारा यह सम्पूर्ण विश्व व्याप्त है। उनका एक रूप तमोगुणप्रधान अग्नि, दूसरा रजोगुणप्रधान ब्रह्मा और तीसरा सत्त्वगुण-प्रधान विष्णु है, शास्त्रों में ऐसा ही कहा गया है ।६९

मूर्त्तिरन्या स्मृता चास्य दिग्वासा च शिवा ध्रुवा ।
यत्र तिष्ठति तद्ब्रह्म योगेन तु समन्वितम् ॥७०

इनका मंगलमय और अविनाशी, एक और रूप है। जो दिगम्बर है। उस रूप में परमब्रह्म नित्य ध्यान लगाकर अवस्थित रहते हैं ।७०

या चास्य पार्श्वगा भार्या भवद्भिरभिभाषिता[1] ।
स हि नारायणो देवः परमात्मा सनातनः ॥७१

---

१. भवद्भिरभिवीक्षिता इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपलोगों ने उनके बगल में स्थित जिस स्त्री को उनकी पत्नी कहा, वह सनातन परमात्मा नारायण देव थे ।७१

तस्मात्सर्वमिदं जातं तत्रैव च लयं व्रजेत् ।
स एव मोचयेत्कृत्स्नं स एष च परा गतिः ॥७२

उन्हीं से सारे संसार की उत्पत्ति हुई और यह संसार उन्ही में समा जायगा। वही सारे संसार को मुक्त करते हैं और वही श्रेष्ठ गति हैं ।७२

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
एकशृंगो महानात्मा नारायण[1] इति श्रुतिः ॥७३

यही हजारों सिर, हजारों नेत्र और हजारों चरणों वाले, एकशृङ्ग, महानात्मा, पुरुष वेदों में नारायण के नाम से वर्णित हैं ।७३

रेतोऽस्य गर्भो भगवानापो माया तनुः प्रभुः ।
स्तूयते विविधैर्मन्त्रैर्ब्राह्मणैर्मोक्षकांक्षिभिः ॥७४

जलमग्न शरीर वाले प्रभु, उसी परमब्रह्म के गर्भस्वरूप हैं । मोक्षाभिलाषी ब्राह्मण, विविध मन्त्रों से इन्ही की स्तुति किया करते हैं ।७४

संहृत्य सकलं विश्वं कल्पांते पुरुषोत्तमः ।
शेते योगामृतं पीत्वा यत्र[2] विष्णोः परं पदम् ॥७५

भगवान् पुरुषोत्तम, सृष्टि के अन्त में, सारे विश्व का संहार करके, जिस योगामृत को पीकर अवस्थित रहते हैं, वही विष्णु का श्रेष्ठ पद है ।७५

न जायते न म्रियते वर्द्धते न च विश्वदृक् ।
मूलप्रकृतिरव्यक्तो गीयते वैदिकैरजः ॥७६

न इनका जन्म होता है, न मृत्यु और न वृद्धि । ये अजन्मा और विश्वद्रष्टा हैं । वेदविद् इन्हें अव्यक्त मूल प्रकृति कहते हैं ।७६

ततो निशायां वृत्तायां सिसृक्षुरखिलं जगत् ।
अजनाभौ तु तद्बीजं क्षिपत्येष महेश्वरः ॥७७

तत्पश्चात् प्रलय समाप्त हो जाने के बाद, भगवान् अजनाभि अर्थात् जल में बीज डालते हैं ।७७

तं मां वित्त महात्मानं ब्रह्माणं विश्वतोमुखम् ।
महांतं पुरुषं विश्वमपां गर्भमनुत्तमम् ॥७८

---

१. पुराणोऽष्टाक्षरो हरिः । चतुर्वेदश्चतुर्मूर्तिस्त्रिमूर्तिस्त्रिगुणः परः । एकमूर्तिरमेयात्मा नारायण इति श्रुतिः इति लि० पु० । २. तद्विष्णोः परमं पदमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल में डाले गए बीज को, ब्रह्मा और संसार जानो। मैं ही वह महात्मा, विश्वतोमुख महापुरुष ब्रह्मा हूँ ।७८

न तं जानीत जनकं मोहितास्तस्य मायया ।
देवदेवं महादेवं भूतानामीश्वरं हरम् ॥७९

उनकी माया से मोहित होने के कारण, सारी सृष्टि के जन्मदाता, देवाधिदेव महादेव, प्राणियों के स्वामी शिव को, आप लोग नहीं जान पाते ।७९

एष देवो महादेवो ह्यनादिर्भगवान्हरः ।
विष्णुना सह संयुक्तः करोति विकरोति च ॥८०

यही आदिरहित भगवान् महादेव शिव, विष्णु के साथ मिलकर, सारे संसार का निर्माण और अन्त करते हैं ।८०

न तस्य विद्यते कार्यं न तस्माद्विद्यते परम् ।
स वेदान् प्रददौ पूर्वं योगमायातनुर्मम ॥८१

उनसे भिन्न कोई कार्य नहीं, उनसे भिन्न कोई पदार्थ नहीं। वही योगमाया रूपी शरीर धारण करने वाले प्रभु ने मुझे, सारे वेद दिए हैं ।८१

स मायी मायया सर्वं करोति विकरोति च ।
तमेव मुक्तये ज्ञात्वा व्रजध्वं[1] शरणं शिवम् ॥८२

वही मायावी, माया के द्वारा, सारे पदार्थों की रचना और विनाश करते हैं। यह सब कुछ जानकर आप लोग अपनी मुक्ति के लिए उन्हीं शिव की शरण में जाइये ।८२

इतीरिता भगवता मरीचिप्रमुखा विभुम् ।
प्रणम्य देवं ब्रह्माणं पृच्छन्ति स्म समाहिताः[2] ॥८३

भगवान् ब्रह्मा के ऐसा कहने पर, मरीचि आदि महर्षियों ने, एकाग्रचित्त होकर सर्वव्यापी देव ब्रह्मा को प्रणाम करके पूछा ।८३

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥३८॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में अड़तीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३८॥

●

१. व्रजेत् शरणं भवमिति पा. । २. सुदुःखिताः इति पा. ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊनचत्वारिंशोऽध्यायः

मुनय ऊचुः

कथं पश्येम तं देवं पुनरेव पिनाकिनम् ।
ब्रूहि विश्वामरेशान त्राता त्वं शरणैषिणाम् ॥१

मुनिवृन्द बोले—हे निखिल देवेश्वर ! हम लोग फिर से, महेश्वर का दर्शन कैसे कर पायेंगे, यह बताइए, क्योंकि आप शरणागत रक्षक हैं ।१

ब्रह्मोवाच

यद्दृष्टं भवता तस्य लिङ्ग[1] भुवि निपातितम् ।
तल्लिङ्गानुकृतीशस्य कृत्वा लिंगमनुत्तमम् ॥२

पूजयध्वं सपत्नीकाः सादरं पुत्रसंयुताः ।
वैदिकैरेव नियमैर्विविधैर्ब्रह्मचारिणः ॥३

ब्रह्मा बोले—उनके जिस लिंग को आप लोगों ने भूमि पर गिरते हुए देखा था उसी लिंग के समान एक माहेश्वर लिंग बनाकर पत्नी और पुत्रों के साथ ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए विभिन्न वैदिक नियमों के द्वारा, आदर पूर्वक पूजा कीजिए ।२-३ ।

संस्थाप्य शांकरैर्मन्त्रैर्ऋग्यजुः सामसंभवैः ।
तपः परं समास्थाय गृणन्तः शतरुद्रियम् ॥४

समाहिताः पूजयध्वं सपुत्राः सह बन्धुभिः ।
सर्वे प्राञ्जलयो भूत्वा शूलपाणिं प्रपद्यथ ॥५

आप लोग, मित्रों और पुत्रों के साथ मिलकर शतरुद्रिय का पाठ कीजिए और कठोर तपस्या का आश्रय लेकर यजुः तथा सामवेद से उत्पन्न, शंकर मन्त्र के द्वारा (उस लिंग को) स्थापित करके, एकाग्रचित्त से (उसकी) पूजा कीजिए और सभी लोग हाथ जोड़कर, भगवान् शङ्कर की शरण में जाइए ।४-५ ।

ततो द्रक्ष्यथ देवेशं दुर्दृशं कृतात्मभिः ।
यं दृष्ट्वा सर्वमज्ञानमधर्मश्च प्रणश्यति ॥६

---

१. लिङ्गन्तु विनिपातितमिति पा. ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तभी अजितात्मा पुरुषों के लिए दुर्दृश्य, देवाधिपति महादेव का दर्शन प्राप्त करने में समर्थ होंगे। उनका दर्शन पा लेने से अज्ञान और सारे अधर्म नष्ट हो जाते हैं।६

ततः प्रणम्य वरदं ब्रह्माणममितौजसम्।
जग्मुः संहृष्टमनसो देवदारुवनं पुनः ॥७

तत्पश्चात् महर्षिवृन्द ने अपरिमित बलशाली और अभीष्टदाता ब्रह्मा को प्रणाम करके, सन्तुष्ट होकर, पुनः देवदारु वन चले गए।७

आराधयितुमारब्धा ब्रह्मणा कथितं यथा।
अजानन्तः परं भावं वीतरागा विमत्सराः ॥८
स्थण्डिलेषु विचित्रेषु पर्वतानां गुहासु च।
नदीनाञ्च विविक्तेषु पुलिनेषु शुभेषु च ॥९

परम भाव को न जानने वाले, ब्राह्मण वृन्द विषय वासनाओं की कामना और द्वेष का त्याग करके, विचित्र स्थण्डिलों (यज्ञ के लिए तैयार की गई परिष्कृत भूमि), पर्वत की गुफाओं, एकान्त और शुभ नदी के तटों पर बैठकर, ब्रह्मा के आदेशानुसार, महादेव की आराधना करने लगे।८-९

शैवालभोजनाः[1] केचित्केचिदन्तर्जलेशयाः।
केचिदभ्रावकाशास्तु[2] पादांगुष्ठे ह्यधिष्ठिताः ॥१०
दन्तोऽलूखलिनस्त्वन्ये ह्यश्मकुट्टास्तथा परे।
शाकपर्णाशनाः[3] केचित्संप्रक्षाला मरीचिपाः ॥११
वृक्षमूलनिकेताश्च शिलाशय्यास्तथापरे।
कालं नयन्ति तपसा पूजयन्तो महेश्वरम् ॥१२

उनमे से कोई केवल सेवार खाकर (जीवित) थे, कोई पानी के अन्दर डूबकर और कोई खुली जगह पर केवल पैर के अंगूठे पर खड़े थे कोई दाँतों से कूटकर भोजन करके जीवित थे, तो कोई पत्थर पर कूटे हुए पदार्थों को खाकर रह रहे थे। कोई साग पत्ते खाकर, तो कोई केवल स्नान करके, कोई सूर्य की किरण पीकर कोई पेड़ की जड़ों का सहारा लेकर तो को कोई पत्थर पर लेटकर, तपस्या के द्वारा महेश्वर की पूजा करते हुए समय बिताने लगे।१०-१२।

ततस्तेषां प्रसादार्थं प्रपन्नार्त्तिहरो हरः।
चकार भगवान्बुद्धिं बोधयन्[4] वृषभध्वजः ॥१३

---

१. शैवानां भाजनमिति पा०। २. केचिद्दर्भाविकाशास्तु इति पा०। ३. शाक-पत्राशिन इति पा०। ४. प्रबोधाय वृषध्वजः इति, बोधयंस्तान् वृषध्वज इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् शरणागत दुःखहारी भगवान् वृषध्वज ने, मुनियों पर कृपा करने के लिए उन्हें जगाने का संकल्प लिया ।१३

देवः[1] कृतयुगे ह्यस्मिञ्छृंगे हिमवतः शुभे ।
देवदारुवनं प्राप्तः प्रसन्नः परमेश्वरः ॥१४
भस्मपाण्डुरदिग्धांगो नग्नो विकृतलक्षणः ।
उल्मूकव्यग्रहस्तश्च रक्तपिंगललोचनः ॥१५

देव परमेश्वर, प्रसन्न होकर, लाल-पीली आँखे लिए और शरीर पर भस्म लपेटकर, नग्न होकर, विकृत वेशभूषा धारण करके, हाथों पर जलता हुआ अंगार रखकर, सत्युग में हिमालय की चोटी पर स्थित, रमणीय देवदारु वन पहुँचे ।१४-१५।

क्वचिच्च हसते रौद्रं क्वचिद्गायति विस्मितः ।
क्वचिन्नृत्यति शृङ्गारी क्वचिद्रौति मुहुर्मुहुः ॥१६

वह कभी-कभी भयानक रूप से हंसते, तो कभी अचम्भित होकर गाने लगते, कभी शृंगार रस से ओतप्रोत होकर नृत्य करने लगते या कभी बारम्बार चिल्लाने लगते ।१६

आश्रमे ह्याटते भिक्षुर्याचते च पुनः पुनः ।
मायां कृत्वात्मनो रूपं देवस्तद्वनमागतः ॥१७
कृत्वा गिरिसुतां गौरीं पार्श्वे देवः पिनाकधृक् ।
सा च पूर्वंवदेवेशी देवदारुवनं गता ॥१८

वह भिखारी बनकर, आश्रम में घूमते हुए बारम्बार अन्न माँगने लगे । इस प्रकार मायावी रूप धरकर, पर्वतपुत्री गौरी को साथ लेकर, देव पिनाकधारी, उस वन में उपस्थित हुए थे । पहले नारायण ने जैसा रूप धरा था, पर्वत पुत्री भी वैसा ही रूप धारणकर देवदारु वन गई थी ।१७-१८।

दृष्ट्वा समागतं देवं देव्या सह कपर्द्दिनम् ।
प्रणेमुः शिरसा भूमौ तोषयामासुरीश्वरम् ॥१९
वैदिकैर्विविधैर्मन्त्रैस्तोत्रैर्माहेश्वरैः शुभैः ।
अथर्वशिरसा चान्ये रुद्राद्यैरर्च्चयन्भवम् ॥२०

देवी के साथ भगवान् महेश्वर को आया हुआ देखकर मुनियों ने पृथ्वी पर माथा टेक कर प्रणाम किया और विभिन्न वैदिक मन्त्रों और शुभ माहेश्वर मन्त्र द्वारा या किसी किसी ने आथर्व शिरोमन्त्र और रुद्राध्यायी का पाठ करते हुए महादेव की पूजा करके सन्तोष प्राप्त किया ।१९-२०।

---

१. एवं कृतयुगे ह्यस्मिन् भृगोर्हिभवतः सुतेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमो देवाधिदेवाय महादेवाय ते नमः ।
त्र्यम्बकाय नमस्तुभ्यं त्रिशूलवरधारिणे ॥२१

ऋषिवृन्द बोले—देवाधिदेव को नमस्कार, महादेव आपको नमस्कार है, त्रिनेत्रधारी, त्रिशूलधारी आपको नमस्कार है।२१

नमो दिग्वाससे तुभ्यं विकृताय पिनाकिने ।
सर्वप्रणतदेवाय स्वयमप्रणतात्मने ॥२२

आप दिगम्बर मायावी और पिनाकी हैं। प्रणाम करते हुए सभी को आपके आगे झुकना पड़ता है। किन्तु आप प्रणाम करने के लिए किसी के आगे नहीं झुकते, आपको नमस्कार है।२२

अन्तकान्तकृते तुभ्यं सर्वसंहरणाय च ।
नमोऽस्तु नृत्यशीलाय नमो भैरवरूपिणे ॥२३

आप यम का भी अन्त करने वाले, सभी के संहारकर्ता, आपको नमस्कार है। नृत्यशील और भैरवरूपी आपको नमस्कार है।२३

नरनारीशरीराय योगिनां गुरवे नमः ।
नमो दान्ताय शांताय तापसाय हराय च ॥२४

आप अर्धनारीश्वर, योगियों के गुरु है। आपको नमस्कार हैं। जितेन्द्रिय शान्त और तपस्वी शिव को नमस्कार है।२४

विभीषणाय रुद्राय नमस्ते कृत्तिवाससे ।
नमस्ते लेलिहानाय श्रीकण्ठाय च ते नमः ॥२५

आप भयंकर रुद्रहैं, आप कृत्तिवास हैं, आपको प्रणाम है आप बारम्बार संसार का भक्षण करने को उद्यत रहते हैं, आपको प्रणाम हैं। श्री कण्ठ, आपको प्रणाम।२५

अघोरघोररूपाय वामदेवाय वै नमः ।
नमः कनकमालाय देव्याः प्रियकराय च ॥२६

आप अघोर और घोर मूर्ति है, आप वामदेव हैं, आपको नमस्कार है। आप स्वर्ण की माला धारण करने वाले और देवी को प्रिय हैं, आपको नमस्कार।२६

गङ्गासलिलधाराय शंभवे परमेष्ठिने ।
नमो योगाधिपतये भूताधिपतये[1] नमः ॥२७

आप गंगा जल की धारा को धारण करने वाले, शम्भु और परमेष्ठी हैं, आपको नमस्कार। आप योग के स्वामी और संसार के सभी प्राणियो के स्वामी हैं, आपको नमस्कार है।२७

---

१. ब्रह्माधिपतये इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणाय च नमस्तुभ्यं नमो भस्मांगधारिणे ।
नमस्ते हव्यवाहाय दंष्ट्रिणे हव्यरेतसे ॥२८

आप सभी प्राणियों के प्राणस्वरूप हैं, आपको नमस्कार है । आप अंगों में भस्म धारण करने वाले हैं आपको नमस्कार है। आप हव्य का वहन करने वाले अग्नि के समान हैं, आप बड़े-बड़े विकराल दाँतों वाले तथा हव्यरेतस हैं, आपको नमस्कार है ।२८

ब्रह्मणश्च शिरोहर्त्रे नमस्ते कालरूपिणे ।
आगतिं ते न जानीमो गतिं नैव च नैव च ॥२९

आपने ब्रह्मा का मस्तक हर लिया था, कालरूप आपको नमस्कार है । हम लोग आपका आगमन और आपकी गति भी नहीं जानते ।२९

विश्वेश्वर[1] महादेव योऽसि सोऽसि नमोस्तु ते ।
नमः प्रमथनाथाय दात्रे च शुभसंपदाम् ॥३०

हैं विश्व के स्वामी ! महादेव ! आप चाहे जो हों, (आपका स्वरूप न जानकर भी) आपको नमस्कार करते हैं। कामदेव के स्वामी और शुभ सम्पत्ति प्रदान करने वाले को नमस्कार है ।३०

कपालपाणये तुभ्यं नमो जुष्टतमाय ते ।
नमः कनकपिङ्गाय! वारिलिंगाय ते नमः ॥३१

आप कपालपाणि, आप आराध्यतम हैं आपको नमस्कार हैं । आप स्वर्ण के समान कान्ति वाले हैं आपको नमस्कार है । आप वारिलिंग हैं आपको नमस्कार है ।३१

नमो वह्न्यर्कलिंगाय ज्ञानलिंगाय ते नमः ।
नमो भुजंगहाराय कर्णिकारप्रियाय च ।
किरीटिने कुण्डलिने कालकालाय ते नमः ॥३२

आप अग्नि और सूर्य लिंग वाले हैं आपको नमस्कार है । आप ज्ञानलिंग हैं आपको नमस्कार है । आप सापों का हार पहनते हैं, आपको नमस्कार हैं । आपको कनैल का फूल प्रिय है, आपको नमस्कार है । मुकुट और कुण्डलधारी, आप काल के भी काल हैं आपको नमस्कार है ।३२

महादेव[2] महादेव देवदेव त्रिलोचन ।
क्षम्यतां यत्कृतं मोहात्त्वमेव शरणं हि नः ॥३३

---

१. विश्वेश्वर महादेव योगिकोऽसि नमोऽस्तुते इति पा० । २. नमो देव महादेव महादेव त्रिलोचन इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे महादेव! हे देवाधिदेव त्र्यम्बक महेश्वर! हम लोगों ने अज्ञानता के कारण जो कुछ किया है, उसे क्षमा करें। आपही हम लोगों के एकमात्र आधार हैं।३३

चरितानि विचित्राणि गुह्यानि गहनानि च।
ब्रह्मादीनाञ्च सर्वेषां दुर्विज्ञेयो हि शंकरः ॥३४

हे शङ्कर! आपका चरित्र विचित्र, गुप्त और दुर्ज्ञेय है। आपको जानना ब्रह्मादि देवताओं के लिए भी कठिन है।३४

अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानात्किञ्चिद्यत्कुरुते नरः।
तत्सर्वं भगवानेव कुरुते योगमायया ॥३५

मनुष्य अज्ञानता वश या जानबूझकर, जो कुछ भी करता है, वह आप ही योग माया के द्वारा करवाते हैं।३५

एवं स्तुत्वा महादेवं प्रविष्टैरंतरात्मभिः।
ऊचुः प्रणम्य गिरिशं पश्यामस्त्वां यथा पुरा ॥३६

मुनियों ने अंतरात्मा से महादेव की इस प्रकार स्तुति करके उन्हें प्रणाम किया और बोले, पहले आपका जो रूप देखा था, वही रूप देखने की इच्छा है।३६

तेषां संस्तवमाकर्ण्य[1] सोमः सोमविभूषणः।
स्वयमेव परं रूपं दर्शयामास शंकरः ॥३७

उनकी स्तुति को सुनकर, चन्द्रमा को आभूषण के रूप में धारण करने वाले; महादेव शंकर ने मुनियों को अपना श्रेष्ठ रूप दिखाया।३७

तं ते दृष्ट्वाथ गिरिशं देव्या सह पिनाकिनम्।
यथापूर्वं स्थिता विप्राः प्रणेमुर्हृष्टमानसाः ॥३८

मुनियों ने देवी के साथ पिनाकी, गिरीश का दर्शन पाकर, पहले की तरह स्थित होकर, सन्तुष्टमन से प्रणाम किया।३८

ततस्ते मुनयः सर्वे संस्तूय च महेश्वरम्।
भृग्वंगिरा[2] वसिष्ठस्तु विश्वामित्रस्तथैव च ॥३९
गौतमोऽत्रिः सुकेशश्च पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः।
मरीचिः कश्यपश्चापि संवर्त्तकमहातपाः।
प्रणम्य देवदेवेशमिदं वचनमब्रुवन् ॥४०

---

१. संस्तवं सम्यक् स्तवमित्यर्थः। अत्र संस्तवशब्दः न परिचयार्थकः।
२. भृग्वङ्गिराः—भृगुणा सहित अङ्गिराः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् भृगु, अंगिरा, वसिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, अत्रि, सुकेश, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरीचि, दक्ष, कश्यप और महातपा संवर्त्तकादि मुनियों ने महेश्वर को प्रणाम करके देवदेवेश्वर से यह वचन कहा।३९-४०।

कथं त्वां देवदेवेश कर्मयोगेन वा प्रभो।
ज्ञानेन वाथ योगेन पूजयामः सदैव हि ॥४१

हे प्रभु देव-देवेश! हम लोग कर्मयोग या ज्ञानयोगके द्वारा कैसे आपकी पूजा सदा करते रहेंगे? ।४१

केन वा देव मार्गेण संपूज्यो भगवानिह।
किं तत्सेव्यमसेव्यं वा सर्वमेतद्ब्रवीहि नः ॥४२

हे देव! इस समय किस मार्ग के द्वारा भगवान् आपकी पूजा करनी होगी? क्या क्या सेवन करना होगा, क्या क्या नहीं? यह सब कुछ हमें बताइए।४२

श्रीशिव उवाच

एतद्वः संप्रवक्ष्यामि गूढं गहनमुत्तमम्।
ब्रह्मणा कथितं पूर्वं महादेवे महर्षयः ॥४३

श्री शिव बोले–अत्यन्त गम्भीर और अत्यन्त दुर्बोध्य विषय, मैं आप लोगों को बताऊँगा जैसा कि प्राचीन काल में, ब्रह्मा ने इस विषय को बताया था।४३

सांख्ययोगादिद्विधा ज्ञेयं पुरुषाणां हि साधनम्।
योगेन सहितं सांख्यं पुरुषाणां विमुक्तिदम् ॥४४

मनुष्यों के लिए, सांख्य (ज्ञानयोग) और योग (कर्मयोग) दो प्रकार के साधन होते हैं। किन्तु योग सहित सांख्य साधन ही मुक्ति प्रदायक होता है।४४

न केवलं[1] हि योगेन दृश्यते पुरुषः परः।
ज्ञानन्तु केवलं सम्यगपवर्गफलप्रदम् ॥४५

केवल योग से परम ब्रह्म का साक्षात्कार नहीं होता, परन्तु ज्ञान (सांख्य) मुक्ति-दायक होता है।४५

भवंतः केवलं योगं समाश्रित्य विमुक्तये।
विहाय सांख्यं विमलमकुर्वत परिश्रमम् ॥४६

आप लोगों ने निर्मल सांख्य को छोड़कर, मुक्ति की इच्छा से केवल योग का आश्रय लेकर व्यर्थ परिश्रम किया है।४६

---

१. केवलनेति, न केवलं वियोगेनेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतस्मात्कारणाद्विप्रा नृणां केवलकर्मणाम्[1] ।
आगतोऽहमिमं देशं ज्ञापयन्मोहसंभवम् ॥४७

हे ब्राह्मणों ! इसीलिये, केवल कर्म का अनुष्ठान करने वाले मनुष्यों को यह बताने मैं इस देश में आया था कि कर्म मोह से जन्म लेता है ।४७

तस्माद्भवद्भिर्विमलं ज्ञानं कैवल्यसाधनम् ।
ज्ञातव्यं हि प्रयत्नेन श्रोतव्यं दृश्यमेव च ॥४८

अतः आप लोगों को मुक्ति के साधनभूत विशुद्ध ज्ञान को जानना चाहिए, यत्न-पूर्वक गुरु से सुनना चाहिए और देखना चाहिए ।४८

एकः सर्वत्रगो ह्यात्मा केवलश्चितिमात्रकः ।
आनन्दो निर्मलो नित्य एतद्वै सांख्यदर्शनम् ॥४९

एक आत्मा ही, सर्वत्रगामी, अकेला (प्रकृति विहीन) ज्ञानमय, आनन्दमय, पवित्र और शाश्वत है, यही सांख्य दर्शन है ।४९

एतदेव परं ज्ञानमथ मोक्षोऽनुगीयते ।
एतत्कैवल्यममलं ब्रह्मभावश्च[2] वर्णितः ॥५०

इसी श्रेष्ठ ज्ञान को जीवन्मुक्ति कहते हैं । इसका परिणाम निर्मल कैवल्य और ब्रह्मभाव है ।५०

आश्रित्य चैतत्परमं तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
पश्यन्ति मां महात्मानो यतयो विश्वमीश्वरम् ॥५१

इस श्रेष्ठ ज्ञान के आधार पर, ईश्वरनिष्ठ, ईश्वरपरायण, महात्मा, संन्यासि-वृन्द, सारी वस्तुओं को ईश्वररूप में अर्थात् मेरे रूप में जानते हैं ।५१

एतत्तत्परमं ज्ञानं केवलं सन्निरञ्जनम् ।
अहं हि वेद्यो भगवान्मम मूर्त्तिरियं शिवा ॥५२

यही वह शाश्वत, अविद्यादोष रहित, शुद्ध, परम ज्ञानयोग है । उस ज्ञान के द्वारा जानने योग्य भगवान् मैं हूँ और मेरी मूर्त्ति पार्वती है ।५२

बहूनि साधनानीह सिद्धये कथितानि तु ।
तेषामभ्यधिकं ज्ञानं मामकं द्विजपुङ्गवाः ॥५३

हे ब्राह्मण-श्रेष्ठों ! सिद्धि के लिए, शास्त्र में अनेक साधन बतलाये गये हैं, किन्तु मुझसे सम्बन्धित ज्ञान उनकी तुलना में उत्कृष्ट है ।५३

---

१. केवलधर्मिणामिति पा० । २. ब्रह्मभावं स्तुवन्त्यत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानयोगरताः शान्ता मामेव शरणं गताः ।
ये हि मां भस्मनि[1] रता ध्यायन्ति सततं हृदि ॥५४

मद्भक्तितत्परा[2] नित्यं यतयः क्षीणकल्मषाः ।
नाशयाम्यचिरात्तेषां घोरं संसारगह्वरम्[3] ॥५५

जितने भी शान्त और ज्ञानयोग में मग्न रहने वाले मनुष्य, मेरी शरण में हैं, भस्म से अलंकृत शरीर वाले जो संन्यासी, अपने मन में निरन्तर मेरा ध्यान करते हैं और जो निष्पाप संन्यासी, सदैव मेरी भक्ति करते हैं, उन सभी के लिए, इस घोर संसार सागर को पल में नष्ट कर देता हूँ (अर्थात् वे शीघ्र ही संसार से मुक्त हो जाते हैं) ।५४-५५।

निर्मितं हि मया पूर्वं व्रतं पाशुपतं[4] शुभम् ।
गुह्याद्गुह्यतमं सूक्ष्मं वेदसारं विमुक्तये ॥५६

मैंने प्राचीन काल में, शुभ पाशुपत-व्रत की रचना की थी । अत्यन्त गोपनीय, वेदों का सारभूत, और सूक्ष्म, वह व्रत मुक्ति का कारण है ।५६

प्रशान्तः संयतमना भस्मोद्धूलितविग्रहः ।
ब्रह्मचर्यरतो नग्नो व्रतं पाशुपतं चरेत् ॥५७

शान्त और एकाग्रचित्त से, देह में भस्म लगाकर, ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए और नग्न होकर, पाशुपत व्रत का अनुष्ठान करना चाहिए ।५७

यद्वा कौपीनवसनः स्यादेकवसनो[5] मुनिः ।
वेदाभ्यासरतो विद्वान्ध्यायेत्पशुपतिं शिवम् ॥५८

अथवा ज्ञानी साधक कौपीन या एकवस्त्र धारण करके, मौनव्रती होकर, वेदों का अध्ययन करते हुए, पशुपति शिव का ध्यान करते हैं ।५८

एष पाशुपतो योगः सेवनीयो मुमुक्षुभिः ।
तस्मिन्स्थितैस्तु[6] पठितं निष्कामैरिति हि श्रुतम् ॥५९

श्रुतियों में कहा गया है कि, मोक्षाभिलाषी जन, देह में भस्म लपेटकर और निष्काम होकर पाशुपत योग का पालन करेंगे ।५९

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः ।
बहवोऽनेन योगेन पूता मद्भावमागताः ॥६०

---

१. भक्तिनिरता इति पा० । २. मद्भक्तिपरमा इति पा० । ३. संसारसागरमिति पा० । ४. यत्नात्पाशुपतं परमिति पा । ५. स्याद्वा दिग्वसनो मुनिरिति पा० । ६. भस्मच्छन्नैर्हि सततमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय वासनाओं का मोह त्यागकर, निर्भय और क्रोध रहित होकर, मुझमें चित्त लगाकर और मेरी शरण में आकर, अनेक लोगों ने पाशुपत योग के बल पर निष्पाप होकर. शिवत्व प्राप्त किया था।६०

अन्यानि चैव शास्त्राणि लोकेऽस्मिन्मोहनानि तु ।
वेदवादविरुद्धानि मयैव कथितानि तु ॥६१

इस संसार में वेदविरुद्ध, अनेकों शास्त्र है । उन शास्त्रों को मैंने ही बताया है। किन्तु वे सभी शास्त्र मोह को जन्म देने वाले हैं।६१

वामं पाशुपतं सोमं लाकुरं चैव भैरवम् ।
असेव्यमेतत्कथितं वेदबाह्यं तथेतरम् ॥६२

वाम, पाशुपत, सोम, लाकुर और भैरव, आदि शास्त्र और वेदविरुद्ध दूसरे जो भी शास्त्र हैं, वे सभी अपालनीय हैं।६२

वेदमूर्त्तिरहं विप्रा नान्यशास्त्रार्थवेदिभिः ।
ज्ञायते मत्स्वरूपं तु मुक्त्वा देवं सनातनम् ॥६३

मैं वेदमूर्ति हूँ। अतः वेद का त्याग करके, दूसरे शास्त्रों का अर्थ जानने वाले; मेरा स्वरूप नहीं जान पाते।६३

स्थापयध्वमिदं मार्गं पूजयध्वं महेश्वरम् ।
ततोऽचिराद्वरं ज्ञानमुत्पत्स्यति[1] न संशयः ॥६४

इस मार्ग (पाशुपत व्रत मार्ग) की स्थापना करो और महेश्वर की पूजा करो। इससे शीघ्र ही परम ज्ञान की उत्पत्ति होगी, इसमें सन्देह नहीं।६४

मयि भक्तिश्च विपुला भवतामस्तु सत्तमाः ।
ध्यानमात्रं हि सान्निध्यं दास्यामि मुनिसत्तमाः ॥६५

हे साधु श्रेष्ठो ! मेरे प्रति आप लोगों की अथाह भक्ति बनी रहे । हे सत्पुरुषों ! केवल ध्यान करने से ही मैं, आपलोगों के पास उपस्थित हो जाऊँगा।६५

इत्युक्त्वा भगवान्सोमस्तत्रैवान्तर्हितोऽभवत्[2] ।
तेऽपि दारुवने स्थित्वा ह्यर्चयन्ति स्म शङ्करम् ॥६६

इतना कहकर, भगवान् शंकर, उमा के साथ उसी स्थान पर, अन्तर्धान हो गये। मुनिवृन्द भी दारुवन में रहते हुए महेश्वर की पूजा करने लगे।६६

---

१. उत्पत्स्यते इति साधु। २. तत्रैवान्तरधीयत इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मचर्यरताः शान्ता ज्ञानयोगपरायणाः ।
समेत्य ते महात्मानो मुनयो ब्रह्मवादिनः ॥६७
विचक्रिरे बहून्वादान्स्वात्मज्ञानसमाश्रयान् ।

ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, शान्त और सांख्य योग परायण, महात्मा, ब्रह्मवादी मुनियों ने एकसाथ मिलकर, आत्मज्ञान के विषय पर अनेक वादविवाद किये थे ।६७-६७½।

किमस्य जगतो मूलमात्मा चास्माकमेव हि ॥६८
कोऽपि स्यात्सर्वभावानां हेतुरीश्वर एव च ।
इत्येवं मन्यमानानां ध्यानमार्गावलम्बिनाम् ॥
आविरासीन्महादेवी ततो गिरिवरात्मजा ॥६९

इस संसार का मूल क्या है ? हम लोगों की आत्मा । सारे पदार्थों का कारण क्या है ? ईश्वर । इस प्रकार परस्पर विचार करने वाले और गहन चिन्तन में रत, मुनियों के सामने महादेवी पार्वती आविर्भूत हुई ।६८-६९।

कोटिसूर्यप्रतीकाशा ज्वालामालासमावृता ।
स्वभाभिर्निर्मलाभिः सा पूरयन्ती नभस्तलम् ॥७०

वह करोड़ों सूर्य के समान और ज्वालाओं की माला पहने हुए थीं । अपनी स्वच्छ कान्ति से, वह आकाश मण्डल को व्याप्त कर रही थीं ।७०

तामन्वपश्यद्गिरिजाममेयां ज्वालासहस्रान्तरसन्निविष्टाम् ।
प्रणेमुरेतामखिलेशपत्नीं जानन्ति चैतत्परमस्य बीजम् ॥७१
अस्माकमेषा परमस्य पत्नी गतिस्तथात्मा गगनाभिधाना ।
पश्यन्त्यथात्मानमिदं च कृत्स्नं तस्यामथैते मुनयः[1] प्रहृष्टाः ॥७२

किरणसमूह के मध्य बैठी, अपरिमेया पर्वतपुत्री को मुनियों ने देखा और महेश्वर पत्नी को प्रणाम भी किया । उन्होंने यह जाना कि यही इस संसार की मूल कारण है और परमपुरुष की पत्नी गगन नाम से जानी जाती हैं । यही हम लोगों की गति और आत्मा है । तत्पश्चात् उन्होंने अखिल संसार और आत्मा को देवी रूप में देखा और अत्यन्त हर्षित हुए ।७१-७२।

निरीक्षितास्ते परमेशपत्न्या तदन्तरे देवमशेषहेतुम् ।
पश्यन्ति शम्भुं कविमोशितारं रुद्रं बृहन्तं पुरुषं पुराणम् ॥७३

---

१. मुनयश्च विप्रा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमेश्वर-पत्नी का दर्शन प्राप्त करने के बाद, मुनियों ने अशेष संसार के कारण कवि और बृहत् पुराण पुरुष, महेश्वर रुद्र का दर्शन प्राप्त किया ।७३

आलोक्य देवीमथ देवमीशं प्रणेमुरानन्दमवापुरग्र्यम् ।
ज्ञानं तदीशं भगवत्प्रसादादाविर्बभौ जन्मविनाशहेतुः ॥७४

देवी और देव महेश्वर का दर्शन पाकर, मुनियों ने प्रणाम किया और अत्यन्त आनंदित हुए । उस समय भगवान् की कृपा से उन्हें मुक्ति के कारण भूत तत्त्वज्ञान का आविर्भाव हुआ ।७४

इयं या सा जगतो योनिरेका सर्वात्मिका सर्वनियामिका च ।
माहेश्वरी शक्तिरनादिसिद्धा व्योमाभिधाना दिवि राजतीव ॥७५

उन्होंने जाना कि सर्वभूतमयी, सर्वनियन्त्री, अनादिसिद्धा, गगन नाम की माहेश्वरी शक्ति, जो आकाश में विराजमान दिखाई दे रहीं हैं, वही संसार की उत्पत्ति का एकमात्र कारण हैं ।७५

अस्यां महान् परमेष्ठी परस्तान्महेश्वरः शिव एकः स रुद्रः ।
चकार विश्वं परशक्तिनिष्ठं मायामथारुह्य च देवदेवः ॥७६

प्रलय के बाद, देवाधिदेव महान् परमेष्ठी, मंगलकारी, अद्वितीय रुद्र ने इन्हीं (देवी प्रकृति) के द्वारा, माया के संयोग से, परम शक्तिनिष्ठ विश्व का निर्माण किया ।७६

एको देवः सर्वभूतेषु गूढो मायी रुद्रः सकलो निष्कलश्च ।
स एव देवो न च तद्विभिन्नमेतज्ज्ञात्वा ह्यमृतत्वं व्रजन्ति ॥७७

अद्वितीय देव रुद्र, सभी प्राणियों में गुप्त रूप से विद्यमान हैं । मायी रुद्र सम्पूर्ण और असम्पूर्ण हैं और वही देवी स्वरूप हैं । कुछ भी उनसे अलग नहीं । यह ज्ञान प्राप्त कर लेने से जीवन से छुटकारा मिल जाता है ।७७

अन्तर्हितोऽभूद्भगवान्महेशो देव्या तया सह देवाधिदेवः ।
आराधयन्ति स्म तमादिदेवं वनौकसस्ते पुनरेव रुद्रम् ॥७८

देवाधिदेव भगवान् महेश्वर, देवी के साथ अन्तर्ध्यान हो जाने के बाद, वनवासी महर्षि वृन्द, पुनः आदि देव रुद्र की आराधना करने लगे ।७८

एतद्वः कथितं सर्वं देवदेवस्य चेष्टितम् ।
देवदारुवने पूर्वं पुराणे यन्मया श्रुतम् ॥७९

प्राचीन काल में देवाधिदेव महेश्वर ने देवदारु वन में जो कुछ भी किया, उसके विषय में मैंने पुराणों में जो कुछ सुना, वह आप लोगों को बताया ।७९

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यः पठेच्छृणुयान्नित्यं मुच्यते सर्वपातकैः ।
श्रावयेद्वा[1] द्विजाञ्छान्तान्स याति परमां गतिम् ॥८०

जो व्यक्ति प्रतिदिन रुद्र का माहात्म्य पढ़ता था सुनता है, वह सारे पापों से मुक्त होता है और जो व्यक्ति शान्त ब्राह्मणो को (शिव माहात्म्य) सुनाता है, वह श्रेष्ठ गति प्राप्त करता है ।८०

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे देवदारुवनप्रवेशो नाम ऊनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में देवदारुवन प्रवेश नामक उनतालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥३९॥

चत्वारिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

एषा पुण्यतमा देवी देवगन्धर्वसेविता ।
नर्मदा लोकविख्याता तीर्थानामुत्तमा नदी ॥१

सूत बोले—सारे संसार में प्रसिद्ध, तीर्थश्रेष्ठ, देव और गन्धर्वों द्वारा सेवित, लोक-विख्यात नर्मदा नाम की एक श्रेष्ठ नदी है।१

तस्याः शृणुध्वं माहात्म्यं मार्कण्डेयेन भाषितम् ।
युधिष्ठिराय तु शुभं सर्वपापप्रणाशनम् ॥२

मार्कण्डेय मुनि ने, राजा युधिष्ठिर से, सर्वपापहारी नर्मदा नदी का जो माहात्म्य कहा था वह आप लोग सुनें।२

युधिष्ठिर उवाच

श्रुतास्ते विविधा धर्मास्तत्प्रसादान्महामुने ।
माहात्म्यं च प्रयागस्य तीर्थानि विविधानि च ॥३

---

१. श्रावयित्वा द्विजान् भक्तान् प्रयाति परमां गतिमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युधिष्ठिर बोले--मैंने आपकी कृपा से विभिन्न धर्मों, प्रयाग महात्म्य और अनेकों तीर्थों के विषय में सुना है ।३

नर्मदा सर्वतीर्थानां मुख्या हि भवतेरिता ।
तस्यास्त्विदानीं माहात्म्यं वक्तुमर्हसि सत्तम ॥४

परन्तु आपने कहा है-नर्मदा सभी तीर्थों में श्रेष्ठ है। अतः पूजनीय! इस समय नर्मदा के माहात्म्य का वर्णन करें ।४

मार्कण्डेय उवाच

नर्मदा सरितां श्रेष्ठा रुद्रदेहाद्विनिःसृता ।
तारयेत्सर्वभूतानि स्थावराणि[1] चराणि च ॥५

मार्कण्डेय बोले--नदी श्रेष्ठा नर्मदा, रुद्र के देह से निकली हैं। वह इस संसार के चर और अचर सारे प्राणियों का उद्धार कर सकती है ।५

नर्मदायास्तु माहात्म्यं पुराणे यन्मया श्रुतम् ।
इदानीं तत्प्रवक्ष्यामि शृणुष्वैकमनाः[2] शुभम् ॥६

मैंने पुराणों में नर्मदा का माहात्म्य जिस रूप में सुना है इस समय वही बताने जा रहा हूँ, एकाग्र होकर सुनो ।६

पुण्या कनखले गङ्गा कुरुक्षेत्रे सरस्वती ।
ग्रामे वा यदि वारण्ये पुण्या सर्वत्र नर्मदा ॥७

कनखलतीर्थ में गंगा और कुरुक्षेत्र में सरस्वती नदी अत्यन्त पवित्र मानी जाती हैं। किन्तु नर्मदा नदी, गांव या जंगल, सर्वत्र पवित्र होती हैं ।७

त्रिभिः सारस्वतं तोयं सप्ताहाद्यामुनं[3] जलम् ।
सद्यः पुनाति गांगेयं दर्शनादेव नार्मदम् ॥८

सरस्वती नदी का जल, मनुष्य को तीन दिन में पवित्र करता है, यमुना का जल एक सप्ताह में और गंगाजल तुरन्त किन्तु नर्मदा का जल मात्र देख लेने से ही, मनुष्य पवित्र हो जाता है ।८

कलिंगदेशपश्चार्द्धे पर्वतेऽमरकण्टके ।
पुण्या[4] त्रिषु त्रिलोकेषु रमणीया मनोरमा ॥९

कलिंग देश के पश्चिमार्ध और अमरकण्टक नामक पर्वत पर तीनों लोकों को पवित्र करने वाली रमणीया नर्मदा नदी बहती हैं ।९

---

१. स्थापनानि च नर्मदेति पा० । २. शृणु इति साधु । ३. सप्ताहेन तु यामुनमिति पा० । ४. पुण्यासु त्रिषु लोकेष्विति, पुण्या च त्रिषु लोकेषु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदेवासुरगन्धर्वा ऋषयश्च तपोधनाः ।
तपस्तप्त्वा तु राजेन्द्र सिद्धिं तु परमां गताः ॥१०

हे राजेन्द्र ! देवताओं, असुरों, गन्धर्वों और तपोधन ऋषियों ने यहाँ तपस्या करके श्रेष्ठ सिद्धि प्राप्त की है।१०

तत्र स्नात्वा नरो राजन्नियमस्थो जितेन्द्रियः ।
उपोष्य रजनीमेकां कुलानां तारयेच्छतम् ॥११

हे राजन् ! नियमों का पालन करते हुए और इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखकर, नर्मदा में नहाने और एक रात उपवास रखने से, सौ पीढ़ियाँ तर जाती हैं।११

योजनानां शतं साग्रं श्रूयते सरिदुत्तमा ।
विस्तारेण तु राजेन्द्र योजनद्वयमायता ॥१२

हे राजेन्द्र ! कहा जाता है कि नदियों में श्रेष्ठ नर्मदा सौ योजन लम्बी और दो योजन चौड़ी है।१२

षष्टितीर्थसहस्राणि षष्टिकोट्यस्तथैव च ।
पर्वतस्य समन्तात्तु तिष्ठन्त्यमरकण्टके ॥१३

छह हजार से छह करोड़ तीर्थ उस अमरकण्टक पर्वत के चारों तरफ स्थित हैं।१३

ब्रह्मचारी शुचिर्भूत्वा जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।
सर्वाहिंसानिवृत्तस्तु सर्वभूतहिते रतः ॥१४

एवं शुद्धसमाचारो यस्तु प्राणान्परित्यजेत् ।
तस्य पुण्यफलं राजञ्छृणुष्वावहितोऽनघ ॥१५

जो ब्रह्मचारी पवित्र होकर, क्रोध का परित्याग कर, इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखकर, सारे प्राणियों के प्रति हिंसा से पराङ्मुख होकर, समस्त प्राणियों के हित में संलग्न और शुद्धाचारी होकर यहाँ प्राण त्यागता है, हे निष्पाप राजन् ! उनका पुण्य-फल सावधान होकर सुनिए।१४-१५।

शतं वर्षसहस्राणि स्वर्गे मोदति[1] पाण्डव ।
अप्सरोगणसंकीर्णो दिव्यस्त्रीपरिवारितः ॥१६

दिव्यगन्धानुलिप्तश्च दिव्यपुष्पोपशोभितः ।
क्रीडते दिव्यलोके[2] तु विबुधैः सह मोदते ॥१७

---

१. मोदते इति साधु। २. देवलोके तु देवतैरिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे पाण्डव ! वह व्यक्ति अप्सराओं की भीड़ में और स्वर्गीय स्त्रियों से घिरकर, लाखों वर्षों तक स्वर्ग में सुख भोगता है और स्वर्गीय सुगन्धि का लेप लगाकर तथा अलौकिक पुष्पों से सुशोभित होकर स्वर्ग में देवताओं के साथ आह्लादित होता है ।१६–१७।

ततः स्वर्गात्परिभ्रष्टो राजा भवति धार्मिकः ।
गृहं तु लभतेऽसौ वै नानारत्नसमन्वितम् ॥१८
स्तम्भैर्मणिमयैर्दिव्यैर्वज्रवैदूर्यभूषितम् ।
आलेख्यवाहनैः शुभ्रैर्दासीशतसमन्वितम्[1] ॥१९

तत्पश्चात् स्वर्ग से च्युत होकर, धर्मपरायण राजा बनता है । तथा विभिन्न प्रकार के रत्नजटित, मणिखचित खम्भों वाले, नीलकान्तादिमणियों से सुशोभित, सुन्दर चित्रों और वाहनों वाले, सैकड़ों दासियों वाले घर में निवास करता ।१८-१९।

राजराजेश्वरः श्रीमान्सर्वस्त्रीजनवल्लभः ।
जीवेद्वर्षशतं साग्रं तत्र भोगसमन्वितः ॥२०

वह व्यक्ति, सभी स्त्रियों का प्रिय और राजराजेश्वर होकर, सारे भोगों का आनन्द लेता हुआ, सौ वर्षों तक जीता है ।२०

अग्निप्रवेशेऽथ[2] जले वाथवानशने कृते ।
अनिवर्त्तिका[3] गतिस्तस्य पवनस्याम्बरे यथा ॥२१

उस तीर्थ में अग्नि या जल में प्रवेश करने से अथवा अनशन करने से, जैसे वायु आकाश में मिल जाती है, उसी प्रकार उसे अनिवर्तिका गति (अर्थात् सदा के लिए मुक्ति) प्राप्त हो जाती है।२१

पश्चिमे पर्वततटे सर्वपापविनाशनः ।
ह्रदो जलेश्वरो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ॥२२
तत्र पिण्डप्रदानेन सन्ध्योपासनकर्मणा ।
दशवर्षसहस्राणि तर्पिताः स्युर्न संशयः ॥२३

उस पर्वत के पश्चिम दिशा में, त्रैलोक्य विख्यात और सर्वपापनाशक, जलेश्वर नाम का एक सरोवर है । वहाँ सन्ध्योपासना और पिण्डदान करने से, दस हजार वर्षों के पितर तर जाते हैं ।२२-२३ ।

---

१. दासीदाससमन्वितमिति पा० । २. अथ वह्निप्रवेशे तु कुले वानाशके कृते इति पा० । आशो भोजनमेव आशाकः, न आशाकः अना शकस्तस्मिन् प्रायोपवेशनेइत्यर्थः । ३. अनिवर्त्तिका अपुनरावर्त्तिनीत्यर्थः ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिणे [नर्मदाकूले कपिलाख्या महानदी ।
सरलार्जुनसञ्छन्ना नातिदूरे व्यवस्थिता ॥२४

नर्मदा के दक्षिणी तट की ओर, थोड़ी दूर सीधी और अर्जुन वृक्ष से ढकी हुई, कपिला नामक एक महानदी है ।२४

सा तु पुण्या महाभागा त्रिषु लोकेषु विश्रुता ।
तत्र कोटिशतं साग्रं तीर्थानान्तु युधिष्ठिर ॥२५

वह अत्यन्त पवित्र, सौभाग्यशालिनी और तीनों लोकों में विख्यात है। हे युधिष्ठिर ! उस नदी में सौ करोड़ से भी अधिक तीर्थ विद्यमान हैं ।२५

तस्मिंस्तीर्थे तु ये वृक्षाः पतिताः कालपर्ययात् ।
नर्मदातोयसंस्पृष्टास्ते यान्ति परमां गतिम् ॥२६

समय बीत जाने के बाद, जो वृक्ष उस तीर्थ में गिर जाते हैं, वे भी नर्मदा के जल का स्पर्श पाकर, श्रेष्ठ गति प्राप्त करते है ।२६

द्वितीया तु महाभागा विशल्यकरणी शुभा ।
तत्र तीर्थे नरः स्नात्वा विशल्यो भवति क्षणात् ॥२७

हे सौभाग्यशाली ! विशल्यकरणी नाम की जो दूसरी पवित्र नदी हैं, उसमें स्नान करने से मनुष्य को, तुरन्त सारे दुःखों से छुटकारा मिल जाता है ।२७

कपिला च विशल्या च श्रूयेते सरिदुत्तमे[1] ।
ईश्वरेण पुरा प्रोक्ते लोकानां हितकाम्यया ॥२८

प्राचीन काल में, मनुष्य के हित के लिए, ईश्वर ने कहा था कि, कपिला और विशल्या दोनों नदियों में श्रेष्ठ हैं ।२८

अनाशकन्तु यः कुर्यात्तस्मिंस्तीर्थे नराधिप ।
सर्वपापविशुद्धात्मा रुद्रलोके स गच्छति ॥२९

हे नराधिप ! उस तीर्थ में, जो व्यक्ति अनाशक व्रत करता है, वह सारे पापों से छुटकारा पाकर, रुद्रलोक में जाता है ।२९

तत्र स्नात्वा नरो राजन्नश्वमेधफलं लभेत् ।
ये वसन्त्युत्तरे कूले रुद्रलोके वसन्ति ते ॥३०

हे राजन् ! उस तीर्थ में स्नान करने से, अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है और जो लोग उस तीर्थ के उत्तरी तट पर निवास करते हैं, वे रुद्रलोक में ही रहते हैं ।३०

---

१. राजसत्तमेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरस्वत्याञ्च गंगायां नर्मदायां युधिष्ठिर ।
समं स्नानञ्च दानं च यथा मे शंकरोऽब्रवीत् ॥३१

सरस्वती, गंगा और नर्मदा में स्नान तथा दान, बराबर फल प्रदान करता है। यह महादेव ने मुझे बताया था ।३१

परित्यजति यः प्राणान्पर्वतेऽमरकण्टके ।
वर्षकोटिशतं साग्रं रुद्रलोके महीयते ॥३२

जो व्यक्ति अमरकण्टक में प्राण त्यागता है, वह सौ करोड़ वर्षों तक रुद्रलोक में पूजित होता है ।३२

नर्मदायां जलं पुण्यं फेनोर्मि सफलीकृतम्[1] ।
पवित्रं शिरसा धृत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३३

फेन और लहरों से युक्त, नर्मदा का पवित्र जल माथे पर लगाने से, सारे पापों से मुक्ति मिलती है ।३३

नर्मदा सर्वतः पुण्या ब्रह्महत्यापहारिणी ।
अहोरात्रोपवासेन मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥३४

नर्मदा सभी जगह पवित्र और ब्रह्महत्या के पाप का नाश करने वाली है। उस तीर्थ में एक दिन और रात, उपवास रहने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है ।३४

जालेश्वरं तीर्थवरं सर्वपापप्रणाशनम् ।
तत्र गत्वा नियमवान्सर्वकामांल्लभेन्नरः ॥३५

जालेश्वर नाम का तीर्थश्रेष्ठ, सर्वपापनाशक है। नियमों का पालन करते हुए, उस तीर्थ में जाने से, मनुष्य की सारी कामनाएँ पूरी हो जाती हैं ।३५

चन्द्रसूर्योपरागे च गत्वा ह्यमरकण्टकम् ।
अश्वमेधाद्दशगुणं पुण्यमाप्नोति मानवः ॥३६

चन्द्र और सूर्य ग्रहण में अमरकण्टक पर्वत पर जाने से, अश्वमेध से दस गुना अधिक पुण्य मिलता है ।३६

एष पुण्यो गिरिवरो देवगन्धर्वसेवितः ।
नानाद्रुमलताकीर्णो नानापुष्पोपशोभितः ॥३७

परम पवित्र, यह पर्वतराज, देवों और गन्धर्वों से सेवित है, तरह-२ के वृक्षों और लताओं से व्याप्त और विभिन्न प्रकार के फूलों से सुशोभित है। ३७

---

१. समलंकृतमिति, बहुलंकृतमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्र सन्निहितो राजन्देव्या सह महेश्वरः ।
ब्रह्मा विष्णुस्तथा रुद्रो विद्याधरगणैः सह ॥३८

हे राजन् ! ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और विद्याधर सहित. देव महादेव, देवी के साथ उस पर्वत पर विराजते हैं ।३८

प्रदक्षिणं तु यः कुर्यात्पर्वतेऽमरकण्टके[1] ।
पौण्डरीकस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥३९

जो मनुष्य, अमरकण्टक पर्वत पर उनकी प्रदक्षिणा करता है, उसे पौण्डरीक नामक यज्ञ का फल मिलता है ।३९

कावेरी नाम विख्याता[2] नदी कल्मषनाशिनी ।
तत्र स्नात्वा महादेवमर्च्चयेद्वृषभध्वजम् ॥
संगमे नर्मदायास्तु रुद्रलोके महीयते ॥४०

कावेरी नाम से प्रसिद्ध, जो पापनाशिनी नदी है, उसमें नहाकर, महादेव वृषध्वज की पूजा करनी चाहिए । कावेरी और नर्मदा के संगम पर स्नान करने से, रुद्रलोक में वास होता है ।४०

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे मार्कण्डेययुधिष्ठिरसंवादे
नर्मदामाहात्म्यं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, मार्कण्डेय-युधिष्ठिर संवाद प्रसङ्ग में नर्मदामाहात्म्य नामक चालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४०॥

एकचत्वारिंशोऽध्यायः

मार्कण्डेय उवाच

नर्मदा सरितां श्रेष्ठा सर्वपापविनाशिनी ।
मुनिभिः कथिता पूर्वमीश्वरेण स्वयम्भुना ॥१

---

१. नागञ्चामरकङ्कटमिति पा० । २. विपुलेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्कण्डेय बोले—नर्मदा, नदियों में श्रेष्ठ और सर्वपापनाशिनी है, मुनियों और स्वयम्भु शिव ने पहले ही यह बात बता दी है ।१

मुनिभिः संस्तुता ह्येषा नर्मदा प्रवरा नदी ।
रुद्रगात्राद्विनिष्क्रान्ता लोकानां हितकाम्यया ॥२

मुनियों द्वारा स्तुत्य नर्मदा नामक यह श्रेष्ठ नदी, समस्त प्राणियों के हित के लिए रुद्र के शरीर से निकली है ।२½

सर्वपापहरा नित्यं सर्वदेवनमस्कृता ।
संस्तुता देवगन्धर्वैरप्सरोभिस्तथैव च ॥३

वह नर्मदा सदैव सर्वपापहारिणी, सभी देवताओं के द्वारा पूजनीय और गन्धर्व-अप्सराओं के द्वारा प्रशंसित है ।३

उत्तरे चैव कूले च तीर्थे त्रैलोक्यविश्रुते ।
नाम्ना भद्रेश्वरं पुण्यं सर्वपापहरं शुभम् ॥४

नर्मदा के उत्तरी तट पर तीनों लोकों में प्रसिद्ध तीर्थ स्थान में, सारे पापों को दूर करने वाला, भद्रेश्वर नामक, मंगलकारक, पवित्र तीर्थ है ।४

तत्र स्नात्वा नरो राजन्दैवतैः सह[1] मोदते ।
ततो गच्छेत राजेन्द्र विमलेश्वरमुत्तमम्[2] ॥५

इस तीर्थ में स्नान करने से, हे राजन् ! मनुष्य देवताओं के साथ सुख भोगता है । हे राजेन्द्र ! वहाँ से विमलेश्वर नामक तीर्थ में जाना चाहिए ।५

तत्र स्नात्वा नरो राजन्गोसहस्रफलं लभेत् ।
ततोऽङ्गारकेश्वरं गच्छेन्नियतो नियतायनः ॥६

राजन् ! वहाँ स्नान करने से मनुष्य को हजारों गोदान करने के बराबर फल मिलता है । तत्पश्चात् नियमों का पालन और सीमित आहार करते हुए, अंगारकेश्वर नामक तीर्थ में जाना चाहिए ।६

सर्वपापविशुद्धात्मा रुद्रलोके महीयते ।
ततो गच्छेत राजेन्द्र केदारं नाम पुण्यदम् ॥७

इससे आत्मा सारे पापों से मुक्त हो जाती है और रुद्रलोक में वास होता है । हे राजन् ! वहाँ से केदार नामक पुण्यदायक तीर्थ में जाना चाहिए ।७

तत्र स्नात्वोदकं पीत्वा सर्वान्कामानवाप्नुयात् ।
निष्फलेशन्ततो गच्छेत्सर्वपापविनाशनम् ॥८

---

१. रुद्रलोके महीयते इति पा० । २. तीर्थमाम्रातकेश्वरमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ स्नान करके, जल पीने से, सारी कामनाओं की पूर्ति होती है। वहाँ से सर्वपापनाशक निष्फलेश नामक तीर्थ में जाना चाहिए।८

तत्र स्नात्वा महाराज रुद्रलोके महीयते।
ततो गच्छेत राजेन्द्र बाणतीर्थमनुत्तमम् ॥९

हे महाराज! इस तीर्थ में स्नान करने से, रुद्रलोक में सुख भोगने को मिलता है। हे राजेन्द्र! वहाँ से परमोत्तम बाण तीर्थ में जाना चाहिए।९

तत्र प्राणान्परित्यज्य रुद्रलोकमवाप्नुयात्।
ततः पुष्करिणीं गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ॥१०

वहाँ प्राण त्यागने से रुद्रलोक की प्राप्ति होती है। उसके बाद, पुष्करिणी तीर्थ में जाकर, स्नान करना चाहिए।१०

तत्र स्नात्वा नरो राजन् सिंहासनपतिर्भवेत्।
शक्रतीर्थं ततो गच्छेत्कूले चैव तु दक्षिणे ॥११

हे राजन्! पुष्करिणी तीर्थ में स्नान करने से, मनुष्य राजा होता है। तत्पश्चात् नर्मदा के दक्षिणी तट पर स्थित शक्रतीर्थ नामक पवित्र स्थान में जाना चाहिए।११

स्नातमात्रो नरस्तत्र इन्द्रस्यार्द्धासनं लभेत्।
ततो गच्छेत राजेन्द्र शूलभेद इति श्रुतिः ॥१२

इसी तीर्थ में केवल स्नान करने से ही, मनुष्य इन्द्र के आधे आसन पर बैठने का अधिकारी हो जाता है। हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् शूलभेद नामक प्रसिद्ध तीर्थ में जाना चाहिए।१२

तत्र[1] स्नात्वा च पीत्वा च गोसहस्रफलं लभेत्।
उपोष्य रजनीमेकां स्नानं कृत्वा यथाविधि ॥१३
आराधयेन्महायोगं देवदेवं[2] नरोऽमलः।
गोसहस्रफलं प्राप्य विष्णुलोकं स गच्छति ॥१४

वहाँ नहाकर, जल पीने से, हजारों गोदान का फल मिलता है। जो व्यक्ति वहाँ एकरात्रि उपवास रहकर, विधिपूर्वक स्नान करके, शुद्ध होकर, महायोगी महादेव की आराधना करता है, वह हजारों गोदान का फल प्राप्त करके विष्णुलोक में जाता है।१३-१४।

ऋषितीर्थं ततो गत्वा सर्वपापहरं नृणाम्।
स्नातमात्रो नरस्तत्र शिवलोके महीयते ॥१५

---

१. तत्र स्नात्वार्चयेद्देवं गोसहस्रफलं लभेदिति पा०। २. दैवं नारायणं हरिमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् मनुष्यों के सभी पापों को दूर करने वाले, ऋषितीर्थ में जाकर, केवल स्थान करने से ही, शिवलोक में निवास का सुख मिलता है।१५

नारदस्य तु तत्रैव तीर्थं परमशोभनम् ।
स्नातमात्रो नरस्तत्र गोसहस्रफलं भवेत् ॥१६

वहीं अत्यन्त सुशोभित नारद तीर्थ भी है। वहाँ केवल स्नान करने से ही मनुष्य को हजारों गोदान का फल मिलता है।१६

यत्र तप्तं तपः पूर्वं नारदेन सुर्षिणा ।
प्रीतस्तस्य ददौ योगं देवदेवो महेश्वरः ॥१७

प्राचीन काल में देवर्षि नारद ने यहाँ कठोर तपस्या की थी। इससे देवाधिदेव महेश्वर ने प्रसन्न होकर उन्हें योगदान दिया था।१७

ब्रह्मणा निर्मितं लिंगं ब्रह्मेश्वरमिति श्रुतम् ।
यत्र स्नात्वा नरो राजन्ब्रह्मलोके महीयते ॥१८

वहाँ ब्रह्मा द्वारा निर्मित, ब्रह्मेश्वर नामक, प्रसिद्ध शिवलिंग है। हे राजन्! उस तीर्थ में स्नान करके मनुष्य ब्रह्मलोक में पूजित होता है।१८

ऋणतीर्थं ततो गच्छेदृणान्मुच्येन्नरो ध्रुवम् ।
वटेश्वरं[1] ततो गच्छेत्पर्याप्तं जन्मनः फलम् ॥१९

उसके बाद ऋणतीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ जाने से मनुष्य, ऋण से निश्चित रूप से छुटकारा पा जाता है। तत्पश्चात् वटेश्वर तीर्थ में जाने से जन्म सार्थक हो जाता है।१९

भीमेश्वरं ततो गच्छेत्सर्वव्याधिविनाशनम् ,
स्नातमात्रो नरस्तत्र सर्वदुःखैः प्रमुच्यते ॥२०

उसके बाद सारी पीड़ाओं का नाश करने वाले, भीमेश्वर तीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ केवल स्नान करने से, मनुष्य सभी दुःखों से छुटकारा पाता है।२०

ततो गच्छेत राजेन्द्र पिंगलेश्वरमुत्तमम् ।
अहोरात्रोपवासेन त्रिरात्रफलमाप्नुयात् ॥२१

हे राजेन्द्र! पिंगलेश्वर नामक उत्तम तीर्थ में जाने के बाद, वहाँ एक दिन और रात उपवास करने से, तीन रात्रियों के उपवास का फल मिलता है।२१

तस्मिंस्तीर्थे तु राजेन्द्र कपिलां यः प्रयच्छति ।
यावन्ति तस्या रोमाणि तत्प्रसूतिकुलेषु च ॥२२
तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ।

---

१. ततो गच्छेत राजेन्द्र संप्राप्तमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे राजेन्द्र ! उस तीर्थ में, यदि कोई व्यक्ति, कपिला गाय का दान करता है, तो कपिला और उसकी सन्तानों के शरीर में जितने रोयें हैं, उतने हजार वर्षों तक वह रुद्रलोक में निवास करता है ।२२½।

यस्तु प्राणपरित्यागं कुर्यात्तत्र नराधिप ॥२३
अक्षयं मोदते कालं यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।

हे नराधिप ! जो वहां प्राण त्यागता है, वह सूर्य और चन्द्रमा की उपस्थिति पर्यन्त, अक्षय सुख भोगता है ।२३½।

नर्मदातटमाश्रित्य ये च तिष्ठन्ति मानवाः ॥२४
ते मृताः स्वर्गमायान्ति सन्तः सुकृतिनो यथा ।

जो लोग नर्मदा के किनारे निवास करते हैं वे मृत्यु के बाद, अन्य पुण्यकर्मा लोगों की भाँति, स्वर्ग जाते हैं ।२४½।

ततो दीप्तेश्वरं गच्छेद्व्यासतीर्थं तपोवनम् ॥२५
निर्वर्त्तिता पुरा तत्र व्यासभीता महानदी ।
हुंकारिता तु व्यासेन तत्क्षणेन[1] ततो गता ॥२६

तदनन्तर दीप्तेश्वर नामक, व्यास तीर्थ तपोवन में जाना चाहिए । वहाँ महानदी व्यास से डरकर वापस लौट गयी थीं और उनके हूँकार से, उस स्थान से तत्क्षण चली गयीं थी ।२५-२६।

प्रदक्षिणन्तु यः कुर्यात्तस्मिंस्तीर्थे युधिष्ठिर ।
प्रीतस्तत्र भवेद्व्यासो वाञ्छितं लभते फलम् ॥२७

हे युधिष्ठिर ! जो व्यक्ति, उस तीर्थ में प्रदक्षिणा करता है । व्यास उसके प्रति प्रसन्न होते हैं और वह इच्छित फल प्राप्त करता है ।२७

ततो गच्छेत राजेन्द्र इक्षुनद्यास्तु[2] संगमम् ।
त्रैलोक्यविश्रुतं पुण्यं तत्र सन्निहितः शिवः ॥२८

हे राजेन्द्र ! इसके बाद इक्षु नदी के, त्रैलोक्य-विख्यात और पवित्र संगम पर जाना चाहिए वहाँ शिव विद्यमान हैं ।२८

तत्र स्नात्वा नरो राजन् गाणपत्यमवाप्नुयात् ।
ऋणतीर्थं ततो गच्छेत्स ऋणान्मुच्यते ध्रुवम् ॥२९

---

१. दक्षिणेनेति पा० । २. रुद्रलोके महीयते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे राजन् ! वहाँ स्नान करने से मनुष्य को गणनायकत्व प्राप्त होता है। तत्पचात् ऋणतीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ जाने से निश्चय ही ऋण से मुक्ति मिलती है। २९

आजन्मनः कृतं पापं स्नातस्तत्र व्यपोहति।
तत्र देवाः सगन्धर्वा भर्गात्मजमनुत्तमम् ॥३०
उपासते महात्मानं स्कन्दं शक्तिधरं प्रभुम्।

वहाँ स्नान करने से, जीवन भर के पाप, दूर हो जाते हैं वहाँ देवता, गन्धर्वों के साथ, महादेव के पुत्र, शक्तिशाली, अत्युत्तम, प्रभु, महात्मा स्कन्द की उपासना करते हैं।३०½।

ततो गच्छेदांगिरसं स्नानं तत्र समाचरेत् ॥३१
गोसहस्रफलं[1] प्राप्य रुद्रलोकं स गच्छति।

तन्दनन्तर आंगिरस तीर्थ में जाकर, वहाँ स्नान करना चाहिए। ऐसा करने से; हजारों गोदान का फल प्राप्त करके, रुद्रलोक में जाने को मिलता है।३१½।

आङ्गिरा यत्र देवेशं ब्रह्मपुत्रो वृषध्वजम् ॥३२
तपसाराध्य विश्वेशं लब्धवान्योगमुत्तमम्।

वहाँ ब्रह्मा के पुत्र अंगिरा ने तपस्या के द्वारा देवाधिदेव शंकर की तप द्वारा आराधना करके, श्रेष्ठ योग प्राप्त किया था।३२½।

कुशतीर्थं ततो गच्छेत्सर्वपापप्रणाशनम् ॥३३
तत्र स्नानं प्रकुर्वीत अश्वमेधफलं लभेत्।

तत्पश्चात् सर्वपापनाशक कुशतीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ स्नान करने से, अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है।३३½।

कोटितीर्थं ततो गच्छेत्सर्वपापप्रणाशनम् ॥३४
आजन्मनः कृतं पापं स्नातस्तत्र व्यपोहति।

वहां से, सारे पापों का नाश करने वाले कोटितीर्थ में जाना चाहिए। वहां स्नान करने से, जीवन भर के पाप दूर हो जाते हैं।३४½

चन्द्रभागां ततो गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ॥३५
स्नातमात्रो नरस्तत्र सोमलोके महीयते।

उनके बाद चन्द्रभागा तीर्थ में जाकर, वहाँ स्नान करना चाहिए। वहाँ केवल स्नान कर लेने से ही मनुष्य, चन्द्रलोक में वास करता है।३५-½

१. तत्र स्नात्वा नरो राज्यं लभते नात्र संशय इति, लभेत् पुण्यं स चोत्तम इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर्मदादक्षिणे कूले सङ्गमेश्वरमुत्तमम् ॥३६
तत्र स्नात्वा नरो राजन्सर्वयज्ञफलं लभेत् ।

नर्मदा के दक्षिणी तट पर, संगमेश्वर नामक श्रेष्ठ तीर्थ है। हे राजन्! वहाँ नहाने से मनुष्य को सारे यज्ञों का फल मिल जाता है ।३६½

नर्मदाया उदक्कूले तीर्थं परमशोभनम् ॥३७
आदित्यायतनं रम्यमीश्वरेण तु भाषितम् ।

ईश्वर ने कहा है कि, नर्मदा के उत्तरी तट पर, अत्यन्त दीर्शनीय आदित्यायतन नामक एक रमणीय तीर्थ है ।३७½।

तत्र स्नात्वा तु राजेन्द्र दत्त्वा दानन्तु शक्तितः ॥३८
तस्य तीर्थप्रभावेण लभते चाक्षयम्फलम् ।

हे राजेन्द्र! उस तीर्थ में स्नान करने और सामर्थ्यानुसार दान-देने से, उस तीर्थ के प्रभाव से, अक्षय फल मिलता है ।३८½।

दरिद्रा व्याधिता ये तु ये तु दुष्कृतकर्मिणः ॥३९
मुच्यन्ते सर्वपापेभ्यः सूर्यलोकं प्रयान्ति च ।

जो लोग, दरिद्र, रोग से पीड़ित और पापी होते हैं, वे इस पुण्यफल से, सारे पापों से मुक्त होकर, सूर्यलोक में जाते है ।३९½।

मातृतीर्थं[1] ततो गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ॥४०
स्नातमात्रो नरस्तत्र स्वर्गलोकमवाप्नुयात् ।

तत्पश्चात् मातृ तीर्थ में जाकर, वहाँ स्नान करना चाहिए। वहाँ केवल स्नान करने से ही, मनुष्य को स्वर्ग की प्राप्ति होती है ।४०½।

ततः पश्चिमतो गच्छेन्मरुताशयमुत्तमम् ॥४१
तत्र स्नात्वा तु राजेन्द्र शुचिर्भूत्वा समाहितः ।
काञ्चनञ्च[2] यतेर्द्यद्यथाविभवविस्तरम् ॥४२
पुष्पकेण विमानेन वायुलोकं स गच्छति ।

नर्मदा के पश्चिमी भाग पर मरुदालयनामक, उत्तम तीर्थ है। हे राजेन्द्र! वहाँ नहाकर, शुद्ध और एकाग्र चित्त होकर, सन्यासी को, सामर्थ्यानुसार सोना दान करने से, वह व्यक्ति पुष्पक विमाग से वायुलोक में जाता है ।४१-४२½।

---

१. मरुदालयमिति पा० । २. द्विजाय काञ्चनं दद्यादिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो गच्छेत्तु राजेन्द्र अहल्यातीर्थमुत्तमम् ।
स्नानमात्रादप्सरोभिर्मोदते कालमुत्तम्[1] ॥४३

हे राजेन्द्र ! वहाँ से उत्तम अहल्या तीर्थ में जाना चाहिए । वहाँ स्नान मात्र से ही, दीर्घकाल तक, अप्सराओं के साथ सुख भोगने को मिलता है ।४३

चेत्रमासे तु सम्प्राप्ते शुक्लपक्षे त्रयोदशी ।
कामदेवदिने तस्मिन्नहल्यां पूजयेत्ततः ॥४४

यत्र तत्र समुत्पन्नो नरोऽत्यर्थंप्रियो[2] भवेत् ।
स्त्रीबल्लभो भवेच्छ्रीमान्कामदेव इवापरः ॥४५

चैत्र मास में, शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि, अर्थात् उस कामदेव तिथि को, जो व्यक्ति उस तीर्थ में अहिल्या की पूजा करता है । वह चाहें जहां कहीं भी जन्मा हो, फिर भी प्रिय होता है और दूसरे कामदेव की तरह सुन्दर तथा स्त्रियों को प्रिय होता है ।४४-४५।

सरिद्वरां[3] समासाद्य तीर्थं शक्रस्य विश्रुतम् ।
स्नातमात्रो नरस्तत्र गोसहस्रफलं लभेत् ॥४६

शक्र तीर्थ नाम से प्रख्यात, नदी-श्रेष्ठ में जाकर, केवल स्नान करने से ही मनुष्य को, हजारों गोदान का फल मिलता है ।४६

सोमतीर्थं ततो गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ।
स्नातमात्रो नरस्तत्र सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥४७

तत्पश्चात् सोमतीर्थ में जाकर, वहाँ स्नान करना चाहिए । वहाँ स्नान मात्र से ही मनुष्य, सारे पापों से छुटकारा पा जाता है ।४७

सोमग्रहे तु राजेन्द्र पापक्षयकरं भवेत् ।
त्रैलोक्यविश्रुतं राजन्सोमतीर्थं महाफलम् ॥४८

हे राजेन्द्र ! चन्द्रग्रहण के समय वहाँ (सोमतीर्थ में) स्नान करने से सारे पाप दूर होते हैं । हे राजन् ! तीनों लोकों में प्रसिद्ध सोमतीर्थ, महान् फल प्रदायक है ।४८

यस्तु चान्द्रायणङ्कुर्यात्तत्र तीर्थे समाहितः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा सोमलोकं स गच्छति ॥४९

जो व्यक्ति, उस तीर्थ में, एकाग्र चित्त से चान्द्रायण व्रत करता है, वह सारे पापों से मुक्त होकर, चन्द्रलोक में जाता है ।४९

---

१. कालमक्षममिति पा० । २. वरस्तत्र धियो भवेदिति, वरस्तत्र प्रियो भवेदिति पा० । ३. अयोध्यान्तु इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निप्रवेशं यः कुर्यात्सोमतीर्थे नराधिप ।
जले चानशनं वापि नासौ मर्त्यो हि जायते ॥५०

हे नराधिप ! जो व्यक्ति सोमतीर्थ में, अग्नि प्रवेश, जल प्रवेश या अनशन करता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता ।५०

स्तम्भतीर्थं[1] ततो गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ।
स्नातमात्रो नरस्तत्र सोमलोके महीयते ॥५१

तत्पश्चात् स्तम्भतीर्थ में जाकर, वहाँ स्नान करना चाहिए । वहाँ स्नान करने से मनुष्य, चन्द्रलोक में वास करता है ।५१

ततो गच्छेत राजेन्द्र विष्णुतीर्थमनुत्तमम् ।
योधीपुरमिति[2] ख्यातं विष्णुस्थानमनुत्तमम् ॥५२

हे राजेन्द्र ! तदनन्तर अत्यन्त उत्कृष्ट विष्णुतीर्थ में जाना जाना चाहिए । वह विष्णु का अत्यन्त श्रेष्ठ स्थान है और योधीपुर नाम से जाना जाता है ।५२

असुरा योधितास्तत्र वासुदेवेन कोटिशः ।
तत्र तीर्थं समुत्पन्नं विष्णुश्रीको भवेदिह ॥५३
अहोरात्रोपवासेन ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।

वहाँ वासुदेव ने करोड़ों असुरों के साथ युद्ध किया था । इसलिए वह तीर्थ स्नान हो गया । वहाँ जाने से मनुष्य विष्णु के समान लक्ष्मीवान् होता है और एक दिन-रात, यहाँ उपवास करने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति पाता है ।५३½।

नर्मदादक्षिणे कूले तीर्थं परमशोभनम् ॥५४
कामतीर्थमिति ख्यातं यत्र कामोऽर्चयद्धरिम् ।
तस्मिंस्तीर्थे नरः स्नात्वा उपवासपरायणः ॥५५
कुसुमायुधरूपेण रुद्रलोके महीयते ।

नर्मदा के दक्षिणी तट पर कामतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध एक अत्यन्त शोभनीय तीर्थ है । यहाँ कामदेव ने विष्णु की पूजा की थी । यहाँ मनुष्य उपवास रहकर, स्नान करता है तो वह रुद्र लोक में पूजित होता है ।५५½।

ततो गच्छेत राजेन्द्र ब्रह्मतीर्थमनुत्तमम् ॥५६
उमाहकमिति[3] ख्यातं तत्र सन्तर्पयेत्पितॄन् ।
पौर्णमास्याममावास्यां श्राद्धङ्कुर्याद्यथाविधि ॥५७

---

१. शुम्मतीर्थमिति पा० । २. योधनीपुरमाख्यातमिति, योधनापुरमाख्यातमिति पा० । ३. अमोघमिति विख्यातमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे राजेन्द्र ! उसके बाद उमाहक नाम से विख्यात, अत्यन्त उत्कृष्ट ब्रह्मतीर्थ में जाना चाहिए । वहां पितरों का तर्पण करना चाहिए और पूर्णिमा तथा अमावस्या के दिन, विधानानुसार श्राद्ध करना चाहिए ।५६-५७।

गजरूपा शिला तत्र तोयमध्ये व्यवस्थिता ।
तस्मिंस्तु दापयेत्पिण्डान्वैशाखे[1] तु समाहितः ॥५८

उस तीर्थ में, जल के अन्दर हाथी के आकार की एक शिला है । वैशाख के महीने में एकाग्र चित्त से, उसमें पिण्डदान करना चाहिए ।५८

स्नात्वा समाहितमना दम्भमात्सर्यवर्जितः ।
तृप्यन्ति पितरस्तस्य यावत्तिष्ठति मेदिनी ॥५९

अहंकार और द्वेष का परित्याग करके, शुद्ध मन से स्नान करने पर, जब तक यह पृथिवी रहेगी, तब तक उस व्यक्ति के पितर सन्तुष्ट रहेंगे ।५९

विश्वेश्वरं ततो गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ।
स्नातमात्रो नरस्तत्र गाणपत्यपदं लभेत् ॥६०

तत्पश्चात् विश्वेश्वर तीर्थ में जाकर स्नान करना चाहिए । वहा स्नान करने से, मनुष्य को गणाधीश पद की प्राप्ति होती है ।६०

ततो गच्छेत राजेन्द्र लिङ्गो[2] यत्र जनार्दनः ।
तत्र स्नात्वा नरो भक्त्या विष्णुलोके महीयते ॥६१

हे राजेन्द्र ! उसके बाद उस स्थान में जाना चाहिए जहाँ विष्णु लिंगरूप में विद्यमान है । वहाँ भक्तिपूर्वक स्नान करने से, मनुष्य का वास विष्णुलोक में होता है ।६१

यत्र नारायणो देवो मुनीनां भावितात्मनाम् ।
स्वात्मानं दर्शयामास लिंगं तत्परमं पदम् ॥६२

यहाँ भगवान् नारायण ने, संयतात्मा मुनियों को, उस श्रेष्ठ पद लिंगरूप में, अपना स्वरूप दिखाया था ।६२

अकोल्लन्तु ततो गच्छेत्सर्वपापविनाशनम् ।
स्नानं दानञ्च तत्रैव ब्राह्मणानाञ्च भोजनम् ॥६३
पिण्डप्रदानञ्च कृतं प्रेत्यानन्तफलप्रदम् ।
त्रियम्बकेन तोयेन यश्चरुं श्रपयेद्द्विजः ॥६४
अकोल्लमूले दद्याच्च पिण्डांश्चैव यथाविधि ।
तारिताः पितरस्तेन तृप्यन्त्याचन्द्रतारकम् ॥६५

---

१. वैशाख्यान्तु विशेषतः इति पा० । २. लिङ्गमस्यास्तीति लिङ्गः लिङ्गरूपीत्यर्थः । अर्शआदित्वादच् लिङ्गे इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् सर्वपापनाशक अकोल्ल नामक तीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ स्नान, दान, ब्राह्मणभोजन और पितरों को पिण्डदान करने से, प्रभूत फल प्राप्त होता है। जो व्यक्ति जल से चरु पकाकर "त्र्यम्बक" मन्त्र से चरु का हवन और अकोल मूल में विधानानुसार पिण्डदान करता है, उसके पितर, उसी के द्वारा तर जाते हैं और जब तक चाँद-तारे विद्यमान रहेंगे, तब तक वे तृप्त रहेंगे।६३-६५।

ततो गच्छेत राजेन्द्र तापसेश्वरमुत्तमम्।
तत्र स्नात्वा तु राजेन्द्र प्राप्नुयात्तपसः फलम् ॥६६

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् अत्युत्तम तापसेश्वर नामक तीर्थ में जाना चाहिए वहाँ स्नान करने से, हे राजेन्द्र, तपस्या का फल मिलता है।६६

शुक्लतीर्थं ततो गच्छेत्सर्वपापविनाशनम्।
नास्ति तेन समन्तीर्थं नर्मदायां युधिष्ठिर ॥६७

तदनन्तर सारे पापों का अन्त करने वाले, शुक्लतीर्थ में जाना चाहिए। हे युधिष्ठिर! नर्मदा में शुक्लतीर्थ के बराबर दूसरा तीर्थ नहीं है।६७

दर्शनात्स्पर्शनात्तस्य स्नानाद्दानात्तपो जपात्।
होमाच्चैवोपवासाच्च शुक्लतीर्थे[1] महत्फलम् ॥६८

शुक्लतीर्थ का दर्शन, स्पर्श और वहाँ स्नान, दान, तपस्या, जप, हवन या उपवास करने से महान् फल की प्राप्ति होती है।६८

योजनन्तत्स्मृतं क्षेत्रं देवगन्धर्वसेवितम्।
शुक्लतीर्थमिति ख्यातं सर्वपापविनाशनम् ॥६९

देवता और गन्धर्वों द्वारा पूजित, शुक्लतीर्थ के नाम के प्रसिद्ध, सर्वपापनाशक, वह तीर्थ एक योजन तक फैला हुआ है।६९

पादपाग्रेण दृष्टेन ब्रह्महत्यां व्यपोहति।
देव्या सह सदा भर्गस्तत्र तिष्ठति शङ्करः ॥७०

शुक्लतीर्थ में स्थित, वृक्षाग्र भाग देख लेने से भी ब्रह्महत्या का पाप नष्ट हो जाता है। वहाँ भगवान् भर्ग शंकर, देवी के साथ, सदैव विद्यमान रहते हैं।७०

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां वैशाखे मासि सुव्रत।
लोकात्स्वकाद्विनिष्क्रम्य तत्र सन्निहितो हरः ॥७१

---

१. शुक्रतीर्थे इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे सुव्रती ! बैशाख महीने के, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को भगवान् महेश्वर अपने लोक से निकलकर, उस स्थान पर विराजमान होते हैं ।७१

देवदानवगन्धर्वाः सिद्धविद्याधरास्तथा ।
गणाश्चाप्सरसो नागास्तत्र तिष्ठन्ति पुङ्गवाः ॥७२

देव, दानव, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर, गण, अप्सराएँ और नाग श्रेष्ठ, उस तीर्थ में निवास करते हैं ।७२

रञ्जितं हि यथा वस्त्रं शुक्लं भवति वारिणा ।
आजन्मजनितं पापं शुक्लतीर्थे व्यपोहति ॥७३

जैसे रंगा हुआ वस्त्र, जल से धोने पर स्वच्छ हो जाता है, वैसे ही, जीवन भर के पाप, शुक्लतीर्थ में जाने से धुल जाते हैं ।७३

स्नानं दानं तपः श्राद्धमनन्तं तत्र दृश्यते ॥७४
शुक्लतीर्थात्परं तीर्थं न भविष्यति पावनम् ।

यहाँ स्नान, दान, तपस्या और श्राद्ध करने से अनन्त फल की प्राप्ति होती है। शुक्लतीर्थ से श्रेष्ठ तीर्थ न है और न होगा ।७४

पूर्वे वयसि कर्माणि कृत्वा पापानि मानवः ।
अहोरात्रोपवासेन शुक्रतीर्थे व्यपोहति ॥७५

मनुष्य अल्पायु में किए गए पापों का नाश शुक्लतीर्थ में एक दिन-रात उपवास रहकर कर सकता है ।७५

कार्तिकस्य तु मासस्य कृष्णपक्षे चतुर्दशी ।
घृतेन स्नापयेद्देवमुपोष्य परमेश्वरम् ॥७६

कार्त्तिक महीने के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को उपवास रहकर, देव परमेश्वर को घी से स्नान कराना चाहिए ।७६

एकविंशत्कुलोपेतो न च्यवेदीश्वरालयात्[1] ।
तपसा ब्रह्मचर्येण यज्ञैर्दानेन वा पुनः ॥७७
न तां गतिमवाप्नोति शुक्लतीर्थे तु यां लभेत् ।

ऐसा करने से, वह व्यक्ति, अपनी इक्कीस पीढ़ियों के साथ स्वर्गलोक से पृथक् नहीं होता । जो गति शुक्लतीर्थ में प्राप्त होती है, वह तपस्या, ब्रह्मचर्यव्रत पालन, यज्ञ और दान से भी नहीं प्राप्त होती ।७७½।

---

१. च्यवेदैश्वरात्पदादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुक्लतीर्थं महातीर्थमृषिसिद्धनिषेवितम् ॥७८
तत्र स्नात्वा नरो राजन्पुनर्जन्म न विन्दति[1] ।

ऋषियों और सिद्धगुणों के द्वारा पूजित, शुक्लतीर्थ महातीर्थ है। हे राजन्! वहाँ स्नान करने से मनुष्य का पुनर्जन्म नहीं होता ।७८-७८½।

अयने वा चतुर्दश्यां संक्रान्तौ विषुवे तथा ॥७९
स्नात्वा तु सोपवासः सन्विजितात्मा[2] समाहितः ।
दानं दद्याद्यथाशक्ति प्रीयेतां हरिशङ्करौ ॥८०
एतत्तीर्थप्रभावेण सर्वं भवति चाक्षयम् ।

अयन संक्रान्ति, चतुर्दशी अथवा विषुव संक्रान्ति के दिन, आत्मा को वश में रखकर, एकाग्रचित्त से, उपवास रहकर स्नान करके, 'हरि और शंकर प्रसन्न हो' यह कामना करते हुए, सामर्थ्यानुसार दान करना चाहिए। इस तीर्थ के प्रभाव से वह सब कुछ अविनाशी हो जाता है ।७९-८०½।

अनाथं दुर्गतं विप्रं नाथवन्तमथापि वा ॥८१
उद्वाहयति यस्तीर्थे तस्य पुण्यफलं शृणु ।
यावत्तद्रोमसंख्या तु तत्प्रसूतिकुलेषु च ॥८२
तावद्वर्षसहस्राणि रुद्रलोके महीयते ।

इस तीर्थ में जो व्यक्ति असहाय या सहाय सम्पन्न का विवाह करवाता है, उसका पुण्य फल सुनो। जितने रोएँ उसके और उसकी सन्तानों के शरीर पर छोंगे, उतने हजार वर्षों तक, वह विवाह कराने वाला रुद्रलोक में निवास करेगा ।८१-८२½।

ततो गच्छेत राजेन्द्र यमतीर्थमनुत्तमम् ॥८३
कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां माघमासे युधिष्ठिर ।
स्नानं कृत्वा नक्तभोजी न पश्येद्योनिसङ्कटम् ॥८४

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् अत्युत्तम यमतीर्थ में जाना चाहिए। हे युधिष्ठिर! माघ महीने की कृष्णपक्षीय चतुर्दशी को, इस तीर्थ में स्नान करके, केवल रात में भोजन ग्रहण करने से, पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता ।८३-८४।

ततो गच्छेत राजेन्द्र एरण्डीतीर्थमुत्तमम् ।
संगमे तु नरः स्नात्वा उपवासपरायणः ॥८५
ब्राह्मणं भोजयेदेकं कोटिभवति भोजिताः ।

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् अत्युत्तम एरण्डी तीर्थ में जाना चाहिए। यहाँ यदि कोई

---

१. विद्यते इति पा०। २. निर्जितात्मा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपवास रहकर, एरण्डी तीर्थ में स्नान करके, एक ब्राह्मण को भोजन कराता है, तो उसे एक करोड़ ब्राह्मणों को भोजन करवाने का फल मिलता है।८५½।

एरण्डीसङ्गमे स्नात्वा भक्तिभावात्तु रञ्जितः ॥८६
मृत्तिकां शिरसि स्थाप्य[1] अवगाह्य च तज्जलम् ।
नर्मदोदकसंमिश्रं मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥८७

भक्ति भाव से एरण्डी संगम में स्नान करके, वहाँ की मिट्टी मस्तक में लगाकर, पुनः एकबार नर्मदा जल मिश्रित, एरण्डी संगम के जल में स्नान करने से, सारे पापों से मुक्ति मिलती है।८६-८७।

ततो गच्छेत राजेन्द्र तीर्थङ्कल्लोलकेश्वरम् ।
गंगावतरते तत्र दिने[2] पुण्ये न संशयः ॥८८

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् कल्लोलकेश्वर तीर्थ में जाना चाहिए। उस तीर्थ में, पावन दिन में गंगा उतरती हैं इसमें कोई सशय नहीं।८८

तत्र स्नात्वा च पीत्वा च दत्त्वा चैव यथाविधि ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके[3] महीयते ॥८९

इस तीर्थ में स्नान करके, तीर्थ का जल पीकर, विधानानुसार दान देने से व्यक्ति सारे पापों से मुक्त होकर ब्रह्म लोक में वास करता है।८९

नन्दितीर्थं ततो गच्छेत्तत्र स्नानं समाचरेत् ।
प्रीयते तत्र नन्दीशः सोमलोके महीयते ॥९०

तदनन्तर नन्दितीर्थ में जाकर, वहाँ स्नान करना चाहिए। ऐसा करने से नन्दीश (भगवान् शंकर) प्रसन्न होते हैं और उस व्यक्ति को चन्द्रलोक में रहने को मिलता है।९०

ततो गच्छेत राजेन्द्र तीर्थं त्वनरकं शुभम् ।
तत्र स्नात्वा नरो राजन्नरकं नैव पश्यति ॥९१

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् अनरक नामक शुभ तीर्थ में जाना चाहिए। हे राजन् ! वहाँ स्नान करने से, मनुष्य को नरक नहीं देखना पड़ता।९१

तस्मिंस्तीर्थे तु राजेन्द्र स्वान्यस्थीनि विनिक्षिपेत् ।
रूपवाञ्जायते लोके धनभोगसमन्वितः ॥९२

हे राजेन्द्र ! उस तीर्थ में, जो व्यक्ति अपनी अस्थि फेंकता है, वह इस संसार में धन भोगादि सम्पन्न और रूपवान् होता है।९२

---

१. स्थापयित्वा इति साधु। २. स्थाने इति पा०। ३. रुद्रलोके इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो गच्छेत राजेन्द्र कपिलातीर्थमुत्तमम् ।
तत्र स्नात्वा नरो राजन्गोसहस्रफलं लभेत् ॥९३

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् अत्युत्तम कपिला तीर्थ में जाना चाहिए। वहां स्नान करने से मनुष्य को हजारों गोदान का फल मिलता है ।९३

ज्येष्ठमासे तु सम्प्राप्ते चतुर्दश्यां विशेषतः ।
तत्रोपोष्य नरो भक्त्या दत्त्वा दीपं घृतेन तु ॥९४
घृतेन स्नापयेद्रुद्रं ततो[1] वै श्रीफलं लभेत् ।
घण्टाभरणसंयुक्तां कपिलां वै प्रदापयेत् ॥९५
सर्वाभरणसंयुक्तः[2] सर्वदेवनमस्कृतः ।
शिवतुल्यबलो भूत्वा शिववत्क्रीडते सदा ॥९६

जेठ के महीने में, विशेषरूप से चतुर्दशी के दिन, मनुष्य को उपवास रहकर, भक्तिभाव से घी का दिया दान में देकर; घी से रुद्र को नहलाना चाहिए, घी लगाकर बेल और घण्टी तथा आभूषणों से सजी हुई कपिला दान करने से, वह व्यक्ति सभी अलंकारों से युक्त होकर, सभी देवताओं के द्वारा पूजित होता हुआ, शिव की भाँति पराक्रमी होकर सदैव शिव की भाँति क्रीडा करता है ।९४-९६।

अङ्गारकदिने प्राप्ते चतुर्थ्यान्तु विशेषतः ।
स्नापयित्वा शिवं दद्याद्ब्राह्मणेभ्यस्तु भोजनम् ॥९७

मंगलवार को और विशेष रूप से चतुर्थी के दिन, वहां महादेव को नहलाकर, ब्राह्मणों को भोजन दान करना चाहिए ९७।

सर्वदेवसमायुक्तो[3] विमाने सर्वकामिके ।
गत्वा शक्रस्य भवनं शक्रेण सह मोदते ॥९८

ऐसा करने से वह व्यक्ति सभी देवताओं से घिरकर, सर्वकामिक विमान पर बैठकर, इन्द्र के भवन में जाकर, उनके साथ सुख भोगता है ।९८

ततः स्वर्गात्परिभ्रष्टो धृतिमान्भोगवान्भवेत् ।
अङ्गारकनवम्यान्तु अमावस्यां तथैव च ॥९९
स्नापयेत्तत्र यत्नेन रूपवान्सुभगो भवेत् ।

तत्पश्चात् स्वर्ग से पृथ्वी पर आकर, धनवान् और भोगसम्पन्न होता है। मंगलवार की नवमी में तथा अमावास्या को जो व्यक्ति, वहां यत्नपूर्वक महादेव को स्नान करवाता है, वह सुन्दर और सौभाग्यशाली होता है ।९९½।

---

१. सघृतं श्रीफलं दद्देदिति, सघृतं गुग्गुलं दद्देदिति पा० । २. सर्वपापविनिर्मुक्तः इति पा० । ३. सर्वभोगसमयुक्तः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततो गच्छेत राजेन्द्र गणेश्वरमनुत्तमम् ॥१००
श्रावणे मासि सम्प्राप्ते कृष्णपक्षे चतुर्दशी।
स्नातमात्रो नरस्तत्र रुद्रलोके महीयते ॥१०१

हे राजेन्द्र ! उसके बाद अत्युत्तम गणेश्वर तीर्थ में जाना चाहिए। सावन की कृष्णपक्षीय चतुर्दशी को वहाँ केवल स्नान कर लेने ही, मनुष्य रुद्रलोक में निवास करता है।१००-१०१।

पितृणां तर्पणं कृत्वा मुच्यते स ऋणत्रयात्।
गङ्गेश्वरसमीपे तु गंगावदनमुत्तमम् ॥१०२

उस तीर्थ में 'पितरों का तर्पण करने से तीनों ऋणों से मुक्ति मिलती है। गंगेश्वर के पास, गंगावदन नामक उत्तम तीर्थ है।१०२

अकामो वा सकामो वा तत्र स्नात्वा तु मानवः।
आजन्मजनितैः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥१०३

उस तीर्थ में, यदि मनुष्य कामना सहित या बिना कामना के स्नान करता है, तो वह जीवन भर के पापों से मुक्त हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं।१०३

तस्य वै पश्चिमे भागे समीपे नातिदूरतः।
दशाश्वमेधिकं तीर्थं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ॥१०४

इस तीर्थ के पश्चिमी भाग में, पास ही, अधिक दूरी पर नहीं—दशाश्वमेधिक नामक, त्रैलोक्यविख्यात एक तीर्थ है।१०४

उपोष्य रजनीमेकां मासि भाद्रपदे शुभे।
अमावस्यां[1] हरं स्नाप्य पूजयेद्वृषध्वजम् ॥१०५

शुभ भादों के महीने में, अमावस्या के दिन, एक रात उपवास रहकर, उस तीर्थ में स्नान करके, वृषध्वज शिव की पूजा करनी चाहिए।१०५

काञ्चनेन विमानेन किङ्किणीजालमालिना।
गत्वा रुद्रपुरं रम्यं रुद्रेण सह मोदते ॥१०६

ऐसा करने, से वह व्यक्ति घुंघरुओं की लड़ियों से सुसज्जित, सोने के विमान में चढ़कर, रमणीय रुद्रधाम में जाता है और वहाँ रुद्र के साथ आनन्द भोगता है।१०६

सर्वत्र सर्वदिवसे स्नानं तत्र समाचरेत्।
पितृणां तर्पणं कृत्वा चाश्वमेधफलं लभेत् ॥१०७

---

१. अमावस्यां नरः स्नात्वा पूजयेद्वृषभध्वजमिति, स्नापयेद्वृषभध्वजमिति पा०। स्नापयित्वा इति साधु।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी तिथियों में, उस तीर्थ के सभी स्थानों में स्नान और पितृतर्पण करने से, अश्वमेध-यज्ञ का फल मिलता है ।१०७

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे नर्मदामाहात्म्ये एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४१

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, नर्मदा माहात्म्य नामक इकतालीसवाँ अध्याय समाप्त ।४१

●

द्विचत्वारिंशोऽध्यायः

मार्कण्डेय उवाच

ततो गच्छेत राजेन्द्र भृगुतीर्थमनुत्तमम् ।
तत्र[1] देवो भृगुः पूर्वं रुद्रमाराधयत्पुरा ॥१

मार्कण्डेय बोले—हे राजेन्द्र ! तदनन्तर अत्युत्तम भृगुतीर्थ में जाना चाहिए । उस स्थान पर, पुराकाल में भृगु ने, देवाधिदेव रुद्र की आराधना की थी ।१

दर्शनात्तस्य देवस्य सद्यः पापात्प्रमुच्यते ।
एतत्क्षेत्रं सुविपुलं सर्वपापप्रणाशनम् ॥२

उन्हीं देवता का दर्शन प्राप्त करने से, तत्क्षण पाप से मुक्ति मिलती है । यह दूर-दूर तक फैला हुआ क्षेत्र, सारे पापों का नाशक है ।२

तत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः ।
उपानहौ तथा युग्मं देयमन्नञ्च काञ्चनम् ॥३
भोजनं च यथाशक्ति तस्याप्यक्षयमुच्यते[2] ।

इस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग जाता है और यहाँ पर मरने वाला पुनः जन्म नहीं लेता । एक जोड़ा जूता, अन्न, सोना और भोजन का, सामर्थ्यानुसार दान करने से, अक्षय फल की प्राप्ति होती है ।३½

क्षरन्ति सर्वदानानि यज्ञदानं तपः क्रिया ॥४
अक्षयं[3] तत्तपस्तप्तं भृगुतीर्थे युधिष्ठिर ।

---

१. यत्र देवं भृगुर्भर्गमिति, यत्र देवं भृगुः पूर्वमिति पा० । २. तदस्याक्षयमुच्यते इति पा० । ३. न क्षरेद्यत्तपस्तप्तमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी प्रकार के दान, यज्ञ और तपस्या का नाश हो सकता है, परन्तु हे युधिष्ठिर ! भृगुतीर्थ में की गयी तपस्या अक्षय होती है। अर्थात् उसका कभी नाश नहीं होता ।४

तस्यैव तपसोग्रेण रुद्रेण त्रिपुरारिणा ॥५
सान्निध्यं तत्र कथितं भृगुतीर्थे युधिष्ठिर ।

हे युधिष्ठिर ! यह कहा जाता है कि भृगुतीर्थ में कठोर तपस्या करने से, त्रिपुरारि रुद्र का सामीप्य प्राप्त होता है ।५½

ततो गच्छेत राजेन्द्र गौतमेश्वरमुत्तमम् ॥६
यत्राराध्य त्रिशूलांकं गौतमः सिद्धिमाप्तवान् ।

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् उत्तम गौतमेश्वर तीर्थ में जाना चाहिए। उस तीर्थ में गौतम मुनि ने, त्रिशूलधारी महादेव की आराधना करके, सिद्धि प्राप्त की थी ।६½

तत्र स्नात्वा नरो राजन्नुपवासपरायणः ॥७
कांचनेन विमानेन ब्रह्मलोके महीयते ।

हे राजन् ! इस तीर्थ में, उपवास रहकर स्नान करने वाला मनुष्य, सोने के विमान पर बैठकर ब्रह्म लोक जाता है और वहाँ सम्मानित होता है ।७½

वृषोत्सर्गं ततो गच्छेच्छाश्वतं[1] पदमाप्नुयात् ॥८
न जानन्ति नरा मूढा विष्णोर्मायाविमोहिताः ।

तदनन्तर वृषोत्सर्ग नामक तीर्थ में जाना चाहिए। उस तीर्थ में जाने से मोक्ष की प्राप्ति होती है, किन्तु विष्णु की माया से मोहित, अज्ञानी मनुष्यों को इस तीर्थ का पता ही नहीं चलता ।८½

धौतपापं ततो गच्छेद्धौतं यत्र वृषेण तु ॥९
नर्मदायां स्थितं राजन्सर्वपातकनाशनम् ।

हे राजन् ! नर्मदा में स्थित, सारे पापों को दूर करने वाला, धौतपाप नामक तीर्थ में जाना चाहिए। जहाँ वृष ने अपने पाप धोऐ थे। ९½

तत्र तीर्थे नरः स्नात्वा ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥१०
तत्र तीर्थे तु राजेन्द्र प्राणत्यागं करोति यः ।
चतुर्भुजस्त्रिनेत्रश्च हरतुल्यबलो भवेत् ।११

---

१. शाश्वतीं गतिमाप्नुयादिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य, ब्रह्महत्या के पाप से छूट जाता। हे राजेन्द्र! उस तीर्थ में, जो व्यक्ति प्राण त्यागता है, वह चतुर्भुज, त्रिनेत्र और भगवान् शंकर की भाँति बलवान् होता है।१०-११।

वसेत्कल्पायुतं साग्रं शिवतुल्यपराक्रमः।
कालेन महता जातः पृथिव्यामेकाराड् भवेत् ॥१२

शिव के समान पराक्रमशाली वह व्यक्ति, दस हजार वर्षों मे भी अधिक समय के बाद पृथ्वी पर जन्म लेकर एक छत्र सम्राट् बनता है।१२

ततो गच्छेत राजेन्द्र हस्ततीर्थमनुत्तमम्[1]।
तत्र स्नात्वा नरो राजन्ब्रह्मलोके महीयते ॥१३

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् श्रेष्ठ हस्ततीर्थ में जाना चाहिए। हे राजन्! जहाँ स्नान कर, मनुष्य ब्रह्म लोक में सुख भोगता है।१३

ततो गच्छेत राजेन्द्र यत्र सिद्धो जनार्दनः।
वराहतीर्थमाख्यातं विष्णुलोकगतिप्रदम् ॥१४

इसके बाद, वराह तीर्थ के नाम से विख्यात उस तीर्थ में जाना चाहिए, जहाँ भगवान् विष्णु सिद्ध हुए थे। यह तीर्थ विष्णुलोक में जाने का मार्ग प्रशस्त करता है।१४

ततो गच्छेत राजेन्द्र चन्द्रतीर्थमनुत्तमम्।
पौर्णमास्यां विशेषेण स्नानं तत्र समाचरेत् ॥१५

हे राजेन्द्र! तदनन्तर श्रेष्ठ चन्द्रतीर्थ में जाना चाहिए और विशेष रूप से पूर्णिमा के दिन वहाँ स्नान करना चाहिए।१५

स्नातमात्रो नरस्तत्र पृथिव्यामेकराट्[2] भवेत्।
देवतीर्थं ततो गच्छेत्सर्वतीर्थनमस्कृतम् ॥१६
तत्र स्नात्वा च राजेन्द्र देवतैः सह मोदते।

उस तीर्थ में केवल स्नान कर लेने से ही, मनुष्य पृथ्वी का एक छत्र सम्राट् बन जाता है। सभी तीर्थों में पूजनीय देवतीर्थ में जाना चाहिए। हे राजेन्द्र! वहाँ स्नान करने से देवताओं के साथ सुख भोगने को मिलता है।१६½

ततो गच्छेत राजेन्द्र शङ्खतीर्थमनुत्तमम् ॥१७
यत्तत्र दीयते दानं सर्वं कोटिगुणं भवेत्।

---

१. हंसतीर्थमनुत्तममिति पा०। २. चन्द्रलोके महीयते इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके बाद, हे राजेन्द्र ! अत्युत्तम शंखितीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ दिये गये दान कोटि गुण अधिक फल देता है।१७-½

ततो गच्छेत राजेन्द्र तीर्थं पैतामहं[2] शुभम् ॥१८
यत्तत्र दीयते श्राद्धं सर्वं तस्याक्षयं[1] भवेत्।

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् शुभ पितामह तीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ श्राद्ध करने से, अक्षय फल मिलता है।१८½

सावित्रीतीर्थमासाद्य यस्तु प्राणान्परित्यजेत् ॥१९
विधूय सर्वपापानि ब्रह्मलोके महीयते।

जो व्यक्ति सावित्रीतीर्थ में आकर प्राण त्यागता है। वह सारे पापों से मुक्त होकर, ब्रह्म लोक में सम्मानित होता है।१९½

मनोहरन्तु तत्रैव तीर्थं परमशोभनम्[1] ॥२०
तत्र स्नात्वा नरो राजन्रुद्रलोके महीयते।

वहीं अत्यन्त शोभनीय और मनोहर, एक दूसरा तीर्थ है। वहाँ स्नान करने से मनुष्य रुद्रलोक में सम्मानित होता है।२०½

ततो गच्छेत राजेन्द्र कन्यातीर्थमनुत्तमम् ॥२१
स्नात्वा तत्र नरो राजन्सर्वपापैः प्रमुच्यते।

हे राजेन्द्र ! तत्पश्चात् अत्युत्तम कन्यातीर्थ में जाना चाहिए। वहाँ स्नान करके मनुष्य सारे पापों से मुक्त हो जाता है।२१½

शुक्लपक्षे तृतीयायां स्नानमात्रं समाचरेत् ॥२२
स्नातमात्रो नरस्तत्र पृथिव्यामेकराड् भवेत्।

शुक्लपक्ष की तृतीया को, इस तीर्थ में केवल स्नान करने से, मनुष्य पृथ्वी का एकछत्र सम्राट बनता है।२२½

सर्गबिन्दुं ततो गच्छेत्तीर्थं देवनमस्कृतम् ॥२३
तत्र स्नात्वा नरो राजन्दुर्गतिं वै न पश्यति।

तदनन्तर देवताओं के द्वारा पूजित, सर्गबिन्दु नामक तीर्थ में जाना चाहिए। हे राजन् ! उस तीर्थ स्नान कर लेने से, मनुष्य को नरक के दर्शन नहीं करने पड़ते।२३½

अप्सरेशं ततो गच्छेत्स्नानं तत्र समाचरेत् ॥२४
क्रीडते नाकलोकस्थो ह्यप्सरोभिः स मोदते।

---

१. तत्तदस्याक्षयं भवेदिति पा०। २. पैतामहं शुभमिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् अप्सरेश नामक तीर्थ में जाकर, स्नान करना चाहिए। इससे वह व्यक्ति स्वर्ग लोक में अप्सराओं के साथ आनन्द भोगता है।२४½

ततो गच्छेत राजेन्द्र भारभूतिमनुत्तमम्[1] ॥२५
उपोषितो[2] यजेतेशं रुद्रलोके महीयते।

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् अत्युत्तम भारभूति नामक तीर्थ में जाना चाहिए। हे राजन्। उस तीर्थ में उपवास करके, शिव की पूजा करने से, रुद्रलोक में वास होता है।२५½

अस्मिंस्तीर्थे मृतो राजन्गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥२६
कार्त्तिके मासि देवेशमर्च्चयेत्पार्वतीपतिम्।
अश्वमेधाद्दशगुणं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥२७

इस तीर्थ में प्राण त्यागने से गणनायक पद की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति कार्तिक महीने में, देवाधिदेव पार्वतीपति (शिव) की पूजा करता है, विद्वानों का कहना है कि, उसे अश्वमेधयज्ञ का दस गुणा फल मिलता है।२६–२७।

वृषभं यः प्रयच्छेत तत्र कुन्देन्दुसप्रभम्[3]।
वृषयुक्तेन यानेन रुद्रलोकं स गच्छति ॥२८

जो व्यक्ति, उस तीर्थ में कुन्द पुष्प या चन्द्रमा के समान सफेद बैल दान करता है, वह बैलों द्वारा खीचे जाने वाले बिमान से, रुद्रलोक में जाता है।२८

एतत्तीर्थं समासाद्य यस्तु प्राणान् परित्यजेत्।
सर्वपापविनिर्मुक्तो[4] रुद्रलोकं स गच्छति ॥२९

इस तीर्थ में पहुँचकर, यदि कोई प्राण त्यागता है, तो वह व्यक्ति, सारे पापों से मुक्त होकर, रुद्रलोक में जाता है।२९

जलप्रवेशं यः कुर्यात्तस्मिंस्तीर्थे नराधिप।
हंसयुक्तेन यानेन स्वर्गलोकं स गच्छति ॥३०

हे नराधिप! जो व्यक्ति इस तीर्थ में जलप्रवेश करता है, वह हंसयुक्त यान से स्वर्ग जाता है।३०

एरण्ड्या नर्मदायास्तु सङ्गमं लोकविश्रुतम्।
तच्च तीर्थं महापुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् ॥३१

---

१. भारभूतिजमुत्तमिति पा०। २. उपोषितोऽर्चयित्वेशमिति पा०। ३. सन्निभमिति सुप्रभमिति पा०। ४. सर्वपापविशुद्धात्मा इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एरण्डी और नर्मदा का संगम जगत्प्रसिद्ध है। वह तीर्थ महान् पुण्य देने वाला और सारे पापों का नाश करने वाला है।३१

उपवासकृतो भूत्वा नित्यं व्रतपरायणः।
तत्र स्नात्वा तु राजेन्द्र मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥३२

हे राजेन्द्र! उपवास रहकर, प्रतिदिन व्रतों का पालन करते हुए, वहाँ स्नान करने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है।३२

ततो गच्छेत राजेन्द्र नर्मदोदधिसङ्गमम्।
जमदग्निमिति ख्यातं सिद्धो यत्र जनार्दनः ॥३३

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् नर्मदा और समुद्र के संगम पर जाना चाहिए। जमदग्नि नाम से प्रसिद्ध इस तीर्थ में भगवान् विष्णु सिद्ध हुए थे।३३

तत्र स्नात्वा नरो राजन्नर्मदोदधिसंगमे।
त्रिगुणञ्चाश्वमेधस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥३४

हे राजन्! उस नर्मदा और समुद्र के संगमरूपी तीर्थ में, स्नान करने से, मनुष्य को अश्वमेध यज्ञ का तिगुना फल मिलता है।३४

ततो गच्छेत राजेन्द्र पिंगलेश्वरमुत्तमम्[1]।
तत्र स्नात्वा नरो राजन्ब्रह्मलोके[2] महीयते ॥३५

हे राजेन्द्र! तत्पश्चात् अत्युत्तम पिंगलेश्वर नामक तीर्थ में जाना चाहिए। हे राजन्! वहां स्नान करके मनुष्य ब्रह्मलोक में सम्मानित होता है।३५

तत्रोपवासं यः कृत्वा पश्येत पिंगलेश्वरम्।
सप्तजन्मकृतं पापं हित्वा याति शिवालयम् ॥३६

जो व्यक्ति, उस तीर्थ में, उपवास रहकर, पिंगलेश्वर का दर्शन प्राप्त करता है, सातों जन्मों के पापों का त्याग कर, शिवालय में जाता है।३६

ततो गच्छेत राजेन्द्र अलितीर्थमनुत्तमम्[3]।
उपोष्य रजनीमेकां नियतो नियताशनः ॥३७
अस्य तीर्थस्य माहात्म्यान्मुच्यते ब्रह्महत्यया।

हे राजेन्द्र। तत्पश्चात् अत्युत्तम अलितीर्थ में जाना चाहिए। पहले उस तीर्थ में रहकर नियमपूर्वक और सीमित आहार करके, तदनन्तर एक रात उपवास करने से, तीर्थ के माहात्म्य से, ब्रह्महत्या से मुक्ति मिल जाती है।३७½

---

१. विमलेश्वरमुत्तममिति पा०। २. रुद्रलोके इति पा०। ३. अलिकातीर्थमुत्तममिति, अलकातीर्थमुत्तममिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतानि तव संक्षेपात्प्राधान्यात्कथितानि च ॥३८
न शक्या विस्तराद्वक्तुं संख्या तीर्थेषु पाण्डव ।

हे पाण्डव ? कुछ प्रधान तीर्थों के विषय में संक्षेप में कहा गया। तीर्थों की संख्या विस्तार से नहीं कहीं जा सकती ।३८½

एषा पवित्रा विपुला नदी त्रैलोक्यविश्रुता ॥३९
नर्मदा सरितां श्रेष्ठा महादेवस्य वल्लभा ।

यह नदीश्रेष्ठा नर्मदा, पवित्रा, विस्तृत, तीनों लोकों में प्रसिद्ध और महादेव की प्रिया है ।३९½

मनसा संस्मरेद्यस्तु नर्मदां वै युधिष्ठिर ॥४०
चन्द्रायणशतं[1] साग्रं लभते नात्र संशयः ।

हे युधिष्ठिर ? जो व्यक्ति नर्मदा को मन ही मन, स्मरण करता है, उसे सौ चान्द्रायणों से भी अधिक फल मिलता है, इसमें सन्देह नहीं ।४०½

अश्रद्दधानाःपुरुषा नास्तिक्यं घोरमाश्रिताः ॥४१
पतन्ति नरके घोर इत्याह परमेश्वरः ।

नर्मदा नदी के प्रति अश्रद्धा रखने वाले मनुष्य घोर नास्तिकता को प्राप्त करके नरक में गिरते हैं, भगवान् परमेश्वर ने ऐसा ही कहा है ।४१½

नर्मदां सेवते नित्यं स्वयं देवो महेश्वरः ।
तेन पुण्या नदी ज्ञेया ब्रह्महत्यापहारिणी ॥४२

भगवान् महेश्वर स्वयं, प्रतिदिन नर्मदा की सेवा करते हैं, इसलिए यह नदी अत्यन्त पवित्र और ब्रह्महत्या पापनाशिनी है ।४२

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे नर्मदामाहात्म्ये द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४२

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में नर्मदामाहात्म्य नामक बयालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४२

---

१. जीववर्षशतमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः

सूत उवाच

इदं त्रैलोक्यविख्यातं तीर्थं नैमिषमुत्तमम् ।
महादेवप्रियतरं महापातकनाशनम् ॥१

सूत बोले--तीनों लोकों में विख्यात, अत्युत्तम नैमिष नामक तीर्थ, महादेव को अत्यधिक प्रिय और सर्वपापनाशक है ।१

महादेवं[1] दिदृक्षूणामृषीणां परमेष्ठिना ।
ब्रह्मणा निर्मितं स्थानं तपस्तप्तुं द्विजोत्तमाः ॥२

हे ब्राह्मण श्रेष्ठो ! महादेव के दर्शनों के अभिलाषी ऋषियों के लिए परमेष्ठी ब्रह्मा ने, यह स्थान बनाया था और यहाँ तपस्या की थी ।२

मरीचयोऽत्र[2] ये विप्रा वसिष्ठाः क्रतवस्तथा ।
भृगवोऽङ्गिरसः पूर्वं ब्रह्माणं कमलोद्भवम् ॥३
समेत्य सर्ववरदं चतुर्मूर्त्तिं चतुर्मुखम् ।
पृच्छन्ति प्रणिपत्यैनं विश्वकर्माणमव्ययम्[3] ॥४

हे ब्राह्मणों ! मरीचि, अत्रि वशिष्ठ, क्रतु, भृगु और अंगिरा के वंशजों ने प्राचीन काल में, कमल से उत्पन्न, सभी प्रकार के वर देने वाले, चतुर्मूर्ति, चतुर्मुख, संसार के स्रष्टा और अविनाशी ब्रह्मा के पास जाकर, उन्हें दण्डवत् प्रणाम करके पूछा ।३-४

षट्कुलीया ऊचुः

भगवन्देवमीशानं तमेवैकं कपर्दिनम् ।
केनोपायेन पश्यामो ब्रूहि देव नमस्तव ॥५

छह वंशों से उत्पन्न (षट्कुलीय) बोले--हे देव ! आपको नमस्कार है। हे भगवान् ! किस प्रकार से हम लोग उस अद्वितीय, ईशान का दर्शन-प्राप्त कर सकेंगे, आप हमें बताइए ।५

---

१. पुरा देवमिति पा० । २. मारीचयोऽथ ये विप्रा वसिष्ठा ध्रुवतस्तथा इति पा० । ३. विश्वकर्माणमच्युतमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मोवाच

सत्रं सहस्रमासध्वं वाङ्मनोदोषवर्ज्जिताः।
देशञ्च वः प्रवक्ष्यामि यस्मिन्देशे चरिष्यथ ॥६

ब्रह्मा बोले--आपलोग वाणी और मन को दोष रहित करके, महायज्ञ का अनुष्ठान कीजिए जिस देश में अनुष्ठान करेंगे, मैं उस स्थान के विषय में बताऊँगा ।६

मुक्त्वा मनोमयं चक्रं संस्पृष्ट्वा[1] तानुवाच ह।
क्षिप्तमेतन्मया चक्रमनुव्रजत मा चिरम् ॥७

तत्पश्चात् मनोमय चक्र को छोड़ते हुए, उसे छूकर बोले मैंने यह चक्र फेंका है, आप लोग इसके पीछे-पीछे जाइए, देर न कीजिए ।७

यत्रास्य नेमिः शीर्येत स[2] देशस्तपसः शुभः।
ततो मुमोच तच्चक्रं ते च तत्समनुव्रजन् ॥८

जिस स्थान पर इस चक्र की नेमी (धुरी) गिरेगी, वही स्थान तपस्या के लिए उत्तम होगा। यह कहकर ब्रह्मा ने चक्र छोड़ा और मुनियों ने उसका अनुसरण किया ।८

तस्य वै व्रजतः क्षिप्रं यत्र नेमिरशीर्यत।
नैमिषं तत् स्मृतं नाम्ना पुण्यं सर्वत्र पूजितम् ॥९

उस शीघ्रगामी चक्र की नेमि (धुरी) जिस स्थान पर गिरी थी, वह स्थान नैमिष के नाम से जाना जाता है ।९

सिद्धचारणसंपूर्णं यक्षगन्धर्वसेवितम्।
स्थानं भगवतः शंभोरेतन्नैमिषमुत्तमम् ॥१०

वह स्थान पवित्र और सभी जगह पूजित, सिद्धों और चारणों से घिरा हुआ, यज्ञ-गन्धर्वों द्वारा आराधित यह श्रेष्ठ नैमिष क्षेत्र, भगवान् शंकर का स्थान है ।१०

अत्र देवाः सगन्धर्वाः सयक्षोरगराक्षसाः।
तपस्तप्त्वा पुरा देवा लेभिरे प्रवरान्वरान् ॥११

प्राचीन काल में, इस स्थान में देवताओं, गन्धर्वों, यक्षों, और राक्षसों ने तपस्या करके, महादेव से अत्युत्तम वर प्राप्त किये थे ।११

इमं देशं समाश्रित्य षट्कुलीयाः समाहिताः।
सत्रेणाराध्य देवेशं दृष्टवन्तो महेश्वरम् ॥१२

उसी स्थान पर, पूर्वोक्त छह कुलों से उत्पन्न, ऋषियों ने एकाग्रचित्त से यज्ञ द्वारा आराधना करके, देवाधिदेव महेश्वर के दर्शन प्राप्त किये थे ।१२

---

१. संस्पृश्य इति साधु। २. स देशः पुरुषर्षभाः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्नदानं तपस्तप्तं श्राद्धयागादिकञ्च[1] यत् ।
एकैकं नाशयेत्पापं सप्तजन्मकृतं तथा ॥१३

इस तीर्थ में अन्नदान, तपस्या, श्राद्ध और यज्ञादि जो भी कार्य किये जाते हैं, वह एक-एक कार्य, सातों जन्मों के पापों को नष्ट कर देता है ।१३

अत्र पूर्वं स भगवानृषीणां सत्रमासताम् ।
स वै प्रोवाच ब्रह्माण्डं पुराणं ब्रह्म भावितम् ॥१४

पूर्व काल में, यज्ञोपासना करने वाले महर्षियों को भगवान् ने, इसी स्थान पर ब्रह्म के द्वारा पवित्रीकृत ब्रह्माण्ड पुराण के विषय में बताया था ।१४

अत्र देवो महादेवो रुद्राण्या किल विश्वदृक् ।
रमतेऽद्यापि भगवान्प्रमथैः परिवारितः ॥१५

इसी स्थान पर, विश्वद्रष्टा देव महादेव, प्रमथ गणों के द्वारा घिरकर, रुद्राणी के साथ, आज भी क्रीडा करते हैं ।१५

अत्र प्राणान् परित्यज्य नियमेन द्विजातयः ।
ब्रह्मलोकं गमिष्यन्ति यत्र गत्वा न जायते ॥१६

हे ब्राह्मणों ! यहाँ नियमपूर्वक प्राण त्याग करने वाले द्विज स्वर्ग लोक जाते हैं । जहाँ जाने से पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता । १६

अन्यच्च तीर्थप्रवरं जाप्येश्वरमितिश्रुतम्[2] ।
जजाप रुद्रमनिशं यत्र नन्दी महागणः ॥१७

जाप्येश्वर के नाम से प्रसिद्ध, एक और श्रेष्ठ तीर्थ है । वहाँ गणश्रेष्ठ नन्दी ने निरन्तर रुद्रमन्त्र का जप किया था ।१७

प्रीतस्तस्य महादेवो देव्या सह पिनाकधृक् ।
ददावात्मसमानत्वं मृत्युवञ्चनमेव च ॥१८

इससे त्रिशूलधारी महादेव, देवी के साथ, प्रसन्न होकर, उन्हें अपना रूप और अमरत्व प्रदान किया था ।१८

अभूदृषिः स धर्मात्मा शिलादो नाम धर्मवित् ।
आराधयन्महादेवं प्रसादार्थं[3] वृषध्वजम् ॥१९

शिलाद नाम के एक धर्मज्ञ और धर्मात्मा ऋषि हुए थे । उन्होंने पुत्र प्राप्ति के लिए वृषध्वज महादेव की आराधना की ।१९

---

१. श्राद्धं जप्यादिकमिति पा० । २. जप्येश्वरमनुत्तममिति पा० । ३. पुत्रार्थं वृषभध्वजमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तस्य वर्षसहस्रान्ते तप्यमानस्य विश्वधृक् ।
शर्वः सोमो गणवृतो वरदोऽस्मीत्यभाषत ॥२०

तपस्या करते-करते हजारों वर्ष बीत जाने के बाद, संसार के धारणकर्त्ता महादेव, प्रमथ गणों और उमा के साथ आकर बोले, 'मै वर देने आया हूँ।'२०

स वव्रे वरमीशानं वरेण्यं गिरिजापतिम् ।
अयोनिजं मृत्युहीनं याचे पुत्रं त्वया समम् ॥२१

गिरिजापति पूजनीय ईशान के पास, उस ऋषि ने यह वरदान मांगा कि, मुझे आपके समान अयोनिज (अर्थात् योनि से उत्पन्न न होने वाला) और मृत्युहीन (अर्थात् अमर) पुत्र की प्राप्ति हो ।२१

तथास्त्वित्याह भगवान्देव्या सह महेश्वरः ।
पश्यतस्तस्य विप्रर्षेरन्तर्द्धानं गतो हरः ॥२२

भगवान् महेश्वर हर ने 'तथास्तु' कहा और ब्रह्मर्षि के सामने ही, देवी के साथ अन्तर्धान हो गये ।२२

ततो युयोज तां भूमिं शिलादो धर्मवित्तमः ।
चकर्ष लांगलेनोर्वीं भित्वादृश्यत शोभनः ॥२३

संवर्त्तकोऽनलप्रख्यः कुमारः प्रहसन्निव ।
रूपलावण्यसम्पन्नस्तेजसा भासयन्दिशः ॥२४

तत्पश्चात् श्रेष्ठ धर्मज्ञाता महर्षि शिलाद ने, यज्ञ करने की इच्छा से अपनी भूमि को हल से खोदते ही, अत्यन्त सुशोभित, विद्युत के समान कान्तिमान, एक पुत्र देखा। जो अपने रूप-लावण्य और अपने ही तेज से चारो दिशाओं को आलोकित करता हुआ मानों हँस रहा था ।२३-२४

कुमारतुल्योऽप्रतिमो मेघगम्भीरया गिरा ।
शिलादं तात तातेति प्राह नन्दी पुनः पुनः ॥२५

कार्त्तिकेय के समान अद्वितीय रूप लेकर जन्म लेने वाले नन्दी ने, बादल के समान गम्भीर वाणी में शिलाद ऋषि को 'तात ! तात !' कहकर, बारबार पुकारा ।२५

तं दृष्ट्वा नन्दनं जातं शिलादः परिषस्वजे ।
मुनीनां दर्शयामास तत्राश्रमनिवासिनाम्[1] ॥२६

---

१. ये तदाश्रयवासिनः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिलाद ऋषि ने उस पैदा हुए पुत्र को देखकर, उसे गले से लगाया और उस स्थान के आश्रमवासी मुनियों को भी दिखाया ।२६

जातकर्मादिकाः सर्वाः क्रियास्तस्य चकार ह ।
उपनीय यथाशास्त्रं वेदमध्यापयत् स्वयम्[1] ॥२७

उन्होने समयानुसार उसका जातकर्मादि संस्कार किया और उपनयन कराकर, शास्त्रानुसार स्वयं वेदाध्ययन करवाने लगे ।२७

अधीतवेदो भगवान्नन्दी मतिमनुत्तमाम् ।
चक्रे महेश्वरं दृष्ट्वा जेष्ये मृत्युमिव प्रभुम् ॥२८

भगवान् नन्दी ने वेदाध्ययन करके, अत्युत्तम बुद्धि के द्वारा, प्रभु महेश्वर का दर्शन प्राप्त करके, मृत्यु को जीतने की बात सोची ।२८

स गत्वा सागरं[2] पुण्यमेकाग्रः श्रद्धयान्वितः ।
जजाप रुद्रमनिशं महेशासक्तमानसः ॥२९

उसने पवित्र समुद्र के तट पर जाकर, एकाग्र चित्त से, श्रद्धापूर्वक, महेश के प्रति मन को आकृष्ट करके, लगातार रुद्र मन्त्र का जप किया ।२९

तस्य कोट्याञ्च पूर्णायां शङ्करो भक्तवत्सलः ।
आगतः[3] सर्वसगणो वरदोऽस्मीत्यभाषत ॥३०

एक करोड़ बार जप पूरा हो जाने के बाद, भक्तवत्सल शंकर, प्रमथगणों के साथ आकर बोले कि, 'मैं वर देने के लिए आया हूँ ।'३०

स वव्रे पुनरेवेशं जपेयं कोटिमीश्वरम् ।
भवदाहं महादेवं देहीति परमेश्वरम् ॥३१

महादेव से नन्दी बोले—कि, हे ईश्वर ! 'पुनः एक करोड़ बार रुद्र जप पूरा कर सकूं, तब तक के लिए, हे महेश्वर ! मुझे परमायु दीजिए ।३१

एवमस्त्विति संप्रोच्य देवोऽप्यन्तरधीयत ।
जजाप कोटिं भगवान् भूयस्तद्गत मानसः ॥३२

तथास्तु' कहकर, महादेव के अन्तर्ध्यान हो जाने के बाद, नन्दी ने भगवान् शंकर का ध्यान करते हुए, एक करोड़ बार रुद्रमन्त्र को जपना प्रारम्भ किया ।३२

द्वितीयायाञ्च कोट्यां वै पूर्णायाञ्च वृषध्वजः ।
आगत्य वरदोऽस्मीति प्राह भूतगणैर्वृतः ॥३३

---

१. सुतमिति पा० । २. सरित पुण्यामिति पा० । ३. आगत्य शम्भुः सगण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी बार एक करोड़ की संख्या में रुद्र जप पूरा हो जाने के बाद भूतगणों के साथ, आकर, वृषध्वज ने "मैं वर दे रहा हूँ, ऐसा कहा ।३३

तृतीयाञ्जप्तुमिच्छामि कोटिं भूयोऽपि शङ्कर ।
तथास्त्वित्याह विश्वात्मा देव्या चांतरधीयत ॥३४

तब नन्दी बोले हे शंकर ! मैं तीसरी बार कोटि रुद्र मन्त्र का जप करना चाहता हूँ। विश्वात्मा भी 'तथास्तु' कहकर, देवी के साथ अन्तर्ध्यान हो गये ।३४

कोटित्रयेऽथ सम्पूर्णे देवः प्रीतमनाभृशम् ।
आगत्य वरदोऽस्मीति प्राह भूतगणैर्वृतः ॥३५

इस प्रकार तीन करोड़ बार रुद्र मन्त्र का जप पूरा हो जाने के बाद, महादेव अत्यन्त प्रसन्न होकर, भूतगणों के साथ आये और मैं वर दे रहा हूँ', ऐसा कहा ।३५

जपेयं कोटिमन्यां वै भूयोऽपि तव तेजसा ।
इत्युक्ते भगवानाह न जप्तव्यं त्वया पुनः ॥३६

हे भगवान् ! आपके प्रभाव से पुनः एक करोड़ बार जप करना चाहता हूँ', नन्दी के ऐसा कहने पर भगवान् बोले, 'तुम्हे पुनः जप करने की आवश्यकता नहीं ।३६

अमरो जरया त्यक्तो मम पार्श्वे गतः सदा ।
महागणपतिर्देव्याः पुत्रो भव महेश्वरः ॥३७

तुम, मृत्यु और वार्धक्य रहित, सारे गणों के स्वामी और देवी के पुत्र बनकर सदैव हमारे पास रहो ।३७

योगेश्वरो महायोगी गणानामीश्वरेश्वरः ।
सर्वलोकाधिपः श्रीमान् सर्वयज्ञमयो हितः ॥३८
[1]ज्ञानं तन्नामकं दिव्यं हस्तामलकसंज्ञितम् ।
आभूतसंप्लवस्थायी ततो यास्यसि तत्पदम् ॥३९

योगीश्वर, योगबल से तीनों लोकों का दर्शन प्राप्त करने वाले, गणों के अधिपति, सारे लोकों के स्वामी, सौन्दर्य युक्त और मेरे समान सर्वज्ञ, तुम्हें हथेली पर रखे हुए आंवले की भांति, मुझसे सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त हो। इस प्रकार महाप्रलय तक स्थायी रहकर, उसके बाद तुम्हे श्रेष्ठ पद की प्राप्ति होगी ।३८-३९

---

१. सर्वज्ञो मद्बलान्वितः इति, सर्वज्ञो मद्बलान्वित इति पा० । २. ज्ञानन्तु मामकं दिव्यं हस्तामलकवत्तव इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतदुक्त्वा महादेवो गणानाहूय शङ्करः ।
अभिषेकेण युक्तेन नन्दीश्वरमयोजयत् ॥४०

महादेव शंकर ने ऐसा कहकर, सारे प्रमथगणों को बुलाकर, नन्दीश्वर का विधिपूर्वक अभिषेक किया ।४०

उद्वाहयामास च तं स्वयमेव पिनाकधृक् ।
मरुत्ताञ्च शुभां कन्यां स्वयमेति च विष्णु[1]ताम् ॥४१

तत्पश्चात् त्रिशूलधारी महादेव ने स्वयं मरुद्गणों की सुन्दरी कन्या के साथ, उसका विवाह कराया ।४१

एतज्जप्येश्वरं स्थानं देवदेवस्य शूलिनः ।
यत्र तत्र मृतो मर्त्यो रुद्रलोके महीयते ॥४२

यह जाप्येश्वर नामक तीर्थ त्रिशूली महादेव का स्थान है । इस तीर्थ के किसी भी स्थान पर मृत्यु हो जाने से, मनुष्य को रुद्रलोक की प्राप्ति होती है ।४२

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे जप्येश्वरमाहात्म्ये त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में जाप्येश्वरमाहात्म्य नामक तिरालीसवाँ अध्याय समाप्त ॥४३

•

चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ तीर्थमाहात्म्यमेव

सूत उवाच

अन्यच्च तीर्थप्रवरं [2]जप्येश्वरसमीपतः ।
नाम्ना पञ्चनदं पुण्यं सर्वपापप्रणाशनम् ॥१

सूत बोले—जप्येश्वर के पास, सर्वपापनाशक, अत्यन्त पवित्र पञ्चनद नामक एक श्रेष्ठ तीर्थ है ।१

---

१. विश्रुतामिति पा० । २. जप्येश्वरसमीपगमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिरात्रमुषितस्तत्र पूजयित्वा महेश्वरम् ।
सर्वपापविशुद्धात्मा रुद्रलोके महीयते ॥२

उस तीर्थ में तीन रात तक उपवास रहकर महेश्वर, की पूजा करने से, सारे पापों से मुक्त होकर, रुद्रलोक में सम्मान होता हैं ।२

अन्यच्च तीर्थप्रवरं शक्रस्यामिततेजसः[1] ।
महाभैरवमित्युक्त[2] महापातकनाशनम् ॥३

अपरिमित बलशाली, इन्द्र का सर्वपापनाशक, महाभैरव नाम से विख्यात एक एक श्रेष्ठ तीर्थ है ।३

तीर्थानाञ्च परं तीर्थं वितस्ता परमा नदी ।
सर्वपापहरा पुण्या स्वयमेव गिरीन्द्रजा ॥४

स्वयं पर्वत श्रेष्ठ हिमालय से उत्पन्न पवित्र, सर्वपापहारिणी, वितस्ता नामक श्रेष्ठ नदी, तीर्थों में उत्कृष्ट तीर्थ है ।४

तीर्थं पञ्चतपो नाम शंभोरमिततेजसः ।
यत्र देवाधिदेवेन शक्रार्थे[3] पूजितो भवः ॥५

अपरिमित बलशाली शम्भु को, पञ्चतप नामक एक तीर्थ है । जहां देवाधिदेव विष्णु ने सुदर्शन चक्र के लिए, महादेव की पूजा की थी ।५

पिण्डदानादिकं तत्र प्रेत्यानन्दसुखप्रदम् ।
मृतस्तत्राथ नियमाद्ब्रह्मलोके महीयते ॥६

उस तीर्थ में पिण्डदानादि कर्म करने से, परलोक में आनन्द और सुख की प्राप्ति होती है और नियमों का पालन करते हुए यहां प्राण त्यागने से मनुष्य ब्रह्म लोक में सम्मानित होता है ।६

कायावरोहणं नाम महादेवालयं शुभम् ।
यत्र माहेश्वरा धर्मा मुनिभिः संप्रवर्त्तिताः ॥७

महादेव का अत्यन्त पवित्र निवास स्थान, कायावरोहण नामक एक और तीर्थ है । उस स्थान पर मुनियों ने माहेश्वर धर्म का प्रचार किया था ।७

श्राद्धं दानं तपो होम उपवासस्तथाक्षयः ।
परित्यजति यः प्राणान्रुद्रलोकं स गच्छति ॥८

---

१. शङ्करस्यामितौजस इति पा० । २. महाभारतमित्युक्तमिति पा० । ३. पुत्रार्थं इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस तीर्थ में श्राद्ध दान तपस्या, हवन और उपवास करने से अक्षय फल मिलता है और जो प्राण त्यागता है वह रुद्रलोक में जाता है ।८

अन्यच्च तीर्थप्रवरं कन्यातीर्थमनुत्तमम् ।
तत्र गत्वा त्यजेत्प्राणाँल्लोकान् प्राप्नोति शाश्वतान् ॥९

कन्या तीर्थ नामक एक और श्रेष्ठ तीर्थ है। उस तीर्थ में जाकर प्राण त्यागने से मनुष्य को शाश्वत लोकों का प्राप्ति होती है। ९

जामदग्न्यस्य च शुभं रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।
तत्र स्नात्वा तीर्थवरे गोसहस्रफलं लभेत् ॥१०

जमदग्नि पुत्र महापराक्रमी परशुराम का एक पवित्र तीर्थ है। उस श्रेष्ठ तीर्थ में स्नान करने से, हजारों गोदान का फल मिलता है।१०

महाकालमिति ख्यातं तीर्थं लोकेषु विश्रुतम् ।
गत्वा प्राणान् परित्यज्य गाणपत्यमवाप्नुयात् ॥११

जगत्प्रसिद्ध महाकाल के नाम से प्रख्यात तीर्थ में जाकर प्राण त्यागने से सारे पदार्थों का स्वामित्व प्राप्त होता है।११

गुह्याद्गुह्यतमं तीर्थं नकुलीश्वरमुत्तमम् ।
तत्र सन्निहितः श्रीमान् भगवान्नकुलीश्वरः ॥१२

नकुलीश्वर नाम से प्रसिद्धअत्यन्त गोपनीय एक श्रेष्ठ तीर्थ हैं। उस तीर्थमें, सौन्दर्यशाली भगवान् शिव विराजमान हैं।१२

हिमवच्छिखरे रम्ये गंगाद्वारे सुशोभते ।
देव्या सह महादेवो नित्यं शिष्यैश्च सम्भृतः ॥१३

रमणीय हिमालय के, हिमाच्छादित शिखर पर गंगाद्वार नामक तीर्थ अत्यन्त सुशोभित है। वहां शिष्यों के समूह से घिरे हुए महादेव, देवी के साथ, सदा निवास करते हैं।१३

तत्र स्नात्वा महादेवं पूजयित्वा वृषध्वजम् ।
सर्वपापैर्विशुद्धचेत [1]मृतस्तज्ज्ञानमाप्नुयात् ॥१४

वहां नहाकर महादेव वृषध्वज की पूजा करने से मनुष्य सारे पापों से मुक्त हो जाता है और मरने से महादेव विषयक ज्ञान की प्राप्ति होती है।१४

अन्यच्च देवदेवस्य स्थानं पुण्यतमं शुभम् ।
भीमेश्वरमिति ख्यातं गत्वा मुञ्चति पातकम् ॥१५

---

१. मृतस्तु ज्ञानमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवाधिदेव महेश्वर का निवास स्थान, भीमेश्वर नाम से प्रसिद्ध, एक और पवित्र और शुभ तीर्थ स्थान है। वहां जाने से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है।१५

तथान्यश्चण्डवेगायाः सम्भेदः पापनाशनः।
तत्र स्नात्वा च पीत्वा च मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥१६

चण्डवेगा नदी का संगमस्थल पापनाशक है। वहां स्नान करने तथा वहां का जल पीने से, ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति मिलती है।१६

सर्वेषामपि चैतेषां तीर्थानां परमा पुरी।
नाम्ना वाराणसी दिव्या कोटिकोटिशतैरधिका ॥१७

वाराणसी नामक अलौकिक नगर, सारे तीर्थों में श्रेष्ठ है। करोड़ों तीर्थों की तुलना में भी यह अधिक फलदायक है।१७

तस्याः पुरस्तान्माहात्म्यं भाषितं वो मया त्विह।
नान्यत्र लभते मुक्तिं योगेनाप्येकजन्मना ॥१८

तीर्थों के वर्णन प्रसंग में मैंने पहले ही आप लोगों को वाराणसी का माहात्म्य बताया था। इस तीर्थ के अलावा, दूसरे तीर्थों में योग के बल पर भी, एक जन्म में मुक्ति नहीं मिलती।१८

एते प्राधान्यतः प्रोक्ता देशाः पापहरा नृणाम्।
गत्वा संक्षालयेत्पापं जन्मान्तरशतैरपि ॥१९

मनुष्यों के पापों को धोने वाले, इन सभी प्रधान तीर्थों के विषय में बताया गया है। इन सभी तीर्थों में जाकर, सौ जन्मों के पापों को धोना चाहिए।१९

यः स्वधर्मान् परित्यज्य तीर्थसेवां करोति हि।
न तस्य फलते तीर्थमिह लोके परत्र च ॥२०

जो व्यक्ति अपने धर्मों को छोड़कर तीर्थ सेवा करता है, उसे इस संसार और परलोक में भी तीर्थों का फल नहीं मिलता।२०

प्रायश्चित्ती च विधुरस्तथा यायावरो गृही।
प्रकुर्यात्तीर्थसंसेवां यश्चान्यस्तादृशो जनः ॥२१

प्रायश्चित्त करने वाले, विधुर, संन्यासी और गृहस्थों को तीर्थ सेवा करनी चाहिए और दूसरें, इनके जैसे लोग भी तीर्थसेवा कर सकते हैं।२१

सहाग्निर्वा सपत्नीको गच्छेत्तीर्थानि यत्नतः।
सर्वपापविनिर्मुक्तो यथोक्तां गतिमाप्नुयात् ॥२२

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्नि साथ में लेकर, पत्नी के साथ, यत्नपूर्वक तीर्थयात्रा करनी चाहिए। ऐसा करने से सारे पापों से छुटकारा मिल जाता है और सद्गति हो जाती है।२२

ऋणानि[1] त्रीण्यपाकुर्यात्कुर्वन्वा तीर्थसेवनम् ।
विधाय वृत्तिं पुत्राणां भार्यां तेषु विधाय च ॥२३

देव, ऋषि और पितृ ऋणो से मुक्त होकर, पुत्रों पर जीविकोपार्जन का दायित्व और पत्नी का भार सौंपकर, तीर्थसेवा करनी चाहिए।२३

प्रायश्चित्तप्रसङ्गेन तीर्थमाहात्म्यमीरितम् ।
यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वपापैः[2] प्रमुच्यते ॥२४

प्रायश्चित्त के वर्णन प्रसंग में, तीर्थों का माहात्म्य बताया गया। जो व्यक्ति इसका पाठ करता है या सुनता है, वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है।२४

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्द्धे तीर्थमाहात्म्यं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, तीर्थमाहात्म्य नामक चौवालीसवां अध्याय समाप्त।४४

●

पंचचत्वारिंशोऽध्यायः

अथ कूर्मरूपधारणवर्णनम्

सूत उवाच

एतदाकर्ण्य विज्ञानं नारायणमुखेरितम् ।
कूर्मरूपधरं देवं पप्रच्छुर्मुनयः प्रभुम् ॥१

सूत बोले—मुनियों ने नारायण के मुख से निकली, विशिष्ट ज्ञान की बातें सुनकर, कूर्मरूपधारी देव प्रभु से पूछा।१

मुनय ऊचुः

कथितो[3] भवता धर्मो मोक्षज्ञानं सविस्तरम् ।
लोकानां सर्गविस्तारो वंशो मन्वन्तराणि च ॥२

---

१. ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य कुर्याद्वेति, ऋणानि त्रीण्यपाहृत्य कुर्याद्वा इति पा०।
२. मुच्यते सर्वपातकैरिति पा०। ३. कथिता भवता धर्माः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनिवृन्द बोले—चातुर्वर्ण्यादि धर्म, मोक्ष ज्ञान, संसार की सृष्टि और मन्वन्तर के विषय में आपने विस्तार से कही ।२

इदानीं[1] देवदेवेश प्रलयं वक्तुमर्हसि ।
भूतानां भूतभव्येश यथा पूर्वं त्वयोदितम् ॥३

हे भूतभव्येश ! अपने प्राणियों की सृष्टि का जो क्रम बनाया है, हे देवाधिदेव ! अब उसी रूप में उनके प्रलय के विषय में भी बताइए ।३

सूत उवाच

श्रुत्वा तेषां तदा वाक्यं भगवान् कूर्मरूपधृक् ।
व्याजहार महायोगी भूतानां प्रतिसञ्चरम्[2] ॥४

सूत बोले—कूर्मरूपधारी महायोगी भगवान्, मुनियों की बातों को सुनकर, सारी सृष्टि के प्रलय के विषय में बताने लगे ।४

कूर्म उवाच

नित्यो नैमित्तिकश्चैव प्राकृतोऽत्यन्तिकस्तथा[3] ।
चतुर्धायं पुराणेऽस्मिन् प्रोच्यते प्रतिसञ्चरः ॥५

कूर्म बोले—पुराण में, नित्य, नैमित्तिक, प्राकृत और आत्यन्तिक चार प्रकार के प्रलय बताये गये हैं ।५

योऽयं सन्दृश्यते नित्यं लोके भूतक्षयस्त्विह ।
नित्यः संकीर्त्यते नाम्ना मुनिभिः प्रतिसञ्चरः ॥६

इस संसार में प्रतिदिन प्राणियों का जो अन्त दिखाई देता है, उसे मुनियों ने नित्य प्रलय कहा है ।६

ब्रह्मनैमित्तिको नाम कल्पान्ते यो भविष्यति ।
त्रैलोक्यस्यास्य कथितः प्रतिसर्गो मनीषिभिः ॥७

सृष्टि के अन्त में, ब्रह्मा के (सो जाने के) कारण तीनों लोकों (भूः भुवः स्वः) में, जो प्रलय होता है उसे मनीषिवृन्द नैमित्तिक प्रलय कहते हैं ।७

महदाद्यं विशेषान्तं यदा संयाति संक्षयम् ।
प्राकृतः प्रतिसर्गोऽयं प्रोच्यते कालचिन्तकैः ॥८

---

१. प्रतिसर्गमिदानीं नो वक्तमर्हसि माधव इति, इदानीं प्रतिसर्गान्वा वक्तुमर्हसि माधवेति पा० । २. प्रतिसञ्चरम्—आत्मनि पुनः संग्रहम् प्रतिसंहारमित्यर्थः । ३. प्राकृतात्यन्तिको मतः इतिः पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत् अहंकारादि स्थूलभूतों के अन्त को, कालज्ञानी प्राकृत प्रलय कहते हैं ।८

ज्ञानादात्यन्तिकः प्रोक्तो योगिनः परमात्मनि ।
प्रलयः प्रतिसर्गोऽयं कालचिन्तापरैर्द्विजैः ॥९

तत्त्वज्ञान प्राप्ति के बाद तपस्वियों का परमात्मा में लीन हो जाने को, काल-चिन्तन-परायण ब्राह्मणों ने आत्यन्तिक प्रलय कहा है ।९

आत्यन्तिकस्तु कथितः प्रलयो ज्ञानसाधनः[1] ।
नैमित्तिकमिदानीं वः [कथयिष्ये[2] समासतः ॥१०

आत्मज्ञान के लिए इसको आत्यन्तिक प्रलय कहा गया है । अब आपलोगों को नैमित्तिक प्रलय के विषय में संक्षेप से बताऊँगा ।१०

चतुर्व्यूंहसहस्रान्ते[3] सम्प्राप्ते प्रतिसञ्चरे ।
स्वात्मसंस्थाः प्रजाः कर्तुं प्रतिपेदे प्रजापतिः ॥११

चार हजार वर्ष बीत जाने के बाद, प्रलय काल आने पर, ब्रह्मा के मन में, सारे संसार को आत्मसात् करने की इच्छा उत्पन्न हुई ।११

ततोऽभवत्त्वनावृष्टिस्तीव्रा सा शतवार्षिकी ।
भूतक्षयकरी घोरा सर्वभूतक्षयंकरी ॥१२

उसके बाद सौ वर्षों तक सभी प्राणियों का ह्रास करने वाला तथा सभी के लिए घातक, भयानक सूखा पड़ा ।१२

ततो यान्यल्पसाराणि सत्त्वानि पृथिवीपते ।
तानि चाग्रे प्रलीयन्ते भूमित्वमुपयान्ति च ॥१३

हे राजन् ! उसके बाद जितने अल्प बल वाले प्राणी थे वे विनष्ट होकर भूमिसात् हो गये ॥१३

सप्तरश्मिरथो भूत्वा समुत्तिष्ठन्दिवाकरः ।
असह्यरश्मिर्भवति पिबन्नम्भो गभस्तिभिः ॥१४

उसके बाद सातों किरणों से प्रकाश फैलाते हुए सूर्य उदित हुए । उस समय उनके किरणों को कोई सह नहीं पा रहा था । उन्ही किरणों से वह, जल पी गये ।१४

तस्य ते रश्मयः सप्त पिबन्त्यम्बु महार्णवे ।
तेनाहारेण ता दीप्त्वा सप्तसूर्या भवन्त्युत ॥१५

इस प्रकार सूर्य की सातों किरणें महासगार का जल पी गयीं । जल पीने के कारण प्रदीप होकर, सातों किरणें, सात सूर्य के रूप में परिणत हो गयीं ।१५

---

१. लयसाधनः इति पा० । २. कीर्त्तयिष्ये इति पा० । ३. चतुर्युगसहस्रान्ते इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततस्ते रश्मयः सप्त शोषयित्वा[1] चतुर्दिशम् ।
चतुर्लोकमिमं सर्वं दहन्ति शिखिनो यथा ॥१६

ये सातों किरणें, चारों तरफ विद्यमान, जल को सुखा कर, आग की भाँति, चारोंलोकों (भूः, भुवः, स्वः और महत् लोक) को जलाने लगीं ।१५-१६

व्याप्नुवन्तश्च ते दीप्ता ऊर्ध्वञ्चाधः स्वरश्मिभिः ।
दीप्यन्ते भास्कराः सप्त युगान्ताग्निप्रदीपिताः ॥१७

यह सातों सूर्य अपनी किरणों से ऊर्ध्व और अधोभाग को व्याप्त कर प्रलय-कालीन अग्नि के साथ मिलकर, भयानक रूप से जलने लगे ।१७

ते सूर्या वारिणा दीप्ता बहुसाहस्ररश्मयः ।
खं समावृत्य तिष्ठन्ति प्रदहन्तो वसुन्धराम् ॥१८

यह सातों सूर्य, जल सोखने के कारण प्रदीप्त और हजारों किरणों से युक्त होकर, पूरे आकाश को ढक कर, पृथिवी को जलाने लगे ।१८

ततस्तेषां प्रतापेन दह्यमाना वसुन्धरा ।
साद्रिनद्यर्णवद्वीपा निःस्नेहा सम्पद्यते ॥१९

इससे पर्वत, नदी, समुद्र और द्वीपों के साथ पृथ्वी, सूर्य के प्रखर तेज से जलकर, सूख गई ।१९

दीप्ताभिः सन्ततार्चिभिश्च रश्मिभिर्वै समन्ततः ।
अधश्चोर्द्ध्वञ्च लग्नाभिस्तिर्यक् चैव समावृतम् ॥२०

चारों तरफ व्याप्त, दहकती हुई सूर्य की किरणें, ऊपर, नीचे और चारों तरफ, सब कुछ घेरने लगीं ।२०

सूर्याग्निना प्रमृष्टानां[2] संसृष्टानां परस्परम् ।
एकत्वमुपयातानामेकज्वालं भवत्युत ॥२१

सूर्य की अग्नि से जले हुए और एक दूसरे से पृथक् सारे पदार्थ, एक होकर, एक ही ज्वाला के रूप में परिवर्तित हो गये ।२१

सर्वलोकप्रणाशश्च सोऽग्निर्भूत्वा तु मण्डली ।
चतुर्लोकमिमं सर्वं निर्दहत्याशु[3] तेजसा ॥२२

तत्पश्चात् वह ज्वाला, सारी सृष्टि का नाश करने वाली, मण्डलाकार अग्नि के रूप में परिणत होकर, अपने तेज से, चारों लोकों को शीघ्र जलाने लगती है ।२२

---

१. सूर्या भूत्वा चतुर्दशेति पा० । २. प्रतप्तानामिति, सूर्याग्निना प्रवृत्तानामिति पा० । ३. निर्दहत्यात्मतेजसेति, निहन्त्याशु स्वतेजसा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ततः प्रलीने सर्वस्मिञ्जङ्गमे स्थावरे तथा।
निर्वृक्षा निस्तृणा भूमिः कूर्मपृष्ठा प्रकाशते ॥२३

इससे सारे जड़ और चेतन पदार्थ के नष्ट हो जाने के बाद, वृक्ष और तृण रहित यह पृथ्वी कछुए की पीठ की भाँति प्रतीत होने लगी।२३

अम्बरीषमिवाभाति सर्वमापूरितं जगत्।
सर्वमेव[1] तदर्च्चिर्वै पूर्णं जाज्वल्यते पुनः ॥२४

सम्पूर्ण संसार, किरणों की ज्वालाओं से परिपूर्ण हो जाने के कारण भाड़ (अम्बरीष) की भाँति प्रतीत होने लगा। बाद में सारा संसार उस किरण से व्याप्त होकर जल उठा।२४

पाताले यानि सत्त्वानि[2] महोदधिगतानि च।
ततस्तानि प्रलीयन्ते भूमित्वमुपयान्ति च ॥२५

पाताल और महासागरों में जितने प्राणी थे, वे इस सौराग्नि में जलकर मिट्टी हो गये।२५

द्वीपांश्च पर्वतांश्चैव वर्षाण्यथ महोदधीन्।
तान् सर्वान् भस्मसाच्चक्रे सप्तात्मा पावकः प्रभुः ॥२६

तत्पश्चात्, सात सूर्य के रूप में प्रज्वलित अग्नि ने, सारे द्वीपों, पर्वतों, जम्बू-द्वीप के नौ अंशों और महासागरों को भस्म कर दिया।२६

समुद्रेभ्यो नदीभ्यश्च आपः शुष्काश्च सर्वशः।
पिबन्नपः समिद्धोऽग्निः पृथिवीमाश्रितो ज्वलन् ॥२७

समुद्रों और नदियों से, सारा जल सोख लेने के बाद वह जलती हुई अग्नि, पृथ्वी का आश्रय लेकर धधकने लगी।२७

ततः संवर्त्तकः शैलानतिक्रम्य महांस्तथा।
लोकान्दहति दीप्तात्मा मारुतेयो[3] विजृम्भितः ॥२८

वह महान् प्रलयाग्नि, हवा के तेज से प्रदीप्त होकर, पर्वतों को लाँघ कर, सारे संसार को जलाने लगी।२८

स दग्ध्वा पृथिवीं देवो रसातलमशोषयत्[4]।
अधस्तात्पृथिवीं दग्ध्वा दिवमूर्ध्वं दहिष्यति[5] ॥२९

---

१. सर्वमेतत्तदर्च्चिभिरिति पा०। २. तीर्थानीति पा०। ३. रुद्रतेजोविजृम्भित इति पा०। ४. अशोभयदिति पा०। ५. धक्ष्यति। इडागम आर्षः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस प्रलयाग्नि ने, पृथ्वी को जलाकर, पाताल तक भस्म कर दिया। उसके बाद पृथ्वी के निचले भाग को जलाकर, ऊपर आकर, आकाश मण्डल को जलाने लगी।२९

योजनानां शतानीह सहस्राण्ययुतानि च।
उत्तिष्ठन्ति शिखास्तस्य वह्नेः संवर्त्तकस्य तु ॥३०

महाप्रलयाग्नि की लपटें एक लाख और दस हजार योजन तक ऊपर उठीं।३०

गन्धर्वांश्च पिशाचांश्च सयक्षोरगराक्षसान्।
तदा दहत्यसौ दीप्तः कालरुद्रप्रणोदितः ॥३१

भगवान् कालाग्नि रुद्र के द्वारा प्रेरित की गई, वह धधकती हुई ज्वालाएँ, ऊपर की ओर उठती हुई, गन्धर्व, पिशाच, यक्ष, नाग और राक्षसों को जलाने लगीं।३१

भूर्लोकञ्च भुवर्लोकं महर्ल्लोकं[1] तथैव च।
दहेदशेषं कालाग्निः कालाविष्टतनुः स्वयम् ॥३२

प्रलयाग्नि ने स्वयं काल से व्याप्त शरीर को धारण करके, भूः, भुवः, स्वः और महत् लोक को पूर्णरूप से जलाना प्रारम्भ किया।३२

व्याप्तेष्वेतेषु लोकेषु तिर्यगूर्ध्वमथाग्निना।
तत्तेजः समनुप्राप्य कृत्स्नं जगदिदं शनैः ॥३३
अतो गूढमिदं सर्वं तदेवैकं प्रकाशते।

जब वह आग ऊपर उठकर चारों लोकों में फैल गयी, तब उसके तेज से क्रमशः यह सारा संसार, एक साथ मिलकर, एक गहन प्रकाश से चमकने लगा।३३½

ततो गजकुलाकारास्तडिद्भिः समलंकृताः ॥३४
उत्तिष्ठन्ति तदा व्योम्नि घोराः संवर्त्तका घनाः।

इसके बाद घने, काले प्रलय के बादल, विद्युत् पुञ्जों से अलंकृत होकर, बड़े-बड़े हाथियों की भाँति, गरजते हुए आकाश में दिखाई देने लगे।३४½

केचन्नीलोत्पलश्यामाः केचित्कुमुदसन्निभाः ॥३५
धूम्रवर्णास्तथा केचित्केचित्पीताः पयोधराः।
केचिद्रासभवर्णास्तु लाक्षारसनिभाः परे ॥३६

उन मेघों में, कुछ नीले कमल के समान श्यामवर्ण थे, कुछ कुमुदिनी पुष्प के

---

१. स्वर्लोकञ्च तथा परमिति, स्वलोकंच तथा मह इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समान सफेद, कुछ धूम्रवर्ण थे, कुछ पीले रंग के, कुछ गधे के समान धूसर और कुछ लाख के समान लाल रंग के थे ।३५-३६

शङ्खकुन्दनिभाश्चान्ये जात्यञ्जननिभास्तथा[1]।
मनः[2] शिलाभाश्च परे कपोतसदृशाः परे ॥३७

कुछ शंख और कुन्द पुष्प के समान अत्यन्त शुभ्र, कुछ अञ्जन के समान गाढ़े नीले रंग के, कुछ मनः शिला (मैनसिल) के समान और कुछ कबूतर के समान, रंग वाले बादल थे ।३७

इन्द्रगोपनिभाः[3] केचिद्धरितालनिभास्तथा।
इन्द्रचापनिभाः केचिदुत्तिष्ठन्ति घना दिवि ॥३८

कुछ इन्द्रगोप नमक कीट के समान लाल रंग के, कुछ हरिताल (पीले रंग का धातु विशेष) और कुछ इन्द्रधनुष के समान सतरंगी बादल थे ।३८

केचित्पर्वतसंकाशाः केचिद्गजकुलोपमाः।
कूटांगारनिभाश्चान्ये केचिन्मीनकुलोद्वहाः ॥३९

कुछ पर्वत की आकार के, कुछ हाथियों के झुण्ड के आकार के थे। कुछ कूटागार (प्रासाद का सबसे ऊपर बना हुआ कमरा) के समान और कुछ बादल मछली के झुण्ड के आकार के थे ।३९

बहुरूपा घोररूपा घोरस्वरनिनादिनः।
तदा जलधराः सर्वे पूरयन्ति नभस्तलम् ॥४०

अनेक रूप और भयंकर स्वरूप वाले बादल, भयंकर स्वर में गरजते हुए, उस समय पूरे आकाश मण्डल पर छा गये ।४०

ततस्ते जलदा घोरा रविणो भास्करात्मजाः।
सप्तधा संवृतात्मानं तमग्निं शमयन्ति ते ॥४१

तत्पश्चात् सूर्य से उत्पन्न, गर्जना करते हुए उन भयंकर बादलों ने, सप्त-सूर्यात्मक अग्नि को शान्त किया ।४१

ततस्ते जलदा वर्षं मुञ्चंतीह महौघवत्।
सुघोरमशिवं वर्षं नाशयन्ति च पावकम् ॥४२

उन बादलों ने, घनघोर गर्जना के साथ, बरसते हुए, उस भयंकर, अमंगलकारी अग्नि को नष्ट कर दिया ।४२

---

१. जात्यांजननिभाः परे इति पा० । २. मन.शिलाभास्त्वन्ये चेति, मनःशिला-भास्त्वपरे इति पा० । ३. काकाण्डकनिभा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिवृद्ध[1] तदात्यर्थमम्भसा पूर्यते जगत् ।
अद्भिस्तेऽम्भोऽभिभूतत्वादग्निः प्रविशत्यपः ॥४३

अत्यन्त फैले हुए बादलों ने, सारे संसार को जल से प्लावित कर दिया। इससे तेज समाप्त हो जाने के कारण, अग्नि उसी जल में प्रवेश कर गया ।४३

नष्टे चाग्नौ वर्षशतैः पयोदाः क्षयसम्भवाः ।
प्लावयन्तो जगत्सर्वं महाजलपरिस्रवैः ॥४४

धाराभिः पूरयन्तोदं नोद्यमानाः स्वयम्भुवा ।
अत्यन्तसलिलौघास्तु वेला इव महोदधेः ॥४५

अत्यन्त वर्षा से अग्नि के नष्ट हो जाने के बाद, ब्रह्मा द्वारा प्रेरित, प्रलय-कालीन मेघों ने बरसात की झड़ी लगाकर संसार को जल से परिपूर्ण कर दिया और जैसे बढ़ी हुई जलराशि से समुद्र का किनारा डूब जाता है, उसी प्रकार उस भयंकर वर्षा से सारा संसार डूब गया ।४४-४५ ।

साद्रिद्वीपा ततः पृथ्वी जलैः सञ्छाद्यते शनैः ।
आदित्यरश्मिभिः पीतं[2] जलमभ्रेषु तिष्ठति ॥४६
पुनः पतति तद्भूमौ पूर्यन्ते तेन चार्णवाः ।

इसके बाद पर्वतों और द्वीपों के साथ यह पृथिवी धीरे-धीरे जल राशि में समा जाती है । पहले तो सूर्य की किरणों के द्वारा सोख लिये जाने के बाद, वह जल बादलों में रहता है। पुनः वही जल पृथ्वी पर (वर्षा के रूप में) गिरकर, समुद्रों को भर देता है ।४६½

ततः समुद्राः स्वां वेलामतिक्रान्तास्तु कृत्स्नशः ॥४७
पर्वताश्च विलीयन्ते मही चाप्सु निमज्जति ।

तत्पश्चात् समुद्र अपने तटों को लांघ जाते हैं और उसी जल में पर्वत और सारी पृथिवी डूब जाती है ।४७½

तस्मिन्नेकार्णवे घोरे नष्टे स्थावरजंगमे ॥४८
योगनिद्रां समास्थाय शेते देवः प्रजापतिः ।

सारे जड़ और चेतन समाप्त हो जाने के बाद, भगवान् ब्रह्मा, योगनिद्रा का सहारा लेकर, इस भयानक समुद्र में लेटे रहते हैं ।४८½

---

१. प्रवृद्धैस्तैरिति प्रवृत्तैस्तैरिति पा० । २. अग्नितेजोभिऽभूतत्वात्तदाग्निः प्रविशत्यपः इति पा० । ३. अत्यन्तसलिलौघैश्च परिप्लाव्य दिशो दश इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्युगसहस्रान्तं कल्पमाहुर्मनीषिणः[1] ॥४९
वाराहो वर्त्तते कल्पो यस्य विस्तर ईरितः ।

चार हजार युगों तक के समय को विद्वान् कल्प कहते हैं। इस समय वराह कल्प चल रहा हैं। जिसके विषय में मैंने विस्तार से बताया ।४९½

असंख्यातास्तथा कल्पा ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाः ॥५०
कथिता हि पुराणेषु मुनिभिः कालचिन्तकैः ।

कालज्ञ मुनियों ने पुराणों में कहा है कि कल्प असंख्य हैं और वे सारे कल्प ब्रह्मा विष्णु और शिवमय होते हैं ।५०½

सात्त्विकेष्वथ कल्पेषु माहात्म्यमधिकं हरेः ॥५१
तामसेषु हरस्योक्तं[2] राजसेषु प्रजापतेः ।

सात्त्विक कल्प में विष्णु का, तामस कल्प में शिव का और राजस कल्प में ब्रह्मा का माहात्म्य अधिक है ।५१½

योऽयं प्रवर्त्तते कल्पो वाराहः सात्त्विको मतः ॥५२
अन्ये च सात्त्विकाः कल्पा मम तेषु परिग्रहः ।

यह वाराह कल्प, जो चल रहा है, यह सात्त्विक कल्प है। और भी जो सात्त्विक कल्प हैं, वे मेरे अधीन हैं (अर्थात् विष्णु माहात्म्य प्रधान हैं) ५२½

ध्यानं तपस्तथा ज्ञानं लब्ध्वा ते योगिनःपरम् ॥५३
आराध्य तञ्च गिरिशं यान्ति तत्परमम्पदम् ।

इन सारे कल्पों में, योगिगण, ध्यान, तपस्या और ज्ञान प्राप्त करके, शिव तथा मेरी आराधना करके, श्रेष्ठ पद प्राप्त करते हैं।५३½

सोऽहं तत्त्वं समास्थाय मायी मायामयीं स्वयम् ॥५४
एकार्णवे जगत्यस्मिन्योगनिद्रां व्रजामि तु ।

जब यह संसार एक समुद्र की भाँति (जलमय) हो जाता है, तब केवल मै ही मायामय तत्त्व का सहारा लेकर, योगनिद्रा में शयन करता हूँ ।५४½

[3]मां पश्यन्ति महात्मानः सुप्तिकाले महर्षयः ॥५५
जनलोके वर्त्तमानास्तापसा योगचक्षुषा ।

मेरे इसी सुषुप्ति-काल में, महात्मा ऋषिवृन्द, जनलोक में रहकर, अपने तपोबल से, योगनेत्रों के द्वारा, मेरा दर्शन प्राप्त करते हैं ।५५½

---

१. महर्षय इति पा० । २. शिवस्योक्तमिति पा० । ३. मां पश्यन्ति महात्मानः सुप्तं कालविपर्यय इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहं पुराणः पुरुषो भूर्भुवःप्रभवो विभुः ॥५६
सहस्रचरणः श्रीमान् सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
मन्त्रोऽहं[1] ब्राह्मणा गावः कुशोऽथ समिधो ह्यहम् ॥५७

मैं पुराण पुरुष, भूः भूवः का उत्पत्ति स्थान, सर्वत्र व्याप्त, हजारों चरणों, नेत्रों और किरणों से युक्त, सौन्दर्यवान् हूँ। मैं ही मन्त्र, अग्नि, गौ, कुश, और समिधा हूँ।५६-५७।

प्रोक्षणीयं[2] स्वयञ्चैव सोमो व्रतमथास्म्यहम् ।
संवर्त्तको महानात्मा पवित्रं परमं यशः ॥५८

मैं प्रोक्षणी, सोम, और व्रत स्वरूप हूँ। मैं ही प्रलय, महान् आत्मा, पवित्र और श्रेष्ठ यश हूँ।५८

मेधाप्यहं प्रभुर्गोप्ता गोपतिर्ब्राह्मणो मुखम् ।
अनन्तस्तारको योगी गतिर्गतिमतां वरः ॥५९

मैं बुद्धि, प्रभु, रक्षक, गोपति, ब्राह्मण और आदि हूँ। मैं अन्त हीन, सबको मुक्ति देने वाला, और योगी हूँ। मैं ही गति हूँ और गतिमानों में श्रेष्ठ भी मैं ही हूँ।५९

हंसः प्राणोऽथ कपिलो विश्वमूर्त्तिः सनातनः ।
क्षेत्रज्ञः प्रकृतिः कालो जगद्बीजमथामृतम् ॥६०
माता पिता महादेवो[3] मत्तो ह्यन्यो न विद्यते ।

हंस, प्राण, कपिल, विश्वमूर्ति, प्राचीन, अन्तर्यामी पुरुष, प्रकृति, काल, संसार का मूल, अमृत, माता, पिता, और महादेव, सब कुछ मैं ही हूँ। मुझसे पृथक् कुछ भी नहीं है।६०½

आदित्यवर्णो भुवनस्य गोप्ता नारायणः पुरुषो योगमूर्त्तिः ।
तं पश्यन्ते[4] यतयो योगनिष्ठा ज्ञात्वात्मानं[5] मम तत्त्वं व्रजन्ति ॥६१

मैं सुनहरे रंगवाले संसार का रक्षक, योगमूर्त्ति पुरुष नारायण हूँ। संन्यासी वृन्द, ध्यान लगाने से ही मेरा दर्शन प्राप्त कर सकते हैं। आत्मज्ञान की प्राप्ति होने से ही, वे लोग मेरा यह तत्त्व जान पाते हैं।६१

---

१. मन्त्रोऽग्निर्ब्राह्मणः इति, मैत्राग्निर्ब्राह्मणः इति पा०। २. प्रोक्षणी च स्रुवश्चैव सोमो वृतमिति पा०। ३. महादेव्यः इति पा०। ४. पश्यन्ते इति आर्षमात्मनेपदम्। मां पश्यतीति पा०। ५. ज्ञात्वात्मानममृतत्वं व्रजन्तीति, अमृतं त्वां व्रजन्ति इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इति श्रीकूर्मपुराणे उत्तरार्धे व्यासगीतासु पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५

कूर्मपुराण के उत्तरार्ध में, व्यासगीता के वर्णन--प्रसंग में पैंतालीसवां अध्याय समाप्त ॥४५

षट्चत्वारिंशोऽध्यायः

अथ व्यासकथनस्थित्युद्भवप्रलयव्याख्यानम्

कूर्म उवाच

अतः परं प्रवक्ष्यामि प्रतिसर्गमनुत्तमम् ।
प्राकृतं तत्समासेन शृणुध्वं गदतो मम ॥१

कूर्म बोले--इसके बाद, प्राकृत प्रलय के विषय में संक्षेप में बताऊंगा, आप लोग मुझसे सुनिए ।१

गते परार्द्धद्वितये काले लोकप्रकालनः ।
कालाग्निर्भस्मसात्कर्तुं चरते[1] चाखिलं जगत् ॥२

ब्रह्मा के जीवनकाल का पूर्वार्ध और उत्तरार्ध बीत जाने के बाद, सारे संसार का नाश करने वाला कालाग्नि, सारी सृष्टि को भस्मीभूत करने को तत्पर हो जाता है ।२

स्वात्मन्यात्मानमावेश्य[2] भूत्वा देवो महेश्वरः ।
दहेदशेषं ब्रह्माण्डं सदेवासुरमानुषम् ॥३

देव महेश्वर अपनी आत्मा में, सारी आत्माओं (जीवात्मा) को समाहित करके; देव, असुर और मनुष्यों के साथ, पूरे ब्रह्माण्ड को जला डालते हैं ।३

तमाविश्य महादेवो भगवान्नीललोहितः ।
करोति लोकसंहारं भीषणं रूपमाश्रितः ॥४

भगवान् नीललोहित महादेव, उस अग्नि में प्रवेश करके भयानक रूप धारण कर, संसार का नाश करने लगते हैं ।४

---

१. करोति निखिलां गतिमिति पा० । २. स्वात्मनात्मानमावेश्येति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रविश्य मण्डलं सौरं कृत्वाऽसौ बहुधा पुनः ।
निर्दहत्यखिलं लोकं सप्तसप्तिस्वरूपधृक् ॥५

उसके बाद, भगवान् सौरमण्डल में प्रवेश कर, सूर्य रूप धारण करके, सारे संसार को बहुधा जला देते हैं ।५

स दग्ध्वा सकलं विश्वमस्त्रं ब्रह्मशिरो महत् ।
देवतानां शरीरेषु क्षिपत्यखिलदाहकम् ॥६

सारा संसार जला डालने के बाद, भगवान् देवताओं के शरीर पर, सब कुछ जला डालने वाला, ब्रह्मशिर नामक महान् अस्त्र को फेंकते हैं ।६

दग्धेष्वशेषदेवेषु देवी गिरिवरात्मजा ।
एषा सा साक्षिणी शम्भोस्तिष्ठते वैदिकी श्रुतिः ॥७

इससे सारे देवता भस्म हो गए और एकमात्र देवी पार्वती, साक्षी रूप में शम्भु के पास विद्यमान रहती है । वेदो में ऐसा ही कहा गया है ।७

शिरः कपालैर्देवानां कृतस्रग्वरभूषणः ।
आदित्यचन्द्रादिगणैः पूरयन्व्योममण्डलम् ॥८

देवताओं के कपाल से बनी हुई माला रूपी आभूषण को धारण करने वाले देव महेश्वर, सूर्य और चन्द्रमादि नक्षत्रों से आकाश मण्डल को पूर्ण कर देते हैं ।८

सहस्रनयनो देवः सहस्राक्ष[1] इतीश्वरः ।
सहस्र हस्तचरणः सहस्रार्चिर्महाभुजः ॥९

दंष्ट्राकरालवदनः प्रदीप्तानललोचनः ।
त्रिशूलकृत्तिवसनो योगमैश्वरमास्थितः ॥१०

पीत्वा तत्परमानन्दं प्रभूतममृतं स्वयम् ।
करोति ताण्डवं देवीमालोक्य परमेश्वरः ॥११

हजार नेत्रों, हजार आकृतियों, हजार हाथों हजार चरणों, हजार किरणों, महान् भुजाओं, बड़े-बड़े दाँतो वाले मुखमण्डल और जलते हुए अग्नि के समान नेत्रों वाले, (रुद्र) ने त्रिशूल धारण कर तथा व्याघ्र चर्म पहनकर, ईश्वरीय योग का आश्रय लेकर, उससे उत्पन्न परमानन्द रूपी अमृत का पान कर देवी की ओर देखते हुए, ताण्डव करने लगते हैं ।९-११।

पीत्वा नृत्यामृतं देवी भर्तुः परममंगलम् ।
योगमास्थाय देवस्य देहमायाति शूलिनः ॥१२

---

१. सहस्राकृतिरीश्वर इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवी अपने स्वामी के परम कल्याणकारी नृत्यामृत का पान करके, योग का सहारा लेकर देव त्रिशूली के शरीर में प्रवेश करती है ।१२

स भुक्त्वा ताण्डवरसं स्वेच्छयैव पिनाकधृक् ।
ज्योतिःस्वभावं भगवान्दग्ध्वा ब्रह्माण्डमण्डलम् ॥१३

सारी सृष्टि का जलना जब बन्द हो जाता है तब भगवान् पिनाकधृक् (महेश्वर) अपनी इच्छा से नृत्य का त्याग कर, पुनः प्रकाशमय स्वरूप को धारण कर लेते हैं ।१३

संस्थितेष्वथ देवेषु ब्रह्मा विष्णुः पिनाकधृक् ।
गुणैरशेषैः पृथिवी विलयं याति वारिषु ॥१४

इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु और शिव प्रभृति के समाप्त हो जाने के बाद, पृथिवी सारे गुणों के साथ जल में विलीन हो जाती है।१४

स वारि तत्त्वं सगुणं ग्रसते हव्यवाहनः ।
तेजः[1] स्वगुणसंयुक्तं वायौ संयाति संक्षयम् ॥१५

आकाशे सगुणो वायुः प्रलयं याति विश्वभृत् ।
भूतादौ च तथाकाशे लीयते गुणसंयुतः ॥१६

जल अपने गुणों के साथ अग्नि में, अग्नि अपने गुणों के साथ वायु में, विश्वभर्त्ता वायु, अपने गुणों के साथ—आकाश में और आकाश अपने गुणों के साथ भूतादि (तामसिक अहंकार) में विलीन हो जाता है ।१५-१६।

इन्द्रियाणि च सर्वाणि तैजसे याति संक्षयम् ।
वैकारिको[2] देवगणैः प्रलयं याति सत्तमाः ॥१७

हे सज्जनों ! सारी इन्द्रियां, तैजस (राजसिक अहंकार) में और इन्द्रियों के स्थितिकारक देववृन्द, वैकारिक अहंकार में विलीन हो जाते हैं ।१७

त्रिविधोऽयमहंकारो महति प्रलये व्रजेत् ।
महान्तमेभिः सहितं ब्रह्माणमितौजसम् ॥१८

अव्यक्तस्थगतो योनिः संहरेदेकमव्ययम् ।
एवं संहृत्य भूतानि तत्त्वानि च महेश्वरः ॥१९

वैकारिक, राजसिक और तामसिक ये तीनों अहंकार महत् तत्त्व में विलीन होते हैं । त्रिविध अहंकार युक्त, अपरिमित बलशाली, सर्वत्र व्याप्त, महत्तत्त्व का संहार,

---

१. तैजसं गुणसंयुक्तमिति, तेजस्तु गुणसंयुक्तमिति पा० । २. वैकारिको देवगण इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगत् के कारणभूत, अद्वितीय और अक्षय प्रकृति के द्वारा होता है।१८-१९।

वियोजयति[1] चान्योऽन्यं प्रधानं पुरुषं परम् ।
प्रधानपुंसोरजयोरेष संहार ईरितः ॥२०

परमेश्वर (पञ्चभूत और तामसिक तत्त्वों का संहार कर) प्रकृति-पुरुष को परस्पर पृथक् कर देते हैं। इसे प्रकृति-पुरुष का संहार कहा जाता है।२०

महेश्वरेच्छाजनितो न स्वयं विद्यते लयः ।
गुणसाम्यं तदव्यक्तं प्रकृतिः परिगीयते ॥२१
प्रधानं जगतो योनिर्मायातत्त्वमचेतनम् ।

यह (प्रक्रिया) ईश्वर की इच्छा से होती है। अपने आप प्रकृति-पुरुष का संहार नहीं होता। सत्त्व, रज और तमोगुण की साम्यावस्था रूप प्रकृति, अव्यक्त के नाम से जानी जाती है। माया तत्त्व रूपी, अचेतन प्रकृति को प्रधान और संसार का कारण भी कहा जाता है। २१–२१½।

कूटस्थश्चिन्मयो ह्यात्मा केवलं पञ्चविंशकः ॥२२
गीयते मुनिभिः साक्षी महानेष पितामहः ।

त्रिकालव्यापी, अविकारी और चैतन्य स्वरूप आत्मा ही पच्चीसवाँ पुरुष है। मुनियों ने इसे सर्वसाक्षी, अपरिमित और जगत् के कारणों का उत्पादक कहा है ।२२½

एवं संहा[2]रशक्तिश्च शक्तिर्मा[3]हेश्वरी ध्रुवा ॥२३
प्रधानाद्यं विशेषान्तं देहे रुद्र इति श्रुतिः ।

इस प्रकार की जो संहार शक्ति है, वह माहेश्वरी शक्ति ही है। प्रकृति से लेकर स्थूलभूत तक, देह में रूद्र ही सब है, ऐसा वेद में कहा गया है।२३½।

योगिनामथ सर्वेषां ज्ञानविन्यस्तचेतसाम् ॥२४
आत्यन्तिकञ्चैव लयं विदधातीह शंकरः ।
इत्येष भगवान्रुद्रः संहारं कुरुते वशी ॥२५

तत्त्वज्ञान सम्पन्न योगियों का, आत्यन्तिक प्रलय भी महेश्वर के द्वारा सम्पादित होता है। इस प्रकार भगवान् रुद्र के रूप में संहार करते हैं।२४-२५।

स्वा[4]पिका मोहिनी शक्तिर्नारायण इति श्रुतिः ।
हिरण्यगर्भो भगवाञ्जगत्सदसदात्मकम् ॥२६

---

१. वियोजयत्यथोऽन्योऽयमिति पा०। २. संसारकरणीति पा०। ३. स्थायिकेति, स्थापिता इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृजेदशेषं प्रकृतेस्तन्मयः पञ्चविंशकः ।

भगवान् की जगत्पालिका मोहिनी शक्ति, नारायण के नाम से प्रख्यात है। पच्चीसवें तत्त्व भगवान् हिरण्यगर्भ, प्रकृति के सहारे, सत् और असत् तत्त्वों से युक्त; इस सम्पूर्ण संसार की सृष्टि करते हैं।२६½

दुर्बलाः[1] सर्वगाः शान्ताः स्वात्मन्येव व्यवस्थिताः ।
शक्तयो ब्रह्मविष्ण्वीशा भुक्तिमुक्तिफलप्रदाः ॥२७
सर्वेश्वराः सर्वबन्धाः शाश्वतानन्तभोगिनः ।
एकमेवाक्षरं तत्त्वं पुम्प्रधानेश्वरात्मकम् ॥२८

सर्वज्ञ, सर्वतोगामी और शान्त, परमात्मगत यह यह तीनों शक्तियाँ ब्रह्मा, विष्णु-महेश्वर के नाम से विख्यात है तथा भोग-मोक्ष फल प्रदायक, सर्वेश्वर, सर्व-बन्धन स्वरूप और नित्यानन्दभोगी है। पुरुष प्रकृति और ईश्वर, ये सभी अद्वितीय परम, ब्रह्मस्वरूप हैं।२७-२८।

अन्याश्च शक्तयो दिव्यास्तत्र सन्ति सहस्रशः ।
इत्येते विविधैर्यज्ञैः शक्त्यादित्यादयोऽमराः ।
एकैकस्याः सहस्राणि देहानां वै शतानि च ॥२९

परमात्मा में और भी अलौकिक शक्तियां हैं। वे सारी शक्तियाँ इन्द्र-आदित्यादि देवताओं के रूप में, विविध यज्ञों के द्वारा पूजी जाती है। (माहेश्वर की महिमा से) एक एक शक्ति की सौ-सौ, हजार-हजार, देह भेद बताए गए हैं। २९

कथ्यन्ते चैव माहात्म्याच्छक्तिरेकैव निर्गुणा ।
तां[2] शक्तिं स्वयमास्थाय स्वयं देवो महेश्वरः ॥३०
करोति विविधान्देहान्दृश्यते चैव लीलया ।

स्वरूप भेद के कारण पृथक्-पृथक् प्रतीत होने पर भी, शक्ति एक ही है और वह निर्गुण हैं। देव महेश्वर इसी शक्ति का सहारा लेकर, क्रीडावश विभिन्न शरीरों की रचना और उनका नाश भी करते हैं।३०½

इज्यते सर्वयज्ञेषु ब्राह्मणैर्वेदवादिभिः ॥३१
सर्वकामप्रदो रुद्र इत्येषा वैदिकी श्रुतिः ।

वेदों में कहा गया है कि, वेदज्ञ ब्राह्मणों द्वारा किए जाने वाले सभी यज्ञों में, सारी कामनाओं की पूर्ति करने वाले भगवान् रुद्र की पूजा की जाती है। ३१½।

सर्वासामेव शक्तीनां ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥३२
प्राधान्येन स्मृताः देवाः शक्तयः परमात्मनः ।

१. सर्वतः इति । २. तां तां शक्तिं समाधायेति, तां स्वशक्तिं समास्थायेति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर रूपी परमात्मशक्ति, सभी शक्तियों में प्रमुख मानी गई है ।३२½।

आद्यः परस्ताद्भगवान् परमात्मा सनातनः ॥३३
गीयते सर्वमायात्मा[1] शूलपाणिर्महेश्वरः ।

सनातन, परमात्मा, त्रिशूलपाणि, भगवान् महेश्वर, इन शक्तियों से स्वतन्त्र हैं, ऐसा कहा जाता है ।३३½।

एनमेके वदन्त्यग्निं नारायणमथापरे ॥३४
इन्द्रमेके परे प्राणं ब्रह्माणमपरे जगुः ।

कोई-कोई अग्नि को परमात्मा कहते हैं। कोई नारायण को, कोई इन्द्र को, कोई प्राण को तो कोई ब्रह्मा को परमात्मा कहते हैं। ३४½।

ब्रह्मविष्ण्वग्निवरुणाः सर्वे देवास्तथर्षयः ॥३५
एकस्यैवाथ रुद्रस्य भेदास्ते परिकीर्त्तिताः ।

किन्तु ब्रह्मा, विष्णु, अग्नि, वरुणादि सभी देवता और सारे ऋषि, एक ही रुद्र के भेद के रूप में जाने जाते हैं। ३५½।

यं यं भेदं समाश्रित्य यजन्ति परमेश्वरम् ॥३६
तत्तद्रूपं समास्थाय प्रददाति फलं शिवः ।

साधक जिन २ रूपों को आधार मानकर परमेश्वर की पूजा करता है, भगवान् शिव वही-वही रूप धारण करके, उसे फल प्रदान करते हैं। ३६½।

तस्मादेकतरं भेदं समाश्रित्यापि शाश्वतम् ॥३७
आराधयन्महादेवं याति तत्परमं पदम् ।

इसलिए, इनमें से, किसी एक रूप को आधार मानकर, शाश्वत महादेव की पूजा करने से मनुष्य श्रेष्ठ पद प्राप्त करता है। ३७½।

किन्तु देवं महादेवं सर्वशक्तिं सनातनम् ॥३८
आराधयेह गिरिशं सगुणं वाथ निर्गुणम् ।

किन्तु सर्वशक्तिमान्, सनातन, कैलाशवासी महादेव की ही, सगुण या निर्गुण रूप में आराधना करनी चाहिये ॥ ३८½।

मया प्रोक्तो हि भवतां योगः प्रागेवः निर्गुणः ॥३९
आरुरुक्षुस्तु सगुणं पूजयेत्परमेश्वरम् ।

---

१. सर्वशक्त्यात्मा इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग के विषय में बताया है। परन्तु जो लोग, स्वर्गलोक में जाना चाहते हैं, उन्हें सगुण महेश्वर की ही उपासना करनी चाहिए। ३९½।

पिनाकिनं त्रिनयनं जटिलं कृत्तिवाससम् ॥४०
रुक्माभं[1] वा सहस्रार्काच्चिन्तयेद्वैदिकी श्रुतिः।

वेदों में कहा गया है कि, त्रिशूलधारी, त्रिनेत्र, जटा तथा व्याघ्र चर्मधारी, सुनहरी व्यक्तियुक्त और हजारों किरणों से युक्त स्वरूप से भी, उज्ज्वल कान्तियुक्त स्वरूप में (उनका) ध्यान करना चाहिए। ४०½।

एष योगः समुद्दिष्टःसबीजो मुनिपुंगवाः ॥४१
अत्राप्यशक्तोऽथ हरं विश्वं ब्रह्माणमर्चयेत्।

हे मुनिश्रेष्ठों ! इस प्रकार, सबीज योग आपलोगों को बताया। ऐसे ध्यान लगाने में असमर्थ व्यक्ति को महेश्वर, विष्णु और ब्रह्मा की अर्चना करनी चाहिए। ४१½।

अथ चेदसमर्थः स्यात्तत्रापि मुनिपुङ्गवाः ॥४२
ततो वाय्वग्निशक्रादीन् पूजयेद्भक्तिसंयुतः।

हें मुनिश्रेष्ठों ! इसमें भी असमर्थ होने पर, वायु, अग्नि और इन्द्रादि देवताओं को, भक्तिभाव से पूजा करनी चाहिए। ४२½।

तस्मात्सर्वान् परित्यज्य देवान् ब्रह्मपुरोगमान् ॥४३
आराधयेद्विरूपाक्षमादिमध्यान्तसंस्थितम्।

अथवा ब्रह्मादि अन्य देवताओं का परित्याग करके, आदि मध्य और अन्त में स्थित, सनातन महादेव की आराधना करनी चाहिए। ४३½।

भक्तियोगसमायुक्तः स्वधर्मनिरतः शुचिः ॥४४
तादृशं [रूपमास्थाय आसाद्यात्यन्तिकं शिवम्।

अपने धर्मों का पालन करते हुए, शुद्ध होकर भक्तियोग के माध्यम से व्यक्ति जिस देवता की पूजा करता है, शिव उसी देवता का रूप धरकर, उसके पास आते हैं। ४४½।

एष [योगः ! समुद्दिष्टः सबीजोऽत्यन्तभावनः ॥४५
यथाविधि प्रकुर्वाणः प्राप्नुयादैश्वरम्पदम्।

इस प्रकार सबीज योग का व्याख्यान किया गया, इसका विधिपूर्वक एकाग्रचित्त से पालन करने से, अमरत्व को प्राप्ति है। ४५½।

---

१. पद्मासनस्थं रुक्माभं चिन्तयेद्वैदिकीति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वे चान्ये[1] भावने शुद्धे प्रागुक्ते भवतामिह ॥४६
अथापि कथितो योगो निर्बीजश्च सबीजकः ।

दूसरी जो दो प्रकार की शुद्ध भावनायें आप लोगो को बताई गयी हैं, ये उन भावनाओं में भी निर्बीज और सबीज योग के विषय में बताया गया है। ४६½।

ज्ञानं तदुक्तं निर्बीजं पूर्वं हि भवतां मया ॥४७
विष्णुं रुद्रं विरञ्चिञ्च सबीजे साधयेद्बुधः ।

तत्त्वज्ञान निर्बीज योग है, जो मैंने आपलोगो को पहले ही बताया है। सबीज योग का पालन करने के लिए, विष्णु, रुद्र और ब्रह्मा की आराधना करनी चाहिए। ४७½।

अथ वाय्वादिकान्देवान् तत्परो नियतात्मवान्[2] ॥४८
पूजयेत्पुरुषं विष्णुं चतुर्मूर्त्तिधरं हरिम् ।
अनादिनिधनं देवं वासुदेवं सनातनम् ॥४९
नारायणं जगद्योनिमाकाशं परमम्पदम् ।
तल्लिङ्गधारी नियतं यद्युक्तस्तदुपाश्रयः[3] ॥५०

अथवा वायु आदि देवताओं की, एकाग्रचित्त से पूजा करनी चाहिए। अथवा वैष्णवलिंग धारण करके, इन्द्रियों को वश में करके, विष्णु परायण होकर, श्रेष्ठ पुरुष चतुर्मूर्तिधारी, अनादिनिधन, सनातन नारायण, संसार के कारण, आकाश स्वरूप, श्रेष्ठ पद, देवाधिदेव वासुदेव हरि की उपासना करनी चाहिए। ४८-५०।

एष एव विधिर्वा[4] स्वभावने चान्तिमे मतः ।
इत्येतत्कथितं ज्ञानं भावनासंश्रयम्परम् ॥५१
इन्द्रद्युम्नाय[5] मुनये कथितं यन्मया पुरा ।

अन्तिम ब्रह्मचिन्ता में होने वाले इस प्रकार के ध्यानाश्रित परमज्ञान के विषय में बताया गया है। प्राचीन काल में, मैंने इन्द्रद्युम्न मुनि को इस ज्ञान के विषय में बताया था। ५१½।

अव्यक्तात्मकमेवेदं चेतनाचेतनं जगत् ॥५२
तदीश्वरं परं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्ममयं जगत्

यह चेतन और अचेतन सृष्टि प्रकृति की हैं। प्रकृति के ईश्वर परम ब्रह्म हैं, अतः संसार ब्रह्ममय है। ५२½।

---

१. विधाने भावने शुद्धे इति पा०। २. संयतेन्द्रियः इति पा०। ३. तद्-भक्तस्तदुपाश्रय इति, नियतस्तद्भक्तस्तदुपाश्रय इति पा०। ४. विधिर्ब्राह्मे भावते वान्तिके मत इति पा०। ५. प्रद्युम्नायेदं कथितं मुनये यन्मया पुरेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूत उवाच

एतावदुक्त्वा भगवान्विरराम जनार्दनः ।
तुष्टुवुर्मुनयो विष्णुं शुक्रेण सह माधवम् ॥५३

सूत बोले—भगवान् विष्णु, यह बताकर अन्तर्धान हो गए। तत्पश्चात् मुनियों ने इन्द्र के साथ मिलकर रमापति विष्णु की स्तुति की ।५३

मनव ऊचुः

नमस्ते कूर्मरूपाय विष्णवे परमात्मने ।
नारायणाय विश्वाय वासुदेवाय ते नमः ॥५४

मुनिवृन्द बोले—आप कूर्मरूपी परमात्मा विष्णु हैं, आप विश्वमय वासुदेव नारायण हैं, आपको नमस्कार हैं ।५४

नमो नमस्ते कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ।
माधवाय[1] च ते नित्यं नमो यज्ञेश्वराय च ॥५५

आप कृष्ण है आपको बारम्बार नमस्कार। आप गोविन्द हैं आपको नमस्कार। आप माधव और यज्ञेश्वर हैं आपको सदैव नमस्कार हैं ।५५

सहस्रशिरसे तुभ्यं सहस्राक्षाय ते नमः ।
नमः सहस्रहस्ताय सहस्रचरणाय च ॥५६

आप हजारों मस्तक, हजारों नेत्र, हजारों हाथ और हजारों चरणों वाले है आपको नमस्कार है । ५६

ॐ नमो ज्ञानरूपाय विष्णवे[2] परमात्मने ।
आनन्दाय नमस्तुभ्यं मायातीताय ते नमः ॥५७

आप ज्ञानस्वरूपी परमात्मा विष्णु हैं । आप माया से परे और आनन्दमय हैं आपको नमस्कार है । ५७

नमो गूढशरीराय निर्गुणाय नमोऽस्तु ते ।
पुरुषाय पुराणाय सत्तामात्रस्वरूपिणे ॥५८

गुप्तात्मा आपको नमस्कार। निर्गुण, सत्तामात्र स्वरूप वाले, सनातन पुरुष को नमस्कार है ।५८

नमः सांख्याय योगाय केवलाय नमोऽस्तु ते ।
धर्मज्ञानाभिगम्याय[3] निष्कलाय नमोऽस्तु ते ॥५९

---

१. माधवाय नमस्तुभ्यमिति पा० । २. परमात्मस्वरूपिणे इति, परमार्थ-स्वरूपिणे इति पा० । ३. धर्मज्ञानाधिगम्य य निष्कलाय नमो नमः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांख्य-योगरूपी आपको नमस्कार। अद्वितीय आपको नमस्कार। धर्मज्ञान को जानने वाले, अंशरहित आपको नमस्कार है।५९

नमस्ते योगतत्त्वाय[1] महायोगेश्वराय च।
परावराणां प्रभवे वेदवेद्याय ते नमः ॥६०

योगतत्त्व और महायोगेश्वर आपको नमस्कार। उत्कृष्ट और निकृष्ट सभी के कारण स्वरूप और वेदों के ज्ञाता आपको नमस्कार है।६०

नमो बुद्धाय शुद्धाय नमो युक्ताय हेतवे।
नमो नमो नमस्तुभ्यं मायिने वेधसे नमः ॥६१

आप बुद्ध और शुद्ध हैं आपको नमस्कार। आप मुक्त और मुक्ति के कारण स्वरूप हैं, आपको नमस्कार। आप मायावी और विद्वान् हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है। ६१

नमोऽस्तु ते वराहाय नारसिंहाय ते नमः।
वामनाय नमस्तुभ्यं हृषीकेशाय ते नमः ॥६२

आप वराह, नृसिंह, वामन और ऋषिकेश हैं, आपके उन सभी रूपों को नमस्कार है।६२

स्वर्गापवर्गदानाय[2] नमोऽप्रतिहतात्मने।
नमो योगाधिगम्याय योगिने योगदायिने ॥६३

आप स्वर्ग और मोक्ष प्रदाता, और मुक्तात्मा हैं, आपको नमस्कार। योग के द्वारा प्राप्य, योगी और योगदाता, आपको नमस्कार है।६३

देवानां पतये तुभ्यं देवार्त्तिशमनाय ते।
भगवंस्त्वत्प्रसादेन सर्वसंसारनाशनम् ॥६४
अस्माभिर्विदितं ज्ञानं यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते।

आप देवताओं के स्वामी और उनकी विपत्तियों का नाश करने वाले हैं। आपकी कृपा से, हम लोगों को, सारे संसार का नाश करने वाला, यह ज्ञान प्राप्त हुआ है। जिसे जानकर अमरत्व की प्राप्ति होती है। ६४½।

श्रुताश्च विविधा धर्मा वंशा मन्वन्तराणि च ॥६५
सर्गश्च प्रतिसर्गश्च ब्रह्माण्डस्यास्य विस्तरः।
त्वं हि सर्वजगत्साक्षी विश्वो नारायणः परः ॥६६
त्रातुमर्हस्यनन्तात्मा[3] त्वामेव शरणङ्गताः।

---

१. व्योमरूपाय इति पा०। २. स्वर्गापवर्गदात्रे च नमोऽप्रतिहताय चेति पा०।
३. अनन्तात्मन्निति, त्रातुमर्हसि नः सर्वानिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध धर्मों, वंशों, मन्वन्तरों, इस संसार की सृष्टि, और प्रलय के विषय में सुना। आप ही संसार के साक्षी स्वरूप, सर्वव्यापी, अनन्तात्मा और नारायण हैं। हम सब आपकी शरण में आते हैं। आप हमारी रक्षा कीजिए।६५-६६½।

सूत उवाच

एतद्वः कथितं विप्रा भोगमोक्षप्रदायकम् ॥६७
कौर्मं पुराणमखिलं यज्जगाद गदाधरः।

सूत बोले—हे ब्राह्मण वृन्द! भोग और मुक्तिप्रदायक, यह कूर्म पुराण सम्पूर्ण रूप से आप लोगों को बताया गया है। इस पुराण का व्याख्यान, कूर्मरूपी नारायण ने स्वयं किया था।६७½।

अस्मिन् पुराणे लक्ष्म्यास्तु सम्भवः कथितः पुरा ॥६८
मोहायाशेषभूतानां[1] वासुदेवेन योजितः।
प्रजापतीनां सर्गास्तु वर्णधर्माश्च वृत्तयः ॥६९
धर्मार्थकाममोक्षाणां यथावल्लक्षणं शुभम्।

इस पुराण में पहले, समस्त प्राणियों के अज्ञान के लिए, विष्णु द्वारा रचित, लक्ष्मी की उत्पत्ति वर्णित हैं तथा प्रजापति द्वारा उत्पन्न की गई सृष्टि, वर्ण धर्म, वर्णों की आजीविका, और धर्म-अर्थ-काम-मोक्षादि का लक्षण विधिपूर्वक बताया गया है।६८-६९½।

पितामहस्य विष्णोश्च महेशस्य च धीमतः ॥७०
एकत्वञ्च पृथक्त्वञ्च विशेषश्चोपवर्णितः।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश के एकत्व और पृथकत्व का, विशेष रूप से वर्णन किया गया है।७०½।

भक्तानां लक्षणम्प्रोक्तं समाचारश्च भोजनम् ॥७१
वर्णाश्रमाणां कथितं यथावदिह लक्षणम्।

भक्तों के लक्षण और उनके द्वारा पालन किए जाने वाले आचारों के विषय में बताया गया है। वर्णाश्रम धर्म का लक्षण भी क्रमानुसार वर्णित है।७१½।

आदिसर्गस्ततः पश्चादण्डावरणसप्तकम् ॥७२
हिरण्यगर्भः सर्गश्च कीर्त्तितो मुनिपुङ्गवाः।

हे मुनिश्रेष्ठों! पहले आदि सृष्टि, उसके बाद अण्ड की महत्तत्त्वादि आवरण सप्तक और हिरण्यगर्भ की सृष्टि के विषय में बताया गया हैं।७२½।

---

१. माहात्म्य शेषभूतानामिति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालसंख्याप्रकथनं माहात्म्यञ्चेश्वरस्य च ॥७३
ब्रह्मणः शयनञ्चाप्सु नामनिर्वचनं तथा ।
वराहवपुषो भूयो भूमेरुद्धरणं पुनः ॥७४

कालसंख्या, ईश्वर माहात्म्य, ब्रह्मा का जलशयन भगवान् की नाम निरुक्ति, और वराहमूर्ति धारण करके, पृथ्वी का उद्धार वर्णित है ।७३-७४।

मुख्यादिसर्गकथनं मुनिसर्गस्तथापरः ।
व्याख्यातो रुद्रसर्गश्च ऋषिसर्गश्च तापसः ॥७५
धर्मस्य च प्रजासर्गस्तामसात्पूर्वमेव तु ।

पहले मुख्य सृष्टि, उसके बाद मुनियों की सृष्टि, रुद्र सृष्टि, तपस्वी ऋषियों की सृष्टि और तामस सृष्टि से पहले धर्म की प्रजासृष्टि वर्णित है ।७५½

ब्रह्मविष्णोर्विवादः स्यादन्तर्देहप्रवेशनम् ॥७६
पद्मोद्भवत्वं देवस्य मोहस्तस्य च धीमतः ।
दर्शनञ्च महेशस्य माहात्म्यं विष्णुनेरितम् ॥७७
दिव्यदृष्टिप्रदानं च ब्रह्मणः परमेष्ठिना ।
संस्तवो देवदेवस्य ब्रह्मणा परमेष्ठिना ॥७८
प्रसादो गिरिशस्याथ वरदानं[1] तथैव च ।
संवादो विष्णुना सार्द्धं शङ्करस्य महात्मनः ॥७९
वरदानं तथा पूर्वमन्तर्द्धानं पिनाकिनः ।

ब्रह्मा और विष्णु का विवाद तथा परस्पर एक दूसरे के देह में प्रवेश, ब्रह्मा का कमल से उत्पन्न होना, ज्ञानी ब्रह्मा का अज्ञान और महेश्वर का दर्शन प्राप्त करना विष्णु के द्वारा वर्णित महेश्वर माहात्म्य, परमेष्ठी ब्रह्मा को दिव्यदृष्टि दान, परमेष्ठी ब्रह्मा के द्वारा की गई देवाधिदेव की स्तुति महादेव का प्रसन्न होना और वरदान देना, विष्णु के साथ शंकर का कथोपकथन महेश्वर का वरदान और अन्तर्धान होना भी वर्णित है ।७६-७९½।

वधश्च कथितो विप्रा मधुकैटभयोः पुरा ॥८०
अवतारोऽथ देवस्य ब्रह्मणो नाभिपङ्कजात् ।
एकीभावश्च देवेन[2] ब्रह्मणा कथितः पुरा ॥८१

---

१. वरदस्य ततः परमिति पा० । २. देवस्य कथितस्तवेति, देवस्य विष्णुना सह तत्त्वत इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले मधु कैटभ का वध और बाद में विष्णु के नाभि पद्म से ब्रह्मा की उत्पत्ति इसके बाद ब्रह्मा के साथ विष्णु के एक हो जाने की कथा बताई गई है ।८०-८१।

विमोहो ब्रह्मणश्चाथ संज्ञानात्तु हरेस्ततः ।
तपश्चरणमाख्यातं देवदेवस्य धीमतः ॥८२
प्रादुर्भावो महेशस्य ललाटात्कथितस्ततः ।

ब्रह्मा का मूर्छित होना और हरि से चेतना प्राप्त करना, ब्रह्मा द्वारा देवाधिदेव की तपस्या और ललाट से महेश्वर का प्रकट होना भी वर्णित है ।८२½

रुद्राणां कथिता सृष्टिर्ब्रह्मणः प्रतिषेधनम् ॥८३
भूतिश्च[1] देवदेवस्य वरदानोपदेशकौ ।

रुद्रगणों की उत्पत्ति और इस कार्य में ब्रह्मा का विरोध करना, तत्पश्चात् देवाधिदेव द्वारा ब्रह्मा को वरदान और उपदेश देने की बात कही गई हैं ।८३½

अन्तर्द्धानञ्च देवस्य तपश्चर्याण्डजस्य च ॥८४
दर्शनं देवदेवस्य नरनारीशरीरता ।
देव्या विभागकथनं देवदेवात्पिनाकिनः ॥८५
देव्याश्च पश्चात्कथितं दक्षपुत्रीत्वमेव च ।
हिमवद्दुहितृत्वं च देव्या याथात्म्यमेव च ।।८६

देव महेश्वर का अन्तर्धान होना, अण्डज ब्रह्मा की तपस्या और देवाधिदेव का दर्शन प्राप्त करना, महादेव का नर-नारी (अर्धनारी) का शरीर धारण करना; देवाधिदेव महादेव का देवी के साथ पृथक्करण, देवी की दक्षपुत्री के रूप में उत्पत्ति और हिमालय की कन्या के रूप देवी का माहात्म्य वर्णित है ।८४–८६।

दर्शनं दिव्यरूपस्य विश्वरूपाक्षदर्शनम्[2] ।
नाम्नां सहस्रं कथितं पित्रा हिमवता स्वयम् ॥८७
उपदेशो महादेव्या वरदानं तथैव च ।

देवी का दिव्य, और विश्वरूप दर्शन, पिता हिमालय के द्वारा देवी का सहस्रनाम वर्णन, देवी के द्वारा हिमालय को दिया गया उपदेश और वरदान भी वर्णित है ।८७½।

---

१. ततश्चेति, श्रुतिश्च इति पा० । २. वैश्वरूपस्य दर्शनमिति विश्वरूपस्य दर्शनमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भृग्वादीनां प्रजासर्गो राज्ञां वंशस्य विस्तरः ॥८८
प्राचेतसत्व दक्षस्य दक्षयज्ञविमर्दनम् ।
दधीचस्य च यज्ञस्य विवादः कथितस्तदा ॥८९
ततश्च शापः कथितो मुनीनां मुनिपुङ्गवाः ।

तदनन्तर भृग्वादि प्रजासृष्टि और राजवंशों का विस्तार वर्णित हैं। दक्ष का प्रचेतादियों का पुत्र होकर जन्म ग्रहण करना, दक्षयज्ञ का विनाश इस यज्ञ में दधीचि और दक्ष का विवाद और उसके बाद मुनियों द्वारा दिए गए शाप के विषय में भी बताया गया है।८८-८९½

रुद्रागतिः प्रसादश्च अन्तर्द्धानं पिनाकिनः ॥९०
पितामहोपदेशः[1] स्यात् कीर्त्यंते वै रणाय[2] तु ।

तत्पश्चात् दक्ष के गृह में रुद्र का आगमन, उनकी प्रसन्नता. महादेव का अन्तर्धान होना और संग्राम के लिए, ब्रह्मा का, दक्ष को दिया गया उपदेश वर्णित है। ९०½

दक्षस्य च प्रजासर्गः कश्यपस्य महात्मनः ॥९१
हिरण्यकशिपोर्नाशो हिरण्याक्षवधस्तथा ।
ततश्च शापः कथितो देवदारुवनौकसाम् ॥९२

दक्षऔर महात्मा कश्यप की प्रजासृष्टि, हिरण्यकशिपु, और हिरण्याक्ष का वध और देवदारु वन में रहने वाले मुनियों को दिया गया, गौतम ऋषि का अभिशाप भी कथित है।९१-९२।

निग्रहश्चान्धकस्याथ गाणपत्यमनुत्तमम् ।
प्रह्लादनिग्रहश्चाथ बलेः संयमनन्त्वथ ॥९३
बाणस्य निग्रहश्चाथ प्रसादस्तस्य शूलिनः ।

कालाग्नि रुद्र द्वारा अन्धक निग्रह और उसे अत्युत्तम गाणपत्यपद प्रदान करने की बात कही गई है। विष्णु के द्वारा प्रह्लाद पर की गई यातनाएँ, वामन के द्वारा किया गया बलिबन्धन और महादेव द्वारा बाणासुर को दण्डित करना और उसके प्रति शिव के प्रसन्न होने की कथा भी कही गई है।९३½

ऋषीणां वंशविस्तारो राज्ञां वंशा प्रकीर्त्तिताः ॥९४
वसुदेवात्ततो विष्णोरुत्पत्तिः स्वेच्छया हरेः ।

ऋषिवंशों में और राजवंशों के विस्तार की और वासुदेव से स्वेच्छापूर्वक भगवान् विष्णु की उत्पत्ति की कथा वर्णित है।९४½

---

१. पितामहस्योपदेश इति पा० २. रक्षणाय इति, कीर्त्तितं रक्षणाय चेति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शनञ्चोपमन्योर्वै तपश्चरणमेव च ॥९५
वरलाभो महादेवं दृष्ट्वा साम्बं[1] त्रिलोचनम् ।

उपमन्यु का दर्शन, उसकी तपश्चर्या, जगदम्बा के साथ त्रिनेत्र (शिव) का दर्शन और उनसे वरदान प्राप्त करने की कथा वर्णित है।९५½

कैलासगमनञ्चाथ निवासस्तस्य शार्ङ्गिणः ॥९६
ततश्च कथ्यते भीतिर्द्वारवत्यां निवासिनाम् ।
रक्षणं गरुडेनाथ जित्वा[2] शत्रून्महाबलान् ॥९७
नारदागमनं चैव यात्रा चैव गरुत्मतः ।

धनुर्धारी विष्णु का कैलाश पर्वत पर जाना, और वहीं निवास करना, द्वारवती के निवासियों का भयभीत होना और महान पराक्रमी शत्रुओं को परास्त कर, गरुड़ के द्वारा द्वारवती की रक्षा करने की घटना वर्णित है।९६-९७½।

ततश्च कृष्णागमनं मुनीनामाश्रमस्ततः[3] ॥९८
नैत्यकं वासुदेवस्य शिवलिंगार्चनं तथा ।
मार्कण्डेयस्य च मुनेः प्रश्नः प्रोक्तस्ततः परम् ॥९९

नारद का द्वारका आगमन, गरुड़ की कैलाशयात्रा, कृष्ण का द्वारका में जाना और उसके बाद मुनियों का भी वहाँ जाना, वासुदेव का नैत्यिक कर्म और शिवलिंग की पूजा करना और मार्कण्डेय मुनि का प्रश्न भी वर्णित है।९८-९९।

लिंगार्चननिमित्तञ्च लिंगस्यापि सलिंगिनः ।
याथात्म्यकथनं[4] चाथ लिंगाद्वै भीतिरेव च ॥१००
ब्रह्मविष्णोस्तथा मध्ये कीर्त्तिता मुनिपुंगवाः ।
मोहस्तयोर्वै कथितो गमनञ्चोद्धर्वतो ह्यधः ॥१०
संस्तवो देवदेवस्य प्रसादः परमेष्ठिनः ।
अन्तर्द्धानञ्च लिंगस्य साम्बोत्पत्तिस्ततः परम् ॥१०२

हे मुनिश्रेष्ठों ! इसके बाद, लिंग पूजा के लिए, श्रीकृष्ण का मार्कण्डेय मुनि को लिंग और लिंग की महिमा बताना, ब्रह्मा और विष्णु का लिंग से भय और मोह, लिंग की सीमा को जानने के लिए ब्रह्मा का ऊर्ध्व और विष्णु का निम्न भाग में जाना, ब्रह्मा और विष्णु द्वारा महादेव की गई स्तुति और उनके प्रति महादेव का प्रसन्न होना, लिंग का अन्तर्धान होना तथा जगदम्बा की उत्पत्ति वर्णित है।१००-१०२।

---

१. सार्द्धं त्रिशूलिनमिति पा० । २. त्रिधा शक्तिमहात्मना इति, जित्वा शत्रून् महात्मनेति पा० । ३. मुनीनामागतिस्ततः इति, मुनीनामागम इति पा० । ४. यथार्थं कथितञ्चाथ लिङ्गाविर्भावएव चेति, सर्वात्मकथनञ्चाथ लिंगाविर्भाव एव च इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीर्त्तिता चानिरुद्धस्य समुत्पत्तिर्द्विजोत्तमाः ।
कृष्णस्य गमने बुद्धिर्ऋषीणामागतिस्तथा ॥१०३
अनुशासनञ्च कृष्णेन वरदानं महात्मनः ।

हे ब्राह्मण श्रेष्ठों ! अनिरुद्ध की उत्पत्ति, कृष्ण का अपने स्थान पर जाने की इच्छा, ऋषियों का द्वारका में आना और उन्हें श्रीकृष्ण द्वारा उपदेश दिया जाना, तथा महात्माओं को दिया गया वरदान भी कथित है ।१०३½

गमनञ्चैव कृष्णस्य पार्थस्याप्यथ दर्शनम् ॥१०४
कृष्णद्वैपायनस्योक्तं युगधर्माः सनातनाः ।
अनुग्रहोऽथ पार्थस्य वाराणस्यां गतिस्ततः ॥१०५
पाराशर्यस्य च मुनेर्व्यासस्याद्भुत कर्मणः ।

कृष्ण का श्रेष्ठ स्थान पर जाना, अर्जुन का कृष्ण-द्वैपायन दर्शन और कृष्ण द्वैपायन द्वारा सनातन युगधर्म की व्याख्या करना, अर्जुन के प्रति व्यास की कृपा, तत्पश्चात् अद्भुत कर्मों को करने वाले पाराशर्य व्यास का वाराणसी जाने की कथा भी वर्णित है ।१०४-१०५½

वाराणस्याश्च माहात्म्यं तीर्थानाञ्चैव वर्णनम् ॥१०६
व्यासस्य तीर्थयात्रा[1] च देव्याश्चैवाथ दर्शनम् ।
उद्वासनञ्च कथितं वरदानं तथैव च ॥१०७

वाराणसी माहात्म्य और तीर्थ वर्णन, व्यास की तीर्थयात्रा और देवी दर्शन, वाराणसी से देवी के द्वारा व्यास का निर्वासन और उनके द्वारा, व्यास को दिया गया वरदान कथित है । १०६-१०७।

प्रयागस्य च माहात्म्यं क्षेत्राणामथ[2] कीर्त्तनम् ।
फलञ्च विपुलं विप्रा मार्कण्डेयस्य निर्गमः ॥१०८

प्रयाग की महिमा, वहाँ स्थित पवित्र क्षेत्रों और तीर्थों से प्राप्त होने वाले पुण्य फलों का बखान है तथा मार्कण्डेय मुनि का प्रस्थान भी बताया गया है ।१०८

भुवनानां स्वरूपञ्च ज्योतिषाञ्च निवेशनम् ।
कीर्त्तितश्चापि[3] वर्षाणां नदीनाञ्चैव निर्णयः ॥१०९

तत्पश्चात् संसार का स्वरूप और नक्षत्रों की स्थिति बताई गई है तथा द्वीपों और नदियों का निर्णय किया गया है ।१०९

---

१. तीर्थयात्रा तु व्यासस्य इति पा० । २. क्षेत्राणां मुनिपुङ्गवाः इति पा० । ३. कीर्त्यन्ते चैव वर्षाणीति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्वतानाञ्च कथनं स्थानानि च दिवौकसाम् ।
द्वीपानां प्रविभागश्च श्वेतद्वीपोपवर्णनम्[1] ॥११०

पर्वतों और देवताओं के स्थान, द्वीपों के विभाजन, और श्वेतद्वीप (विष्णुलोक) के विषय में भी कहा गया है ।११०

शयनं केशवस्याथ माहात्म्यञ्च महात्मनः ।
मन्वन्तराणां कथनं विष्णोर्माहात्म्यमेव च ॥१११

(श्वेतद्वीप में) विष्णु का अनन्त शय्या में शयन, ईश्वर की महिमा, मन्वन्तरों और विष्णु की महिमा का बखान है ।१११

वेदशाखाप्रणयनं व्यासानां कथनं ततः ।
अवेदस्य च वेदस्य कथितं मुनिपुङ्गवाः ॥११२

हे ब्राह्मण श्रेष्ठों ! वेदों के शाखाओं की रचना, और (वैवस्वत मन्वन्तर के अठ्ठाइसवें युग में अठ्ठाइसवें) व्यास का वृत्तान्त कथित है। इसके अतिरिक्त वेद और अवेद में भेद भी किया गया है ।११२

योगेश्वराणां च कथा शिष्याणां चाथ कीर्त्तनम् ।
गीताश्च विविधा गुह्या[2] ईश्वरस्याथ कीर्त्तिताः ॥११३

योगेश्वरों और उनके शिष्यों का वृत्तान्त और ईश्वर के विभिन्न गोपनीय गीताओं का वर्णन है ।११३

वर्णाश्रमाणामाचाराः प्रायश्चित्त विधिस्ततः ।
कपालित्वं च रुद्रस्य भिक्षाचरणमेव च ॥११४
पतिव्रतानामाख्यानं[3] तीर्थानां च विनिर्णयः ।
तथा मंकणकस्याथ निग्रहः कीर्त्तितो द्विजाः ॥११५

हे ब्राह्मणों ! इसके बाद, वर्णाश्रम धर्म में पालन किए जाने वाले विभिन्न आचार-व्यवहार, प्रायश्चित्त विधि, रुद्र के कपाली होने और भिक्षा माँगने की कथा, पतिव्रता का आख्यान, तीर्थों का निर्णय, और महादेव के द्वारा मङ्कणक मुनि को दण्डित करने का वृत्तान्त, वर्णित है ।११४-११५।

वधश्च कथितो विप्राः कालस्य च समासतः ।
देवदारुवने शंभोः प्रवेशो माधवस्य च ॥११६

---

१. श्वेतद्वीपस्य वर्णनमिति पा० । २. पुण्या ईश्वरस्यानुकीर्तिताः इति पा० । ३. पतिव्रतायाश्चाख्यानमिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शनं षट्कुलीयानां देवदेवस्य धीमतः ।
वरदानं च देवस्य नन्दने तु प्रकीर्तितम् ॥११७

हे ब्राह्मणों ! इसके बाद संक्षेप में काल वध की कथा बताई गई है। तदनन्तर महादेव का विष्णु के साथ देवदारुवन में प्रवेश, षट्कुलोत्पन्न ऋषियों का देवाधिदेव महादेव का दर्शन प्राप्त करना और महादेव द्वारा नन्दी को दिया गया वरदान कथित है ।११६-११७।

नैमित्तिकश्च कथितः प्रतिसर्गस्ततः परम् ।
प्राकृतः प्रलयश्चोर्द्धवं सबीजो[1] योग एव च ॥११८

तत्पश्चात् क्रमानुसार नैमित्तिक और प्राकृत प्रलय तथा सबीज योग के विषय में बताया गया है ।११८

एवं ज्ञात्वा पुराणस्य संक्षेपं कीर्त्तयेत्तु यः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके[2] महीयते ॥११९

कूर्मपुराण को इस प्रकार संक्षेप में जानकर, जो इसका पाठ करता है, वह सारे पापों से मुक्त होकर, स्वर्ग में सम्मानित होता है ।११९

एवमुक्त्वा श्रियं देवीमादाय पुरुषोत्तमः ।
सन्त्यज्य कूर्मसंस्थानं प्रजगाम[3] हरस्तदा ॥१२०

यह कहकर भगवान् पुरुषोत्तम, कूर्म रूप का परित्याग कर देवी कमला को साथ लेकर, अपने धाम चले गए ।१२०

देवाश्च सर्वे मनुयः स्वानि स्थानानि भेजिरे ।
प्रणम्य पुरुषं विष्णुं गृहीत्वा ह्यमृतं द्विजाः ॥१२१

हे ब्राह्मणों ! सारे देवता और मुनिवृन्द, पुरुषोत्तम विष्णु को प्रणाम कर, अमृत ग्रहण करके, अपने-अपने स्थान पर चले गए ।१२१

एतत्पुराणं सकलं भाषितं कूर्मरूपिणा ।
साक्षाद्देवाधिदेवेन विष्णुना विश्वयोनिना ॥१२२

यह श्रेष्ठ पुराण, साक्षात् देवाधिदेव, जगत् के कारणभूत, कूर्मरूपी विष्णु के द्वारा कहा गया है ।१२२

यः पठेत्सततं विप्रा नियमेन समासतः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके महीयते ॥१२३

---

१. मरीच्याद्याश्च एव चेति पा० । २. रुद्रलोके इति विष्णुलोके इति पा० ।
३. स्वस्थानञ्च जगाम हेति, स जगाम हरिः प्रभुरिति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे ब्राह्मणों ! जो व्यक्ति नियमों का पालन करते हुए, संक्षेप में, निरन्तर इस पुराण का पाठ करता है, वह सारे पापों से मुक्त होकर, स्वर्गलोक में वास करता है। ।१२३

लिखित्वा चैव यो दद्याद्वैशाखे[1] कार्त्तिकेऽपि वा ।
विप्राय वेदविदुषे तस्य पुण्यं निबोधत ॥१२४

जो व्यक्ति यह पुराण लिखकर, बैसाख या कार्त्तिक के महीने में, वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करता है, उसको प्राप्त होने वाले पुण्य के विषय में सुनिए ।१२४

सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वैश्वर्यसमन्वितः ।
भुक्त्वा तु विपुलान्मर्त्यो भोगान्दिव्यान् सुशोभनान् ॥१२५
ततः स्वर्गात्परिभ्रष्टो विप्राणां जायते कुले ।
पूर्वसंस्कारमाहात्म्याद्ब्रह्मविद्यामवाप्नुयात् ॥१२६

सारे पापों से मुक्त और सारे ऐश्वर्यों से मण्डित होकर, वह स्वर्ग में मनोहारी और विपुल सुख भोगता है। पुनः स्वर्ग का सुख भोग लेने के बाद ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर पूर्व संस्कारों के बल पर ज्ञान प्राप्त करता है ।१२५-१२६।

पठित्वाध्यायमेवैकं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
योऽर्थं विचारयेत्सम्यक् प्राप्नोति परमं पदम् ॥१२७

इस पुराण का एक अध्याय पढ़ने से पापों से छुटकारा मिलता है और जो इसके अर्थों पर भली-भाँति विचार करने में समर्थ होता है, उसे श्रेष्ठ पद की प्राप्ति होती है ।१२७

अध्येतव्यमिदं पुण्यं विप्रैः पर्वणि पर्वणि ।
श्रोतव्यञ्च द्विजश्रेष्ठा महापातकनाशनम् ॥१२८

हे ब्राह्मण श्रेष्ठों ! महापापनाशक यह पवित्र पुराण, ब्राह्मणों को प्रत्येक पर्व के दिन पढ़ना और सुनना चाहिए ।१२८

एकतस्तु पुराणानि सेतिहासानि कृत्स्नशः ।
एकत्र परमं वेदमेतदेवातिरिच्यते ॥१२९

(तराजू के) एक पलड़े पर सारे पुराणों और इतिहासों को तथा दूसरे पर केवल कूर्मपुराण रखने से, यह पुराण दूसरे से भारी पड़ता है ।१२९

---

१. वैशाखे मासि सुव्रतः इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्मनैपुणकामानां ज्ञाननैपुणकामिनाम् ।
इदं पुराणं मुक्त्येकं नान्यत् साधनकंपरं[1] ।
यथा वदत्तु भगवान्देवो नारायणो हरिः ॥१३०

यह पुराण भगवान् नारायण विष्णु के द्वारा कहा गया है, इसलिए इस पुराण के अलावा मुक्ति का, दूसरा कोई साधन नहीं है ।१३०

कीर्त्यते हि यथा विष्णुर्न तथाऽन्येषु सुव्रताः ।
ब्राह्मी पौराणिकी चेयं संहिता पापनाशिनी ॥१३१

यह प्राचीन ब्राह्मी संहिता, सर्वपापनाशिनी है, क्योंकि इस संहिता में जिस प्रकार भगवान् विष्णु वर्णित हैं, वैसा अन्यत्र नहीं मिलता ।१३१

अत्र तत्परमं ब्रह्म कीर्त्यते हि यथार्थतः ।
तीर्थानां परमं तीर्थं तपसाञ्च परं तपः ॥१३२
ज्ञानानां परमं ज्ञानं व्रतानां परमं व्रतम् ।

इस संहिता में परम ब्रह्म, वास्तविक रूप में वर्णित होने के कारण, यह तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थ, तपस्याओं में श्रेष्ठ तपस्या, ज्ञानों में श्रेष्ठ ज्ञान और व्रतों में श्रेष्ठ व्रत है। १३२½

नाध्येतव्यमिदं शास्त्रं वृषलस्य च सन्निधौ ॥१३३
योऽधीते[2] चैव मोहात्मा स याति नरकान् बहून् ।

शूद्र के पास बैठकर, यह पुराण नहीं पढ़ना चाहिए। जो व्यक्ति अज्ञानता वश शूद्र के पास बैठकर यह पढ़ता है, वह बहुत से नरकों में जाता है ।१३३½

श्राद्धे वा वैदिके कार्ये श्राव्यं चेदं द्विजातिभिः ॥१३४
यज्ञान्ते तु विशेषेण सर्वदोषविशोधनम् ।

श्राद्ध या दैवीकार्यों में ब्राह्मणों को, आमन्त्रित ब्राह्मणों को यह शास्त्र सुनाना चाहिए। यज्ञ के समाप्त हो जाने पर तो विशेष रूप से, सारे दोषों का नाशक, यह शास्त्र सुनाना चाहिए ।१३४½

मुमुक्षूणामिदं शास्त्रमध्येतव्यं विशेषतः ॥१३५
श्रोतव्यञ्चाथ मन्तव्यं वेदार्थपरिबृंहणम् ।

वेदार्थों को वर्धित करने वाले, इस शास्त्र को मोक्षाभिलाषी लोगों को, विशेष रूप से पढ़ना, सुनना और चिन्तन करना चाहिए ।१३५½

---

१. इदं पुराणं त्यक्त्वैकं नास्त्यन्यत्साधनं परमिति पा० । २. योऽधीते सत्तमो ह्यात्मा प्रयातीति, पोऽधीते चैव माहत्म्यम् इति पा० ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञात्वा यथावद्विप्रेन्द्रान् श्रावयेद्भक्तिसंयुतान् ॥१३६
सर्वपापविनिर्मुक्त्वा ब्रह्मसायुज्यमाप्नुयात् ।

इस शास्त्र को जानकर, जो व्यक्ति इसे नियमानुसार, भक्त ब्राह्मणों को सुनाता है, वह सारे पापों से मुक्त होकर, ईश्वर का सामीप्य प्राप्त करता है।१३६½

योऽश्रद्दधाने पुरुषे दद्याच्चाधार्मिके तथा ॥१३७
सम्प्रेत्य गत्वा निरयान् शुनां योनिं व्रजत्यधः ।

जो व्यक्ति, अश्रद्धालु और नास्तिक को यह शास्त्र सुनाता है, वह परलोक में नरकगामी होकर पुनः पृथ्वी पर कुक्कुर योनि में जन्म लेता है।१३७½

नमस्कृत्य हरिं विष्णुं जगद्योनिं सनातनम् ॥१३८
अध्येतव्यमिदं शास्त्रं कृष्णद्वैपायनं[1] तथा ।
इत्याज्ञा देवदेवस्य विष्णोरमिततेजसः ॥१३९
पाराशर्यस्य विप्रर्षेर्व्यासस्य च महात्मनः[2] ।

जगत् के कारणभूत, सनातन विष्णु, हरि और कृष्ण द्वैपायन को नमस्कार करके, इस पुराण शास्त्र का अध्ययन करना चाहिए। यह अपरिमित बलशाली देवाधिदेव विष्णु और पाराशर्य महात्मा व्यास की आज्ञा है।१३८-१३९½।

श्रुत्वा नारायणाद्देवान्नारदो भगवानृषिः ॥१४०
गौतमाय ददौ पूर्वं तस्माच्चैव पराशरः ।

देवर्षि नारद ने यह पुराण, नारायण के मुंह से सुनकर, गौतम को दान किया था। गौतम से यह पराशर ने प्राप्त किया।१४०½।

पराशरोऽपि भगवान् गंगाद्वारे मुनीश्वराः ॥१४१
मुनिभ्यः कथयामास धर्मकामार्थमोक्षदम् ।

हे मुनीश्वरवृन्द ! भगवान् पराशर ने धर्म-अर्थ काम और मोक्ष प्रदायक, यह पुराण, गंगाद्वार में मुनियों को सुनाया था।१४१½।

ब्रह्मणा कथितं पूर्वं सनकाय च धीमते ॥१४२
सनत्कुमाराय तथा सर्वपापप्रणाशनम् ।

सर्वपापनाशक यह पुराण, प्राचीन काल में, ब्रह्मा ने अपने पुत्रों ज्ञानी सनक और सनत्कुमार को सुनाया था।१४२½

---

१. इति पा०। २. परमात्मनः इति पा०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सनकाद् भगवान् साक्षाद्देवलो योगवित्तमः ॥
मुनिः पञ्चशिखों वै हि देवलादिदमुत्तमम् ।

सनक से श्रेष्ठ योगवेत्ता भगवान् देवल मुनि ने और देवल मुनि से यह उत्तम पुराण पञ्चशिखमुनि ने जाना था ।१४३½

सनत्कुमाराद्भगवान्मुनिः सत्यवतीसुतः ॥१४४
एतत्पुराणं परमं व्यासः सर्वार्थ संचयम् ।

सनत्कुमार से सत्यवती पुत्र भगवान् वेदव्यासमुनि ने, सभी अर्थों के संग्रहकारी इस श्रेष्ठ पुराण को प्राप्त किया था ।१४४½

तस्माद् व्यासादहं श्रुत्वा भवतां पापनाशनम् ॥१४५
ऊचिवान्वै भवद्भिश्च दातव्यं धार्मिके जने ।

बाद में वेदव्यास से सुनकर, मैंने आप लोगों को इस पापनाशक पुराण के विषय में बताया । आप लोग भी, धार्मिक व्यक्तियों के पास ही इसे प्रकट कीजिएगा ।१४५½

तस्मै व्यासाय गुरवे सर्वज्ञाय महर्षये ॥१४६
पाराशर्याय शान्ताय नमो नारायणात्मने ।

नारायणात्मा, शान्त चित्त वाले, पराशर पुत्र, सर्वज्ञाता, महर्षि गुरु वेदव्यास को प्रणाम करता हूँ ।१४६½

यस्मात्सञ्जायते कृत्स्नं यत्र चैव प्रलीयते ।
नमस्तस्मै परेशाय विष्णवे कूर्मरूपिणे ॥१४७

जिनसे सारा संसार उत्पन्न हुआ और जिनमें लीन हो जाता है, कूर्मरूपी उस परमेश्वर विष्णु को प्रणाम है ।१४७

इति श्रीकूर्मपुराणे षट्साहस्र्यां संहितायामुत्तरार्द्धे व्यासगीतासु षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६

कूर्मपुराण की छह हजार वाली संहिता के उत्तरार्द्ध में, व्यास गीता के वर्णन प्रसंग में छियालिसवाँ अध्याय समाप्त ॥४६

समाप्तोऽयं ग्रन्थः

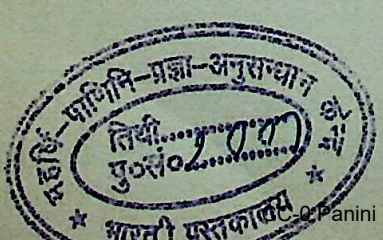

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.